॥ श्रीचंद्रप्रभस्वामिने नम ॥

याद रखने योग्य उपयोगी सूचना

१-आत्मार्थी हे ! भव्यजीवों खरतरगच्छ, तपगच्छ,अमलगच्छ, अचलगच्छ, पायचंदगच्छादिकके आग्रहकी बातें करनेमें आत्मकल्याण मुक्तिनहींहै, किंतु जिनाज्ञानुसारभावसे शुद्धधर्मक्रियाकरनेमें मुक्तिहै इसलिये अपने २ गच्छकी परंपरा रूढीको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी परीक्षाकरके उसमुजबधर्मकार्यकरो उससे श्रेयहो

२-श्रीसर्वज्ञ भगवान्के कहे हुए अतीवगहनाशयवाले, अपेक्षा सहित, अनंतार्थयुक्त जैनशास्त्र अविसंवादीहै, मगर "कत्थइ देसग्गहुण, कत्थइ घिप्पंति निरवसेसाइ । उक्कमकम जुत्ताइ,कारण वसओ निरुत्ताइ ॥ १ ॥" श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रकी वृत्तिके इस महावाक्य मुजब-सामान्य, विशेष ओपमा, वर्णनक, उत्सर्ग, अपवाद, विधि, भय, निश्चय, व्यवहारादिक संबधी शब्दार्थ, भावार्थ लक्ष्यार्थ, वाच्यार्थ, संबधार्थादि भेदोंवाले गंभीरार्थके भावार्थ संबधी शास्त्रवाक्योंको समझे बिनाही अभी अविसंवादी सर्वज्ञशासनमें कितने गच्छोंके भेदोंका आग्रह बढगयाहै देखो "गच्छना भेद बहु नयण निहालता, तत्त्वनीबातकरता न लाजे । उदरभरणादि निजकाज करताथका, मोहनडिया कलिकालराजे ॥ १ ॥ देवगुरुधर्मनी शुद्धि कहो किमरहे किमरहे शुद्ध श्रद्धान आणो । शुद्धश्रद्धाविना सर्वकिरियाकरी, छारपर लिंपणो तेह जाणो ॥ २ ॥ पापनहीं कोई उत्सूत्रभाषण जिस्यु, धर्मनहीं कोइ जगसूत्र सरिखो । सूत्र अनुसारें जे भविक किरिया करें तेहनो शुद्ध चारित्र परिखो ॥ ३ ॥ इत्यादि बातोंको विचार कर आत्मार्थियोंको अपना असत्य आग्रहको छोडकर अपनी आत्माको हितकारी, सुखकारी होवे, वैसा सत्य ग्रहण करना चाहिये

३- कितनेक मुनिमहाशय वर्षोवर्ष पर्युषणापर्वके व्याख्यानमें अधिकमहीनेके व श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंके निषेध संबधी चर्चा उठाते हैं, उससे भोले लोगोंको अनेक तरहकी शंकायें उत्पन्न होती हे, और कितनेही महाशयतो इन बातोंमें तत्त्वदृष्टिसे सत्यअसत्यका निर्णय किये बिनाही अपने पक्षको सत्य मान्य करके दूसरोंको झूठे ठहरानेका एकांत आग्रह करते हैं । शास्त्रोंमें एकांत आग्रहको और

शंकारूपी शल्यको एकप्रकारसे मिथ्यात्वही कहाहै, उसका निवारण करनेकेलिये और शास्त्रानुसार सत्य वातोंका निर्णय वतलानेकेलिये वर्तमानिक सर्व शंकाओंका समाधान सहित मैंने यह ग्रंथ वनायाहै, मगर मेरी तरफसे किसी तरहका नवीन विवाद शुरूकरनेकेलिये न हीं वनाया इसलिये इस ग्रंथके वनानेमें सुवोधिका, किरणावली वा चनेवाले कितनेक विद्वान् मुनि महाशयही कारणभूत है, पाठक गण इसमें मेरेको किसी तरहका दोषी न समझें, मैंने तो उन्होंकी शंका ओंका समाधान लिखा है

४- शुद्धश्रद्धाविना द्रव्यसे व्यवहारमें चाहे जितनेधर्मकार्य करें, तो भी आत्म कल्याण करने वाले नहीं होते, और आग्रही लोगोंकी अभी अलग २ प्ररूपणा होनेसे भोले जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्य वातकी प्राप्ति होना वहुत मुश्किल होरहा है और अविसंवादी रूप आगम पंचांगी प्रकरण चरित्रादि सर्वशास्त्रोंको मानने वालोंमें पर्युष णा-छ कल्याणक-सामायिकादि विषयों संवधी शास्त्रकारमहाराजों के अभिप्रायको न समझनेसे व्यर्थही विसंवाद होरहाहै, उसकानिर्ण य करनेके लिये और भव्यजीवोंको शुद्धश्रद्धारूप सम्यक्त्व रत्नकी प्राप्तिके उपकारकेलिये मैंने यह ग्रंथ वनायाहै। मगर किसी गच्छके साधु-श्रावकोंको किसी अन्य गच्छमें ले जानेके लिये नहीं वनाया किसी गच्छमें रहो, परंतु आपसमें राग द्वेष निंदा ईर्षा अगतविरो धादिक वखेडे छोडकर शुद्ध श्रद्धापूर्वक आत्मिक कल्याण करनेके लियेही इस ग्रंथकी रचना करनेमें आयी है, इसलिये पक्षपात छोड कर इस ग्रंथको वारवार पूरेपूरा वांच, विचार, मननकर सत्य समझ करके शांति पूर्वक शुद्ध श्रद्धासहित अपना आत्मसाधन करके आ त्मार्थी पाठकगण मेरे परिश्रमको सफल करेंगे

५-जिनाज्ञानुसार शुद्धश्रद्धापूर्वकभावसे धर्मकार्य करनेका योग महान्पुण्योदयहोवे तव प्राप्तहोताहै, इसलिये उसमें लोकपूजा वहुत समुदायवगेरकी प्रवृत्तिमुजव करना योग्यनहींहै इसकालमें आत्मा र्थीअल्पही होते है कदाचित् गच्छ गुरुपरंपरा-वहुत समुदाय वगै रह वाह्यकारणोंसे आज्ञामुजव क्रियाकरनेका योग न वनसके तोभी शुद्धश्रद्धा-प्ररूपणा तो आज्ञामुजव सत्यवातोंकीही करना योग्यहै, उ ससे भवांतरमें सुलभवोधिकी प्राप्ति हो सकेगी मगर गुरु-गच्छ- लोकसमुदायके आग्रहसे जिनाज्ञा वाहिर क्रिया करनेहुए आज्ञामुजव सत्यवातोंका निषेध करनेसे भवांतरमे दुर्लभवोधिकी प्राप्ति होतीहै,

इसलिये भवाभिरुयोंको गुरु गच्छ व लोक समुदायादिकका पक्षकरने के बदले जमालिके शिष्योंकी तरह जिनाज्ञाका पक्ष रखनाही योग्य है, अर्थात्-जैसे-अपने गुरु जमालिके उत्सूत्रप्ररूपणाके पक्षकोछोडकर बहुत भव्यजीव भगवान्की आज्ञामुजब मानने लगगये, तैसेही अभीभी आत्मार्थियोंको करना योग्य है यही सम्यक्त्वका मुख्य लक्षण है

६-मेरे बनाये इस बड़े ग्रंथके सामने भाक्रमण लिखेजानेकी मेरेको कोई परवाह नहींहै, देखो-जैसे एकवीतराग सर्वज्ञभगवान्के परोपकारी जैन आगमोंके विरुद्ध हजारों मतवादी अनेक तरहसे अपना २ कथन करते हैं मगर तत्त्व दृष्टिसे आत्महितकारी सत्य बात क्या है, यही देखा जाता है तैसेही-मेरे बनाये इस ग्रंथपरभी १-२ नहीं, परतु १०-२० लेखकभी अपना २ विचार खुशसे लिखें मगर जिनाज्ञानुसार सत्य बात क्या है यही देखना है झूठे मतवादियोंका यही स्वभाव है, कि- हजारों सत्य बातें छोड देते हैं, और अतिशयोक्तिमें या क्रोधमें आकर क्लेश बढानेलगजातेहैं, मगर अपनी बात को छोडते नहीं वैसे इस ग्रंथपर न होना चाहिये यही प्रार्थनाहै

७-इस ग्रंथमें पर्युषणा संबधी अधिक महीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करनेका तथा श्रावण भाद्रपद आसोज अधिक महीने होंवे तब पर्युषणाके पीछे कार्तिकतक१०० दिन ठहरनेका खरतर गच्छ, तपगच्छ अचलगच्छ,पायचदगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार और निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, स्थानाग सूत्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रपाठानुसार अच्छी तरहसे साबित करके बतलाया है। जैसे अधिक महीना होंवे तोभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेकी सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा है वैसेही-अधिकमहीना होवे तोभी पीछे हमेश ७०दिन रहनेकी आज्ञा किसीभी शास्त्रमें नहीं है, समवायागसूत्रका पाठ तो सामान्य रीतिसे अधिक महीना न होंवे तब ४ महीनोंके वर्षाकाल संबधी है, उसका भावार्थ समझे विना अधिकमहीना होवे तब अभी पाच महीनोंके वर्षाकालमेंभी उसी सामान्य पाठको आगे करना और १०० दिन पीछे रहनेसंबधी अनेक शास्त्रोंके विशेष पाठोंकी बातको छोड देना यह सर्वथा अनुचित है।

८ लौकिकटिप्पणामें दो श्रावणादिमहीने होंवे,तब पाचमहीनोंका वर्षाकाल मान्य करना यह बात अनुभवसिद्ध प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार

है,तोभी उनको ४ महीनोंका वर्षाकाल कहनेसे मिथ्या भाषण करने काद्रोपआताहै। यदि अभी वर्तमानमें अधिकमहीनेश्रावणादि होनेपर भी जैनशास्त्रानुसार ४ महीनोंका वर्षाकालमानोंगे, तो,पोष-आषाढ अधिक होनेवाला ८८ ग्रहसहित जैनपचागभी अभी मानना पडेगा मगर वो जैनपचाग तो अभी विच्छेदहै, इसलिये लौकिकपचाग मुज- व व्यवहार करनेमेंआताहै। अब यहांपर विवेकबुद्धिसे न्यायपूर्वक विचारकरना चाहिये, कि-अभी पौष आषाढमहीनेकी वृद्धिवाला८८ ग्रह सहित जैनपचाग विच्छेदभी मानना व लौकिक पचाग मुजब व्यवहारभी करना और लौकिक पचाग मुजब अधिकमहीने दो श्रा वण,या दो भाद्रपद,वा दो आसोजभी मानने फिर ४महीनोंकावर्षा कालभी कहना, यह तो 'बालचेष्टा' की तरह पूर्वापर विरोधी वि सवादी कथनकरना विवेकी विद्वानोंको सर्वथाही योग्य नहींहै। अ धिकश्रावणादिमहीने नहींमानने होंवे तो अभी अधिकपोषादि वाला जैनपचाग बतावो अथवा लौकिक पचाग मुजब अधिक श्रावणादि मानो तो अधिकपोषादिका बहाना बतलाकर ४ महीनोंकावर्षाकाल कहनेका आग्रहछोडो। अधिकश्रावणादिभी मानोंगे और ४ महीनों का वर्षाकालभी कहोंगे, यह कभी नहीं बन सकेगा विच्छेद जैनप चागकी बातका आश्रय लेना और प्रत्यक्ष विद्यमान बातका निषेध करना, यह न्याय विरुद्धहै। पहिले पौष आषाढ बढतेथे तबभी फा ल्गुन और आषाढचौमासा पाचर महीनोंसे होताथा और अभी श्रा वणादिबढतेहैं तब कार्तिक चोमासाभी पाचमहीनोंका होताहै अभी जैनपचाग विच्छेद होनेसे लौकिक पचाग मुजब अधिक श्रावणादि मान्यकरके उसमुजब व्यवहार करना युक्तियुक्त व पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसारहै, जिसपरभी अधिक श्रावणादि होंवे,तबपाच महीनों के वर्षाकालमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युप णापर्व आराधन करनेका उल्लघन करना और पीछे १०० दिन रहने की जगह ७० दिन रहनेका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है देखो-

यद्यपि जैन पचागमें ४ महीनोंका वर्षाकाल कहाहै, परतु जैन पचागके अभावसे अभी लौकिक पचाग मुजब श्रावणादि बढतेहैं, तब पाच महीनोंका वर्षाकालभी मानना पडता है, इसलिये इसका निषेधकरना सर्वथा अनुचितहै बस! पोष आषाढमहिनेकी वृद्धिस हित ४ महीनोंके वर्षाकाल वाला जैन पचाग शुरु बतावो या लौ किक पचाग मुजब श्रावणादि बढें तब पाच महीनोंका वर्षाकाल

मान्य करो और जब पाच महीनोंका वर्षाकाल मान्य हुआ तो फिर अधिकमहीना निषेध करोंगे व पर्युषणाके पीछे ७० दिन हमेश रहने वगैरहकी सर्व बातें आपही आप निष्फल हो जाती है

इसतरहसे अधिकमहीनेके निषेधसबधी धर्मसागरजीने 'कल्प कि रणावली'में, जयविजयजीने 'कल्पदीपिका में, विनयविजयजीने 'सु बोधिका'में,कातिविजयजी अमरविजयजीने'जैन सिद्धात समाचारी' में,शातिविजयजीने'मानवधर्मसहिता'में,वल्लभविजयजीने जैनपत्रमें, विद्याविजयजीने 'पर्युषणा विचार'में,कुलमडनसूरिजीने 'विचारामृत सग्रह'में, हर्षभूषणजीने 'पर्युषणास्थिति'में, और वर्तमानिक चर्चाके हेंडबिलें, किताबें वगैरहमें जो जो शकायें कीहैं, उन सर्व शकाओंका खुलासा पूर्वक समाधान इस ग्रथकी भूमिकामें व पीठिकामें और इस ग्रथमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, इसलिये जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेकी इच्छावाले,सत्यतत्त्वाभिलाषी,आत्माहितैषी पाठक गण इसग्रथको पूर्णतया वाचकर सत्यसार ग्रहण करें।

९-तीर्थंकर भगवान्के च्यवन-जन्म दीक्षादिकोंको कल्याणक मा ननेका आगमानुसार अनादि सिद्ध है,इसलिये श्री महावीरस्वामि भी देवलोकसे देवानदामाताके गर्भमें आषाढ शुदी ६ को आये, उन को प्रथम च्यवन कल्याणक, और आसोजवदी १३ को देवानदामा ताकेगर्भसे त्रिशलामाताके गर्भमें आये सो गर्भापहाररूप (गर्भसक्र मणरूप)दूसराच्यवन कल्याणक माननेका स्थानाग आचाराग दशा श्रुतस्कधादिक आगम पचागी प्रकरण चरित्रादि अनेक शास्त्रानुसा र और वडगच्छ, चद्रगच्छ, उपकेशगच्छ (कमलागच्छ) खरतर गच्छ तपगच्छ, अचलगच्छ, पायचदगच्छादि अनेक गच्छोंके पूर्वा चार्योंके ग्रथानुसार अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलायाहै च्यवन जन्म दीक्षादिकोंको चाहे वस्तु कहो चाहे स्थानकहो, चाहे कल्या णक कहो इन तीनोंबातोंमें प्रसगोपात सबधानुसार पर्याय वाचक *एकार्थवाले शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकही है* उस बातकाभेद समझे विनाही च्यवन-जन्म-दीक्षादिकाको वस्तु-स्थान कहकर कल्याणक पनेका निषेध करके आगमार्थरूप पचागीको उ त्थापनकरनेके दोषी बनना किसीकोभी योग्य नहीं है।

१०- श्रीवीरप्रभुके आषाढ शुदी ६ को प्रथम च्यवनकल्याणक मान्यकरके आसोजवदी १३ को दूसरेच्यवनको कल्याणकपनेका नि षेध करनेवालोंको न्यायबुद्धिसे विचार करना चाहिये, कि-तीर्थंकर

भगवान्केच्यवनकल्याणकसमय उनकी माता१४महास्वप्न आकाशसे उत्तरतेहुएदेखतीहै, उसीसमय तीनजगतमें उद्द्योत होता है व सर्व संसारीप्राणीमात्रको सुखकीप्राप्तीहोती है, और इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर विधिपूर्वक पूर्णभक्तिसहित नमुत्थुणरूप नमस्कारकरके तत्काल माताके पास आकर१४ महास्वप्न देखनेसे स्वप्नोंके अनुसार तीनजगतकेपूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहकर इन्द्रमहाराज अपने स्थानपरजाते हैं और प्रभातसमय फजरमें राजा स्वप्न पाठकोंसे १४ महास्वप्नोंकाफल पूछताहै,तब तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर हर्ष सहित महोत्सव करता है, और इन्द्र महाराज देवताओं द्वारा उस रोजसे भगवान्के माता पिताके घरमें धन धान्यादिकसे राज्य ऋद्धिकीवृद्धि करवातेहैं इत्यादि तीर्थंकरभगवान्के च्यवनकल्याणकके कार्यहोतेहैं, यही सर्व कार्य आषाढशुदी ६के रोज भगवान् देवानदामाताके गर्भमें आये,तब नहीं हुए,किंतु आसोज वदी १३के रोज त्रिशलामाताके गर्भमें आये; तब उससमय हुएहैं, क्योंकि देखो-आषाढ सुदी ६ को तो प्राचीन कर्मके उदयसे भगवान् ब्राह्मणीदेवानदामाताके गर्भमें आये और ८२दिनतकवहां ठहरनापडा,उनको कल्पसूत्रादिक शास्त्रोंमें अच्छेरा कहाहै, इसलिये ८२ दिन तकतो इन्द्रादिक किसीकोभी तीर्थंकरभगवान्के उत्पन्न होनेकी मालूम न पडी,मगर सपूर्ण८२ दिन गयेबाद इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूमपडी उसीसमय पूर्णहर्षसहित नमुत्थुणकिया और हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके क्षत्रियाणीत्रिशला माताके गर्भमें पधराये, तब त्रिशलामाताने(देवानदाके १४महास्वप्न हरणकरनेका१स्वप्न नहीं देखा किंतु)तीर्थंकर भगवान्के च्यवन कल्याणककी सूचनाकरने वाले १४ महास्वप्न आकाशसे उत्तरते हुए और अपने मुखमें प्रवेश करते हुए देखे हैं इसलिये खास कल्पसूत्रके मूल पाठमेंभी "एए चउद्दस सुमिणा, सव्वा पासेई तित्थयर माया। ज रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरिहा"अर्थात्-जिस समय तीर्थंकर भगवान् माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होतेहैं,उस समय यह १४ महास्वप्न सर्व तीर्थंकरमहाराजोंकी मातायें देखतीहैं, वैसेही-त्रिशलामातानेभी १४ महास्वप्न देखेहैं, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेकोही शास्त्रकार महाराजोंनें च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै, इसीकारणसे समवायागसूत्रवृत्तिमें देवानदामाताके गर्भसे त्रिशला माताके गर्भमें आनेको अलग भव गिनकर तीर्थंकर

पनेमें प्रकट होनेकालिखाहै और 'महापुरुष चरित्र' में तथा 'त्रिषष्ठि शलाका पुरुष चरित्र' आदिक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी ८२ दिन गये बाद इन्द्रका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देखकर नमुत्थुण किया और त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये, जब त्रिशलामाता ने १४महास्वप्न देखे,तब खास इन्द्रने त्रिशलामाताके पासमें आकर तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, और फजरमें स्वप्न पाठकोंसेभी तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर सबको तीर्थंकर भगवानके उत्पन्न होने की मालूम होगई इसलिये कल्पसूत्रमें जो नमुत्थुणका पाठ है, सो भी आसोज वदी १३ के दिन संबधी है, किंतु आषाढ शुदि६ के दिन संबधी नहींहै, क्योंकि देखो- 'नमुत्थुण करके त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये' ऐसा कल्पसूत्रादिमें खुलासालिखाहै, मगर आषाढ शुदि६को आसनप्रकंपनसे नमुत्थुण किया और फिर उसके बादमें ८२ दिन गये पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये या ८२दिन तो इन्द्रको विचारकरते चलेगये वा पूरे ८२ दिन गयेबाद आसोज वदी १३ को फिर आसन प्रकंपनसे त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये अथवा ८२दिन ठहरकर पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये ऐसे पाठ किसीभी शास्त्रमें नहींहै मगर ८२दिन तक तो मालूमभी नहींपडी, परंतु ८२दिन जाने बाद आसन प्रकंपनहोनेसे मालूम पडी, तब नमुत्थुण किया और उसी रोज पधराये, ऐसे पाठ तो "महापुरुष चरित्र" में तथा "त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र" आदि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रत्यक्ष मिलतेहैं, इसलिये आसोज वदी १३ कोही 'नमुत्थुण' वगेरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे आगम पचांगीकी श्रद्धावालोंको व श्रीवीरप्रभुकी भक्तिवालोंको यह दूसरा च्यवनरूप कल्याणक मान्य करनाही उचित है, बस ! आसोज वदी १३ कोही नमुत्थुण करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम काय होनेका मान्यकरो या आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुण करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका खुलासा पूर्वक शास्त्रपाठ बतलावो,व्यर्थ विवाद करनेमें कोई सार नहीं है.

११- श्रीआदीश्वर भगवान्के राज्याभिषेकमें तो कोईभी कल्याणकके लक्षण नहीं है, मगर गर्भापहारसे गर्भ संक्रमणरूप दूसरे च्यवनमें तो च्यवन कल्याणकके सर्व लक्षण प्रत्यक्ष मौजूदहैं, इसलिये उसका भावार्थ समझे बिनाही राज्याभिषेककी तरह गर्भापहारकोभी कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझ है।

१२- श्री आदीश्वरभगवान् १०८ मुनियोंके साथ 'अष्टापद'पर मोक्ष पधारे सो अच्छेरा कहतेहैं, तोभी उनको मोक्ष कल्याणक मा ननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती तेसेही-श्रीवीरप्रभुकेभी देवान दा माताके गर्भमें आनेसे त्रिशलामाताके गर्भमें जाना पडा सो अ च्छेरारुप कहते हैं, तोभी उनको च्यवनकल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती इसलिये अच्छेरा कहकर कल्याणकपनेका नि षेध करना यहभी वे समझही ह

१३- ओर श्री मल्लिनाथस्वामि स्त्रीपनेमें तीर्थंकर उत्पन्न हुएहैं, तोभी चोवीश तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पुरुषप नेमें कहनेमेंआतेहैं तेसेही श्रीवीरप्रभुकेभी छ कल्याणक आचाराग स्थानागादि आगमोंमें विशेषतासे खुलासापूर्वक कहेहैं, तोभी 'पचा शक' में सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पाच क ल्याणक कहेहैं, उसकाभावार्थ समझे विनाही सर्वजिनसबधी पाच कल्याणकोंका सामान्य पाठको आगे करके आचाराग-स्थानागादि आगमोंमें कहे हुए विशेषतावाले छ कल्याणकोंका निषेधकरना यह भी वे समझका व्यर्थही आग्रह है।

१४-इसतरहसे आगमपचागीके अनेक शास्त्रानुसार तीर्थंकर, ग णधर,पूर्वधरादि प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथनमुजब गर्भापहारको दूस रा च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षसिद्ध होनेसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजने चितोडमें छठे कल्याणककी नवीनप्ररूपणाकी, पहिले न हीं थी, ऐसा कहेनाभी वे समझसे व्यर्थही है।

१५-और गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनकल्याणकके अतीव उत्तम कार्यको 'सुबोधिका ' टीकामें अतीव निंदनीक कहकरके निंदाकीहै, सोभी भगवान्की आशातनाकारक होनेसे सम्यक्त्वको व सयमको हानीपहुचानेवालीहै, उसका तत्त्वदृष्टिसे विचारकियेविनाही विद्वान् कहलानेवाले सर्व मुनिमहाराज वर्षोंवर्ष पर्युषणापर्वके मागलिक रूप व्याख्यान समय ऐसी अनुचित बातको बाचते हैं, यह बडीही शर्मकी बात है, भवभीरू आत्मार्थियोंको ऐसा करना कदापि योग्य नहीं हैं। इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय प्रथम भागकी भूमिकामें और इस ग्रथके उत्तरार्द्धमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, उनके बाचनेसे सर्व बातोंका निर्णय हो जावेगा

१६- सामायिकमें प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पी छेसे इरियावही करनेसबधीभी आवश्यकचूर्णि बृहद्वृत्ति लघुवृत्ति नवपदप्रकरण विवरणरूपवृत्ति-दूसरीवृत्ति-श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति

बदिहासूत्रचूर्णि-श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ति-पञ्चाशकचूर्णि-वृत्ति-विचारामृतसंग्रह-धर्मसंग्रहवृत्ति-संबोधसत्तरी प्रकरणवृत्ति-जयसोमोपाध्यायजी कृत 'ईर्यापथिकी षट्त्रिंशिका विवरण', श्रावकप्रज्ञप्ति वृत्ति इत्यादि अनेक शास्त्रानुसार श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी पूर्वधर, श्रीहरिभद्रसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, हेमचन्द्राचार्यजी, देवेंद्रसूरिजी, देवगुप्तसूरिजी, वगैरह सर्व गच्छोंके प्राचीन पूर्वाचार्योंने भी सामायिक विधिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करके स्वाध्याय, ध्यानादि धर्मकार्य करनेका बतलाया है, यहीबात जिनाज्ञानुसार है पहिले सर्व गच्छोंमें इसीप्रकारसेही सामायिकविधि करतेथे, मगर पीछेसे कितनेही चैत्यवासियोंने अपनी मतिकल्पना मुजब प्रथम इरियावही पीछेकरेमिभंते स्थापन करनेका आग्रहचलायाथा, उनकीपरंपरामुजब अभीभी कितनेकमहाशय प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करनेकेलिये अन्य कोईभी प्रकट अक्षरवाले शास्त्रप्रमाण न मिलनेसे महानिशीथ-दशवैकालिकादिकके अधूरे २ पाठोंसे संबंधके विरुद्ध अर्थ करके सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते ठहराते हैं, परन्तु उससे अनेक दोष आते हैं, उसका विचारभी कुछभी नहीं करते हैं देखो - विसंवादी शास्त्रोंको व विसंवादी कथन करनेवालोंको शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहे हैं, इसलिये जैन शास्त्रोंको व पूर्वाचार्योंको अविसंवादी कहनेमें आते हैं, और आवश्यकचूर्णिआदि अनेकशास्त्रोंमेंसामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावहीके पाठमौजूद होनेपरभी महानिशीथ-दशवैकालिकादिसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे सर्वज्ञ शास्त्रोंमें विसंवादरूप यह प्रथमदोषआताहै और आवश्यक बडी टीका, महानिशीथका उद्धार दशवैकालिक बडीटीका यह सर्वशास्त्र श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजने कियेहैं, इसलिये आवश्यक बडी टीकाके विरुद्ध महानिशीथसे प्रथम इरियावही ठहरानेसे इन महाराजके कथनमें विसंवाद आनेरूप यह दूसरा दोषआताहै आवश्यकादिमें सामायिकके नामसे प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही खुलासा लिखीहै, महानिशीथके तीसरेअध्ययनमें उपधानसंबंधी चैत्यवंदन स्वाध्यायादिकरनेकापाठहै, दशवैकालिककी टीकामें साधुके गमनागमन (जाने आने) संबंधी इरियावही करके स्वाध्यायादि करनेका पाठहै, इस प्रकार भिन्न २ अपेक्षा वाले शास्त्रोंके पाठोंके संबंध विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठोंसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही ठहरानेसे शास्त्रोंकी

मर्यादाका भगहोनेरूप यह तीसरा दोषआताहै और सर्व गीतार्थपू र्वाचार्योंने महानिशीथादि देखेथे, उन्होंके अर्थकोभी अच्छी तरहसे जानतेथे, तोभी सामायिकमें प्रथम इरियावही नहीं लिखी, जिसपर भी अभी महानिशीथसे सामायिकमें प्रथम इरियावही ठहरानेसे उन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको महानिशीथके अर्थको नहीं जाननेवाले अज्ञानी ठहरानेका यह चौथादोष आताहै और सर्वपूर्वाचार्योंने सामायिकमें प्रथमकरेमिभते पीछेइरियावही लिखीहै,उनको उत्थापनकर नेसे सर्व पूर्वाचार्योंकी आज्ञा लोपनेका यह पाचवा दोषभी आताहै और आवश्यकचूर्णि आदिक सर्व शास्त्रोंके विरुद्ध होकर सामायिक में प्रथम इरियावही स्थापन करनेसे आगम पचागीके उत्थापनरूप यह छठा दोषआताहै और खास तपगच्छके श्रीदेवेंद्रसूरिजी,कुलम डनसूरिजी वगैरहोंनेभी सामायिकमें प्रथम करेमिभते पीछे इरिया वही खुलासा लिखी है, उसकेभी विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते ठहरानेसे अपने पूर्वज बडील आचार्यो कीभी अवज्ञा करनेरूप यह सातवा दोषभी आताहै इसप्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभते और पीछे इरियावही कहनेका निषेध करके प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते ठहरानेसे अनेक दोष आते है, इसका विशेष खुलासा पूर्वक निर्णय शास्त्रोंके सपूर्ण सबधवाले पाठोंकेसहित इसीग्रथके दूसरेभागकी पीठिकाके पृष्ठ८७से११२ पृष्ठतक और इस ग्रथमेंभी पृष्ठ ३१० से ३२९ पृष्ठ तक छपगयाहै वहा सर्व शकाओंका खुलासा समाधान करनमें आया है, इसलिये आत्मार्थी भव्य जीवोंको जिनाज्ञानुसार, सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार, प्राचीन अनेक शास्त्रानुसार, तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी भाव परपरानुसार सामायिकमें प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनाहीयोग्यहै, और प्रथमइरियावही करनेकी अभी थोडेकालकी गच्छकीरूढीके आग्रहको छोडनाही श्रेयरूप है। इस बातको विशेष तत्त्वज्ञ जन आपही विचार लेंगे

जिन २ महाशयोंको इतना बडा सपूर्णग्रथ वाचनेका अवकाश न होवे, उनमहाशयोंको इसग्रथके प्रथमभागकी भूमिका और दूसरे भागकी पीठिकाको अवश्यही वाचनाचाहिये मैंने भूमिका पीठिका में अन्य २बातें नहीं लिखी,किंतु इसग्रथकासार और सबशकाओंका थोडेसेमें समाधानमात्रही लिखाहै इसलिये भूमिका पीठिका वाचनेवालोंको ग्रथकासार अच्छीतरहसे मालूम होसकेगा इतिशुभम्

इसग्रन्थके उत्तरार्द्धके तीसरे भागकी- जाहिर खबर

१ इसग्रंथके उत्तरार्द्धके तीसरेभागमें आगमादि अनेकप्राचीन शा स्त्रानुसार,व चन्द्रगच्छ,वडगच्छ, खरतरगच्छ तपगच्छ,अचलगच्छ, पायचंदगच्छादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्योंके बनायेग्रंथानुसार श्रीवीर प्रभुके छ कल्याणक मान्यकरनेका अच्छी तरहसे सिद्ध करके बत लाया है और शांतिविजयजीने ' जैनपत्र में, विनयविजयजीने 'सु- बोधिका में, कांतिविजयजी अमरविजयजीने ' उत्सिद्धांतमामाला री' में, श्रीआत्मारामजीने ' जैन तत्त्वादर्श'में, धर्मसागरजीने 'कल्प किरणावली ' ' प्रवचन परीक्षा ' वगैरहमें जो जो छ कल्याणक नि षेध संबधी शंकायें की हैं और शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझे विनाही अधूरे २ पाठ लिखकर उनके खोटे २ अर्थ करके भोले जीवोंको उलटा मार्ग बतलानेकी कोशिश की है, उन सर्वबातोंका समाधान सहित निर्णय इसमें लिखनेमें आया है।

२-और श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजसे वस्तिवासी-सुविहित- खरतर बिरुदकी शुरूयात हुयीहै,इसलिय श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्री अभयदेवसूरिजी महाराज खरतर गच्छमें हुए हैं, यह बात प्राचीन शास्त्रानुसार तथा तपगच्छके पूर्वाचार्योंके बनाये ग्रंथानुसार सिद्ध- करके बतलायाहे । और कोई महाशय श्रीजिनदत्त सूरिजी महारा जसे संवत् १२०४में खरतरगच्छकी शुरूयातहोनेका कहतेहैं, सोभी सर्वथा असत्य है क्योंकि-इन महाराजसे सं १२०४में खरतरगच्छ की शुरूयात होनेका कोइभी कारण नहीं हुआ है व्यर्थ झूठे आक्षेप करने बडी भूलहै, देखो १२०४में तो खरतर गच्छकी तीसरी शाखा हुईहै इस बातका अच्छीतरहसे खुलासा इसग्रंथमें करनेमें आयाहै

३-ओर जैनशास्त्रोंकी यह आज्ञा है, कि-यदि अपनी गच्छ परंप रामें ३-४ पेढीके आगेसेही शिथिलाचार चला आता होवे, तो क्रि या उद्धार करनेवाले दूसरेगच्छके अन्यशुद्ध संयमीके पासमें क्रिया उद्धार करें अर्थात् उनके शिष्य होकरके शुद्ध संयम पालें, उससे पहिलेकी शिथिलाचारकी अशुद्ध परंपरा छुटकर, क्रिया उद्धार करवानेवाले गुरुकीशुद्धपरंपरा मानीजावे देखो जैसे-श्रीआत्माराम जीने ढूंढियेंके झूठेमतको छोडकर तपगच्छमें दीक्षाली हे इसलिये यद्यपि पहिलेढूंढियेथे तोभी उनकीपरंपरा ढूंढियोंमेंनहींलिखी जावे, किंतु तपगच्छमेंही लिखीजावे तथा कोइ शिथिलाचारी यति अपने गुरु व गच्छको छोडकर अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीके पासमें क्रिया

उद्धारकरें (फिरसे दीक्षालेवे) तो उनकी यतिपनेकी अशुद्धपरपरा छु टकर जिसगुरुके पासमें क्रिया उद्धार किया होगा, उन्हीं गुरुकीशु- द्ध परपरा चलेगी ॥ इसी तरहसे श्रीवडगच्छके जगचद्रसूरिजी म हाराजने अपनेको व अपनी गच्छ परपराको शिथिलाचारी अशुद्ध जानकर छोडदियाथा और श्रीचैत्रवालगच्छके शुद्ध परपरावाले शुद्ध सयमी श्रीदेवभद्रोपाध्यायजीके पासमें क्रिया उद्धार कियाथा, अर्था त्-उनके शिष्य होकर शुद्ध सयमी बने थे और उसके बादमें बहुत तपस्या करनेसे 'तपा' बिरुद मिलाथा, उस रोजसे इन महाराजकी समुदायवाले तपगच्छक कहलाये गये इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजीम- हाराजने और श्री क्षेमकार्तिसूरिजी महाराजने श्रीजगचद्रसूरिजीम हाराजकी पहिलेकी शिथिलाचारकी वडगच्छकी अशुद्ध परपरा लि खना छोडकर, इनमहाराजकी चैत्रवाल गच्छकी शुद्ध परपरा अपनी बनाई 'धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति' में और 'श्रीवृहत्कल्प भाष्य वृत्ति' में लिखीहै यही शुद्ध परपरा लिखना जिनाज्ञानुसार है, मगर पहिलेकी वडगच्छकी अशुद्ध परपरा लिखना जिनाज्ञानुसार नहींह यह बात अल्पज्ञभी अच्छी तरहसे समझसकताहै जिसपरभी अभी वर्तमानि क तपगच्छके विद्वान् मुनिमडल देवेंद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी लिखी हुई जिनाज्ञानुसार चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परपराको छोड देते ह और जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी वडगच्छकी अशुद्ध परपराको लिखते हे यह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध ह इन सर्व बातोंका विस्तार पूर्वक खुलासा इस ग्रन्थके उत्तरार्द्धमें लिखा गयाहै सोभी छपकर तैयार होगयाहै, इस पूर्वार्द्धके प्रकट हुएबाद, थोडे समयसे उत्तरा- र्द्धभी प्रकट होगा, सो सपूर्ण तया वाचनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा

विद्वान् सर्व मुनिमडलसे विनति

श्रीमान्- विजयकमलसूरिजी, विजयधर्मसूरिजी, विजयनेमि सूरिजी, बुद्धिसागरसूरिजी, विजयवीरसूरिजी, विजयनीतिसूरिजी विजयसिद्धिसूरिजी, आनदसागरसूरिजी, उ०इन्द्रविजयजी, प्र० श्री कातिविजयजी-मगलविजयजी, प० गुलाबविजयजी- धर्मविजयजी केशरविजयजी-दानविजयजी-मणिविजयजी- अजितसागरजी, श्री हसविजयजी-कपूरविजयजी- वल्लभविजयजी कल्याणविजयजी ल- ब्धिविजयजी-आनदविजयजीआदि विद्वान्सर्व मुनिमडलसेविनति

आप यह तो जानतेहीहै, कि-श्रीनिशीथचूर्णिमें वर्षाऋतुमेंही मु-

इसग्रन्थके उत्तरार्द्धके तीसरे भागकी- जाहिर खबर.

१ इसग्रंथके उत्तरार्द्धके तीसरेभागमें आगमादि अनेक प्राचीन शास्त्रानुसार, व चन्द्रगच्छ, वडगच्छ, खरतरगच्छ तपगच्छ, अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादि सबगच्छोंके पूर्वाचार्योंके बनायेग्रंथानुसार श्रीवीर प्रभुके छ कल्याणक मान्यकरनेका अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलाया है और शांतिविजयजीने 'जैनपत्र'में, विनयविजयजीने 'सुबोधिका'में, कांतिविजयजी अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांत सामाचारी में, श्रीआत्मारामजीने 'जैन तत्त्वादर्श'में, धर्मसागरजीने 'कल्प किरणावली' 'प्रवचन परीक्षा' वगैरहमें जो जो छ कल्याणक निषेध संबंधी शंकायें की हैं और शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझे बिनाही अधूरे२ पाठ लिखकर उनके खोटे२ अर्थ करके भोले जीवोंको उलटा मार्ग बतलानेकी कोशिश की है, उन सर्व बातोंका समाधान सहित निर्णय इसमें लिखनेमें आया है।

२-और श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजसे वसतिवासी-सुविहित-खरतर बिरुदकी शुरूयात हुयीहै, इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्री अभयदेवसूरिजी महाराज खरतर गच्छमें हुए हैं, यह बात प्राचीन शास्त्रानुसार तथा तपगच्छके पूर्वाचार्योंके बनाये ग्रंथानुसार सिद्ध करके बतलायाहे। और कोई महाशय श्रीजिनदत्त सूरिजी महाराजसे संवत् १२०४में खरतरगच्छकी शुरूयातहोनेका कहतेहैं, सोभी सर्वथा असत्य है क्योंकि-इन महाराजसे सं १२०४में खरतरगच्छ की शुरूयात होनेका कोईभी कारण नहीं हुआ है व्यर्थ झूठे आक्षेप करने बडी भूलहै, देखो १२०४में तो खरतर गच्छकी तीसरी शाखा हुईहै इस बातका अच्छीतरहसे खुलासा इसग्रंथमें करनेमें आयाहै

३-और जैनशास्त्रोंकी यह आज्ञा है, कि-यदि अपनी गच्छ परंपरामें ३-४ पेढीके आगेसेही शिथिलाचार चला आता होवे, तो क्रिया उद्धार करनेवाले दूसरेगच्छके अन्यशुद्ध संयमीके पासमें क्रिया उद्धार करें अर्थात् उनके शिष्य होकरके शुद्ध संयम पालें उससे पहिलेकी शिथिलाचारकी अशुद्ध परंपरा छुटकर, क्रिया उद्धार करवानेवाले गुरुकीशुद्धपरंपरा मानीजावे देखो जैसे-श्रीआत्माराम जीने ढूंढियोंके झूठेमतको छोडकर तपगच्छमें दीक्षाली है इसलिये यद्यपि पहिलेढूंढियेथे तोभी उनकीपरंपरा ढूंढियोंमेंनहीं लिखी जावे किंतु तपगच्छमेंही लिखीजावे तथा कोई शिथिलाचारी यति अपने गुरु व गच्छको छोडकर अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीके पासमें क्रिया

उद्धारकरें(फिरसे दीक्षालेवे)तो उनकी यतिपनेकी अशुद्धपरंपरा छु टकर जिसगुरुके पासमें क्रिया उद्धार किया होगा, उन्हीं गुरुकीशुद्ध परंपरा चलेगी ॥ इसी तरहसे श्रीवडगच्छके जगचंद्रसूरिजी महाराजने अपनेको व अपनी गच्छ परंपराको शिथिलाचारी अशुद्ध जानकर छोडदियाथा और श्रीचैत्रवालगच्छके शुद्ध परंपरावाले शुद्ध संयमी श्रीदेवभद्रोपाध्यायजीके पासमें क्रिया उद्धार कियाथा,अर्थात्-उनके शिष्य होकर शुद्ध संयमी बने थे और उसके बादमें बहुत तपस्या करनेसे 'तपा' बिरुद मिलाथा,उस रोजसे इन महाराजकी समुदायवाले तपगच्छके कहलाये गये इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजीमहाराजने और श्री क्षेमकीर्त्तिसूरिजी महाराजने श्रीजगचंद्रसूरिजीमहाराजकी पहिलेकी शिथिलाचारकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना छोडकर, इनमहाराजकी चैत्रवाल गच्छकी शुद्ध परंपरा अपनी बनाई 'धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति' में और 'श्रीवृहत्कल्प भाष्य वृत्ति' में लिखीहै यही शुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार है, मगर पहिलेकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार नहींहै यह बात अल्पज्ञभी अच्छी तरहसे समझसकताहै जिसपरभी अभी वर्तमानिक तपगच्छके विद्वान् मुनिमंडल देवेंद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी लिखी हुई जिनाज्ञानुसार चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपराको छोड देते हैं और जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी वडगच्छकी अशुद्ध परंपराको लिखते हैं यह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है इन सर्व बातोंका विस्तार पूर्वक खुलासा इस ग्रन्थके उत्तरार्द्धमें लिखा गयाहै सोभी छपकर तयार होगयाहै, इस पूर्वार्द्धके प्रकट हुएबाद, थोडे समयसे उत्तरार्द्धभी प्रकट होगा, सो संपूर्ण तया वाचनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा

विद्वान् सर्व मुनिमंडलसे विनंति

श्रीमान्- विजयकमलसूरिजी, विजयधर्मसूरिजी, विजयनेमिसूरिजी, बुद्धिसागरसूरिजी, विजयवीरसूरिजी, विजयनीतिसूरिजी विजयसिद्धिसूरिजी, आनंदसागरसूरिजी, उ०इन्द्रविजयजी, प्र० श्री कांतिविजयजी-मंगलविजयजी, प० गुलाबविजयजी- धर्मविजयजी केशरविजयजी-दानविजयजी-मणिविजयजी- अजितसागरजी, श्री हंसविजयजी-कपूरविजयजी- वल्लभविजयजी कल्याणविजयजी लब्धिविजयजी-आनंदविजयजीआदि विद्वान्सब मुनिमंडलसेविनंति

आप यह तो जानतेहीहै, कि-श्रीनिशीथचूर्णिमें वर्षाऋतुमेंही मु-

नियोंको आलोयणालेनेकाक्हाहै, और अभी आवणादि महीने बढे तब पांच महीनोंके दश पक्ष, १५० दिन वर्षाकालके होते हैं, उसमें आं वबिल, उपवास, नवकरवाली गुणने वगैरहसे जितने दिन धर्मकार्य होंगे, उतनेही दिन आलोयणाकी गिनतीमें आवेंगे,इसी तरहसे वर्षी और छ मासी तपके दिनोंमें व ब्रह्मचर्य पालने वगैरह कार्योंमेंभी अधि क महीनेके ३० दिन गिनतीमें आते हैं॥ इस हिसाबसे धर्मकार्यमें व कर्म बंधनके व्यवहारमें सूर्यके उदय अस्त (रात्रि दिनके) परिवर्तन के हिसाबसे और अंग्रेजी, मुसलमानी, पारसी, बंगाली वगैरोंके हिसाबसेभी आषाढ चौमासीसे जब दो श्रावण होवें; तब भाद्रपद त क, या जब दो भाद्रपद होवे तब दूसरेभाद्रपद तक ८० दिन होतेहैं, उसके ५०दिन कहतेहैं, और जब दो आसोज होवे तब कार्तिक तक १००दिनहोतेहैं, उसकेभी ७०दिन कहतेहैं यहबात संसार व्यवहार- के हिसाबसे, रात्रिदिनके जानेके (समयके प्रवाहके) हिसाबसे, धर्म शास्त्रोंके हिसाबसे, ज्योतिषपंचागके हिसाबसे,राज्यनीतिके हिसाब- से, और धर्म-कर्मके अनादि नियमके हिसाबसेभी सर्वथा विरुद्धहै और अन्य दर्शनियोंके विद्वानोंके सामने जैनशासनको कलंक रूपहै इसलिये मेहेरबानी करके बहुत समयकी गच्छ परंपराकी रूढीरूप प्रवाहके आग्रहको छोडकर जिनाज्ञाका विचार करके यह अनुचित रीवाजको बगर बिलबसे सुधारनेकी कोशिशकरें इसके संबंधमें स र्व बातोंका खुलासापूर्वक समाधान इस ग्रंथकी भूमिकाके ४७ प्रक रणोंमें व सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें और इसग्रंथमें अ च्छीतरहसे लिखनेमें आयाहै, उसको पूरेपूरा अवश्यवाचे और योग्य लगे उतना सुधाराकरें,पक्षपात झूठाआग्रह शास्त्रविरुद्ध बहुतलोगोंकी समुदाय व गुरुगच्छकी परंपरा हितकारीनहींहै,किंतु जिनाज्ञाही हित कारीहै परोपदेशकेलिये बहुत लोगबडे कुशल होतेहैं मगर वैसाही कार्य करनेवाले आत्मार्थीबहुतहीअल्पहोतेहैं, यहभी आपजानतेहीहै

और सर्वज्ञ शासनमें कर्मबंधन व धर्मकार्यसंबंधी समय २ का व श्वासोश्वासका हिसाब किया जाताहै उसमें ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन कहनेवाले, यदि कसाइ व व्यभिचारी वगैरह पापीप्राणियोंके कर्मबंधन और साधु मुनिमहाराजोंके व ब्रह्म चारी वगैरह धर्मी प्राणियोंके कर्मक्षयकरने संबंधीभी ८० दिनके ५० दिन, व १००दिनके ७०दिन कहेंगे, तबतो-सर्वज्ञ भगवान्के प्रवचन की व धर्म-कर्मकी अनादिमर्यादा भंग करनेके दोषी ठहरेंगे, अथवा

८०दिनके व १००दिनके धर्म-कर्म समय२के श्वासोश्वासके हिसाब से सर्वज्ञ भगवान्के प्रवचनानुसार अनादिमर्यादा मुजब मान्यकरेंगे, तो-८०दिनके ५०दिन,व १०० दिनके ७० दिन कहनेकाआग्रह झूठाही ठहरजावेगा यहभी न्यायबुद्धिसे विचारने योग्यहे, विशेष क्या लिखें

देव द्रव्य निर्णयः ।

१-वर्तमानिक देवद्रव्यकी चर्चा सबंधी अर्पण बुद्धिसे भगवानूको चढाई हुई वस्तु देव द्रव्यमें गिनी जातीहे, यह बात सर्वमान्य है, इसी तरहसे पूजा ओर आरतीकी बोलीभी अर्पण बुद्धिसे पहिले सेही सघ तरफसे भगवान्को चढाई हुई वस्तु हे, अर्थात्-देवद्रव्यमें जानेका नियम होचुका हे, उनको अन्य मार्गमें ले जानेसे विनाकारण सघकी आज्ञा भगका व भगवान्को अर्पण कीहुई वस्तु रूपातरसे पीछी लेनेका दोष आताहे, इसलिये ऐसा करना योग्य नहीं हे।

२-भगवानूकी पूजा आरतिकी बोली कलेश निवारण करनेके लिये नहींहे, किंतु शुद्ध भक्तिके लिये है, देखो-अपने अनुभवसे यही मालूम होता है, कि-बहुत भाविक जन आज अमुक पर्व दिवस है, मेरी शक्तिके अनुसार आज १०।२० या १००।२०० रुपये भगवान्की भक्तिके लिये देवद्रव्यमें जावें तोभी कोई हरज नहीं है, मगर आज तो भगवान्की पहिलो पूजा आरति मैं करू, तो मेरे कल्याण-मगल होवे,नर्पभर भगवान्की भक्तिमे जावें,इसी निमित्तसे मेरा द्रव्य भगवानकी भक्तिमें लगेगा तो मेरी कमाईभी सफल होवेगी, ओर सुकृतकीकमाईवालेभाग्यशालीको आज भगवान्की भक्तिका पहिलालाभ मिलेगाऐसाकहनेमेंभीआताहे इत्यादि शुभभावसेबोलीबोलतेहे, इसलिये कलेश निवारणकेलिये बोली बोलनेका ठहराना योग्य नहीं हे

औरभी देखो-भगवान्केमदिर बनवाने व प्रतिमा भरवानेमें महान् लाभ कहा हे, यह कार्य भक्तिकेलिये धर्म बुद्धिसे करनेकी शास्त्राज्ञा हे तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखा देखीके विरोधभावसे करतेहे,सो यह अनुचितहै इसी तरहसे बोली बोलनेका रीवाजभी भगवान्की भक्तिके लिये महान् लाभका हेतु है, तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखा देखीके विरोध भावसेबोलतेहैं उनको देखकर बोलीबोलनेके रीवाजको भक्ति राग छोडकर कलेश निवारणका हेतु ठहराना योग्यनहींहै

तथा देवद्रव्यकी तरह साधारण द्रव्यकीभी बहुतही आवश्यकताहे, उसमें बे दरकारीका दोष मुनिमडल व आगेवानोंपरहै औ

इभी देव द्रव्य संबंधी सर्व शंकाओंका समाधान व साधारण द्रव्य की वृद्धिके लिये उपायवगैरह बहुतबातोंके खुलासे समाधान 'देव द्रव्य निर्णय' नामा पुस्तकमें लिखनेमें आवेंगे

निवेदन और उपकार

इसग्रंथकी कोईबात समझमें न आवे, या बांचते २ कोई शंका होवे, तो इस ग्रंथके कर्ताको लिखकर खुलासा मगवानेका सबको हक है, ग्रंथ संबंधी सर्व तरहका जवाबदार लेखक है.

इस ग्रंथमें अनुमान ३०० शास्त्रोंके प्रमाण बतलाये गयेहैं, इस ग्रंथके बनवाने संबंधी शास्त्रोंके संग्रह करने वगैरहमें, श्रीमान् जिनयशसूरिजीमहाराज, श्रीमान् शिवजीरामजीमहाराज, श्रीमान्जिन चारित्रसूरिजीमहाराज, श्रीमान् कृपाचंद्रसूरिजीमहाराज, पन्यासजी श्रीमान् केशरमुनिजीमहाराज, पं०श्रीमान्गुमानमुनिजीमहाराज और कलकत्तानिवासी उ श्रीमान्जयचंद्रजीगणि व रायबहादुर बद्रीदास जीजौहरीवगैरहोंने जो जो मदतदीहै, उनका मैं उपकार मानता हू

संवत् १९७८ वैशाखशुदी ३ हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर

विनाकिंमतभेटसे पुस्तक मिलनेके नाम व स्थान

यहग्रन्थ एकहजार पृष्ठकाबड़ाहोनेसे दो विभागमें प्रकटकियाहै

१ बृहत्पर्युषणा निर्णय पूर्वार्द्ध, प्रथम-दूसरा खंड
२ बृहत्पर्युषणा निर्णय उत्तरार्द्ध, तीसरा खंड
३ लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथम अंक
४ प्रश्नोत्तर विचार ५-६-७ प्रश्नोत्तर मंजरीके १-२-३ भाग
८-९ हर्षहृदय दर्पण १-२ भाग १० आत्मभ्रमोच्छेदन भानु

यह ग्रन्थभी छपनेवाले हैं

१ देवद्रव्यनिर्णय २ न्यायरत्न समीक्षा ३ प्रवचनपरीक्षा निर्णय

---

१ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० श्रीजैनश्वेतांबर मित्रमंडल केनिंगस्ट्रीट नं २१, मु०-कलकत्ता
२ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० बडा उपाश्रय देश-मारवाड, मु०-बीकानेर
३ श्रीजिनदत्तसूरिजी ज्ञानभंडार, ठे०गोपीपुरा-शीतलवाडी देश-गुजरात, मु०-सुरत
४ जौहरी मानूमलजी धनपतसिंहजी भणशाली, सुदर्शनबिल्डिंग ठे० फतहपुरी, मु०- दिल्ली

॥ ॐ ॥

श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः

प्रथम भागकी भूमिका

पहिले इसको अवश्यही पढिये.

मांगलिक्यके करनेवाले श्रीस्थंभनपार्श्वनाथ जिनेश्वर भगवान् को नमस्कार करके, श्रीजिनाज्ञाके अभिलाषी सर्व सज्जन महाशयोंको निवेदन किया जाता है, कि-जन्म-मरण-रोग-शोक-आधि-व्याधि संयोग-वियोगादि-उपाधियुक्त दुष्तर संसार समुद्रके परिभ्रमणका दुःख निवारण करनेके लिये, आत्महितैषी पुरुषोंको जिनाज्ञानुसार शांतिपूर्वक धर्मकार्य करने चाहिये। जिसमें वर्तमानिक द्रव्य गच्छ परंपरा बहुत समुदायकी देखादेखीकी रूढीको अहितकारी जानकर त्याग करनाचाहिये। और सुधारेके जमानेमें गच्छांतरोंके भेदोंकी भिन्न भिन्न प्रवृत्ति देखकर शंकाशील होकर धर्मकार्योंमें शिथिलता करनाभी योग्य नहीं है, किंतु 'मेरा सो सच्चा' का आग्रह छोडकर मध्यस्थ बुद्धिसे गुणग्राही होकरके सत्यकी परीक्षाकरके उसको अंगीकार करना, यही मनुष्य जन्मकी सफलताका कारण है।

यद्यपि खंडनमंडनके विवादमें सत्यासत्यका विचार छोडकर अपनापक्ष स्थापन करनेके लिये शुष्कवाद या वितंडावाद करनेवाले आजकल बहुत लोग देखे जाते हैं मगर दूसरेकी सत्यबात अंगीकार करके अपना असत्य आग्रहको छोडनेवाले बहुतही थोडे देखनेमें आते हैं जब दूसरेके पक्षका खंडन करनेके इरादेसे उद्यम करनेमें आता है, तब उसपक्षवालोंकी अनेक शास्त्रोंके प्रमाणसहित युक्तिपूर्वक सत्यबातकोभी छोडकर भोले जीवोंको अपना पक्ष सत्य दिखलाने के लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके संबंध वाले सब पाठोंको छुपाकरके थोडेसे अधूरे २ पाठ लिखते हैं, तथा शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध उनके अर्थ करते हैं, या शास्त्रीय बातको झूठी ठहरानेकेलिये कुयुक्तियेंभी लगानेमें उद्यम किया जाता है अथवा विषय संबंध

छोडकर विषयांतर लेकर निष्प्रयोजन व्यक्तिगत आक्षेप करनें लग जातेहैं और अपनी या अपने पक्षकारोंकी बिनाप्रसंगही बडाई करने लगतेहैं। मगर शास्त्रोंमेंतो बतायाहै कि-आरभप्रदेशगत मिथ्यात्वमेंभी प्ररूपणागत मिथ्यात्व अधिक दोषवाला होनेसे अनेक भवभ्रमण करानेवाला होता है।

और अनादिकालसे ११ अगादिशास्त्रोंको देखकर अनंतजीव ससार परिभ्रमणके दुःख से मुक्त होगये हैं, और अनंतजीव संसारपरिभ्रमणके दुःखको बढानेवालेभी होगये हैं। इसका आशय यही है कि, अतीव गहनाशयवाले, अपेक्षा गर्भित शास्त्रकारोंके अभिप्रायको समझकर वर्ताव करनेवाले तो मुक्तिगामी होते हैं, और शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर शब्दमात्रके आग्रहमें पडकर विवादकरनेवाले संसारगामी होते हैं। मगर जो आत्मार्थी होते हैं, वो तो शब्द मात्रके विवादको छोडकर तात्पर्यार्थ तरफ दृष्टि करते हैं, और जो आग्रही होते हैं वो तात्पर्यार्थको छोडकर शब्दमात्रके विवादको विशेष बढाते हैं। इसीही कारणसे रागद्वेषादि भाव शत्रुओंको हटानेवाला श्रीवीतराग सर्वज्ञ भगवान्का कथन किया हुआ अविसंवादी शांति प्रिय श्रीजैनशासनमेंभी अभी विसंवादरूपी विरोध भावको स्थान मिलगया है।

और पहिले तो सर्व तीर्थंकर महाराजोंके जितने गणधर होतेथे उतनेही गच्छ [साधु समुदायकी ओलखान] होतेथे और पीछे भी प्रभावकाचार्योंकी बहुत समुदाय होनेसे कुल गण शाखा वगैरह होतेथे,मगर सबकी प्ररूपणा और क्रिया एक समान होनेसे परस्पर मिलते हुए आत्मकल्याण करतेथे,उस समय विरोधी प्ररूपणा के अभावसे किसीकोभी कोई तरहकी शंका उत्पन्न होनेका कारण या अपने गच्छके आग्रहका कारण नहींथा, मगर श्रीवीरप्रभुके निर्वाण बाद पडताकाल होनेसे कितनेक शिथिलाचारी चैत्यवासी होगये, उन्हींसे गच्छोंका आग्रह और भिन्नभिन्न प्ररूपणा विशेष होने लगी तबसेही शास्त्रोक्त जिनपूजा विधिमें कुछ अविधिभी होगई और जैन पंचांगके विच्छेद होनेपर जैनसमाज लौकिक टिप्पणा मानने लगा, उसमें श्रावणादिभी महीने बढतेहैं। उस मुजब वर्तावशुरू किया, तबसे महामांगल्यकारी शांतिमय अतीवउत्तम पर्युषणा जैसे पर्व आराधनकरनेमेंभी भेद पडगया और शासन नायक श्रीवर्द्धमान स्वामीके छ कल्याणक नहीं मानने वगैरह कितनीही बातोंका विवाद

उपस्थित होगया उसके विषयमें आगे लिखनेमें आवेगा, मगर इस जगह तो हम केवल पर्युषणा संबंधी थोडासा लिखतेहैं

जैन पंचागके अनुसार जब वर्ताव करनेमें आताथा, तब पर्युषणा करनेसंबंधी " अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसई मासो" इत्यादि निशीथ भाष्य,चूर्णि, बृहत्कल्प भाष्य,चूर्णि,वृत्ति, पर्युषणाकल्प निर्युक्ति,चूर्णि,वृत्ति वगेरह प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा लिखा है, कि, आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुमें जीवाकुलभूमि होनेसे जीवदयाके लिये मुनियोंको विहार करनेका निषेध और वर्षाकालमें एक स्थानमें ठहरना, उसका नाम पर्युषणाहै। इसलिये जब अधिक महीना होवे तब उसको तेरह [१३] महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे २० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना। और जिस वर्षमें अधिक महीना न होवे, तब उसको १२महीनोंका चंद्र वर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना [वर्षाकालमें रहनेका निश्चय कहना] उसीमेंही उसीदिन वार्षिक कार्य और उसका उच्छव किया जाता है, यह अनादि नियमहै इसलिये निशीथभाष्य,चूर्णि,पर्युषणा कल्पनिर्युक्ति,चूर्णि, जीवाभिगमसूत्रवृत्ति, धर्मरत्नप्रकरणवृत्ति, कल्पसूत्रमूल और उसकी सर्व टीकाओंमें संवच्छरी शब्दकोभी पर्युषणा शब्दसे व्याख्यान कियाहै,और प्रसिद्ध पर्युषणाकरनेके दिनसे भिन्न [अलग]वार्षिक कार्योंका दिन कोईभी नहीं है, किंतु एकही है, इसीको पर्युषणा पर्व कहो, संवच्छरीपर्व कहो सांवत्सरिकपर्व कहो या वार्षिकपर्व कहो, सबका तात्पर्य एकही है। और कारणवश " अंतरा वि य से कप्पइ, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तए " इत्यादि कल्पसूत्र वगेरह शास्त्र पाठोंके प्रमाणसे आषाढ चौमासीसे ५०वें दिन पहिले तो पर्युषणा करना कल्पताहै, मगर ५०वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करके आगे पर्युषणा करना नहीं कल्पताहै और५०वें दिनतक पर्युषणाकरनेको ग्रामनगरादि योग्यक्षेत्र न मिलसके तो, जंगलमेंभी वृक्ष नीचेभी अवश्यही पर्युषणाकरनाकहाहै और अभिवर्द्धितवर्षमें२०दिने तथा चंद्रवर्षमें५०दिने पर्युषणा नकरे और विहार करे तो "छकाय जीव विराहणा 'इत्यादि स्थानांगसूत्रवृत्तिवगेरह शास्त्रपाठोंसे छकायके जीवोंकी विराधना करनेवाला आत्मघाती, संयम और जिनाज्ञाको विराधन करनेवाला कहा है। यह नियम जैन पंचांगानुसार पौष और आषाढ बढताथा तब चलताथा, मगर जबसे जैन पंचांग

विच्छेद हुआ, तबसे लौकिक टिप्पणा मुजब मास पक्ष तिथी वार नक्षत्र मुहूर्त्तादि व्यवहार जैन समाजमें शुरू हुआ उसमें श्रावण भाद्रपदादि मासभी बढने लगे तब जैनमतके श्रीवीर निर्वाणसे९९३ वर्षे अधिक महीने वाला वर्षमें २०दिन पर्युषणापर्व करनेकी मर्यादा बंध करी और अधिक महीना हो,चाहे न हो, तो भी ५०वें दिन पर्युषणापर्वमें वार्षिक कार्य करोका नियम रक्खा है सो "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगाते चाऽऽषाढ एव वर्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते तत पञ्चाशतैव दिने पर्युषणा युक्तेति वृद्धा "यह पाठ कल्पसूत्रकी सुबोधिकादिसर्व टीकाओंमें प्रसिद्धही है। उसके अनुसार श्रावणबढेतो दूसरेश्रावणमें और भाद्रपदबढेतो प्रथम भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वका आराधन करना जिनाज्ञा है। और पहिले मास वृद्धिके अभावसे५०वें दिन पर्युषणा करतेथे, तब पर्युषणाकेबाद कार्तिक तक ७० दिन ठहरतेथे,मगर जब मास वृद्धि होनेपर २० दिने पर्युषणा करतेथे,तब तो पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेथे,यहबात निशीथभाष्य चूर्णि पर्युषणाकल्पचूर्णि बृहत्कल्पचूर्णि,वृत्ति जीवानुशासनवृत्ति गच्छाचारपयन्नवृत्ति,स्थानांगसूत्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्र पाठोंसे सिद्ध होतीहै। और वर्तमानमें श्रावण, भाद्रपद तथा आश्विन बढनेपरभी५०दिने पर्युषणापर्व करनेसे पिछाडी कार्त्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। यह भी कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके अनुसार होनेसे जिनाज्ञानुसारही है, इसलिये इसमें किसी प्रकारका दोष नहीं है।

इस ऊपरके शास्त्रीय लेखपर दीर्घ दृष्टिसे निष्पक्ष होकर मध्यस्थ बुद्धिसे विचार किया जावे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा,कि-पर्युषणा पर्व करनेमें जैन टिप्पणानुसार या लौकिक टिप्पणानुसार अधिक मास अथवा कोइभी मास, या कोइभी दिन कभी बाधक नहीं होसकताहै क्योंकि पर्युषणापर्वकरनेमें५०दिनोंकी गिनतीका व्यवहारिक शास्त्रीय नियम होनेसे पर्युषणा पर्व दिन प्रतिबद्ध ठहरते है किंतु मास प्रतिबद्ध कभी नहीं ठहरसकते। और ५० दिनोंकी गिनतीमें अधिक महीनेके३० दिवस तो क्या मगर एक दिवस मात्रभी गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता। जिसपरभी पर्युषणा पर्व-दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपद मास प्रतिबद्ध ठहराना १ अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीचमेंसे छोड देना २ बीश दिनोंसे पर्युषणा पर्व करनेकी बातको सर्वथा उडा देना ३ श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढनेसे १००

दिन होनेपरभी उसको ७० दिन कहनेका आग्रह करना ४ सो यह सब बातें सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्ध है

अब पर्युषणा पर्व करने संबंधी ५० दिनोंकी गिनती करनेमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड देनेका आग्रह करने के लिये कितनेक लोग शास्त्रविरुद्ध होकर कितनेक कुयुक्तियें करते हैं, उसके विषयमें थोडासा लिखते हैं।

१— कल्पसूत्रादिमें आषाढ चौमासीसे दिनोंकी गिनतीसे ५० वें दिन अवश्यही पर्युषणापर्व (वार्षिक कार्य) करने कहेहैं, उसमें अधिक महीनेका १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता और ५० वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करनानहीं कल्पताहै। जिसपरभी वर्तमानिक कितनेक लोग श्रावण भाद्रपद बढनेपर ८० दिने पर्युषणापर्व करतेहैं, सो शास्त्रविरुद्धहै, इसका विशेष खुलासा इसीही "बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रंथकी आदिसे पृष्ठ २७ तक देखो

२—अधिकमहीनेके ३० दिन जैनशास्त्रोंमें गिनतीमें नहीं लिये, ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महीनेके ३० दिनोंको दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें और युगकी गिनतीमें खुलासापूर्वक गिनेहैं,इसका विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ२८ से४८तक

३— अधिकमहीना काल चूलारूप है, सो गिनतीमें नहीं लेना ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, निशीथचूर्णि, दशवैकालिक बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें अधिक महीनेको काल चूलाकी शिखर रूप श्रेष्ठ, (उत्तम) ओपमादी है, और उसके ३० दिनोंको गिनतीमें भीलिये हैं इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ ४९ से ६५ तक। तथा पृष्ठ ७५ से ९१ तक

४— पर्युषणाकल्प चूर्णि तथा निशीथ चूर्णिके पाठसे दो श्रावण होवे तो भी भाद्रपदमें पर्युषणापर्वकरनेका ठहरातेहैं, सोभी शास्त्रविरुद्धहै,दोनों चूर्णिके पाठोंमें अधिकमहीना पोष अथवा आषाढ होवें तब उसके३०दिनोंको गिनतीमें लेकर आषाढ चौमासीसे२० वें दिन श्रावणमें पर्युषणा पर्व करना लिखाहै, और अधिक महीना न होवे तब ५० वें दिन भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखा है। और ५० वे दिनको उल्लंघन करनेवालोंको प्रायश्चित्त कहा है, इसलिये दो श्रावण होनेपरभी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा पर्व करना योग्य नहीं है। और अधिकमासके ३० दिन गिनतीमें छोड देनाभी शास्त्र विरु

विच्छेद हुआ, तबसे लौकिक टिप्पणा मुजब मास पक्ष तिथी-वार नक्षत्र मुहूर्त्तादि व्यवहार जैन समाजमें शुरु हुआ उसमें श्रावण भाद्रपदादि मासभी बढने लगे तब जैनसंघने श्रीवीर निर्वाणसे९९३ वर्षे अधिक महीने वाला वर्षमें २०दिन पर्युषणापर्व करनेकी मर्यादा बंध करी और अधिक महीना हो,चाहे न हो, तो भी ५०वें दिन पर्युषणापर्वमें धार्मिक कार्य करनेका नियम रखवाहे सो " जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पंचाशतैव दिने पर्युषणा युक्तेति वृद्धा" यह पाठ कल्पसूत्रकी सुबोधिकादिसर्व टीकाओंमें प्रसिद्धही है। उसके अनुसार श्रावणवढेतो दूसरेश्रावणमें और भाद्रपदवढेतो प्रथम भाद्रपदमें ५०दिने पर्युषणापर्वका आराधन करना जिनाज्ञा है। और पहिले मास वृद्धिके अभावसे ५०वें दिन पर्युषणा करतेथे, तब पर्युषणाकेबाद कार्तिक तक ७० दिन ठहरतेथे,मगर जब मास वृद्धि होनेपर २० दिने पर्युषणा करतेथे,तब तो पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेथे,यहबात निशीथभाष्य चूर्णि पर्युषणाकल्पचूर्णि बृहत्कल्पचूर्णि,वृत्ति जीवानुशासनवृत्ति गच्छाचारपयन्नवृत्ति,स्थानांगसूत्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्र पाठोंसे सिद्ध होतीहै। और वर्तमानमें श्रावण, भाद्रपद तथा आश्विन बढनेपरभी५०दिने पर्युषणापर्व करनेसे पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। यह भी कल्पसूत्रकी सब टीकाओंके अनुसार होनेसे जिनाज्ञानुसारही है, इसलिये इसमें किसी प्रकारका दोष नहीं है।

इस ऊपरके शास्त्रीय लेखपर दीर्घ दृष्टिसे निष्पक्ष होकर मध्यस्थ बुद्धिसे विचार किया जावे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा कि-पर्युषणा पर्व करनेमें जैन टिप्पणानुसार या लौकिक टिप्पणानुसार अधिक मास अथवा कोइभी मास या कोइभी दिन कभी बाधक नहीं होसकताहै क्योंकि पर्युषणापर्वकरनेमें५०दिनोंकी गिनतीका व्यवहारिक शास्त्रीय नियम होनेसे पर्युषणा पर्व दिन प्रतिबद्ध ठहरते हैं किंतु मास प्रतिबद्ध कभी नहीं ठहरसकते। और ५० दिनोंकी गिनतीमें अधिक महीनेके३० दिवस तो क्या मगर एक दिवस मात्रभी गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता। जिसपरभी पर्युषणा पर्व-दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपद मास प्रतिबद्ध ठहराना १ अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीचमेंसे छोड देना २ बीश दिनोंसे पर्युषणा पर्व करनेकी बातको सर्वथा उडा देना ३ श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढनेसे १००

जब पर्युषणा पर्वभी नहीं हो सकते ऐसा कहनाभी प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्धहै,मुहूर्त्तवाले विवाहादि तो मलमास, अधिकमास, क्षयमास, १३ महिनोंके सिंहस्थ, अधिकतिथि,क्षयतिथि,गुरुशुक्रका अस्त और हरि शयनका चोमासा वगैरह कितनेही,तिथि वार नक्षत्र मास वगैरह योगोंमें नहीं किये जाते,मगर बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्य करनेमें तो किसी समयका निषेध नहीं हो सकता इसी तरहसे पर्युषणा पर्वभी अधिकमासमें,तथा १३महीनोंके सिंहस्थमें,और चोमासेमेंही करनेमें आते हैं। इसमें अधिकमहीना या कोईभी योग बाधक नहीं हो सकता है इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १९३ से २०४ तक देखो

११- अधिकमहीनेको वनस्पतिभी अंगीकार नहीं करती,ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महीनेके ३० दिन तो क्या परंतु १ दिन मात्रभी वनस्पति कभी नहीं छोड सकती, किंतु हरेक समय प्रत्येक दिवसको अंगीकार करतीहै इसकाभी विशेष खुलासा इसी ही ग्रंथके २०५ से २१० तक देखो

इत्यादि मुख्य २ बातों संबंधी शास्त्रीय प्रमाण और युक्तिपूर्वक इस प्रथमभागमें अच्छीतरहसे खुलासापूर्वक लिखनेमें आया है

और इस ग्रंथको पक्षपात रहित होकर संपूर्ण पढनेवाले सज्जनोंको सत्यासत्यकी परीक्षा स्वयं होसकेगी,इसलिये यहांपर विशेष लिखनेकी कोई अवश्यकता नहीं है।

इस ग्रंथ कारका उद्देश क्या है ?

इस ग्रंथकारका मुख्य उद्देश यहीहै,कि सबगच्छवाले आपसमें हिलमिलकर संपपूर्वक सुखशांतिसे धर्मकार्य हमेशाकरें,मगर पर्युषणा जैसे अतीवउत्तम धार्मिकशांतिके दिनोंमें अधिक महीनेके३०दिनोंको धर्मकार्योंमें गिनतीमेंसे छोड देनेके लिये तपगच्छके कितनेक मुनिमहाराज जो खंडन मंडनका विषय व्याख्यानमें चलाते हैं, सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है,और समयकेभी प्रतिकूल होनेसे कर्मबंधन, कुसंप व शासनहिलना कराने वालाहै (इसीबातका विषेश निर्णय इसी ग्रंथमें अच्छी तरहसे लिखा गया है) उसको (इस ग्रंथके संपूर्ण बांचे बाद) अवश्यही बंध करना योग्य है

पक्षपात रहित ग्रंथकी रचना

"पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेष कपिलादिषु। युक्तिमद्वचन यस्य,तस्य कार्य परिग्रह ॥१॥" इत्यादि श्रीहरिभद्रसूरिजी जैसे महापुरुषोंके न्यायानुसार पक्षपात रहित होकर आगम पचांगी सम्मत युक्तिपू

हूं है इसकाभी विशेष खुलासा देखो दोनों चूर्णिके विस्तार पूर्वक पाठों सहित इसीग्रंथके पृष्ठ ९१ से १०६ तक

५—जैन टिप्पणामें अधिकमहीना होताथा तबभी २० वें दिन श्रावण शुदि पंचमीको पर्युषणा पर्वमें धार्मिक कार्य होतेथे, इसलिये २० वें दिनकी पर्युषणामें धार्मिक कार्य कभी नहीं हो सक्ते, ऐसा कहनाभी सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै, इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसीग्रंथके पृष्ठ १०७ से ११७ तक,

६- श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढे तो भी ५० वें दिन पर्युषणापर्व करनेसे शेष कार्तिक मास तक १०० दिन होते हैं, जिसपरभी ७० दिन रहनेका आग्रह करते हैं, सो भी शास्त्र विरुद्ध है, ७० दिन रहनेका तो मास वृद्धिके अभाव संबंधीहै,मगर मास वृद्धि होवे तबतो १०० दिन रहना शास्त्रानुसार है। इसकाभी विशेष खुलासा इस ग्रंथमें पृष्ठ ११७ से १२८ तक, तथा १७४ से १८० तक देखो

७- अधिकमहीना होवे उसवर्षके १३ महीने व एक चौमासे के ५ महीने होते हैं उतनेही महीनोंके कमबंधनभी होते हैं, तोभी उसमें १२ महीनोंके व ४ महीनोंके क्षामणेकरने कहतेहैं सोभी शास्त्र विरुद्ध है अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंके व ५ महीनोंके क्षामणे करने शास्त्रानुसार हैं, इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १३२ से १३६ तक और पृष्ठ ३६२ से ३७८ तक देखो

८- अधिक महीनेमें सूर्यचार नहीं होता, ऐसा कहनाभी शास्त्रविरुद्धहै, छ ऊ महीने१८३ वें दिन, सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरायनमें और उत्तरायनसे दक्षिणायनमें हमेशा होता रहता है, उसमें अधिक महीनेके ३० दिनोंमेंभी जैनशास्त्र मुजब या लौकिक टिप्पणामुजब भी सूर्यचार होताहै इसकाभी विशेष खुलासा देखो इसी ग्रंथके पृष्ठ १३७ से १३९ तक

९- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें देवपूजा, मुनिदान, प्रतिक्रमण वगैरह धर्मकार्य करने, मगर उसके ३० दिनोंको गिनतीमें नहीं लेनेका कहना,सो भी प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्धहै जितने रोज देवपूजादि धर्मकार्य किये जावेंगे, उतने दिन अवश्यही गिनतीमें लिये जावेंगे, और जैसे मुनिदानादि कार्य दिन प्रतिबद्धहै वैसेही पर्युषणपर्वभी५०दिन प्रतिबद्धहै इसकाभी विशेष खुलासा पृष्ठ १४२ से १४३ तक देखो

१० अधिक महिनेमें विवाह आदि शुभकार्य नहीं होते, उसमु

गयाहै उसकोसमझकर उनकेपक्षके अनुयायीविद्वान् पुरुषोंको उनकी सब भूलोंको क्रमश अवश्यही सुधारना योग्य है,तथा इस ग्रथमेंभी जो कोई बात शास्त्र विरुद्ध देखनेमें आवे, तो जरूर मेरेको लिख भेजना लिखने वालेका उपकार मानकर अपनी भूलको अवश्यही स्वीकार करूगा, और दूसरी आवृत्तिमें उसको सुधार लूगा

यह ग्रथ विलबसे प्रकट होनेका कारण।

इस ग्रथकी रचनाका कारण ग्रथकी आदिमेंही लिखाहै, तथा सुबोधिका,किरणावलीआदिककी खडनमडनसबधी भूलोंका कारण तो प्रकटही है। और यह ग्रथ छपनेपर शीघ्रही प्रकट होने वालाथा मगर कितनेही महाशयोंका कहनाथा कि यदि मुनिमडलकी सभामें, विद्वानोंकी समक्ष,इस विषयका शास्त्रार्थसे निर्णय हो जावे,तो बहुत ही अच्छा होवे,और तीन वर्ष पहिले दो भाद्रपद होनेसे इस विवाद के निर्णय करनेकी चर्चाभी खूब जोरशोरसे चलीथी,तब मैनेभी'मुब ई' से 'पर्युषणा निर्णयका शास्त्रार्थ' करने सबधी विज्ञापन छपवा कर जाहिर कियाथा उसपर आनदसागरजी और शातिविजयजी लोकलज्जासे हा हा करने लगेथे,तो भी बीचमें व्यर्थही आडी स्वार्ते निकालकर चुप बैठ गये, इसका खुलासा आगे लिखूंगा और अन्य कोईभी मुनि सभामें निर्णय करनेको तैयार नहीं हुए, इसलिये अब यह ग्रथ इतने विलबसे प्रकाशित किया जाता है यह ग्रथ एक ह जार पृष्टके लगभग होनेसे, ४ भागोंमें अनुक्रमसे यथा अवसर प्र कट होता रहेगा और मगवाने वाले साधु साध्वी श्रावक श्राविका यति श्रीपूज्य ज्ञान भडार लायब्रेरी और साक्षर वर्ग सबको विना किं मतसे भेट भेजा जावेगा।

१–देखिये–एक वहेम॥

तपगच्छके कितनेक मुनिमहाराजोंने अपनी समाजमें यहभी एक तरहका वहेम ठसा दिया है,कि 'अधिकमहीनेमें विवाह सादी वगैरह शुभकार्यलोगनहींकरतेहें,उसीतरह अपनेभी अधिकमहीनेमेंपर्युषणा पर्वादि धार्मिककार्य नहीं हो सकतेहें', मगर इस बातपर तत्त्व दृष्टि से विचार कियाजावे तो यहभी एकतरहका एकातआग्रहसे झूठाही वहेमहे,क्योंकि विवाहादि मुहूर्त्तवाले कार्य तो मास,पक्ष,तिथि,वार नक्षत्रादि देखकर, वर्ष छ महीने आगे पीछेभी करते ह परतु विना मुहूर्त्तके लोकोत्तर धर्मकार्य तो नियमित दिवससे आगेपीछे कभीनहीं

धेय खरतरगच्छ,तपगच्छ,अचलगच्छादिसर्व गच्छवालोंके शास्त्र का फर्योंका सग्रह इसग्रथमें करनेमें आया है। मगर अमुक गच्छवालेके अमुक आचार्यके वाक्य हमको मजूर नहीं, ऐसा एकान्त आग्रह किसी जगहभी करनेमें नही आया और शास्त्रविरुद्ध व युक्ति बाधित वाक्य तो किसीगच्छवालेकाभी मान्य करना योग्य नहीं यह बात सर्व जन सम्मतहीहै, वोही न्याय इस ग्रथमें रक्खा गया है इसलिये पाठकग णकोभी किसी गच्छ समुदायका पक्षपात न रखकर अवश्यही इस ग्रथको सपूर्ण अवलोकन करके सार निकालना चाहिये

इस ग्रथका लेखक म ग्रास ससारीपनेमें तपगच्छका वीसापोरवाल श्रावकथा,मगर उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके पास श्री सिद्धक्षेत्र (पालीताणा) में विक्रम सवत् १९६० वैशाख सुदी २ को ख रतरगच्छमें दीक्षा अगीकार की,तो भी दोनों गच्छोंके पूर्वाचार्योपर तथा वर्तमानिक मुनिमहाराजोंपर पूज्यभाव था, और है भी। मगर जिस२अशमें शास्त्र विरुद्ध होकर परपराके वहानें जिस२वातोंका झू ठाही आग्रह किया गयाहै,उन२वातोंकी आलोचना करके शास्त्रानुसार सत्य बातें जनसमाजमें प्रकट करनी, यह मेरा खास कर्तव्यही समझ कर मने इस ग्रथमें इतना लिखाहै। इसमें किसीको पक्षपात न समज ना चाहिये और किसीको नाराज होनेकाभी कोई कारण नही है। वर्तमानिक समयके अनुसार परपराकी अधरूढीको त्यागना और सत्यको ग्रहण करना, सब सज्जनोंको प्रिय है। और समय बदलता जाता है, तथा सबसे शासनोन्नतिके काय करनेकी बहुत जरुरत है, इसलिये कुसुप बढानेवाला पर्युषणाके व्याख्यानमें आपसका खडन मडन चलाना योग्य नहीं है विशेष दूसरे, तीसरे और चोथे भागमें अनुक्रमसे लिखनेमें आवेगा।

क्षमा याचना तथा अपनी भूल स्वीकार.

इसग्रथकी रचना करते समय मेरी अल्पवय व अल्प अभ्यास होनेसे, इसग्रथमें-लेखक दोष, भाषादोष, दृष्टिदोष, पुनरुक्ति दोष, प्रेसदोष व शास्त्रीय पाठोंकी विशेष अशुद्धताके दोषोंकी पाठक गण अवश्यही क्षमा करेंगे,तथा हसकी तरह दोष त्यागकर सत्य २ सार ग्रहण करेंगे, ओर सुधारकर वाचेगे, दूसरी आवृत्तिमें इन सर्व दोषोंका सशोधन अच्छी तरहसे करनेमें आवेगा।

ओर सुबोधिका,दीपिका तथा किरणावली आदिकमें शास्त्रविरुद्ध जो जो बातें लिखी हैं, उ हीं सर्व बातोंका निर्णय इस ग्रथमें लिखा

गयाहै उसकोसमझकर उनकेपक्षके अनुयायीविद्वान् पुरुषोंको उनकी सब भूलोंको क्रमश अवश्यही सुधारना योग्य है,तथा इस ग्रथमेंभी जो कोई बात शास्त्र विरुद्ध देखनेमें आवे, तो जरूर मेरेको लिख भेजना लिखने वालेका उपकार मानकर अपनी भूलको अवश्यही स्वीकार करूगा, और दूसरी आवृत्तिमें उसको सुधार लूगा

यह ग्रथ विलबसे प्रकट होनेका कारण।

इस ग्रथकी रचनाका कारण ग्रथकी आदिमेंही लिखाहै, तथा सुबोधिका,किरणावलीआदिककी खडनमडनसबधी भूलोंका कारण तो प्रकटही है। और यह ग्रथ छपनेपर शीघ्रही प्रकट होने वालाथा मगर कितनेही महाशयोंका कहनाथा कि यदि मुनिमडलकी सभामें, विद्वानोंके समक्ष,इस विषयका शास्त्रार्थसे निर्णय हो जावे,तो बहुत ही अच्छा होवे,और तीन वर्ष पहिले दो भाद्रपद होनेसे इस विवाद के निर्णय करनेकी चर्चाभी खूब जोरशोरसे चलीथी,तब मैनेभी 'मुबई' से 'पर्युषणा निर्णयका शास्त्रार्थ' करने सबधी विज्ञापन छपवा कर जाहिर कियाथा उसपर आनदसागरजी और शातिविजयजी लोकलज्जासे हा हा करने लगेथे,तो भी बीचमें व्यर्थही आडी २ बातें निकालकर चुप बैठ गये, इसका खुलासा आगे लिखूंगा और अन्य कोईभी मुनि सभामें निर्णय करनेको तैयार नहीं हुए, इसलिये अब यह ग्रथ इतने विलबसे प्रकाशित किया जाता है यह ग्रथ एक हजार पृष्ठके लगभग होनेसे, ४ भागोंमें अनुक्रमसे यथा अवसर प्रकट होता रहेगा और मगवाने वाले साधु साध्वी श्रावक श्राविका यति श्रीपूज्य ज्ञान भडार लायब्रेरी और साक्षर वर्ग सबको बिना किंमतसे भेट भेजा जावेगा।

१–देखिये–एक वहेम ॥

तपगच्छके कितनेक मुनिमहाराजोंनेअपनी समाजमें यहभी एक तरहका वहेम ठसा दिया है,कि 'अधिकमहीनेमें विवाह सादी वगैरह शुभकार्यलोगनहींकरतेहैं,उसीतरह अपनेभी अधिकमहीनेमेंपर्युषणा पर्वादि धार्मिककार्य नहीं हो सकतेहैं', मगर इस वातपर तत्त्व दृष्टि से विचार कियाजावे तो यहभी एकतरहका एकातआग्रहसे झूठाही वहेमहै,क्योंकि विवाहादि मुहूर्त्तवाले कार्य तो मास,पक्ष,तिथि,वार नक्षत्रादि देखकर, वर्ष छ महीने आगे पीछेभी करते हैं परतु बिना मुहूर्त्तके लोकोत्तर धर्मकार्य तो नियमित दिवससे आगेपीछे कभीनहीं

हो सकतेहैं, इसलिये लौकिक वालेभी मुहूर्त वाले कार्य नहीं करते, मगर विना मुहूर्तकेदान, पुण्य, जप, तप परोपकारादि तो विशेषरूपसे कर नेके लियही अधिक महीनेको 'पुरुषोत्तमअधिकमास', कहते हैं, उसकी कथाभी सुनते हैं और सिद्धस्थानादिकादि तीर्थोंमें यात्राए मेलाभी भरते हैं। इसी प्रकार वर्तमानिक जैन समाजमेंभी मुहूर्तवाले कार्य अधिकमहीनेमें नहीं करते हैं मगर विना मुहूर्तवाले पर्युषणापर्वादि धार्मिक कार्य करनेमें कोई तरहकाभी हरजा नहीं है। अधिक महीनेके३०दिनोंको मुहूर्त्तादि कार्योंमें नहींलेते, परन्तु विना मुहूर्तके (दिवसोंकी सख्यासे प्रतिबद्ध) धार्मिक कार्योंमें लेतेहैं। बस! इसका मर्म सरल दिलसे न्यायपूर्वक समझ लिया जावे तो अधिकमहीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्म कार्य नहीं हो सकतेहैं ऐसा एकात आग्रहका झूठा वहेम आपसेही निकल सकता है इसका विशेष निर्णय इस ग्रथको वाचने वाले तत्वज्ञ विवेकी सज्जन स्वय कर सकेंगे।

२-यह वे समझ है, या हठाग्रह है॥

अधिक महीनेके अभावमें ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखाहै सो५० दिनके अदर करनेवाले आराधक होतेहैं ऊपरात करनेवाले तो विराधक होतेहैं इसलिये५०वें दिनकी रात्रिकोभी किसी प्रकारसेभी उल्लघन करना नहीं कल्पता है यह बात जैन समाजमें प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी सिर्फ भाद्रपद शब्दमात्रकोही पकडकर वर्तमानिक दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका आग्रह करतेहैं, मगर उसमें ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसका विचार कुछभी करते नहीं ह।

औरभीइसीतरहसे पर्युषणाके पिछाडीभी हमेशा७०दिन रखनेका एकात आग्रहकरतेहैं, मगर ७० दिनका नियम अधिकमहीनेके अभावसबधीहै, और अधिकमहीना होवे तबतो निशीथचूर्णि, वृहत्कल्पचूर्णि, स्थानागसूत्रवृत्ति और कल्पसूत्रकी टीकाओंमें १०० दिन रहनेका कहा है। इसलिये ७० दिन सबधी या १०० दिन सबधी यथा अवसर दोनों बातें आत्मार्थियोंको मान्य करने योग्य हैं, जिसपरभी १०० दिन सबधी शास्त्रप्रमाणोंको छोडकर सिर्फ ७० दिनके शब्द मात्रको आगेकरके १०० दिनकी जगहभी ७० दिन रहनेका आग्रहकरतेहैं इसलिये ऊपरकी दोनों बातों सबधी शास्त्रीय अपेक्षाकी यह बे समझ है, या समझने परभी हठाग्रह है। इसका विशेष विचार तत्वज्ञ पाठकगणको करना चाहिये

३-कहतेहैं मगर करते नहीं, यहभी देखिये-आग्रह !

अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोडदेनेका आग्रहक रनेवाले, जब दो श्रावण होंवे तबभी भाद्रपद तक ५० दिन हुए ऐसा कहतह, मगर प्रत्यक्ष प्रमाण व न्यायकी युक्तिसे विचारकर देखा जावे तो यहकहना प्रत्यक्ष प्रमाणसेभी सर्वथा अनुचितही मालूम होता है। देखिये- किसी श्रावक या श्राविकाने आषाढचौमासीसे उपवास करने शुरू किये होंवे, उनको बतलाईये दो श्रावण होनेपर ५०उपवास कबतक पूरेहोवेंगे ओर८०उपवास कबतक पूरे होवेंगे? इसके जवाबमें छोटासा बालक होगा वहभी यही कहेगा, कि ५० दिनोंके ५० उपवास दूसरे श्रावणमें ओर ८० दिनोंके ८० उपवास दो श्रावणहोनेसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे। इसीतरह साधुसाध्वीयोंके सयमपालनेमें,तथा सर्व ससारी जीवोंके प्रत्येक समयके हिसाबसे ७।८ कर्मोंके शुभाशुभ बधन होनेमें और धार्मिक पुरुषोंके धर्मकार्योंसे कर्मोंकी निर्जरा होनेमें व सूर्यके उदय अस्तके परिवर्त्तन मुजब दिवसोंके व्यतीत होनेके हिसाबमें, इत्यादि सर्व कार्योंमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन कहते हैं। ५० उपवास दूसरे श्रावण में, व ८० उपवास भाद्रपदमें पूरे होनेकाभी कहते हैं और उपवासादिक उपरके तमाम कार्योंमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीच में सामील गिनकर ८० दिन कहते हैं, ८० दिनोंके लाभालाभ पुण्य पापके कार्यभी प्रत्यक्षमें मजूरकरतेहैं ऐसेही दो आश्विनमहीने होनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक१०० दिन होतेहैं उसकेभी१००उपवास, व १०० दिनोंके कर्मबधन तथा धर्मकार्य वगैरह सर्व कार्योंमें १००दिन कहतेह ओर१००दिनोंको आपभी अपने व्यवहारमेंभी मजूर करते हैं। उसमें अधिक श्रावणके३०दिनोंको गिनतीमें लेनेकी तरह अधिक आसोजकेभी ३० दिनोंको गिनतीमें मान्य करना कहते हैं मगर जब दो श्रावण होवे तब भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं, व जब दो आश्विन होवे तबभी पर्युषणाकेबाद कार्त्तिक तक १०० दिन होते ह, उनोंको अगीकार करते नहीं और ८० दिनके ५० दिन, व १०० दिनके ७० दिन कहते ह यह जगत विरुद्ध कैसा जबरदस्त आग्रह कहा जावे, इसको विवेकी जन स्वय विचार सकते हैं।

४-कालचूलारूप अधिकमहीना पहिला या दूसरा !

यद्यपि जैनटिप्पणा विच्छेद है, इसलिये लौकिक टिप्पणा मु

हो सकतेहैं, इसलिये लौकिक वालेभी मुहूर्त वाले कार्य नहीं करते मगर विना मुहूर्त्तकेदान, पुण्य, जप, तप परोपकारादि तो विशेष रूपसे करनेके लियही अधिक महीनेको 'पुरुषोत्तम अधिकमास', कहते हैं, उसकी कथाभी सुनते हैं और सिद्धस्थानें नासिकादि तीर्थोंमें यात्रा व मेलाभी भरते हैं। इसी प्रकार वर्तमानिक जैन समाजमेंभी मुहूर्त्तवाले कार्य अधिकमहीनेमें नहीं करते हैं मगर विना मुहूर्त्तवाले पर्युषणापर्वादि धार्मिक कार्य करनेमें कोई तरहकाभी हरजा नहीं है। अधिक महीनेके ३० दिनोंको मुहूर्त्तादि कार्योंमें नहीं लेते, परन्तु विना मुहूर्त्तके (दिवसोंकी सख्यासे प्रतिबद्ध) धार्मिक कार्योंमें लेते हैं। बस ! इसका मर्म सरल दिलसे न्यायपूर्वक समझ लिया जावे तो अधिकमहीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्म कार्य नहीं हो सकतेहैं ऐसा एकांत आग्रहका झूठा वहेम आपसेही निकल सक्ता है इसका विशेष निर्णय इस ग्रंथको वाचने वाले तत्त्वज्ञ विवेकी सज्जन स्वयं कर सकेंगे।

२-यह वे समझ है, या हठाग्रह है ॥

अधिक महीनेके अभावमें ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखाहै सो ५० दिनके अंदर करनेवाले आराधक होतेहैं ऊपरांत करनेवाले तो विराधक होतेहैं इसलिये ५० वें दिनकी रात्रिकोभी किसी प्रकारसेभी उल्लंघन करना नहीं कल्पता है यह बात जैन समाजमें प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी सिर्फ भाद्रपद शब्दमात्रकोही पकडकर वर्तमानिक दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका आग्रह करतेहैं, मगर उसमें ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसका विचार कुछभी करते नहीं है।

औरभीइसीतरहसे पर्युषणाके पिछाडीभी हमेशा ७० दिन रखनेका एकांत आग्रहकरतेहैं, मगर ७० दिनका नियम अधिकमहीनेके अभावसबंधीहै, और अधिकमहीना होवे तबतो निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि, स्थानांगसूत्रवृत्ति और कल्पसूत्रकी टीकाओंमें १०० दिन रहनेका कहा है। इसलिये ७० दिन सबंधी या १०० दिन सबंधी यथा अवसर दोनों बातें आत्मार्थियोंको मान्य करने योग्य हैं, जिसपरभी १०० दिन सबंधी शास्त्रप्रमाणोंको छोडकर सिर्फ ७० दिनके शब्द मात्रको आगेकरके १०० दिनकी जगहभी ७० दिन रहनेका आग्रहकरतेहैं इसलिये ऊपरकी दोनों बातों सबंधी शास्त्रीय अपेक्षाकी यह वे समझ है, या समझने परभी हठाग्रह है। इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठकगणको करना चाहिये

३-कहतेहैं मगर करते नहीं, यहभी देखिये-आग्रह ?

अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोडदेनेका आग्रहक रनेवाले, जब दो श्रावण होवे तबभी भाद्रपद तक ५० दिन हुए ऐसा कहतहैं, मगर प्रत्यक्ष प्रमाण व न्यायकी युक्तिसे विचारकर देखा जावे तो यहकहना प्रत्यक्ष प्रमाणसेभी सर्वथा अनुचितही मालूम हो ता है। देखिये- किसी श्रावक या श्राविकाने आषाढचौमासीसे उप वास करने शुरू किये होवें, उनको बतलाईये दो श्रावण होनेपर ५०उपवास कबतक पूरेहोवेंगे और८०उपवास कबतक पूरे होवेंगे? इ सके जवाबमें छोटासा बालक होगा वहभी यही कहेगा, कि ५० दि नोंके ५० उपवास दूसरे श्रावणमें और ८० दिनोंके ८० उपवास दो श्रावणहोनेसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे। इसीतरह साधुसाध्वीयोंके स यमपालनेमें,तथा सर्व ससारी जीवोंके प्रत्येक समयके हिसाबसे ७।८ कर्मोंके शुभाशुभ बधन होनेमें और धार्मिक पुरुषोंके धर्मकार्योंसे कर्मोंकी निर्जरा होनेमें व सूर्यके उदय अस्तके परिवर्त्तन मुजब दि वसोंके व्यतीत होनेके हिसाबमें, इत्यादि सर्व कार्योंमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन कहते हैं। ५० उपवास दूसरे श्रावण में, व ८० उपवास भाद्रपदमें पूरे होनेकाभी कहते हैं और उपवा सादिक उपरके तमाम कार्योंमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको बीच में सामील गिनकर ८० दिन कहते हैं, ८० दिनोंके लाभालाभ पुण्य पापके कार्यभी प्रत्यक्षमें मजूरकरतेहैं ऐसेही दो आश्विनमहीने होनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक१०० दिन होतेह उसकेभी१००उप वास, व १०० दिनोंके कर्मबधन तथा धर्मकार्य वगैरह सर्व कार्योंमें १००दिन कहतेहैं और१००दिनोंको आपभी अपने व्यवहारमेंभी मजूर करते हैं। उसमें अधिक श्रावणके३०दिनोंको गिनतीमें लेनेकी तरह अधिक आसोजकेभी ३० दिनोंको गिनतीमें मान्य करना कहते हैं मगर जब दो श्रावण होवे तब भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं, व जब दो आश्विन होवे तबभी पर्युषणाकेबाद कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं, उनोंको अगीकार करते नहीं और ८० दिनके ५० दिन, व १०० दिनके ७० दिन कहते हैं यह जगत विरुद्ध कैसा जबरदस्त आग्रह कहा जावे, इसको विवेकी जन स्वय विचार सकते हैं।

४-कालचूलारूप अधिकमहीना पहिला या दूसरा ?

यद्यपि जैनटिप्पणा विच्छेद है, इसलिये लौकिक टिप्पणा मु

जब मास,पक्ष,तिथि,वार,नक्षत्रादिक मानतेहे मगर जैनशास्त्रमें भी जुदही हे इसलिये पर्युषणादि धार्मिक कार्य जैनसिद्धांतोंके मुजबही करनेमें आते है। और जैनशास्त्र मुजबही अभी सब गच्छवाले अधिक महीनेको कालचूला कहतेहे। किंतु कितनेक प्रथम महीनेको कालचूला कहतेहैं, मगर प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्ति, सूयप्रज्ञप्तिसूत्र वृत्ति चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति,लोकप्रकाश, ज्योतिषकरंडपयन्नावृत्ति वगैर ह शास्त्रप्रमाणोंसे दूसरा अधिकमहीना कालचूलारूप ठहरताहे देखिये—"सट्ठीए अइयाए, हवई हु अहिमासो जुगद्धमि। बावीसे प व्वसए, हवइ हु बीओ जुगंतमि ॥ १ ॥ इत्यादि सूयप्रज्ञप्तिवृत्तिके अनुसार ६०पर्व (पक्ष)के३०महीने व्यतीत होनेपर३१वा महीना दूसरा पौष अधिक होताहे और १२२ पक्षके ६१ महीने जानेपर कालचूला रूप दूसरा आषाढअधिक होताहै उसी कालचूलारूप दूसरे अधिक आषाढ महीनेमेंही चौमासीप्रतिक्रमणादि धार्मिककाय सर्वगच्छवा लोंके करनेमें आते है। और अधिक पौष महीने व अधिक आषाढ महीनोंके दिनोंकी गिनतीसहितही ६२ महीने, १२४ पक्ष, १८३० दिन और ५४९०० मुहूर्तोंके पांच वर्षोंका एक युग शास्त्रोंमें कहा है। इस लिये कालचूलारूप अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं आते १, तथा कालचूलारूप अधिक महीनेमें चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिक कार्यनहीं हो सकते २, और मासवृद्धि दो महीने होनेसे प्रथम मही नेको कालचूलाकहना ३, यह सब बातें सर्वथा शास्त्रविरुद्धहे।

५– पूर्वापर विसंवादी (विरोधी) कथन ॥

जोलोग जिसअधिकमहीनेको कालचूलाकहकर गिनतीमेंलेनेका व पर्युषणपर्वादि धर्मकार्यकरनेकानिषेधकरतेह,वोहीलोग उसीकाल चूलारूप दूसरे अधिकआषाढको गिनतीमेंलेकर चौमासीप्रतिक्रमणा दि सर्वकार्य आप करतेहे जिसपरभी मुहसे कालचूलारूप अधिकम हीनेको गिनतीमें नहीं लेना तथा उसमें पर्युषणा व चौमासी आदि धर्मकार्य नहींकरनेका कहतेह और कालचूलारूप अधिक महीनेको गिनतीमें लेकर धर्मकार्यकरनेवालोंको दोषबतलातेहैं सो देखो एक जगह कालचूलारूप अधिकमहीना गिनतीमें छोडतेहैं दूसरी जगह उसीकोही खास आप गिनतीमें लेकर चौमासीआदिधर्म काय करते हुए अंगीकारकरतेहे [illegible] दूसरे गिनतीमेंलेन वालोंको दोषभी बतलातेहे यह तो "[illegible] [illegible]डा नास्ति" की तरह कैसा पूर्वापर सर्वथा [illegible] सो भी विचारने योग्य है।

६-कालचूला शिखररूप है, या चोटीरूप है ?

अधिकमहीनेको निशीथचूर्णि आदि शास्त्रोंमें शिखररूप काल चूलाकहाहै और दिनोंकी गिनतीमेंभी लियाहै, जिसपरभी कितने क महाशय दिनोंकी गिनतीमें निषेध करनेके लिये चोटीरूप कहते है और 'जैसे पुरुषके शरीरके मापमें उसकी चोटीकी लंबाईका माप नहीं गिना जाता, तैसेही अधिकमहीना कालपुरुषकी चोटीस मान होनेसे उसीके ३० दिनोंको प्रमाण गिनतीमें नहीं लिये जाते' ऐसा दृष्टांत देतेहै,सोभी सर्वथाशास्त्र विरुद्धहै,क्योंकि पुरुषकी ऊँचा ईकी गिनतीमें उसकीचोटी १-२ हाथलंबी होने तोभी कुछभी गिन तीमें नहीं लीजाती,उससेउसका प्रमाणभीकुछ नहींवढसकता,मगर जैसे देवमंदिरोंके शिखर व पर्वतोंके शिखर प्रत्यक्षपणे उनकी उंचाई की गिनतीमें आते है, उसीसे उन्होंकी उंचाईका प्रमाणभी बढजाता है तैसेही अधिकमहीनेको कालचूला कहा है, सो शिखररूप होनेसे गिनतीमें आता है, उससे उस वर्षका प्रमाणभी १२ महीनोंके २४ पक्षोंके ३५४ दिनोंकी जगह, १३ महीनोंके २६ पक्षोंके३८३ दिनोंका होता है,और मास वृद्धिके कारण चंद्र वर्षकी जगह अभिवर्द्धित वर्ष भी कहा जाता है इसलिये शिखरकी जगह वालरूप चोटी कह करके अधिकमहीनेको दिनोंकी गिनतीमें लेनेका निषेध करना सो "करे माणे अकरे" जमालिकी तरह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है।

७-अधिकमहीना गिनतीमें न्यूनाधिकहै, या बरोबरहै ?

जैनसिद्धांतोंके हिसाबसे तो जैसे १२ महीनोंके सर्वदिन धर्मका र्योमें बरोबर है, तैसेही अधिकमहीना होनेसे१३ महिनोंकेभी सर्वदिन बरोबर ही हैं। इसमें न्यूनाधिक कोईभी महीना नहीं है, और पापी प्राणियोंके कर्मोंकाबंधन होनेमें व धर्मीजनोंके कर्मोंकी निर्जरा हो नेमें एक समयमात्रभी व्यर्थ खाली नहीं जाता है और समय,आव लिका,मुहूर्त्त दिन,पक्ष मास,वर्ष युग, पल्योपम सागरोपमादि काल- मानमेंसे १समयमात्रभी गिनतीमें कभी नहीं छूटसकता जिसपरभी धर्म कार्यमें ३० दिनोंको गिनतीमें छोड देनेका कहते है,या अधिक महीनेके दिनोंको तुच्छही समझते है, सो सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध है

८-अधिकमहीना नपुंशकहै, या पुरुषोत्तमहै ?

जैसे-ब्रह्मचारी उत्तम पुरुष समर्थ होनेपरभी परस्त्री प्रति नपु शक समान होता है, तैसेही-लौकिक रूढीसे विवाह सादीवगैरह

जय मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्रादिक मानतेहैं मगर जैनशास्त्रसे भी जुदेही हैं इसलिये पर्युषणादि धार्मिक कार्य जैनसिद्धान्तोंके मुजबही करनेमें आते हैं। और जैनशास्त्र मुजबही अभी सर्व गच्छवाले अधिक महीनेको कालचूला कहतेहैं। किंतु दिगंबर प्रथम महीनेको कालचूला कहतेहैं, मगर प्रवचनसारोद्धारसूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्र वृत्ति चन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, लोकप्रकाश, ज्योतिषकरंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रप्रमाणोंसे दूसरा अधिकमहीना कालचूलारूप ठहरताहै देखिये—"सट्ठीए अइयाए, हवइ हु अहिमासो जुगद्धमि। बावीसे पव्वसए, हवइ हु बीओ जुगंतमि ॥ १ ॥ इत्यादि सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिके अनुसार ६०पर्व (पक्ष)के ३०महीने व्यतीत होनेपर ३१वा महीना दूसरा पौष अधिक होताहै और १२२ पक्षके ६१ महीने जानेपर कालचूलारूप दूसरा आषाढअधिक होताहै उसी कालचूलारूप दूसरे अधिक आषाढ महीनेमेंही चौमासीप्रतिक्रमणादि धार्मिककार्य सब गच्छवालोंके करनेमें आते हैं। और अधिक पौष महीने व अधिक आषाढ महीनेके दिनोंकी गिनतीसहितही ६२ महीने, १२४ पक्ष, १८३० दिन और ५४९०० मुहूर्तोंके पांच वर्षोंका एक युग शास्त्रोंमें कहा है। इस लिये कालचूलारूप अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं आते १, तथा कालचूलारूप अधिक महीनेमें चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिक कार्यनहीं हो सकते २, और मासवृद्धि दो महीने होनेसे प्रथम महीनेको कालचूलाकहना ३, यह सर्व बातें सर्वथा शास्त्रविरुद्धहैं।

५– पूर्वापर विसंवादी (विरोधी) कथन ॥

जोलोग जिसअधिकमहीनेको कालचूलाकहकर गिनतीमेंलेनेका व पर्युषणपर्वादि धर्मकार्यकरनेकानिषेधकरतेहैं, वोहीलोग उसीकाल चूलारूप दूसरे अधिकआषाढको गिनतीमेंलेकर चौमासीप्रतिक्रमणादि सर्वकार्य आप करतेहैं जिसपरभी मुहसे कालचूलारूप अधिकमहीनेको गिनतीमें नहीं लेना तथा उसमें पर्युषणा व चौमासी आदि धर्मकार्य नहींकरनेका कहतेहैं और कालचूलारूप अधिक महीनेको गिनतीमें लेकर धर्मकार्यकरनेवालोंको दोषबतलातेहैं सो देखो एक जगह कालचूलारूप अधिकमहीना गिनतीमें छोडतेहैं दूसरी जगह उसीकोही खास आप गिनतीमें लेकर चौमासीआदिधर्म कार्य करते हुए अंगीकारकरतेहैं और फिर दूसरे गिनतीमेंलेने वालोंको दोषभी बतलातेहैं यह तो "मम वदनेजिव्हा नास्ति"की तरह कैसा पूर्वापर सर्वथा असंगतरूप विसंवादी कथन है सो भी विचारने योग्य है।

क महीनाहोनेसे १३ महीनोंके वर्षकी तरह चौमासाभी पांच महीनोंका होताहै इसलिये अधिक महीना न होवे तब तो ४ महीनोंके ८ पक्षोंके१२०दिनोंसे चौमासीकार्य होते है, मगर जब अधिक महीना होवे तब तो पाच महीनोंके दश (१०) पक्षोंके १५०दिनोंसे चौमासी प्रतिक्रमणादिकार्य होतेहै। यहबात प्रत्यक्ष प्रमाणसे व लौकिक टिप्पणाके प्रमाणसे जग जाहिर है,और आगम पचागी सिद्धात प्रमाणसेतो अनादि सिद्धप्रवाह ऐसाही है इसलिये इसको कोईभी कभी निषेध नहीं कर सकता है इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वय कर सकते है।

११ — देखो – एक कुतर्क

कितनेक कहतेहै,कि-'चौमासी प्रतिक्रमणादि कार्य आषाढमेंकरने का कहा है, इसलिये प्रथम आषाढमें करोंगे तो दूसरा आषाढ छूट जावेगा और दूसरेमें करोंगे तो, प्रथम छूट जावेगा या दोनोंमें करोंगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा' ऐसी २ कुतर्क करते है, सो भी सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै। क्योंकि प्रथम आषाढमें ग्रीष्मऋतु वगैरह उपर मुजब कारण होनेसे चौमासीकार्य कभी नहीं होसकते, इसलिये 'प्रथम आषाढमें करोंगे तो दूसरा आषाढ छुट जावेगा' ऐसा कहना व्यर्थही है। और दो आषाढ होनेसे दोनोंकी गिनतीपूर्वक ५ महीने दूसरे आषाढमें चौमासीकार्य करते है, इसलिये 'दूसरेमें करोंगे तो प्रथम छूट जावेगा' ऐसा कहनाभी व्यर्थही है। और दोनों आषाढोंमें दो वार चौमासी कार्य नहीं, किंतु ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति वगैरह उपर मुजब कारणोंसे दूसरे आषाढमें एकही वार चौमासीकार्य करते है इसलिये 'दोनोंमें करोंगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा' ऐसा कहनाभी व्यर्थहीहै। और चौमासी प्रतिक्रमण तो ४ महीने, या मास वृद्धि होवे तब पाच महीने सब गच्छवाले एकवार प्रत्यक्षपने करतेहैं इसलिये मास बढने परभी चौमासीकार्य ४ महीने होवे मगर पाच महीने नहीं होवे, ऐसा प्रत्यक्ष असत्य भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है इसकोभी विशेष तत्त्वज्ञ पाठकगणस्वय विचारलेंगे.

१२–दूसरे आषाढमें चौमासीकार्य करनेकी तरह पर्युषणापर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके, या नहीं?

आषाढ-कार्त्तिकादि चौमासा ४-४ महीनोंसे होताहै, मगर अधिक महीना होवे तब पाच महीनोंकाभी होता है, यह बात ऊपर

आरम्भवाले या मुहूर्तवाले कार्य करनेमें तो अधिकमहीनेको नपुंशक समान कहतेहैं मगर तोभी दिनोंकीगिनतीमें तो बराबरलेतेहैं। और निरारम्भी व विना मुहूर्तवाले दान,पुण्य,परोपकार,तप,तपादि कार्य करनेमें तो अधिक महीनेको 'पुरुषोत्तम अधिक मास' कहा है, सो बात प्रकटही है इसलिये जैनसिद्धांतोंके हिसाबसे या लौकिक शास्त्रोंके हिसाबसेभी अधिक महीनेको दिनोंकी गिनतीमें निषेध करते हैं,सो शास्त्रीय दृष्टिसे व युक्ति प्रमाणसे या दुनियाके व्यवहारसेभी सर्वथा विरुद्ध है। इसको विशेष पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं

९-दूसरे आषाढमें चौमासी करनेका क्या प्रयोजनहै?

भो देवानुप्रिय। चौमासीप्रतिक्रमणादि पर्वकार्य ग्रीष्मऋतुपूरी होनेपर वर्षाऋतुकीआदिमें किये जाते हैं,और ज्येष्ठ व आषाढमें ग्रीष्मऋतु कही जाती है इसलिये जब दो आषाढ होवे, तब उन दोनों आषाढमहीनोंको ग्रीष्मऋतुमें गिने जाते हैं यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणसे जगजाहिरहैही और जैनसिद्धातानुसार तो दूसरे आषाढ शुदी पूर्णिमाका हमेशा क्षय होता है इसलिये दूसरे आषाढ शुदी१४को पांच वर्षोंका एक युग पूरा होताहै,उसी रोज ग्रीष्मऋतुभी पूरा होतीहै, तथा पांचवा अभिवर्द्धितवर्षभी उसीरोज पूरा होताहै और १ युगमें सुर्यके दक्षिणायन उत्तरायणके दशअयनभी १८३०दिनोंसे उसीदिन पूरे होतेहैं इसलिये उसी दिन दूसरे आषाढ शुदी१४ को चौमासी प्रतिक्रमणादि कार्य करनेकी अनादि मर्यादा है। और प्रथम आषाढ ग्रीष्मऋतुमें होनेसे वहां ग्रीष्मऋतु,युग,वर्ष,अयन, वगैरह पूरे नहीं होते, व प्रथम आषाढमें वर्षाऋतुभी शुरू नहीं होती,इसलिये प्रथम आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि पर्वके कार्य करनेमें नहीं आतेहैं और शास्त्रीय हिसाबसे श्रावण वदी१को (गुजरातदेशकी अपेक्षासे आषाढ वदी १ को) युगकी, वर्षकी और वर्षाऋतुकी शुरूआत होती है इसलिये उसकी आदिमें और ग्रीष्मऋतुकी वर्षकी, युगकी समाप्ति समय दूसरे आषाढकेअंतमें चौमासी प्रतिक्रमणादि पर्वके कार्य करने शास्त्रोंमें कहे हैं, सो युक्तियुक्तही हैं।

१० – चौमासा ४ महीनोंका या ५ महीनोंका ?

देखिये-१२ महीनोंका वर्ष कहा जाता है, मगर जब अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंका वर्ष कहा जाता है इसीतरह यद्यपि चौमासा शब्द व्यवहारसे ४ महीनोंका कहा जाता है, मगर अधि

र्युषणाकल्पचूर्णि वगैरहशास्त्रोंमें कहाहै,इसलिये प्रथम आषाढसे८० दिन बतलाकर दो श्रावणहोनेपरभी भाद्रपदमें८०दिने पर्युषणाकरना या दो भाद्रपद होवे तब दूसरे भाद्रपदमें८०दिनेपर्युषणा ठहराना,सर्वथा शास्त्रविरुद्धहै,इसकोभी विवेकी पाठकगण स्वयविचार लेवेंगे।

१५ – देखिये यह—कैसी कुयुक्ति है।

कितनेक महाशय अपना असत्य आग्रहको छोड सकते नहीं तथा सत्यबातको ग्रहणभी कर सकते नहीं और व्यर्थही अपनी सचाई जमानेकेलिये कहतेहैं, कि "दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना किसीभी आगममें नहीं लिखा" ऐसी२ कुयुक्तिये करतेह, और भद्रजीवोंको सशयमें गेरतेहै मगर इतना विचार करते नहींहै,कि-५०दिनेपर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि सर्वआगमोंमें लिखाहै, यहीजिनाज्ञाहै देखिये—"सवीसइ रायमासे" वा " सविंशतिरात्रे मासे " वा " दश पचके " वा " पचाशतैव दिने पर्युषणा युक्तेति वृद्धा "इन सर्व वाक्योंमें ५०दिने पर्युषणाकरना कहाहै, सो वर्तमानमें५० दिने दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि आगमानुसार ठहरताहै इससे ५० दिन कहो,या दूसरा श्रावण, प्रथम भाद्रपद कहो, दोनों एकार्थही हैं इसलिये 'दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना किसी आगममें नहीं लिखा' ऐसी२ जानबुझकर कुयुक्तियें लगाकर अपना झूठा पक्ष जमानेकेलिये मायामृषा भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है

१६—उत्सूत्र प्ररूपणा ॥

चद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति जबूद्वीपप्रज्ञप्ति-भगवती-समवायांगादि आगम-निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लियेहैं,वे सर्व शास्त्रोंके पाठ छुपानेसे छुप सकते नहीं और अर्थ बदलनेसे अर्थभी बदला सकते नहीं इसलिये कितनेक आग्रही जन कहतेहैं,कि-'उन शास्त्रोंमें तो अधिक महीना होनेसे १३ महीनोंके २६ पक्षोंके ३८३ दिनोंका अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलायाहै,मगर१३ महीनोंको गिनतीमें लेनेका कहा लिखाहै' ऐसा कहनेवाले प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणा करतेहै, क्योंकि देखो-चद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति वगैरह सर्व शास्त्रोंमें, जैसे- १ वर्षके १२ महीनोंके २४ पक्षोंके ३५४ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया है, तैसेही अधिकमहीना होनेसे उसवर्षकेभी १३ महीनोंके २६ पक्षोंके ३८३ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया है, इस लिये

लिए हुए हैं इसलिये मासवृद्धि होनेसे १२० दिनोंकी जगह १५० दिनभी चौमासमें होतेहैं उसमें किसी प्रकारका दोष कोईभी शास्त्र में नहीं बतलाया मगर पर्युषणातो वर्षाऋतुमें दिन प्रतिबद्ध होनेसे ५०दिने अवश्यही करना सबशास्त्रोंमें कहाहै, उसपर कभी १ दिनभी बढ जावे तो उसका दोष कहाहै और दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणाकरें, तो ८० दिन होनेसे प्रत्यक्षपने सर्व शास्त्रविरुद्ध होता है इसलिये दूसरे आषाढमें चौमासी पर्वकी तरह पर्युषणा पर्व ८० दिन होनेसे दूसरे भाद्रपदमें कभी नहीं होसकते हैं, किंतु आगमादि सब शास्त्रों की आज्ञा मुजब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें करना युक्तियुक्त न्यायसं पन्नहीं है, इसको तो विवेकी पाठक गण स्वयं विचार सकते हैं

१३-जिसको मान्यकरतेहैं उसीकोही उत्थापनकरतेहैं।

हमेशा भाद्रपदमेंही पर्युषणा पर्व करनेका ठहरानेके लिये निशीथचूर्णिके अधूरे पाठको आगेकरते हैं, मगर चूर्णिमें तो ५० दिने या ४९ दिने अवश्यही पर्युषणा करना लिखा है, परंतु ५० दिन उपरांत करना कभी नहीं लिखा और अधिक महीनेके ३० दिनोंकोभी खुलासा पूर्वक गिनतीमें लिये है। जिसपरभी दो भाद्रपद होवें,तब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना छोडकर, ८० दिने दूसरे भाद्रपदमें करतेहैं। उसीसे जिस चूर्णिका पाठ मान्य करतेहैं,उसी चूर्णिकापाठ (दूसरे भाद्रपदमें ८०दिने पर्युषणा करनेसे) उत्थापनभी करते हैं इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार सकतेहैं

१४—अब देखो एक -वितंडा वाद॥

८० दिने पर्युषणापर्व करनासो शास्त्र विरुद्ध ठहराते हो, मगर दो आषाढ महीने होवे तब प्रथम आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमण करोगे, तो-तुमारेभी ८०दिने पर्युषणा पर्व होवेंगे, तब कैसे करोगे? समाधान भो-देवानुप्रिय! पर्युषणाके ५०दिनोंकी गिनती ग्रीष्मऋतु की समाप्ति होनेपर वर्षाऋतुकी शुरूआतसे गिनी जाती है और प्रथम आषाढ महीना ग्रीष्मऋतुमें होनेसे उसमें चौमासी कार्य नहीं हो सकते और ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति हुए बिना व वर्षाऋतुकी शुरूआत हुए बिना प्रथम आषाढसे पर्युषणासंबंधी ५० दिनोंकी गिनतीभी कभी नहीं हो सकती इसलिये प्रथम आषाढमें चौमासीकार्य करने का, व उससे पर्युषणाके ८० दिन गिननेका कहना अज्ञानताका कारण है, क्योंकि वर्षाऋतुकी आदिमें दूसरे आषाढके अंतमें चौमासीकार्य होनेसे पर्युषणाके ५०दिन गिननेका निशीथचूर्णि, प

र्युषणाकल्पचूर्णि वगैरहशास्त्रोंमें कहाहै,इसलिये प्रथम आषाढसे८० दिन बतलाकर दो श्रावणहोनेपरभी भाद्रपदमें८०दिने पर्युषणाकरना या दो भाद्रपद होवें तब दूसरे भाद्रपदमें८०दिनेपर्युषणा ठहराना,सर्वथा शास्त्रविरुद्धहै,इसकोभी विवेकी पाठकगण स्वयविचार लेवेंगे।

१५ – देखिये यह—कैसी कुयुक्ति है।

कितनेक महाशय अपना असत्य आग्रहको छोड सकते नहीं तथा सत्यबातको ग्रहणभी कर सकते नहीं और व्यर्थही अपनी सचाई जमानेकेलिये कहतेहैं, कि "दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना किसीभी आगममें नहीं लिखा" ऐसीर कुयुक्तियें करतेहैं, और भद्रजीवोंको संशयमें गेरतेहैं मगर इतना विचार करते नहींहैं,कि-५०दिनेपर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि सर्वआगमोंमें लिखाहै, यहीजिनाज्ञाहै देखिये—"सवीसई राएमासे" वा "सविंशतिरात्रे मासे" वा "दश पचके" वा "पचाशतैव दिने पर्युषणा युक्तेति वृद्धा "इन सर्व वाक्योंमें ५०दिने पर्युषणाकरना कहाहै, सो वर्तमानमें५० दिने दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि आगमानुसार ठहरताहै इससे ५० दिन कहो,या दूसरा श्रावण, प्रथम भाद्रपद कहो, दोनों एकार्थही हैं इसलिये 'दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना किसी आगममें नहीं लिखा' ऐसीर जानबुझकर कुयुक्तियें लगाकर अपना झूठा पक्ष जमानेकेलिये मायामृषा भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है

१६—उत्सूत्र प्ररूपणा ॥

चद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति जबूद्वीपप्रज्ञप्ति-भगवती-समवायांगादि आगम-निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लियेहैं,वे सर्व शास्त्रोंके पाठ छुपानेसे छुप सकते नहीं और अर्थ बदलनेसे अर्थभी बदला सकते नहीं इसलिये कितनेक आग्रही जन कहतेहैं,कि-'उन शास्त्रोंमें तो अधिक महीना होनेसे १३ महीनोंके २६ पक्षोंके ३८३ दिनोंका अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलायाहै,मगर१३ महीनोंको गिनतीमें लेनेका कहा लिखाहै' ऐसा कहनेवाले प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणा करतेहैं, क्योंकि देखो-चद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति वगैरह सर्व शास्त्रोंमें, जैसे- १ वर्षके १२ महीनोंके २४ पक्षोंके ३५४ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया है, तैसेही अधिकमहीना होनेसे उसवर्षकेभी १३ महीनोंके २६ पक्षोंके ३८३ दिनोंका स्वरूप गणित प्रमाण बतलाया है, इस लिये

चंद्र और अभिवर्द्धित इन दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सर्व शास्त्रोंमें समानरूपसे खुलासापूर्वक होनेपरभी १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३महीनोंके वर्षको स्वरूप बतलानेका कहा ना बतलाकर प्रमाणभूत नहींमानना यह तो प्रत्यक्षही अन्यायहै,यदि १३ महीनोंका स्वरूप बतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोगे, तो १२ महीनोंकाभी स्वरूप बतलाया है,उसकोभी गिनती में प्रमाणभूत नहीं मानसकोगे और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनों के दोनों वर्षोंके समानरूपसे स्वरूप बतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत माने हैं इसलिये दोनोंप्रकारके वर्षमाननेयोग्यहै, इसमें शास्त्रप्रमाण से तो एकभी वर्षका निषेध नहीं होसकताहै इसलिये - ११ अंग व १४ पूर्वादिशास्त्रोंमें जैसे,दर्शन ज्ञान-चारित्र-चौदहराजलोक-षद्र व्य-नवतत्त्व-चौदहगुणस्थान-जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरूप; व चरणकरणानुयोगमें संयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप बतला या है, वोही सर्वमान्य करनेयोग्य है,इसलिये स्वरूप बतलाना सो ही श्रद्धापूर्वक मान्य करने योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है। जि सपरभी चरणकरणानुयोगमें संयमकी क्रियाका व षद्रव्य - नवत त्वादिकका स्वरूप बतलाया है,मगर उस मुजब मान्य करना कहा लिखाहै,ऐसा कोई कहे और उनोंको प्रमाणभूत नहींमानें,तो ११अंग व१४पूर्वोंके उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धिकर नेवाली उत्सूत्र प्ररूपणाका दोष आवे इसी तरहसेंही१३ महीनोंका स्वरूपकहकर प्रमाणभूत नहीं मानेंतो सूर्यप्रज्ञप्तिवगेरहपूर्वोक्त शास्त्रों के उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा ठहरतीहै। और जैसे षद्रव्य, नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहेहैं उसमुजबही मानने पडतेहैं। तैसेही १२ महीनोंके स्वरूपकी तरह, १३ महीनों कास्वरूपभी शास्त्रोंमें बतलायाहै उस मुजबही १३ महीनेगिनतीमें प्रमाणभूत माननेपडते हैं इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धित वर्षका स्वरूप बतलायाहै,मगर मान्यकरना कहा लिखाहै' ऐसी उत्सूत्रप्ररू पणा करना और भोले जीवोंको संशयमें गेरना आत्मार्थी भवभीरु ओंको योग्य नहीं है।

१७ – लौकिक अधिकमहीना मानना, या नहीं ?

कितनेकमहाशयकहतेहैं कि जैनटिप्पणामेंतो पोष और आषाढ दो महीने बढतेथे और अबलौकिकटिप्पणामेंतो श्रावण भाद्रपदादिमही नेभी बढने लगेहैं सो कैसे माने जावें? इसपर इतनाही विचार कर

नेकाहै,कि जनटिप्पणामें तीसरेवर्षमें जो महीना बढताथा उसकोभी गिनतीमें लेतथे और जैनटिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे ३६घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती२४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा ओर श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें सूर्य होताथा ओर श्रावण वदि एकमसे६२वीं तिथि क्षय होतीथी इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षयहोतीथी बीचमें कोईभीतिथि क्षयनहींहोतीथी और तिथिवढने कातो सर्वथा अभावहोनेसे कोईभीतिथि कभी वढतीनहींथी और ६० घडीसेकम तिथिकाप्रमाणहोनेसे,६०घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंवत्सर व अभिवर्द्धितसंवत्सरसहित ५वर्षोंके १८३० दिनोंका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक बातें जैनटिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनीराजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आम्नायसे गुरुगम्यतावाले जैनकुलगुरु बनातेथे,इसलिये उसमें ग्रहणादि किसीतरहका फरकभीकभी नहीं पडताथा,मगर परंपरागत जैनी राजओंका व पूर्वगत आम्नायका,अभावहुआ ओर जबसे ८८ग्रहवाला जैनपंचाग बंधहुआ, तबसे सर्व जैनसमाजमें९ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृत्ति शुरूहुई, उसमें श्रावण व माघमें दक्षिणायनमें व उत्तरायनमें सूर्यका होनेका नियम न रहा और हरेक महीने बढनेसे ज्येष्ठ–आषाढ व मार्गशीर्ष–पौषादिमेंभी दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा,तथा क्षेत्रफळ व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमें ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटीकाप्रमाणे दिनमानभी मानने लगे ओर एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा और हरेक तिथियोंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी और १२वर्षका युग इत्यादि अनेकबातें अभी जैनपंचागके अभावसे, लौकिकटिप्पणाकी माननीपडतीहै, इसीतरह अधिकमहीनाभी लौकिकटिप्पणाकीरीतिसे वर्तमानमें माननापडताहै इसलिये ८४ गच्छोंके सर्व पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीने लौकिक टिप्पणामुजब मानेहैं वोही प्रवृत्ति अभी सर्वजैनसमाजमें शुरू है। और दक्षिणायन,उत्तरायन,तिथिकी हानी, वृद्धि वगैरह तिथि, वार, नक्षत्र पक्ष, मास, वर्ष आदिक सर्व लौकिक टिप्पणामुजब अभीमानतेहैं मगर अधिकमहीना बाबत जैन पंचागकी आड लेकर नहीं मानना, यह न्याय युक्ति बाधक होनेसे

चंद्र और अभिवर्द्धित इन दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सर्व शास्त्रोंमें समानरूपसे खुलासापूर्वक बतलाया है, जिसमें १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३ महीनोंके वर्षके स्वरूप बतलानेका कहा ना बतलाकर प्रमाणभूत नहीं मानना यह तो प्रत्यक्षही अन्यायहै, यदि १३ महीनोंका स्वरूप बतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोंगे, तो १२ महीनोंकाभी स्वरूप बतलाया है, उसकोंभी गिनती में प्रमाणभूत नहीं मानसकोंगे और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनों के दोनों वर्षोंके समानरूपसे स्वरूप बतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत माने हैं इसलिये दोनोंप्रकारके वर्षमाननेयोग्यहैं, इसमें शास्त्रप्रमाण से तो एकभी वर्षका निषेध नहीं होसक्ताहै देखिये - ११ अंग, व १४ पूर्वादिशास्त्रोंमें जैसे, दर्शन ज्ञान-चारित्र-चौदहराजलोक-षट्द्रव्य-नवतत्त्व-चौदहगुणस्थान-जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरुप; व चरणकरणानुयोगमें संयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप बतलाया है, वोही सबमान्य करनेयोग्य है, इसलिये स्वरूप बतलाना सो ही श्रद्धापूर्वक मान्य करने योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है। जिसपरभी चरणकरणानुयोगमें संयमकी क्रियाका व षट्द्रव्य - नवतत्त्वादिकका स्वरूप बतलाया है, मगर उस मुजब मान्य करना कहा लिखाहै, ऐसा कोई कहे और उनोंको प्रमाणभूत नहींमाने, तो ११अंग व१४पूर्वोंके उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धिकरनेवाली उत्सूत्र प्ररूपणाका दोष आवे इसी तरहसेंही१३ महीनोंका स्वरूपकहकर प्रमाणभूत नहीं मानेंतो सूर्यप्रज्ञप्तिवगैरहपूर्वोक्त शास्त्रों के उत्थापनकरनेका प्रसंग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा ठहरतीहै। और जैसे षट्द्रव्य, नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहेहैं उसमुजबही मानने पडतेहैं। तैसेही १२ महीनोंके स्वरूपकी तरह, १३ महीनोंकास्वरूपभी शास्त्रोंमें बतलायाहै उस मुजबही १३ महीनेगिनतीमें प्रमाणभूत माननेपडते हैं इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धित वर्षका स्वरूप बतलायाहै, मगर मान्यकरना कहा लिखाहै' ऐसी उत्सूत्रप्ररूपणा करना और भोले जीवोंको संशयमें गेरना आत्मार्थी भवभीरुओंको योग्य नहीं है।

१७ – लौकिक अधिकमहीना मानना, या नहीं ?

कितनेकमहाशयकहतेहै कि जैनटिप्पणामेंतो पौष और आषाढ दो महीने बढतेथे और अवलोकिकटिप्पणामेंतो श्रावण भाद्रपदादिमहीनेभी बढने लगेह सो कैसे माने जावे? इसपर इतनाही विचार कर

नेकाहै,कि जैनटिप्पणामें तीसरेवर्षमें जो महीना बढताथा उसकोभी गिनतीमें लेतथे ओर जैनटिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे ३६घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती२४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा ओर श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें सूर्य होताथा ओर श्रावण वदि एकमसे६२वीं तिथि क्षय होतीथी इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षयहोतीथी बीचमें कोईभीतिथि क्षयनहींहोतीथी और तिथिवढने कातो सर्वथा अभावहोनेसे कोईभीतिथि कभी बढतीनहींथी और ६० घडीसेकम तिथिकाप्रमाणहोनेसे,६०घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंवत्सर व अभिवर्द्धितसंवत्सरसहित ५वर्षोंके १८३० दिनोंका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक बातें जैनटिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनीराजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आम्नायसे गुरुगम्यतावाले जैनकुलगुरु बनातेथे,इसलिये उसमें ग्रहणादि किसीतरहका फरकभीकभी नहीं पडताथा,मगर परंपरागत जैनी राजओंका व पूर्वगत आम्नायका,अभावहुआ और जबसे ८८ग्रहवाला जैनपंचाग बंधहुआ, तबसे सर्व जैनसमाजमें९ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृत्ति शुरूहई, उसमें श्रावण व माघमें दक्षिणायनमें व उत्तरायनमें सूर्यके होनेका नियम न रहा और हरेक महीने बढनेसे ज्येष्ठ–आषाढ व मार्गशीर्ष–पौषादिमेंभी दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा,तथा क्षेत्रफळ व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमें ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटीकाप्रमाणे दिनमानभी मानने लगे ओर एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा और हरेक तिथियोंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी और १२वर्षका युग इत्यादि अनेकबातें अभी जैनपंचागके अभावसे, लौकिकटिप्पणाकी माननीपडतीहै, इसीतरह अधिकमहीनाभी लौकिकटिप्पणाकीरीति से वर्तमानमें माननापडताहै इसलिये ८४ गच्छोंके सर्व पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीने लौकिक टिप्पणामुजब मानेहैं वोही प्रवृत्ति अभी सबजैनसमाजमें शुरू है। और दक्षिणायन,उत्तरायन,तिथिकी हानी, वृद्धि वगेरह तिथि, वार, नक्षत्र, पक्ष, मास, वर्ष आदिक सर्व लौकिक टिप्पणामुजब अभीमानतेहैं मगर अधिकमहीना बाबत जैन पंचागकी आड लेकर नहीं मानना, यह न्याय युक्ति बाधक होनेसे

सत्य कभी नहीं ठहर सकताहै इसलिये ऊपर मुजब यहांभी। मगर श्रावण भाद्रपदादि अधिकमहीनोंभी लौकिकटिप्पणानुसार यथामानने मान्य करते सो युक्तियुक्त न्यायसंपन्न होनेसे कभी निषेध नहीं हो सकते और यद्यपि जैनटिप्पणामें पौष आषाढ बतलाया, उसबातको जिनकल्पीव्यवहारकी तरह सत्यमानना, श्रद्धारखना, प्ररूपणाकरना मगर जिनकल्पीव्यवहार अभी विच्छेद होनेसे उसको अंगीकार नहीं करसकतेहैं, उसीतरह अभी जैनटिप्पणाभी विच्छेद होनेसे वर्तमानमें जैनटिप्पणा मुजब तिथि वार या पौष आषाढमहीने माननेका आग्रहकरना सो देशकालके व सबपूर्वाचार्योंके सर्वथाविरुद्ध है

१८ – जैन ज्योतिषपरसे अभी जैनटिप्पणा शुरूकरें तो शुरू हो सके, या नहीं ?

यद्यपि जैनज्योतिषके सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, चन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्तिआदि अनेक शास्त्रमौजूदहैं, उसपरसे तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षादिकका गणित अभी हो सकताहै मगर ग्रहणादि सर्ववातें बरोबर मिलान करना मुश्किल पडताहै, इसलिये कितनीक वातोंमें अन्य आधारलेना पडताहै और लौकिक व जैन दोनोंके गणित विभागमें फेर होनेसे तिथि, वार, मास, नक्षत्र व ग्रहणादि दोनोंके समानरूपसे बरोबर नहीं आसकते और पूर्वगतगीतार्थ गुरुगम्यआम्नायके अभावसे व अल्पज्ञताकेकारणसे यदि कोई ग्रहणादि बतलानेमें न्यूनाधिक कुछ फरक पडजावे तो अभी सर्वज्ञशासनकी लघुता होनेका कारण बनजावे और परंपरागत जैनीराजाओंका अभाव होनेसे व ब्रह्मचारी, व्रतधारी, गुरुगम्यतावाले कुलगुरुओंका अभाव होनेसे, तथा खरतरगच्छ नायक श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी श्रीशांतिसूरिजी, श्रीहेमचंद्राचार्यजी वगैरह समर्थ व शासनप्रभावक आचार्योंके समयसेभी बहुतकालसे जैनटिप्पणाविच्छेदहोनेसे अभी अपने अल्प बुद्धिवालोंसे फिरसे शुरू नहीं होसकताहै और कोइ शुरूकरें तोभी सर्वमान्य युगप्रधान समर्थआचार्यके अभावसे सबदेशोंके, सर्वगच्छोंके, सर्व जैनसमाजमें परंपरागत चल सकताभी नहीं। देखिये-जैन शासनमें प्राचीनकालमें विशेषज्ञानी समर्थप्रभावक पूर्वाचार्योंके समयमें जो बात पहिलेसे विच्छेद हो जावे, उसको विशिष्टतर अवधिज्ञानादि रहित अल्पज्ञोंसे इसकालमें फिरसे शुरू नहीं होसके। इतनेपरभी फिरसे शुरू करें,

तो सर्व पूर्वाचार्योंकी आशातनाके तथा शासनकी लघुताके दोषके भागी होंवें। इसीतरह जैनपचागभी प्राचीन पूर्वाचार्योंके समयसे विच्छेद होनेसे,अभीफिरसे शुरू नहीं होसकता जिसपरभी कोई फिरसे शुरू करे तो२०वे दिन पर्युपणापर्व करनेकी, व पाच पाच दिने अज्ञात पर्युपणास्थापन करने वगरह वाते जो विच्छेद होगईह, वे सब वातेंभी जैन टिप्पणाशुरू होनेसे पीछीशुरू करनी पडेगी, और वे सर्व वातें अभी पडतारूप होनेसे फिरसे शुरू नहीं होसकती हे, इस लिये अभी जैन पचाग शुरू नहीं होसकताहै।

१९– अभी लौकिक दो श्रावणादिक महीनोंके, अपने दो आपाढ बनासके या नहीं ?

कितनेक कहते हे,कि–लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपद बढे तब जैन शास्त्रोंके हिसाबसे दो आपाढ बनालेवे तो पर्युपणाका भेद मिट जावे मगर ऐसाभी कभीनहीं होसकता क्योंकि देखो जब जैन पचागही अभी विच्छेदहै,और तिथि,वार,नक्षत्र पक्ष मासादि पंचाग सबधीव्यवहार लौकिक टिप्पणा मुजब करतेहे, जिसपरभी १ महीने का फेरफार करदेना योग्यनहींहै। देखिये–दो श्रावण होनेसे भरपूर वर्षाऋतुवाला प्रथम श्रावणशुदी १५ को प्रत्यक्षप्रमाणसेभी विरुद्ध होकर उसकोआपाढ पूर्णिमाकहना यहजगत विरुद्ध होनेसे व्यवहारमेंभी मिथ्याभापणका दोपलगे। औरपहिले पूर्वाचार्योंनेभीऐसाकभी नहीं किया, इसलिये अभी दो श्रावण या दो भाद्रपदके, दो आपाढ बनाना कभी नहीं बनसकताहै, किंतु लौकिक टिप्पणामुजब दो श्रावण भाद्रपदादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्यपहिलेसे जैसे मानते आयेहे, वैसेही वर्तमानमें अपने सबकोभी मान्य करना योग्यहे बस! धार्मिक व्यवहार पर्युपणपर्वादिकार्य जैन सिद्धातोके अनुसार५०वें दिन करने और तिथि, वार, नक्षत्र, चद्रयोग, मास, पक्षादि व्यवहार लौकिकटिप्पणाकेअनुसार करना यहीन्याय युक्तियुक्त व सर्वसम्मत होनेसे सर्व जैनीमात्रको मान्य करना योग्य हे, इसलिये इसमें अन्य २ कल्पनायें करनी सवथा व्यर्थही हें।

२०–पर्युपणा कितने प्रकारकी होती है ?

निशीथचूर्णि,वृहत्कल्पचूर्णि, कल्पसूत्रनिर्युक्ति चूर्णि, वृत्तिवगैरह शास्त्रोंमें पर्युपणाके नामातसे ८ प्रकारसे अनेक भेद वतलाये हें, मगर यहा तो अभी मुख्यतासे वर्षास्थितिरूप और वार्षिक कार्यरूप

सत्य कभी नहीं ठहर सकताहै इसलिये ऊपर मुजब बातोंकी तरह श्रावण भाद्रपदादि अधिकमहीनेभी लौकिकटिप्पणामुजब वर्त्तमानमें मान्य करने सो युक्तियुक्त न्यायसम्पन्न होनेसे कभी निषेध नहीं हो सकते और यद्यपि जैनटिप्पणामें पौष आषाढ बढताथा, उसबातको जिनकल्पीव्यवहारकी तरह सत्यमानना, श्रद्धाकरना, प्ररूपणाकरना मगर जिनकल्पीव्यवहार अभी विच्छेद होनेसे उसको अंगीकार नहीं करसकतेहैं, उसीतरह अभी जैनटिप्पणाभी विच्छेद होनेसे वर्तमानमें जैनटिप्पणा मुजब तिथि वार, या पौष आषाढमहीने माननेकाआग्रहकरना सो देशकालके व सर्वपूर्वाचार्योंके सर्वथाविरुद्ध है

१८ – जैन ज्योतिष्परसे अभी जैनटिप्पणा शुरूकरें तो शुरू हो सके, या नहीं ?

यद्यपि जैनज्योतिष्के सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, चन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्तिआदि अनेक शास्त्रमौजूदहैं, उसपरसे तिथि वार, मास, पक्ष, वर्षादिकका गणित अभी हो सकताहै मगर ग्रहणादि सर्वबातें बरोबर मिलान करना मुश्किल पडताहै, इसलिये कितनीक बातोंमें अन्य आधारलेना पडताहै और लौकिक व जैन दोनोंके गणित विभागमें फेर होनेसे तिथि, वार, मास, नक्षत्र व ग्रहणादि दोनोंके समानरूपसे बरोबर नहीं आसकते और पूर्वगतगीतार्थ गुरुगम्यआम्नायके अभावसे व अल्पज्ञताकेकारणसे यदि कोई ग्रहणादि बतलानेमें न्यूनाधिक कुछ फरक पडजावे तो अभी सर्वज्ञशासन की लघुता होनेका कारण बनजावे और परंपरागत जैनीराजाओं का अभाव होनेसे व ब्रह्मचारी, व्रतधारी, गुरुगम्यतावाले कुलगुरुओंका अभाव होनेसे, तथा खरतरगच्छ नायक श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीशांतिसूरिजी, श्रीहेमचंद्राचार्यजी वगैरह समर्थ व शासनप्रभावक आचार्योंके समयसेभी बहुतकालसे जैनटिप्पणाविच्छेदहोनेसे अभी अपने अल्प बुद्धिवालोंसे फिरसे शुरू नहीं होसकताहै और कोइ शुरूकरें तोभी सर्वमान्य युगप्रधान समर्थआचार्यके अभावसे सबदेशोंके, सबगच्छोंके, सर्व जैनसमाजमें परंपरागत चल सकताभी नहीं। देखिये-जैन शासनमें प्राचीनकालमें विशेषज्ञानी समर्थप्रभावक पूर्वाचार्योंके समयमें जो बात पहिलेसे विच्छेद हो जावे, उसको विशिष्टतर अवधिज्ञानादि रहित अल्पज्ञोंसे इसकालमें फिरसे शुरू नहीं होसके। इतनेपरभी फिरसे शुरू करें,

तो सर्व पूर्वाचार्योंकी आशातनाके तथा शासनकी लघुताके दोषके भागी होंवे। इसीतरह जैनपचागभी प्राचीन पूर्वाचार्योंके समयसे विच्छेद होनेसे,अभीफिरसे शुरू नहीं होसक्ता जिसपरभी कोई फि रसे शुरु करें तो२०वे दिन पर्युपणापर्व करनेकी, व पाच पाच दिने अज्ञात पर्युषणास्थापन करने वगेरह बातें जो विच्छेद होगईहे, वे सब बातेंभी जैन टिप्पणाशुरू होनेसे पीछीशुरू करनी पडेंगी, और वें सर्व बातें अभी पडताकाल होनेसे फिरसे शुरु नहीं होसकती हे, इस लिये अभी जेन पचाग शुरु नहीं होसकताहे।

१९- अभी लौकिक दो श्रावणादिक महीनोंके, अपने दो आपाढ बनासके या नहीं ?

कितनेक कहते ह,कि-लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपद बढे तब जैन शास्त्रोंके हिसाबसे दो आपाढ बनालेवे तो पर्युपणाका भेद मिट जावे मगर ऐसाभी कभीनहीं होसकता क्योंकि देखो जब जेन पचागही अभी विच्छेदहे,और तिथि,वार,नक्षत्र पक्ष मासादि पचाग सबधीव्यवहार लौकिक टिप्पणा मुजब करतेहे, जिसपरभी १ महीने का फेरफार करदेना योग्यनहींहे। देखिये-दो श्रावण होनेसे भरपूर वर्षाऋतुवाला प्रथम श्रावणशुदी १५ को प्रत्यक्षप्रमाणसेभी विरुद्ध होकर उसकोआपाढ पूर्णिमाकहना यहजगत विरुद्ध होनेसे व्यवहा रमेंभी मिथ्याभाषणका दोषलगे। औरपहिले पूर्वाचार्योंनेभीऐसाकभी नहीं किया, इसलिये अभी दो श्रावण या दो भाद्रपदके, दो आपाढ बनाना कभी नहीं बनसक्ताहे, किंतु लौकिक टिप्पणामुजब दो श्रा वण भाद्रपदादि सर्वगच्छोंके पूर्वाचार्यपाहिलेसे जेसे मानते आयेहें, वेसेही वर्तमानमें अपने सबकोभी मान्य करना योग्यहे बस! धार्मि क व्यवहार पर्युपणपर्वादिकार्य जेन सिद्धातोके अनुसार५०वें दिन करने और तिथि, वार, नक्षत्र, चद्रयोग, मास, पक्षादि व्यवहार लौकिकटिप्पणाके अनुसार करना यहीन्याय युक्तियुक्त व सर्वसम्मत होनेसे सर्व जैनीमात्रको मान्य करना योग्य ह, इसलिये इसमें अन्य २ कल्पनायें करनी सवथा व्यर्थही हे।

२०-पर्युपणा कितने प्रकारकी होती है ?

निशीथचूर्णि,वृहत्कल्पचूर्णि, कल्पसूत्रनिर्युक्ति,चूर्णि, वृत्तिवगेरह शास्त्रोंमें पर्युपणाके नामातसे ८ प्रकारसे अनेक भेद बतलाये हे, मगर यहा तो अभी मुख्यतासे वर्षास्थितिरूप और वार्षिक कार्यरूप

महीने वार्षिक कार्य होनेका दोष बतलाकर, १२ महीने वार्षिककार्य होनेकाठहरानेकेलिये अधिकमहीनेको बीचमेंसे छोडदेना अनुचितहै,

२३ – पर्युषणा संबंधी कल्पसूत्रका पाठ वार्षिक कार्योंके लिये है, या केवल वर्षास्थितिके लियेही है?

कल्पसूत्रका पर्युषणा संबंधी पाठ वर्षास्थितिके साथही वार्षिक कार्योंकेलियेभी है, जिसपरभी उसको सिर्फ वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिककार्य निषेध करते हैं, वो गंभीर आशयवाले अनेकार्थ युक्त आगमपाठके अर्थको उत्थापन करनेवालेबनतेहैं जैसे "णमो अरिहंता णं" पदके अर्थमें कर्मशत्रुको जितनेवाले अरिहंतभगवानको नमस्कार करनेका अर्थ अनादिसिद्धहै, जिसपरभी कर्मशत्रुके अर्थको नहीं माननेवालेको अज्ञानी समझा जाताहै तैसेही कल्पसूत्रादिके ५० दिने पर्युषणाकरनेसंबंधीपाठोंमें वार्षिककार्यकरनेका अर्थतो अनादिसिद्धहै, जिसपरभी ५० दिने वार्षिक कार्योंको नहीं मानने वालोंको अज्ञानी या हठवादी समझने चाहिये।

२४ - भगवान् किसीप्रकारकेभी पर्युषणा करतेथे या नहीं?

उग्रविहारी जिनकल्पीमुनियोंके तथा स्थिविर कल्पीमुनियोंके आचारमें बहुतभेदहै,और भगवान्तो अनंतशक्तियुक्त कल्पातित हैं इसलिये भगवान्के आचारमेंतो विशेष भेद है तो भी वर्षाऋतुमें वर्षास्थितिरूप पर्युषणा तो सर्वकोईकरतेहैं और स्थिविर कल्पी मुनियोंके तो वर्षास्थितिके साथही चौमासी व वार्षिकपर्वके कार्य करने वगैरहका अधिकार प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी कल्पसूत्रमें पर्युषणा शब्दमात्रको देखकर अतीव गहनाशयवाले सूत्रार्थके भावार्थको गुरुगम्यतासे समझे विना भगवान्कोभी वार्षिक प्रतिक्रमणादिकरनेवाले ठहराने या ५० दिनकी पर्युषणाको वार्षिक कार्योंरहित ठहरानी, सो अज्ञानता है इसकोभी विवेकीजन स्वयं विचार सकते हैं

२५ – पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेषशास्त्र कौन २ है?

देखो— जिसशास्त्रमें मुख्यतासे एक विषयको विशेषरूपसे खुलासाके साथ कथन किया होवे, उसको विशेष शास्त्र कहते हैं। और जिसशास्त्रमें थोडा२ बहुत बातोंका कथनहोवे,उसको सामान्य शास्त्रकहतेहैं। यद्यपि यथा अवसर दोनोंशास्त्रमान्यहैं,मगर सामान्य शास्त्रसे विशेषशास्त्र ज्यादे अधिक बलवान होताहै इसलिये मुख्यतासे विशेष शास्त्रकी बात अंगीकार करनेके समय,सामान्य शास्त्रकी बात

ऐसे दो अर्थ वर्तमानमें सर्व गच्छवाले ग्रहण करतेहैं । इसलिये आ पाढ चौमासीसे ठहरना सो वर्षास्थितिरूप अज्ञात पर्युषणा और मासवृद्धिके सद्भावमें २० दिने या उसके अभावमें ५० दिन ज्ञात (प्रकट) पर्युषणा करना सो वार्षिक कार्यरूप प्रसिद्ध पर्युषणा करनेका समझना चाहिये । जब जैनपञ्चांगके अभावसे २० दिनकी पर्युषणा बंधहुई, तबसे लौकिक हरेक मास बढे तो भी ५० दिन वार्षिक कार्यरूप पर्युषणा करनेकी सबगच्छोंके पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है

२१–महीना वढे तब वीश दिनकी पर्युषणा वर्षास्थिति-रूप है, या वार्षिकपर्वरूप है ?

भो देवानुप्रिय ! जैसे चन्द्रवर्षमें ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कार्यरूप है, तैसेही-अभिवर्द्धित वर्षमें २० दिनकी ज्ञात पर्युषणाभी वार्षिक कार्यरूप है । जिसपरभी श्रावणमें वीश दिनकी ज्ञात पर्युषणा सिर्फ वर्षास्थितिरूपमानोंगे,तो भाद्रपदमेंभी५०दिनकी ज्ञात पर्युषणाभी वर्षा स्थितिरूप ठहर जावेंगे और वार्षिककार्य करने सर्वथा उडजावेंगे और २० दिने वार्षिककार्य नहीं करने, मगर ५० दिने करने, ऐसाभी कोई शास्त्र प्रमाण नहींहै, और २० दिने ज्ञात पर्युषणा किये बाद पीछे एक महीनेसे वार्षिककार्य करने ऐसाभी कोइ शास्त्र प्रमाण नहींहे । इसलिये जैसे ५० दिने भाद्रपदमें वार्षिक कार्य होतहैं, वसेही २० दिने श्रावणमेंभी वार्षिक कार्य होतेथे । और वर्तमानमेंश्रावण या भाद्रपदवढे,तोभी दूसरश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने वार्षिक कार्यरूप पर्युषणापर्व करनासो शास्त्राज्ञाहे

२२–वार्षिक कार्य१२महीने होवें,या १३ महीनेभी होवे ?

देखो पहिलेभी जेसे २०दिने श्रावणमें वार्षिककार्यकरतेथे तबभी आवतेवर्ष भाद्रपदतक१३महीने होतथे तेसेही अभी वर्तमानमेंभी ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें वार्षिक कार्य होनेसे आवते वर्ष१२महीने होतेहैं इसमें कोइ दोषनहींहे देखिये दो पौष,दो आषाढ, अथवा दो आसोज होनेसेभी १३ महीने प्रत्यक्षमें होते हैं, इसलिये महीना वढे तब तो पहिले या पीछे १३ महीनोंके २६ पाक्षिक प्रतिक्रमण सब गच्छवालोंकोही होतेहैं । और जैनमें या लौकिकमें १२ महीनोंके या १३ महीनोंके दोनोंवर्षमाने हैं इसलिये १२महीनेभी वार्षिक कार्यहोवें और१३महीनेभी वार्षिककार्यहोवें यह कोई नवीन बात नहीं हे । किंतु अनादि मर्यादाका प्रवाह ऐसाहा हे जिसपरभी १३

महीने वार्षिक कार्य होनेका दोष बतलाकर, १२ महीने वार्षिककार्य होनेकाठहरानेकेलिये अधिकमहीनेको बीचमेंसे छोडदेना अनुचितहै,

२३–पर्युषणा संबधी कल्पसूत्रका पाठ वार्षिक कार्योंके लिये है, या केवल वर्षास्थितिके लियेही है?

कल्पसूत्रका पर्युषणा संबधी पाठ वर्षास्थितिके साथही वार्षिक कार्योंकेलियेभी है, जिसपरभी उसको सिर्फ वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिककार्य निषेध करते हैं, वो गंभीर आशयवाले अनेकार्थ युक्त आगमपाठके अर्थको उत्थापनकरनेवालेबनतेहैं जेसे"णमो अरिहंता णं" पदके अर्थमें कर्मशत्रुको जितनेवाले अरिहंतभगवानको नमस्कार करनेका अर्थ अनादिसिद्धहै, जिसपरभी कर्मशत्रुके अर्थको नहीं माननेवालेको अज्ञानी समझा जाताहै तेसेही कल्पसूत्रादिके५० दिने पर्युषणाकरनेसंबधीपाठोंमें वार्षिककार्यकरनेका अर्थतो अनादिसिद्धहै, जिसपरभी ५० दिने वार्षिक कार्योंको नहीं मानने वालोंको अज्ञानी या हठवादी समझने चाहिये।

२४-भगवान् किसीप्रकारकेभी पर्युषणा करतेथे या नहीं?

उग्रविहारी जिनकल्पीमुनियोंके तथा स्थिविर कल्पीमुनियोंके आचारमें बहुतभेदहै,और भगवान्तो अनंतशक्तियुक्त कल्पातित हैं इसलिये भगवान्के आचारमेंतो विशेष भेद है तो भी वर्षाऋतुमें वर्षास्थितिरूप पर्युषणा तो सर्वकोईकरतेहैं और स्थिविर कल्पी मुनियोंके तो वर्षास्थितिके साथही चौमासी व वार्षिकपर्वके कार्य करने वगैरहका अधिकार प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी कल्पसूत्रमें पर्युषणा शब्दमात्रको देखकर अतीव गहनाशयवाले सूत्रार्थके भावार्थको गुरुगम्यतासे समझे विना भगवान्कोभी वार्षिक प्रतिक्रमणादिकरनेवाले ठहरानें, या ५० दिनकी पर्युषणाको वार्षिक कार्योंरहित ठहरानी, सो अज्ञानता है इसकोभी विवेकीजन स्वयं विचार सकते हैं

२५-पर्युषणासंबधी सामान्य व विशेषशास्त्र कौन २ हैं?

देखो— जिसशास्त्रमें मुख्यतासे एक विषयको विशेषरूपसे खुलासाके साथ कथन किया होवे, उसको विशेष शास्त्र कहते हैं। और जिसशास्त्रमें थोडा२ बहुत बातोंका कथनहोवे,उसको सामान्य शास्त्रकहतेहैं। यद्यपि यथा अवसर दोनोंशास्त्रमान्यहैं,मगर सामान्य शास्त्रसे विशेषशास्त्र ज्यादे अधिक बलवान होताहै इसलिये मुख्यतासे विशेष शास्त्रकी बात अंगीकार करनेके समय,सामान्य शास्त्रकी बात

गौण्यताभावमें रहती है यह बात विद्वानोंमें सर्वत्र प्रसिद्धही है।
औरभी देखिये— जैसे श्री भगवतीजीसूत्र बड़ा कहा जाता है, तो
भी उसमें बहुत बातोंका थोड़ा २ कथन होनेसे संयमकी आराधनकी
क्रिया संबंधी सामान्यशास्त्र कहा जावे और आचारांग, दशवैकालि
क छोटे २ सूत्रहैं, तोभी उसमें मुख्यतासे संयमकी आराधनाका विशेष
विधान होनेसे यह संयमक्रियासंबंधी विशेषशास्त्र कहाजाताहै इसीतर
ह समवायांगसूत्रमें थोड़ा २ अनेक बातोंका कथन होनेसे पर्युषणा
संबंधी समवायांगसूत्र सामान्य शास्त्रहै, और कल्पसूत्रमें तो खास प
र्युषणासंबंधी सामान्य व विशेष दोनों प्रकारसे विस्तारपूर्वक खु
लासाके साथ वर्षास्थितिरूप व वार्षिकपर्वरूप दोनों पर्युषणाका
अधिकार है इसलिये पर्युषणासंबंधी श्रीकल्पसूत्र विशेषशास्त्रहै व
ही श्रीकल्पसूत्ररूप विशेषशास्त्रको पर्युषणापर्वमें चतुर्विधसंघके मां
गलिकके लिये वर्षोवर्ष प्रत्येक गाम नगरादिमें सर्वत्र बाचनेमें आता
है उस विशेषशास्त्रके पर्युषणासंबंधी मूलस्वरूप मुख्य विशेष पा
ठको छोडना और समवायांगके सामान्यपाठपर दृढ आग्रहकरना सो
आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंको योग्य नहीं है मगर अल्पज्ञ बिना स
मझवाले अपना आग्रह न छोडें, तो उनकी खुशीकी बात है।

२६–पर्युषणासंबंधी हमेशा नियत नियम ५० दिनका है, अथवा ७० दिनका है?

देखो-पर्युषणासंबंधी सर्वशास्त्रोंमें ५० दिनको पर्युषणा किये
बिना उल्लंघनकरना निवारणकियाहै, इसलिये ५० दिनका नियतनि
यमहै, और ७०दिनसे ज्यादे दिन होवे उसका कोइभी दोष किसीभी
शास्त्रमें नहींकहा, इसलिये ७० दिनका हमेशा नियतनियम नहींहै

१– देखो पहिलेभी २०दिने पर्युषणा करतेथे, तबभी पीछे१००
दिन रहतेथे इसलिये ७०दिनका हमेशा नियत नियम नहींहै।

२– अबीभी श्रावण भाद्रपद या आसोज बढे तब तपगच्छके
पूर्वाचार्योंके कथन मुजब कल्पसूत्रकी टीकाओंके वाक्यसेभी ५०
दिनेपर्युषणा होवे तबभी पीछे १०० दिन रहते हैं। इसलियेभी ७०
दिन रहनेका हमेशा नियत नियम नहीं है।

३– पचास दिन उल्लंघेतो सर्वशास्त्रोंमें उसका प्रायश्चित्त कहा
है, मगर ७० दिन उल्लंघेतो किसीभी शास्त्रमें उसका प्रायश्चित्त नहीं
कहा इसलियेभी७० दिनका हमेशा नियतनियम नहीं ठहरसकताहै

४– ५० दिनेतो ग्रामादिक न होवे तोभी जगलमें वृक्षनीचेभी अवश्यही पर्युषणा करनेकी आवश्यकता बतलाईहे, ओर ७० दिन की स्वाभाविक गिनती बतलाई हे,परतु वैसीही ७०दिनकी आवश्य कता नहीं बतलाई,इसलियेभी७०दिनका हमेशा नियत नियम नहींहे

५– ७० दिवसकापाठ मासवृद्धिके अभावसबधी हे इसलिये उसको मासवृद्धि होनेपरभी आगेकरना व उसपर आग्रहकरना सो शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे सर्वथा योग्य नहीं है

६– इन्हीं समवायागसूत्रके टीकाकार महाराजने स्थानागसूत्र वृत्तिमें, मासवृद्धि होवे तव पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिकतक १००दिन ठहरनेकाकहाहे, उसको उत्थापनकरना और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर १०० दिनकी जगहभी ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना सो आत्मार्थियोंको कभी योग्य नहीं हे ।

७– निशीथचूर्णि-वृहत्कल्पचूर्णि वृत्ति पर्युषणाकल्पनिर्युक्ति चूर्णि वृत्ति-गच्छाचारपयन्नवृत्ति जीवानुशासनवृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें, वर्षास्थितिकेलिये कालावग्रहमें, जघन्यसे ७० दिन, मध्य मसे ७५-८०-८५-९०-९५ यावत् १२० दिन, और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालमान प्रमाण बतलाया है, उसके अदरमेंसे एक दिनभी अभी गिनतीमें नहीं छूट सकता जिसपरभी शास्त्रविरुद्ध होकर व र्षास्थितिके अनियत व जघन्य७०दिनके नियमको हमेशा नियत नि यम ठहरानेका आग्रह करना सो विवेकीयोंको सर्वथा योग्य नहींहे ॥

८– निशीथचूर्ण्यादिमें द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावसे पर्युषणा की स्थापना करनी बतलायी है, उसमें कालस्थापना सबधी समय आवलिका-मुहूर्त्त दिन पक्ष माससे अधिक महीनेकेभी ३० दिनोंकी गिनती सहित प्रत्येक दिवसको पर्युषणासबधी कालस्थापनाके अ धिकारमें गिनतीमेंलियेहे,इसलिये पर्युषणासबधी दिनसख्यामेंसे एक दिनभी गिनतीमें निषेध नहीं होसकताहै, जिसपरभी जघन्य ७० दि नके अनियत नियमको मास वढनेपरभी आगे करते ह ओर फिर अधिकमहीनेके ३० दिन गिनतीमें छोडकर १०० दिनके ७० दिनभी अपनी कल्पनासे बना लेते हे, सो सर्वथा चूर्णिके विरुद्ध है, इस का विशेष विचार तत्त्वज्ञजन स्वय कर लेवेंगे ।

९– सीत्तर दिनका नियत नियम न होनेसे ७० दिनक ऊपर ज्यादे दिनभी होते ह ओर ' वासावासाए अणाउट्टीए, आसोए क त्तिए वा निग्गताण, अट्ठ अतिरित्ता भवति " इत्यादि निशीथचूर्णि,

गौण्यताभावमें रहती है यह न्याय विद्वानोंमें सर्वत्र प्रसिद्धही है। औरभी देखिये— जैसे श्री भगवतीजीसूत्र बड़ा कहा जाता है, तो भी उसमें बहुत बातोंका थोडा २ कथन होनेसे संयमके आराधनकी क्रिया संबंधी सामान्यशास्त्र कहा जावे और आचारांग, दशवैकालिक छोटे २ सूत्रहै,तोभी उसमें मुख्यतासे संयमके आराधनका विशेष विधान होनेसे यह संयमक्रियासंबंधी विशेषशास्त्र कहाजाताहै इसीतरह समवायांगसूत्रमें थोडा २ अनेक बातोंका कथन होनेसे पर्युषणा संबंधी समवायांगसूत्र सामान्य शास्त्रहै, और कल्पसूत्रमें तो खास पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेष दोनों प्रकारसे विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ वर्षास्थितिरूप व वार्षिकपर्वरूप दोनों पर्युषणाका अधिकार है इसलिये पर्युषणासंबंधी श्रीकल्पसूत्र विशेषशास्त्रहै व ही श्रीकल्पसूत्ररूप विशेषशास्त्रको पर्युषणापर्वमें चतुर्विधसंघके मांगलिकके लिये वर्षोवर्ष प्रत्येक गाव नगरादिमें सर्वत्र वाचनेमें आता है उस विशेषशास्त्रके पर्युषणासंबंधी मूलसूत्ररूप मुख्य विशेष पाठको छोडना और समवायांगके सामान्यपाठपर दृढ आग्रहकरना सो आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंको योग्य नहीं है मगर गच्छ विना समझवाले अपना आग्रह न छोडें,तो उनकी खुशीकी बात है ।

२६–पर्युषणासंबंधी हमेशा नियत नियम ५० दिनका है, अथवा ७० दिनका है ?

देखो-पर्युषणासंबंधी सर्वशास्त्रोंमें ५० दिनको पर्युषणा किये विना उल्लंघनकरना निवारणकियाहै, इसलिये ५० दिनका नियतनियमहै,और ७०दिनसे ज्यादे दिन होंवे उसका कोईभी दोष किसीभी शास्त्रमें नहींकहा, इसलिये ७० दिनका हमेशा नियतनियम नहींहै

१– देखो पहिलेभी २०दिने पर्युषणा करतेथे, तबभी पीछे१०० दिन रहतेथे इसलिये ७०दिनका हमेशा नियत नियम नहींहै ।

२– अबीभी श्रावण भाद्रपद या आसोज बढे तब तपगच्छके पूर्वाचार्योंके कथन मुजब कल्पसूत्रकी टीकाओंके वाक्यसेभी ५० दिनपर्युषणा होंवे तबभी पीछे १०० दिन रहते हैं। इसलियेभी ७० दिन रहनेका हमेशा नियत नियम नहीं है।

३– पचास दिन उल्लंघेतो सर्वशास्त्रोंमें उसका प्रायश्चित्त कहा है,मगर ७० दिन उल्लंघेतो किसीभी शास्त्रमें उसका प्रायश्चित्त नहीं कहा इसलियेभी७० दिनका हमेशा नियतनियम नहीं ठहरसकताहै

व जन्माष्टमी वगैरह पर्वकार्य नहीं करते, ऐसा जान बुझकर मायामृषा कथन करना और बालजीवोंको उलटा रस्ता बतलाना भवभीरु आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

२८- गणेश चौथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं ?

भो देवानुप्रिय ! गणेश चौथका पर्वतो मास प्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढ चोमासीसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होताहै मगर कभी श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छट्ठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होताहै। इसी तरह मास बढनेके अभावमें अढाई (२॥) महीनोंसे पांचवा श्राद्धपक्ष होताहै मगर श्रावणादि मासबढे तब तो साढेतीन (३॥) महीनोंसे सातवा श्राद्धपक्ष होताहै, तथा दीवालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोंसे ७ वें पक्षमें कार्तिकमें होता है, मगर श्रावणादि बढे तबतो साढेचार (४॥) महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है यह बात प्रत्यक्षप्रमाणसे जगत्प्रसिद्ध सर्वजन सम्मतही है और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्धहोनेसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५०दिने अवश्यही करने सर्वशास्त्रोंमेंकहेहैं इसलिये गणेशचोथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरेभाद्रपदमें करें तो तीसरेमहीनेके छट्ठेपक्षमें ८०दिनहोनेसे शास्त्रविरुद्धहोताहै,इसलिये दूसरेभाद्रपदमें पर्युषणापर्व नहींहोसकते किंतु दूसरेमहीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथमभाद्रपदमेंही करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थियोंको योग्यहै। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचोथकी तरह दिनप्रतिबद्ध लोकोत्तर पर्युषणापर्वतो दूसरे भाद्रपदमें ८०दिन होनेसे कभी नहीं होसकतेहैं इसबातकोभी विशेष तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वय विचार लेवेंगे।

२९-पहिले पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप, अपने वडील कैसे करतेथे ?

पहिले पोषादि मास बढतेथे तब दोनों महीनोंके चारों पक्षोंमें-पहिले पक्षमें,या दूसरेपक्षमें, वा तीसरेपक्षमें अथवा चोथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्के जो जो च्यवन-जन्मादिकल्याणक हुएहोवें,उसमुजब उस उस पक्षमें,अर्थात् दोनों महीनोंके ४पक्षोंमें ज्ञानीमहाराजोंकोपूछकर आरा धनकरतेथे यह अनादिकालसे ऐसीही मर्यादा चलीआतीहै। इसलिये अधिकमहीनेमें

बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, वृत्ति आदि अनेक शास्त्रोंमें लिखे मुजब वर्षाके अभावमें आसोजमें विहार करें, तो ८० दिनमें कमती भी ४०दिन, या ४५-५० दिनभी होवेहै। तथा- पहिले ७० दिन बा विक काय जब लग नहीं करें, तब तब विहार करनेमें आताथा मग. र अभी वर्तमानमें तो आषाढ चौमासी बाद विहार करनेकी रूढी नहीं है। तैसेही पहिले वर्षाके अभावमें आसोजमेंभी विहार करते थे, मगर अभीतो वर्षा नहींहोवे रस्तोंके कीचड सुखकर रस्ते साफ होगयें होवें तो भी कार्तिक पूर्णिमा पहिले आसोजमें विहार करने की रूढी नहीं है, इसलिये वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार नहीं कर सकते और कभी दो आसोज होवें तो भी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। इसलियेभी ७० दिनका हमेशा नियत नियम नहीहै। इस बातको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वय विचार लेवेंगे।

२७-महीना बढे तब होली, दीवाली वगैरह लौकिक पर्व पहिले महीनेमें होवे या दूसरे महीनेमें होवे?

देखो- कितनेक पर्व पहिले महीनेमें होते है, और कितनेक प र्व दूसरे महीनेमेंभी होते हैं जब दो भाद्रपद होवेंगे, तब जन्माष्टमी का पर्व पहिले भाद्रपदमें करते है, और गणेश चोथका पर्व दूसरे भाद्रपदमें करतेहै तथा जब दो आसोज होवेंगे तब श्राद्धपक्ष पहिले आसोजमें करतेहैं और दशहराका पर्व दूसरे आसोजमें करते है तथा दो कार्तिक होवे तब दीवाली पर्व पहिले कातिकमें करते हैं इसीतरहसे बारहहीमासोंके पर्व काय कृष्णपक्षसबधीपर्व पहिले म हीनेमें ओर शुक्लपक्ष सबधी पर्व दूसरे महीनेमें समझ लेना और 'मलमासो द्वेधा अधिक मास -क्षयमासश्चेति। तदुक्त काठकगृह्ये। यस्मिन् मासे न सक्रांति, सक्रांति द्वयमेव वा मलमासो स विज्ञे यो मास स्यात् तु त्रयोदश। तथा च उक्त हेमाद्रि नागर खडे। नभो वा नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् सप्तम पितृपक्ष स्यादन्य त्रैव तु पचम। इत्यादि" निर्णयसिंधु, धर्मसिंधु, निर्णयदीपकादि लौकिक धर्मशास्त्रोंके प्रमाणानुसार, आषाढ चोमासीसे पाचवा पि तृपक्ष (श्राद्धपक्ष) होताहै, मगर जब श्रावण, भाद्रपद बढे तब उस की गिनतीसे सातवा [७] श्राद्धपक्ष होताहै, इसलिये लौकिकवाले भी अधिकमहीनेके३०दिन गिनतीमें लेतेह जिसपरभी लौकिकवाले अधिकमहीनेके ३०दिन गिनतीमें नहीलेते,या प्रथम महीनेमें दीवाली

व जन्माष्टमी वगैरह पर्वकार्य नहीं करते, ऐसा जान बुझकर मायामृषा कथन करना और बालजीवोंको उलटा रस्ता बतलाना भवभीरु आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

२८– गणेश चौथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं ?

भो देवानुप्रिय ! गणेश चोथका पर्वतो मास प्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढ चोमासीसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होताहै मगर कभी श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छट्ठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होताहै। इसी तरह मास बढनेके अभावमें अढाई (२॥) महीनोंसे पाचवा श्राद्धपक्ष होताहै मगर श्रावणादि मासबढें तब तो साढेतीन (३॥) महीनोंसे सातवा श्राद्धपक्ष होताहै, तथा दीवालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोंसे ७ वें पक्षमें कातिकमें होता है, मगर श्रावणादि बढे तबतो साढेचार (४॥) महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है यह बात प्रत्यक्षप्रमाणसे जगत्प्रसिद्ध सर्वजन सम्मतही है और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्धहोनेसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५०दिने अवश्यही करने सर्वशास्त्रोंमेंकहेहैं इसलिये गणेशचैाथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरेभाद्रपदमें करें तो तीसरेमहीनेके छट्ठेपक्षमें ८०दिनहोनेसे शास्त्रविरुद्धहोताहै,इसलिये दूसरेभाद्रपदमें पर्युषणापर्व नहींहोसकते किंतु दूसरेमहीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथमभाद्रपदमेंही करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थियोंको योग्यहै। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचोथकी तरह दिनप्रतिबद्ध लोकोत्तर पर्युषणापर्वतो दूसरे भाद्रपदमें ८०दिन होनेसे कभी नहीं होसकतेहैं इसबातकोभी विशेष तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

२९–पहिले पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप, अपने वडील कैसे करतेथे ?

पहिले पौषादि मास बढतेथे तब दोनों महीनोंके चारों पक्षोंमें–पहिले पक्षमें,या दूसरेपक्षमें, वा तीसरेपक्षमें, अथवा चोथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्के जो जो च्यवन–जन्मादिकल्याणक हुएहोंवे,उसमुजब उस उस पक्षमें,अर्थात् दोनों महीनोंके ४पक्षोंमें ज्ञानीमहाराजोंकापूछकर आराधनकरतेथे यह अनादिकालसे ऐसीही मर्यादा चलीआतीहै। इसलिये अधिकमहीनेमें

बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, वृत्ति आदि अनेकशास्त्रोंमें लिखे मुजब वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार करें, तो ८० दिनमें कमती भी ४०दिन, या ४५-५० दिनभी होवेंहै। दूसरा- पहिले ७० दिन का पिक काय जब तक नहीं करें,तब तक विहार करनेमें आताथा मग. र अभी वर्तमानमें तो आषाढ चौमासी बाद विहार करनेकी रूढी नहीं है। तैसेही पहिले वर्षाके अभावमें आसोजमेंभी विहार करते थे, मगर अभीतो वर्षा नहींहोवे रस्तोंके कीचड सुखकर रस्ते साफ होगये होवें तो भी कार्तिक पूर्णिमा पहिले आसोजमें विहार करने की रूढी नहीं है, इसलिये वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार नहीं कर सकते और कभी दो आसोज होवें तो भी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेहैं। इसलियेभी ७० दिनका हमेशा नियत नियम नहींहै। इस बातको विशेष तत्वज्ञ जन स्वय विचार लेवेंगे।

२७-महीना बढे तब होली, दीवाली वगैरह लौकिक पर्व पहिले महीनेमें होवे या दूसरे महीनेमें होवे?

देखो- कितनेक पर्व पहिले महीनेमें होते है, और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमेंभी होते है जब दो भाद्रपद होवेंगे, तब जन्माष्टमी का पर्व पहिले भाद्रपदमें करते है, और गणेश चौथका पर्व दूसरे भाद्रपदमें करतेहैं तथा जब दो आसोज होवेंगे तब श्राद्धपक्ष पहिले आसोजमें करतेहैं, और दशहराका पर्व दूसरे आसोजमें करते है तथा दो कार्त्तिक होवे तब दीवाली पर्व पहिले कातिकमें करते हैं इसीतरहसे बारहहीमासोंके पर्व कार्य कृष्णपक्षसबधीपर्व पहिले महीनेमें और शुक्लपक्ष सबधी पर्व दूसरे महीनेमें समझ लेना और 'मलमासो द्वेधा अधिक मास -क्षयमासश्चेति। तदुक्त काठकगृह्ये। यस्मिन् मासे न सक्रांति, सक्रांति द्वयमेव वा मलमासो स विज्ञेयो मास स्यात् तु त्रयोदश। तथा च उक्त हेमाद्रि नागर खडे। नभो वा नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् सप्तम पितृपक्ष स्यादन्यत्रैव तु पचम। इत्यादि' निर्णयसिंधु, धर्मसिंधु, निर्णयदीपकादि लौकिक धर्मशास्त्रोंके प्रमाणानुसार, आषाढ चोमासीसे पाचवा पितृपक्ष (श्राद्धपक्ष) होताहै, मगर जब श्रावण, भाद्रपद बढे तब उसकी गिनतीसे सातवा [७] श्राद्धपक्ष होताहै, इसलिये लौकिकवाले भी अधिकमहीनेके३०दिन गिनतीमें लेतेह जिसपरभी लौकिकवाले अधिकमहीनके ३०दिन गिनतीमें नहींलेते,या प्रथम महीनेमें दीवाली

व जन्माष्टमी वगैरह पर्वकार्य नहीं करते, ऐसा जान बुझकर मायामृ षा कथन करना और बालजीवोंको उलटा रस्ता बतलाना भवभीरु आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

२८– गणेश चौथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं?

भो देवानुप्रिय! गणेश चौथका पर्वतो मास प्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढ चोमासीसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होताहै मगर कभी श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छठ्ठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होताहै। इसी तरह मास बढनेके अभावमें अढाई (२॥) महीनोंसे पाचवा श्राद्धपक्ष होताहै मगर श्रावणादि मासबढें तब तो साढेतीन (३॥) महीनोंसे सातवा श्राद्धपक्ष होताहै, तथा दीवालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोंसे ७ वें पक्षमें कातिकमें होता है, मगर श्रावणादि बढे तबतो साढेचार (४॥) महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है यह बात प्रत्यक्षप्रमाणसे जगत्प्रसिद्ध सर्वजन सम्मतही है और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्धहोनेसे दूसरे महीनेके चोथेपक्षमें ५०दिने अवश्यही करने सर्वशास्त्रोंमेंकहेहैं इसलिये गणेशचोथके पर्वकी तरह पर्युषणा पर्वभी दूसरेभाद्रपदमें करें तो तीसरेमहीनेके छठ्ठेपक्षमें ८०दिनहोनेसे शास्त्रविरुद्धहोताहै,इसलिये दूसरेभाद्रपदमें पर्युषणापर्व नहींहोसकते किंतु दूसरेमहीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथमभाद्रपदमेंही करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थियोंको योग्यहै। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचोथकी तरह दिनप्रतिबद्ध लोकोत्तर पर्युषणापर्वतो दूसरे भाद्रपदमें ८०दिन होनेसे कभी नहीं होसकतेहैं इसबातकोभी विशेष तत्वज्ञ पाठकगण स्वय विचार लेवेंगे।

२९–पहिले पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप, अपने बडील कैसे करतेथे?

पहिले पौषादि मास बढतेथे तब दोनों महीनोंके चारों पक्षों में–पहिले पक्षमें,या दूसरेपक्षमें, वा तीसरेपक्षमें अथवा चौथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्के जो जो च्यवन–जन्मादिकल्याणक हुएहोंव,उसमुजब उस उस पक्षमें,अर्थात् दोनों महीनोंके ४पक्षोंमें ज्ञानीमहाराजोंकोपूछकर आराधनकरतेथे यह अनादिकालसे ऐसीही मर्यादा चलीआतीहै। इसलिये अधिकमहीनेमें

कल्याणकादि तप नहींहोसकते,ऐसा कहना प्रत्यक्ष मृषा है। देखो— अनंतकालसे अनंततीर्थंकर महाराजहोगये हैं, उन महाराजोंके च्यवन-जन्म-केवलज्ञानादि कल्याणक होनेमें, कोईभी पक्ष,कोईभी मास,कोईभी दिवस, या कोईभी पर्व बाधक कभी नहींहोसकतेहैं, किंतु हरेक मास, हरेक पक्ष, हरेक ऋतु व हरेक दिवसमें होसकते हैं इसलिये पहिले महीनेके या दूसरे महीनेके प्रथमपक्षमें या दूसरे पक्षमें जिसरोज च्यवनादि जो जो कल्याणक हुए होवें उसी महीनेके उसी पक्षमें उसीरोज उन्हीं कल्याणकोंका आराधनकरना शास्त्रानुसारही है इसलिये इसको कोईभी निषेध नहीं कर सकता है। मगर अभी जैनपंचांगके अभावसे व ज्ञानीमहाराजके अभावसे अधिक पौषमें या अधिक आषाढमें कौन २ भगवान्के कौन २ कल्याणक हुए हैं, उनकी मालूम नहीं होनेसे तथा लौकिकटिप्पणामें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे चैत्र-वैशाखादि महीने बढें तब भी परंपरागत ८४ गच्छोंके सभी पूर्वाचार्योंने लौकिक रूढीके अनुसार कितनेक पर्व प्रथम महीनेमें और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमें करनेकी प्रवृत्ति रखीहै। उसी मुजब वर्तमानमेभी करनेमेंआते हैं। देखिये-जैसे-कार्तिकमहीने संबंधी श्रीसंभवनाथस्वामीजीके केवलज्ञानकल्याणक, श्रीपद्मप्रभुजीके जन्म व दीक्षा कल्याणक, श्रीनेमिनाथजीके च्यवन कल्याणक ओर श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणकल्याणक व दीवालीपर्वादि कार्य दो कार्त्तिकहोवें तब प्रथमकार्त्तिकमेंकरनेमें आतेहैं, तथा दो पौष होवें तब श्रीपार्श्वनाथजीका जन्मकल्याणक पोषदशमीकापर्व प्रथम पोषमहीनेमें करनेमेंआताहै, और जब दो चैत्रमहीने होवे तब श्रीपार्श्वनाथजीके केवलज्ञान कल्याणकादि पर्वकार्य उष्णकालके प्रथममहीनेके प्रथमपक्षमें अर्थात् पहिलेचैत्रमें करनेमेंआतेहैं मगर श्री महावीरस्वामीके जन्मकल्याणक व ओलीआदिकपर्वतो उष्णकालके दूसरे महीनेके चौथे पक्षमें अर्थात् दूसरे चैत्रमें करनेमें आतेहैं ऐसेही दोआषाढहोवें तब श्रीआदीश्वरभगवान्के च्यवनादि उष्णकालके चोथेमहीनेकेसातवेपक्षमें प्रथमआषाढमें करनेमेंआतेहै,और श्रीमहावीरस्वामीके च्यवनादि पांचवे महीनेके दशवेपक्षमें दूसरे आषाढमें करनेमेंआतेहैं इसीतरहअधिकमहीनेके दोनोंपक्षोंकीगिनतीसहित सर्व महीनोंके कार्य यथायोग्य कल्याणकादि तप वगैरह करनेमेंआतेहैं। इसलिये कल्याणकादि पर्वकार्योंमें अधिकमहीना गिनतीमें नहींलेते ऐसाकहनासर्वथा अनुचितहै इसकोविशेषतत्त्वज्ञजनस्वयविचारलेंगे

३०- जब अधिकमहीना होंवे, तब तेरह महीनोंके सवच्छरी क्षामणो सबंधी खुलासा.

जैसे इन्हीं भूमिकाके पृष्ठ २२ वें के मध्यमें २२ वें नबरके लेख मुजब वार्षिक कार्य १२महीनेभी होंवे, और जब महीना चढे तब तेरह महीनेभी होवें। तैसेही सवच्छरी क्षामणेभी १२ महीनेभी होवें ओर जब महीना बढे तब तेरह महीनेभी होवें, देखो-चद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, जबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, प्रवचनसारोद्धार सूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति, निशीथचूर्णि वगैरह अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी, जब महीना बढे तब उस वर्षके १३महीनोंके २६ पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे हैं इसलिये १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरीमें क्षामणे करनेका ऊपर मुजब अनेक प्राचीनशास्त्रानुसारहै जिसपरभी कोई कहेगा, कि ऊन शास्त्रोंमें तो १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरीमें क्षामणेकरनेका नहींलिखा मगर ऐसा कहनेवालोंको अतीव गहनाशयवाले शास्त्रोंके भावार्थको समझमें नहीं आया मालूम होता है, क्योंकि - देखो-उन शास्त्रोंमें, जैसे- पक्षका, चौमासेका, व वर्षका गणितसे जो जो प्रमाण बतलाया है, तैसेही उन्हीं शास्त्रोंके उन्हीं प्रमाण मुजब, पाक्षिक चौमासी व वार्षिक पर्वादि कार्य करनेमें आते हैं, इसलिये जेसे-जिसवर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्ष होवें, उसी वर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्षोंके सवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं। तैसेही उसी मुजब जब जिस वर्षमें अधिकमहीना होनेसे१३महीनोंके २६पक्ष होवें, तब उस वर्षमें १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं इसलिये उन शास्त्रोंमें १३ महीनोंके क्षामणे नहींलिखे, ऐसा कहना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे आशातनाका कारण है।

औरभी देखिये आवश्यक बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमेंभी जहा जहा वार्षिक प्रतिक्रमणका अधिकार आया है, वहा वहाभी सवच्छर' शब्द लिखा है सो सवच्छर शब्दके १२ महीनोंके २४ पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष, ऐसे दोनों अर्थ आगमोंमें प्रसिद्धही हैं, इसलिये १२ महीनोंके २४ पक्षका अर्थ मान्य करके क्षामणोंमें कहना, और १३ महीनोंके २६ पक्षका अर्थ मान्य नहीं करना व क्षामणोंमेंभी नहीं कहना, यह तो प्रत्यक्षमेंही आगमार्थके उत्थापनका आग्रह करना सर्वथा अनुचित्त है, इसलिये दोनों प्रकारके अर्थ मा

कल्याणकादि तप नहींहोसकते,ऐसा कहना प्रत्यक्ष मृषा है। देखो— अनतकालसे अनततीर्थंकर महाराजहोगये हैं, उन महाराजोंके च्यवन-जन्म-केवलज्ञानादि कल्याणक होनेमें, कोईमी पक्ष,कोईमी मास,कोईमी दिवस, या कोईमी वर्ष बाधक कभी नहीहोसक्तेहैं, किंतु हरेक मास, हरेक पक्ष, हरेक ऋतु व हरेक दिवसमें होसक्ते हैं इसलिये पहिले महीनेके या दूसरे महीनेके प्रथमपक्षमें या दूसरे पक्षमें जिसरोज च्यवनादि जो जो कल्याणक हुए होवें उसी महीनेके उसी पक्षमें उसीरोज उन्हीं कल्याणकोंका आराधनकरना शास्त्रानुसारही है इसलिये इसको कोईभी निषेध नहीं कर सक्ता है। मगर अभी जैनपचागके अभावसे व ज्ञानीमहाराजके अभावसे अधिक पौषमें या अधिक आषाढमें कौन २ भगवान्के कौन २ कल्याणक हुए हैं, उनको मालूम नहीं होनेसे तथा लौकिकटिप्पणामें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे चैत्र-वैशाखादि महीने बढे तब भी परपरागत ८४ गच्छोंके सभी पूर्वाचार्योंने लौकिक रूढीके अनुसार कितनेक पर्व प्रथम महीनेमें और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमें करनेकी प्रवृत्ति रक्खीहै। उसी मुजब वर्तमानमेभी करनेमेंआते हैं। देखिये-जैसे-कार्तिकमहीने सबधी श्रीसभवनाथस्वामीजीके केवलज्ञानकल्याणक, श्रीपद्मप्रभुजीके जन्म व दीक्षा कल्याणक, श्रीनेमिनाथजीके च्यवन कल्याणक और श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणकल्याणक व दीवालीपर्वादि कार्य दो कार्तिकहोवे तब प्रथमकार्तिकमेंकरनेमें आतेहैं, तथा दो पौष होवें तब श्रीपार्श्वनाथजीका जन्मकल्याणक पौषदशमीकापर्व प्रथम पौषमहीनेमें करनेमेंआताहै, और जब दो चैत्रमहीने होवे तब श्रीपार्श्वनाथजीके केवलज्ञान कल्याणकादि पर्वकार्य उष्णकालके प्रथममहीनेके प्रथमपक्षमें अर्थात् पहिलेचैत्रमें करनेमेंआतेहैं मगर श्री महावीरस्वामीके जन्मकल्याणक व ओलीआदिकपर्वतो उष्णकालके दूसरे महीनेके चौथे पक्षमें अर्थात् दूसरे चैत्रमें करनेमें आतेहैं ऐसेही दोआषाढहोवें तब श्रीआदीश्वरभगवान्के च्यवनादि उष्णकालके चौथेमहीनेकेसातवेपक्षमें प्रथमआषाढमें करनेमेंआतेहै,और श्रीमहावीरस्वामीके च्यवनादि पाचवे महीनेके दशवेपक्षमें दूसरे आषाढमें करनेमेंआतेहै इसीतरहअधिकमहीनेके दोनोंपक्षोंकीगिनतीसहित सब महीनोंके कार्य यथायोग्य कल्याणकादि तप वगेरह करनेमेंआतेहैं। इसलिये कल्याणकादि पर्वकार्योंमें अधिकमहीना गिनतीमें नहींलेते ऐसाकहनासर्वथा अनुचितहै इसकोविशेषतरतत्त्वज्ञजनस्वयंविचारलेंगे.

३०- जब अधिकमहीना होंवे, तब तेरह महीनोंके संवच्छरी क्षामणे संबंधी खुलासा.

जैसे इन्हीं भूमिकाके पृष्ठ २२ वें के मध्यमें २२ वें नबरके लेख मुजब वार्षिक कार्य १२महीनेभी होंवे, ओर जब महीना बढे तब तेरह महीनेभी होवें। तैसेही सवच्छरी क्षामणेभी १२ महीनेभी होवें ओर जब महीना बढे तब तेरह महीनेभी होवें, देखो-चद्रप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, जबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, प्रवचनसारोद्धार सूत्रवृत्ति, ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति, निशीथचूर्णि वगैरह अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी, जब महीना बढे तब उस वर्षके १३महीनोंके २६ पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे ह इसलिये १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरीमें क्षामणे करनेका ऊपर मुजब अनेक प्राचीनशास्त्रानुसारहै जिसपरभी कोई कहेगा, कि ऊन शास्त्रोंमें तो १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरीमें क्षामणेकरनेका नहींलिखा मगर ऐसा कहनेवालोंको अतीव गहनाशयवाले शास्त्रोंके भावार्थको समझमें नहीं आया मालूम होता है, क्योंकि – देखो-उन शास्त्रोंमें, जैसे- पक्षका, चौमासेका, व वर्षका गणितसे जो जो प्रमाण बतलाया हे, तैसेही उन्हीं शास्त्रोंके उन्हीं प्रमाण मुजब, पाक्षिक चौमासी व वार्षिक पर्वादि कार्य करनेमें आते हैं, इसलिये जैसे-जिसवर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्ष होवें, उसी वर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्षोंके सवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं। तैसेही उसी मुजब जर जिस वर्षमें अधिकमहीना होनेसे१३महीनोंके २६पक्ष होवें, तब उस वर्षमें १३ महीनोंके २६ पक्षोंके सवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं इसलिये उन शास्त्रोंमें १३ महीनोंके क्षामणे नहींलिखे, ऐसा कहना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे अज्ञानताका कारण है।

औरभी देखिये आवश्यक बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमेंभी जहा जहा वार्षिक प्रतिक्रमणका अधिकार आया है, वहा वहाभी सवच्छर' शब्द लिखा हे सो सवच्छर शब्दके १२ महीनोंके २४ पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष, ऐसे दोनों अर्थ आगमोंमें प्रसिद्धही हैं, इसलिये १२ महीनोंके २४ पक्षका अर्थ मान्य करके क्षामणोंमें कहना और १३ महीनोंके २६ पक्षका अर्थ मान्य नहीं करना व क्षामणोंमेंभी नहीं कहना, यह तो प्रत्यक्षमेंही आगमार्थके उत्थापनका आग्रह करना सर्वथा अनुचित्त हे, इसलिये दोनों प्रकारके अर्थ मा

न्य करके उस शुद्ध प्रमाण करना आत्मार्थी सम्यक्त्व धारियोंको योग्य है इसवातको विशेष तत्वज्ञ जन स्वय विचार सकतेहैं। और इसविषयका विशेष खुलासाभी इसी ग्रथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तक छपगया है, उसके देखनेसे सब निर्णय हो जायगा ।

३१– पाच महीनोंके चौमासी क्षामणे सबधी खुलासा

पहिले जैनटिप्पणामें जब पौषमहीना बढताथा तबभी फाल्गुनचौमासा पाचमहीनोंका होताथा, तथा जब आषाढमहीना बढताथा तबभी आषाढ चौमासा पाच महीनोंका होताथा, तैसेही अभी वर्तमानमें लौकिक टिप्पणामें श्रावणादि बढतेहैं, तबभी कार्तिक चौमासा पाच महीनोंका होता है यद्यपि सामान्य व्यवहारसे चौमासा ४ महीनोंका कहा जाताहै, मगर जब अधिकमहीना होवे तब विशेष व्यवहारसे निश्चयमें पाच महीनोंके १० पाक्षिक प्रतिक्रमण सर्व गच्छवालोंको प्रत्यक्षमेंही करनेमें आते हैं । और जितने मास पक्षोंका प्रायश्चित [दोष] लगा होवे, उतनेही मास पक्षोंकी आलोचना [क्षामणा] करना स्वय सिद्धही है । और मास बढनेसे पाच महीनोंके दश पक्ष होनेपरभी उसमें; ४ महीनोंके ८ पक्षोंके क्षामणे करने और एकमहीनेके दो पक्षोंकी आलोयणा छोडदेनी यह सर्वथा अनुचित है । इसलिये ऊपर मुजब ३० वें नबरके १३ मासी सवच्छरी क्षामणों सबधी लेख मुजबही यथा अवसर पाच महीनोंके दशपक्षों के चौमासेमें क्षामणेकरने शास्त्रानुसार युक्तियुक्तहोनेसे कोईभी निषेध कभी नहीं करसकता,इसकाभी विशेषखुलासा इसग्रथके पृष्ठ३६२ से ३८२ तकके क्षामणोंसबधी लेखमें छपगयाहे, वहासे जान लेना

३२ – १५ दिनोंके पाक्षिक क्षामणे सबधी खुलासा ।

जबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति,ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति, लोकप्रकाशादि जैन-ज्योतिष्के शास्त्रानुसार तो जिसपक्षमें तिथिका क्षयहोवे, वो पक्ष१४दिनोंकाहोताहै और जिसपक्षमें तिथिकाक्षयनहोवे,वो पक्ष १५ दिनोंका होता है । मगर लौकिक टिप्पणामें तो अभी हरेक तिथियोंकी हानी और वृद्धि होतीहै इसलिये कभी१३दिनोंकाभी पक्ष होता है, कभी १४ दिनोंकाभी पक्ष होताहे, कभी १५दिनोंकाभी पक्ष होता है और कभी १६दिनोंकाभी पक्ष होताहै,मगर व्यवहारसे१५ दिनोंका पक्ष कहाजाताहे इसलिये व्यवहारसे पाक्षिकप्रतिक्रमणमें १५ दिनों के क्षामणे करनेमेंआतेहैं मगर निश्चयमें तो प्रतिक्रमण करनेके समय तक जितने रोजके कर्मबधन हुए होंगे, उतनेही रोजके कर्मोंकी नि

र्जरा होगी, किंतु ज्यादे कम कभी नहीं होसकेगी इसलिये निश्चय और व्यवहारके भावार्थको समझे विना शब्दमात्रको आगे करके विवाद करना विवेकी आत्मार्थियोंको तो योग्यनहींहै, इसकाभी विशेप खुलासा इसीग्रथके क्षामणासबधी प्रकरणके लेखसे जानलेना

३३-अपेक्षा विरुद्ध होकर आग्रह करना योग्य नहीं है।

मासवृद्धिके अभावमें ४महीनोंके चोमासीक्षामणे, व १२ महीनोंके सवच्छरी क्षामणे करनेका कहाहे उसकी अपेक्षा समझे विना ही मासवढनेपरभी उसीपाठको आगे करना और ५ महीनोंके १०पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष शास्त्रोंमें लिखेहें उन पाठोंको छुपादेना यह तत्वज्ञ आत्मार्थियोंको योग्यनहींहै,इसीतरह जब पोप व चेत्रादि महीनेबढे तब प्रत्येकमहीनेके हिसावसे विहारकरनेवाले मुनिमहाराजोंको एककल्प चोमासेका और नवमहीनोंके नवकल्प मिलकर दशकल्पीविहार प्रत्यक्षमें होताहै। जिसपरभी महीनावढनेके अभाव सबधी एककल्प चौमासेका और ८महीनोंके ८ कल्प मिलकर ९ कल्पीविहार करनेका पाठवतला करके मासवढे तबभी दशकल्पी विहारको निपेधकरनेकेलिये भोलेजीवोंको सशयमेंगेरना यहभीविवेकी सज्जनोंको सर्वथा योग्यनहीं है, इसीतरह मासवढनेके अभावकी अपेक्षासबधी हरेकवातोंको मासवढनेपरभी आगेलाकर उसका आग्रहकरना और मासवृद्धिकी अपेक्षावाले शास्त्रोंकीवातोंको छोडदेना सर्वथा अनुचितहै इसको विशेपतत्वज्ञ पाठकगण स्वयविचार लेवेंगे

३४- विषय छोडकर विपयांतर करना योग्य नहीं है।

५० दिनोंकी गिनतीस दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युपणापर्वका आराधनकरनेकी अपनेही पूर्वाचार्योंकी सत्यवातकोग्रहण करसकते नहीं और पचास दिनोंकी गिनती उडानेके लिये ऐसा कोई दृढ वाधक प्रमाणभी दिखला सकते नहीं,इसलिये दिन प्रतिवद्ध पर्युपणाका विपयछोडकर होली,दीवाली,ओली आदिक मास प्रतिवद्ध कार्योंके विपयकी यात बीचमें लाते हैं, सो भी यह असत्य आग्रहकी सूचना रूप विपयातर करना योग्य नहीं है। क्योंकि ऐसे तो मासप्रतिवद्ध कार्योंमें कितनेही महीनें, और कितनेही वर्षभी छूट जातेहैं देखो-मास प्रतिवद्धकार्य तो एक महीनेसे करनेके होंवे सो अधिक महीना होंवे तब एक महीनेकी जगह कितनेक पर्व दूसरे

न्य करके उस मुनय प्रमाण करना आत्मार्थी सम्यक्त्व धारियोंको योग्य है इसबातको विशेष तरहसे जा स्वय विचार करोगे । और इसविषयका विशेष खुलासाभी इसी ग्रथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तक छपगया है, उसके देखनेसे सब निर्णय हो जायगा ।

३१– पाच महीनोंके चौमासी क्षामणा सबधी खुलासा.

पहिले जैनटिप्पणामें जब पौषमहीना बढताथा तबभी फाल्गुनचौमासा पाचमहीनोंका होताथा, तथा जब आषाढमहीना बढताथा तबभी आषाढ चौमासा पाच महीनोंका होताथा, तैसेही अभी वर्तमानमें लौकिक टिप्पणामें श्रावणादि बढतेहैं, तबभी कार्तिक चौमासा पाच महीनोंका होता है यद्यपि सामान्य व्यवहारसे चौमासा ४ महीनोंका कहा जाताहै, मगर जब अधिकमहीना होवे तब विशेष व्यवहारसे निश्चयमें पाच महीनोंके १० पाक्षिक प्रतिक्रमण सर्व गच्छवालोंको प्रत्यक्षमेंही करनेमें आते हैं । और जितने मास पक्षोंका प्रायश्चित [दोष] लगा होवे, उतनेही मास पक्षोंकी आलोचना [क्षामणा] करना स्वय सिद्धही है । और मास बढनेसे पाच महीनोंके दश पक्ष होनेपरभी उसमें, ४ महीनोंके ८ पक्षोंके क्षामणे करने और एकमहीनेके दो पक्षोंकी आलोयणा छोडदेनी यह सर्वथा अनुचित है । इसलिये ऊपर मुजब ३० वें नबरके १३ मासी सवच्छरी क्षामणों सबधी लेख मुजबही यथा अवसर पाच महीनोंके दशपक्षोंके चौमासेमें क्षामणेकरने शास्त्रानुसार युक्तियुक्तहोनेसे कोईभी निषेध कभी नहींकरसकता,इसकाभी विशेषखुलासा इसग्रथके पृष्ठ३६२ से ३८२ तकके क्षामणोंसबधी लेखमें छपगयाहै, वहासे जान लेना

३२ – १५ दिनोंके पाक्षिक क्षामणा सबधी खुलासा ।

जबूद्वीपपन्नत्तिसूत्रवृत्ति,ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति, लोकप्रकाशादि जैनज्योतिषके शास्त्रानुसार तो जिसपक्षमें तिथिका क्षयहोवे, वो पक्ष१४दिनोंकाहोताहै ओर जिसपक्षमें तिथिकाक्षयनहोवे,वो पक्ष १५ दिनोंका होता है । मगर लौकिक टिप्पणामें तो अभी हरेक तिथियोंकी हानी और वृद्धि होतीहै इसलिये कभी१३दिनोंकाभी पक्ष होता है, कभी १४ दिनोंकाभी पक्ष होताहै, कभी १५दिनोंकाभी पक्ष होता है और कभी १६दिनोंकाभी पक्ष होताहै,मगर व्यवहारसे१५ दिनोंका पक्ष कहाजाताहै इसलिये व्यवहारसे पाक्षिकप्रतिक्रमणमें १५ दिनोंके क्षामणे करनेमेआतेहैं मगर निश्चयमें तो प्रतिक्रमण करनेके समय तक जितने रोजके कर्मबधन हुए होंगे, उतनेही रोजके कर्मोंकी नि

विषयांतर होनेसे सर्वथा शास्त्रविरुद्धहै और व्यवहारसेभी प्रत्यक्ष अनुचितहै,इसबातको विशेष तत्त्वज्ञ पाठकजन स्वयंविचार लेवेंगे।

३५ – लौकिक श्रावणादि अधिक महीनोंकी तरह क्षयमहीनेभी मान्यकरने योग्य है या नहीं?

पर्युषणापर्वादि धार्मिककार्योंके करनेका भेदसमझे विनाही अधिक महीनेके३०दिनोंमें चौमासी व पर्युषणादिपर्वकार्य नहींकरनेका कितनेक लोगआग्रह करतेह,मगर कभी कभी श्रावणादि अधिकमहीनेवाले वर्षमें कार्त्तिकादि क्षयमासभी बीचमें आतेह, तवतो कार्त्तिक महीनेसवधी श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणकका तप,दीवालीका पर्व, श्रीगोतमस्वामीके केवलज्ञान उत्पन्न होनेका महोत्सव,ज्ञानपचमीका आराधन,चौमासी प्रतिक्रमण व कार्त्तिक पूर्णिमाका उच्छव वगैरह सर्वकार्य तो उसी क्षयकार्त्तिकमासमेंही करतेह और लौकिकमें अधिकमहीना या क्षयमहीना दोनों बरोबरही मानेहै। जिसपरभी क्षयमासमें दीवालीपर्वादि धर्मकार्य करते हैं। और अधिक महीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्मकार्य नहीं करनेका कहतेहै। यहतो प्रत्यक्षमेंही पक्षपातका झूठा आग्रहहीहै सो आत्मार्थियोंको तो करनायोग्य नहींहै। इसलिये अधिकमहीनेमें और क्षयमहीनेमेंभी धर्मकार्य करने उचित हैं,इनमें कोईभी बाधा नहीं आसकती इस बातकोभी विवेकीतत्त्वज्ञ पाठकगण स्वय विचार लेवेंगे।

३६–वार्षिक क्षामणे,या प्राणियोंके कर्मबंधन; व आयु प्रमाणकी स्थिति, किस २ सवत्सरकी अपेक्षासे मानते है?

जैनशास्त्रोंमें पाच प्रकारके सवत्सर मानेहै, जिसमें नक्षत्रोंकी चालके प्रमाणसे ३२७ दिनोंका नक्षत्र सवत्सर मानतेहैं। चद्रकी चालके प्रमाणसे ३५४ दिनोंका चद्रसवत्सर मानते है । फलफूलादिक होनेमें कारणभूत ऋतु भातिबद्ध ३६० दिनोंका ऋतुसवत्सर मानतेहैं। तथा जब अधिकमहीनाहोवे तब१३महीनोंके३८३दिनोंका अभिवर्द्धित सवत्सर मानतेहैं। और सूर्यके दक्षिणायन व उत्तरायनके प्रमाणसे ३६६ दिनोंका सूर्य सवत्सर मानतेहैं। और पाच सूर्यसवत्सरोंके प्रमाणसेही१८३०दिनोंका एक युग मानतेह। इसी एक युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पाचोंही प्रकारके सवत्सरोंके हिसाबसे मिलनेकेलियेही, एक युगमें दो चद्रमास बढते है,सात नक्षत्रमास बढते हैं, और एक ऋतुमास बढताहै,तब सब मिलकर१८३०दिनोंका एक

महीनेभी किये जातेहैं। और दूज पचमी-अष्टमी चतुर्दशी वगैरहमें उपवास करनेका, ब्रह्मचर्य पालनेका, रात्रिभोजन त्याग करनेका इत्यादि व्रत, नियम पच्चख्खाण तो दोनों महीनोंमें दो दो बार कर नेमें आतेहैं। और पर्युषणापर्व तो मास बढे तो भी ५० दिनकी जग ह ५१वें दिनभी कभी नहीं होसक्ते हैं इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युष णापर्वके साथ,मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली दशहरा वगैरहका वि षय लाना सो विषयांतर होनेसे सर्वथा अनुचित है।

और महीनावढनेके अभावमें ओलियोंका पर्व छट्ठे महीने कर नेका शास्त्रोंमें कहाहै, मगर जब कभी महीना बढजावे तबतो प्रत्यक्ष प्रमाणसे और शास्त्रीय हिसाबसेभी सातवें (७) महीने ओलीयाँ कायम होताहै तो भी व्यवहारसे छट्ठे महीने आयंबिलकी ओलिये क रनेका कहाजाता है देखो जैसे- श्रीआदीश्वरभगवान्ने चैत्र वदी ८ [गुजरातदेशकी अपेक्षासे फागण वदी ८] को दीक्षा अंगीकारकी थी और दीक्षाके दिनसे लेकर तपस्याका पारणा दूसरे वर्षमें वैशा खशुदी३ को हुआथा, तोभी व्यवहारसे सर्व शास्त्रोंमें वर्षी तपका पा रणा लिखा है और ऐसेही वर्षीतपका पारणा सर्व कोई जैनीमात्र अभीभी कहते हैं मगर दिनोंकी गिनतीसे तो १३ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४००दिन पारणाके रोज होतेहैं जिसमेंभी कदाचित उस वर्षमें बीचमें अधिक महीना आजावे तो १४ महीनेके उपर १० दिन होनेसे ४३०दिनेपारणा होताहै तोभी व्यवहारसे वर्षी तप करने का कहाजाताहै, और यह बात तो अभी वर्तमानमेंभी वर्षी तप कर नेवालोंके सबके अनुभवमें प्रत्यक्षही आती है, इसलिये ४३० दिने पारणा करते हैं, तोभी व्यवहारसे वर्षीतपही कहते हैं। और व्यव हारसे वर्षके ३६० दिन होते हैं, मगर निश्चयमें तो ४३० दिने पार णा करनेका बनता है तो भी किसी तरहका विसवाद या दोष नहीं आ सकता इसी तरहसेही व्यवहारसे ओली ६ महीने, चोमासा ४ महीने व वार्षिक पर्व १२ महीने करनेका कहतेहैं मगर जब बीचमें अधिक महीना आजावे तब तो निश्चयमें, ओली७महीने, चौमासा ५ महीने,व वार्षिकपर्व१३महीने होताहै तोभी तत्त्वदृष्टिसे कोई तरहका विसवाद या दोष कभी नहींआसकताहै मगर पर्युषणापर्व तो अधिक महीना होवे तबभी आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुके ५० वें दिनकी ज गह५१वें दिनभी कभी नहीं होसकते इसलिये मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली,ओली वगैरहका दृष्टांत दिन प्रतिबद्ध पर्युषणामें बतलाना सो

नेका समझना चाहिये ओर ३५४ दिने, या ३८३ दिने सवत्सरीपर्व होता हे, तोभी ३६० दिन,या ३९०दिन कहनेमेंआतेहैं, सो ऋतुसव त्सरसबधी नहीं,किंतु चद्र या अभिवर्द्धित सवत्सरसबधी व्यवहा- रसे कहनेमें आते हे देखो-चद्रमासकी अपेक्षासे एक पक्ष १४ दिन ऊपर कुछ भाग प्रमाणे होता हे, मगर पूरे १५ दिनोंका नहीं होता, तो भी व्यवहारमें लोकसुखसे उच्चारण करसकें, इसलिये १५ दिनों का एकपक्ष कहनेमें आताहै। यह अधिकार ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासालिखाहे। इसीतरहसे महीनेके३०दिन या व र्षके३६०दिनभी व्यवहारकी अपेक्षासे समझने चाहिये, मगर निश्चय में तो जितने दिनोंसे सवत्सरीपर्वमें वार्षिक क्षामणे होवेंगे उतनेही दिनोंके कर्मोकीनिर्जराहोगी,किंतु ज्यादे कम कभीनहीं हो सकेंगी।

और सजलनीय, प्रत्याख्यानीय, अप्रत्याख्यानीय कषायकी अनु क्रमसे,एक पक्षके१५दिन,४महीनोंके१२०दिन,व १२ महीनोंके३६०दि नोंके एक वर्षकी स्थितिकाप्रमाण शास्त्रोंमें बतलायाहे,सो,व्यवहारसे बतलायाहै,मगर निश्चयमें तो रागद्वेषादि तीव्र परिणामोंके अनुसार न्यूनाधिकभी बध पडसकताहे इसलिये उसकी स्थितीके प्रमाणकी गिनती सूर्य सवत्सरकी अपेक्षासे होती है। और क्षामणे तो चद्र- सवत्सरकी अपेक्षासे व्यवहारसे करनेमें आतेहैं,सो ऊपरमें इसबात का खुलासा लिख चुकेंहे। इसलिये एकवर्षके ३५४दिन होने परभी व्यवहारिक दृष्टिसे ३६० दिनोंके क्षामणे करनेका, और कषायादि कर्मोंकीस्थिति परिपूर्ण ३६० दिनतक निश्चय भोगनेका,दोनों विषय भिन्न२ अपेक्षासे, अलग२ सवत्सरोंसबधीहैं,इसलिये इन्होंके आपस में कोई तरहका विरोधभाव कदापि नहीं आसकता जिसपरभी चद्र सवत्सरसबधी व्यवहारिकक्षामणेकरनेका, और सूर्यसवत्सरसबधी निश्चयमें कर्मोकीस्थिति पूरेपूरीभोगनेका रहस्यको समझेविनाही अ धिकमहीनेके३०दिनोंकी गिनतीमेंलेनेका छोडदेनेकेलिये, अधिकम हीनेकोगिनतीमें लेवें,तो कषायकीस्थितिका प्रमाणबढजानेसे मर्यादा उलघन होनेकाकहते हैं, सो शास्त्रोंके मर्मकोनहीं जाननेंके कारणसे अज्ञानताजनक होनेसे सर्वथा मिथ्याहै देखो एकयुगके दोनों अधिक महीनोंके दिनोंकोंगिनतीमें नहींलेवें तो सूर्यसवत्सरका प्रमाणभीपूरा नहीं हो सकताहै,इसलिये दोनों अधिकमहीनोंके दिनोंको अवश्यमेव गिनतीमें लेनेसेही पाच सूर्यसवत्सरोंके एक युगमें १८३० दिन पूरे होसकते हैं इसलिये अधिकमहीना गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता

युग पूराहोताहै और एक युगके सभी दिनोंको अभिवर्द्धित महीनेके हिसाबसे गिननेमेंआवें तबतो कुल ५७ अभिवर्द्धित महिनामेंहीएकयुग पूराहोताहै। इसलिये शास्त्रोंके नियमसे तो अधिकचन्द्रमासके या अधिकनक्षत्रमासके किसीभी महीनेके एकदिनकोभी गिनतीमें निषेध करनेवाले तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके कथनके प्रमाणका भंग करनेवाले होनेसे,उन महाराजोंकी आशातनाके भागी बनतेहैं क्योंकि चन्द्रादि अधिकमहीनोंके दिनोंकीगिनती सहितही पांच वर्षोंके एक युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पूरा होसकता है, अन्यथा कभी पूरा नहीं होसकता है

और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार चन्द्रमासके हिसाबसे चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं। और प्राणियोंके कर्म बंधनकी स्थितिव आयुप्रमाणकी स्थिति सूर्यमासके हिसाबसे सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासे मानतेहैं, इसलिये सूर्यसंवत्सरके हिसाबसेही मास, अयन, वर्ष, युग, पूर्व, पूर्वांग, पल्योपम, सागरोपमादिकके काल प्रमाणसे ४ गतियोंके सर्वजीवोंके आयुका प्रमाण व आठोंही प्रकारके कर्मोंकी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टस्थितिके बंधका प्रमाण, और उत्सर्पिणी अवसर्पिणीकालसे कालचक्रकाप्रमाण, यहसर्वबातें सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं इसकाअधिकार लोकप्रकाशादि शास्त्रोंमें प्रकटहीहै। और वार्षिकक्षामणे करनेका तो चन्द्रमासके हिसाबसे चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानते हैं, मगर चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिन होतेहैं तो भी व्यवहारिकरुढीसे एकवर्षके ३६० दिनकहनेमें आतेहैं तैसेही जब महीना बढे तब उसवर्षके १३महीनोंके ३९०दिनकहनेमें आतेहैं मगर कितनेक लोग ऋतु संवत्सरकी अपेक्षासे ३६० दिनोंके वार्षिक क्षामणे करनेकाकहतेहैं परंतु ऋतु संवत्सर तो पूरे ३६० दिनोंका होताहै, उसमें कोइभी तिथिकेक्षय होनेकाअभावहै, व तीसरे वर्षमें महीना बढनेकाभी अभावहै, और चन्द्रसंवत्सर ३५४ दिनोंका होनेसे संवत्सरीके रोज चन्द्र संवत्सर पूरा होसकता है, मगर ऋतुसंवत्सर पूरा नहीं होसकताहै,और तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षका व्यवहारभी ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं चलता, किंतु चन्द्रसंवत्सरका अपेक्षासे चलताहै और ऋतु संवत्सरके ३६० दिनतो संवत्सरीका पर्व हुए बाद ६ रोजसे दशमीको पूरे होतेहैं और संवत्सरी पर्वतो ४ या ५ को करनेमें आता है, इसलिये वार्षिक क्षामणे ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं, किंतु चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे कर

नेका समझना चाहिये और ३५४ दिने, या ३८३ दिने संवत्सरीपर्व होता हे, तोभी ३६० दिन,या ३९०दिन कहनेमेंआतेहैं, सो ऋतुसव त्सरसबधी नहीं,किंतु चद्र या अभिवर्द्धित सवत्सरसबधी व्यवहा रसे कहनेमें आते ह देखो-चद्रमासकी अपेक्षासे एक पक्ष १४ दिन ऊपर कुछ भाग प्रमाणे होता है, मगर पूरे १५ दिनोंका नहीं होता, तो भी व्यवहारमें लोकसुखसे उच्चारण करसकें, इसलिये १५ दिनों का एकपक्ष कहनेमें आताहै। यह अधिकार ज्योतिष्करडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै। इसीतरहसे महीनेके३०दिन या व र्षके३६०दिनभी व्यवहारकी अपेक्षासे समझने चाहिये, मगर निश्चय में तो जितने दिनोंसे सवत्सरीपर्वमें वार्षिक क्षामणे होवेंगे उतनेही दिनोंके कर्मोकीनिर्जराहोगी,किंतु ज्यादे कम कभीनहीं हो सकेगी।

और सजलनीय, प्रत्याख्यानीय, अप्रत्याख्यानीय कषायकी अनु क्रमसे,एक पक्षके१५दिन,४महीनोंके१२०दिन,व १२ महीनोंके३६०दि नोंके एक वर्षकी स्थितिकाप्रमाण शास्त्रोंमें बतलायाहै,सो,व्यवहारसे बतलायाहै,मगर निश्चयमें तो रागद्वेषादि तीव्र परिणामोंके अनुसार न्यूनाधिकभी बध पडसकताहै इसलिये उसकी स्थितीके प्रमाणकी गिनती सूर्य सवत्सरकी अपेक्षासे होती है। ओर क्षामणे तो चद्र सवत्सरकी अपेक्षासे व्यवहारसे करनेमें आतेहैं,सो ऊपरमें इसबात का खुलासा लिख चुकेंहै। इसलिये एकवर्षके ३५४दिन होने परभी व्यवहारिक दृष्टिसे ३६० दिनोंके क्षामणे करनेका, और कषायादि कर्मोकीस्थिति परिपूर्ण ३६० दिनतक निश्चय भोगनेका,दोनों विषय भिन्न२ अपेक्षासे, अलग२ सवत्सरोंसबधीहै,इसलिये इन्होंके आपस में कोई तरहका विरोधभाव कदापि नहीं आसकता जिसपरभी चद्र सवत्सरसबधी व्यवहारिकक्षामणेकरनेका, और सूर्यसवत्सरसबधी निश्चयमें कर्मोकीस्थिति पूरेपूरीभोगनेका रहस्यको समझेविनाही अ धिकमहीनेके३०दिनोंको गिनतीमेंलेनेका छोडदेनेकेलिये, अधिकम हीनेकोगिनतीमें लेवें,तो कषायकीस्थितिका प्रमाणवढजानेसे मर्यादा उल्लघन होनेकाकहते हैं, सो शास्त्रोंके मर्मकोनहीं जाननेंके कारणसे अज्ञानताजनक होनेसे सर्वथा मिथ्याहै देखो एकयुगके दोनों अधिक महीनोंके दिनोंकोगिनतीमें नहींलेवें तो सूर्यसवत्सरका प्रमाणभीपूरा नहीं हो सकताहै,इसलिये दोनों अधिकमहीनोंके दिनोंको अवश्यमेव गिनतीमें लेनेसेही पाच सूर्यसवत्सरोंके एक युगमें १८३० दिन पूरे होसकते हैं इसलिये अधिकमहीना गिनतीमें कभी नहीं छुट सकता

युग पूराहोताहै और एक युगके सभी दिनोंको अभिवर्द्धित महीनोंके हिसाबसे गिननेमें आवें तबतो कुल ५७ अभिवर्द्धित महिनोंमेंही युग पूराहोताहै। इसलिये शास्त्रोंके नियमसे तो अधिकचन्द्रमासके या अधिकनक्षत्रमासके किसीभी महीनेके एक दिनकोभी गिनतीमें निषेध करनेवाले तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके यथार्थ प्रमाणका भंग करनेवाले होनेसे, उन महाराजोंकी आशातनाके भागी बनतेहैं क्योंकि चन्द्रादि अधिकमहीनोंके दिनोंकी गिनती सहितही पांच वर्षोंके एक युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पूरा होसकता है, अन्यथा कभी पूरा नहीं होसकता है

और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार चन्द्रमासके हिसाबसे चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं। और प्राणियोंके कर्म बंधनकी स्थिति व आयुप्रमाणकी स्थिति सूर्यमासके हिसाबसे सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासे मानतेहैं, इसलिये सूर्यसंवत्सरके हिसाबसेही मास, अयन, वर्ष, युग, पूर्व, पूर्वांग, पल्योपम, सागरोपमादिकके काल प्रमाणसे ४ गतियोंके सर्वजीवोंके आयुका प्रमाण व आठोंही प्रकारके कर्मोंकी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टस्थितिके बंधका प्रमाण, और उत्सर्पिणी अवसर्पिणीकालसे कालचक्रकाप्रमाण, यहसबबातें सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं इसकाअधिकार लोकप्रकाशादि शास्त्रोंमें प्रकटहीहै। और वार्षिकक्षामणे करनेका तो चन्द्रमासके हिसाबसे चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानते हैं, मगर चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिन होतेहैं तो भी व्यवहारिकरूढीसे एकवर्षके ३६० दिनकहनेमें आतेहैं तैसेही जब महीना बढे तब उसवर्षके १३महीनोंके ३९०दिनकहनेमें आतेहैं मगर कितनेक लोग ऋतु संवत्सरकी अपेक्षासे ३६० दिनोंके वार्षिक क्षामणे करनेकाकहतेहैं, परन्तु ऋतु संवत्सर तो पूरे ३६० दिनोंका होताहै, उसमें कोइभी तिथिक्षय होनेकाअभावहै, व तीसरे वर्षमें महीना बढनेकाभी अभावहै और चन्द्रसंवत्सर ३५४ दिनोंका होनेसे संवत्सरीके रोज चन्द्र संवत्सर पूरा होसकता है, मगर ऋतुसंवत्सर पूरा नहीं होसकताहै, और तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षका व्यवहारभी ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं चलता, किंतु चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे चलताहै और ऋतु संवत्सरके ३६० दिनतो संवत्सरीका पर्व हुए बाद ६ रोजसे दशमीको पूरे होतेहैं, और संवत्सरी पर्वतो ४ या ५ को करनेमें आता है, इसलिये वार्षिक क्षामणे ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं, किंतु चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे कर

सहित १३ महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहनेमें आताहे,सो सर्व शा स्त्र प्रमाणोंसे प्रकटही है इसलिये अधिक महीना व मेरुचूलिका व गैरह सब विशेषतासे गिनतीमें आतेहैं, जिसपरभी चूलिकाके नाम से अधिकमहीना गिनतीमें निषेधकरतेहे, उनोंकी अज्ञानताहै ।

३८– पर्युषणा पर्व शाश्वत है, या अशाश्वत है ?

यद्यपि पाच भरतक्षेत्रोंमें व पाच ऐरवर्तक्षेत्रोंमें चौवीश तीर्थंकरमहाराजोंके शासनमें प्रथम और चोवीशवें तीर्थंकर महाराजके साधुओंको चौमासा ठहरने व पर्युषणापर्व करने सबधी निज निज तीर्थकी अपेक्षासे तो पर्युषणापर्व अशाश्ववत है, मगर अनादि कालकी अपेक्षासे तो शाश्वतही है इसलिये तीनों चौमासीपर्व,या पर्युषणापर्व, वा आसो, चेत्रकी ओलियोंका अट्ठाईपर्व आनेसे,भुवनपति-व्यतर-ज्योतिषी और वैमानिक इद्रादि असख्य देव देवी, अपने समुदाय सहित देवलोक सबधी अनत सुखको छोडकर,आठवा नदीश्वरद्वीपमें जाकर वहा शाश्वत चैत्योंमें श्रीजिनेश्वरभगवान्‌के शाश्वत जिनबिंबोंकी जल-चदन-पुष्पादिसे द्रव्यपूजा व स्तवन नाटक वाजित्रादिसे भावपूजा करते हुए महोत्सव करके अपनी आत्माको निर्मल करते हे । यह अधिकार श्रीजिवाभिगमसूत्र ओर उनकी टीकावगैरह बहुत शास्त्रोंमें खुलासा लिखा हे इसी प्रकार पर्युषणादि पर्व आराधन करनेकेलिये जैनीमात्र सर्वश्रावकोंकोभी विशेषरुपसे धर्मकार्यकरने योग्य हैं, इसकाभी विशेष खुलासा ' पर्युषणा अट्ठाई व्याख्यान ' में और कल्पसूत्रकी सर्वटीकाओंमें सर्वत्र प्रकटही है, इसलिये यहापर विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है ।

३९ – पर्युषणाके विवाद सबधी सत्यकी परीक्षा करो

जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेवाले आत्महितैषी सज्जनोंको निवेदन किया जाता हे,कि– आगम निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्र प्रकरणादि प्राचीन और आजकालके पर्युषणा सबधी सर्व शास्त्रोंके पाठोंका,व सभी गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनोंका इस ग्रथमें मेंने सग्रह किया है । और इस भूमिकामेंभी वर्तमानिक सभी शकाओंका नबर वार अनुक्रमसे समाधानभी खुलासापूर्वक करके बतलाया हे और इसग्रथमेंभी अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिततीमें लेनेका निषेध करनेवाले प्रत्येक लेखकोंके सबी लेखोंको पूरेपूरे लिखकर, पीछे उन सब लेखोंकी पक्ति पक्तिकी अच्छी तरहसे समीक्षा करके [इसग्रथमें] खुलासापूर्वक बतलाया है, मगर पर्युषणा सबधी

और भी देखो-३५४ दिने संवत्सरी प्रतिक्रमण करें, तो भी व्यवहार में ३६० दिनोंके क्षामणे करनेमें आतेहैं, मगर अप्रत्याख्यानीय कषायके ३६० दिनोंके एक वर्षकी पूरेपूरी स्थितिका निश्चयमें बंध पड़ा होवे वह बंध, ३५४ दिनोंमें (३६० दिनोंका) कभी क्षय न हो सकेगा, किंतु वो तो समय २ के हिसाबसे पूरे पूरे ३६० दिनही भोगने पड़ेंगे। इसीतरहसे चौमासी, व पाक्षिकका भी भावार्थ समझलेना इसलिये व्यवहारिक क्षामणे करनेके साथ निश्चय संबंधी कर्मबंधनकी स्थितिका दृष्टांतसे भोले जीवोंको मर्यादा उल्लंघन होनेका भय बतलाते हुए अपनी विद्वत्ताके अभिमानसे अधिकमहीना निषेध करना चाहते हैं, सो प्रत्यक्ष शास्त्रविरुद्ध होनेसे सर्वथा अनुचित है।

३७— चूलिका संबंधी एक अज्ञानता॥

कितनेक लोग शास्त्रोंके रहस्यको समझे बिनाही कहतेहैं, कि जैसे-एक लाख योजनके मेरुपर्वतमें उनकी चूलिका नहीं गिनी जाती है, तैसेही १२ महीनोंके एक वर्षमें अधिकमहीनाभी नहीं गिना जाता। ऐसा कहकर अधिकमहीनेकी गिनती उडाना चाहते हैं, सो उन्होंकी अज्ञानताहै, क्योंकि एक लाख योजनके मेरुपर्वत ऊपर ४० योजनकी उंची चूलिका है, उसपर एक शाश्वत जिन चैत्य है, उनमें १२० शाश्वती श्रीजिनप्रतिमायें हैं, इसलिये ४० योजनकी चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित विशेषतासे एक लाख योजनके ऊपर ४० योजनके मेरुपर्वतका प्रमाण क्षेत्रसमासादि शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै, तैसेही १२ महीनोंके ३५४ दिनोंके एकवर्षके प्रमाण उपर अधिकमहीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित ३८३ दिनोंकोभी एक वर्षकी गिनतीमें लियेहैं, इसलिये चूलिकाके दृष्टांतसे अधिकमहीना गिनतीमें निषेध नहीं होसकता, मगर गिनतीमें विशेष पुष्ट होता है। औरभी देखो-पंचपरमेष्ठिमंत्र कहनेसे सामान्यतासे पांच पदोंके ३५ अक्षरोंका नवकार कहाजाताहै, मगर उसपरकी ४ चूलिकाओंके ४ पदोंके ३३ अक्षर साथमें मिलनेसे विशेषतासे नवपदोंके ६८ अक्षरोंका 'नवकार मंत्र' चूलिकाओंके प्रमाणकी गिनतीसहित कहनेमें आता है इसी तरहसे दशवैकालिक व आचारांगसूत्रकी दो दो चूलिकाओंका प्रमाणभी गिनतीमें आताहै तैसेही सामान्यतासे एक लाख योजनका मेरुपर्वत, व १२ महीनोंका एकवर्ष व्यवहारसे कहनेमेंआता है मगर विशेषतासे निश्चयमें तो चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एक लाख चालीस योजनका मेरुपर्वत, व अधिक महीनेकी गिनती

सहित १३ महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहनेमें आताहै,सो सर्व शा स्त्र प्रमाणोंसे प्रकटही है इसलिये अधिक महीना व मेरुचूलिका व गैरह सब विशेषतासे गिनतीमें आतेहैं, जिसपरभी चूलिकाके नाम से अधिकमहीना गिनतीमें निषेधकरतेहैं, उनोंकी अज्ञानताहै।

३८– पर्युषणा पर्व शाश्वत है, या अशाश्वत है ?

यद्यपि पाच भरतक्षेत्रोंमें व पाच ऐरवर्तक्षेत्रोंमें चोवीश तीर्थंकरमहाराजोंके शासनमें प्रथम और चोवीशवें तीर्थंकर महाराजके साधुओंको चौमासा ठहरने व पर्युषणापर्व करने सबधी निज निज तीर्थकी अपेक्षासे तो पर्युषणापर्व अशाश्ववत है, मगर अनादि कालकी अपेक्षासे तो शाश्वतही हे इसलिये तीनों चौमासीपर्व,या पर्युषणापर्व, वा आसो, चैत्रकी ओलियोंका अट्ठाईपर्व आनेसे,भुवनपति-व्यतर-ज्योतिषी और वैमानिक इद्रादि असख्य देव देवी, अपने समुदाय सहित देवलोक सबधी अनत सुखको छोडकर,आठवा नदीश्वरद्वीपमें जाकर वहा शाश्वत चैत्योंमें श्रीजिनेश्वरभगवान्के शाश्वत जिनविंबोकी जल चदन-पुष्पादिसे द्रव्यपूजा व स्तवन नाटक वाजित्रादिसे भावपूजा करते हुए महोत्सव करके अपनी आत्माको निर्मल करते हें। यह अधिकार श्रीजिवाभिगमसूत्र और उनकी टीकावगैरह बहुत शास्त्रोंमें खुलासा लिखा है इसी प्रकार पर्युषणादि पर्व आराधन करनेकेलिये जैनीमात्र सर्वश्रावकोंकोंभी विशेपरूपसे धर्मकार्यकरनें योग्य हें, इसकाभी विशेष खुलासा 'पर्युषणा अट्ठाई व्याख्यान' में और कल्पसूत्रकी सबटीकाओंमें सर्वत्र प्रकटही है, इसलिये यहापर विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

३९ – पर्युषणाके विवाद् सबधी सत्यकी परीक्षा करो

जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेवाले आत्महितैषी सज्जनोंको निवेदन किया जाता है,कि– आगम निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रप्रकरणादि प्राचीन और आजकालके पर्युषणा सबधी सर्व शास्त्रोंके पाठोंका,व सभी गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनोंका इस ग्रथमें मैने सग्रह किया है। और इस भूमिकामेंभी वर्तमानिक सभी शकाओंका नबर वार अनुक्रमसे समाधानभी खुलासापूर्वक करके बतलाया है और इसग्रथमेंभी अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेवाले प्रत्येक लेखकोंके सबी लेखोंको पूरेपूरे लिखकर, पीछे उन सब लेखोंकी पक्ति पक्तिकी अच्छी तरहसे समीक्षा करके [इसग्रथमें] खुलासापूर्वक बतलाया है, मगर पर्युषणा सबधी

किसीभी लेखककी शंकाकाली एकभी बातको छोडी नहीं है। इस लिये इस ग्रंथमें वादी और प्रतिवादी दोनोंके सब पूरे लेखोंको, और आगम पचांगीके सर्व शास्त्र पाठोंको, पक्षपात रहित होकर न्याय बुद्धिसे संपूर्ण बांचने वाले सत्यके अभिलाषियोंको अवश्यही जिना ज्ञानुसार सत्य बातोंकी परीक्षा स्वयंही हो जावेगी अल्पसंसारी आत्मार्थियोंके लिये तो इस ग्रंथमें लिखे मुजब इतना खुलासा बहु तही है मगर दीर्घ संसारी भारी कर्मोंकी तो बातही अलग है

४०- जिनाज्ञाकी दुर्लभता।

जैसे-पूर्वदिशा तरफ कोई अपना अभीष्ट नगर होवे, उसमें आनेकेलिये थोडा २ भी पूर्व दिशा तरफ चलनेसे अवश्यही उस नगरकी प्राप्ती होती है, मगर पूर्वदिशा छोडकर पश्चिम दिशामें बहुत २ चलें, तो भी वो नगर दूरदूरही जायगा, मगर नजदिक कभी नहीं आसकेगा इसी तरह जिनाज्ञानुसार थोडा२ धर्मकार्य किया हुआभी मुक्ति रूपी अपना अभीष्ट नगरमें आत्माको पहुचाने वाला होता है, परन्तु जिनाज्ञा विरुद्ध बहुत२तपश्चर्यादि धर्म ध्यान व्यवहारमें करें तो भी तत्त्वदृष्टिसे शून्य होनेसे मुक्तिनगरमें पहुचाने वाला नहीं होता किंतु संसार बढाने वालाही होता है। और वर्तमानिक आग्रही लोगोंकी भिन्न २ प्ररूपणा होनेसे भोले भव्य भद्र जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति होना अभी बहुत मुश्किल है यही दशा पर्युषणासंबंधी विवादमेंभी हो गई है। इसलिये भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसार पर्युषणा जैसे अतीव उत्तम पर्वके आराधन होनेकी प्राप्ति होनेकेलिये आगम पचांगी सम्मत, व सर्व लेखकोंकी शंकाओंका समाधान पूर्वक मैंने इसग्रंथमें इतना लिखा है। उसको अपने गच्छका आग्रह छोडकर तत्त्वदृष्टिसे पढनेवालोंको अवश्यही जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति हो जावेगी

और मनुष्य भवमें शुद्ध श्रद्धा पूर्वक जिनाज्ञानुसार धर्म कार्य करनेकी सामग्री मिलना अनंतकालसे अनंतभवोंमेंभी महान दुर्लभ है, वारवार ऐसा सुअवसर कभी नहीं मिलसकता इसलिये गच्छका पक्षपात, दृष्टिराग, लोकलज्जाकी शर्म, विद्वत्ताका झूठा अभिमान, जिनाज्ञाविरुद्ध अपने गच्छपरंपराकी रूढी, व बहुत समुदायकी देखादेखीकी प्रवृत्ति वगैरह बातोंको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेमेंही आत्मसाधन होनेसे नरकादि ४ गतियोंके जन्म मरण-गर्भावास वगैरह अनंत दुःखोंसे छुटना होताहै, इसलिये, जिना

ज्ञानुसार सत्यबातको समझेबादभी जानबूझकर भोलेजीवोंकोउन्मार्गमें गेरनेकेलिये विद्वत्ताके मिथ्याही अभिमानसे शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायविरुद्धहोकर झूठी २ कुयुक्तियें लगाना ससारवृद्धि व दुर्लभबोधिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहींहै।

४१ – पर्युषणापर्व इधरके उधर कभी नहीं होसकते हैं

कितनेक लोग जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेका मर्मभेद समझे विनाही कहतेहैं कि पर्युषणापर्व अधिकमहीनाहोवे तब५०दिने करो तोक्या,या ८० दिनेकरो तोभी क्या,मगर आगे या पिछे कभी करने चाहिये ऐसा कहनेवाले सोने व पितल दोनोंको एकसमान बनाने की तरह जिनाज्ञानुसार सत्य बातको, और जिनाज्ञा विरुद्ध झूठी बातको, एक समान ठहराते हैं। इसलिये उन्होंका कथन प्रमाणभूत नहीं होसकता, किंतु मोक्षके हेतुभूत जिनाज्ञानुसार ५० दिनेही पर्युषणा पर्वका आराधना करना अवश्यही योग्य है, मगर ८० दिने करना जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे कदापि योग्य नहीं ठहरसकता देखो-जमालि वगैरहोंने जप, तप, ध्यान, आगमोंका अध्ययन, परोपदेश, क्रिया अनुष्ठानादि हमेशा बहुत २ किये थे, तोभी वे जिनाज्ञाविरुद्ध होनेसे ससार बढाने वाले हुए, मगर यही क्रिया अनुष्ठान जिनाज्ञानुसार करते तो निश्चय उसी भवमें मोक्ष प्राप्त करने वाले होते, इसलिये आत्मार्थी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारही ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना योग्य है, मगर जिनाज्ञा विरुद्ध ८० दिने करना योग्य नहीं है। इसबातको भी विशेष तत्त्वज्ञ पाठक जन स्वय विचार लेवेंगे।

४२ – पर्युषणा पर्वकी आराधना करनेके बदले विराधना करना योग्य नहीं है।

पर्युषणा जैसे आनद मगलमय परम शातिके दिनोंमें जिनाज्ञानुसार धर्मकार्यकरके पर्वकी आराधना करते हुए, सर्वजीवोंसे मैत्रिभावपूर्वक शाततासे वर्ताव करना चाहिये। और वर्षभरके लगे हुए अतिचारोंकी आलोचना करके सबजीवोंके साथ भाव पूर्वक क्षमत क्षामणे करके अपनी आत्माको निर्मल करना चाहिये जिसके बदले कितनेही आग्रही जन पर्युषणाकेही व्याख्यानमें सुबोधिका दीपिका किरणावली आदि वाचनेके समय श्रीमहावीर स्वामीके छ कल्याणक आगमोंमें कहेहैं,उन्होंको व अधिकमहीनेके३० दिन गिनतीमें लिये हैं, उन्होंको निषेध करनेकेलिये, कितनीही जगहतो शास्त्रविरुद्ध, व

किसीभी लेखककी शाखापाठी पक्की बातको छोडी नहीं है। इस-लिये इस ग्रंथमें वादी और प्रतिवादी दोनोंके सब पूरे लेखोंको,और आगम पचांगीके सर्व शास्त्र पाठोंको, पक्षपात रहित होकर न्याय बुद्धिसे संपूर्ण वांचने वाले सत्यके अभिलाषियोंको अवश्यही जिना ज्ञानुसार सत्य बातोंकी परीक्षा स्वयमही हो जायेगी अल्पससारी आत्मार्थियोंके लिये तो इस ग्रंथमें लिखे मुजब इतना खुलासा बहु तही है मगर दीर्घ संसारी भारी कर्मोंकी तो बातही अलग है

४०– जिनाज्ञाकी दुर्लभता।

जैसे-पूर्वदिशा तरफ कोई अपना अभीष्ट नगर होवे,उसमें आ नेकेलिये थोडा २ भी पूर्व दिशा तरफ चलनेसे अवश्यही उस नग रकी प्राप्ती होती है, मगर पूर्वदिशा छोडकर पश्चिम दिशामें बहुत २ चलें; तो भी वो नगर दूरदूरही जायगा, मगर नजदिक कभी न हीं आसकेगा इसी तरह जिनाज्ञानुसार थोडा२ धर्मकार्य किया हु आभी मुक्ति रूपी अपना अभीष्ट नगरमें आत्माको पहुचाने वाला हो ता है, परंतु जिनाज्ञा विरुद्ध बहुतरतपश्चर्यादि धर्म ध्यान व्यवहार में करें तो भी तत्त्वदृष्टिसे शून्य होनेसे मुक्तिनगरमें पहुचाने वाला नहीं होता किंतु संसार बढाने वालाही होता है ।और वर्तमानिक आग्रही लोगोंकी भिन्न २ प्ररूपणा होनेसे भोले भव्य भद्र जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति होना अभी बहुत मुश्किल है यही दशा पर्युषणासबंधी विवादमेंभी हो गई है । इसलिये भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसार पर्युषणा जैसे अतीव उत्तम पर्वके आराधन होनेकी प्राप्ति होनेकेलिये आगम पचांगी सम्मत,व सर्व लेखकोंकी शंकाओं का समाधान पूर्वक मैंने इसग्रंथमें इतना लिखा है। उसको अपने गच्छका आग्रह छोडकर तत्त्वदृष्टिसे पढनेवालोंको अवश्यही जिना ज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति हो जावेगी

और मनुष्य भवमें शुद्ध श्रद्धा पूर्वक जिनाज्ञानुसार धर्म कार्य करनेकी सामग्री मिलना अनंतकालसे अनंतभवोंमेंभी महान दुर्लभ है,वारवार ऐसा सुअवसर कभी नहीं मिलसकता इसलिये गच्छका पक्षपात, दृष्टिराग, लोकलज्जाकी शर्म, विद्वत्ताका झूठा अभिमान, जिनाज्ञाविरुद्ध अपने गच्छपरंपराकी रूढी, व बहुत समुदायकी दे खादेखीकी प्रवृत्ति वगैरह बातोंको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यग्र हण करनेमेंही आत्मसाधन होनेसे नरकादि ४ गतियोंके जन्म मर ण-गर्भावास वगैरह अनंत दु खोंसे छुटना होताहै, इसलिये, जिना

ज्ञानुसार सत्यबातको समझेवादभी जानबुझकर भोलेजीवोंकोउन्मार्गमें गेरनेकेलिये विद्वत्ताके मिथ्याही अभिमानसे शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायविरुद्धहोकर झूठी २ कुयुक्तियें लगाना ससारवृद्धि व दुर्लभबोधिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको सर्वथा योग्य नहींहै ।

४१ – पर्युषणापर्व ईधरके उधर कभी नहीं होसकते हैं

कितनेक लोग जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेका मर्मभेद समझे विनाही कहतेहैं कि पर्युषणापर्व अधिकमहीनाहोवे तब५०दिने करो तोक्या,या ८० दिनेकरो तोभी क्या,मगर आगे या पिछे कभी करने चाहिये ऐसा कहनेवाले सोने व पितल दोनोंको एकसमान बनाने की तरह जिनाज्ञानुसार सत्य बातको, और जिनाज्ञा विरुद्ध झूठी बातको, एक समान ठहराते हैं । इसलिये उन्होंका कथन प्रमाणभूत नहीं होसकता, किंतु मोक्षके हेतुभूत जिनाज्ञानुसार ५० दिनेही पर्युषणा पर्वका आराधना करना अवश्यही योग्य है, मगर ८० दिने करना जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे कदापि योग्य नहीं ठहरसकता देखो– जमालि वगैरहोंने जप, तप, ध्यान, आगमोंका अध्ययन, परोपदेश, क्रिया अनुष्ठानादि हमेशा बहुत २ किये थे, तोभी वे जिनाज्ञाविरुद्ध होनेसे ससार बढाने वाले हुए, मगर यही क्रिया अनुष्ठान जिनाज्ञानुसार करते तो निश्चय उसी भवमें मोक्ष प्राप्त करने वाले होते, इसलिये आत्मार्थी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारही ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना योग्य है, मगर जिनाज्ञा विरुद्ध ८० दिने करना योग्य नहीं है । इसबातको भी विशेष तत्त्वज्ञ पाठक जन स्वय विचार लेवेंगे।

४२ – पर्युषणा पर्वकी आराधना करनेके बदले विराधना करना योग्य नहीं है ।

पर्युषणा जैसे आनद मगलमय परम शातिके दिनोंमें जिनाज्ञानुसार धर्मकार्यकरके पर्वकी आराधना करते हुए, सर्वजीवोंसे मैत्रिभावपूर्वक शाततासे वर्ताव करना चाहिये । और वर्षभरके लगे हुए अतिचारोंकी आलोचना करके सबजीवोंके साथ भाव पूर्वक क्षमत क्षामणे करके अपनी आत्माको निर्मल करना चाहिये जिसके बदले कितनेही आग्रही जन पर्युषणाकेही व्याख्यानमें सुबोधिका दीपिका किरणावली आदि वाचनेके समय श्रीमहावीर स्वामीके छ कल्याणक आगमोंमें कहेहैं,उन्होंको व अधिकमहीनेके३० दिन गिनतीमें लिये हैं; उन्होंको निषेध करनेकेलिये, कितनीही जगहतो शास्त्रविरुद्ध, व

कितनीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या कदाग्रहके आपसमेंही विशेषरूपसे खंडन मंडनके झगडे चलातेहैं, और पर्वदिनोंमें सबजीवोंकी अगर केवल जैनीमात्रसेभी मित्रता नहीं रख सकते,उसमें मैत्रीभावनाका भंग,विरोधभावकी वृद्धि,व खंडन मंडनसे रागद्वेष करके कर्मबंधन का कारण करतेहैं। और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेसे जिनाज्ञाकी भी विराधना करतेहैं, उससे परिणामोंकीभी मलिनता होनेसे पर्व दिनोंमें वर्षभरके अतिचारोंकी आलोचना करके आत्माको निर्मल करनेके बदले विशेषरूपसे मलिनकरतेहैं और खंडन मंडनके झगडे के लिये सबजीवोंसे क्षमतक्षामणे करनेके बदले अपनेसर्व जैनीभा ईयोंसेही क्षमतक्षामणे नहींकरसकते उससे अनंतानुबंधी कषायके उदयहोनेका प्रसंगआनेसे सम्यक्त्वकी व संयमकी विराधना होकर संसारभ्रमणका कारणकरतेहैं इसलिये कर्मक्षयकारक महामंगलम व शांतिके पर्वदिनोंके व्याख्यानमें श्रीमहावीरस्वामीके छ कल्याण क आगमोंमें कहेहैं उन्होंको, व अधिकमहीनेके ३० दिनोंको सर्वशा स्त्रोंमेंगिनतीमे लियेहैं, उन्होंको निषेधकरनेकेलिये खंडनमंडनके वि वादके झगडे कितनेक तपगच्छके मुनिमहाराज जो व्याख्यानमें च लातेहैं, सो पर्वकी विराधना करनेवाले,शांतिके भंग करनेवाले, अ मंगळरूप अशांतिको बढानेवाले, व उत्सूत्रप्ररूपणासे संसार बढाने वाले होनेसे, तत्त्वदर्शी, विवेकी, आत्मार्थी भव भिरू, अल्पसंसारी सज्जनोंको अवश्यही छोडना योग्यहै । इस बातकोभी विशेष नि ष्पक्षपाति पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं ।

४२- पर्युषणाके मंगलिक दिनोंमें क्लेशकारक अमंगलिक करना योग्य नहीं है ।

यहबात व्यवहारसे प्रत्यक्ष अनुभवपूर्वक देखनेमें आती है,कि मांगलिकरूप वार्षिक पर्व दिन सुखशांतिसे हर्षपूर्वक व्यतीत होवे, तो, वो वर्षभी संपूर्ण सुखशांतिसे व्यतीत होता है, मगर मांगलिक रूप पर्वदिनोंमें किसीके साथ विरोधभाव कलेश होकर अमंगलरूप अपशुकन होवे, तो वो वर्षभरभी चिंतासे कलेशमेंही जाताहै,इसलि ये पर्वके दिनोंमें तो अवश्यही शांति रखना योग्य है । इसप्रकार व्य वहारिक बातकेभी विरुद्ध होकर तपगच्छके अभी कितनेही मुनिम हाराज पर्युषणा जेसेपरम मांगलिकके दिनोंमेंभी शांतिसे नहीं बैठ ते,और सुबोधिका दीपिका किरणावली वगैरहके विवादवाले विष य हाथमें लेकर श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक आगमपचांगी अनें

क शास्त्रोंमें कहेहै उन्होंकों, व अधिकमहीनेके ३० दिन सर्वशास्त्रोंमें गिनतीमेंलियेहै,उन्होंकों निषेधकरनेकेलिये अपने धर्मबधुओंके सामने व्याख्यानमें अशातिके हेतुभूत व अमगलरूप आपसके खडनम डनसे विरोध भावके झगडे खडे करतेहैं, उससे 'जैसे राजा वैसी प्रजा' की तरह यही गुण श्रावकोंमेंभी प्रवेश करताहै, इसलिये वर्ष भरके झगडे पर्युपणापर्वमें लाकर कलेशकरके विशेष कर्मबधनकर तेहैं। इसलिये साधुओंके और श्रावकोंके दोनोंके आपसमें एक एक कीनिंदाकरनेमें,अपनी झूठी २ बडाईकरनेमें,दूसरेका बिगाडकरनेमें, या कोई शासन उन्नतिके कार्यकरेंतो उनकी साहता करनेके बदले उसमें कोईभी अवगुण बतलाकर उसका खडन करनेमें इत्यादि अमगलरूप कलेशके कार्योंमें सब वर्षचला जाता है। इसलिये दिनों दिन शासनकी यह दशा होती हुई चली जातीहै। और इससे अपने आत्माके कल्याणमें व परोपकारके कार्योंमेंभी विघ्न आते हैं, इसलिये मगलिकरूप पर्वके दिनोंमें अमगलिकरूप खडन मडनसबधी विरोधभावको आपसमेंखडाकरना सर्वथाअनुचितहै और अपनी सचाई जमानेकेलिये खडनमडन वैरविरोधके झगडेही करनेकी इच्छा होतोभी पर्वदिन छोडकर अन्यभी बहुतदिन मौजूदहैं,मगर पर्युपणा पर्व अराधन करनेकेलिये सर्व गच्छवाले श्रावक मुनिराजोंके पास उपाश्रय,धर्मशालामें आवें, उसवखत अपने आपसके खडनमडनके विरोधभाववालीबातकोंचलाना यह कितनी बडीअनुचितबातहै और मगलिकरूप पर्वदिन किसीप्रकारसेभी कलेशकारक खडनमडन के विरोधभावसे अमगलिकरूप न बनाकर शास्त्रानुसार शातिसेपर्व काआराधन होवेंतो आत्माभी निर्मलहोवें,वर्षभी हर्षपूर्वक सुखशातिसे जावे,बुद्धिभी अच्छी होवे और आत्म साधन व परोपकारभी विशेपरूपसे होवे, सबसे शासन उन्नतिके कार्योंमेंभी वृद्धि होनेसे वर्तमानिक यह दशाकाभी शीघ्र सुधारा होवे इसलिये वार्षिक पर्व रूप पर्युपणा शातिमय सर्वजीवोंके साथ मैत्रिभाव पूर्वक आराधन करके उसमें मागलिकके कार्यकरने चाहिये। और विरोधभावके कारणरूप खडन मडनके अनुचित वर्तावको छोडनाही अपनेको व दूसरे भव्य जीवोंकोंभी कल्याणकारक है। और शासनकी उन्नतिकाभी हेतुभूत है इसबातको जो आत्मार्थी निकट भव्य होंगे, सो दीर्घ दृष्टिसे खूब विचारेंगे, और ऊपर मुजब शास्त्रविरुद्ध अनुचित व्यवहारको छोडकर शास्त्रानुसार सब शातिका उचित व्यवहारको अवश्यमेवही ग्रहण करेंगे, व दूसरोंकोंभी ग्रहण करावेंगे।

कितनीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या कषायरूपे आपसमेंही विशेषरूपसे खंडन मंडनसे झगडे चलातेहैं, और पर्वदिनोंमें सर्वजीवोंकी अगर केवल जैनीमात्रसेभी मित्रता नहीं रख सकने,उससे मैत्रीभावनाका भंग,विरोधभावकी वृद्धि,व खंडन मंडनमें रागद्वेष करके कर्मबंधन का कारण करतेहैं। और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेमें जिनाज्ञाकी भी विराधना करतेहैं, उससे परिणामोंकीभी मलिनता होनेसे पर्व दिनोंमें वर्षभरके अतिचारोंकी आलोचना करके आत्माको निर्मल करनेके बदले विशेषरूपसे मलिनकरतेहैं और खंडन मंडनके झगडे के लिये सबजीवोंसे क्षमतक्षामणे करनेके बदले अपनेसर्व जैनीभाईयोंसेही क्षमतक्षामणे नहीं करसकते उससे अनंतानुबंधी कषायके उदयहोनेका प्रसंग आनेसे सम्यक्त्वकी व संयमकी विराधना होकर संसारभ्रमणका कारणकरतेहैं इसलिये कर्मक्षयकारक महामंगलमय शांतिके पर्वदिनोंके व्याख्यानमें श्रीमहावीरस्वामीके छ कल्याणक आगमोंमें कहेहैं उन्होंको, व अधिकमहीनेके ३० दिनोंको सर्वशास्त्रोंमेंगिनतीमे लियेहैं, उन्होंको निषेधकरनेकेलिये खंडनमंडनके विवादके झगडे कितनेक तपगच्छके मुनिमहाराज जो व्याख्यानमें चलातेहैं, सो पर्वकी विराधना करनेवाले,शांतिके भंग करनेवाले, अमंगळरूप अशांतिको बढानेवाले, व उत्सूत्रप्ररूपणासे संसार बढानेवाले होनेसे, तत्त्वदर्शी, विवेकी, आत्मार्थी भव भिरू, अल्पससारी सज्जनोंको अवश्यही छोडना योग्यहै । इस बातकोभी विशेष निष्पक्षपाति पाठकगण स्वय विचार सकते हैं।

४३- पर्युषणाके मंगलिक दिनोंमें क्लेशकारक अमंगलिक करना योग्य नहीं है।

यहबात व्यवहारसे प्रत्यक्ष अनुभवपूर्वक देखनेमें आती है,कि मांगलिकरूप वार्षिक पर्व दिन सुखशांतिसे हर्षपूर्वक व्यतीत होवे, तो, वो वर्षभी संपूर्ण सुखशांतिसे व्यतीत होता है, मगर मांगलिक रूप पर्वदिनोंमें किसीके साथ विरोधभाव कलेश होकर अमंगलरूप अपशुकन होवे, तो वो वर्षभरभी चिंतासे कलेशमेंही जाताहै,इसलिये पर्वके दिनोंमें तो अवश्यही शांति रखना योग्य है। इसप्रकार व्यवहारिक बातकेभी विरुद्ध होकर तपगच्छके अभी कितनेही मुनिमहाराज पर्युषणा जैसेपरम मांगलिकके दिनोंमेंभी शांतिसे नहीं बैठते,और सुबोधिका दीपिका किरणावली वगैरहके विवादवाले विषय हाथमें लेकर श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक आगमपंचांगी अने

क शास्त्रोंमें कहेहैं उन्होंकों, व अधिकमहीनेके ३० दिन सर्वशास्त्रोंमें गिनतीमेंलियेहै,उन्होंकों निषेधकरनेकेलिये अपने धर्मबंधुओंके सामने व्याख्यानमें अशांतिके हेतुभूत व अमंगलरूप आपसके खंडनमंडनसें विरोध भावके झगडे खडे करतेहैं, उससे 'जैसे राजा वैसी प्रजा' की तरह यही गुण श्रावकोंमेंभी प्रवेश करताहै, इसलिये वर्ष भरके झगडे पर्युषणापर्वमें लाकर कलेशकरके विशेष कर्मबंधनकरतेहैं। इसलिये साधुओंके और श्रावकोंके दोनोंके आपसमें एक एककीनिंदाकरनेमें,अपनी झूठी २ बडाईकरनेमें,दूसरेका बिगाडकरनेमें, या कोई शासन उन्नतिके कार्यकरेतो उनकी साहाता करनेके बदले उसमें कोईभी अवगुण बतलाकर उसका खंडन करनेमें इत्यादि अमंगलरूप कलेशके कार्योंमें सब वर्षचला जाता है। इसलिये दिनों दिन शासनकी यह दशा होती हुई चली जातीहै। और इससे अपने आत्माके कल्याणमें व परोपकारके कार्योंमेंभी विघ्न आते हैं, इस लिये मंगलिकरूप पर्वके दिनोंमें अमंगलिकरूप खंडन मंडनसंबंधी विरोधभावको आपसमेंबढाकरना सर्वथाअनुचितहै और अपनी सचाई जमानेकेलिये खंडनमंडन वैरविरोधके झगडेही करनेकी इच्छा होतोभी पर्वदिन छोडकर अन्यभी बहुतदिन मोजूदहैं, मगर पर्युषणा पर्व अराधन करनेकेलिये सर्व गच्छवाले श्रावक मुनिराजोंके पास उपाश्रय,धर्मशालामें आवें, उसवखत अपने आपसके खंडनमंडनके विरोधभाववालीबातकोंचलाना यह कितनी बडीअनुचितबातहै और मंगलिकरूप पर्वदिन किसीप्रकारसेभी कलेशकारक खंडनमंडन के विरोधभावसे अमंगलिकरुप न बनाकर शास्त्रानुसार शांतिसेपर्वकाआराधन होवेंतो आत्माभी निर्मलहोवें, वर्षभी हर्षपूर्वक सुखशांतिसे जावे,बुद्धिभी अच्छी होवे और आत्म साधन व परोपकारभी विशेषरूपसे होंवे, सबसे शासन उन्नतिके कार्योंमेंभी वृद्धि होनेसे वर्तमानिक यह दशाकाभी शीघ्र सुधारा होवे इसलिये वार्षिक पर्वरूप पर्युषणा शांतिमय सर्वजीवोंके साथ मैत्रिभाव पूर्वक आराधन करके उसमें मांगलिकके कार्यकरने चाहिये। और विरोधभावके कारणरूप खंडन मंडनके अनुचित वर्तावको छोडनाही अपनेको व दूसरे भव्य जीवोंकोंभी कल्याणकारक है। और शासनकी उन्नतिकाभी हेतुभूत है इसबातको जो आत्मार्थी निकट भव्य होंगे, सो दीर्घ दृष्टिसे खूब विचारेंगे, और ऊपर मुजब शास्त्रविरुद्ध अनुचित व्यवहारको छोडकर शास्त्रानुसार सब शांतिका उचित व्यवहारको अवश्यमेवही ग्रहण करेंगे, व दूसरोंकोंभी ग्रहण करावेंगे।

४४ – अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि, और सम्यक्त्वी मिथ्यात्वीकी परीक्षा

कोईभी वादविवादके विषयकी चर्चा करनेमें पहिले बाजे स म्यक्त्वी आत्मार्थी होतेथे, वो तो तत्वार्थकी दृष्टितरफ विचारकरके सत्य बातग्रहण करतेथे और अपना पक्ष छोडनेमें किसीप्रकारकीभी हानीनहीं समझतेथे श्रीगौतमस्वामि आदिगणधर महाराजोंकी तरह तथा श्रीसिद्धसेनदीवाकर श्रीहरिभद्रसूरिजीवगैरह उत्तमपुरुषोंकी तरह और अभीके झूठे अभिमानी अंतर मिथ्यात्वी हठाग्रही होतेहैं, वो तो शास्त्रोंकी बातको मनमें समझने परभी अभिमानसे सत्यबा तको ग्रहणकरके अपनाझूठापक्ष छोडनेमें बडीभारी हानीसमझतेहैं, आनंदसागरजी, शांतिविजयजी वगैरहोंकीतरह (इसका खुलासा आगे लिखुंगा) और शास्त्रोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर व्यर्थही झूठी २ कुयुक्तियें लगातेहैं, या विषयांतर करके सामनेवालेपर वा उनके समुदायपर विरोधभावको बढानेवाले आक्षेप करने लगजातेहैं। औ र मुख्यमुद्देके विवादको छोडकर निंदा ईर्षासे, राग, द्वेष करके विरो धभावसे अपनेको और दूसरोंकोभी कर्मबंधन करानेमें हेतुभूत बन तेहैं मगर झूठे आग्रहसे उत्सूत्रप्ररूपणा करके कुयुक्तियोंसे भोले जी वोंको उन्मार्गमें गेरनेसे वा राग, द्वेष, निंदा, ईर्षासे विरोधभाव कर नेसे संसार बढनेकाभय नहीं रखते हैं, इसलिये अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि कही जातीहै इसीप्रकार पर्युषणा संबंधीभी यह ग्रंथ बांचे बाद अब देखनमें आवेगा, कि–५०दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाके विषयको छोडकर मासप्रतिबद्ध होली दीवाली, दशहरा आदिके वि षयांतरमें या अगत आक्षेपकरनेमें कौन २ महाशय अपनेअंतरंग आ त्माके कैसे२गुणप्रकाशित करेंगे सो तत्वज्ञजनस्वयं देख लेवेंगे इस लिये यहांपर अभीसे पहिले विशेषलिखनेकी कोई आवश्यकता नहींहै

४५– इस ग्रंथ संबंधी लेखकोंको सूचना

इस ग्रंथपर किसी तरहकाभी लेख लिखने वाले महाशयोंको सू चना करनेमें आती है, कि-जैसे-मैंने इसग्रंथमें सुबोधिका दीपिका किरणावली वगैरहके विवादवाले प्रत्येक लेखोंको पूरेपूरे लिखकर पीछे शास्त्रानुसार व युक्तिपूर्वक उसकी समीक्षामें खुलासा करके बतलाया है, मगर विवादवाली एकभी बातको छोडी नहींहै वैसे ही इसग्रंथपर लेख लिखनेवाले आप लोगभी इसग्रंथके प्रत्येक वि

पयको पूरेपूरा लिखकर पीछे उसपर अपना विचार सुखसे लिखें, मगर शास्त्रोंके पाठोंवाली सत्यश्वातोंके पृष्ठकेपृष्ठ छोडकर कहींक हींकी अधूरी २ बातें लिखकर शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर संबंध विनाके अधूरे २ पाठ लिखकरके कुयुक्तियोंसे सत्य बातको झूठी ठहरानेका व भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेका उद्यम न करें अन्यथा लेखकोंमें कितना न्याय व आत्मार्थीपनाहै, और सम्यक्त्वका अंशभी कितनाहै, उसकी परीक्षा विवेकी विद्वानोंमें अच्छी तरहसे हो जावेगा, और उसको सभामें सिद्ध करके बतलानेको तैयार होना पडेगा फिर शास्त्रार्थ करनेमें मुह नहीं छुपाना विशेष क्या लिखें।

४६–उत्सूत्र प्ररूपणाके विपाक ॥

शास्त्रार्थ करनेको सभामें आमने सामने आनामजूरकरना नहीं, व अपनाझूठा आग्रह छोडकर सत्य बातग्रहणभी करना नहीं और विपर्यासकरके कुयुक्तियोंसे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकरते हुए दृष्टिरागी व भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेका उद्यम करते रहना उससे दृष्टिरागी, पक्षपाती, अज्ञानी लोग चाहे जैसे पूजेंगे, मानेंगे, मगर "उसूत्त भासगा ण बाहि णासो अणंत संसारो" इत्यादि, तथा "सम्मत्त उच्छिदीय, मिच्छत्तारोवण कुणई निय कुलस्स ॥ तेण सयलो वि वंसो, कुगई मुह समुहो नीओ ॥ १ ॥" इत्यादि, देखो–शास्त्रविरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणा करने वालेके बोधिबीज (सम्यक्त्व) का नाश होकर अनंत संसार बढता है, और जिसने अपने कुलमें, गणमें (गच्छमें),समुदायमें सम्यक्त्वका नाश करनेवाली मिथ्यात्वकी प्ररूपणाकी होवे, वो अपने सब वंशको, गच्छको, समुदायकोभी, दुर्गतिमें गेरनेवाला होताहै। शिवभूति लुंका लवजी भीखम वगैरह झूठे २ मत चलानेवालोंकी तरह इत्यादि भावको विचारो और संसारसे उदासीन भावधारण करनेवाले, आत्मार्थी भव्यजीवोंको उन्मार्गका रस्ता बतलानेवाला 'शरणे आनेवालोंका विश्वासघातसे शिरच्छेदन करनेवालेसेभी अधिक दोषी ठहरता है, और यह याद रखने योग्य बात है, कि-दृष्टिराग, लोकपूजा, मानता, व झूठा आग्रहका अभिमान परभवमें साथ न चलेगा मगर उत्सूत्रप्ररूपक ८४लाख जीवायोनीका घात करनेवाला होनेसे उसके विपाक अवश्यही भवांतरमें भोगे विना कभी नहीं छुटेंगे, इस बातपर खूब विचार करना चाहिये। और जिनाज्ञानुसार सत्यप्ररूपणा करके भव्य

४४–अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि, और सम्यक्त्वी मिथ्यात्वीकी परीक्षा

कोईभी वादविवादके विषयकी चर्चा करनेमें पहिले वाले स म्यक्त्वी आत्मार्थी होतेथे, वो तो तत्त्वापकी दृष्टितर्फ विचारकरके सत्य बातग्रहण करतेथे और अपना पक्ष छोडनेमें किसीप्रकारकीभी हानीनहीं समझतेथे श्रीगौतमस्वामि आदिगणधर महाराजोंकी तरह तथा श्रीसिद्धसेनदीवाकर श्रीहरिभद्रसूरिजीवगैरह उत्तमपुरुषोंकी तरह और अभीके झूठे अभिमानी अहर मिथ्यात्वी दुराग्रही होतेहैं, वो तो शास्त्रोंकी बातको मनमें समझने परभी अभिमानसे सत्यबातको ग्रहणकरके अपनाझूठा पक्ष छोडनेमें वडीभारी हानीसमझतेहैं, आनंदसागरजी, शांतिविजयजी वगैरहोंकीतरह (इसका खुलासा आगे लिखुंगा) और शास्त्रोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर व्यर्थही झूठी २ कुयुक्तियें लगातेहैं, या विषयांतर करके सामनेवालेपर या उनके समुदायपर विरोधभावको वढानेवाले आक्षेप करने लगजातेहैं। औ र मुख्यमुद्देके विवादको छोडकर निंदा इर्षासे, राग, द्वेष करके विरो धभावसे अपनेको और दूसरोंकोभी कर्मबंधन करानेमें हेतुभूत बन तेहैं मगर झूठे आग्रहसे उत्सूत्रप्ररूपणा करके कुयुक्तियोंसे भोले जी वोंको उन्मार्गमें गेरनेसे या राग, द्वेष, निंदा, ईर्षासे विरोधभाव कर नेसे संसार बढनेकाभय नहीं रखते हैं, इसलिये अभीके झूठे आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि कही जातीहै इसीप्रकार पर्युषणा संबंधीभी यह ग्रंथ बांच बाद सब देखनेमें आवेगा, कि–५०दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाके विषयको छोडकर मासप्रतिबद्ध होली दीवाली, दशहरा आदिके वि षयांतरमें या अगत आक्षेपकरनेमें कौन २ महाशय अपनेअंतरग आ त्माके कैसे२गुणप्रकाशित करेंगे सो तत्त्वज्ञजनस्वय देख लेवेंगे इस लिये यहापर अभीसे पहिले विशेषलिखनेकी कोइ आवश्यकता नहींहै

४५–इस ग्रंथ संबंधी लेखकोंको सूचना

इस ग्रंथपर किसी तरहकाभी लेख लिखने वाले महाशयोंको सू चना करनेमें आती है, कि–जैसे–मैंने इसग्रंथमें सुबोधिका दीपिका किरणावली वगैरहके विवादवाले प्रत्येक लेखोंको पूरेपूरे लिखकर पीछे शास्त्रानुसार व युक्तिपूर्वक उसकी समीक्षामें खुलासा करके बतलाया है, मगर विवादवाली एकभी बातको छोडी नहींहै वैसे ही इसग्रंथपर लेख लिखनेवाले आप लोगभी इसग्रंथके प्रत्येक वि

५- पौष-आषाढ-श्रावणादि वढे तब शास्त्रानुसार या प्रत्यक्ष मेंभी पाचमहीनोंसे फाल्गुन-आषाढ-कार्तिकमें चोमासीप्रतिक्रमण करनेमें आताहै, जिसपरभी श्रावणादि वढे तब आसोजमें ४ महीनों से चौमासी प्रतिक्रमण करनेका बतलाया सोभी पाचवी भूलकीहै।

६- पहिले मास वढताथा तबभी २० दिने वार्षिक कार्य पर्यु षणा करतेथे, उनको सर्वथा उडादिये सो भी यह छट्ठी भूलकी है।

७- मास वढे तब १३ महीनोंके क्षामणे वार्षिक प्रतिक्रमणमें, तथा पाचमहीनोंके क्षामणे चौमासी प्रतिक्रमणमें हमलोगकरते हैं, तो भी मास वढे तब १२महीनोंके वार्षिक क्षामणे,तथा ४ महीनोंके चो-मासी क्षामणेकरनेका प्रत्यक्ष झूठलिखा सोभी यह सातवीं भूलकीहै

८- पौष-चैत्रादिमहीने वढे तब शास्त्रप्रमाणमुजब और प्रत्यक्ष-में भी १० कल्पी विहार होता है, जिसपरभी मास वृद्धिके अभाव सबधी ९ कल्पी विहारकी बात बतलाकर मास वढे तबभी १० क ल्पी विहारका निषेध किया सो भी यह आठवी भूलकी है।

९- अधिकमहीनेमें सूर्यचार होता है, जिसपरभी नहीं होने का प्रत्यक्षही झूठ लिख बतलाया सो भी यह नवमी भूलकी है।

१०- श्रावणादि महीने वढे तब उनकी गिनती सहित प्रत्यक्ष मेंही पाचवें महीनेके नवमें पक्षमें ४॥ महीनोंसे दीवालीपर्व करनेमें आता है, और कभी दो कार्त्तिकमहीने होंवे, तबभी प्रथम कार्तिक महीनेमें दीवाली पर्व करनेमें आता है जिसपरभी दीवाली वगेरह पर्वोंमें अधिक महीना नहीं गिननेका प्रत्यक्षही झूठ लिखा सो भी यह दशवी भूलकी है।

११- यज्ञोपवित,दीक्षा,प्रतिष्ठा,विवाह,सादी वगैरह मुहूर्त्तवाले कार्य तो अधिकमहीनेमें, क्षय महीनेमें, चौमासेमें, और सिंहस्थादि बहुतयोगोंमेंभी नहीं करते मगर चौमासी पर्व व पर्युषणापर्वादि तो अधिकमहीनेमें, क्षयमहीनेमें, चौमासेमें और सिंहस्थादिमेंही क रनेमें आते हैं। जिसपरभी मुहूर्त्तवाले कार्योंकी तरह अधिक महीने में पर्युषणापर्व करनेकाभी निषेध किया सो यहभी जिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणारूप इग्यारहवी बडी भूल्की है

१२- ५० दिने प्रथमभाद्रपदमें पर्युषणापर्व करने चाहियें, जि सके बदले दूसरे भाद्रपदमें करनेका लिखा सो ८०दिन होनेसे यह भी शास्त्रविरुद्ध वारहवी बडी भूल्की है।

१३- जैसे देवपूजा,मुनिदान,आवश्यकादि कार्य दिन प्रतिबद्ध हैं, वैसेही-पर्युषणापर्वभी ५० दिन प्रतिबद्धहै,इसलिये जैसे-अधिक

जीवोंको मुक्तिमार्गका रस्ता बतलानेवाले ८४ लाख जीवायोनीके स
र्व जीवोंको अभयदान देनेसे महा पुण्यके भागी होते हैं, और अपने
कुलको, गच्छको, समुदायकोभी महतिके भागी बनातेहैं, व आपभी
अपनी आत्माको निर्मल करके अल्पकालमें निर्वाण प्राप्तकरने वाले
होतेहैं, श्रीगौतमस्वामी गणधरादि उपकारी महाराजोंकी तरह इ
सलिये संसारसे डरनेवाले आत्मार्थियोंको झूठा आग्रह छोडकर व
गर विलंबसे सत्यग्रहण करना चाहिये। इस बातकोभी विशेष वि
वेकी निष्पक्षपाति पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

४७- सुबोधिका-दीपिका-किरणावली वगैरहकी पर्युष-णा संबंधी तथा छ कल्याणक संबंधी शास्त्रविरुद्ध प्ररू-पणाकी भूलोंको सुधारनेकी खास आवश्यकताहै

१- जैनपंचागके अभावसे अभी महीना बढे तो भी " जैन टि
प्पणकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाषाढ एव वर्धते,
नान्येमासास्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते, ततः पंचाशतैव
दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः " इस वाक्यसे सुबोधिका-दीपिका
किरणावली इन तीनों टीकाकारोंने अपने तपगच्छकेही पूर्वाचार्यों
की आज्ञासे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा
पर्वकी आराधना करनेका लिखा है फिर उसीकोही उत्थापन कर
नेके लिये शास्त्रविरुद्ध और अपने प्राचीन पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध हो
कर कुयुक्तियोंका संग्रहकिया है, यह सबसे बडी प्रथम भूलकी है,
उसको वगर विलंबमे खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

२- निशीथचूर्णिमें अधिकमहीनको कालचूलाकहकरकेभीउसके
३०दिन पर्युषणासंबंधी दिन सख्याकी व्यवस्थामें गिनतीमें लिये हैं,
उसको कालचूलाकेनामसे निषेद्ध किये सोयहभी दूसरी भूलकीहै।

३-निशीथ चूर्णिके अधिक मासके अभाववाले५०दिनों संबंधी
अधूरे पाठ भोलेजीवोंको बतलाकर अभी दो श्रावण होवे,तबभी जि
नाज्ञाविरुद्ध होकर ८०दिने पर्युषणा होनेका भय न करके भाद्रपदमें
पर्युषणा करनेका ठहराया सो भी तीसरी भूलकी है।

४- अधिक महीनेके अभावमें सामान्यतासे पर्युषणाके पिछा
डी कार्त्तिकतक ७० दिन रहनेका कहाहै,उसको समझबिना अधिक
महीना होवे तब विशेषतासे शास्त्रानुसारही १०० दिन होते हैं, उ
सकीजगहभी ७०दिन रहनेका आग्रहकिया सोभी चौथी भूलकीहै।

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानदामाताके गर्भमें भ गवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आ सोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहै, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हारणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाय हे, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहे। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महा राजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहा- वीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भ गवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थ करभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न दे खेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, त था धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्या दि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहे। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते ह। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदे व भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहे,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्या णक नहीं मानसकते हे, परंतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसको याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मा- त्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहे, उसका भावार्थ स मझविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना,या रा ज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करनेके संबंधमें भी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी बड़ी भूलका है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति फलती है, व फूल फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे बिनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बड़ी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत बड़ी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्दअनेकार्थवालेहै तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्यवनादि पाच पाच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पाच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठ्ठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानदामाताके गर्भमें भगवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये वाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहै, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हारणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये हैं, तब त्रिशलामाताने असो.जवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचन्द्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहैं। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे बिनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहै,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते हैं, परन्तु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझेबिनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना,या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३० दिन देवपूजा, मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करने संबंधीमी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये जातेहैं, जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३० दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी बडी भूलका है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति फलती है, व फूल, फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे विनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत बडी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणकपना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्द अनेकार्थवालेहैं तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्यवनादि पांच पांच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पांच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपंदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानदामाताके गर्भमें भ गवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आ सोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहैं, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हरिणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाय हैं, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचद्रसूरिजी महा राजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहा वीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भ गवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थं करभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न दे खेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, त था धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्या दि अनेक बाते च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहैं। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक माते हैं। उसका भावार्थ समझे बिनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदे व भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहै,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्या णक नही मानसकते हैं, परतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मा त्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ स मझेबिनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना,या रा ज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करने संबंधीभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी बडी भूलकी है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति फलती है, व फूल, फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे विनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवीं बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत बडी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो चाहे च्यवनादि स्थान कहो या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्दअनेकार्थवालेहैं तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ है, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्यवनादि पांच पांच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पांच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छट्ठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपंदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्‌को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगेरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्‌को देखेहैं, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हारणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये हैं, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्‌के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहै। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्‌के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहै। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्‌के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोइभी लक्षण नहींहै,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसक्ते हैं, परंतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्‌को देखेभी नहीं, और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्‌को देखेहैं, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हरिणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये हैं, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थकरभगवान्‌के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं। और कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण' किया और हरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थकरभगवान्‌के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुईहैं। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे बिनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्‌के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहै, इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते हैं, परन्तु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया, उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना, या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करनेके संबंधोमी अधिक महीनेके ३० दिन गि नतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सोभी यह तेरहवी बडी भूलका है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति बढती है, व फूल, फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गा थाका भावार्थ समझे विनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप ब हुत बडी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्दअनेकार्थवालेहैं, तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्य वनादि पांच पांच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पांच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठ्ठा निर्वा ण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे विना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थ में च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपंदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहै, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हारणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताजी कुक्षिमें स्थापित करवाय हे, तब त्रिशलामातानें असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहे। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानमें भगवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहे। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते ह। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहे,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसक्ते हे, परतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजनें किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाह, उसका भावार्थ समझेविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना,या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करनेकी संबंधमें भी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी बडी भूलकी है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति बढती है, व फूल फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे बिनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत बडी २ भूलें की हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्द अनेकार्थवाले हैं तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ है, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्यवनादि पाच पाच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पाच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठ्ठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषेधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपंदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्को देखेभी नहीं,और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहैं, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हारणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाय हे, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिको तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं। और कलिकाल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचंद्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयीहै। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हे। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहे,इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते हे, परतु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया,उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

महीनेके ३०दिन देवपूजा,मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें लिये जातेहैं, तैसेही-पर्युषणापर्व करने संबंधमेंभी अधिक महीनेके ३० दिन गि-नतीमें लिये जातेहैं,जिसपरभी पर्युषणापर्व करनेमें अधिक महीनेके ३०दिन नहीं गिननेका लिखा, सो भी यह तेरहवी बडी भूलकी है।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति फलती है, व फूल, फलादिकभी प्रत्यक्षमें होतेहैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे बिनाही अधिक महीनेमें वनस्पति फूलवाली नहीं होनेका लिखा, सो भी यह चौदहवी बडी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप ब हुत बडी २ भूलेंकी हैं, उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अथ शासननायक श्रीमहावीरस्वामीके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने सबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन जन्मादिकोंको कल्याणक पना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्दअनेकार्थवालेहैं तोभी तीर्थंकरमहाराजोंके चरित्रमें प्रसगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामीके तथा श्रीनेमिनाथ स्वामीके च्य वनादि पाच पाच कल्याणकोंकी तरहही श्रीमहावीरस्वामीकेभी च्यवनादि पाच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छट्ठा निर्वा ण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूवककहाहै। जिसका मर्म समझे बिना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थ में च्यवनादि छ कल्याणकोंका निषधकरनेके लिये छ वस्तु या छ स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थकोउडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापनकरनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसेबडीपदरहवी भूलकीहै

१६- श्री महावीर स्वामीके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुआ, तथा इन्द्रमहाराजने अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें भगवान्को देखेभी नहीं, और नमुत्थुण वगैरह कुछभीनहींकिया तोभी उन्हींको कल्याणकपना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हींकी सर्वटीकाआदि अनेकशास्त्रोंके अनुसारतो यही सिद्धहोताहै, कि ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहाराजने अवधि ज्ञानसे भगवान्को देखेहैं तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उतरकर विधि पूर्वक 'नमुत्थु ण' किया और हरिणेगमेषि देवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये हैं, तब त्रिशलामाताने असोजवदी १३ कीरात्रिके तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहै। और कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचन्द्रसूरिजी महाराजने तो 'श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवे पर्वमें श्रीमहावीरस्वामीके चरित्रमें लिखा है, कि-गर्भापहारके दिन आसोजवदी १३ को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्को देखकर नमस्काररूप'नमुत्थु ण'किया औरहरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामाताने तीर्थंकरभगवान्के अवतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताके पासमें आकर १४ महास्वप्न देखनेसे उनका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, तथा धनद भंडारीको आज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बात च्यवन कल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुईहै। इसलिये इन्हींकोही गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहींहै, इसलिये राज्याभिषेकको जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते हैं, परन्तु इस अवसर्पिणीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजने किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया, उसकी याद गिरिके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बतलायाहै, उसका भावार्थ समझेविनाही उसकोभी कल्याणकपना ठहरानेका आग्रहकरना, या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी कल्याणकपने रहित ठहराना

सोभी गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनका त्यागकरने और राज्याभिषेकके, भावार्थको समझे विना व्यर्थही यह सोलहवीभी बडी भूलकीहै।

१७- जैसे श्रीमल्लीनाथस्वामी स्त्रीपनेमें तीर्थंकर उत्पन्नहुयेहैं सो विशेषतासे प्रसिद्धहैं,तोभी चोवीश तीर्थंकर महाराजोंकी अ पेक्षासे सामान्यतासे श्रीमल्लीनाथ स्वामीकोभी पुरुषपनेमें कह नेमें आतेहैं मगर उसमें सामान्य विशेष संबंधी अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनबातके आपसमें कोईतरहका विरोधभाव नहींभासकताहै, तैसेही-श्रीमहावीरस्वामीकेभी विशेषतासे छ कल्याणक आचारांग, स्थानांग, कल्पसूत्रादि आगमोंमें कहेहैं,तो भी अतित,अनागत, और वर्तमान काल संबंधी भरतक्षेत्रके तथा ऐरवर्त क्षेत्रके सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे श्रीमहावीर स्वामीकेभी पांच कल्याणक 'पंचाशक सूत्रवृत्ति' में कहे हैं, मगर उनमें सामान्य वि शेष अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनके आपसमें कोई तरहका विरोध भाव कभी नहीं आ सक्ता है,तो भी आचारांग,स्थानांगादि आग मोंके छ कल्याणकों संबंधी विशेषताके और 'पंचाशक' के पांच क ल्याणकों संबंधी सामान्यताके अभिप्रायको समझे विनाही सामान्य पांच कल्याणकों संबंधी पूर्वापर संबंध विनाका अधूरापाठ अल्पज्ञ भोलेजीवोंको बतलाकर आगमोंमें विशेषतापूर्वक छ कल्याणक कहे हैं, उन्होंका निषेध करनेके लिये आग्रह किया है, सो भी अज्ञानता जनक सर्वथा अनुचित यह सत्तरहवी भी बडी भूलकी है।

१८- आचारांग स्थानांगादि मूल आगमोंमें च्यवनादि अलग २ छ कल्याणक खुलासापूर्वक बतलायेहैं,और उन्होंकी टीकाओंमेंभी च्य वनादि कल्याणक अर्थकी सूचना करनेवाले पर्याय वाचक च्यवना दि छ स्थान बतलायेहैं उनका तत्त्वदृष्टिसे भावार्थ समझेविनाही च्य वनादिकोंको वस्तु या स्थान कहकर कल्याणकपनेका सर्वथा निषेध किया,सोभी अतीव गहनाशयवाले आगमोंके भावार्थका अजानपना होनेसे यहभी अठारहवीं बडी भूलकीहै।

१९-आषाढ शुदी ६ को भगवान् देवानन्दामाताकी कुक्षिमें आ ये, सो नीचगौत्रके कर्म विपाकका उदयरूप हैं,उसीकोही शास्त्रका रोंने आश्चर्यरूप अच्छेराकहाहै, तोभी उनको प्रथम च्यवनकल्याणक मानतेहैं और नीचगौत्रका कर्मविपाक क्षय हुए बाद पीछे उच्चगौत्रके कर्म विपाकका उदय होनेसे आसोज वदी १३ को त्रिशला माताकी कुक्षिमें उत्तम कुलमें भगवान् पधारेहैं तब अनादि कालकी मर्या

दामुजब तीर्थंकरमहाराजोंकी माताओंके गर्भमें तीर्थंकरउत्पन्न होने की सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखनेकी तरहही त्रिशलामाता नेंभी१४महास्वप्न आकाशसे उत्तरतेहुए देखेहै,इसलिये यहतो दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षमेंही सिद्धहै। उन्हींको नीच गोत्रका विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर कल्याणक पनेका निषेध किया सो यहभी एकोणवीशवीभी वडी भूलकी है।

२०-जैसे देवलोकसे देवभव सबधी आयु पूर्ण होनेपर वहासे च्यवनरूप कारणहोनेसे माताकेगर्भमें उत्पन्नहोनेरूप(अवतारलेनेरूप) कल्याणकपनेका कार्यहोताह, तो भी कारणमें कार्यका उपचार होने से च्यवनकोही कल्याणकपना कहनेमें आता है तैसेही-गर्भापहार रूप कारण होनेसे तीर्थंकरपनेम प्रकट होनेके लिये गर्भसक्रमणरूप (अवतारलेनेरूप)दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेका कार्यहुआहै तोभी कारणमें कार्यकाउपचार होनेसे गर्भापहारको कल्याणकपना कहनेमें आताहे इसलिये उनको गर्भापहार कहो, गर्भसक्रमण कहो, त्रिशला कुक्षिमें अवतार लेनेका कहो, या दूसरा च्यवनरूप कल्याणक कहो, सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकही है इसलिये इनके आपसमें किसी तरहका विरोधभाव नहींहै इसप्रकार तीर्थंकरपनेमें प्रकटहोनेकेलिये त्रिशलामाताके गर्भमें अवतारलेनेरूप गर्भापहारके अतीव उत्तम कार्यके भावार्थको समझे विनाही गर्भापहारको अतिनिंदनीक कहते है, सो तीर्थंकरभगवान्के अवर्णवाद बोलनेरूप (आशातना करनेरूप) दुर्लभबोधि पनेकी हेतुभूत यहभी वीशवी वडी भूलकी है।

२१- जैसे-श्रीआदीश्वर भगवान् १०८ मुनियोंके साथ एक समयमें अष्टापदपर्वत ऊपर मोक्ष पधारेहैं, उनको आश्चर्यरूप अच्छेरा कहतेहैं,तोभी उन्हींकोही मोक्षकल्याणकभी मानतेहै, तथा श्रीमल्लीनाथस्वामीके जन्म, दीक्षा, व केवलज्ञानकी उत्पत्ति वगेरह सर्व कार्य स्त्रीरवपनेमें हुएहैं,उन्होंको आश्चर्यकारक अच्छेरेकहतेहैं, तोभी उन्हींकोही जन्म, दीक्षादिक कल्याणकभी मानतेह । तैसेही श्रीमहावीर स्वामिके गर्भापहारकोभी आश्चयकारक अच्छेराकहतेहैं,तो भी उनको दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपनाभी माननेमें आताहै, उसका आशय समझे विनाही गर्भापहारको आश्चर्यकहके कल्याणक पनेका निषेध किया सो भी अज्ञानताजनक यह एकवीशवीभी वडी भूलकी है

२२- जैसे श्रीसिद्धसेनदीवाकरसूरिजी महाराजने उज्जयनीनगरी में दबी हुई श्रीएवतिपार्श्वनाथजीकी प्राचीनप्रतिमाको फिरसे प्रकट

की, तथा गुजरात देशमें अणहिल्लपुरपाटणमें शिथिलाचारी चैत्यवा
सियोंने संयमधर्मको वृथा किया था, उसको श्रीजिनेश्वरसूरिजी महा
राजने वहां जाकर फिरसे प्रकट किया और श्रीनवांगीवृत्ति कारक
खरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्रीस्थंभनपार्श्वना
थजीकी प्राचीनप्रतिमाको फिरसे प्रकटकी तैसेही कल्प स्थानांग, द
शाश्रुतस्कंध, आचारांगादि आगमोंमें कहेहुए श्रीमहावीरस्वामीके च्य
वनादि छ कल्याणकोंको मेवाडदेशमें चितोडनगरमें शिथिलाचारी,
लिंगधारी, चैत्यवासियोंने वृथा किये थे, उन्होंकोही श्रीजिनवल्लभसू
रिजी महाराजने वहां जाकर फिरसे प्रकट किये हैं सो शास्त्रविरुद्ध
नवीन नहीं, किंतु आगमोक्त प्राचीनही हैं जिसकोभी भावार्थ समझे
बिनाही नवीन प्रकट करनेका कहते हैं, सो भी अज्ञानताजनक प्रत्यक्ष
ही मिथ्या भाषणरूप यह बावीशवीभी बडी भूलकी है।

२३- जेसे अभी वर्तमानिक गच्छोंके पक्षपाती लोग अहमदावाद
वगैरह शहरोंमें अपने गच्छके उपाश्रय या धर्मशाला वगैरह मकान
खालीपडेहोंवें, तोभी अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीमुनियोंको उस मका
नमें ठहरने नहीं देते, औरयति लोगभी अपने गच्छके आश्रित भगवा
नूके मंदिरमें अन्य गच्छकेयतिको स्नात्र महोत्सवादि पूजापढाने नहीं
देते जिसपरभी अन्यगच्छवाला कोई यति अपनेगच्छके आश्रित मंदि
रमें स्नात्रमहोत्सवादि पूजापढानेको आवे, तो वो लोग मरणे मारणे
शिरफोडनेको तैयार होतेथे, और कहतेथे, कि 'ऐसा कभी पहिले हुआ
नहीं और अभी होने देंगेभी नहीं 'यहबात गच्छोंके विरोधभावसे मा
रवाड, गुजरात वगैरहदेशोंमें पहिले प्रसिद्धहीथी और कोई शहरोंमें
अबभी देखनेमें आतीहै। इसी तरहसेही पहिले चैत्यवासी लोगभी
आपसके द्वेषसे या लोभदशासे अपने गच्छके आश्रित मंदिरमें अ
न्यगच्छवालेको स्नात्रपूजा महोत्सव, प्रतिष्ठादि कार्य नहीं करनेदेतेथे
उस अवसरमें श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराजभी गुजरातदेशसे वि
हार करके मेवाडदेशमें विशेषलाभ जानकर जिनाज्ञाविरुद्ध शिथि
लाचारी चैत्यवासियोंका अविधिमार्गका निषेध करतेहुए, जिनाज्ञा
नुसार विधिमार्गका उपदेशद्वारा स्थापन करतेहुए भव्यजीवोंके उ
पकारकेलिये चितोडनगरमें पधारे तब वहांवाले चैत्यवासियोंने औ
र उन्होंके पक्षपातिभक्त लोगोंने अपनीभूल प्रकटहोनेके भयसे महारा
जको शहरमें ठहरनेकेलिये कोइभीजगह नहीं दिया और द्वेषबुद्धिसे
चामुंडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका बतलाया तब महाराज तो दे

वीकी आज्ञा लेकर वहाही ठहरे उनके सयमानुष्ठान,जप,तप,ध्यान, धैर्य,ज्ञानादिगुण देखकर देवीभी प्रश्न होकर जीवहिंसा छोडकर,जी वदया पालनेवाली व महाराजकीभक्ति करनेवाली होगई और शहर वालेभी पुण्यवान् भव्यजीव जिनाज्ञानुसार सत्यधर्मकी परीक्षाकर- नेको वहा महाराजकेपास थोडे२ आनेलगे और अन्य दर्शनियोंमेंभी महाराजके विद्वत्ताकी वडी भारी प्रसिद्धि होनेसे बहुत लोग अपना सशय निवारणकरनेकेलिय महाराजकेपास आनेलगे, शहरभरमें व हुत प्रसशाहोनेलगी, तब कितनेक गुणग्राही श्रावकलोगभी महाराज को गीतार्थ, शुद्ध सयमी और शास्त्रानुसार विधिमार्गकी सत्यवार्ते वतलानेवाले जानकर,चैत्यवासियोंकी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकी तथा चैत्यकी पैदाससे अपनी आजीविका चालनेकी स्वार्थीकल्पितवार्तो को छोडकर महाराजकेपास शास्त्रानुसार सत्यवार्तोको ग्रहण करने वाले होगये। पीछे महाराजका चौमासाभी वहा करवाया, तब तो महाराज चैत्यवासियोंकी शिथिलता और अविधिको खूबजोरशोरसे निषेध करने लगे और जिनाज्ञानुसार विधिमार्गकी सत्यवार्ते विशे षरूपसे प्रकाशित करने लगे, उसको देखकर बहुत भव्य जीव चै त्यवासियोंकी मायाजालसे छुटकर शास्त्रानुसार क्रिया अनुष्ठान क रने लगे तवतो चैत्यवासी लोग महाराज ऊपर वहुत नाराज होगये और अपनी शास्त्रविरुद्ध भूलोंको सुधारनेके वदले पाचसौ चैत्यवा सी इकट्ठे होकर लकडीयें वगैरह हाथमें लेकर महाराजको मारनेके लियेआये,इसबातकी अच्छे २ आगेवान श्रावकोंद्वारा चितोडनगरके राजाको मालूम पडनेसे महाराज ऊपरका यह उपसर्ग वहाके रा जाने दूर किया,चैत्यवासी लोग वहुत द्वेष करतेथे और नगर भरके सबमदिर चैत्यवासियोंके तावेमेंथे उसअवसरमें महाराज श्रावकोंके साथ श्रीमहावीरस्वामीके दूसरेच्यवन कल्याणकसवधी आसोजव दी १३को चैत्यवासियोंके मदिरमेंदेववदनादि करनेको जानेलगे,तब पहिलेके विरोधभावके कारणसे राज्यमानआगेवान् वहुतश्रावकलोग साथमेंथे,इसलिये चैत्यवासीलोगतो कुछभी वोलसके नहीं,मगर एक चैत्यवासीनीवुढिया अपनेस्त्रीजातीके तुच्छस्वभावसेअपनेगच्छकेआ श्रित भगवान्के मदिरकेदरवाजेपर आडी सोगई और क्रोधसे वोलने लगी कि 'पहिले ऐसा कभीहुआनहीं और यहअभी करतेहै, सो मेरे जीवतेतो मदिरमें नहींजानेदूगी, मेरेकोमारकर पीछे भले अदरजावो

ऐसा उस चैत्यवासीनी बुढियाका क्रोधसहित अनुचित वर्तावको दे
खकर; यद्यपि श्रावकलोग उनको दरवाजेसे हटाकर मंदिरमें दर्शन
करानेको जासकतेथे, तो भी श्रीमन्नाथ ऐसा करना योग्य न समझ
कर महाराजके साथ वाले अपने स्थानपर चले आये इत्यादि 'गण
धर सार्धशतक' बृहद्वृत्ति वगैरहमें श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज
के चरित्रसंबंधी पूर्वापरके आगे पीछेके प्रसंगको, व चितोडके निवा
सी चैत्यवासियोंके विरोधभावको, विवेकी बुद्धिसे समझे बिनाही
अथवा तो जान बुझकर आगे पीछेके संबंधको छुपाकरके कितनेक
लोग कहतेहैं, कि—'श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडनगरमें छठे क
ल्याणककी नवीन प्ररूपणाकरी तब उनको बुढियाने मना किया था
तोभी मानानहीं' ऐसाकहनेवाले अपनी अज्ञानताकोही प्रकटकरतेहैं,
क्योंकि देखो-वो चैत्यवासीनी बुढिया अज्ञानी आगमोंके भावार्थको
नहीं जाननेवालीथी तथा शिथिलाचारी होकर अपनी आजीविकाके
लिये चैत्यमें ठहरकरके चैत्यकी पैदाससे अपना गुजरान करती थी
और श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यमें [मंदिरमें] रहनेका, तथा
उसकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेका निषेध करने वालेथे,
ओर शास्त्रानुसार व्यवहार करने वाले शुद्ध संयमीथे इसलिये चि
तोडके सब चैत्यवासियोंकी तरह वह बुढियाभी महाराजसे विद्वे
ष द्वेष धारण करने वाली थी और बुढियाके जन्म भरमेंभी उसके
सामने कोईभी शुद्ध संयमी चैत्यवासका निषेध करनेवाला चितोड
नगरमें पहिले कभी नहीं आयाथा उससेही शास्त्रानुसार विधिमा
र्गकी बातोंकी उसको मालूम नहींथी इसलिये इन महाराजका आ
गमानुसार छठे कल्याणकका कथनभी उस बुढियाको नवीन मालू
म पडा और अपने चैत्यनिवासकी तथा उससे अपनी आजीविका
चलानेकी बातका खंडन करने वाला ओर अपनी शिथिलाचारकी
भूलोंका प्रकट करनेवाला, ऐसा अपना विरोधी अपने ताबेके मंदि
रमें अपने सामने चला आवे सो उस बुढियासे सहन नहींहोसका
इसलिये क्रोधसे मंदिरके दरवाजे पर आडी पड गई, सो उस
निर्विवेकी अज्ञानी क्रोधसे विरोध भावको धारण करनेवाली बुढि
याके कहनेसे प्रत्यक्ष आगम प्रमाण मौजूदहोनेसे छठा कल्याणक नवी
न कभी नही ठहर सकता जिसपरभी उस बुढियाके अज्ञानताजनक व
चनोंका भावार्थ समझे बिनाही उस चैत्यवासीनी बुढियाकी परंपरा
वाले अभी वर्तमानमेंभी कितनेक आग्रही जन अज्ञानतासे बुढियाकी

तरह द्वेष बुद्धिसे, छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करनेका श्रीजि नवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठा दोष आरोपण करतेहैं मगर प्रत्यक्ष-पने आगम प्रमाणोंको उत्थापन करके मिथ्याभाषणसे त्रेवीशवी यह भी वडीभूल करके विवेकी तत्त्वज्ञ विद्वानोंके सामने अपनी लघुता होनेका कारण करतेहुए कुछभी विचारनहींकरते, यह कितनी वडी लज्जा (शर्म) की बात है सो भी विचारने योग्य है ।

औरभी एक प्रत्यक्ष प्रमाण देखिये — श्रीअतरिक्षपार्श्वनाथजी महाराजकी यात्रा करनेकेलिये मुबईसे सघगयाथा,उनके साथमें आनदसागरजी आदि साधुजीभीथे,सो रस्तामें सघके दर्शनकरनेकेलिये साथमें श्रीजिनेश्वर भगवान्की प्रतिमाथी उनको वहा सघ ठहरे तब तक सघ वाले मदिरमें विराजमान करनेलगे,सो दिगवर लोगोंने मना किया, जब उनके सामने जबराई करनेको गये तब आपसमें मार-पीट हुई शिर फुटे,कोर्ट कचेरीमें गये,दडहोनेका या कैदमें जानेका मोका आया, हजारों रुपयें सबके खर्च हुए, तब साधू लोग छूटे और आपसमें विरोधभाव बढा,तथा शासन हिलनाभी बहुत हुई,इस पर अब विचार करना चाहिये, कि उस समय सघवाले तथा सघकेसाथ आनदसागरजी वगैरह साधु लोगभी विवेक वाले होते, तो व्यर्थ हठकरके तकरार खडी न करते,तो इतना नुकसान कभी उठाना नहीं पडता इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजभी व्यर्थ तकरार न होनेके लिये बुढियाका हठ देखकर वहासे पीछे चले आये, सो तो दीर्घदृष्टिसे विवेकता पूर्वक बहुतअच्छा काम कियाथा जिसके बदले उनको झूठे ठहरानेका दोष लगाना यह कीतनी वडी अज्ञानताहै ।

और न्यातन्यातमें,गावगावमें,देशदेशमें,अपने २ पाडोसीपाडोसीमें, पचपचायतमें,राजदरबारमें, या गच्छगच्छमें व अधपरपरारूढी की खोटी प्रवृत्तिमें आपसके विरोधभाव सबधी ' ऐसा पहिले कभीहुआनहीं,ओर अभी यह ऐसा करते हैं सो कभी होने देंगे भी नहीं" इस तरहसे कहनेकी एक प्रकारकी प्रचलीत रूढीहीहै, उसमें सत्यासत्यकी परीक्षा किये विना किसीको झूठा ठहराना यह सर्वथा निविवकताहै इसी तरहसे उन चैत्यवासीनी बुढियानेंभी अपने आग्रहसे वैसा कहाथा उसका भावार्थ समझेविनाही छठे कल्याणकको नवीन ठहराना, सोभी यह आगमोंके उत्थापनकरनेरूप तथा श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठादोष आरोपणकरनेरूप व अज्ञानता जनक बडीभारीभूलहै इसबातकोविशेष पाठक स्वय विचार लेंगे

ऐसा उस चैत्यवासीनी बुढियाका क्रोधसहित अनुचित वर्त्तावकोदे खकर, यद्यपि श्रावकलोग उसको दरवाजेसे हटाकर मंदिरमें दर्शन करनेको जासक्तेथे, तो भी श्रीनेमाथ ऐसा करना योग्य न समझ कर महाराजके साथ पीछे अपने स्थानपर चले आये इत्यादि 'गण धर सार्धशतक' बृहद्वृत्ति वगैरहमें श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज के चरित्रसंबंधी पूर्वापरके आगे पीछेके प्रसंगको,व चितोडके निवा सी चैत्यवासियोंके विरोधभावको, विवेकी बुद्धिसे समझे विनाही अथवा तो जान बुझकर आगे पीछेके संबंधको छुपाकरके कितनेक लोग कहतेहैं, कि—'श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडनगरमें छठे क ल्याणककी नवीन प्ररूपणाकरी तब उनको बुढियाने मना किया था तोभी मानानहीं' ऐसाकहनेवाले अपनी अज्ञानताकोही प्रकटकरतेहैं, क्योंकि देखो-वो चैत्यवासीनी बुढिया अज्ञानी आगमोंके भावार्थको नहीं जाननेवालीथी,तथा शिथिलाचारी होकर अपनी आजीविकाके लिये चैत्यमें ठहरकरके चैत्यकी पैदाससे अपना गुजरान करती थी और श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चेत्यमें [मंदिरमें] रहनेका, तथा उसकी पेदाससे अपनी आजीविका चलानेका निषेध करने वालेथे, और शास्त्रानुसार व्यवहार करने वाले शुद्ध संयमीथे इसलिये चि तोडके सब चेत्यवासियोंकी तरह वह बुढियाभी महाराजसे विशे ष द्वेष धारण करने वाली थी और बुढियाके जन्म भरमेंभी उसके सामने कोईभी शुद्ध संयमी चेत्यवासका निषेध करनेवाला चितोड नगरमें पहिले कभी नहीं आयाथा उससेही शास्त्रानुसार विधिमा र्गकी बातोंको उसको मालूम नहींथी इसलिये इन महाराजका आ गमानुसार छठे कल्याणकका कथनभी उस बुढियाको नवीन मालू म पडा और अपने चैत्यनिवासकी तथा उससे अपनी आजीविका चलानेकी बातका खंडन करने वाला और अपनी शिथिलाचारकी भूलोंको प्रकट करनेवाला, ऐसा अपना विरोधी अपने तावेके मंदि रमें अपने सामने चला आवे सो उस बुढियासे सहन नहींहोसका इसलिये क्रोधसे मंदिरके दरवाजे पर आडी पड गई, सो उस निर्विवेकी अज्ञानी क्रोधसे विरोध भावको धारण करनेवाली बुढि याके कहनेसे प्रत्यक्ष आगम प्रमाण मौजूदहोनेसे छठा कल्याणक नवी न कभी नही ठहर सकता जिसपरभी उस बुढियाके अज्ञानताजनक व चनोंका भावार्थ समझे विनाही उस चैत्यवासीनी बुढियाकी परंपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी कितनेक आग्रही जन अज्ञानतासे बुढियाकी

तरह द्वेष बुद्धिसे, छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करनेका श्रीजि-
नवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठा दोष आरोपण करतेहैं मगर प्रत्यक्ष-
पने आगम प्रमाणोंको उत्थापन करके मिथ्याभाषणसे त्रेवीशवी यह
भी बडीभूल करके विवेकी तत्त्वज्ञ विद्वानोंके सामने अपनी लघुता
होनेका कारण करतेहुए कुछभी विचारनहींकरते, यह कितनी बडी
लज्जा (शर्म) की बात है सो भी विचारने योग्य है।

औरभी एक प्रत्यक्ष प्रमाण देखिये — श्रीअंतरिक्षपार्श्वनाथजी
महाराजकी यात्रा करनेकेलिये मुंबईसे संघगयाथा, उनके साथमें आ
नंदसागरजी आदि साधुजीभीथे, सो रस्तामें संघके दर्शनकरनेकेलिये
साथमें श्रीजिनेश्वर भगवान्की प्रतिमाथी उनको वहां संघ ठहरे तब
तक संघ वाले मंदिरमें विराजमान करनेलगे, सो दिगंबर लोगोंने मना
किया, जब उनके सामने जबराई करनेको गये तब आपसमें मार
पीट हुई, शिर फुटे, कोर्ट कचेरीमें गये, दंडहोनेका या कैदमें जानेका मो
का आया, हजारों रुपये संघके खर्च हुए, तब साधू लोग छूटे, और
आपसमें विरोधभाव बढा, तथा शासन हिलनाभी बहुत हुई, इस पर
अब विचार करना चाहिये, कि-उस समय संघवाले तथा संघकेसाथ
आनंदसागरजी वगैरह साधु लोगभी विवेक वाले होते, तो व्यर्थ ह
ठकरके तकरार खडी न करते, तो इतना नुकसान कभी उठाना नहीं प
डता इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजभी व्यर्थ तकरार न
होनेके लिये डुंढियाका हठ देखकर वहांसे पीछे चले आये, सो तो
दीर्घदृष्टिसे विवेकता पूर्वक बहुतअच्छा काम कियाथा जिसके बद-
ले उनको झूठे ठहरानेका दोष लगाना यह कीतनी बडी अज्ञानताहै।

ओर न्यातन्यातमें, गावगावमें, देशदेशमें, अपने २ पाडोसीपाडोसी
में, पंचपंचायतमें, राजदरबारमें, या गच्छगच्छमें व अंधपरंपरारूढी
की खोटी प्रवृत्तिमें आपसके विरोधभाव संबंधी " ऐसा पहिले क
भीहुआनहीं, ओर अभी यह ऐसा करते हैं सो कभी होनेदेंगे भी नहीं"
इस तरहसे कहनेकी एक प्रकारकी प्रचलीत रूढीहीहै, उसमें सत्या
सत्यकी परीक्षा किये विना किसीको झूठा ठहराना यह सर्वथा नि
विवेकताहै इसी तरहसे उन चैत्यवासीनी डुंढियानेंभी अपने आ
ग्रहसे वैसा कहाथा, उसका भावार्थ समझेविनाही छठे कल्याणकको
नवीन ठहराना, सोभी यह आगमारे उत्थापनकरनेरूप तथा श्रीजि
नवल्लभसूरिजी महाराजपर झूठादोष आरोपणकरनेरूप व अज्ञानता
जनक बडीभारीभूलहै इसबातकोविशेष पाठक स्वयं विचार लेंगे

२४- देवानंदामाताके गर्भमें ८२ दिन गयेबाद त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको च्यवनकल्याणकपना प्रकटतयासिद्धकरनेकेलिये ही श्रीकल्पसूत्रमें च्यवनकल्याणकका सर्व पाठ देवानंदामाता संबंधी वर्णन नहीं किये, किंतु त्रिशलामाता संबंधी वर्णन कियेहैं, तथा श्रीसमवायांगसूत्र वृत्तिमेंभी देवानंदामाताके गर्भसे ८२ दिनगये बाद त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको अलग २ भव गिनतीमें लियेहैं, और कल्पसूत्र तथा उन्हींकी सर्व टीकाओंमें तथा श्रीवीरचरित्रादि अनेक शास्त्रोंमेंभी देवानंदामाताकेगर्भमें८२दिन गयेबाद आसोजवदी १३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आयेहैं, यह अधिकार बहुतविस्तार पूर्वक खुलासाके साथ कथन किया है, इसलिये देवानंदामाताकी कुक्षिसे जन्म होनेके बदले त्रिशलामाताकी कुक्षिसे जन्म होने संबंधी किसी तरहकीभी असंगतिरूप शंकाभी नहींहोसकती जिसपरभी असंगतिरूप शंका निवारण करनेकेलिये गर्भापहारका नक्षत्र बतलानेका कहकर उनमें अलग२भव गिनने, व १४महास्वप्नदेखनेवगैरहसब बातोंको उडाकर दूसराच्यवनरूप गर्भापहारको कल्याणकपने रहित ठहरातेहैं, और उनको बहुततुच्छ समझकरबडीनिंदाकरतेहैं, सो भी मायावृत्तिसे तीर्थंकरभगवान्की आशातनाकरनेरूप चौवीशवीं बडीभूलकी है

२५- श्रीऋषभदेव आदि तीर्थंकरमहाराज पहिले होगये, तथा श्रीसीमंधरस्वामि आदि वर्तमानमें हैं, उन्हीं सबीने श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणक कथनकियेहैं, उन्होंकेही अनुसार गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंनेभी आचारांग, स्थानांगादि आगमोंमेंभी च्यवनादि छ कल्याणक कथनकियेहैं, उसीकेही अनुसार तपगच्छके पूर्वज वडगच्छके श्रीविनयचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके प्राचीन निरूक्तमें, तथा चंद्रगच्छके श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके प्राचीन टिप्पणमें और श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी पट्टपरंपरामें उपकेश गच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजीने कल्पसूत्रकी टीकामें इत्यादि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी खुलासा पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणकलिखे हैं। उसीकेही अनुसार तपगच्छकेभी पूर्वाचार्य श्रीकुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी श्रीकल्पावचूरि आदिक ग्रंथोंमें च्यवनादि छ कल्याणकलिखे हैं इसलिये श्री तीर्थंकर-गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके प्राचीन समयसेही आगमानुसार आत्मार्थी सर्वगच्छवाले च्यवनादि छ कल्याणक माननेवाले थे, जिसपरभी आगमादि सर्व प्राचीनशास्त्रोंके प्रमाणोंको जान बुझकर छुपाकरके या अज्ञानतासे 'श्री जिनवल्लभसूरिजीनें चितोडमें

छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करी' ऐसा कहकर जो लोग छठे कल्याणकका निषेध करते हैं वो लोग तीर्थंकर, गणधर, पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और खास अपनेही तपगच्छकेभी पूर्वाचार्योंकीभी आशातना करनेवाले ठहरतेहैं, इसलिये आत्मार्थी भवभिरू विवेकी जनोंको तो छठे कल्याणकका निषेध करना सर्वथा योग्यनहींहै मगर निषेध करनेवालोंने यह पचीशवींभी बडी भूलकी है।

२६- सभा मंडलमें जाहिर व्याख्यान करते हुए परोपकारकेलिये सत्य बात प्रकट करनेमें अपनी स्वाभाविक प्रकृतिसे,सचके जोशमें आकर कितनेक वक्ता लोग चोकी,टेबल, या पाटापर जोरसे अपना हाथ पिछाडते हुए अपना मतव्य प्रकट करतेहै, तथा कितनेक छाती ठोकते हुए, या भुजा आस्फालन करते हुए, अपनी सत्यबात प्रकट करतेहैं, और कोई विशेष प्रवल विद्वान् वादी तो हाथमें खूब उचा झडा लेकर नगारेको पीटवाते हुए विवाद करनेकेलिये नगरमें उद्घोषणा करवाते हैं, मगर यह बात कोई प्रकारसे अनुचित नहींहै, किंतु सत्यबात प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीकी स्वाभाविक प्रकृति है। इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी सर्व शिथिलाचारी चैत्यवासियोंके सामने चैत्यवासका निषेध व आगमानुसार श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक मानने वगैरह विषयों संबधी सत्यबातें प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत बहादुरीसे भुजास्फालन पूर्वक कहाथा,कि-'चैत्यवास निषेधादिक ऊपरकी बातें जो न माननेवाले होंवें वो उन्होंकी शास्त्रार्थ करनेकी ताकत हो तो मेरे सामने आकर उन बातोंका शास्त्राथसे निर्णय करो' मगर उस समय किसी भी चैत्यवासीकी महाराजके साथ शास्त्रार्थ करनेकी हिम्मत नहींहुई तब महाराजने सब लोगोंके सामने ऊपर मुजब सत्यबातें प्रकाशित की इसीतरहसे 'गणधरसार्धशतक' बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति वगैरहका भावार्थ समझे विनाही श्रीजिनवल्लभसूरिजीने 'स्कंधास्फालनपूर्वक' छठा कल्याणक नवीन प्रकट किया, ऐसा कहकर चैत्यवास निषेध वगैरह ऊपरकी सबबातोंका सबध छुपाकर छठेकल्याणकको नवीन ठहराकरके जो निषेधकरते है,सो मायावृत्तिसे व्यर्थही भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलियेमिथ्याभाषणकरके यहभी छबीशवींबडीभूलकीहै

२७-श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यवासका खंडन करतेथे, इसलिये चैत्यवासियोंने महाराजको शहरमें ठहरनेको जगह नहीं दी और द्वेषबुद्धिसे चामुडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका बतला-

था तब महाराज तो यहांही ठहरकर अनेक प्रकारके तप सहन क रतेहुएभी भव्यजीवोंके उपकारकेलिये जिनाज्ञानुसार सत्यबातें लो गोंको बतलाते रहे, और चैत्यमें ठहरने वगैरह चैत्यवासियोंकी क ल्पित बातोंका खंडन करते रहे, यह बात 'गणधर सार्धशतक' प्र थकी लघुवृत्ति तथा बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासा लिखी है। जिसपरभी उपर मुजब चैत्यवासियोंकी भूलोंको तथा जिनाज्ञानुसार सत्य बातोंके प्रसगको मायावृत्तिसे छुपा करके 'अपना नवीन मत स्थापन करनेकेलिये चामुंडिकादेवीके मंदिरमें ठहरेथे' ऐसा प्रत्यक्ष मिथ्या लिखकर महाराजकी झूठी निंदा की, और दृष्टिरागी बाल जी वोंकोभी परम उपकारी युग प्रधान आचार्य महाराजके झूठे अवर्ण वाद बोलनेवाले बनाये यहभी सत्तावीशवी बडी भूलकी है।

२८ 'ये न शेष सूरीणामज्ञातसिद्धांतरहस्यानाम्' इत्यादि 'गणधर सार्धशतक' ग्रथकी १२२वीं गाथाकी लघुवृत्ति तथा बृह द्वृत्तिके यह वाक्य सिद्धांतकेरहस्यको नहीं जाननेवाले द्रव्यलिं गी चैत्यवासियों सबधी है, मगर पहिले होगये उन सर्व पूर्वाचा र्योसबधी नहींहै, जिसपरभी 'पहिले जितने आचार्य होगये है, उन सबोंको सिद्धातके रहस्यको नहीं जाननेवाले ठहराकर जिनवल्लभसू रिजीने छठा कल्याणक नवीन प्रकाशित किया' ऐसा अर्थ कहते हैं। सो अपनी विद्वत्ताकी लघुताकारक अपनी अज्ञानता प्रकट करतेहै। क्योंकि 'शेष' कहनेसे सिद्धातके रहस्यको जानने वाले सब पूर्वा चार्योंको छोडकर सिद्धातके रहस्यको नहीं जानने वाले बाकीके अ ज्ञानियोंका ग्रहण होताहै, और 'अशेष' कहनेसे सबका ग्रहण होस कताहै, मगर यहांतो 'अशेष' शब्द नहींहै, किंतु 'शेष' शब्दहै, इ सलिये सर्व पूर्वाचार्योंका ग्रहण नहीं होसकता, जिसपरभी सर्वपूर्वा चार्योंका ग्रहणकरतेहै, सो 'शेष' शब्दके अर्थकोभी नहीं जाननेवाले अपनी अज्ञानतासे शास्त्रोंके खोटे २ अर्थ करके, यहभी अठ्ठावीशवी बडी भूलकी है। इस बातकोभी विशेष विवेकी तत्त्वज्ञ विद्वान् लोग स्वय विचार सकते है।

देखिये-खरतरगच्छ वालोंने अपने पूर्वाचार्योंके चारित्रोंमे, जैसे-श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज सबधी 'श्रीस्थभन पार्श्वनाथ प्रक ट कर्ता' तथा 'श्रीनवागी वृत्ति कर्त्ता' वगैरह बातें, उन महाराजने जैनसमाजपर किए हुए उपकारोंकी यादगिरिकेलिये प्रसशारूप लि खीहै। तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज सबधीभी 'दश सह

स नवीनश्रावक तथा चामुंडिका देवी प्रतिबोधक ' 'चैत्यवास शिथि लाचार निषेधक ' ' षट्‌ कल्याणक प्रकट कर्ता ' वगैरह बातेंभी इन महाराजने जैनसमाजपर किये हुए उपकारोंकी याद गिरिकेलिये प्रसशारूप लिखी हैं, सो नवीन कल्पित नहीं, किंतु शास्त्रानुसार प्राचीनहीहै इसलिये प्रसशारूप लिखी है । जिसका मर्मभेद समझेबिना, ' गणधर सार्द्ध शतक ' ग्रंथकी लघुवृत्ति तथा बृहद्वृत्तिके ' यो न शेषसूरीणा ' इत्यादि पाठोंके ऊपर मुजब सत्यअर्थोंको छुपाकरके अपनी मतिकल्पना मुजब खोटे खोटे अर्थकरके भोले जीवोंको मिथ्यात्वके उन्मार्गमें गेरनेकेलिये धर्मसागरजीकी अंध परपरावाले उनकी देखा देखी वर्तमानिक न्यायांभोनिधिजी, शास्त्र विशारदजी, न्यायविशारदजी, विद्यासागर न्यायरत्नजी, जैनरत्न, व्याख्यानवाचस्पति, आगमोद्धारक,गीतार्थ,वगैरह विशेषणोंको धारणकरनेवाल आचार्य,उपाध्याय, प्रवर्त्तक,गणि,पन्यास,प्रसिद्धवक्ता, विद्वान्‌ मुनिजनआदि सर्व ऐसेही अनर्थ करते हुए चले जातेहैं और सामान्यविशेष बातका भेदसमझे बिनाही सर्वतीर्थंकर महाराजों संबधी'पचाशक सूत्रवृत्ति'का पाच कल्याणकों संबधी सामान्यपाठको आगे करके कल्प,स्थानांग,आचारागादिमें विशेषता पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणककहेहै,उन्होंका निषेधकरनेकेलिये आगमोंके अनादिसिद्ध च्यवनादि कल्याणक अर्थको उडा देतेहैं तथा जैसे यति मुनि साधु अणगार शब्द एकार्थके भावार्थवालेहैं,तैसेही च्यवनादि वस्तु स्थान कल्याणक शब्दभी एकार्थके भावार्थवालेहै, उसकाभेद समझे विना ही च्यवनादिकोंको वस्तु स्थान कहकर कल्याणकपने रहित ठहराते हैं। मगर दीर्घदृष्टिसे विवेकबुद्धिपूर्वक शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय तरफ उपयोग लगाकर सत्य तत्त्व बातका कोईभी विचार नहीं करतेहैं,यह अंधपरपराकी कितनी बडीभारी लज्जनीय अनुचित प्रवृत्तिहै इसकोविशेष विवेकीतत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयविचार सकतेहै।

औरभी देखिये विवेक बुद्धिसे खूब विचारकरीये, यदि नीचगोत्र कर्मविपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहनेसे कल्याणकपनेका निषेध हो सकता होवे, तबतो आषाढशुदी ६ को देवानदामाताके गर्भमें भगवान्‌आये,सोही नीचगोत्र कर्मविपाकरूप होनेसे कल्पसूत्रादि शास्त्रोंमें उनको आश्चर्यकहाहै,इसलिये तुम्हारे मंतव्य मुजबतो उनकोभी कल्याणकपनेका निषेध हो जावेगा और विशेष अधिक आश्चर्यकारक दूसरे च्यवनकी तरह प्रथमच्यवनभी कल्याणकपनें रहित होनेसे ग्रो

पर्यायवाचि ४ कल्याणकही रहजायेंगे और नीचगोत्रके विपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहते हुएभी प्रथम च्यवनमें कल्याणकपना मानोंगे,तो नीचगोत्र विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर दूसरे च्यवनरूप गर्भा पहारको कल्याणकपने रहित ठहराया सो प्रत्यक्षमिथ्या व्यर्थही झूठा आग्रह सिद्ध होवेगा इसलिये ऐसे झूठे आग्रहसे भोले जीवोंको स दायरूप मिथ्यात्वके भ्रममें गेरकर भगवानकी आशातनाका हेतुभूत अनर्थ करना सर्वथा योग्य नहीं है किंतु प्रथम च्यवनमें कल्याणक पना माननेकी तरहही दूसरे च्यवनमेंभी कल्याणकपना आगमादि शास्त्रप्रमाण तथा युक्तिसम्मत होनेसे आत्मार्थियोंको अवश्यही मान्यकरना उचितहै,इसको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचारसक्तेहैं।

औरभी प्रत्यक्ष शास्त्रप्रमाण देखिये-कल्पसूत्रकी सर्व टीकायें वगैरह बहुतशास्त्रोंमें श्रीजंबूस्वामिके निर्वाणगयेबाद दश(१०) वस्तु विच्छेद होनेका लिखाहै उसमें केवलज्ञान,केवलदर्शन, यथाख्यात चारित्र,मुक्तिगमन वगैरह बातोंकोभी वस्तु कहाहै और 'गुणस्थान क्रमारोह'वगैरह शास्त्रोंमेंभी केवलज्ञान उत्पन्नहोनेको,तथा मुक्तिगम नको १३-१४ वा गुणस्थान कहाहै इसी तरहसे इन शास्त्रप्रमाण मु जबभी तीर्थकर भगवानके केवलज्ञान उत्पन्न होनेको तथा मुक्तिगम न निर्वाणको वस्तु कहो या स्थान कहो और उन्होंकोंही केवलज्ञान तथा निर्वाण कल्याणकभी मानो,तो भी इस बातमें कोई तरहका वि रोधभाव नहींहै, इसलिये च्यवनादिकोंको वस्तु कहो, या स्थान क हो, वा कल्याणककहो, सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकहीहै जिस परभी वस्तु स्थान कहकर कल्याणकपनेका निषेध करनेवाले अपनी अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करके भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गे रते हैं, और अपनी आत्माकोभी उत्सूत्र प्ररूपणाके दोषसे मलीन करते हैं इसबातकोंभी विवेकी तत्त्वज्ञजन स्वयं विचार सकते हैं।

और तीर्थकरभगवानके च्यवनादिकोंको कल्याणकपना आगमानु सार अनादिसिद्धहै, उन्हीं च्यवनादिकोंको शास्त्रोंमें एक जगह स्था न कहे,दूसरी जगह वस्तु कहे, तीसरी जगह कल्याणक कहे, इससे भी वस्तु स्थान कल्याणक यह तीनों शब्द पर्यायवाचक एकार्थवाले सिद्ध होतेहै जिसपरभी वस्तु स्थान शब्द देखकर अनादिसिद्ध च्य वनादिमें कल्याणक अर्थको उडादेना सो अपने झूठे पक्षपातके आग्र हसे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेरूप यह कितनी बडी भूल है इसको

आत्मार्थी विवेकी तत्त्वज्ञ पाठक जन स्वय विचार सकते है। -

छ कल्याणक सबधी ऊपरके संक्षिप्त लेखसेभी जो आत्मार्थी सत्य ग्रहण करने वाले निकट भव्य होंगे, वह तो थोडेसेमेंही सार समझ लेवेंगे,कि गर्भापहारको अलग भव गिननेसे तथा त्रिशलामाताने सर्व तीर्थकर माताओंकी तरह आकाशसे उतरते हुए १४ महास्वप्न देखने वगैरह कार्योंसे दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेकी उत्तमताको छुपाकरके व्यर्थही छठे कल्याणककी निंदा करना सर्वथा योग्यनहींहै और शास्त्रोंकेअर्थ बदलकरके उत्सूत्रप्ररूपणासे व कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंकोभी उत्तम कार्यके हेतुभूत गर्भापहारकी निंदा करवाने वाले बनवाकर तीर्थकर भगवानकी आशातनासे भवहार जानेका कारण कराना कदापि योग्य नहींहै। ऊपरकी इन सब बातोंका विशेष निर्णय शास्त्रोंके सपूर्ण पाठोंके प्रमाणोंसहित इस ग्रथके पृष्ठ ४५२ से-८२६ तक छप चुका है, सो तीसरे भागमें प्रकट होगा उसके वाचनेसे सर्व शकाओंका खुलासा समाधान अच्छी तरहसे होजावेगा।

और शासन नायक श्रीमहावीरस्वामि आदि सर्व तीर्थकर महाराजोंके चरित्र भव्यजीवोंको कर्मोंकी निर्जरा करानेवाले कल्याणकारक मगलरूपही है, इसलिये पर्युषणाके मगलिक पर्व दिनोंमें आत्मकल्याणके लिये वाचनेमेंआतेहैं और श्रीमहावीरस्वामिके गर्भापहाररूप दूसरा च्यवनका कार्य तो त्रिशलामाता, सिद्धार्थपिता, व इन्द्रमहाराज वगैरह सर्व जीवोंको कल्याण मगलरूप हर्षका देने वालाहुआहै। तथा उनका आराधन करनेवाले अल्पससारी आत्मार्थी भव्यजीवोंकोभी अभिमानरहित कर्मोंकी विचित्रताकी भावनासे कर्मोंकी निर्जरा करानेवाला कल्याणकारक मगलरूपहोता है। मगर गर्भापहारके नाम सुननेमात्रसेही चमकउठनेवाले और उसको नीच गोत्रविपाकरूप,आश्चर्यरूप अतीवनिंदनीककहकरनिंदा करनेवालोंको तीर्थकरभगवानके अवर्णवाद बोलनेसेससारपरिभ्रमणके बहुतविशेष दु ख भोगनेवाकी होंगे,इसलिये उन्होंको वो कार्य अमगलरूप अकल्याणरूप मालूमपडता होगा। इससे उनकार्यसे द्वेषरखकर वर्षो वर्ष पर्युषणाके मागलिकरूप कल्याणकारक पर्वदिनोंके व्याख्यानमें उनकी निंदा करते हुए अकल्याणरूप अतिनिंदनीक ठहराकार तीर्थकर भगवानकी आशातना करनेसे अपनेको और दूसरे भव्य जीवोंकेभी अकल्याणरूप दुर्लभबोधिका हेतुकरतेहैं, ऐसी २ अनर्थभूत अनुचित बातोंसेही 'सुबोधिका' नाम रक्खाहै। मगर वास्तविक में

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मा र्थी तत्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे ।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा । कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे उसकाअनु भवतो सुबोधिका-किरणावलीआदिककी २८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये ' एक बात उत्था पन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं ' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है ।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झू ठा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके- लिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा ज यविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्र ही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष बाचते हैं उससे जिनाज्ञा की विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ हो ताहै इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्ण य इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है । उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वाचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसं बंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, ह रिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति

ज्ञापूर्वक शास्त्रार्थ करनेको तैयारहो, हमने तो इनका सत्य निर्णय अच्छी तरहसे करालियाहै, तोभी इन शास्त्रार्थमें सत्यनिर्णय ठहरेगा सो मंजूर है, इसलिये जो महाशय ऊपरकी भूलोंसबंधी शास्त्रार्थ करना चाहते होवें, वो अपनी सहीसे अपना प्रतिज्ञा पत्र जाहिर रूपसे हमको भेजें समय, स्थान, नियम, साक्षि वगैरहकी व्यवस्था तो सब के अनुकूल उसी राज्यके नियममुजब होसकेगी, विशेष क्या लिखें।

पर्युषणा संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार

१- जैनटिप्पणाके अभावसे लौकिक टिप्पणामुजब मास पक्ष तिथि-वर्ष वगैरह माननेका व्यवहार करना और पर्युषणादि धार्मिक कार्योंका व्यवहार जैन सिद्धांतोंके अनुसार करना तथा जैनसिद्धांतोंके अनुसार या लौकिक टिप्पणाके अनुसारभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको दान, पुण्य, परोपकार, जप, तप, धर्म ध्यानादि करनेमें व ब्रह्मचर्य पालनेमें या देशविरती-सर्वविरती संयम पालनेमें, तथा कर्मबंधनकी स्थितिके प्रमाणमें और कर्मोंकी निर्जरा करने वगैरह कार्योंमें गिनतीमें लियेजातेहैं, तैसेही ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व का आराधन करनेमेंभी उसके३० दिन गिनतीमें लेकर खरतरगच्छ, तपगच्छादिककी कल्पसूत्रकी टीकाओंके " पचाशतैव दिनै पर्युषणा संगतेति वृद्धा " इसवाक्यमुजब अभी दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वकरना, यही शास्त्रानुसार जिनाज्ञा है।

२- मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेकी जगह दूसरे महीनेमेंभी करनेमें आवे, तो भी कोई शास्त्रमें उनका दोष नहीं बतलाया मगर पर्युषणापर्व करनेमें तो ५०दिनकी जगह ५१दिनभी कभी नहींहोसकते, इसलिये बिनामुहूर्त्तवाले ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ मास प्रतिबद्ध या मुहूर्त्त प्रतिबद्ध होली, ओली, दीवाली, दशहरा, अक्षयतृतीया, पौष-श्रावणादिक महिनोंके कल्याणकादितप, या यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह सादी वगैरह कोईभी कार्योंका संबंध नहीं है। जिसपरभी दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व आराधन करनेकी चर्चामें मासप्रतिबद्ध या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंकी बात बीचमें लाते हैं वो लोग पर्युषणापर्वकरने संबंधी शास्त्रकार महाराजोंका आशय नहीं जानने वाले होनेसे, शास्त्रोंकी आज्ञा विरुद्ध होकर व्यर्थही कुयुक्तियोंसे विपर्यातर करके भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं।

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मा र्थी तत्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे ।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा । कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी । कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे उसकाअनु भवतो सुबोधिक-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये ' एक बात उत्था पन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं ' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है ।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झू ठा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके लिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा ज यविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्र ही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष बाचते हैं उससे जिनाज्ञा की विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ हो ताहै इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्ण य इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है । उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वाचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसं बंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, ह रिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति

छ कल्याणको संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार

१- कल्पसूत्र तथा आचाराग सूत्रादि आगमानुसार विशेषतासे श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकमान्य करने,और अतित अनागत वर्तमानकालके सर्वतीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासंबधी सा मान्यतासे पचाशकादि शास्त्रानुसार पाचकल्याणकभी मान्य करने, इनमें कोई दोप नहींहै मगर कितनेक लोग शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको नहीं जाननेसे पचाशकके पाच कल्याणकों संबधी सा मान्य पाठको भोले जीवोंको बतलाकर,विशेपतासे कल्प-आचारा गादि आगमोक्त छ कल्याणकोंका निपेध करते हैं, सो अज्ञानतासे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते है।

२- श्रीऋषभदेवस्वामिके राज्याभिपेकके कार्यमें तो च्यवन जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणकके कुछभी लक्षण नहीं हैं, तथा उनके मास,पक्ष,तिथि वगैरहकाभीकहीं उल्लेखनहींहै और श्रीमहावीरस्वा मिके दूसरे च्यवनरूप गर्भापहारके कार्यमें तो सर्व तीर्थंकर महारा जोंकी माताओंकी तरह त्रिशला मातानेभी १४ महास्वप्न आकाश से उतरते हुए देखेहैं, तथा उसी दिन इन्द्रमहाराजका त्रिशलामाता केपास आगमनहुआहे, तीर्थंकर पुत्र होनेका स्वप्नफल कहाहै,व उ नके मास पक्ष तिथि वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य प्रत्यक्षप ने शास्त्रोंमें कथन किये हुए हैं और समवायागसूत्रवृत्ति, लोकप्रका शादिशास्त्रोंमें उनको अलग भव गिनतीमेंलियाहै,इसलिये गर्भापहा ररूप दूसरे च्यवनके कार्यमें तो च्यवन कल्याणकपनेके सर्व लक्षण मौजूद हैं,जिसपरभी राज्याभिपेकके समान गर्भापहारकोभी ठहरते हैं, और उनको कल्याणकपने रहित कहतेंहै सो सर्वथा अनुचितहै।

३- श्रीमल्लीनाथस्वामिके स्त्रीत्वपनेमें तीर्थंकरपनेके जन्म दीक्षादि कार्य अच्छेरारूप हुए हैं, तो भी उन्होंकोही कल्याणकपना माननेमें आताहै तथा श्रीमहावीरस्वामि भगवानभी ब्राह्मण कुलमें देवानंदा माताके गर्भमें उत्पन्न हुए सो अच्छेरा रूपहै, तो भी उनको प्रथम च्यवनरूप कल्याणकपना मानते ह । तैसेही गर्भापहाररूप आश्चर्य को भी दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना माननेमें आता है, इसलिये आश्चर्य कहनेसे कल्याणकपना निपेध नहीं हो सकता जिसपरभी आश्चर्य कहकर कल्याणकपनेका जो निपेध करतेहैं, वो लोग अपनी अज्ञानतासे बडी भूल करते हैं।

३- अधिक महीनेके अभावसंबंधी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेके व उसकेपीछे ७० दिन रहनेके और १२ मासी क्षामणे वगैरहके सामान्यपाठोंको अधिकमहीना होवे तबभी आगेलातेहैं। और अधिकमहीनेसंबंधी " पंचाशतैव दिनै पर्युषणा संगतेति वृद्धा " कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके इस विशेषपाठको, तथा स्थानांगसूत्रवृत्ति, निशीथ चूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि,वृत्ति, पर्युषणाकल्प चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके १०० दिन रहने संबंधीआदि विशेषताके पाठोंकी सत्यबातोंको छुपाकरके छोड देते हैं, सो यह सर्वथा अनुचित है।

४- धार्मिक कार्य करनेमें १२ महीनोंके सर्व दिन, या अधिक महीना होवे तब १३महीनोंकेभी सर्व दिन, या क्षय महीनेकेभी सर्व दिन बरोबर समानही हैं, उनमें कर्मबंधनके संसारिक कार्य और कर्म निजराके धार्मिक कार्य हमेशा बराबर होते रहते हैं, इसलिये तत्त्वदृष्टिसे तो उनमेंसे एक समय मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता जिसपरभी कातिकादि क्षयमहीनेके ३० दिनोंमें दीवाली, ज्ञान पंचमी, चोमासी वगैरह धार्मिक कार्य करते हुएभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको तुच्छ समझकर बडी निंदा करते हैं, या कालचूलाके नामसे गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं, सो सर्वथा जिनाज्ञाका उत्थापन करते हैं।

५— जैन ज्योतिषविषयसंबंधी प्ररूपणा आगमानुसार करनी ओर श्रद्धाभी उसीमुजबरखनी ,परंतु अभी पडताकालमें जैनटिप्पणा बंध होनेसे उस मुजब व्यवहार नहींकरसकते ओर लौकिकटिप्पणा मुजब व्यवहार करनेमें आता है। इसलिये अभी जैन शास्त्रमुजब पोष आषाढ अधिक होनेसंबंधी पाठ बतलाकर लौकिक टिप्पणासंबंधी चैत्र श्रावणादि अधिकमहीने मान्यकरनेका निषेध नहीं करसकते। ओर जैसे जिनकल्पी व्यवहार अभी विच्छेद हे तोभी उन्हकी प्ररूपणाकरनेमें आतीहै, तेसेही पौष आषाढ बढनेकी प्ररूपणा तो शास्त्रानुसार करसकते हैं, मगर मास पक्ष तिथि वगैरहका वर्ताव तो लौकिक टिप्पणा मुजबही करना योग्य हे।

इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे हो चुका है। यहां तो उसका संक्षिप्तसार मात्रही बतलाया है मगर विशेष निर्णय करनेकी अभिलाषावाले पाठकगण इसग्रंथको संपूरणतया वांचेंगेतो सबखुलासा हो जावेगा

पाठजानलेना देखो जिसरात्रिको तीर्थकरभगवान माताकेगर्भमेंआक र उत्पन्नहोवें,उसरात्रिको उन्होंकीमाता गर्भकाले अर्थात् च्यवन कल्याणक समय सर्व तीर्थकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। ऐसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिशलामाताने भी १४महास्वप्न देखे ह। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तरहसे तत्वदृष्टिसे विचारकिया जावे तो-अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये, उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टीकाकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थकर महाराजोंके च्यवन कल्याणकमें इन्द्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुण'करना। तनिजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व ससारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्यों कि देखो- आषाढ शुद्ध ६ को भगवान देवानदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत्त ब्राह्मणको कहे, उनने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अगीकार किया और उसके बाद दोनो दपति ससारिक सुखभोगते हुए काल व्यतीत करने लगे इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुण वगैरह कोइभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र सबधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता और त्रिशिलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुण' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुण' होनेका पाठ है, सो आषाढ शुदी ६ के दिन सबधी नहीं है, किंतु

४- देवानंदामाताकी कुक्षिमें भगवान आये सो ही नीचगोत्र कर्म विपाकरूपहै, उसका क्षय हुए बाद उच्चगोत्रके कर्मका उदय होनेसेही गर्भापहार करनापडाहै, तो भी शास्त्रकार महाराजोंने तो देवानन्दाकी कुक्षिमे आनेको तथा त्रिशलामाताकी कुक्षिमें आनेको, इन दोनों का योंका तीर्थंकर भगवानके चरित्रमें उत्तमतापूर्वक कल्याणकारक माने हैं। जिसपरभी त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको नीचगोत्र कर्म विपाकरूप अतिनिंद्यनीय कहकर जो लोग वर्षोंवर्ष पर्युषणाके माग लिए वर्षे दिनोंक व्याख्यानमें प्रत्यक्ष झूठ बोलकर भगवानकी निंदा करतेहै, सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद बोलनेवाले होनेसे आशा तनाके दोषी ठहरते है।

५- जैसे श्रीअभयदेवसूरिजीमहाराजने श्रीस्थम्भनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट किया, उनका आशय समझेविना कितनेक ढूंढिये व तेरहापंथी लोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कहै, तो उन्होंकी अज्ञानता समझी जावे मगर तत्त्वदृष्टिवाले विवेकीलोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीनही कहेंगे। तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी छठ कल्याणकको प्रकट किया, उनका आशय समझेविना कितनेक लोग उनकी नवीन प्ररूपणा कहते हैं, वो उन्होंकी अज्ञानता समझनी चाहिये मगर तत्त्व दृष्टिवाले विवेकीलोग उनकी नवीन प्ररूपणाकभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीन ही कहेंगे

६- भगवानके शरीर इन्द्रीय पर्याप्तिके अवयव [पुद्गलपरमाणु] देवानंदामाताके शरीरसे बने हुए थे, और उसी शरीरसे त्रिशला माताके गर्भमें भगवान् आगयेथे, यहबात आश्चर्यकारक होनेसे शरीर इन्द्रीय पर्याप्ति बदले बिनाभी शास्त्रकार महाराजोंने उनको अलग भव गिना है। उनमें प्रत्यक्षपने च्यवन कल्याणकपना दिखलानेके लियेही खास कल्पसूत्रके मूलपाठमें त्रिशलामाताने १४ स्वप्न देखेहै उन सबधी "ए ए चउदस सुमिणे, सव्वा पासेइ तित्थयर माया। ज रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरिहा ४७॥" यह पाठ लिखा है, और इसपाठकी सुबोधिका टीकामें इस प्रकार व्याख्या किया है "अत्र प्रसंगेन एतेषां स्वप्नाना गर्भकाले सकलजिनराजजननीविलोकनीयत्व दर्शयन्नाह एतान् चतुर्दश स्वप्नान्, सर्वा पश्यति तीर्थंकर मातर। यस्या रजन्या उत्पद्यते, कुक्षौ महायशसः अर्हन्तः ॥४७॥ इसी तरहसेही सर्व टीकाओंमेभी ऐसेही भावार्थका

पाठजानलेना देखो जिसरात्रिको तीर्थंकरभगवान माताकेगर्भमेंआक र उत्पन्नहोवें,उसरात्रिको उन्होंकीमाता गर्भकाले अर्थात् च्यवन कल्याणक समय सर्व तीर्थंकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। ऐसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिशलामातानेंभी १४महास्वप्न देखे हैं। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तरह से तत्त्वदृष्टिसे विचारकिया जावे तो-अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये, उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टीकाकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणकमें इन्द्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुण'करना। तनिजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व ससारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्योंकि देखो- आषाढ शुद्ध ६ को भगवान देवानंदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानंदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत्त ब्राह्मणको कहे, उनने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अंगीकार किया और उसके बाद दोनो दंपति संसारिक सुखभोगते हुए काल व्यतीत करने लगे इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानंदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुण वगैरह कोईभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र संबंधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता और त्रिशिलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुण' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुण' होनेका पाठ है, सो आषाढ शुदी ६ के दिन संबंधी नहीं है, किंतु

आसोज वदी १३ के दिन सबधी है, ऐसा समझना चाहिये क्योंकि देखो— इन्द्रमहाराजने भगवानको नमुत्थुण करके अपने सिंहासन पर बैठकर, प्राचीन कर्म उदयसे देवानंदाके गर्भमें भगवानको अ वतार होना पड़ा, ऐसा अच्छेराहूप विचारके हरिणैगमेषिदेवको आ ज्ञाकरके आसोज वदी १३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवानको स क्रमण करवाया, इसलिये यह सबबातें आसोज वदी १३को उसी स मय हुईहैं, इसलिये ८२दिन तकतो इन्द्रमहाराजका आसन चलाय मान नहीं होनेसे भगवान देवानंदाके गर्भमें उत्पन्नहुएहैं,ऐसा मालू मभी नहीं पड़ा,मगर सपूर्ण ८२ दिन गये बाद अवधिज्ञानसे मालूम पड़ा, तब हर्षसे विधिपूर्वक नमस्कार रूप नमुत्थुण किया और त्रि शलामाताके गर्भमें पधराये। इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आने के दिन आसोज वदी १३ को नमुत्थुण करनेका कल्पसूत्रादि आग मानुसार प्रत्यक्षही सिद्ध होताहै,और तीर्थंकर भगवान माताके ग र्भमें आकर उत्पन्न होवें, तब इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूम पडे, उसी समय ' नमुत्थु णं' रूप नमस्कार करनेकी आगमानुसार अनादि मर्यादा है, मगर उस समय वहां सामान्य नमस्कार करने की मर्यादा नहींहै। इसलिये 'महापुरुष चरित्र' में और ' श्रीत्रिषष्ठि शलाका पुरुषचरित्र ' के १० वें पर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरित्रमें आसोज वदी१३को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अव धिज्ञानसे भगवानको देवानंदाके गर्भमें देखकर नमस्कार किया ऐसा अधिकारहै, सो नमुत्थुण रूप नमस्कार करनेका समझना चाहिये मगर सामान्य नमस्कार करनेका नहीं समझना। और तीर्थंकर भग वानके च्यवन समये इन्द्रमहाराज नमुत्थुणरूप नमस्कार हमेशा करतेहैं,तथा उसीसमय तीनजगतमें उद्योत,और सर्व जीवोंको क्षण मात्र सुखकी प्राप्ति होती है,उन्होंकाही च्यवन कल्याणक मानते हैं, यही सर्व कार्य आसोज वदी १३ के रोज होनेका ऊपरके लेखसे आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसार सिद्ध होताहै और समवायांग सूत्र वृत्ति वगैरह आगमादि शास्त्रोंमें त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज व दी १३ को भगवान आये उन्होंकोही तीर्थंकर पनेके भवमें गिना है, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको आसोज वदी १३ के रोज दूसरा च्यवनरूप कल्याणक पना मान्य करना आत्मार्थी निकट भ व्य जीवोंको उचितहीहै जिसपरभी उनको कल्याणकपनेका निषेध करनेके लिये देवानंदाके १४ महास्वप्न त्रिशलासे हरण हुए हैं, इस

लिये वो कल्याणक नहीं होसकता ऐसा कहनेवालोंकी बडी अज्ञा नताहे, क्योंकि देखो- जैसे देवानदाने मेरे १४ महा स्वप्न त्रिशला ने हरण किये ऐसा स्वप्न देखा, वैसेही त्रिशलाभी मैंने देवानदाके १४ महा स्वप्न हरण कियेहैं, वैसा सिर्फ एकहीस्वप्न देखती और च्यवन कल्याणककी सिद्धि बतलानेवाले नमुत्थुण वगेरह अन्य कोई भी कार्य उसीरोज न होते तथा कल्पसूत्रमेंभी "एए चउदस सुमिणा, सव्वा पासेइ तित्थयरमाया । ज रयणि वक्कमई कुच्छिसि,महायसो अरिहा" यहपाठ अनादि मर्यादामुजब त्रिशला सबधी न कहकर दे वानदा सबधी कहते और पार्श्वनाथस्वामिके तथा नेमिनाथस्वामिके च्यवन कल्याणक सबधी उन्होंकी माताओंने १४महास्वप्न देखे,उसी समय इन्द्रकाआसन चलाय मान हुआ, तबविधिपूर्वक हपसे नमुत्थुण किया और प्रभातमें राजाओंने स्वप्न पाठकोंको बुलाकर स्वप्नोंका फल पूछा, तव स्वप्न पाठकोंने १४ महास्वप्न देखनेंस रागद्वेपको जितनवाले जिने,त्रैलोक्य पूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा इत्या दि च्यवन कल्याणकके कार्योंकी भलामणभी त्रिशला सबधी न दे कर देवानदा सबधी देते और आषाढ शुदी६ को ही नमुत्थुण होने वगैरह उपरके तमाम कार्योंका उल्लेख कल्पसूत्रादिमें शास्त्रकार कर ते,व समवायागसूत्रवृत्तिमें अलग भवभी न गिनते और आसोज व दी१३को नमुत्थुण वगेरह च्यवन कल्याणकके कोईभी कार्य नहीं हो- ते,तबतो त्रिशलाके गर्भमें आनेको च्यवनकल्याणक नहींमानते तो भी चल सकता,मगर ऐसा नहींहे,और आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुण व गैरह च्यवन कल्याणकके कार्य नहीं हुए, किंतु आसोज वदी १३को हुए हे इसलिये आसोज वदी १३को ही च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे उनको अवश्यही कल्याणकपना मान्य करना योग्य है। और स्वप्न हरण वगरहके बहानेसे कल्याणकपना निषेध करना सो अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करना योग्यनहींहे और जन्म त्रि शलामाताकेगर्भसे हुआहै,तथा च्यवनकल्याणकके सर्वकार्यभी त्रिश लाके गर्भमेंआये तबहुएहें इसलिये त्रिशलाके गर्भमें आनेरूप च्यवन माननाही आगम प्रमाण अनुसार और युक्तियुक्तहै,च्यवनके सिवाय जन्मभी नहींमानसकते यह जगत विख्यात प्रसिद्ध न्यायका बातहै त्रिशलाके गर्भमें आये तब अनादि मर्यादामुजब च्यवन कल्याणकके सर्वकार्य खाससूत्रकारनेलिखेहें जिसपरभी उन्होंको उत्थापनकरके अकल्याणकरूप ठहरानेके लिये उसबातको निंदनीक कहकर बाल

जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेका अनर्थ करना सर्वथा अनुचितहै और जैसे-देवलोकसे च्यवन हुए बाद तथा माताके गर्भमें अवतार लेवेबाद नमुत्थुण वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य होते हैं, तो भी 'कारणमें कार्यका उपचार' होता है, इसलिये च्यवनसमय नमुत्थुण वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है। तैसेही यद्यपि देवानंदामाता के गर्भमें नमुत्थुण हुआ तो भी आषाढसुदीके दिननहीं, किंतु आसोज वदी १३ के दिन हुआहै, तथा उसी समय त्रिशला माताके गर्भ में जानेका होनेसे उन्होंके निमित्त भूतही 'कारणमें कार्यका उपचार' मानकर त्रिशला माताके गर्भमें आने संबधी नमुत्थुण वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है और इंद्रमहाराज भगवान्के विनयवान भक्त थे इसलिये अवधिज्ञानसे भगवान्को देखतेही उससमय नमुत्थुण किया और त्रिशला माताके गर्भमें पधराये यदि भगवान्को अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें देखकर त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये बाद पीछेसे नमुत्थुणकरते तो विनयभक्तिरूप मर्यादाकाभंग होता, इसलिये विनय भक्तिरूप मर्यादा रखनेकेलिये पहिले नमुत्थुण किया और पीछे त्रिशलामाताकेगर्भमें पधराये देखो, जैसे कोई राजा महाराजा भगवान्का आगमनसुनने मात्रसेही हर्षयुक्त होकर उसी समय उसी दिशा तरफ पहिले वहांसेही भगवान्को नमस्कारकरते हैं, और बादमें भगवानके पास वहां जाकर उचित भक्ति करते हैं। तैसेही इंद्रमहाराजनेभी अवधिज्ञानसे भगवानको देखतेही वहांसे नमुत्थुणरूप नमस्कारकिया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये, बाद त्रिशला माताके पासमें आकर तीन जगतके पूजनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा और देवताओंको आज्ञा करके धनधान्यादिककी वृद्धि करवाने वगैरह कार्योंसे भगवानकी उचित भक्ती करी। यह सर्व कार्य आसोजवदी१३के दिन हुएहैं इसलिये कारणमें कार्यका उपचार माननेसे नमुत्थुण वगैरह तमाम कार्य त्रिशलामाताके गर्भमें आने संबधी समझने चाहिये जिसपरभी देवानंदाके गर्भमें नमुत्थुण होने-का कहकर त्रिशलाके गर्भमें आनेसंबधी आसोज वदी १३के दिनको च्यवन कल्याणकपने रहित कहतेहैं उन्होंकी अज्ञानता है।

और जोबातनहीं बननेवालीहोवे, असंगतीरूप या असंभवित होवे, वोही बात कभी कालांतरमें बनजावे, उन्हीं बातको शास्त्रों में आश्चर्य कारक अच्छेरारूप कहते हैं। इसलिये जिसबातको अच्छेरा कह दिया, उस बातमें अन्य शास्त्र प्रमाणकी मर्यादा बाधक

नहीं हो सकती इसी तरहसे भगवानकेभी देवानदा माता तथा त्रिशलामाता दोनोंका गर्भकाल मिलकर ९ महीने और ऊपर ७॥ दिन मानतेहैं, मगर देवानदाके गर्भमें आनेको शास्त्रकारोंने अच्छेरा कहा है और ८२ दिन गये वाद त्रिशलाके गर्भमें आनेको तीर्थंकर पनेके भवमें गिनाहै,इसलिय देवानदाके गर्भमें आये तव च्यवन कल्याणक के सर्वकार्य नहीं हुए, परतु त्रिशलाके गर्भमें आये तवही च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य हुए हैं तो भी देवानदाके गर्भमें भगवान आये तव माताने १४ महास्वप्न देखे,तथा ८२ दिनतक वहा विश्रामलिया और शरीर इन्द्रीय पर्याप्ति देवानदामाताके शरीरसे वने हैं इसलिये देवानदाके गर्भमें आनेकोभी भगवानके प्रथम च्यवनरूप कल्याणकपना मानते हैं। और जैसे-मारवाड,गुजरात,दक्षिण, पूर्व वगैरह देशोंमें पुत्रको दत्तक [गोद] लेनेमें आताहै, उनके पहिलेके मातापिता अलगहोतेहैं और पीछेपालने पोपनेवाले दूसरे मातापिता अलगहोते हैं, इसलिये उनके दो माता और दो पिता कहनेमें कोई दोप नहीं आता, मगर नाम पीछेवालोंका चलता है । तैसेही भगवानकेभी देवानदाके गर्भसे ८२दिन गये वाद आश्चर्यरूप त्रिशलाके गर्भमें आना पडा, उससे दो माता तथा दो पिता और दो च्यवन कल्याणक माननेमें आते हैं इसलिये दोनों माताओंका गर्भकाल मिलकर ९महीने और ७॥ दिन हुए हैं, तो भी दो च्यवन कल्याणक माननेमें कोईभी शास्त्र वाधा नहीं आ सकती और कोई कुयुक्ति व वितर्कभी वाधकनहीं होसकती, इस वातको विशेप तत्त्वज्ञजन स्वयविचार सकते हैं।

इन सर्ववातोंका विशेपनिर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रथमें अच्छीतरहसे सर्व शकाओंका निवारणपूर्वक खुलासा हो चुकाहै, यहा तो उसका सक्षिप्तसार वतलायाहै,और विशेप निर्णय करनेकी अभिलापावाले तत्त्वसारग्रहण करनेवाले पाठकगण इस ग्रथको सपूर्ण वाचेंगे तो सर्ववातोंका खुलासा अच्छी तरहसे होजावेगा

विवादवाले विपयों सवधी अभिप्राय

तपगच्छके श्रीमान् विजयधर्मसूरिजीके शिष्य श्रीमान् रत्नविजयजीने विवादवाले विपयों सवधी पोपशुदी २वुधवार, श्रीवीरनिर्वाण सवत् २४४३ के जैन शासन पत्रके पृष्ठ ५८८ में श्रीपार्श्वनाथ स्वामीकी परपरासवधी उपकेशगच्छ (कवलागच्छ) की हकीकत छपवाया है, उसका थोडासा उतारा यहापर वतलाते हैं ।

जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममेंगेरनेका अनर्थ करना सर्वथा अनुचितहै
और जैसे देवलोकसे च्यवन हुए बाद तथा माताके गर्भमें अवतार लेनेबाद नमुत्थुण वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य होते हैं, तो भी 'कारणमें कार्यका उपचार' होता है, इसलिये च्यवनसमय नमुत्थुण वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है। तैसेही यद्यपि देवानंदामाता के गर्भमें नमुत्थुण हुआ तो भी आषाढसुदीके दिननहीं, किन्तु आसोज वदी १३ के दिन हुआहै, तथा उसी समय त्रिशला माताके गर्भ में जानेका होनेसे उन्हींके निमित्त भूतही 'कारणमें कार्यका उपचार' मानकर त्रिशला माताके गर्भमें आने सबधी नमुत्थुण वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है और इन्द्रमहाराज भगवान्के विनयवान भक्त थे इसलिये अवधिज्ञानसे भगवान्को देखतेही उससमय नमुत्थुण किया और त्रिशला माताके गर्भमें पधराये यदि भगवान्को अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें देखकर त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये बाद पीछेसे नमुत्थुणकरते तो विनयभक्तिरूप मर्यादाकाभंग होता,इसलिये विनय भक्तिरूप मर्यादा रखनेकेलिये पहिले नमुत्थुण किया और पीछे त्रिशलामाताकेगर्भमें पधराये देखो,जैसे कोई राजा महाराजा भगवान्का आगमनसुनने मात्रसेही हर्षयुक्त होकर उसी समय उसी दिशा तरफ पहिले वहांसेही भगवान्को नमस्कारकरते हैं, और बादमें भगवानके पास वहां जाकर उचित भक्ति करते हैं। तैसेही इन्द्रमहाराजनेभी अवधिज्ञानसे भगवानको देखतेही वहांसे नमुत्थुणरूप नमस्कारकिया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये,बाद त्रिशला माताके पासमें आकर तीन जगतके पूजनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा और देवताओंको आज्ञा करके धनधान्यादिककी वृद्धि करवाने वगैरह कार्योंसे भगवानकी उचित भक्ती करी। यह सर्व कार्य आसोजवदी१३के दिन हुएहैं इसलिये कारणमें कार्यका उपचार माननेसे नमुत्थुण वगैरह तमाम कार्य त्रिशलामाताके गर्भमें आने सबधी समझने चाहिये जिसपरभी देवानंदाके गर्भमें नमुत्थुण होने का कहकर त्रिशलाके गर्भमें आनेसबधी आसोज वदी १३के दिनको च्यवन कल्याणकपने रहित कहतेहैं उन्होंकी अज्ञानता है।

और जोबातनहीं बननेवालीहोवे,असगतीरूप या असभवित होवे, वोही बात कभी कालांतरमें बनजावे, उन्हीं बातको शास्त्रों में आश्चर्य कारक अच्छेरारूप कहते हैं। इसलिये जिसबातको अच्छेरा कह दिया, उस बातमें अन्य शास्त्र प्रमाणकी मर्यादा बाधक

वांचेछे तथा चरित्रोना चरित्रो वाचेछे, ग्रथो वांचेछे ते घणेभागे खरतर गच्छना वनावेला ग्रथो छे, परस्पर गच्छवालाओ वाचे छे सर्व गच्छवालाओ श्रद्धाथी साभले छे ' पुरुप विश्वासे वचन वि श्वास' जेना वनावेला पुस्तको हाथमा लई सन्मुख धरी वाचो छो, अने मोढेथी तेज आचार्योनी वद वोई कराय आजे दादा साहेवने मानवा वाला चरण पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजा रो भाविक भक्तो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा ख रतरगच्छना हजारो भाविक भक्तोछे आवा शभु मेलामा खाली वि क्षेप पेदा करवाथी कोईनु कल्याण थवानु नथी इत्यादि

देखो-ऊपर मुजव खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेख-पर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्व-नाथस्वामिकी परपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयमेंही श्रीवीर प्रभुके २८ भव, तथा छ कल्याणक मानने वगैरह वातें प्रचलीतही थीं उन्हीके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्य वासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेपरूपसे प्रकटपने कथन की है। परतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की, जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझेविना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खो टे अर्थ करके नवीन छठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोप लगाते है सो प्रत्यक्षपणे मिथ्याभापणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भग करना और भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरना सर्वथा अनुचितहै।

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जेसे शासन प्रभावक परम उपकारी पुरुपोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररू णाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्म णादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिवोधकर जैनी श्रावक वनाये, उ न्होंकीही वश परपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मा रवाड, पूर्व, पजाव,दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मोजूद हैं। इसलिये उन महाराजोंने परपराके हिसावसे करोडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने सवधी वडाभारी महान् उपकार किया है। तथा विद्या,मत्र, देवसहाय,व सयमानुष्ठान आत्मशक्ति प्रकाशित कर के वहुत वडीभारी जैनशासनकी प्रभावना करी उन महाराजोंके प्रतिवोधे हुए श्रावकोंकी वश परपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमानिक

"श्रीरत्नप्रभसूरिजीकृत सामाचारीमां लख्युछे के पुष्पवती थया बाद स्त्रीने पूजा नहीं करवी आंबिलमां २-३ द्र. य करवे तथा देव गुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रनी टीकामां ६ कल्याणिक लख्या छे,पजोस णा ५० दिवसे करवा इत्यादि" तथा " वीर प्रभुना २८ भव लख्या छे, सुधर्मा, जंबु, प्रभव, सिज्जंभव ए चारना ८४ शाखा, ४० गण, ८ कुल थया आ सामाचारी तथा कल्प टीका हालना गच्छोथी घणी प्राचीन बनेली छे, प्राचीन समयथी ६ कल्याणिक, स्त्री पूजा निषेध विगेरे प्रवृत्तिओ चाली आवीछे, जिनदत्तसूरिजी, जिनवल्लभसूरिजी विगेराने लोको नाहीं निंदे छे, नथु कोईए कर्यु नथी पजोषण जे वा वीतराग पर्वमां कल्पसूत्रना मांगलिक व्याख्यानमां चतुर्विध श्रीसंघमां अकारण कलह करी जैनभाईयोना अंतकरण दुभावी ध र्मनी निंदा करावी वर्षोवर्ष अनी ये वातने ' अमृतदमोविचिच ' क रीने कितुना कलासमां दाखल करवी, ए कोइ रीते इच्छवा योग्य नथी, शासन प्रेमी महाशया आ बाबत बराबर समजी गया हश, [अय निजपरोवेत्ति, गणनालघु चेतसा। उदार चरिताना तु,वसुधैव कुटुंवकम् ॥१॥] आमां ' वसुधैव कुटुंबक ' ए वाक्य अत्यंत श्रेष्ट छे पण अने बदले ' सर्व गच्छ कुटुंबक ' एवु बनो,एज प्रार्थना,याचना अने सलाह 'यहीलेख उसीअरसेमे जैनपत्रमेंभी प्रकाशित होगयाहे औरभीजेठवदि१बुधवार वीर स०२४४४ के जनशासनपत्रकेपृष्ठ१६८ में श्रीरत्नविजयजीनें पर्युषणामें समभावरखनेसंबंधी लेख छपवाया था उसमेसे थोडासाबतलातेहै "दरेकगच्छनीपट्टावलीजुओ,तेमांपर स्पर पठनपाठन साथे रहेता वंदनादि व्यवहार करता,विनयमूल ध र्मनी पुष्टि करनाराहता,आजे विरोधभाव करनारा थीकनथीरास्रता खरतरगच्छना आचार्योने सत्कारआपनारा तपगच्छना साधुओहता अने तपगच्छनाआचार्योने बहुमान आपनारा खरतरगच्छनासाधुओ हता, तपगच्छना जेवा परम प्रभाविक पुरुषो थयाछे तेवाज खरतर गच्छमां परम प्रभाविक पुरुषो थया छे जिनदत्तसूरिजी, जिनकुशल सूरिजी जेणे सवालाखनवा जैनो बनाव्या,हजारोराजा महाराजाओने जैन धर्म अंगीकार कराव्यो, हजारो क्षत्रीयोने ओसवाल बनाव्या, जिनचंद्रसूरि,जिनहर्षसूरि जिनप्रभसूरि आदि अनेक प्रभाविक पुरुषो थया तेवा महा पुरुषोना अवर्णवाद बोलवा,आवते भवे जीभ पाम वी मुश्किल छे उपकारी नो उपकार रदी करवो महा भयकर पाप छे, एक खास मुद्दो तपासोके आजे साधुओ वखाणमां टीकाओ

वांचेछे तथा चरित्रोना चरित्रो वाचेछे, ग्रंथो वांचेछे ते घणेभागे खरतर गच्छना बनावेला ग्रंथो छे, परस्पर गच्छवालाओ वाचे छे सर्व गच्छवालाओ श्रद्धाथी साभले छे ' पुरुष विश्वासे वचन विश्वास' जेना बनावेला पुस्तको हाथमा लई सन्मुख धरी वाचो छो, अने मोढेथी तेज आचार्योनी वद वोई कराय आजे दादा साहेबने मानवा वाला चरण पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजारो भाविक भक्तो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा खरतरगच्छना हजारो भाविक भक्तोछे आवा शभु मेलामा खाली विक्षेप पेदा करवाथी कोईनु कल्याण थवानु नथी इत्यादि

देखो-ऊपर मुजब खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेख पर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी परपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयसेही श्रीवीर प्रभुके २८ भव, तथा छ कल्याणक मानने वगैरह वार्ते प्रचलीतही थी उन्हीके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्यवासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेषरूपसे प्रकटपने कथन की ह । परतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की, जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझेविना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके नवीन छठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोप लगाते ह सो प्रत्यक्षपणे मिथ्याभाषणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भग करना ओर भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरना सवथा अनुचितहै ।

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जैसे शासन प्रभावक परम उपकारी पुरुषोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररूपणाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्मणादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिबोधकर जैनी श्रावक बनाये, उन्होंकीही वश परपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मारवाड, पूर्व, पजाब,दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मौजूद हैं । इसलिये उन महाराजोंने परपराके हिसाबसे करोंडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने सबधी बडाभारी महान् उपकार किया है । तथा विद्या,मत्र, देवसाह्य,व सयमानुष्ठान आत्मशक्ति प्रकाशित करके बहुत बडीभारी जैनशासनकी प्रभावना करी उन महाराजोंके प्रतिबोधे हुए श्रावकोंकी वश परपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमानिक

सबगच्छवाले बहुतसाधुओंको आहार,पानी,तथा संयम उपकरणोंसे निर्वाह होता है। ऐसे महान् शासन प्रभावक परम उपकारी महाराजोंने पूर्वाचार्योंकी प्रवृत्ति मुजब तथा आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसारही सत्य प्ररूपणाकरीहै, मगर शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणानहींकरी जिसपरभी कितनेक पक्षपातीजन उपकारी महाराजोंके उपकारोंको छुपादेतेहैं, और छठे कल्याणक प्रकटकरनेकी तथा स्त्रीपूजा निषेधकरनेकी नवीनप्ररूपणाकरनेकाझूठा दोपलगाकर अनेक तरहसे निंदा करते हुए आक्षेप करते हैं। उन्होंको परमधर्मा जैनमें मिलना मुश्किलहै यहबात तपगच्छवालेही गुणानुरागी मध्यस्थ भावसे लिखतेहैं। अर्थात् ऐसे उपकारोंको भूलकर झूठा दोष लगाकर निंदा करनेवाले एकेन्द्रिय होवेंगे, फिर उन्होंको जैनधर्म प्राप्त होना बहुत मुश्किल होवेगा, संसारमें बहुत काल परिभ्रमण करेंगे इसलिये भवभिरु आत्मार्थी भव्य जीवोंको संसार परिभ्रमण के हेतुभूत उपकारी पुरुषोंकी झूठी निंदा करके भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेरूप अनर्थ करना सर्वथा अनुचित है।

और ऊपरके लेखसे श्रीरत्नविजयजीके लेखमुजब तपगच्छके तथा खरतरगच्छके आपसमें विशेषरूपसे संप की वृद्धि होना चाहिये और कुसंपके कारण भूत पर्युषणामें खंडनमंडनके विवाद वाले विषयोंको सर्वथा त्याग करके संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमें कटिबद्ध होना, यही अपने और दूसरे भव्यजीवोंकेभी आत्म कल्याणका हेतु है। ऐसी ही श्रद्धा तथा प्ररूपणा और प्रवृत्तिका शुद्ध हृदयसे व्यवहारकरके उपकारी पुरुषोंकी झूठीनिंदा छोडकर, प्राचीन पूर्वाचार्योंकी परंपरामुजब शास्त्रानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्वका अराधन करके तथा श्री महावीर स्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको आगमानुसार भावपूर्वक मान्य करके भगवान्की आज्ञानुसार धर्मकार्योंसे निज और परका कल्याणकरो,संसार परिभ्रमणके,दुःखसे छुटो,और अक्षय सुख प्राप्त करो यही आत्मिक हृदयकी विशुद्ध प्रेम भावसे आत्महितैषी पाठक गण भव्यजीवोंके प्रति प्रार्थनाहै इति शुभम्

विक्रम संवत् १९७७, प्रथम श्रावण शुदी १३ बुधवार
हस्ताक्षर - श्रीमान् उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके
लघुशिष्य—मुनि- मणिसागर जैन धर्मशाला, धुलिया—खानदेश

श्रीवीतरागाय नमः।

दूसरे भागकी पीठिका

इनकोभी पहिले अवश्यही वांचिये

अब हम यहांपर दूसरे भागकी पीठिकामें न्यायरत्नजी शांति विजयजी संबंधी थोडासा लिखतेहैं, जिसमें २ वर्ष पहिले दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणापर्व प्रथम भाद्रपदमें करने या दूसरे भाद्रपदमें, इस विषयकी मुंबईशहरमें चर्चा खूब जोरशोरसे दोनों तरफसे चलीथी,उससमय मैंनेभी'लघु पर्युषणा निर्णयका प्रथम अंक'नामाछोटीसी पुस्तकमें मुख्य २ सबबातोंकी शंकाओंका समाधान अच्छीतरह सेलिखदियाथा वह पुस्तक एकश्रावकने छपवाकर प्रसिद्ध की थी उसपर न्यायरत्नजीने उन पुस्तककी शास्त्रानुसार सत्य २ बातोंको ग्रहण तो नहीं करी और मैरे सबलेखोंको अनुक्रमसे पूरेपूरे लिखकर पीछे उनसबका जवाब देनेकीभी ताकत न होनेसे जानबुझकर कुयुक्तियोंसे अनेकबातें शास्त्रविरुद्ध लिखकर 'पर्युषणापर्वनिर्णय' तथा 'अधिकमासनिर्णय'में प्रकटकी उसपर मैंने उनदोनों पुस्तकोंकी शास्त्रविरुद्धबातोंसंबधी शास्त्रार्थसे सभामेंनिर्णयकरनेकेलिये न्यायरत्नजीको जाहिररूपसे छपवाकर सूचना दीथी वो लेख नीचे मुजबहै

विज्ञापन, नं० ७

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी सावधान ! शास्त्रार्थके लिये जलदी तैयार हो

मैंने- आपको शहर पुणामें शास्त्रार्थ संबंधी विज्ञापन नंबर १ २ ३ ४ भेजेथे ओर वर्तमानिक पर्युषणाकी चर्चासंबंधी आपकी बनाई ' पर्युषणापर्वनिर्णय ' किताब " शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध, जिनाज्ञा बाहिर ओर कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरने वाली है," यह सूचना विज्ञापन नंबर पहिलेमें लिखकर, इसका विशेष खुलासा मुंबईकी सभामें शास्त्रार्थद्वारा करनेकेलिये आपको आमंत्रण कियाथा ओर 'श्रीकच्छी जैन एसोसीयन सभा' नेभी सब मुनिमहाराजोंकी तरह आपकोभी पर्युषणाका निर्णय करनेसंबंधी विनतीपत्र भेजाथा, जिसपरभी आपने मुंबईमें शास्त्रार्थकरना मंजूर न

सबगच्छवाले बहुतसाधुओंको आहार,पानी,तथा संयम उपकरणोंसे निर्वाह होता है। ऐसे महान् शासन प्रभावक परम उपकारी महा राजोंने पूर्वाचार्योंकी प्रवृत्ति मुजब तथा आगमादि प्राचीन शास्त्रा नुसारही सत्य प्ररूपणाकरीहै, मगर शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररू पणाहीकरी जिसपरभी कितनेक पक्षपातीजन उपकारी महारा जोंके उपकारोंको छुपादेतेहैं, और छठे कल्याणक प्रकटकरनेकी तथा स्त्रीपूजा निषेधकरनेकी नवीनप्ररूपणाकरनेकाझूठादोषलगाकर अनेक तरहसे निंदा करते हुए आक्षेप करते हैं। उन्होंको परभवमें जीभ मिलना मुश्किलहै यहबात तपगच्छवालेही गुणानुरागी म ध्यस्थ भावसे लिखतेहैं। अर्थात् ऐसे उपकारोंको भूलकर झूठा दोष लगाकर निंदा करनेवाले एकेन्द्रिय होवेंगे, फिर उन्होंको जैनधर्म प्राप्त होना बहुत मुश्किल होवेगा, संसारमें बहुत काल परिभ्रमण करेंगे इसलिये भवभिरु आत्मार्थी भव्य जीवोंको संसार परिभ्रमण के हेतुभूत उपकारी पुरुषोंकी झूठी निंदा करके भोले जीवोंको मि थ्यात्वमें गेरनेरूप अनर्थ करना सर्वथा अनुचित है।

और ऊपरके लेखसे श्रीरत्नविजयजीके लेखमुजब तपगच्छके तथा खरतरगच्छके आपसमें विशेषरूपसे संप की वृद्धि होना चाहि ये और कुसंपके कारण भूत पर्युषणामें खंडनमंडनके विवाद वाले विषयोंको सर्वथा त्याग करके संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमें कटि बद्ध होना, यही अपने और दूसरे भव्यजीवोंकेभी आत्म कल्याणका हेतु है। ऐसी ही श्रद्धा तथा प्ररूपणा और प्रवृत्तिका शुद्ध हृदयसे व्यवहारकरके उपकारी पुरुषोंकी झूठीनिंदा छोडकर; प्राचीन पूर्वा चार्योंकी परंपरामुजब शास्त्रानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दू सरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्वका अराधन करके तथा श्री महावीर स्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको आगमानु सार भावपूर्वक मान्य करके भगवान्की आज्ञानुसार धर्मकार्योंसे निज और परका कल्याणकरो,संसार परिभ्रमणके,दु खसे छुटो,और अक्षय सुख प्राप्त करो यही आत्मिक हृदयकी विशुद्ध प्रेम भावसे आत्महितैषी पाठक गण भव्य जीवोंके प्रति प्रार्थनाहै इति शुभम्

विक्रम संवत् १९७७, प्रथम श्रावण शुदी १३ बुधवार
हस्ताक्षर – श्रीमान् उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके
लघुशिष्य—मुनि- मणिसागर जैन धर्मशाल, धुलिया—खानदेश

और विशेष सूचनायें विज्ञापन, नंबर ६ से समझ लीजिये और नि यमभी जो आपकी इच्छा हो सो प्रतिज्ञापत्रके साथ१५ दिनके भीतर प्रकट करीयें, आनंदसागरजी, विजयधर्मसूरिजी, विद्याविजयजी व न्यायविजयजीकी तरह आडी आडी बातें निकालकर शास्त्रार्थ करना मंजूर न करोंगे तो-आपकीभी हार समझी जावेगी अथवा श्री-कच्छी जेन एसोसीयनकी विनतीके अनुसार, व मेरे विज्ञापनोंके अनुसारयदि आपको मुंबईमें ठहरकर सभामें शास्त्रार्थ करनेमें अनुकूलता न होंवे, तो लीजिये चलिये लेख द्वाराही सही, मगर विज्ञापन नंबर ६ मुजब प्रतिज्ञा वगैरह नियमोंके साथ उत्तर दीजिये देखो —

न्यायरत्नजी मेरे बनाये 'लघु पर्युषणानिर्णय के प्रथम अंक' के सब लेखोंका न्यायसे पूरेपूरा उत्तर देनेकी आपमें ताकत नहींहै, यदि होती तो उसके पृष्ठ ३ ४ ५ ६ ७ और १०में अधिकमासमें सूर्यचार न होवे, वनस्पति न फूले, वगैरह सुबोधिकाकी ११ बातोंका खुलासा मेंने लिखाथा उन सबको लिखकर अनुक्रमसे पूरा उत्तर क्यों न दिया,यदि भूल गये हो, तो अभीही देवो। और पृष्ठ १७के अंतके पाठका खुलासाभी साथही करो ॥ और मैने 'लघु पर्युषणा निर्णय' में निशीथचूर्णि और दशवेकालिक वृहद्वृत्तिके पाठसे अधिकमास को कालचूला कहकरकेभी दिनोंकी गिनतीमें लेनेका सिद्धकर दिखाया हे,इसलिये दिनोंकी गिनतीमें निषेध नहीं होसकता,देखो लघुपर्युषणानिर्णयके पृष्ठ २४ २५ ॥ और लौकिक शास्त्रानुसारभी अधिकमासको दिनोंमें गिना है, देखो लघुपर्युषणानिर्णय के पृष्ठ २८ २९ ॥ और अधिक मासमें मुहूर्त्तवाले शुभकार्य न होवें,उसी तरह चौमासेमें, सिंहस्थमें,गुरु शुक्रके अस्तमें, पौष चेत्र मलमासमें, क्षयमासमें, वदीपक्षकी १३-१४ और अमावास्या इन तीन क्षीणतिथियोंमें,और वैधृति-गडात-व्यतिपात-भद्रा वगेरह कुयोगोंमें, तिथि, वार, नक्षत्र, चंद्रादि बहुत, मास पक्ष वर्ष दिन वगेरह योगोंमेंभी मुहूर्त्तवाले शुभ काय न होंवे, देखो-ज्योति शास्त्रे "जभारिति पुरोहिते हरिगते, सुसे मुकुदेविभो । जातेधर्मघने धनशफटयो क्षीणेकुवारस्तिथि ॥ अस्ते भार्गव जीवयो कुदिने, मासाधिके वेधृतो । गडाते व्यतिपात विष्टिक शुभ, कार्यं न कार्यं बुधै ॥ १ ॥" मगर-दान, शील, तप, भाव, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध वगैरह धर्मकार्य अधिक मासमें भी होसकते हैं, उसी तरह पर्युषणापर्वभी दिन प्रतिबद्ध होनेसे अधिक मासमें करनेमें कोई बाधा नहींहै। देखो लघुपर्युषणा निर्णयके पृष्ठ

किया और दूसरों पर गेरफर मौनही धर बैठे, तथा दूरमेंही फिर " अधिकमासनिर्णय" की छोटीसी किताब छपवाकर प्रकटकी उसके बाद थोड़े रोज पीछे आप मुंबई दादर आवे, तब मैंने आपको दोनों किताबों सबंधी शास्त्रार्थ करनेकी सूचना पत्र द्वारा दीथी, उसकी नकल नीचे मुजब है —

"श्रीदादर मध्ये श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्री मुंबई वालकेश्वरसे मुनि मणिसागरकी तरफसे सूचना मैंने कल रात्रिको आपके दादर आनेका सुनाहै, उससे आपको सूचना देताहू, कि-आपने " पर्युषणापर्व निर्णय" और " अधिक मास निर्णय " दोनों पुस्तकोंमें बहुत जगह शास्त्रविरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणारूप लिखा है, आपने दोनों पुस्तकोंमें सर्वथा शास्त्रविरुद्ध और कल्पित बातोंकाही सग्रह किया है, इसलिये हम सभामें शास्त्रार्थसे आपकी दोनों पुस्तकें जिनाज्ञाविरुद्ध सिद्ध करनेको तैयार हैं, शास्त्रार्थ किये विना आप चले जावोंगे तो झूठे समझे जावोंगे, विशेष क्या लिखु, शास्त्रार्थका विज्ञापन न० १ आपको पहिलेभी भेज चुका हू कल दादर आवुगा आप जाना नहीं इसका उत्तर अभीही लालबागमें आदमीके साथ पीछा भेजना। मै लालबाग जाताहू, हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर, पौष शुदी १ रविवार, स० १९७४' इस मुजबपत्र पौषशुदी१ को आदमी भेजकर आपको पहुचाया और दूजके दिन खास मै और मुनिश्रील विध मुनिजी, तथा अचलगच्छीय मुनि दानसागरजी और केवल चदजी चारोंही ठाणे दादर आये, और शास्त्रार्थ करनेका आपसे कहा, तब आपनेभी अन्य मुनियोंकीतरह आनदसागरजीकी आड लेकर दो महीनोंबाद शास्त्रार्थ करनेका कहाथा, सो २ महीनेंकी जगह ४ महीने होगये, अब जलदी करो आनदसागरजी तो आडी आडी बातोंसे दूसरेका नाम आगे करते हैं अपना नामसे लिखतेभी डरते हैं, तो सभामें नियमानुसार क्या शास्त्रार्थ करेंगे और आपने किताबें बनवानेमें किसी आगेवानोंकी व आनदसागरजी वगैरह मुनियोंकी आड न ली तो फिर उसका खुलासा करनेमें दूसरोंकी आड लेते हो — यही आपका अन्याय समझा जाता है, वालकेश्वरमें जब हमारे गुरुजी महाराजकेसाथ आपकी मुलाकात हुईथी तबभी झगडीया वगेरह तीर्थयात्राको जाकर आये बाद शास्त्रार्थ करनेका मजूर कियाथा, सो आप यात्राकरके आगये अब सामने सामने या लेख द्वारा वा सभामें आपकी इच्छाहो वैसे शास्त्रार्थ करना मजूर करिये

और विशेष सूचनायें विज्ञापन, नवर ६ से समझ लीजिये और नि
यमभी जो आपकी इच्छा हो सो प्रतिज्ञापत्रके साथ१५ दिनके भीत-
र प्रकट करीये, आनदसागरजी, विजयधर्मसूरिजी, विद्याविजयजी
व न्यायविजयजीकी तरह आडी आडी वातें निकालकर शास्त्रार्थ क-
रना मजूर न करोंगे तो-आपकीभी हार समझी जावेगी अथवा श्री-
कच्छी जैन एसोसीयनकी विनतीके अनुसार, व मेरे विज्ञापनोंके अ
नुसारयदि आपको मुवईमें ठहरकर सभामें शास्त्रार्थ करनेमें अनुकू
लता न होवे, तो लीजिये चलिये लेख द्वाराही सही, मगर विज्ञापन
नवर ६ मुजव प्रतिज्ञा वगैरह नियमोंके साथ उत्तर दीजिये देखो —

न्यायरत्नजी मेरे बनाये 'लघु पर्युषणानिर्णय के प्रथम अक' के
सव लेखोंका न्यायसे पूरेपूरा उत्तर देनेकी आपमें ताकत नहींहै, य
दि होती तो उसके पृष्ठ ३ ४ ५ ६ ७ और १०में अधिकमासमें सूर्य
चार न होवे, वनस्पति न फूले, वगैरह सुवोधिकाकी ११ वातोंका खु
लासा मैंने लिखाथा उन सवको लिखकर अनुक्रमसे पूरा उत्तर क्यों
न दिया,यदि भूल गये हो, तो अभीही देवो। और पृष्ठ १७के अतके
पाठका खुलासाभी साथही करो॥ और मैने 'लघु पर्युषणा निर्णय'
में निशीथचूर्णि और दशवैकालिक वृहद्वृत्तिके पाठसे अधिकमास
को कालचूला कहकरकेभी दिनोंकी गिनतीमें लेनेका सिद्धकर दिखा
या है,इसलिये दिनोंकी गिनतीमें निषेध नहीं होसकता,देखो लघुपर्यु
षणानिर्णयके पृष्ठ २४ २५॥ और लौकिक शास्त्रानुसारभी अधिक
मासको दिनोंमे गिना है, देखो लघुपर्युषणानिर्णय के पृष्ठ २८ २९॥
और अधिक मासमें मुहूर्त्तवाले शुभकार्य न होवें,उसी तरह चौमासे
में, सिंहस्थमें,गुरु शुक्रके अस्तमें, पौष चैत्र मलमासमें, क्षयमासमें,
वदीपक्षकी १३-१४ और अमावास्या इन तीन क्षीणतिथियोंमें,और वै-
धृति-गडात-व्यतिपात-भद्रा वगैरह कुयोगोंमे, तिथि, वार, नक्षत्र,
चद्रादि वहुत, मास पक्ष वर्ष दिन वगैरह योगोंमेभी मुहूर्त्तवाले शुभ
कार्य न होवे, देखो-ज्योति शास्त्रे"जभारिति पुरोहिते हरिगते, सुप्ते
मुकुदेविभौ। जातेधर्मघने धनशफरयो क्षीणेकुवारास्तिथि॥ अस्ते
भार्गव जीवयो कुदिने, मासाधिके वैधृतौ। गडाते व्यतिपात विष्टि
क शुभ, कार्य न कार्य वुधे ॥ १॥" मगर-दान, शील, तप, भाव,
सामायिक, प्रतिक्रमण, पोषध वगैरह धर्मकार्य अधिक मासमें भी
होसकते हैं, उसी तरह पर्युषणापर्वभी दिन प्रतिवद्ध होनेसे अधिक
मासमें करनेमें कोई वाधा नहींहै। देखो लघुपर्युषणा निर्णयके पृष्ठ

२७-२८ ॥ और मासवृद्धि होने परभी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन र हनेका किसीभी शास्त्रमें नहीं लिखा, समवायांगका पाठतो मासवृ द्धिके अभावकाहै, इसलिये अधिकमास होनेपरभी ७० दिन रहनेका कहना शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे मिथ्याहै, देखो लघुपर्यु षणा निर्णयके पृष्ठ १८ १९ २० २१ ॥ इसीतरहसे दोनों आषाढ वगैर हका खुलासाभी लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५-२६में अच्छी तरहसे दिख ला दियाथा॥ जिसपरभी न्यायरत्नजी आपने मेरे सब लेखोंका आगे पीछेका सबंध तोडकर मेरे अभिप्रायके विरुद्ध होकर अधूरे अधूरे लेख, भोलेजीवोंको दिखलाकर अपनी दोनों किताबोंमें आप वारंवा- र अधिकमहीनेके दिनोंको गिनतीमेंसे उडादेनेकेलिये कोईभी शास्त्र का पाठ बतलाये विनाही, और लघुपर्युषणाके पृष्ठ २७-२८ का लेख को पूरा विचारे विनाही,'अधिकमासनिर्णय के दूसरे पृष्ठकी आदिमें आप लिखतेहैं, कि 'अधिकमहीनेमें विवाह सादी वगेरा कामनहींकि ये जाते, दीक्षा प्रतिष्ठा वगेरा धार्मिक कामभी अधिकमहीनेमें नहीं कियेजाते, फिर पर्युषणापर्व जेसा उमदापर्व अधिकमहीनेमें कैसे किया जाय ' तथा ' पर्युषणापर्व निर्णय के मुख्य पृष्ठ परभी ' दीक्षा प्रतिष्ठा और दुनियादारीके विवाह सादी वगेराकाम अधिकमहीनेमें नहींकियेजाते, तो फिर पर्युषणापर्व जैसा उमदापर्व कैसेकिया जाय' यह दोनों लेख आपके जिनाज्ञाविरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहैं यदि मुहुर्त्तवाले दीक्षा प्रतिष्ठा व ससारी विवाह सादीकी तरह पर्युषणा भी आप मानोंगे, तवतो चौमासेमें, तथा १३ महीनों तक सिंहस्थ वाले वर्षमेंभी पर्युषणा करनाही नहीं बनेगा, मगर शास्त्रोंमें तो चौ मासेमेंही और सिंहस्थवाले वर्षमेंभी वर्षा ऋतुमेंही दिनोंकी गिनती से५०वें दिन अवश्यही पर्युषणा करनाकहाहै मुहुर्त्तवाले विवाहसादी वगैरह लौकिक कार्योंके साथ, विना मुहुर्त्तवाले लोकोत्तर पर्युषणाप र्वका कोइभीसंबधनहींहै सिंहस्थ, अधिकमास, क्षयमास, गुरु शुक्रका अस्त, चौमासा, व्यतिपात, भद्रा, और चन्द्र व सूर्य ग्रहण वगैरहकोईभी योग पर्युषणा करनेमें बाधक नहीं होसकते, इसलिये आपका उत्सू त्र प्ररूपणाका और प्रत्यक्ष अयुक्त व मिथ्यालेखको पीछा खींच ली- जिये और मिच्छामिदुक्कड प्रकट करिये, नहीं तो सभामें सिद्ध क- रनेको तैयार हो जाईये ॥ १ ॥ औरभी आपने 'मानव धर्म संहिता' के पृष्ठ ८०० में लिखाहै कि "अगर अधिकमास गिनतीमें लियाजा ता हो तो पर्युषणापर्व दूसरे वर्ष श्रावणमें और इसतरह अधिकम

हीनोके हिसावसे हमेशा उक्त पर्व फिरते हुए चले जायेंगे, जैसे मु सल्मानोके ताजिये- हर अधिक मासमें वदलते है" यह लेखभी उ- त्सूत्र प्ररूपणारूपहीहै, क्योंकि जिनेंद्रभगवान्ने अधिकमहीना आने परभी वर्षाऋतुमेंही पर्युषणा करना फरमायाहै,मगर वर्षाऋतु विना माघ, फाल्गुन, चैत्र, वेशाखमें शरदी व धूपकालमें पर्युषणा करना नहीं फरमाया, जिसपरभी आप अधिक महीनेके ३० दिन उडा दे नेकेलिये मुसलमानोके ताजियेंके दृष्टांतसे हर अधिक महीनेके हि सावसे वारांही महीनोंमें [छही ऋतुओंमें] पर्युषणापर्व फिरते हुए च ले जानेका वतलाते हो, सो किस शास्त्र प्रमाणसे,उसकाभी पाठ व तलाइये, या आपनी भूलका मिच्छामि दुक्कड दीजिये, अथवा सभा में सत्य ठहरनेको तैयार हो जाईये ॥ २ ॥ और भी ' पर्युषणापर्व नि र्णय' के मुख्यपृष्ठपर 'अधिकमहीना जिसवर्षमें आवे उसवर्षका नाम अभिवर्द्धित सवत्सर कहते हैं, और वो अभिवर्द्धित सवत्सर तेरह महीनोंका होता है, मगर अधिक महीना कालपुरुषकी चूला यानी चोटी समान कहा इसलिये उसको चातुर्मासिक-वार्षिक और क ल्याणिकपर्वके व्रत नियमकी अपेक्षा गिनतीमें नहीं लियाजाता' तथा ' अधिकमास निर्णय ' के प्रथम पृष्ठके अंतमें ' अधिक महीना काल पुरुषकी चूला यानी चोटी समानहै,आदमीके शरीरके मापमें चोटी का माप नहीं गिनाजाता, इसतरह अधिक महीना अच्छे काममें न हीं लिया जाता ' इस लेखसे अधिक मासको केशोंकी चोटी समान कहते हो और गिनतीमें लेना निषेधकरते हो सो भी सर्वथा जिना ज्ञा विरुद्ध है, देखो-चोटी तो १० २० अंगुल, अथवा १ २ हाथ लंबी भी होसकतीहै, व नहींभी होतीहै और शरीरके मापमें चोटीका कु छभी भाग नहीं लियाजाता, इसीतरह यदि अधिकमासभी चोटी स- मान गिनतीमें नहीं लिया जाता तो फिर उसको गिनतीमें लेकर १३ महीनोंके, २६ पक्षोंके,३८३ दिनोंका अभिवर्द्धित सवत्सर क्यों कहा ? देखिये-जैसे पर्वतोंके शिखर और घास एकसमान नहीं है,तथा मंदि रोंके शिखर और ध्वज एक समाननहींहै तेसेही चूला याने शिखर और चोटीएकसमाननहींहै, इसलिये चोटीकहोंगे तो गिनतीमेंनहीं औ- र गिनतीमें लेवोंगे तो चोटी समाननहीं चोटीकहोंगे तो अभिवर्द्धि त सवत्सर कैसे वना सकोंगे ? इसको विचारो, अधिकमासको चो टीसमान कहकर गिनतीमें छोडदेना किसीभी जैनशास्त्रमें नहींकहा, निशीथचूर्णि व दशवेकालिक वृत्तिमें कालचूला याने शिखरकहाहै,

और गिनतीमेंभी लियाहै, देखो श्रुपर्युषणाके पृष्ठ २५ में इसलिये शिखरको चोटी कहना और गिनतीमें छोड़ देना यही भूल है ॥३॥ इसीतरहसे अधिकमहीनेमें धर्म, ध्यान, व्रत, पच्चक्खाण, तप, जप, चौमासी, पर्युषणा, कल्याणकादि धर्म कार्य निषेध करना ॥४॥ वर्त्तमानिक श्रावण, भाद्रपद, आश्विन बढ़नेपरभी समवायांग सूत्रवृत्तिकारका अभिप्राय को समझे विनाही पीछे ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना ॥५॥ श्रावण-पौष बढ़नेपर एक महीनेमें कल्याणिक मानने से दूसरे महीनेको छुटनेका कहकर अधिकमासके ३० दिन उडादेना ॥ ६ ॥ दो आषाढ़ होनेपर प्रथम आषाढ़को कालचूला ठहराना ॥७॥ दूसरे आषाढ़में चौमासी करनेसे प्रथम छुट जानेका कहना ॥ ८ ॥ और नवतत्त्व- षट्द्रव्यके स्वरूपकी तरह चन्द्र और अभिवर्द्धित दोनो वर्षोंका समानही स्वरूपकहाहै, तथा दोनोंसेही मास पक्ष तिथि वर्ष वगैरहका व्यवहार चलता है, तिसपरभी दिनोंकी गिनतीके विषयमें दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाकी चर्चामें विपर्यातर करके मास व ऋतु प्रतिबद्ध कार्योंको दिखलाकर अधिक मासके दिन गिनतीमें छोड देना ॥ ९ ॥ अधिकमास आनेसें ८० वें दिन पर्युषणा पर्वकरनेको जैनशास्त्रसे खिलाफ ठहराना॥१०॥और पचाशकके पूर्वापर संबधवाले संपूर्ण सामान्य पाठको छोडकर शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायको समझेविना थोडासा अधूरा पाठ भोलेजीवोंको दिखलाकर वीरप्रभुके विशेषतासे आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करना ॥ ११ ॥ और सुबोधिकाकी तरह समयसुंदरोपाध्यायजी कृत कल्पलतामें खंडन मंडनका विषय संबंधी कुछभी अधिकार नहीं है तो भी झूठा दोष आरोप रखना ॥ १२ ॥ इत्यादि अनेक बातें आपकी दोनों कितावोंमें शास्त्रविरुद्ध व प्रत्यक्ष मिथ्या और बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेवाली भरीहुईहैं, उसका लेख द्वारा या सभामें निर्णय करनेको तैयार हो जाईये, मगर झूठेको क्या प्रायश्चित देना वगैरह नियम होने चाहिये वीर निर्वाण२४४४, विक्रमसंवत् १९७५, वैशाख वदी १२, हस्ताक्षर- मुनि-मणिसागर, लालबाग मुंबई

उपर मुजब छपाहुआ विज्ञापन न्यायरत्नजीको पहुंचाया, मगर उसमें लिखेप्रमाणे सभामें आकर शास्त्रार्थ करनेका मंजूर नहीं किया तथा इन विज्ञापनमें बतलाई हुई उत्सूत्र प्ररूपणारूप अपनी भूलोंको सुधारनेकाभी प्रकट नहीं किया, और शास्त्रप्रमाणसे साबित करके भी बतला सके नहीं सर्वथा मौनकर बैठे, तब हमने उनकी हारका विज्ञापन छपवाकर प्रकाशित कियाथा, सो नीचे मुजब है —

विज्ञापन, न० ९

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी हार गये !

सत्याग्राही पाठकगणसे निवेदन कियाजाताहै, कि-न्यायरत्नजी शातिविजयजी को पर्युषणा बावत सभामें शास्त्रार्थ करनेके लिये मैंने विज्ञापन न ७ वें में सूचना दीथी, उसमें १५ दिनके भीतर शास्त्रार्थ करना मजूर न करोंगे, तो आपकी हार समझी जावेगी, यह बात खुलासा लिखीथी, और वैशाख शुदी १०को विज्ञापन न ७-८ के साथ १ पत्रभी उनको डाक मारफत रजिष्टरी द्वारा'ठाणे'भेजाथा, उसमें १५ दिनकी जगह २० दिनका करार लिखाथा, उसको आज २२दिन होगये, तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करना मजूर नहींकिया ओर वैशाख शुदि १३ को फिरभी दूसरा पत्र भेजाथा उसमें हमने ठाणेमेंही शास्त्रार्थ करना मजूर कियाथा उसकाभी कुछभी उत्तर न मिला और लेखद्वारा शास्त्रार्थ शुरू करनेके लिये प्रतिज्ञापत्र व साक्षी वगैरह नियमभी प्रगटनहींकिये इससे मालूमहोताहै, कि न्यायरत्नजीमें न्यायानुसार धर्मवादका शास्त्रार्थकरनेकी सत्यतानहींहै, इसलिये चुप लगाकर बैठेहैं, उससे वो हारगये समझे जातेहैं, पाठक गणको मालूमहोनेके लिये दोनों पत्रोंकी नकल यहा बतलाते हैं

प्रथम पत्रकी नकल " श्रीमान् न्यायरत्नजी शातिविजयजी, विज्ञापन, न० ७-८ भेजता हु, लघुपर्युषणा निर्णयके सत्य सत्य लेख छोडदिये, और मेरे अभिप्रायविरुद्ध उलटा उलटाही लिखमारा, वैसा अब न करना, सबका पूरा उत्तर देना, आजसे १५-२० दिन तकमें, वैशाख शुदी १० सोमवार, हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर "

दूसरे पत्रकी नकल "श्रीठाणा मध्ये न्यायरत्नजी शातिविजयजी योग्य श्रीमुबईसे मुनि-मणिसागरकी तरफसे सूचना

१—आप ठाणेमें शास्त्रार्थ करना चाहते हो तो, हम ठाणे आनेकोभी तैयार हे, मगर विज्ञापन न० ६ की ३-४-५ सूचना मुजब नियम मजूर करो और कल्पसूत्रकी कौन २ प्राचीन टीका आप मानते हो, उत्तर दो, ठाणेकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ होगा

२—शास्त्रार्थ आपका और मेराहै, इसमें मुबई के सब सघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं हे, आप सघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरी हे, न सब सघ बीचमें पडे और न हमारी पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो,

और गिनतीमेंभी लियाहै, देखो स्पर्युषणाके पृष्ठ २० में इसलिये दिवसको चोटी कहना और गिनतीमें छोड़ देना बड़ी भूल है ॥३॥ इसीतरहसे अधिकमहीनेमें धर्म, ध्यान, व्रत, पच्चक्खान, तप, जप, चौमासी, पर्युषणा, कल्याणकादि धर्म कार्य निषेध करना ॥४॥ वर्तमानिक श्रावण, भाद्रपद, आश्विन बढ़नेपरभी समवायाग सूत्रवृत्तिकारका अभिप्राय को समझे बिनाही पीछे ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना ॥५॥ श्रावण-पौष बढनेपर एक महीनेमें कल्याणिक मानने से दूसरे महीनेको छुटनेका कहकर अधिकमासके ३० दिन उडादेना ॥ ६ ॥ दो आषाढ होनेपर प्रथम आषाढको कालचूला ठहराना ॥७॥ दूसरे आषाढमें चौमासी करनेसे प्रथम छुट जानेका कहना ॥ ८ ॥ और नवतत्त्व- षट्द्रव्यके स्वरूपकी तरह चन्द्र और अभिवर्द्धित दोनो वर्षोंका समानही स्वरूपकहाहै, तथा दोनोंसेही मास पक्ष तिथि वर्ष वगैरहका व्यवहार चलता है, तिसपरभी दिनोंकी गिनतीके विषयमें दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाकी चर्चामें विषयातर कर के मास व ऋतु प्रतिबद्ध कार्योंको दिखलाकर अधिक मासके दिन गिनतीमें छोड़ देना ॥ ९ ॥ अधिकमास आनेसें ५० वें दिन पर्युषणा पर्वकरनेको जैनशास्त्रसे खिलाफ ठहराना॥१०॥और पचाशकके पूर्वापर सबधवाले सपूर्ण सामान्य पाठको छोडकर शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायको समझेबिना थोडासा अधूरा पाठ भोलेजीवोंको दिखलाकर वीरप्रभुके विशेषतासे आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करना ॥ ११ ॥ और सुबोधिकाकी तरह समयसुदरोपाध्यायजी कृत कल्पलतामें खडन मडनका विषय सबधी कुछभी अधिकार नहीं है तो भी झूठा दोष आरोप रखना ॥ १२ ॥ इत्यादि अनेक बातें आपकी दोनों किताबोंमें शास्त्रविरुद्ध व प्रत्यक्ष मिथ्या और बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेवाली भरीहुईहैं उसका लेख द्वारा या सभामें निर्णय करनेको तैयार हो जाईये, मगर झूठेको क्या प्रायश्चित देना वगैरह नियम होने चाहिये वीर निर्वाण२४४४, विक्रमसवत् १९७५, वैशाख वदी १२, हस्ताक्षर- मुनि-मणिसागर, लालबाग मुबई

उपर मुजब छपाहुआ विज्ञापन न्यायरत्नजीको पहुचाया, मगर उसमें लिखेप्रमाणे सभामें आकर शास्त्रार्थ करनेका मजूर नहीं किया तथा इन विज्ञापनमें बतलाई हुई उत्सूत्र प्ररूपणारूप अपनी भूलोंको सुधारनेकाभी प्रकट नहीं किया, और शास्त्रप्रमाणसे साबित करके भी बतला सके नहीं सर्वथा मौनकर बैठे, तब हमने उनकी हारका विज्ञापन छपवाकर प्रकाशित कियाथा, सो नीचे मुजब है —

प आना जाना करतेहैं, मगर सभा करनेको खडे हाते नहीं ३,सभामें सत्यग्रहण करनेकी प्रतिज्ञाभी करते नहीं ४, झूठे पक्षवालेको क्या प्रायश्चित्त देना सो भी स्वीकार करते नहीं ५, और श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभाकी विनतीसेभी सभा करनेको आप आते नहीं ६, और लेखीत व्यहारसेभी शास्त्रार्थ शुरु किया नहीं, ७,इसलिये आपकी हार समजी गई, महाशयजी ! ९ महीनोंसे शास्त्रार्थ करनेके लिये आपसे लिखता हु, मगर आपतो आडी २ बातें बीचमें लाकर शास्त्रार्थ करनेसे दूरहीभटकतेहैं, फिर हारमें क्या कसररही जबतक दुसरी आड छोडकर शास्त्रार्थकरनेको सामने न आवोंगे तबतकही आपकी कम जोरी समझी जावेगी अभीभी अपनी हार आपको स्वीकार न करना हो,तो, थाणा छोडकर आगे पधारना नहीं शास्त्रार्थ करनेको जलदी पधारो कठशोप सुष्क विवाद व वितडवादसे काग जकाले करनेकी व कालक्षेप करनेकी और व्यर्थ श्रावकोंके पैसे बरबाद करवानेकी कोई जरूरत नहीं है।

२ " शास्त्रार्थ आपका और मेरा है, इसमें मुबईके सब सघ को व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है,आप सघ को बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरीहै, न सब सघ बीचमें पडे और न हमारी [न्यायरत्नजीकी] पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो " इसतरहसे विज्ञापन न० ९ वें के मेरे पूरे सब लेख को आपने छोडदिया और मेरे अभिप्राय विरुद्ध होकर आप लिख तेहैं, कि " शास्त्रार्थ करना और फिर जैन सघकी जरूरत नहीं यह कैसे बन सकेगा " महाशयजी ! यह आपका लिखना सर्वथा अर्थ का अनर्थ करनाहै,कौन कहताहै जैन सघकी जरूरत नहींहै, मेरे लेखका अभिप्राय तो सिर्फ इतनाहीहै, कि—मुबईमें सबगच्छोंका,सब देशोंका, व सब न्यातोंका अलग २ सघ समुदाय होनेसे सब सघ आपके और हमारे शास्त्रार्थके बीचमें पचरूपसे आगेवान नहीं होस कता, मगर सत्यासत्यकी परीक्षाके इच्छावालोंको सभामें आनेकी मनाई नहीं, सभामें आना व सत्य ग्रहण करना मुबईके सघको तो क्या मगर अन्यजनकेभी सब सघको अधिकारहै, और इतनी बडी सभामें हजारों आदमियोंके बीचमें पक्षपाती व अल्प विचार वाले कोईभी किसी तरहका बखेडा खडाकरदेवे,या अपना निजका द्वेषसे आपसमें गडबड करदेवे तो मुबईके सघको व आगेवानोंको सुरतके झगडेकी तरह कमकथा, धनहानी, शासनहिल्ना व कुसुप वगैरह

ताकत हो तो मुंबईकी पोलीस चौकी कोटवालमें शास्त्रार्थ कर नेको आवो, दूसरे कागज वाले करके मायाकी आडीग्ये सबी चौकी झूठीझूठी बातें लिखकर भोलेजीवोंको भरमानेका काम नहीं करना

३-दोनोंको सब लेख सिद्ध करके बतलाने पडेंगे उसमें झूठे को क्या आलोयणा लेनी, सो लिखो, वैशाखशुदी १३ "

न्यायरत्नजी आपकी धर्मवाद करोकी ताकातहोती तो इतने दिन मौनकरके क्यों बैठे रैर !!! जैसी आपकी इच्छा मगर याद रखना सभामें योग्य नियमानुसार शास्त्रार्थ न करना और अपने झूठे पक्ष की बात रखनेके लिये वितंडावाद करना या सामने न आकर सा क्षि व प्रतिज्ञा बिनाही दूसरे कागज काले करते रहना और विपया तर व कुयुक्तियोंसे उत्सूत्रप्ररूपणाकी आपकी दोनों कीतावें सच्ची बनाना चाहो सो कभी नहीं हो सकेगा, किंतु इसके विपाक भवा तरमें अवश्यही भोगनेपडेंगे मरीचि और जमालिसेभी आपका उत्सू त्र बहुत ज्यादे है, आत्महित चाहते हो तो हृदयगम करके प्रायश्चि त्त लेवो उससे श्रेय हो तथास्तु स० १९७५ ज्येष्ठ शुदी २ सोमवार हस्ताक्षर-मुनि मणिसागर

इसप्रकार उपरमुजब लेख प्रकटहोनेसे न्यायरत्नजी 'झूठेहैं इस लिये चुप लगाकर बैठे हैं ' इत्यादि बहुत चर्चा होने लगी, तब अपनी झूठी इज्जत रखनेके लिये १ हेंडबील छपवाया उसमें लिखाथा कि, ' सभा हुईनहीं शास्त्रार्थ हुआनहीं फिर हारजीत कैसे होसके ' इसके जवाबमें हमनेभी विज्ञापन १० वा छपवाकर उनके लेखका अच्छीतर हसे खुलासा कियाथा, वो लेखभी नीचे मुजबहै —

विज्ञापन, नंबर १०

श्रीतपगच्छके न्यायरत्नजी शांतिविजयजीके हारका कारण, और उनकी अधिकमासके शास्त्रार्थकी जाहिर सूचनाका उत्तर

१-न्यायरत्नजी लिखतेहैं कि,-'सभाहुईनहीं शास्त्रार्थहुआनहीं फिर हारजीत कैसे होसके ' जवाब-आपकी हारका कारण विज्ञापन७वें में और ९ वें में लिख चुका हू उसको पूरेपूरा लिखकर सबका उत्तर क्यों न दिया ? फिरभी देखिये-मेरेविज्ञापन न ७ वें केसब लेखोंका पूरेपूरा उत्तर नियत समयपर आप देसकेनहीं १, विज्ञापना ६ मुजब सभाके नियमभी मजूर किये नहीं २,आजकाल बारबार मुबईमें आ

प आना जाना करतेहे, मगर सभा करनेको खडे हाते नहीं ३,सभामें सत्यग्रहण करनेकी प्रतिज्ञाभी करते नहीं ४, झूठे पक्षवालेको क्या प्रायश्चित्त देना सो भी स्वीकार करते नहीं ५, ओर श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभाकी विनतीसेभी सभा करनेको आप आते नहीं ६, ओर लेखीत व्यहारसेभी शास्त्रार्थ शुरू किया नहीं, ७,इसलिये आपकी हार समजी गई, महाशयजी ! ९ महीनोंसे शास्त्रार्थ करनेके लिये आपसे लिखता हु, मगर आपतो आडी २ बातें बीचमें लाकर शास्त्रार्थ करनेसे दूरहीभटकतेहें, फिर हारमें क्या कसररही जबतक दूसरी आड छोडकर शास्त्रार्थकरनेको सामने न आवोंगे तबतकहीं आपकी कम जोरी समझी जावेगी अभीभी अपनी हार आपको स्वीकार न करना हो,तो, थाणा छोडकर आगे पधारना नहीं शास्त्रार्थ करनेको जलदी पधारो कठशोप सुष्क विवाद व वितडवादसे काग जकाले करनेकी व कालक्षेप करनेकी और व्यर्थ श्रावकोंके पैसे बरबाद करवानेकी कोई जरूरत नहीं है।

२ " शास्त्रार्थ आपका और मेरा है, इसमें मुबईके सब सघ को व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है,आप सघ को बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरीहै, न सब सघ बीचमें पडे ओर न हमारी [न्यायरत्नजीकी] पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो " इसतरहसे विज्ञापन न० ९ वें के मेरे पूरे सब लेख को आपने छोडदिया और मेरे अभिप्राय विरुद्ध होकर आप लिखतेहें, कि " शास्त्रार्थ करना और फिर जेन सघकी जरूरत नहीं यह कैसे बन सकेगा " महाशयजी ! यह आपका लिखना सर्वथा अर्थ का अनर्थ करनाहे,कौन कहताहै जैन सघकी जरूरत नहींहै, मेरे लेखका अभिप्राय तो सिर्फ इतनाहीहै, कि—मुबईमें सबगच्छोंका,सब देशोंका, व सब न्यातोंका अलग २ सघ समुदाय होनेसे सब सघ आपके और हमारे शास्त्रार्थके बीचमें पचरुपसें आगेवान नहीं होसकता, मगर सत्यासत्यकी परीक्षाके इच्छावालोंको सभामें आनेकी मनाई नहीं, सभामें आना व सत्य ग्रहण करना मुबईके सबको तो क्या मगर अन्यत्रकेभी सब सघको अधिकारहे, और इतनी बडी सभामें हजारों आदमियोंके बीचमें पक्षपाती व अल्प विचार वाले कोईभी किसी तरहका बखेडा खडाकरदेवे,या अपना निजका द्वेषसे आपसमें गडबड करदेवे तो मुबईके सघको व आगेवानोंको सुरतके झगडेकी तरह कर्मकथा, धनहानी, शासनहिलना व कुसुप वगैरह

प्रपंचमें पं.सना पडे,इस अभिप्रायसे मैंने मुबंईके सब संघको बीचमे न पडनेका लिखाथा, जिसपर आप "संघकी जरूरत नहीं" ऐसा उलटा लिखते हो सो अनुचित है, मुंबईके, व अन्यत्रकेभी सब संघको सभामें आना व शांतिपूर्वक सत्यग्रहण करना, यह खास जरूरत है, इसलिये-सभामें अवश्य पधारना और पक्षपात रहित होकर सत्यग्राही होना चाहिये

३-और आपभी अपनी बनाइ 'पर्युषणापर्वनिर्णय'के पृष्ट २२ वें की पंक्ति ४-५-६ में लिखतेहैं, कि-" सभामें वादी प्रतिवादी-सभाध्यक्ष-दंडनायक और साक्षी ये पांचबातें होना चाहिये दोनों पक्षवालोंकी रायसे सभा करनेका स्थान और दिन मुकरर करना चाहिये" देखिये न्यायरत्नजी यह आपकेलेख मुजबही हममंजूर करतेहैं, अब आपकोभी अपना यह लेख मंजूर हो तो सभा करना मंजूर करो,आपका और हमारा शास्त्रार्थ कबहोवे, यह देखनेको सारी दुनिया उत्सुक हो रही है जब सभाका दिन मुकरर होगा तब मुंबईके व अन्यजगहकेभी बहुतसे आदमी स्वयं देखनेको आजावेगें " सभाका २ महीनेका समय होनेसे देशांतरकेभी श्रावक सभाका लाभ ले सकेंगे " यहकथन दादर और वालकेश्वरमें आपहीकाथा, अब आपकेलेख मुजबही साक्षीवगैरहके नाम व अन्य नियमभी मिलकर करनेचाहिये, पहिले विज्ञापनमें मभी लिख चुकाहूं

४ आप लिखतेहैं कि "संघका मेरेपर आमत्रण आवे तो मैं सभामें शास्त्रार्थकेलिये आनेकोतयार हूं" यह आपका लिखना शास्त्रार्थसे भगनेकाहै, क्योंकि पहिले आपही लिखचुके हो कि स्थान और दिन दोंनोंमिलकर मुकररकरें,अब संघपर गेरतेहो यहन्यायविरुद्धहै, ओर पहिले कभी राजा महाराजोंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा,तबभी वादी प्रतिवादीको संघ तरफसे आमत्रण हो या न हो, मगर अपना पक्षकी सत्यता दिखलानेको स्वयं राजसभामें जातेथे या अपनेपक्षके संघ अपनेविश्वासी गुरुको विनती करताथा, मगर सब संघ दोंनोंपक्षवाले विनती कभीनहीं करसकते,इसलिये आपको संघकीविनतीकी आवश्यकतानहींहै, स्वयं आनाचाहिये, या आपके तपगच्छके संघको आपपर पूराभरोसा [विश्वास]होगा तो वो विनतीकरेगें अन्य संघ नहीं करसकते देखो 'आनदसागरजी वडौदेकी राजसभामें शास्त्रार्थ करनेको तैयारहुएथे, ओर मुंबईमेंभी शास्त्रार्थकरनेका मंजूर कियाथा तबभीसंघकी विनतीनहीं मागीथी,स्वयं आनेको तैयारहुए

थे मगर अब शास्त्रार्थ क्यों नहींकरते,सो उनकी आत्मा जाने' इतने परभी आप संघके आमंत्रणका लिखते हो सो भी 'श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभा' ने सर्व जैनश्वेतांबर मुनिमहाराजोंको सभाकरनेकी विनती की थी, सो आमंत्रण हो ही चुका फिर वारवार क्या? यदि आप मुनिमंडळमें हे तबतो आपकोभी आमंत्रण होचुका, यदि आप अपनेको भिन्न समझतेहै तो संघ आमंत्रणभी कैसे कर सकताहै, मैं पहिलेही लिखचुकाहू कि ' न सब संघ वीचमें पडे और न न्यायरत्नजीको शास्त्रार्थ करनापडे'ऐसी कपटता क्यों रखतेहो,आपके गच्छ वालोंको आपका भरोसा न होवे, तो वे आपको विनती न करें, अथवा आपकी वात सच्ची मालूम न होवे तो मौनकर जावें,इसमें हम क्याकरें आप अपनापक्ष सच्चा समझतेहोतो शास्त्रार्थको पधारो आप दूरदूरसे खंडनमंडनका विवाद चलाते हैं, किताबें छपवाते हैं, तबतो संघसे पूछनेकी दरकार रखतेनहींहै, फिर उसबातका निर्णय करनेकी अपनेमें ताकत न होनेसे संघकी वात वीचमेंलाते हैं, यहभी एक तरहकी कमजोरी व अन्यायकीही वातहै ओर यह विवाद तो खास करके मुख्यतासे साधुओंकाही हे, श्रावकोंका नहीं श्रावक तो साधुओंके कहने मुजब पर्युषणापर्वका आराधन करनेवाले है,इस लिये साधुओंकोही मिलकर इसका निर्णय करना चाहिये

५-पहिले राजा महाराजाओंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा और अभीके भारतकेमहाराज लंडनमें हजारों कोशवहुतदुरहै,उनकी आज्ञाकारिणी और प्रजापालीनी कोर्ट व कोतवाली हे, इसलिये वहा सभामें किसी तरहका वखेडा न होनेके लिये और शांतिसे पक्षपात रहित पूरा न्याय होनेके लिये विद्वानोंकी साक्षीपूर्वक शास्त्रार्थ होने में कोई तरहकाभी हरजा नहींहे यह तो जगतप्रसिद्धही वातहै,कि अदालतमें जो न्यायालय है,उसमें सुलह शांतिसे पूरा न्याय मिलताहै इसलिये न्यायाधीशके समक्ष इन्साफ मिलनेके लिये शास्त्रार्थ करने का हमने लिखा सो न्याय युक्तही हे देखो-पंजावमें जैनियोंके ओर आर्यसमाजियोंके अदालतमेंही शास्त्रार्थ हुआथा उससेही जैनियों को पूरा न्याय मिला, विजय हुइथी उसीतरह न्यायसे धर्मवाद करनेको वहा हम वहुत खुशीसे तेयार हैं, अब आपभी जल्दी पधारो, हम तो सिर्फ न्यायसे इन्साफ चाहते हैं वहाभी वहुत आदमी देखनेको आसकते हैं, सचेको भय नहीं रहता झूठेको भय रहता है इस लिये वो वीचमें आडी२ वातोंसे झूठे२ वहाने वतलाकर किसी तरह

प्रपंचमें फँसना पडे, इस अभिप्रायसे आप मुंबईके सब संघको बीच
में न पडनेका लिखाथा, जिसपर आप "संघकी जरूरत नहीं" ऐसा
उलटा लिखते हो सो अनुचित है, मुंबईके, व अन्यग्रामके भी सब सं
घको सभामें आना व शांतिपूर्वक सत्यग्रहण करना, यह खास जरू
रत है, इसलिये-सभामें अवश्य पधारना और पक्षपात रहित होकर
सत्यग्राही होना चाहिये

३-और आपभी अपनी बनाई 'पर्युषणापर्वनिर्णय'के पृष्ठ २२ वें
की पंक्ति ४-५-६ में लिखतेहैं, कि-" सभामें वादी प्रतिवादी-सभा
ध्यक्ष-दृष्टनायक और साक्षी ये पांचबातें होना चाहिये दोनों पक्षवा
लोंकी रायसे सभा करनेका स्थान और दिन मुकरर करना चाहिये"
देखिये-न्यायरतनजी यह आपकेलेख मुजबही हममंजूर करतेहैं, अब
आपकोभी अपना यह लेख मंजूर हो तो सभा करना मंजूर करो, आ
पका और हमारा शास्त्रार्थ कबहोवे, यह देखनेको सारी दुनिया उ
त्सुक हो रही है जब सभाका दिन मुकरर होगा तब मुंबईके व
अन्यजगहकेभी बहुतसे आदमी स्वयं देखनेको आजावेंगे " सभाका
२ महीनेका समय होनेसे देशांतरकेभी श्रावक सभाका लाभ ले
सकेंगे " यहकथन दादर और बालकेश्वरमें आपहीकाथा, अब आ
पकेलेख मुजबही साक्षीवगैरहके नाम व अन्य नियमभी मिलकर क
रनेचाहिये, पहिले विज्ञापनमें मैंभी लिख चुकाहूं

४ आप लिखतेहैं कि "संघका मेरेपर आमंत्रण आवे तो मैं स
भामें शास्त्रार्थकेलिये जानेकोतयार हूं" यह आपका लिखना शास्त्रा
र्थसे भगनेकाहै, क्योंकि पहिले आपही लिखचुके हो कि स्थान और
दिन दोनोंमिलकर मुकररकरें, अब संघपर गेरतेहो यहन्यायविरुद्धहै,
और पहिले कभी राजा महाराजोंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा, तबभी
वादी प्रतिवादीको संघ तरफसे आमंत्रण हो या न हो, मगर अपना
पक्षकी सत्यता दिखलानेको स्वयं राजसभामें जातेथे या अपनेपक्ष
के संघ अपनेविश्वासी गुरुको विनती करताथा, मगर सब संघ दों
नोंपक्षवाले विनती कभीनहीं करसकते, इसलिये आपको संघकीविन
तीकी आवश्यकतानहींहै, स्वयं आनाचाहिये, या आपके तपगच्छके
संघको आपपर पूराभरोसा [विश्वास]होगा तो वो विनतीकरेंगे अन्य
सब नहीं करसकते देखो 'आनंदसागरजी बडौदेकी राजसभामें शा
स्त्रार्थ करनेको तैयारहुएथे, और मुंबईमेंभी शास्त्रार्थकरनेका मंजूर
कियाथा तबभीसंघकी विनतीनहीं मागीथी, स्वयं आनेको तयारहुए

दोनों किताबोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासबधी १२ भूलेंतो विज्ञापन न ७में दिखलादी हैं, और भी बहुत है सो सभामें विशेष खुलासा होगा और७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया औ र नवमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय है, और सभामें निर्णय होनेवाला है, जिसपरभी आप अभी किताब द्वारा जवाब मागते हो, इससे साबित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है, अन्यथा ऐसा क्यों लिखते, यदि हो तो कब विचार है, सो लिखो आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा मगर दोनों किताबोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी है, वैसी तीसरीमेंभी हो गा,तो सभामें सिद्धकरके बतलाना मुश्किलहोगा और उसकीआलो यणा लेनीपडेगी अधिकमहीनेके दिनोंकी गिनती,व आषाढचोमासी से ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व कर- ना तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने और श्रावकके सामा- यिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीक रना शास्त्रानुसार होनसे इनबातोंको कोईभी निषेधनहीं करसकता

विशेष सूचना-गये चोमासेमें हमने सब मुनिमहाराजोंको प र्युषणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमंत्रण भेजाथा तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सब मुनिमहारा जोंको सभा भरकर वर्षोवर्षके अधिकमाससबधी इस विवादके नि र्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये, सबने चुप लगादी, अब आप लोगभी चौमासा वगेरहके बहाने ब तलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी तथा आपके पक्षके सब मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्व यकर लेवेंगी और सभा करनेका मंजूर कियेविना व्यर्थ निष्प्रयोज नके विषयांतरके वितंडावादवाले छोटे चौडे किसीकेभी लेखका उत्त र आजसे नहीं दिया जावेगा संवत् १९७५ आषाढ वदी ३ गुरुवार, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, मुंबई

देखिये-ऊपर मुजब विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा,तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करनेको सभामें आनेका मंजूर किया नहीं विज्ञापन,७वेंमें लिखेप्रमाण,अपनी १२भूलोंको सुधारकर उसका प्रा यश्चित्तभीलियानहीं,तथा अनुक्रमसे उनभूलोंकोशास्त्रप्रमाणोंसेसाबि तकरके सत्यठहरासकेभीनहीं और हमनेशास्त्रानुसारसत्यबातें बत लायाथा उन्होंको अंगीकारभी किया नहीं और अपने पकडेहुए झूठे

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेसे भगने चाहतेहैं।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी ह-
म तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके बडील आचार्य आनंद
सागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगोडीजीके उपाश्रयमेंहै, उनके व्याख्यानमें
हजारों आदमियोंकी सभाभरातीहै, वहां आपका और हमारा शास्त्रा
र्थहोतोभी हमेंमंजूरहै, मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचा
हिये अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहैं, जहां आप लिखे वहांही
सही खरतरगच्छमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके
समक्ष आपने कहाथा, कि- आनंदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं
साक्षीरहुंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करुंगातो आनंदसागरजीको साक्षी
बनाऊंगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रति
ज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै, और सभादक्ष-दंडनायक वगै
रह नियमभी मिलकर जलदी करीयेगा

७- और आप लिखतेहैं, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको
नव महीने होगये हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जवाब-म
हाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छप
वानेसे बहुत वर्षोंतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही
आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम
विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका
अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्त
र विचार " और ' हृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासंबंधी
लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजूरी'के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ठ छपेको
आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक
आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें हैं,औ
र मेरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने
हो गये तो भी आजतक आप न दे सके, बल्कि सत्य सत्य लेखोंके
पृष्ठकेपृष्ठ और पंक्तियोंकी पंक्तियें छोडकर अधूरा२लेख लिखकर उल
टार ही जवाब देतेहैं, यह जवाब नहीं कहा जा सकता सत्यता तभी
मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरो
बर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी
नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह
युक्तही है सत्यको कौन असत्य बना सकताहै।मगर कुक्तियोंसे बात
को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमने तो आपकी

दोनों किताबोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासबधी १२ भूलेंतो विज्ञापन न ७में दिखलादी हैं, और भी बहुत हैं सो सभाम विशेष खुलासा होगा और७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया ओ र नजमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय हे, और सभामें निर्णय होनेवाला है, जिसपरभी आप अभी किताब द्वारा जवाब मागते ह, इससे साबित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है, अन्यथा ऐसा क्यों लिखते, यदि हो तो कब विचार है, सो लिखो आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा मगर दोनों किताबोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी हे, वेसी तीसरीमेंभी हो गा,तो सभामें सिद्धकरके बतलाना मुश्किलहोगा और उसकीआलो यणा लेनीपडेगी अधिकमहीनेके दिनोंकी गिनती,व आषाढचोमासी से ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व कर- ना तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने और श्रावकके सामा- यिकमें प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीक रना शास्त्रानुसार होनसे इनबातोंको कोईभी निषेद्धनहीं करसकता

विशेष सूचना-गये चौमासेमें हमने सब मुनिमहाराजोंको प र्युषणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमत्रण भेजाथा तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सब मुनिमहारा जोंको सभा भरकर वर्षोवर्षके अधिकमाससबधी इस विवादके नि- र्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये, सबने चुप लगादी, अब आप लोगभी चौमासा वगैरहके बहाने ब तलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी तथा आपके पक्षके सब मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्व यकर लेवेंगी और सभा करनेका मजूर कियेविना व्यर्थ निष्प्रयोज नके विषयासरके वितडावादवाले लंबे चौडे किसीकेभी लेखका उत्त र आजसे नहीं दिया जावेगा सवत् १९७५ आषाढ बदी ३ गुरुवार, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, मुबई

देखिये-ऊपर मुजब विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा,तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करनेको सभामें आनेका मजूर किया नहीं विज्ञापन,७वेंमें लिखेप्रमाणे,अपनी १२भूलोंको सुधारकर उसका प्रा यश्चित्तभीलियानहीं,तथा अनुक्रमसे उनभूलोंकोशास्त्रप्रमाणोंसेसाबि तकरके सत्यठहरासकेभीनहीं और हमनेशास्त्रानुसारसत्य२बातें बत लायाथी उन्होंको अगीकारभी किया नहीं और अपने पकडेहुए झूठे

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेसे भगने चाहतेहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी ह-म तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके बडील आचार्य आनंद सागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगोडीजीकेउपाश्रयमेंहैं,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकीसभाभरातीहै,यहां आपका और हमारा शास्त्रार्थहोतोभी हमेंमंजूरहै,मगर ऊपर लिखमुजबनियमानुसार होनाचाहिये अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहैं, जहां आप लिखें वहांही सही चालकेश्वरमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाथा, कि- आनंदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहुंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूंगातो आनंदसागरजीको साक्षी बनाऊंगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रतिज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दंडनायक वगैरह नियमभी मिलकर जलदी करोयेगा

७- और आप लिखतेहो, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगये हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जवाब-महाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छपवानेसे बहुत वर्षोंतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्तर विचार " और ' हर्षहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासबंधी लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजरी के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ट छपेको आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें हैं,और मेरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके, बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्टकेपृष्ट और पंक्तियेंकी पंक्तियें छोडकर अधूरा२लेख लिखकर उलटार ही जवाब देतेहैं, यह जवाब नहीं कहा जा सकता,सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरोबर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्तही है सत्यको कोन असत्य बना सकताहै।मगर कुयुक्तियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमनें तो आपकी

दोनों कितावोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासंबंधी १२ भूलेंतो विज्ञापन नं ७में दिखलादी है, और भी बहुत हैं सो सभामें विशेप खुलासा होगा. और ७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया औ र नवमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय है, और सभामें निर्णय होनेवाला है, जिसपरभी आप अभी किताब द्वारा जवाब मागते हैं, इससे सावित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है, अन्यथा ऐसा क्यों लिखते, यदि हो तो कब विचार है, सो लिखो आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा मगर दोनों कितावोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी है, वैसी तीसरीमेंभी हो गा,तो सभामें सिद्धकरके वतलाना मुश्किलहोगा और उसकीआलो यणा लेनीपडेगी अधिकमहीनेके दिनोंकी गिनती,व आषाढचौमासी से ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व कर- ना तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने और श्रावकके सामा यिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीक रना शास्त्रानुसार होनसे इनवातोंको कोईभी निषेधनहीं करसकता

विशेप सूचना-गये चोमासेमें हमने सब मुनिमहाराजोंको प र्युषणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमंत्रण भेजाथा तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सब मुनिमहारा जोंको सभा भरकर वर्षावर्षके अधिकमाससंबंधी इस विवादके नि र्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये, सबने चुप लगादी, अब आप लोगभी चोमासा वगैरहके बहाने ब तलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी तथा आपके पक्षके सब मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्व यंकर लेवेगी और सभा करनेका मंजूर कियेबिना व्यर्थ निष्प्रयोज नके विषयांतरके वितंडावादवाले लंबे चोडे किसीकेभी लेखका उत्त र आजसे नहीं दिया जावेगा संवत् १९७५ आषाढ वदी ३ गुरुवार, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर मुंबई

देखिये-ऊपर मुजब विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा,तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करनेको सभामें आनेका मंजूर किया नहीं विज्ञापन,७वेंमें लिखेप्रमाण,अपनी १२भूलोंको सुधारकर उसका प्रा यश्चित्तभीलियानहीं,तथा अनुक्रमसे उनभूलोंकोशास्त्रप्रमाणोंसेसाबि तकरके सत्यठहरासकेभीनहीं और हमनेशास्त्रानुसारसत्य२बातें बत लायाथा उन्होंको अंगीकारभी किया नहीं और अपने पकडेहुए झूठे

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेमें भगने चाहतेहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी ह म तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके वकील आचार्य आनन्द सागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगोडीजीकेउपाश्रयमेंहै,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकीसभाभरातीहै,यहां आपका और हमारा शास्त्रा र्थहोतोभी हमेंमंजूरहै,मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचा हिये अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहै, जहां आप लिखे वहांही सही वालकेश्वरमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाथा, कि- आनन्दसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहूंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूंगातो आनन्दसागरजीको साक्षी बनाऊंगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रति ज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दंडनायक वगै रह नियमभी मिलकर जल्दी करोयेगा

७- और आप लिखतेहै, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगये हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जबाब-म हाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छप वानेसे बहुत वर्षोंतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्त र विचार " और ' हर्षहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासबंधी लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजूरी के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ठ छपेको आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें है,औ र मैरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्ठकेपृष्ठ और पंक्तियेंकी पंक्तियें छोडकर अधूरालेख लिखकर उल टाही जवाब देतेहै, यह जवाब नहीं कहा जा सकता,सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरो बर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्तही है सत्यको कौन असत्य बना सकताहै।मगर कुयुक्तियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमनें तो आपकी

दोनों कितावोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासवधी १२ भूलेंतो विज्ञापन न ७में दिखलादी हैं, और भी बहुत है सो सभामें विशेप खुलासा होगा और७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया ओर नवमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय है, और सभामें निर्णय होनेवाला हे, जिसपरभी आप अभी किताव द्वारा जवाव मागते हैं, इससे सावित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है, अन्यथा पेसा क्यों लिखते, यदि हो तो कव विचार है, सो लिखो आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा मगर दोनों कितावोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी हे, वैसी तीसरीमेंभी होगा,तो सभामें सिद्धकरके वतलाना मुश्किलहोगा और उसकीआलोयणा लेनीपडेगी अधिकमहीनेके दिनोकी गिनती,व आपाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युपणापर्व करना तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने ओर श्रावकके सामायिकमें प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये वाद पीछेसे इरियावहीकरना शास्त्रानुसार होनसे इनवातोंको कोईभी निपेद्धनहीं करसकता

विशेप सूचना-गये चोमासेमें हमने सव मुनिमहाराजोंको पर्युपणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमत्रण भजाथा तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सव मुनिमहाराजोंको सभा भरकर वर्पोवर्पके अधिकमाससवधी इस विवादके निर्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये, सवने चुप लगादी। अव आप लोगभी चौमासा वगरहके वहाने वतलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी तथा आपके पक्षके सव मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्वयकर लेवेंगी और सभा करनेका मजूर कियेविना व्यर्थ निष्प्रयोजनके विपयातरसे वितडावादवाले लवे चौडे किसीकेभी लेखका उत्तर आजसे नहीं दिया जावेगा सवत् १९७५ आपाढ वदी ३ गुरुवार, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, मुवई

देखिये-ऊपर मुजव विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा,तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करनेको सभामें आनेका मजूर किया नहीं विज्ञापन,७वेंमें लिखेप्रमाणे अपनी १२भूलोंको सुधारकर उसका प्रायश्चित्तभीलियानहीं,तथा अनुक्रमस उनभूलोंकोशास्त्रप्रमाणोंसेसावितकरके सत्यठहरासकेभीनहीं और हमनेशास्त्रानुसारसत्यरवातें वतलायाथा उन्होंको अगीकारभी किया नहीं और अपने पकडेहुए झूठे

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेमे भगने चाहताहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी हम तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके बडील आचार्य आनदसागरजीजोअभी मुंबइमें श्रीगोडीजीके उपाश्रयमेंहै,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकी सभा भरातीहै, वहा आपका और हमारा शास्त्रार्थहोतोभी हमेंमजूरहै,मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचाहिये अथवा मुंबइमें अन्य स्थानभी बहुतहै, जहा आप लिखे वहाही सही बालकेश्वरमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाथा, कि- आनदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहूगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूगातो आनदसागरजीको साक्षी बनाऊगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रतिज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दडनायक वगैरह नियमभी मिलकर जलदी करीयेगा

७- और आप लिखतेहै, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगये हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जवाब-महाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छपवानेसे बहुत वर्षोतक खडन मडनका प्रपच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हू इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्तर विचार " और ' हृषहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासबधी लेख, व ' प्रश्नोत्तर मजूरी के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ट छपेको आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें है,और मैरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके, बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्ठकेपृष्ठ और पक्तियेंकी पक्तियें छोडकर अधूराऽलेख लिखकर उलटा ही जवाब देतेहै, यह जवाब नहीं कहा जा सकता,सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरोबर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्तही है सत्यको कौन असत्य बना सकताहै।मगर कुक्तियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमने तो आपकी

दोनों किताबोंकी उत्सूत्र प्ररूपणासंबंधी १२ भूलेंतो विज्ञापन नं ७में
दिखलादी हैं, और भी बहुत हैं सो सभामें विशेष खुलासा होगा
और ७वें विज्ञापन का तो पहिले कुछभी उत्तर आपने नहीं दिया औ
र नवमेंका देनेलगे, यह भी आपका अन्याय है, और सभामें निर्णय
होनेवाला है, जिसपरभी आप अभी किताब द्वारा जवाब मांगते हैं,
इससे साबित होताहै, कि शास्त्रार्थ करनेकी आपकी इच्छा नहीं है,
अन्यथा ऐसा क्यों लिखते, यदि हो तो कब विचार है, सो लिखो
आपकी तीसरी पुस्तककाभी उत्तर उस समय सभामें मिलजावेगा
मगर दोनों किताबोंमें जैसी उत्सूत्रता भरी है, वैसी तीसरीमेंभी हो
गा,तो सभामें सिद्धकरके बतलाना मुश्किलहोगा और उसकीआलो
यणा लेनीपडेगी अधिकमहीनेके दिनोकी गिनती,व आषाढचौमासी
से ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व कर-
ना तथा श्रीवीरप्रभुके ६ कल्याणक मान्यकरने और श्रावकके सामा
यिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीक
रना शास्त्रानुसार होनसे इनबातोंको कोईभी निषेधनहीं करसकता

विशेष सूचना-गये चौमासेमें हमने सब मुनिमहाराजोंको प
र्युषणापर्वका निर्णयकरनेकी सभा करनेकेलिये विनतीपत्रसे आमंत्रण
भेजाथा तथा 'श्रीकच्छीजैन एसोसियन सभा'नेभी सब मुनिमहारा
जोंको सभा भरकर बपावर्षके अधिकमाससंबंधी इस विवादके नि
र्णय करनेकी विनती कीथी, जिसपरभी कोई सभा करनेको न आये,
सबने चुप लगादी, अब आप लोगभी चौमासा वगैरहके बहाने ब
तलाकर सभा न करोगा, तो फिर आपकीभी हार समझी जावेगी
तथा आपके पक्षके सब मुनियोंकीभी सत्यताकी परीक्षा दुनिया स्व
यंकर लेवेंगी और सभा करनेका मंजूर कियेबिना व्यर्थ निष्प्रयोज
नके विषयांतरके वितंडावादवाले लंबे चोडे किसीकेभी लेखका उत्त
र आजसे नहीं दिया जावेगा संवत् १९७५ आषाढ वदी ३ गुरुवार,
हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर मुंबई

देखिये-ऊपर मुजब विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा,तोभी
न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करनेको सभामें आनेका मंजूर किया नहीं
विज्ञापन,७वेंमें लिखेप्रमाणे,अपनी १२भूलोंको सुधारकर उसका प्रा
यश्चित्तभीलियानहीं,तथा अनुक्रमसे उनभूलोंकोशास्त्रप्रमाणोंसेसाबि
तकरके सत्यठहरासकेभीनहीं और हमनेशास्त्रानुसारसत्य२बातें बत
लायीथी उन्होंको अंगीकारभी किया नहीं और अपने पकडेहुए झूठे

सेभी अपनी इज्जतपा बचानेपरके शास्त्रार्थकरनेसे भगने चाहताहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी ह-म तैयार है, देखो- आपकेही गच्छके आपके बडील आचार्य आनंद सागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगोडीजीके उपाश्रयमेंहै,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकीसमाभरातीहै, वहां आपका और हमारा शास्त्रार्थहोतोभी हमेंमंजूरहै,मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचा हिये अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहैं, जहां आप लिखे वहांही सही भायखलेमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाथा, कि- आनंदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहूंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूंगातो आनंदसागरजीको साक्षी बनाऊंगा सो यह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रति ज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दंडनायक वगै रह नियमभी मिलकर जलदी करोयेगा

७- और आप लिखतेहैं, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगये हरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जवाब-म हाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छप जानेसे बहुत वर्षोंतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै, और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये 'प्रश्नोत्त र विचार" और 'हर्षहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासबंधी लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजूरी के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ट छपेको आज ८ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें हैं,औ र मेरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्ठकेपृष्ठ और पंक्तियोंकी पंक्तियें छोडकर अधूरा२लेख लिखकर उल टा२ हीं जवाब देतेहैं, यह जवाब नहीं कहा जा सकता सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरो बर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्तही है सत्यको कोन असत्य बना सकताहै।मगर कुयुक्तियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमने तो आपकी

टाल दिया अब वोही किताब छपवानाचाहतेहैं, उस किताबमें सामायिक—कल्याणक-पर्युषणा-अभयदेवसूरिजी तिथि वगैरह वातोंसबंधी शास्त्रानुसार सत्य २ वातोंको झूठी ठहरानेके लिये शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठ लिखकर उन पाठोंके अपनी कल्पना मुजब जान बुझकर खोटे खोटे अर्थ करके कुयुक्तियोंसे उत्सूत्र प्ररूपणारूप और प्रत्यक्ष मिथ्या बहुतजगह लिखाहै, उसका थोडासा नमूना पाठकगणको यहापर बतलाते हैं, जिसमें प्रथम सामायिक सबंधी लिखतेहैं -

१ - श्रावकके सामायिक करनेकी विधि सबंधी सर्व शास्त्रोंमें पहिले करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका लिखाहै, देखो-श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी कृत आवश्यक सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिमें २, तिलकाचार्य जी कृत लघुवृत्तिमें ३,देवगुप्तसूरिजी कृत नवपदप्रकरण वृत्तिमें ४, लक्ष्मीतिलकसूरिजी कृत श्रावकधर्म प्रकरण वृत्तिमें ५,श्रीनवागीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी कृत पचाशक सूत्रकी वृत्तिमें६, विजयसिंहाचार्यजीकृत वदीतासूत्रकीचूर्णिमें ७, हेमचद्राचार्यजी कृत योगशास्त्र वृत्तिमें, ८, तपगच्छीय देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्यसूत्रकीवृत्तिमें ९, कुलमडनसूरिजी कृत विचारामृत सग्रहमें १०,मानविजय जी कृत धर्मसग्रह वृत्तिमें ११, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खास तप गच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका बतलायाहै

२ - श्रीमान् देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्य सूत्रवृत्तिका पाठ यहा पर बतलाताहू सो देखिये —

"श्रावकेण गृहे सामायिक कृत, ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह-साधुसाक्षिक पुन सामायिककृत्वा इर्याप्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत्। तत आचार्यादीन् वदित्वा स्वाध्याय काले चावश्यक करोति" इत्यादि

इस पाठमें गुरुपास जाकर करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछे इरियावहीकरके आचार्यादिकोंको वंदनाकरके स्वाध्यायकरना बतलायाहै और पीछे अवसर आवे तब छ आवश्यक रूप प्रतिक्रमण करनेकाभी बतलाया है।

३— श्रीहीरविजयसूरिजीके सतानीय श्रीमानविजयोपाध्याय जीकृत धर्मसग्रह वृत्तिका पाठभी देखो —

हटको छोडामी नहीं यह कितना बडा भारी अभिनिवेशिक मिथ्या त्वका आग्रह कहाजावे सो दीर्घदर्शीतत्वज्ञ जनस्वयंविचार सकतेहैं

औरभी न्यायरत्नजीने एक हैंडबील तथा 'अधिकमासदर्पण' नामा छोटीसी एक किताब छपवाया, उनमेंभी विज्ञापन ७ वेंमें जो हमने उनकी १२ भूलें बतलायीथी, उन सब भूलोंका अनुक्रमसे पूरे पूरा खुलासाकरनेके बदले १भूलकाभी पूरेपुरा खुलासा करसके नहीं और मास वृद्धिके अभावसे पर्युषणाके बाद ७० दिन रहनेका व दूसरेआषाढमें चौमासी कार्य करनेका तथाश्रावण पोषसबधी कल्याणक तप वगैरह सब बातोंका स्पष्ट खुलासापूर्वक निर्णय 'लघुपर्युषणा'में और सातवें विज्ञापनमें अच्छीतरहसे हमबतला चुकेहैं, तो भी उन्ही बातोंको बालहठकी तरह वारवार लिखे करना और स्था नागसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि, कल्पसूत्रकी टीकायें आदि बहुत शास्त्रों मे मास बढे तब पर्युषणाके बाद १०० दिन ठहरनेका कहा है, तथा अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये हैं, इसलिये अधिक महीना होवे तब ७० दिनकी जगह १०० दिन होवें उसमे कोई दोष नहीं है मगर पर्युषणापर्व किये बिना ५०वें दिनको उल्लघन करे तो जिनाज्ञा भगका दोष कहाहै,इसीलिये ५०दिनकी जगह ८०दिनतो क्या परतु ५१ दिनभी कभी नहीं होसकते इत्यादि बहुत सत्य २ बातोंको उडा देनेका उद्यम किया सो सर्वथाअनुचितहै,इनसब बातोंका विशेषनिर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इन ग्रथमें विस्तार पूर्वक शास्त्रों के प्रमाणोंसहित अच्छी तरहसे खुलासासे छपचुका है, इसलिये यहापर फिरसे लिखनेकी कोई आवश्यकता नहींहै, पाठक गण ऊपरके लेखसे सब समझ लेंगे ।

"अब हम यहा पर 'खरतरगच्छ समीक्षा' के विषयमें थोडासा लिखतेहैं, न्यायरत्नजी खरतरगच्छ समीक्षा ' नामा किताब छपवाने सबधी वारवार जाहेर खबर लिखतेहैं, यह किताब आज लगभग १२—१३ वर्षहुए उनोंने बनायाहै, जब हम सवत् १९६५ को श्री अतरिक्ष पार्श्वनाथजी महाराजकीयात्रा करनेकेलिये बराड देशमें गये थे, तब बालापुरमें न्यायरत्नजी हमकोमिलेथे, उससमय उस किताबकी कॉपी उन्होंनेहीखास मेरेको वचायाथा तब मैने उस किताबपर महानिशीथ वगैरह कितनेही शास्त्रोंका प्रमाण मागा, तब न्यायरत्नजी बोले अभीमेरे पास महानिशीथसूत्र वगेरह शास्त्र यहापर मौजूद नहींहै, फिर कभी आगेदेखाजावेगा,ऐसा कहकर उस समय बातको

टाल दिया अब वोही किताब छपवानाचाहतेहैं, उस किताबमें सामा यिक—कल्याणक-पर्युषणा-अभयदेवसूरिजी तिथि वगैरह बातोंस- वधी शास्त्रानुसार सत्य २ बातोंको झूठी ठहरानेके लिये शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठ लिखकर उन पाठोंके अपनी कल्पना मुजब जान बुझकर खोटे खोटे अर्थ करके कुयुक्तियोंसे उत्सूत्र प्ररूपणारूप और प्रत्यक्ष मिथ्या बहुतजगह लि खाहै, उसका थोडासा नमूना पाठकगणको यहांपर बतलाते है, जिसमें प्रथम सामायिक सबधी लिखतेहैं –

१ – श्रावकके सामायिक करनेकी विधि सबधी सर्व शास्त्रोंमें पहिले करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही कर नेका लिखाहै, देखो-श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी कृत आवश्यक सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिमें २, तिलकाचार्य जी कृत लघुवृत्तिमें ३,देवगुप्तसूरिजी कृत नवपदप्रकरण वृत्तिमें ४, लक्ष्मीतिलकसूरिजी कृत श्रावकधर्म प्रकरण वृत्तिमें ५,श्रीनवागीवृ त्तिकार अभयदेवसूरिजी कृत पचाशक सूत्रकी वृत्तिमें६, विजयसिंहा चार्यजीकृत वदीतासूत्रकीचूर्णिमें ७, हेमचद्राचार्यजी कृत योगशास्त्र वृत्तिमें, ८, तपगच्छीय देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्यसूत्रकीवृ त्तिमें ९, कुलमडनसूरिजी कृत विचारामृत सग्रहमें १०,मानविजय जी कृत धर्मसग्रह वृत्तिमें ११, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खास तप गच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका बतलायाहै

२ – श्रीमान् देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्य सूत्रवृत्तिका पा ठ यहा पर बतलाताहूं सो देखिये —

"श्रावकेण गृहे सामायिक कृत, ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह–साधुसाक्षिक पुन सामायिककृत्वा ईर्याप्रतिक्र म्यागमनमालोचयेत्। तत आचार्यादीन् वदित्वा स्वाध्याय काले चावश्यक करोति" इत्यादि

इस पाठमें गुरुपास जाकर करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पी छेसे इरियावहीकरके आचार्यादिकोंको वदनाकरके स्वाध्यायकरना बतलायाहै और पीछे अवसर आवे तब छ आवश्यक रूप प्रतिक्रमण करनेकाभी बतलाया है।

३— श्रीहीरविजयसूरिजीके सतानीय श्रीमानविजयोपाध्याय जीकृत धर्मसग्रह वृत्तिका पाठभी देखो —

" सामायिकगतया साधुसमक्षस्य सामायिकं करोति, तत्सूत्र यथा – ' करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि न कारवेमि, तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ' त्ति, एवं कृतसामायिक ईर्यापथिक्याप्रतिक्रामति, पश्चा दागमनमालोच्य यथा ज्येष्ठमाचार्यादीन्वन्दते, पुनरपि गुरु वन्दित्वा प्रत्युपेक्षितासने निविष्टः शृणोति पठति पृच्छति वा " इत्यादि

इनपाठमेंभी उपाश्रयमें जाकर साधुमहाराजको वंदना करके पहिले करेमिभंतेका पाठउच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकर के अनुक्रमसे बडोंके आचार्यादिकोंको वंदनाकर फिर शास्त्र सुने, बांचे या धर्म चर्चाकी बातें गुरुसे पूछता रहे ऐसा खुलासा लिखाहै

४– श्री लक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रावक धर्म प्रकरण वृत्तिका पाठमेंभी यहापर बतलायाहै, सो देखो —

" चैत्यालये विधि चैत्ये, स्वनिशाते स्वगृहे, साधुसमीपे, पोषो-शनादीना धियते अस्मिन्निति पौषधं पर्वानुष्ठानं, उपलक्षणत्वा त्सर्व धर्मानुष्ठानार्थं शालागृहं पौषधशाला तत्र वा, तत् सामायिक कार्यं श्राद्धैः सदा नोभयसंध्यमेवेत्यर्थः । कथं तद्विधिना इत्याह– ' खमासमण दाउ, इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् सामाइय मुहप त्ति पडिलेहेमित्ति भणिय, बीयखमासणपुव्वं सामाइयं ठाविंत्ति, दुन्नु खमासमण दाणपुव्वं अद्धावणयत्तो पंच मंगलं कड्ढिता ' करेमिभ ते सामाइयं इच्चाइ सामाइय सुत्तमणइ, पच्छा इरियपडिकमइ, इत्यादि

देखिये—इस प्राचीन पाठमेंभी मंदिरमें, अपने गृहमें, साधुपा स उपाश्रयमें, अथवा पौषधशालामें, जब ससारिक कार्योंसे निवृति होवे तब किसीभी समयमें सामायिक करनेका बतलाया है, सो प हिले खमासमणसे आज्ञा लेकर सामायिक मुहपतिकापडिलेहण करके फिरभी दो खमासमणसे सामायिक संदिसाहणेका तथा सामायिक ठाणेका आदेशलेकर विनयसहित करेमिभंतेका पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

५– इसीही तरहसे श्री हरिभद्रसूरिजीने आवश्यकबृहद्वृत्तिमें, श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजीने पंचाशकवृत्तिमें, श्रीहेमचंद्रा चार्यजीनें योगशास्त्रवृत्तिमें इत्यादि अनेक प्रभावक प्राचीन आचार्यों नें अनेक शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे इरि यावही करनेका खुलासा पूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

६- " पयमक्खरंपि इक्क, जो न रोएइ सुत्तनिद्दिट्ठं । सेस रोअतो वि हु, मिच्छाद्दिट्ठी जमालिव्व ॥१॥" इत्यादि शास्त्रीय प्रमाणके इस वाक्यसे सर्वशास्त्रोंकी बातोंपर श्रद्धा रखनेवालाभी यदि शास्त्रोंके एक पद या अक्षरमात्रपरभी अश्रद्धाकरे, तो उसको जमालिकीतरह मिथ्या दृष्टि समझना चाहिये । अब इस जगह श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जनोंको विचार करना चाहिये, कि—श्रीहरिभद्रसूरिजी, नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, लक्ष्मीतिलकसूरिजी,देवेंद्रसूरिजी,वगैरह महापुरुषोंके कथन मुजब आवश्यक बृहद्वृत्ति वगैरह प्रामाणिक व प्राचीन शास्त्रोंके पाठोंसे श्रावकके सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करने संबंधी जिनाज्ञानुसार सत्य बातपर श्रद्धा नहीं रखने वाले, तथा इस सत्य बातकी प्ररूपणाभी नहीं करनेवाले,और उसमुजब श्रावकोंकोभीनहीं करवानेवाले,व इससे सर्वथाविपरीत प्रथमइरियावही पीछे करेमिभंते करवानेका आग्रह करनेवालोंको ऊपरके शास्त्रवाक्य मुजब जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सम्यग्दृष्टि कैसे कहसकतेहैं, सो आपने गच्छके पक्षपातका दृष्टिरागको और परंपराके आग्रहको छोडकर तत्त्व दृष्टिसे सत्यशोधक पाठकगणको खूब विचार करना चाहिये ।

७- ऊपर मुजब सत्यबातको न्यायरत्नजीनें 'खरतर गच्छ समीक्षा'में सर्वथा उडादियाहै,और इनसत्य बातकेसर्वथा विरुद्ध होकर सामायिक करनेमें प्रथम इरियावही लिये बाद पीछेसे करेमिभंतेका उच्चारणकरनेका ठहरानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके संबंधवाले पाठोंको छोडकर विना संबंधवाले अधूरे २ (थोडे २) पाठ लिखकर अपनी मति कल्पना मुजब खोटे २ अर्थ करके व्यर्थही उत्सूत्रप्ररूपणासे उन्मार्गको पुष्ट किया है, उसकाभी यहा पर पाठकगणको निसंदेह होनेकेलिये प्रत्यक्ष प्रमाणसे थोडासा नमूना बतलाता हू. -

८- श्रीमहानिशीथसूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधान करने संबंधी चैत्यवंदन करनेकेलिये जो पाठहै, सो पहिले दिखलाताहू, यथा-

" असुहकम्मक्खयट्ठा, किंचि आयहिय चिइवंदणाई अणुट्ठिज्जा, तयात्तयट्ठे चेव उवउत्ते से भवेज्जा, जयाण से तयट्ठे उवउत्ते भवेज्जा, तया तस्सण परमेगग्गचित्त समाही हवेज्जा, तयाचेव सव्व जगजीवपाणभूयसत्ताण जहिट्ठफलसंपत्ती भवेज्जा, ता गोयमा ण अपडिक्कताए इरियावहियाए नकप्पइ चेवकाऊं किंचिइवंदण सज्झायज्झाणाइयं,फलासायमभिकखुगाण, एएण अट्ठेण गोय

मे एप गुरुई,जहाणं सस्तुत्त पोमय पत्रमगल्ल गिरपरिविम काउण तभो इरियावहिय अहीए त्ति मे गयच पणराए विहिय त इरिया पहोयाए अहीए गोयमा जहाण पत्रमगल्ल महासुयखंध से गयच इरियावहीयमहिद्दिज्जिसाण, तभो किमहिद्दि गोयमा सक्कथयाइय चे इययदण विहाण, णवर सफलयय पगट्टम चल्लीसाए आयंबिलेहिं इत्यादि "

इसपाठमें अशुभकर्मोके क्षयके लिये तथा अपनी आत्माको हितकारी होवे ऐसे चैत्यवदनादि करने चाहिये, इसमें उपयोगयुक्त हो नेसे उत्कृष्टचित्तकी समाधी होती है, इसलिये गमनागमनकी आलो चनारूप इरियावही किये विना चैत्यवदन,स्वाध्याय,ध्यानादिकरना नहीं कल्पता है, अतएव चैत्यवदनकरनेके लिये पहिले पचपरमेष्ठि नवकारमत्रके उपधान वहनकरने चाहिये उसके बाद इरियावही, नमुत्थुण, अरिहत चेइयाण वगैरहके आयंबिल उपवासादि पूर्वक उपधान वहन करने चाहिये

९ — देखिये ऊपरके पाठमें उपधान वहन करनेके अधिकार में विधिसहित उपयोगयुक्त चैत्यवदन-स्वाध्याय ध्यानादिकार्यकरने सबधी पहिले इरियावही करके पीछेसे चैत्यवदनादिकरें,ऐसा खुलासासे बतलाया है इसलिये ऊपरका पाठ पोषधग्राही उपधान वहन करनेवालों सबधीहै, और पोषध(पौषह) करनेवालोंको तो इरियावही कियेबिना चैत्यवदन, स्वाध्याय-पढना गुणना,तथा ध्या नादि नोकरवालीफेरना वगैरह धर्मकार्यकरना नहींकल्पताहै,इसलि ये यहबात तो अभीवर्तमानमेंभी सर्वगच्छवाले उसी मुजब करतेहैं मगर इस पाठमें सामायिकके अधिकारमें, प्रथम इरियावही किये बाद पीछेसे करेमिभतेका उच्चारणकरने सबधी कुछभी अधिकारका गधभी नहींहै जिसपरभीसूत्रकारमहाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर आगे पीछेके उपधानके सबधवाले सपूर्णपाठको छोडकर बीचमेंसे थोडासा अधूरापाठ लिखकर उसकाभी अपना मनमाना अर्थकरके सामायिककरने सबधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते ठहराना सो ऊपर मुजब आवश्यक चूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे सवथा उत्सूत्रप्ररूपणारूपही है।

१० – श्रीदशवैकालिकसूत्रकी दूसरीचूलिकाकी ७ वी गाथा की टीकामें साधुके गमनागमनादि कारणसे इरियावही करनेका कहा है, सो पाठभी यहापर बतलाता हू देखो :—

"अभीक्षण, पुन पुन पुष्टकारणाभावे, निर्विकृतिकश्च, निर्गत विकृतिपरिभोगश्च भवेत् । अनेनपरिभोगोचित्तविकृत्तिनामप्यका रणे प्रतिपेधमाह तथा अभीक्षण, गमनागमनादिपु, विकृति परिभो गेऽपि चान्ये किमित्याह-कायोत्सर्गकारीभवेत्, ईर्यापथिकीप्रतिक्रम णमकृत्वा न किंचिदन्यत् कुर्यादशुद्धतापत्तेरितिभाव । तथा स्वाध्या ययेगे,वाचनाद्युपचार व्यापार आचामाम्लादौ पयतोऽतिशय यत्नप रो भवेत्तथैव तस्य फलवत्वाद्विपर्यय उन्मादादि दोष प्रसगादिति"

ऊपरके पाठमें साधुओंके उपदेशके अधिकारमें-दुध दही घी-शक्कर पक्वान् वगैरह विगयोंका त्याग करनेका बतलायाहै,तथा आहार पानी-देव दर्शन या ठले- मात्रे वगैरह गमनागमनादि कार्योंसे इरि यावही किये विना कायोत्सर्गकरना,स्वाध्याय-सूत्रपाठपढना गुणना, ध्यानादि करना नहीं कल्पे, इस लिये पहिले इरियावही करके पीछे सूत्र वाचनादि कार्योंमें प्रवृत्ति करें, इत्यादि

११ — इस ऊपरके पाठमेंभी साधुओंके गमनागमनादिकारण से व स्वाध्यायादि करनेकेलिये इरियावहीकरनेका बतलाया है, मगर श्रावकके सामायिक करनेसबधी प्रथम इरियावहीकरके पीछे करेमि भते उच्चारण करनेका नहीं बतलायाहै,जिसपरभी पचमहाव्रतधारी स र्व विरति साधुओंके इरियावहीके पाठका आगे पीछेका सबध छोड कर अधूरे पाठसे सामायिकका अर्थ करना बडी भूल है

१२- इसी तरहसे किसी जगह पौपधसबधी इरियावहीके, कि सी जगह उपधानसबधी इरियावहीके, किसीजगह साधुओंके गम नागमन सबधी इरियावहीके,किसी जगह प्रतिक्रमण सबधी इरिया वहीके, किसीजगह चैत्यवदन- स्वाध्याय-ध्यानसबधी इरियावही के अक्षरोंको देखकर उन जगहके प्रसगसबधी शास्त्रकारोंके अभि प्रायकोसमझेविनाही अथवा तो अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेके लिये आवश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रपाठोंकेविरुद्धहोकर पौपधादिसबधी इरियावही को सामायिकमें जोडकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभतेके पाठका उच्चारण करनेका ठहराना सो सर्वथा प्रकारसे अज्ञानतासे या जान बुझकरके उत्सूत्रप्ररूपणारूपही मालूम होता है

देखिये— सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्था पन करनेवालोंको अनेक दोषोंकी प्राप्ति होतीहै, सोही दिखाताहू -

१३ – जैनाचार्योंकी शास्त्ररचना अविसवादी पूर्वापर विरोध

रहित होती है, तथा पूर्वापर विरोधी विसवादीको शास्त्रोंमें मिथ्या त्वी कहा है, और श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने आवश्यक बृहद्वृ त्तिमें तथा श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्तिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका साफ खुलासा लिखाहै, और महा निशीथ सूत्रका उद्धारभी इन्हीं महाराजने किया है, इसलिये महा निशीथ सूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन कर नेमें आवें, तो श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजको विसवादी कथनरूप मि थ्यात्वके दोष आनेकी आपत्ति आतीहै, इसलिये आवश्यक वृत्ति आ दिके विरुद्ध होकर इन्हीं महाराजके नामसे महानिशीथसूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करना सो पूर्वापर विसवाद रूप मिथ्यात्वका कारण होनेसे सर्वथा अनुचित है।

१४- महानिशीथसूत्रके पाठसे 'इरियावही किये बिना कुछभी धर्म कार्य नहीं कल्पे,' इसलिये सर्व धर्मकार्य इरियावही करके ही करने चाहिये, ऐसा एकांत आग्रह करोंगे तो भी नहीं बन सकेगा, क्योंकि देखो-देव दर्शनको या गुरु वंदनको जाती वख्त १, जिनप्रति माको या गुरुको देखतेही नमस्काररूप वंदना करती वख्त २, तीर्थ- यात्राको जाती वख्त ३, नवकारसी,पोरसी, उपवासादि पच्चक्खा ण करती वख्त ४, मंदिरमें जघन्य चैत्यवंदन करती वख्त ५, गुरुम हाराजको आहारवस्त्रादि वहोराती वख्त ६,इत्यादि अनेक धर्मकार्य इ रियावही कियेबिनाभी प्रत्यक्षपने करनेमें आते हैं, इसलिये इरियावही किये बिना कुछभी धर्मकार्य नहीं करना, ऐसा एकांत आग्रह करना सो सर्वथा विवेक बिनाकाही मालूम होताहै,इसलिये कोन२ कार्यों में पहिले इरियावही करना, कौन २ कार्योंमें पीछेसे इरियावही क रना, व कौन २ कार्य इरियावही किये बिनाभी हो सकतेहैं, इन बातों का गुरुगम्यतासे भेद समझे बिना सामायिकमें प्रथम इरियावही क- रनेका एकांत आग्रह करना सो अज्ञानतासे सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै

१५-औरभीदेखिये-स्वाध्याय,ध्यानादिमें प्रथम इरियावही कर नाकहाहै,उसमें आदि पदसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही करने का आग्रहकियाजावे, तो भी सर्वथाअनुचितहै क्योंकि देखो श्रीखरत रगच्छनायक श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, तथा कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचंद्राचार्यजी ओर खास तपगच्छनायक श्रीदेवेंद्रसूरिजीआदि पूर्वाचार्योंने महानिशीथसूत्र अवश्यही देखाथा तथा स्वाध्यायध्यान आदिपदका अर्थभी अच्छीतरहसे जानने वालेथे

तोभी सामायिकमें प्रथम इरियावही करनेका नहीं कहते हुए अपने २ बनाये ग्रथोंमें सामायिकमें प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही कर नेकाखुलासा लिखगयेहैं, उसका भावार्थ समझेविनाही उन महारा जोंके विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करतेहैं, सो उन महाराजोंके वचन उत्थापनरूप और उन महाराजोंके वि रुद्ध प्ररूपणा करनेरूप दोषके भागी होते हैं।

१६– दशवैकालिकसूत्रकी टीकाके पाठसेभी 'इरियावही किये वि ना कोईभी कार्यकरें तो अशुद्ध होताहे', इस बात परसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्थापन करतेहैं सो भी बडीही भू लहै, क्योंकि यह तो जैनसमाजमें प्रसिद्धही बात है, कि–दशवैका लिकमूलसूत्रमें और उसकी टीकामें सर्वजगह साधुओंके आचार वि चार कर्तव्य सबधीही अधिकार है, उसमें किसी जगहभी श्रावकके सामायिक वगैरह कार्योंसबधी कुछभी अधिकारनहींहै, इसलिये सा॰ धुओंके गमनागमनसे जाने आनेसे इरियावही करके पीछे स्वाध्या य, ध्यानादिधर्म कार्य करने बतलाये हैं, उसके आगे पीछेके सबध वाले पाठको छोडकर अधूरे पाठसे सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करना सर्वथा अनुचित है

१७– श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजने'आवश्यकसूत्र'की बडी टीकामें तथा श्री उमास्वातिवाचक विरचित 'श्रावकप्रज्ञप्ति' की टीकामेंभी सामायिकमें प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही कहना खुलासा लिखा है, और इन्ही महाराजने श्रीदशवैकालिकसूत्रकी टीकाभी बनाया है, इसलिये इन्हीं महाराजके नामसे दशवैकालिकसूत्रकीटीकाके पाठसे प्रथम इरियावही स्थापन करनेसे इन महाराजके कथनमें पूर्वापर विरोधभाव विसवादरूप दोषकी प्राप्ति होतीहै,इसलिये इनमहाराज के अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे पाठसे सामायिक सबधी खोटा अर्थ करके विसवादका झूठा दोष लगाना बडी भूल हे यह महारा- जतो विसवादी नहीं थे मगर सबध विरुद्ध आग्रह करनेवालेही प्र- त्यक्ष मिथ्या भाषणसे बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके दोषी ठहरतेहे

१८ – श्रीदेवेंद्रसूरिजी महाराजने 'श्राद्धदिनकृत्य'सूत्रकीवृत्तिमें प्र थम करेमिभते पीछे इरियावही खुलासा लिखाहै, तथा धर्मरत्न प्र करणकी वृत्तिमें तो वाचना,पृच्छना, परावर्तना, अनुप्रेक्षा व धर्मक- थारूप पाचप्रकारकीस्वाध्यायकरने सबधी अधिकारमें सिर्फ परावर्त नारूप (शास्त्रपाठ पढे हुए फिरसे याद करने रूप)स्वाध्याय करनेके

लिये इरियावही करनेका बतलायाहै, उसका आशय समझे बिनाही अपने गच्छके पूर्वज आचार्य महाराजकोभी विसवादरूप मिथ्यात्व का दोष लगानेका भय नहीं करते हुए सामायिकमें प्रथम इरियाव ही स्थापन करते हैं, सो भी बडी भूल करते हैं

१९ – औरभी देखो धर्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें "इरिय सु पडिक्कतो कड समइय" इरियावही पूर्वक स्वाध्याय करे, ऐसा पाठ है, उसमें 'समइय' शब्दकीजगह 'सामाइय' शब्द बनाकर दो मात्राज्यादे अधिक पाठमें प्रक्षेप करके स्वाध्यायकी जगह सामायिकका अर्थ बदलातेहैं सो यहभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणारूप बडीभूलहै

२०– श्रीधर्मघोषसूरिजीने 'संघाचारभाष्यवृत्ति' में चैत्यवदन सब धी दशत्रिकके अधिकारमें सातवी त्रिकमें तीनवार भूमिप्रमार्जन करके इरियावहीपूर्वक–चैत्यवदन करनेका बतलाया है, उसकेभी पूर्वापरका सबध छोडकर उसपाठका भावार्थ समझे विना उसपाठसे भी सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते ठहराते हैं, और इन महाराजकेही गुरु महाराज श्रीदेवेंद्रसूरिजीने प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही लिखा है, उस बातके विरुद्ध प्ररूपणाकरनेवाले बनाते हैं, सो भी बडी भूल है

२१–वदीत्तासूत्रकीटीकाके पाठसेभीसामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते ठहरातेहैं, सोभी सर्वथाअनुचितहै, क्योंकि देखो–वदीत्तासूत्रकी प्राचीन चूर्णि और श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति वगैरह अनेकप्राचीन शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा है और खास वदीत्तासूत्रकी टीकामेंभी नवमा सामायिक व्रतकी विधि सबधी आवश्यकचूर्णि, पचाशकचूर्णि, योग शास्त्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार सामायिककरनेकी विधि लिखाहै उन्ही सर्व शास्त्रोंमें भी प्रथम करेमिभते ओर पीछे इरियावही लिखाहै, इसलिये प्राचीन चूर्णि आदिअनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होकर पूर्वापर विसवादीरूप विरोधी कथन — एकही विषयमें, एकही ग्रथमें, कभी नहीं हो सकताहै, जिसपरभी एकही विषयमें, एकही ग्रथमें विसवादी कथन माननेवाले या कहनेवाले शास्त्रविरुद्ध श्रद्धा रखनेवाले सवथा अज्ञानी समझने चाहिये

२२– पचाशकसूत्रकी चूर्णिके पाठसेभी नवमें सामायिक व्रतमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभतेका स्थापन करते हैं, सो भी सर्वथा अनुचितहै क्योंकि इन्हीं चूर्णिमें नवमें सामायिकव्रत सबधी प्रथम

करेमिभंतेपीछे इरियावहीकरनेका खुलासा लिखाहै, जिसपरभी चूर्णिके लिखे सत्य पाठको छुपा देना, और चूर्णिकारने रात्रिपौषध वालोंके लिये ११ वा पौषधव्रत सबधी इरियावही लिखी है, उसको चूर्णि कारके अभिप्राय विरुद्ध होकर ९ वें सामायिक व्रतमें भोले जीवों-को दिखलाना, सो मायावृत्तिरूपप्रपचसे प्रत्यक्षझूठबोलकर शास्त्रवि-रुद्ध प्ररूपणा करना ससारवृद्धिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको क दापि योग्यनहींहै यहापर लडकोंके खेल जैसी प्रपचताकी बातें नहीं है, किंतु सर्वज्ञ शासनकी बातें है, इसलिये एकही ग्रथमें, एकही वि षयमें, एकही पूर्वाचार्यको पूर्वापर विरोधी विसवादी कथन करने वाले ठहराना, सो बडी अज्ञानताहै अथवा जान बुझकर पूर्वाचार्यों की आशातनाका और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाका भय न रखकर इस लोककी पूजा मानताकेलिये अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेकेलिये व्यर्थही एसी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते होंगे, सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने हम इस बातमें विशेष कुछभी नहीं कहसकते है।

२३-इसीतरहसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते कह नेका स्थापनकरनेवाले न्यायरत्नजीआदिको पूर्वाचार्योंको विसवा दीके झूठे दोषलगानेके हेतूभूत तथा अनेक शास्त्रोंके विरुद्धप्ररूपणा करनेरूप अनेक दोषोंके भागी होनापडता है, और पूर्वाचार्योंको झूठा दोष लगानेकी आशातनासे तथा शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्धप्ररू-पणा करनेसे आपने व अपने पक्षके आग्रहकरनेवाले बालजीवोंकेभी ससारवृद्धिका कारणरूप महान् अनर्थ होता है, यही सर्व बातें न्या यरत्नजीने ' खरतरगच्छ समीक्षा ' में सामायिकमें प्रथम करेमिभते पीछे इरियावहीकरनेकी आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रानु सार सत्य बातको निषेध करनेके लिये और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्थापन करनेके लिये महानिशीथ-दशवैकालिक सूत्रकी टीकाकारवगैरह बहुतशास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे२पाठोंसे उलटा२सबध लगाकर उत्सूत्रप्ररूपणासे बडा अनर्थ किया है, उसका नमूनारूप थोडासा सामायिक सबधी पाठकगण को निसदेह होनेकेलिये हमनें ऊपरमें इतना लिखाहै मगर इस प्र करणका विशेष खुलासा पूर्वक इसीही "बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रथके पृष्ठ३०९से३२९तक अच्छी तरहसे छप चुका है, वहांसे विशेष जान लेना और " आत्मभ्रमोच्छेदनभानु " नामा ग्रथमेंभी विस्तारपूर्वक शास्त्रोंके पाठोंसहित निर्णय हमारी तरफसे छप चुका है, इस लिये

लिये इरियावही करनेका बतलायाहै,उसका आशय समझे बिनाही अपने गच्छके पूर्वज आचार्य महाराजकोभी विसंवादरूप मिथ्यात्व का दोष लगानेका भय नहीं करते हुए सामायिकमें प्रथम इरियाव ही स्थापन करते हैं, सो भी बडी भूल करते हैं

१९ – औरभी देखो धर्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें "इरिय सु पडिक्कमो कह समइय " इरियावही पूर्वक स्वाध्याय करें, ऐसा पाठ है,उसमें ' समइय ' शब्दकीजगह ' सामाइय ' शब्द बनाकर दो मात्राज्यादे अधिक पाठमें प्रक्षेपन करके स्वाध्यायकी जगह सामायिकका अर्थ बदलतेहैं सो यहभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणारूप बडीभूलहै

२०– श्रीधर्मघोषसूरिजीने 'संघाचारभाष्यवृत्ति' में चैत्यवंदन संब धी दशत्रिकके अधिकारमें सातवी त्रिकमें तीनवार भूमिप्रमार्जन क रके इरियावहीपूर्वक-चैत्यवंदन करनेका बतलाया है, उसकेभी पू र्वापरका संबंध छोडकर उसपाठका भावार्थ समझे विना उसपाठसे भी सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरते हैं, और इन महाराजकेही गुरु महाराज श्रीदेवेंद्रसूरिजीने प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही लिखा है, उस बातके विरुद्ध प्ररूपणाकरनेवाले ब नाते हैं, सो भी बडी भूल है

२१-वंदीत्तासूत्रकीटीकाके पाठसेभीसामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरातेहै,सोभी सर्वथाअनुचितहै,क्योंकि देखो-वंदी त्तासूत्रकी प्राचीन चूर्णि और श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति वगैरह अनेकप्राचीन शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा है और खास वंदीत्तासूत्रकी टीकामेंभी नवमा सामायिक व्रतकी विधि संबंधी आवश्यकचूर्णि,पंचाशकचूर्णि,योग शास्त्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार सामायिककरनेकी विधि लिखाहै उन्ही सर्व शास्त्रोंमें भी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखाहै, इसलिये प्राचीन चूर्णि आदिअनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होकर पूर्वापर विसंवादीरूप वि विरोधी कथन — एकही विषयमें , एकही ग्रंथमें , कभी नहीं हो सकताहै, जिसपरभी एकही विषयमें, एकही ग्रंथमें विसंवादी क थन माननेवाले या कहनेवाले शास्त्रविरुद्ध श्रद्धा रखनेवाले सर्वथा अज्ञानी समझने चाहिये

२२– पंचाशकसूत्रकी चूर्णिके पाठसेभी नवमें सामायिक व्रतमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करते हैं,सो भी सर्वथा अनुचितहै क्योंकि इन्हीं चूर्णिमें नवमें सामायिकव्रत संबंधी प्रथम

करेमिभंते पीछे इरियावहीकरनेका खुलासा लिखाहै, जिसपरभी चूर्णिके लिखे सत्य पाठको छुपा देना, और चूर्णिकारने रात्रिपौषध वालोंके लिये ११ वा पौषधव्रत संबंधी इरियावही लिखी है, उसको चूर्णिकारके अभिप्राय विरुद्ध होकर ९ वें सामायिक व्रतमें भोले जीवोंको दिखलाना, जो मायावृत्तिरूपप्रपंचसे प्रत्यक्षझूठबोलकर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करना संसारवृद्धिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको कदापि योग्यनहींहै यहांपर लडकोंके खेल जैसी प्रपंचताकी बातें नहीं है, किंतु सर्वज्ञ शासनकी बातें है, इसलिये एकही ग्रंथमें, एकही विषयमें, एकही पूर्वाचार्यको पूर्वापर विरोधी विसंवादी कथन करने वाले ठहराना, सो बडी अज्ञानताहै अथवा जान बुझकर पूर्वाचार्यों की आशातनाका और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाका भय न रखकर इस लोककी पूजा मानताकेलिये अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेकेलिये व्यर्थही एसी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते होंगे, सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने हम इस बातमें विशेष कुछभी नहीं कहसकते है।

७३-इसीतरहसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका स्थापनकरनेवाले न्यायरत्नजीआदिको पूर्वाचार्योंको विसंवादीके झूठे दोषलगानेके हेतुभूत तथा अनेक शास्त्रोंके विरुद्धप्ररूपणा करनेरूप अनेक दोषोंके भागी होनापडता है, और पूर्वाचार्योंको झूठा दोष लगानेकी आशातनासे तथा शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्धप्ररूपणा करनेसे आपने व अपने पक्षके आग्रहकरनेवाले बालजीवोंकेभी संसारवृद्धिका कारणरूप महान् अनर्थ होता है, यही सर्व बातें न्यायरत्नजीने 'खरतरगच्छ समीक्षा' में सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीकरनेकी आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रानुसार सत्य बातको निषेध करनेके लिये और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेके लिये महानिशीथ-दशवैकालिक सूत्रकी टीकाकारवगैरह बहुतशास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे२पाठोंसे उलटा२संबंध लगाकर उत्सूत्रप्ररूपणासे बडा अनर्थ किया है, उसका नमूनारूप थोडासा सामायिक संबंधी पाठकगण को निसंदेह होनेकेलिये हमनें ऊपरमें इतना लिखाहै मगर इस प्रकरणका विशेष खुलासा पूर्वक इसीही 'बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रंथके पृष्ठ३०९से३२९तक अच्छी तरहसे छप चुका है, वहांसे विशेष जान लेना और "आत्मभ्रमोच्छेदनभानु" नामा ग्रंथमेंभी विस्तारपूर्वक शास्त्रोंके पाठोंसहित निर्णय हमारी तरफसे छप चुका है, इस लिये

यहांपर फिरसे ज्यादे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है ।

२४-अब सत्यप्रिय पाठकगणसे हमारा इतनाही कहनाहै, कि-महा निशीथसूत्रके उपधानचैत्यवदनसबधी इरियावहीके अधूरे पाठसे, तथा दशवैकालिककी टीकाके साधुओंके स्वाध्याय करनेंसबधी इरियावहीके अधूरे पाठसे, श्रीहरिभद्रसूरिजीमहाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्थापन करतेहै, और इन्हीं महाराजने जिनाज्ञानुसारही प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक आवश्यकसूत्रकी बडी टीकामें लिखा है, उसको निषेध करतेहै, या उसपर अविश्वास लाकर कुयुक्तियोंसे भो लेजीवोंकोभी उस बातपर शकाशील बनातेहै, वो लोग जिनाज्ञा विरुद्धहोकर उत्सूत्रप्ररूपणाकरतेहुए अपनें सम्यक्त्वकोमलिन करतेहैं

२५-और किसीभी प्राचीन पूर्वाचार्यमहाराजोंनेअपने बनाये किसी भी ग्रथमें, किसी जगहभी ९ वें सामायिकव्रतसबधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते नहींलिखा मगर खास तपगच्छादि सर्व गच्छों के सर्वपूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही स्पष्ट खुलासा पूर्वक लिखा है, इसलिये इस बातमें पाठातरसे पहिले इरियावहीभी नहीं कह सकते, जिसपरभी पाठातरके नामसे पहिले इरियावही स्थापन करें सो भी शास्त्रविरुद्ध होनेसे प्रत्यक्ष मिथ्या है

२६- और कितनेक अज्ञानी लोग अपनी मति कल्पनासे कहते हैं, कि- पहिले इरियावही करें तो क्या, और पीछे करें तो भी क्या, किसी तरहसे सामायिक तो करनाहै, ऐसा मिश्र भाषण करने वालेभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते हैं, उन लोगोंको सामायिकमें प्रथम करेमिभते कहनेसबधी शास्त्रकारोंके गभीर अभिप्राय को समझमें नहीं आया मालूम होताहै, नहीं तो ऐसा शास्त्रविरुद्ध मिश्र भाषण कभी नहीं करते क्योंकि देखो सर्व शास्त्रोंमें स्वाध्याय, ध्यान, प्रतिक्रमण, पौषधादिधर्मकार्योंमें पहिले इरियावही कहाहै, और सामायिकमें करेमिभते पहिले कह बाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, सो इसमें गुरुगम्यताका अतीव गभीरार्थवाला कुछभी रहस्य होना चाहिये, नहीं तो सर्व शास्त्रोंमें महान् शासन प्रभावक श्री हरिभद्रसूरिजी, नवागीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, कलिकाल सर्वज्ञविरुद्धधारक हेमचद्राचार्यजीआदिगीतार्थमहाराज प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही कभी नहीं लिखते इसलिये इनमहाराजोंके गभीरआशयको समझेबिना इनसे विरुद्ध प्ररूपणा करना बडी भूलहै

२७– कितनेकलोग अपना असत्य आग्रह छोडसकतेनहीं,व सत्य बात ग्रहणभी कर सकते नहीं, इसलिये भोले जीवोंको अपने पक्षमें लानेके लिये जान बुझकर कुतर्क करते हैं, कि, श्रीआवश्यक सूत्रकी चूर्णि-बृहद्वृत्ति- लघुवृत्ति-पचाशकचूर्णि-वृत्ति-श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ति-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति-नवपद प्रकरणवृत्ति-योगशास्त्र वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें सामायिकमें पहिले करेमिभतेका उच्चारण करके पीछेसे इरियावही करनेका कहाहै, सो वह शास्त्र पाठ स्वाध्याय सबधीहै ? या चैत्यवदन-गुरुवदन सबधीहै ? या आलोयणा सबधी है? अथवा सामायिक सबधीहै? इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, उससे वह शास्त्र पाठ सामायिक सबधीहै, ऐसा निश्चयनहींहोसकता इसलिये उनशास्त्रपाठोंके अनुसार सामायिकमें पहिले करेमिभते पीछे इरियावही कैसे किया जावे ? ऐसीर कुतर्क करतेहैं,सो सर्वथा झूठीहीहै,क्योंकि ऊपरके सर्व शास्त्रपाठोंमें श्रावकके १२ व्रतोंमें ९में सामायिकव्रतसबधी सामायिक करनेके लियेही सामायिककी विधिसबधी खुलासापूर्वक प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका लिखाहै,उसके विषयमें सत्य ग्रहण करनेवाले आत्मार्थी भव्यजीवोंको निस्सदेह होनेकेलिये थोडेसे शास्त्रोंके पाठभी यहा पर बतलाते हैं

२८— श्री यशोदेव सूरिजी महाराज कृत श्री पचाशक सूत्रकी चूर्णिका पाठ देखो—

"तिविहेण साहुणो णमिऊण सामाइय करेइ 'करेमिभंते ! सामाइअ' एवमाइ उच्चरिऊण, तउ पच्छा इरियावहीयाए पडिक्कमइ, आलोएत्ता, वदित्ता आयरियादि, जहा– रायणिए, पुणरवि गुरु वदित्ता, पडिलेहित्ता णिविट्ठो पुच्छति पढति वा" इत्यादि

२९– श्रीचद्रगच्छीय श्रीविजयसिंहाचार्यजी कृत श्रावकप्रतिक्रमण [वदित्तासूत्र] की चूर्णिका पाठ भी देखो –

"वदिऊण थोभ वदणण गुरु सदिसाविऊण सामाइय दडकमणु कड्ढिय, जहा– 'करेमिभते ! सामाइय, जाव-अप्पाण वोसिरामि' तओ इरिअ पडिक्कमिय आगमण आलोएइ, पच्छा, जहा-जेट्ठ साहुणो वदिऊण, पढइ सुणइ वा" इत्यादि

३०– श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रावकधर्मप्रकरणवृत्तिका पाठ यहापर दिखलाताहू यथा– "अत्र क्रियमाण श्राद्धाना सामायिक निष्प्रत्यूह निर्वहति तत्स्थानमुपदिशति—

चैत्यालये साधुनाते, साधूनामन्तिकेऽपि वा ॥
पार्थे पौषधशालाया, आहिम्नविधिना सदा ॥ १ ॥

व्याख्या- चैत्यालये जिनभवने, स्वनिकेते स्वगृहेऽपि विजन स्थान इत्यर्थः । साधुसमीपे, पौष शालादीना धौतत्वेनेति पौषध पर्वानुष्ठान उपलक्षणात् सर्वधर्मानुष्ठानार्थं शालागृह पौषधशाला, तत्र वा तत् सामायिक कार्यं श्राद्धैः सदा नाम्यमस्यमेवेत्यर्थः । क थतद्विधिना इत्याह-खमासमण दाउ इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामाइयमुहपत्ति पडिलेहेमि त्ति भणिय, बीय खमासमण पुव्व मुहप त्ति पडिलेहिय, पुणरवि पढम खमासमणेण सामाइय संदिसाविय, बी य खमासमणपुव्व सामाइय ठामि त्ति वुत्त, खमासमणदाणपुव्व भ द्धाविणय गत्तो पचमगल कड्ढित्ता 'करेमि भंते ! सामाइय सावज्ज जोग पच्चक्खामि जाव नियम पज्जुवासामि दुविह तिविहेण मणेण वायाए काएण न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कमामि नि दामि गरिहामि अप्पाण वोसिरामि ' त्ति सामाइय सुत्त भणति, त ओ पच्छा इरियपडिक्कमति, इत्यादिपूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन। अत्र च ईर्या प्रतिक्रम्यैव सामायिकोच्चारण यत्केचिदाचक्षते तात्सिद्धातावनु त्तीर्णम्,यत उक्तमावश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्त्यादौ- यथा " करेमिभंते ! सामाइय सावज्ज जोग पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविह तिविहेणमिति, काउण पच्छा इरिअ पडिक्कमइ त्ति " इत्यादि

२१-श्रीपार्श्वनाथस्वामीके संतानीय परपरामें श्रीउपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजी महाराजने श्री नवपदप्रकरणवृत्तिमेंभी प्रथम करे मिभंते पीछे इरियावही सामायिक सबधी कहा है, सो पाठभी यहा पर बतलाते हैं, यथा --

" आवश्यक चूर्ण्याद्युक्त समाचारी त्वियं-सामायिक श्रावकेण कथ कार्यं ? तत्रोच्यते- श्रावको द्विविधोऽनृद्धिप्राप्त ऋद्धिप्राप्तश्च, तत्राद्यश्चैत्यगृहे, साधुसमीपे,पौषधशालाया, स्वगृहे वा यत्र वा वि श्राम्यति तिष्ठति च निर्व्यापारस्तत्र करोति, चतुर्षु स्थानेषु नियमेन करोति, चैत्यगृहे, साधुमूले पौषधशालाया स्वगृहे वा अवश्य कुर्वा ण इति एतेषु च यदि चैत्यगृहे साधुमूले वा करोति,तत्र यदि केनाऽ पि सह विवादो नास्ति यदि भय कुतोऽपि न विद्यते, यस्य कस्यापि किंचिद् न धारयति मा तत्कृताकर्षापकर्षा भूता, यदि वाऽधम वर्ण्य मवर्ण्यमवलोक्य न गृह्णीयात्, मा भाक्षीत् इति बुद्ध्या यदि वा ग च्छन् न किमपि व्यापार व्यापारयेत् तदा गृहे एव सामायिक गृही

त्वा चैत्यगृह साधुमूल वा यथा साधु पचसमितिसमितस्त्रिगुप्ति गुप्तस्तथा याति, आगतश्च त्रिविधेन साधुन् नमस्कृत्य तत्साक्षिक पुन सामायिक करोति " करेमिभते ! सामाइय सावज्ज जोग पच्च क्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविह तिविहेण " इत्यादि सूत्रमु च्चार्य, तत , ईर्यापथिकीं प्रतिक्राम्यति, आगमन चालोचयति तत , आचार्यादीन् यथारत्नाधिकतयाभिवद्य सर्वसाधून् , उपयुक्तोपविष्ठ पठति, पुस्तक वाचनादि वा करोति । चैत्यगृहे तु यदि वा साधवो न सति, तदा ईर्यापथिकी प्रतिक्रमण पूर्वमागमनालोचन च विधाय चैत्यवदना करोति,पठनादि विधत्ते,साधुसद्भावे तु पूर्व एप विधि । एव पौपधशालायामपि । केवल यथा गृहे आवश्यक कुर्वाणोगृह्णा ति—तथैव गमनविरहित इत्यादि । तथा ऋद्धिप्राप्तस्तु चैत्यमूल साधुमूल वा महद्धर्यैव एति, येन लोकस्य आस्था जायते चैत्यानि साधवश्च सत्पुरुपपरिग्रहेण विशेप पूज्यानि भवति पूजित पूजक त्वात् लोकस्य । अतस्तेन गृहे एव सामायिकमादाय नागतव्यमधि करण भयेन हस्त्यश्वाद्यनानयनप्रसगात् ,आगतश्च चत्यालये विधिना प्रविश्य चैत्यानि च द्रव्य-भावस्तवेनाभिष्टुत्य, यथासभव साधुस मीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्व "करेमिभते ! सामाइय सावज्ज जो ग पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविह तिविहेण मणेण वा याए काएण न करेमि न कारवेमि तस्स भते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाण वोसिरामि " त्ति उच्चाय ईयापथिक्यादि प्रति क्राम्य यथा रत्नाधिकतया सर्वसाधूश्चाभिवद्य प्रश्नादि करोति, सा मायिक च कुर्वाण एप मुकुटमुपनयति कुडलयुगलनाम मुद्रे च पु- ष्प ताबूल पावरणादिव्युत्सृजति। किंच यदि एप श्रावक एव तदाऽ स्यागमनवेलाया न कश्चिदुत्तिष्ठति, अथ यथा भद्रकस्तदाऽस्यापि सन्मानो दर्शितो भवति,इति बुद्धया आचार्याणा पूर्वरचितमासनभ्रि यते अस्य च, आचार्यास्तु उत्थायैवतस्ततश्चक्रमण कुर्वाणा आसते तावद् यावदेप आयाति, तत सममेवोपविशति । अन्यथा उत्था नानुत्थानदोपाविभाव्या , एतच्च प्रासगिकमुक्तम् । प्रकृत तु सामा यिकस्थेन विकथादि न कार्य,स्वाध्यायादिपरण आसितव्य" इत्यादि

३२-श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेंद्रसूरिजी महाराज कृत श्राद्धदिन कृत्यसूत्रकी वृत्तिका पाठभी देखो –

"तओ वियाल वेलाए,अत्थमिए दिवायरे।पुन्नुत्तेण विहाणेण,पुणो वदे जिणोत्तमे ॥२८॥ तओ पोसहसाल तु,गतुण तु पमज्जए। ठावित्ता

चैत्यालये स्वनिशान्ते, साधूनामन्तिकेऽपि वा ॥
कार्यं पौषधशालायां, श्राद्धैस्तद्विधिना सदा ॥ ९ ॥

व्याख्या- चैत्यालये जिनमन्दिरे, स्वनिशान्ते स्वगृहेऽपि विजन स्थान इत्यर्थः । साधुसमीपे, पौषो धर्मपुष्टिं धत्तेऽनेनेति पौषध पर्वानुष्ठान उपलक्षणात् सर्वधर्माऽनुष्ठानानि तेषां गृहं पौषधशाला, तत्र वा तत् सामायिकं कार्यं श्राद्धैः सदा नित्यमप्येवेत्यर्थः । क थं तद्विधिना इत्याह-खमासमण दाउ इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामाइयमुहपत्ति पडिलेहेमि त्ति भणिय, बीय खमासमण पुव्व मुहप त्ति पडिलेहिय, पुणरवि पढम खमासमणेण सामाइय संदिसाविय, बी य खमासमणपुव्वं सामाइय ठामि त्ति वुत्तं, खमासमणदाणपुव्व अ द्धावणय गत्तो पचमंगल कड्डित्ता ' करेमि भंते ! सामाइय सावज्ज जोग पच्चक्खामि जाव नियम पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कमामि निं दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ' त्ति सामाइय सुत्तं भणति, त ओ पच्छा इरियपडिक्कमति, इत्यादिपूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन। अत्र च ईर्या प्रतिक्रम्यैव सामायिकोच्चारणं यत्केचिदाचक्षते तत्सिद्धान्तादुत्तीर्णम्,यत उक्तमावश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्यादौ- यथा " करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणमिति, काउण पच्छा इरिअं पडिक्कमइ त्ति " इत्यादि

३१-श्रीपार्श्वनाथस्वामीके संतानीय परंपरामें श्रीउपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजी महाराजने श्री नवपदप्रकरणवृत्तिमेंभी प्रथम करे मिभंते पीछे इरियावही सामायिक संबंधी कहा है, सो पाठभी यहां पर बतलाते हैं, यथा --

" आवश्यक चूर्ण्युक्त समाचारी त्वियं-सामायिकं श्रावकेण कथं कार्यं ? तत्रोच्यते- श्रावको द्विविधोऽनृद्धिप्राप्तः ऋद्धिप्राप्तश्च, तत्राद्यश्चैत्यगृहे, साधुसमीपे,पोषधशालायां, स्वगृहे वा यत्र वा वि श्राम्यति तिष्ठति च निर्व्यापारस्तत्र करोति, चतुर्षु स्थानेषु नियमेन करोति, चैत्यगृहे, साधुमूले पोषधशालायां स्वगृहे वा अवश्यं कुर्वा ण इति एतेषु च यदि चैत्यगृहे साधुमूले वा करोति,तत्र यदि केनाऽ पि सह विवादो नास्ति यदि भयं कुतोऽपि न विद्यते, यस्य कस्यापि किंचिद् न धारयति मा तत्कृत,कर्षापकर्षौ भूतां, यदि वाऽधमर्णं वर्ण्य मवर्ण्यमवलोक्य न गृह्णीयात्, मा भाक्षीत् इति बुद्ध्या यदि वा ग च्छन् न किमपि व्यापारं व्यापारयेत् तदा गृहे एव सामायिकं गृही

करसावद्य योगका त्याग करके साधुकी तरह पचसमिति और तीन गुप्तिसहितउपयोगसे गुरुमहाराजपास आकर फिर सामायिकका उच्चारणकरके पीछे इरियावहीपूर्वक स्वाध्यायादि करनेकावतलाया

६-शामको छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमणकरनेकेलिये पहिले मदिरमें देवदर्शन,पूजा आरति वगैरहकरके पीछे उपाश्रय या पौपधशालामें आकर गुरुके अभावमें भूमिका प्रमार्जनपूर्वक सामायिककरनेके लिये नवकार गुणकर स्थापनाचार्यकी स्थापनकरनेका बतलाया

७- सामायिक करनेके लिये खमासमण पूर्वक गुरुसे आदेश लेकर सामायिकलेनेसवधी मुहपत्तिका पडिलेहणकरनेका बतलाया

८- मुहपत्तिका पडिलेहणकरके प्रथम खमासमण पूर्वक सामायिक सदिसाहणेका, तथा फिर दूसरा खमासमण पूर्वक सामायिक ठाणेका आदेश लेनेका बतलाया

९- विनय सहित मस्तक नमाकर नवकारपूर्वक ' करेमिभते ! सामाइय ' इत्यादि सामायिकका पाठ उच्चारण करनेका बतलाया

१०- करेमिभतेका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही करनेकावतलाया सो 'इरियावही' कहनेसे इरियावही,तस्स उत्तरी, अन्नत्थ उससिएण, कहकरके ४ नवकार या १ लोगस्सका काउसग्ग करनेका और ऊपर सपूर्ण लोगस्स कहनेका समझलेना चाहिये

११- जैसे पौपधवाला देवदर्शनादिक कार्योंसे गमनकरके आया होंवे वो इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करे, अर्थात्-इरियासमिति इत्यादि अष्टप्रवचनमाताके विराधनाकी आलोचनाकरके मिच्छामि दुक्कड देताहै, तैसेही-यदि श्रावक अपने घरसे सामायिक लेकर इरियासमिति आदि पाच समिति और तीन गुप्ति सहित उपयोगसे गुरुपास आया होंवे तो फिर गुरु साक्षिसे 'करेमि भते !' इत्यादि सामायिक लेकर पीछे इरियावहीपूर्वक इरियासमिति इत्यादि आगमनकी आलोचना करनेका बतलाया

१२-सामायिक लेकर पीछे इरियावही करके आगमनकी आलोचना करे, बाद यथा योग्य आचार्यादिक वडीलोंको अनुक्रमसे सर्व साधुओंको वदना करनेका बतलाया

१३ — 'पूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन ' तथा ' पडिलेहित्ता ' अर्थात्-जगह आसनादिकका प्रमार्जन पडिलेहण पूर्वक बैठने स्वाध्यायादि करनेका आदेश लेकर अपना धर्मकार्य करनेका बतलाया

१४- सामायिक लिये बाद गुरुके साथ धर्म वार्ता करे या कोई

तावसुर्हि, तओ सामाइयं करे ॥२९॥ काऊणय सामाइय, इरियंपडि कमिय,गमणमालोए। वंदित्तु सूरिमाइ, सज्झायावस्सयं कुणइ ॥३०॥

व्याख्या— साम्प्रतमष्टमं सामाइकद्वारमाह- ततो चैत्यवंदना नंतर, त्रिकालयेलाया आगमोक्तरूपायां, ताम्रेयसयनति अस्या भिदेदि धाकारे अर्द्धविषादयाद् इत्य । पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाष्टयोतिशेष । पुनर्यन्दते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना ॥ २८ ॥ अथैकोन विंशति यंदनकोपलक्षितमावश्यक द्वारमाह—ततस्तृतीय पूजा नंत र श्रावक पौषधशालागत्या यतनया प्रमार्ष्टि, ततो नमस्कार पूर्वकं व्यवहित तुद्राम्दस्यैवकारार्थं त्वात् स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापना चार्य, ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २९ ॥ अथ तत्र साधवोऽ पिसति श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽमीसाधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह- साधुसाक्षिकं पुनः सामायिकं कृत्वा ईर्याप्रतिक्र म्यागमनमालोचयेत् ततः आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्याय काले चा वश्यकं करोति ॥ ३० ॥ इत्यादि "

२३-अब देखिये-ऊपरके सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंमें श्रावकको सामायिक कैसे करना चाहिये ? इस सवालके जवाबमें सर्व शास्त्र कार महाराजोंने इस प्रकार खुलासा पूर्वक लिखा है

१-सामायिक करनेवाले राजादि धनवान् व व्यवहारिक धन रहित ऐसे दो प्रकारके श्रावक बतलाये

२- धन रहित श्रावकको भगवान्के मंदिरमें १, उपद्रवरहित एकांत जगहमें अपने घरमें २, साधु महाराजके पासमें ३, वा पौषध शालामें ४, ऐसे ४ स्थान सामायिक करनेके लिये बतलाये

३ – जब श्रावकको संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होवे [फुरसत मिले] तब हरेक समय सामायिक करनेका बतलाया

४-धर्म कार्योंमें अनेक तरहके विघ्न आतेहैं, और उपयोगी वि वेकवाले श्रावकको धर्मकार्योंके विना समय मात्रभी खाली व्यर्थ ग मानायोग्यनहींहै इसलिये संसारिक कार्योंसे फुरसद मिलतेही रस्ते चलनेमें यदि किसीके साथ लेने देने वगेरहसे कोईतरहका भयनहीं होवे तो अपनेघरमें सामायिकलेकर पीछे गुरुपासजानेकाबतलाया

५-जैसे उपवासादिकके पच्चख्खाण अपनेघरमें करलिये हों तो भी गुरुमहाराजकेपास जाकर फिर गुरु साक्षिसे उपवासादि पच्च ख्खाण करनेमेंआतेहैं, तैसेही- श्रावकको अपने घरमें सामायिक ले

करसावद्य योगका त्याग करके साधुकी तरह पचसमिति और तीन गुप्तिसहितउपयोगसे गुरुमहाराजपास आकर फिर सामायिकका उच्चारणकरके पीछे इरियावहीपूर्वक स्वाध्यायादि करनेकावतलाया

६-शामको छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमणकरनेकेलिये पहिले मदिरमें देवदर्शन,पूजा आरति वगैरहकरके पीछे उपाश्रय या पौषधशालामें आकर गुरुके अभावमें भूमिका प्रमार्जनपूर्वक सामायिककरनेके लिये नवकार गुणकर स्थापनाचार्यकी स्थापनकरनेका बतलाया

७- सामायिक करनेके लिये खमासमण पूर्वक गुरुसे आदेश लेकर सामायिकलेनेसबधी मुहपत्तिका पडिलेहणकरनेका बतलाया

८- मुहपत्तिका पडिलेहणकरके प्रथम खमासमण पूर्वक सामायिक सदिसाहणेका, तथा फिर दूसरा खमासमण पूर्वक सामायिक ठाणेका आदेश लेनेका बतलाया

९- विनय सहित मस्तक नमाकर नवकारपूर्वक ' करेमिभते ! सामाइय ' इत्यादि सामायिकका पाठ उच्चारण करनेका बतलाया

१०- करेमिभतेका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही करनेकावतलाया सो 'इरियावही' कहनेसे इरियावही,तस्स उत्तरी, अन्नत्थ उससिए ण, कहकरके ४ नवकार या १ लोगस्सका काउसग्ग करनेका और ऊपर सपूर्ण लोगस्स कहनेका समझलेना चाहिये

११- जैसे पौषधवाला देवदर्शनादिक कार्योंसे गमनकरके आया होंवे वो इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करे, अर्थात्-इरियासमिति इत्यादि अष्टप्रवचनमाताके विराधनाकी आलोचनाकरके मिच्छामि दुक्कड देताहै, तैसेही-यदि श्रावक अपने घरसे सामायिक लेकर इरियासमिति आदि पाच समिति और तीन गुप्ति सहित उपयोगसे गुरुपास आया होंवे तो फिर गुरु साक्षिसे 'करेमि भते !' इत्यादि सामायिक लेकर पीछे इरियावहीपूर्वक इरियासमिति इत्यादि आगमनकी आलोचना करनेका बतलाया

१२-सामायिक लेकर पीछे इरियावही करके आगमनकी आलोचना करे, बाद यथा योग्य आचार्यादिक वडीलोंको अनुक्रमसे सर्व साधुओंको वदना करनेका बतलाया

१३ — 'पूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन' तथा ' पडिलेहित्ता ' अर्थात्-जगह आसनादिकका प्रमार्जन पडिलेहण पूर्वक बैठने स्वाध्यायादि करनेका आदेश लेकर अपना धर्मकार्य करनेका बतलाया

१४- सामायिक लिये बाद गुरुके साथ धर्म वार्ता करे या कोई

तरवसूरिं, तओ सामाइय करे ॥२०॥ काऊणय सामाइय, इरियंपडि-क्कमिय,गमणमालोए। वंदित्तु सूरिमाइ, सज्झायावस्सय कुणइ ॥३०॥

व्याख्या— सांप्रतमेतद्द्वारमाह- ततो चैकालिका नतर, विकालवेलाया अंतर्मुहूर्तरूपाया, तामेवव्यनक्ति अस्तमितेदि वाकरे अर्द्धविंबादर्वाक् इत्य । पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाइ ऽतिशेष । पुनर्वंदते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना ॥ २८ ॥ अथैकोन विंशति वंदनकोपलक्षितमावश्यक द्वारमाह—ततस्तृतीय पूजा नंत र श्रावक पौषधशालागत्वा यतनया प्रमार्ष्टि, ततो नमस्कार पूर्वक व्यवहित तुदाम्द्वस्यैपकारार्थ स्यात् स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापना चार्यं, ततो विधिना सामायिक करोति ॥ २९ ॥ अथ तत्र साधवोऽ विसंति श्रावकेण गृहे सामायिक कृत, ततोऽसौसाधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह- साधुसाक्षिक पुन सामायिक कृत्वा ईर्यांप्रतिक्र म्यागमनमालोचयेत् तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्याय काले चा वश्यक करोति॥ ३० ॥ इत्यादि"

३३-अब देखिये-ऊपरके सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंमें श्रावकको सामायिक कैसे करना चाहिये? इस सवालके जवाबमें सर्व शास्त्र कार महाराजोंने इस प्रकार खुलासा पूर्वक लिखा है

१-सामायिक करनेवाले राजादि धनवान् व व्यवहारिक धन रहित ऐसे दो प्रकारके श्रावक बतलाये

२- धन रहित श्रावकको भगवान्‌के मंदिरमें १, उपद्रवरहित एकांत जगहमें अपने घरमें २, साधु महाराजके पासमें ३, वा पौषध शालामें ४, ऐसे ४ स्थान सामायिक करनेके लिये बतलाये

३ - जब श्रावकको संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होंवे [फुरसत मिले] तब हरेक समय सामायिक करनेका बतलाया

४-धर्म कार्योंमें अनेक तरहके विघ्न आतेहैं, और उपयोगी वि वेकवाले श्रावकको धर्मकार्योंके विना समय मात्रभी खाली व्यर्थ ग मानायोग्यनहींहै इसलिये संसारिक कार्योंसे फुरसद मिलतेही रस्ते चलनेमें यदि किसीके साथ लेने देने वगैरहसे कोईतरहका भयनहीं होंवे तो अपनेघरमें सामायिकलेकर पीछे गुरुपासजानेकाबतलाया

५-जैसे उपवासादिकके पच्चक्खाण अपनेघरमें करलिये हों तो भी गुरुमहाराजकेपास जाकर फिर गुरु साक्षिसे उपवासादि पच्च क्खाण करनेमेंआतेहैं तैसेही- श्रावकको अपने घरमें सामायिक ले-

कर सावद्य योगका त्याग करके साधुकी तरह पचसमिति और तीन गुप्तिसहितउपयोगसे गुरुमहाराजपास आकर फिर सामायिकका उच्चारणकरके पीछे इरियावहीपूर्वक स्वाध्यायादि करनेकावतलाया

६-शामको छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमणकरनेकेलिये पहिले मदिरमें देवदर्शन,पूजा आरति वगैरहकरके पीछे उपाश्रय या पौषधशालामें आकर गुरुके अभावमें भूमिका प्रमार्जनपूर्वक सामायिककरनेके लिये नवकार गुणकर स्थापनाचार्यकी स्थापनकरनेका बतलाया

७- सामायिक करनेके लिये खमासमण पूर्वक गुरुसे आदेश लेकर सामायिकलेनेसबधी मुहपत्तिका पडिलेहणकरनेका बतलाया

८- मुहपत्तिका पडिलेहणकरके प्रथम खमासमण पूर्वक सामायिक सदिसाहुणेका, तथा फिर दूसरा खमासमण पूर्वक सामायिक ठाणेका आदेश लेनेका बतलाया

९- विनय सहित मस्तक नमाकर नवकारपूर्वक ' करेमिभते ! सामाइय ' इत्यादि सामायिकका पाठ उच्चारण करनेका बतलाया

१०- करेमिभंतेका पाठ उच्चारण कियेवाद पीछेसे इरियावही करनेकावतलाया सो 'इरियावही' कहनेसे इरियावही,तस्स उत्तरी, अन्नत्थ उससिएण, कहकरके ४ नवकार या १ लोगस्सका काउसग्ग करनेका और ऊपर सपूर्ण लोगस्स कहनेका समझलेना चाहिये

११- जैसे पौषधवाला देवदर्शनादिक कार्योंसे गमनकरके आया होवे वो इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करे, अर्थात्-इरियासमिति इत्यादि अष्टप्रवचनमाताके विराधनाकी आलोचनाकरके मिच्छामि दुक्कड देताहै, तैसेही-यदि श्रावक अपने घरसे सामायिक लेकर इरियासमिति आदि पाच समिति और तीन गुप्ति सहित उपयोगसे गुरुपास आया होवे तो फिर गुरु साक्षिसे 'करेमि भते !' इत्यादि सामायिक लेकर पीछे इरियावहीपूर्वक इरियासमिति इत्यादि आगमनकी आलोचना करनेका वतलाया

१२-सामायिक लेकर पीछे इरियावही करके आगमनकी आलोचना करे, बाद यथा योग्य आचार्यादिक वडीलोंको अनुक्रमसे सर्व साधुओंको वदना करनेका बतलाया

१३ — 'पूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन' तथा 'पडिलेहित्ता' अर्थात्-जगह आसनादिकका प्रमार्जन पडिलेहण पूर्वक वैठने स्वाध्यायादि करनेका आदेश लेकर अपना धर्मकार्य करनेका वतलाया

१४- सामायिक लिये बाद गुरुके साथ धर्म वार्ता करे या कोई

दाका होवे तो गुरुसे पूछे या पुस्तकादि वाचे, अथवा दूसरा कोई पुस्तकादि वाचता होवे तो उपयोगयुक्त सुनता रहे

१५- अपने घरसे सामायिक लेकर भगवान्के मंदिरमें आया होवे, वहा पासमें साधु न होवे तो भी भगवान्के समक्ष फिरसे सामायिक लेकर इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करके पीछे चैत्यवदन, शास्त्रपाठ पढना गुणनादि धर्म कार्य करनेका बतलाया

१६ — उपाश्रयमें गुरु महाराज होवे, तो उपर मुजब सामायिक करनेकी विधि बतलायी है, ऐसेही पौषधशालामेंभी सामायिक करनेकी विधि समझ लेना चाहिये

१७— उपाश्रयमें गुरु महाराज न होवे, या समयके अभावसे कारणवश गुरु पास जाकर सामायिक करनेका अवसर न होवे और केवल अपने घरमेंही छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये सामायिक ग्रहण करें, तो भी ऊपर मुजब खमासमणपूर्वक सामायिक मुहपत्तिके पडिलेहणका, सामायिक सदिसाहणेका व ठाणेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछेसे इरियावही पूर्वक अपना धर्मकार्य करें, मगर वहासे गुरु पास जाने वगैरह कार्यों से गमनागमन नहीं होनेसे आगमनकी आलोचना न करें परतु शेष बाकीकी उपर मुजब सर्व विधि करनेका बतलाया

१८- यहापर कोई पहिले इरियावही करके पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करनेका कहतेहैं, वोलोग शास्त्रोंके भावार्थको नहींजाननेवालेहैं, क्योंकि आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीनशास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही साफ खुलासा पूर्वक कहा है ।

१९- कभी गुरुके अभावमें अपनेघरमें या पौषधशालामें सामायिक करें, तब वहा "जाव नियम पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारणकरें और उपाश्रयमें गुरु समक्ष सामायिक करें, तब वहा "जाव साहू पज्जुवा सामि " ऐसा पाठ उच्चारण करें और इरियावही पूर्वक अपने धर्मकार्योंमें समय व्यतीत करनेका बतलाया

२०-राजा-महाराजादि महद्धिक होवे, उन्होंको शहरकेरस्तोंमें नगे पैर पैदल चलना योग्य न होनेसे वो अपने घरसे सामायिक लेकर गुरु पास उपाश्रयमें नहीं जावें, किंतु-हाथी, अश्व, पदातिक आदिक राज्यऋद्धिकी सौभा युक्त भेरी भभादि वाजिंत्र सहित बडे आडबर से सामायिक करनेकेलिये गुरुपास आवें, उससे शासनकी प्रभाव

ना होंवे, तथा भगवान् उपर और गुरुमहाराज उपर लोगोंकी श्रद्धा चढे, बहुत जीवोंको धर्म प्राप्तिका महान् लाभ होंवे, इसलिये घरसे सामायिक लेकर नगे पैरसे पैदल इरियासमितियुक्त आनेके बदले बडे आडंबरसे गुरुपास आकर पीछे सामायिक करें

२१ — राज्यऋद्धिकी सोभा युक्त गुरुपास आकर जो नजदीक भगवान्का मदिर होंवे तो पहिले वहा मदिरमें जाकर विधिसहित उपयोग युक्त भावसे- केशर चदनादिसे पहिले द्रव्य पूजा करें बाद पीछे चैत्यवदन स्तवनादिसे भाव पूजा करें उसके बादमें गुरु पास आकर "यथासभव साधु समीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्व" अर्थात्- खमासमणपूर्वक मुहपत्तिकापडिलेहणकरके सामायिक सदिसाहणे वगैरहके आदेश लेकर ऊपर मुजब विधिसे पहिले करेमिभतेका उच्चारणकरके पीछे इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि करें

२२- राजादिक सामायिक करें तब तक राज्यचिन्ह मुकुटादिकको अलग रक्खें, त्याग करें

२३-इसप्रकार सामायिक करनेवाले वहा विकथादि कर्मबंधन केहेतुभूत कोईभी कार्य न करें, किंतु स्वाध्याय ध्यानादि कर्मोंकीनिर्जराके हेतुभूत धर्मकार्य करनेमें अपना समय व्यतीत करें, इत्यादि,

२४- अब देखिये ऊपर मुजब सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंपर विवेक बुद्धिसे तत्त्व दृष्टिपूर्वक विचार किया जावे तो सामायिक करनेके लिये प्रत्येकवार खमासमण सहित 'सामाइय मुहपत्ति पडिलेहेमि' 'सामाइयसदिसावेमि' 'सामाइयठावेमि' इत्यादि वाक्योंसे सामायिक करनेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक विनयसहित 'करेमिभते ! सामाइय' इत्यादि सपूर्ण सामायिकका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही करनेका सुस्पष्टतासे साफ खुलासा पूर्वक सब शास्त्रकार सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने लिखा है, सो अल्प बुद्धिवालाभी ऊपरके शास्त्र पाठोंपरसे सामायिकका अधिकारको अच्छी तरहसे समझ सकताहै जिसपरभी ऊपरकी तमाम सर्व बातोंको छोडकर " ऊपरके शास्त्रपाठ आलोयणा सबधी हैं, या स्वाध्याय सबधी हैं, या वदनासबधी हैं, अथवा सामायिक सबधी है इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, इसलिये ऊपरके शास्त्र प्रमाणोंसे सामायिकमें प्रथम करेमि भंते और पीछे इरियावही कैसे किया जावे?" ऐसी २ कुतर्क जान बुझकरके या उपरके शास्त्रपाठोंको वाचे, विचारे, समझे विनाही परपराकी अज्ञानतासे करते हैं, सो तो श्री

दाका होंवे तो गुरुसे पूछे या पुस्तकादि वाचे, अथवा दूसरा कोई पुस्तकादि वाचता होंवे तो उपयोगयुक्त सुनता रहे

१५- अपने घरसे सामायिक लेकर भगवान्के मंदिरमें आया होंवे,वहा पासमें साधु न होंवे तो भी भगवान्के समक्ष फिरसे सामायिक लेकर इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करके पीछे चैत्यवदन, शास्त्रपाठ पढना गुणनादि धर्म कार्य करनेका बतलाया

१६ — उपाश्रयमें गुरु महाराज होंवे,तो उपर मुजब सामायिक करनेकी विधि बतलायी है, ऐसेही पौषधशालाोंमेंभी सामायिक करनेकी विधि समझ लेना चाहिये

१७— उपाश्रयमें गुरु महाराज न होंवे, या समयके अभावसे कारणवश गुरु पास जाकर सामायिक करनेका अवसर न होंवे और केवल अपने घरमेंही छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये सामायिक ग्रहण करें,तो भी ऊपर मुजब खमासमणपूर्वक सामायिक मुहपत्तिके पडिलेहणका,सामायिक संदिसाहणेका व ठाणेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछेसे इरियावही पूर्वक अपना धर्मकार्य करें,मगर वहासे गुरु पास जाने वगैरह कार्यों से गमनागमन नहीं होनेसे आगमनकी आलोचना न करें परतु शेष बाकीकी उपर मुजब सर्व विधि करनेका बतलाया

१८- यहापर कोई पहिले इरियावही करके पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करनेका कहतेहैं,वोलोग शास्त्रोंके भावार्थको नहींजाननेवालेहैं,क्योंकि आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीनशास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही साफ खुलासा पूर्वक कहा है ।

१९- कभी गुरुके अभावमें अपनेघरमें या पौषधशालामें सामायिक करें,तब वहा "जाव नियम पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारणकरें और उपाश्रयमें गुरु समक्ष सामायिक करें, तब वहा "जाव साहू पज्जुवा सामि " ऐसा पाठ उच्चारण करें और इरियावही पूर्वक अपने धर्मकार्योंमें समय व्यतीत करनेका बतलाया

२०-राजा-महाराजादि महर्द्धिक होंवे,उन्होंको शहरकेरस्तोंमें नगे पैर पैदल चलना योग्य न होनेसे वो अपने घरसे सामायिक लेकर गुरु पास उपाश्रयमें नहीं जावें, किंतु-हाथी, अश्व, पदातिक आदिक राज्यऋद्धिकी शोभा युक्त भेरी भभादि वाजिंत्र सहित बडे आडबरसे सामायिक करनेकेलिये गुरुपास आवें उससे शासनकी प्रभाव-

ना होंवे, तथा भगवान् उपर और गुरुमहाराज उपर लोगोंकी श्रद्धा वढे, वहुत जीवोंको धर्म प्राप्तिका महान् लाभ होंवे, इसलिये घरसे सामायिक लेकर नगे पेरसे पैदल इरियासमितियुक्त आनेके वदले वडे आडंवरसे गुरुपास आकर पीछे सामायिक करें

२१ — राज्यऋद्धिकी सोभा युक्त गुरुपास आकर जो नजदीक भगवान्का मदिर होंवे तो पहिले वहा मदिरमें जाकर विधिसहित उपयोग युक्त भावसे- केशर चदनादिसे पहिले द्रव्य पूजा करें वाद पीछे चैत्यवदन स्तवनादिसे भाव पूजा करें उसके वादमें गुरु पास आकर "यथासभव साधु समीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्व" अर्थात्- खमासमणपूर्वक मुहपत्तिकापडिलेहणकरके सामायिक सदिसाहणे वगैरहके आदेश लेकर ऊपर मुजव विधिसे पहिले करे मिभतेका उच्चारणकरके पीछे इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि करें

२२- राजादिक सामायिक करें तव तक राज्यचिन्ह मुकुटादिकको अलग रक्खें, त्याग करें

२३-इसप्रकार सामायिक करनेवाले वहा विकथादि कर्मवंधनकेहेतुभूत कोईभी कार्य न करें, किंतु स्वाध्याय ध्यानादि कर्मोंकीनिर्जराके हेतुभूत धर्मकार्य करनेमें अपना समय व्यतीत करें, इत्यादि,

२४- अव देखिये ऊपर मुजव सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंपर विवेक वुद्धिसे तत्त्व दृष्टिपूर्वक विचार किया जावे तो सामायिक करनेके लिये प्रत्येकवार खमासमण सहित 'सामाइय मुहपत्ति पडिलेहेमि' 'सामाइयसदिसावेमि' 'सामाइयठावेमि' इत्यादि वाक्योंसे सामायिक करनेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक विनयसहित 'करेमिभते ! सामाइय' इत्यादि सपूर्ण सामायिकका पाठ उच्चारण कियेवाद पीछेसे इरियावही करनेका सुस्पष्टताम्से साफ खुलासा पूर्वक सव शास्त्रकार सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने लिखा है, सो अल्प वुद्धिवालाभी ऊपरके शास्त्र पाठोंपरसे सामायिकका अधिकारको अच्छी तरहसे समझ सकताहै जिसपरभी ऊपरकी तमाम सर्व वातोंको छोडकर "ऊपरके शास्त्रपाठ आलोयणा सवधी हैं, या स्वाध्याय सवधी है, या वदनासवधी हैं, अथवा सामायिक सवधी हैं इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, इसलिये ऊपरके शास्त्र प्रमाणोंसे सामायिकमें प्रथम करेमि भंते और पीछे इरियावही कैसे किया जावे ?" ऐसी २ कुतर्के जान वुझकरके या उपरके शास्त्रपाठोंको वाचे, विचारे, समझे विनाही परपराकी अज्ञानतासे करते हैं, सो तो श्री

शका होवे तो गुरुसे पूछे या पुस्तकादि बांचे, अथवा दूसरा कोई पुस्तकादि बाचता होवे तो उपयोगयुक्त सुनता रहे

१५- अपने घरसें सामायिक लेकर भगवान्के मंदिरमें आया होवे, वहां पासमें साधु न होवे तो भी भगवान्के समक्ष फिरसें सामायिक लेकर इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करके पीछे चैत्यवंदन, शास्त्रपाठ पढना गुणनादि धर्म कार्य करनेका बतलाया

१६ — उपाश्रयमें गुरु महाराज होवे, तो उपर मुजब सामायिक करनेकी विधि बतलायी है, ऐसेही पौषधशालामेंभी सामायिक करनेकी विधि समझ लेना चाहिये

१७— उपाश्रयमें गुरु महाराज न होवे, या समयके अभावसे कारणवश गुरु पास जाकर सामायिक करनेका अवसर न होवे और केवल अपने घरमेंही छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये सामायिक ग्रहण करें, तो भी ऊपर मुजब खमासमणपूर्वक सामायिक मुहपत्तिके पडिलेहणका, सामायिक संदिसाहणेका व ठाणेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछेसे इरियावही पूर्वक अपना धर्मकार्य करें, मगर वहासे गुरु पास जाने वगैरह कार्यों से गमनागमन नहीं होनेसे आगमनकी आलोचना न करें परंतु शेष बाकीकी उपर मुजब सर्व विधि करनेका बतलाया

१८— वहांपर कोई पहिले इरियावही करके पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करनेका कहतेहैं, वोलोग शास्त्रोंके भावार्थको नहींजाननेवालेहैं, क्योंकि आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीनशास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही साफ खुलासा पूर्वक कहा है।

१९- कभी गुरुके अभावमें अपनेघरमें या पौषधशालामें सामायिक करें, तब वहा "जाव नियम पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारणकरें और उपाश्रयमें गुरु समक्ष सामायिक करें, तब वहा "जाव साहू पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारण करें और इरियावही पूर्वक अपने धर्मकार्योंमें समय व्यतीत करनेका बतलाया

२०-राजा-महाराजादि महर्द्धिक होवे, उन्होंको शहरकेरस्तोंमें नगे पैर पैदल चलना योग्य न होनेसे वो अपने घरसे सामायिक लेकर गुरु पास उपाश्रयमें नहीं जावें, किंतु-हाथी, अश्व, पदातिक आदिक राज्यऋद्धिकी शोभा युक्त भेरी भभादि वाजिंत्र सहित बडे आडबरसे सामायिक करनेकेलिये गुरुपास आवें, उससे शासनकी प्रभाव-

मायिककी सबपूरी विधि करलेनाचाहिये जिसकेबदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनामुजब करवाने वालोंको श्रीआवश्यकसूत्रादि आगमार्थरूप प चागीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापडता है, इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें सक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बाधने, केशर चदनादि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधूरी विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहै, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते है, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बाधने, जिन मदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मदिरकी सार सभाल लेने, ३ प्रदक्षिणा देने, केशर-चदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवदन-शक्रस्तव जिनगुण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे सक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये, तैसेही सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक सबधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आदेशलेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आवे, पिष्टपेपण जैसे होवे, उससे वहा 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्व दृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गभीर आशयको स

ज्ञानीजीमहाराज जाने मगर ऐसी २ कुतर्क करके जिनाज्ञानुसार प्रत्यक्ष अनेक शास्त्र प्रमाण मुजब सत्य बात परसे भोले जीवोंकी श्रद्धा उठादेते हैं, और जिनाज्ञाविरुद्ध कोईभी शास्त्रप्रमाण बिनाही अपने झूठे हठवादके आग्रहकी बातको स्थापन करनेकेलिये शास्त्रों के सत्य२ पाठोंपरभी झूठी२ शंका लाकर उत्सूत्र प्ररूपणासे उन्मार्ग को पुष्ट करते हैं, सो यह काम संसार बढानेवाला अनर्थ भूत होनेसे आत्मार्थी भवभिरुयोंको तो करना योग्यनहींहै इसविषयको विशेष तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे

३५-कितनेक कहतेहैं, 'सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही करनेसबंधी आवश्यक सूत्रकी चूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिकमुहपत्ति पडिलेहणके, सामायिक संदिसाहणेके, सामायिक ठाणेके आदेशलेनेवगैरह सबपूरी विधिनहींहै,ऐसा कहने वालेभी प्रत्यक्षही मिथ्या भाषण करके जिनाज्ञाका उत्थापन करतेहैं, क्योंकि देखो-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति तथा वंदित्तासूत्रकी चूर्णि वगैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिक मुहपत्ति पडिलेहणके,सामायिक संदिसाहणेके, सामायिकठाणेवगैरहके आदेशलेकर नवकारपूर्वक विनय-सहित 'करेमि भंते' इत्यादि पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही किये बाद स्वाध्यायादि करनेका संक्षेपमेंभी साफ बतलायाहै, उसके भावार्थमें गुरुगम्यतासे सामायिकमें सब पूरीविधि समझना चाहिये

३६-आवश्यक निर्युक्ति, उत्तराध्ययनादि शास्त्रोंमें सामान्यतासे संक्षेपमें प्रतिक्रमणकी विधि बतलायाहै,परंतु उसका विस्तारपूर्वक विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रंथोंसे जाननेमें आताहै, और उसी मुजबही अभी प्रतिक्रमणकी सर्व क्रियायें करनेमें आतीहैं मगर कोई अज्ञानी आवश्यकनिर्युक्ति उत्तराध्ययनादिशास्त्रोंकी प्रतिक्रमण विधिको अधूरी कहकर निषेधकरें और उसकेविरुद्ध ढूंढियोंकी तरह अपनी मतिकल्पना मुजब प्रतिक्रमण की विधिको स्थापन करें, तो आवश्यकादि आगमार्थरूप पंचांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप मिथ्यात्वके दोषके भागी होनापडता है, तैसेही- आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह ऊपरमुजब शास्त्रपाठोंमें सामायिक संबंधीभी सूचनारूप संक्षेपमें सामान्यतासे शास्त्रकार महाराजोंने सामायिककी विधि लिखीहै उसका विस्तारसे विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रंथोंसे जानना चाहिये और उसी मुजबही आत्मार्थी भव्य जीवोंको सा

मायिककी सबपूरी विधि करलेनाचाहिये जिसकेबदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनामुजब करवाने वालोंको श्रीआवश्यकसूत्रादि आगमार्थरूप पंचांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापडता है, इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें संक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्त्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बाधने, केशर चदनादि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधूरी विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहैं, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बाधने, जिन मदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मदिरकी सार सभाल लेने, ३ प्रदिक्षणा देने, केशर-चदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवदन-शक्रस्तव जिनगुण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे संक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये तेसेही सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक सबधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आदेशलेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आवे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे यहा 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्त्वदृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गभीर आशयको स

ज्ञानीजीमहाराज जाने मगर ऐसी २ कुतर्क करके जिनाज्ञानुसार प्रत्यक्ष अनेक शास्त्र प्रमाण मुजब सत्य बात परसे भोले जीवोंकी श्रद्धा उठादेते हैं, और जिनाज्ञाविरुद्ध कोइभी शास्त्रप्रमाण बिनाही अपने झूठे हठवादके आग्रहकी बातको स्थापन करनेकेलिये शास्त्रों के सत्य२ पाठोंपरभी झूठी२ शंका लाकर उत्सूत्र प्ररूपणासे उन्मार्ग को पुष्ट करते हैं, सो यह काम संसार बढानेवाला अनर्थ भूत होनेसे आत्मार्थी भवभिरुयोंको तो करना योग्यनहींहै इसविषयको विशेष तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे

३५-कितनेक कहतेहैं, 'सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही करनेसबंधी आवश्यक सूत्रकी चूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिकमुहपत्ति पडिलेहणके, सामायिक संदिसाहणेके, सामायिक ठाणेके आदेशलेनेवगैरह सबपूरी विधिनहींहै,ऐसा कहने वालेभी प्रत्यक्षही मिथ्या भाषण करके जिनाज्ञाका उत्थापन करतेहैं, क्योंकि देखो-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति तथा दशवैकालिकसूत्रकी चूर्णि वगैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिक मुहपत्ति पडिलेहणके,सामायिक संदिसाहणेके, सामायिकठाणेवगैरहके आदेशलेकर नवकारपूर्वक विनय सहित 'करेमि भंते' इत्यादि पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही किये बाद स्वाध्यायादि करनेका संक्षेपमेंभी साफ बतलायाहै, उसके भावार्थमें गुरुगम्यतासे सामायिकमें सब पूरीविधि समझना चाहिये

३६-आवश्यक निर्युक्ति, उत्तराध्ययनादि शास्त्रोंमें सामान्यतासे संक्षेपमें प्रतिक्रमणकी विधि बतलायाहै,परंतु उसका विस्तारपूर्वक विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रंथोंसे जाननेमें आताहै, और उसी मुजबही अभी प्रतिक्रमणकी सर्व क्रियायें करनेमें आतीहै मगर कोई अज्ञानी आवश्यकनिर्युक्ति उत्तराध्ययनादिशास्त्रोंकी प्रतिक्रमण विधिको अधूरी कहकर निषेधकरें और उसकेविरुद्ध ढूंढियोंकी तरह अपनी मतिकल्पना मुजब प्रतिक्रमण की विधिको स्थापन करें, तो आवश्यकादि आगमार्थरूप पंचांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप मिथ्यात्वके दोषके भागी होनापडता है, तैसेही- आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह ऊपरमुजब शास्त्रपाठोंमें सामायिक संबंधीभी सूचनारूप संक्षेपमें सामान्यतासे शास्त्रकार महाराजोंने सामायिककी विधि लिखीहै उसका विस्तारसे विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रंथोंसे जानना चाहिये और उसी मुजबही आत्मार्थी भव्य जीवोंको सा

मायिककी सबपूरी विधि करलेनाचाहिये जिसकेबदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनामुजब करवाने वालोंको श्रीआवश्यकसूत्रादि आगमार्थरूप व चार्योंके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापडता है, इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें सक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्त्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बाधने, केशर चदनादि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधूरी विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहें, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बाधने, जिन मदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मदिरकी सार सभाल लेने, ३ प्रदक्षिणा देने, केशर-चदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवदन-शक्रस्तव जिनगुण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहें इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे सक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये, तैसेही सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक सबधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आदेशलेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आवे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे वहा 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्त्वदृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गभीर आशयको स

भके बिना अधूरी विधिके नामसे सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही करनेकी सत्यबातको सर्वथा उड़ादेना सो उत्सूत्र रूपणारूप होनेसे आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है

३८-देखो विवेकबुद्धिसे खूब विचारकरो- श्रीजिनदासगणिमह त्तराचार्यजी पूर्वधर, श्रीहरिभद्रसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, देवगुप्तसूरि जी, हेमचन्द्राचार्यजी, देवेंद्रसूरिजी आदिगीतार्थ शासन प्रभावक महा राजोंको तो सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछे इरियावहीकी बात तत्व ज्ञानसे जिनाज्ञानुसार सत्यमालूमपडी, इसलिये अपने२ बनाये ग्रंथोंमें निसंदेहपूर्वक लिखगये तथा आत्मार्थी भव्यजीवभी शंकारहित सत्य बात समझकर उस मुजब सामायिककी सब विधिभी करतेथे और अभी करतेभी है। जिसपरभी कितनेक लोग अपने तपगच्छ नायक श्री देवेंद्रसूरिजी महाराज वगैरह पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध होकर इस बातमें सर्वथा विपरीत रीतिसे प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते स्था पन करके जिनाज्ञाके आराधक बनना चाहतेहैं और प्रथम करेमिभंते पीछेइरियावहीको शास्त्रविरुद्ध ठहराकरनिषेधकरतेहै अब विचारक रना चाहिये, कि- प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही स्थापनकरनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, या प्रथम इरियावही पीछे करेमि भंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, यदि-प्रथम इरिया वही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक बनेंगे, तो प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही स्थापन करने वाले प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य जिनाज्ञाविरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरेंगे और यदि प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य प्रथम करेमि भंते पीछे इ रियावही स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक सत्यप्ररूपणा कर ने वाले मानोगे, तो, उन सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरि यावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्या त्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरजावेंगे तथा इस बातमें पाठां तरभी न होनेसे पूर्वापर विरोधी दोनों बातेंभी कभी सत्य ठहर स कतीनहीं और प्राचीन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंकोभी खोटी प्ररूपणा करनेवालेभी कभी ठहरासकतेनहीं मगर उन्हीं गीतार्थ महाराजोंके विरुद्ध आग्रह करनेवालेही खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरतेहैं, इस लिये सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको जिनाज्ञाके आराधक सत्य प्ररूपणा करनेवाले समझ करके उन सर्व महाराजोंकी आज्ञा मुजब सामा यिकमें प्रथम करेमि भंते पीछे इरीयावही मान्य करना और इनके

विरुद्ध प्रथम इरियावही पीछे करेमिभतेकी शास्त्र विरुद्ध और पूर्वाचार्योंकी आज्ञाबाहिर कल्पितबातकोछोडदेना यही जिनाज्ञाके आराधकभवभिरु निकटभव्य आत्मार्थियोंकोउचितहै ज्यादे क्या लिखें

३९- कितनेकलोग शंका करतेहैं,कि-पौषध,प्रतिक्रमण,स्वाध्याय, ध्यानादि कार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है, और सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, उसका क्या कारण होना चाहिये ? इसका समाधान यह है कि-पौषध-प्रतिक्रमणादिक कार्य तो आत्माको निर्मलकरनेके हेतुभूत क्रियारूपहैं सो मनकी स्थिरतासे होसकते हैं, इसलिये मनकी स्थिरता करनेकेलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावहीकरके पीछे इनकार्योंमें प्रवृत्ति करें तो शातत्तापूर्वक उपयोग शुद्धरहताहै, इसलिये इनकार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है मगर सामायिकको तो श्रीभगवती-आवश्यकादि आगमोंमें " आया खलु सामाइअ " इत्यादि पाठोंसे सामायिकको खास आत्मा कहाहै, इसलिये आत्माकीस्थापनाकरनेकेलिये और आत्माके साथ कर्मबंधनकेहेतुरूप आतेहुए आश्रवको रोकनेकेलिये प्रथम करेमिभंतेका पच्चरखाण करनेका कहा है पहिले आत्माकी स्थापनारूप और आश्रवनिरोधरूप सामायिकका उच्चारण होगया, तो, उसके बादमें पीछे आत्माको निर्मल करनेके लिये स्वाध्याय ध्यानादि कार्य करनेके लिये इरियावही करनेकीआवश्यकताहुई इसलिये पीछेसे इरियावहीपूर्वक स्वाध्याय, ध्यानादिधर्मकार्यकरनेचाहिये,और आत्माकी स्थापनारूप व आश्रव निरोधरूप जबतक सामायिकके पच्चरखाण न होंगे, तब तक एक वार तो क्या मगर हजारवार इरियावही करतेही रहेंगे तो भी आश्रवनिरोध बिना निजआत्मगुणकी प्राप्ति कभी नहीं होसकेगी, इस लिये सर्वशास्त्रोंकी आज्ञामुजब पहिले आत्माकी स्थापनारूप सामायिकके पच्चरखाण करके पीछेसे आत्माकी शुद्धिके लिये इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि धर्मकार्य करने चाहिये इस प्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभंते कहने संबधी शास्त्रकारोंके गंभीर आशयको समझे बिना पौषधादि कार्योंकी तरह सामायिकमेंभी प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये पहिलेसेही इरियावही स्थापन करनेका आग्रह करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४०- कितनेकमहाशय कहतेहैं,कि-श्रीनवकारमंत्रके पीछे इरिया

मझे बिना अधूरी विधिके नामसे सामायिकमें प्रथम करेमिभते और पीछे इरियावही करनेकी मत्यवातको सर्वथा उडादेना सो उत्सूत्र प्ररूपणारूप होनेसे आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है

३८-देखो विवेकबुद्धिसे खूब विचारकरो- श्रीजिनदासगणिमह त्तराचार्यजी पूर्वधर,श्रीहरिभद्रसूरिजी,अभयदेवसूरिजी,देवगुप्तसूरिजी,हेमचन्द्राचार्यजी,देवेंद्रसूरिजी आदिगीतार्थ शासन प्रभावक महाराजोंको तो सामायिकमें प्रथमकरेमिभते पीछे इरियावहीकी बात तत्त्वज्ञानसे जिनाज्ञानुसार सत्यमालूमपडी, इसलिये अपनेरे बनाये ग्रंथोंमे निसंदेहपूर्वक लिखगये तथा आत्मार्थी भव्यजीवभी शंकारहित सत्य बात समझकर उस मुजब सामायिककी सब विधिभी करतेथे और अभी करतेभी है। जिसपरभी कितनेक लोग अपने तपगच्छ नायक श्री देवेंद्रसूरिजी महाराज वगैरह पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध होकर इस बातमें सर्वथा विपरीत रीतिसे प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभते स्थापन करके जिनाज्ञाके आराधक बनना चाहतेहैं और प्रथम करेमिभते पीछेइरियावहीको शास्त्रविरुद्ध ठहराकरनिषेधकरतेहैं सब विचारकरना चाहिये, कि- प्रथमकरेमिभते पीछेइरियावही स्थापनकरनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं,या प्रथम इरियावही पीछे करेमि भंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, यदि-प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक बनेंगे, तो प्रथम करेमि भते पीछे इरियावही स्थापन करने वाले प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य जिनाज्ञाविरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरेंगे और यदि प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य प्रथम करेमि भते पीछे इरियावही स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक सत्यप्ररूपणा करने वाले मानोंगे, तो, उन सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरजावेंगे तथा इस बातमें पाठांतरभी न होनेसे पूर्वापर विरोधी दोनों बातेंभी कभी सत्य ठहर सकतीनहीं और प्राचीन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंकोभी खोटी प्ररूपणा करनेवालेभी कभी ठहरासकतेनहीं मगर उन्हीं गीतार्थ महाराजोंके विरुद्ध आग्रह करनेवालेही खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरतेहैं, इसलिये सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको जिनाज्ञाके आराधक सत्य प्ररूपणा करनेवाले समझ करके उन सर्व महाराजोंकी आज्ञा मुजब सामायिकमें प्रथम करेमि भते पीछे इरीयावही मान्य करना और इनके

विरुद्ध प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेकी शास्त्र विरुद्ध और पूर्वा चार्योंकी आज्ञावाहिर कल्पितबातकोछोडदेना यही जिनाज्ञाके आरा धकभवभिरु निकटभव्य आत्मार्थियोंकोउचितहै ज्यादे क्या लिखें

३९– कितनेकलोग शंका करतेहैं,कि-पोषध,प्रतिक्रमण,स्वाध्याय, ध्यानादि कार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है, और सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही कर नेका कहा है, उसका क्या कारण होना चाहिये ? इसका समाधान यह है कि-पौषध-प्रतिक्रमणादिक कार्य तो आत्माको निर्मलकरनेके हेतुभूत क्रियारूपहैं सो मनकी स्थिरतासे होसकते हैं, इसलिये मन की स्थिरता करनेकेलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावहीकर के पीछे इनकार्योंमें प्रवृत्ति करें तो शांततापूर्वक उपयोग शुद्धरहताहै, इसलिये इनकार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है मगर सामा यिकको तो श्रीभगवती-आवश्यकादि आगमोंमें " आया खलु सा माइअ " इत्यादि पाठोंसे सामायिकको खास आत्मा कहाहै, इसलिये आत्माकीस्थापनाकरनेकेलिये और आत्माके साथ कर्मबंधनकेहेतुरूप आतेहुए आश्रवको रोकनेकेलिये प्रथम करेमिभंतेका पच्चक्खाण क रनेका कहा है पहिले आत्माकी स्थापनारूप और आश्रवनिरोधरूप सामायिकका उच्चारण होगया, तो, उसके बादमें पीछे आत्माको निर्मल करनेके लिये स्वाध्याय ध्यानादि कार्य करनेके लिये इरियावही करनेकीआवश्यकताहुई इसलिये पीछेसे इरियावहीपूर्वक स्वाध्याय, ध्यानादिधर्मकार्यकरनेचाहिये,और आत्माकी स्थापनारूप व आश्रव निरोधरूप जबतक सामायिकके पच्चक्खाण न होंगे, तब तक एक बार तो क्या मगर हजारबार इरियावही करतेही रहेंगे तो भी आ श्रवनिरोध विना निजआत्मगुणकी प्राप्ति कभी नहीं होसकेगी, इस लिये सर्वशास्त्रोंकी आज्ञामुजब पहिले आत्माकी स्थापनारूप सामायिकके पच्चक्खाण करके पीछेसे आत्माकी शुद्धिके लिये इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि धर्मकार्य करने चाहिये इस प्रकार सामायि कमें प्रथम करेमिभंते कहने संबंधी शास्त्रकारोंके गंभीर आशयको स मझे विना पौषधादि कार्योंकी तरह सामायिकमेंभी प्रथम करेमिभंते का उच्चारण किये पहिलेसेही इरियावही स्थापन करनेका आग्रह करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४०– कितनेकमहाशय कहतेहैं,कि-श्रीनवकारमंत्रके पीछे इरिया

वहीके उपधानकहेहैं, मगर इरियावहीके पहिले करेमिभंतेके उपधान नहींकहेहैं, इसलिये सामायिकमेंभी पहिले इरियावही करना योग्यहै ऐसा कहनेवालोंको सामायिकके स्वरूप संबंधी शास्त्रकारमहाराजों के अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै। क्योंकि देखिये-शास्त्रोंमें सामायिकको आत्मा कहा है, और इरियावही वगैरह क्रियारूपसूत्र कहेहैं, और आत्माके उपधान तो कभी होसकतेनहीं, किंतु आत्माकीशुद्धिरूप क्रियाके उपधान होसकतेहैं आत्मा तो स्वयं उपधान करनेवालाहै, और उपधान क्रियारूपहैं, सामायिकरूप आत्माके उपधान तो इरियावहीके पहिले या पीछेभी किसी शास्त्रमें नहीं कहेहैं, इसलिये आत्माके निजगुणरूप सामायिक संबंधी और इरियावही वगैरह आत्माकी शुद्धिरूप क्रियासंबंधी शास्त्रकार महाराजोंके भावार्थकोसमझेबिनाही पहिले इरियावहीके उपधानकरनेका पाठ देखकर सामायिकमेंभी पहिलेइरियावही स्थापनकरतेहैं, उन्होंकी अज्ञानताहै

४१– कितनेक आग्रहीलोग नवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजी के नामसे अथवा उन्होंके शिष्य श्रीपरमानंदसूरिजीके नामसे सामायिकमें पहिलेइरियावही पीछेकरेमिभंते कहनेसंबंधी श्रीअभयदेवसूरिजीकृत 'सामाचारी' ग्रंथका पाठ भोलेजीवोंको बतलातेहैं, सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै क्योंकि–देखो श्रीनवांगीवृत्तिकार महाराजने खास 'पंचाशक' सूत्रकीवृत्तिमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही खुलासापूर्वक लिखीहै सर्व प्राचीन पूर्वाचार्यभी ऐसेही लिखे गयेहैं, यही बात जिनाज्ञानुसार है। इसलिये इन्हीं महाराजने खास 'सामाचारी' ग्रंथमेंभी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखी थी, उसपाठको निकाल देना और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका पाठ अपनी मति कल्पना मुजब नवीन बनाकर बडे प्रौढ प्रामाणिकपुरुषोंकेबनाये ग्रंथमें प्रक्षेपकरके भोलेजीवोंकोबतलाकर उन्मार्ग चलाना यह बडाभारीदोषहै, देखिये कोईभीपूर्वाचार्यमहाराजने सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते नहीं लिखी, किंतु प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सब प्राचीन पूर्वाचार्योंने सर्वशास्त्रोंमें लिखीहै तो फिर श्रीनवांगीवृत्तिकारक जेसे प्रौढ प्रामाणिक सर्व सम्मत यह महाराज सब पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कैसे लिखेंगे, ऐसा कभी नहीं हो सकता इसलिये इन महाराजके नामसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते करनेका ठहराने वाले प्रत्यक्ष मिथ्यावादी हैं।

४२- औरभी देखो खूब विचारकरो- शास्त्रोंमें विसवादी कथन करनेवालोंको मिथ्यात्वी कहेहै, और जैनाचार्य तो अविसवादीहोतेहैं इसलिये श्रीनवागीवृत्तिकारक यह महाराजभी विसवादीनहींथे किंतु अविसवादीथे, इसलिये इन्हीं महाराजके बनाये वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमेंसे एकही विषयमें पूर्वापर विरोधी विसवादी वाक्य किसीभी ग्रंथमें किसी जगहभी देखनेमें नहीं आते, इसलिये इन महाराजकी बनाई सामाचारीमेंभी विसवादी वाक्य नहींहै, किंतु 'पचाशकसूत्रवृत्तिके अनुसार प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही करनेका पाठथा, उसको उडा करके इन महाराजके सत्य कथनके पूर्वापर विरोधी विसवादीरूप प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभतेकहनेका पाठबनाकर भोलेजीवोंको वतलाकर खोटी प्ररूपणा करनेवालोंकी बडी भारीभूलहै यह महाराज तो विसवादी कथन करनेवाले कभी नहीं ठहरसकते,मगर ऐसे महापुरुषोंके नामसे झूठापाठ बनानेवालेही मिथ्यात्वीठहरतेहैं। अबपाठकगणसे मेराइतनाहीकहनाहै,कि-नवानीवृत्तिकारकने या उन्होंकेशिष्योंने अथवा अन्यकिसीभी जिनाज्ञाकेआराधक पूर्वाचार्य महाराजने किसीभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभते किसी जगहभी नहीं लिखी, व्यर्थ भोले जीवोंको भरमानेका काम करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४३- कितनेक श्रीउत्तराध्ययनसूत्रकी वडी टीकाके नामसे सामायिकमेंप्रथमइरियावही पीछेकरेमिभते करनेका ठहरातेहैं,सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै क्योंकि देखो उत्तरा ययन सूत्रमें या इनकी वडी टीकामें सामायिक करनेसबधी प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभते करनेका कुछभी अधिकारनहींहै किंतु २९वें अ ययनमें "सामाइएण भते ! जीवे किं जणेइ ? सावज्जजोग विरइ जणयइ ॥ चउवीसत्थएण भते ! जीवे किं जणेइ ? दसण विसोहिं जणइ ॥

व्याख्या-' सामायिकेन ' उक्तरूपेण सहावद्येन वर्त्तत इति सावद्या -कर्मबधनहेतवो योगा-व्यापारास्तेभ्यो विरति -उपरम सावद्ययोगविरतिस्ता जनयति, तद्विरति सहितस्यैव सामायिक सभवात् न चैव तुल्यकालत्वेनानयो कार्यकारण भावासभव इति वाच्य, केषुचित्तुल्यकालेष्वपि वृक्षच्छायादिवत्कार्यकारण भावदर्शनाद्, एव सर्वत्रभावनीय॥ सामायिक च प्रतिपत्तुकामेन तत्प्रणेतार स्तोतव्या ते च तत्त्वतस्तीर्थकृत एवेति,तत्सूत्रमाह 'चतुर्विंशतिस्तवेन' एतदवसर्पिणी प्रभवतीर्थकृदुत्कीर्तनात्मकेन दर्शन सम्यक्त्व तस्यविशुद्धि,

वहीके उपधानकहेहैं,मगर इरियावहीके पहिले करेमिभंतेकउपधान नहींकहेहैं,इसलिये सामायिकमेंभी पहिले इरियावही करना योग्यहै ऐसा कहनेवालोंको सामायिकके स्वरूप तथा शास्त्रकारमहाराजों के अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै। क्योंकि देखिये- शास्त्रोंमें सामायिकको आत्मा कहा है, और इरियावही वगैरह क्रियारूपसूत्र कहेहैं,और आत्माके उपधान तो कभी होसकतेनहीं, किंतु आत्माकीशुद्धिरूप क्रियाके उपधान होसकतेहैं आत्मा तो स्वयं उपधान करनेवालाहै, और उपधान क्रियारूपहैं, सामायिकरूप आत्माके उपधान तो इरियावहीके पहिले या पीछेभी किसी शास्त्रमें नहीं कहेहैं, इसलिये आत्माके निजगुणरूप सामायिक संबंधी और इरियावही वगैरह आत्माकी शुद्धिरूप क्रियासंबंधी शास्त्रकार महाराजोंके भावार्थको समझेबिनाही पहिले इरियावहीके उपधानकरनेका पाठ देखकर सामायिकमेंभी पहिले इरियावही स्थापनकरतेहैं, उन्होंकी अज्ञानताहै

४१- कितनेक आग्रहीलोग नवांगीवृत्तिकारश्रीअभयदेवसूरिजी के नामसे अथवा उन्होंके शिष्य श्रीपरमानन्दसूरिजीके नामसे सामायिकमें पहिलेइरियावही पीछेकरेमिभंते कहनेसंबंधी श्रीअभयदेवसूरिजीकृत 'सामाचारी' ग्रंथका पाठ भोलेजीवोंको बतलातेहैं, सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै क्योंकि-देखो श्रीनवांगीवृत्तिकार महाराजने खास 'पंचाशक' सूत्रकीवृत्तिमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही खुलासापूर्वक लिखीहै, सर्व प्राचीन पूर्वाचार्यभी ऐसेही लिखे गयेहैं, यही बात जिनाज्ञानुसार है। इसलिये इन्हीं महाराजने खास 'सामाचारी' ग्रंथमेंभी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखी थी,उसपाठको निकाल देना और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका पाठ अपनी मति कल्पना मुजब नवीन बनवाकर बड़ प्रौढ प्रामाणिकपुरुषोंकबनाये ग्रंथमें प्रक्षेपकरके भोलेजीवोंकोबतलाकर उन्मार्ग चलाना यह बडाभारीदोषहै, देखिये कोइभीपूर्वाचार्यमहाराज ने सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते नहीं लिखी, किंतु प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सर्व प्राचीन पूर्वाचार्योंने सर्वशास्त्रोंमें लिखीहै तो फिर श्रीनवांगीवृत्तिकारक जैसे प्रौढ प्रामाणिक सर्वसम्मत यह महाराज सब पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कैसे लिखेंगे, ऐसा कभी नहीं हो सकता इसलिये इन महाराजके नामसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते करनेका ठहराने वाले प्रत्यक्ष मिथ्यावादी हैं।

शास्त्रोंको व ऐसे शासनप्रभावक गीतार्थ महापुरुषोंको विसवादीका झूठा कलक लगानेकाभी भय न करके अपना आग्रहकी प्रत्यक्ष अ सत्य वातको दृढकरनेके लिये ऐसे २ अनर्थ करते है। इसलिये आत्मार्थी भव भिरुयोंको ऐसा असत्य आग्रह छोडकर प्रथम करेमिभते पीछे इरियावहीकरनेकी सत्यवातको श्रद्धापूर्वक अगीकार करनाही जिनाज्ञानुसार होनेसे श्रेयरूपहै इसीतरहसे आवश्यक चूर्णि-बृहद् वृत्ति लघुवृत्ति पचाशकचूर्णि वृत्ति श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति योगशा स्त्रवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रानुसार सामायिकमें प्रथमकरेमिभते पीछे इरियावहीकी सत्य वातको निषेध करनेवाले ओर महानिशीथ दशवै कालिक पचाशक चूर्णि-उत्तराध्ययन-समाचार भाष्य वृत्ति धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति वगैरह शास्त्रकारमहाराजोंके अपेक्षा विरुद्ध और अधूरे २ पाठोंके नामसे या किसीप्रकारकीभी कुयुक्तिसे सामायिकमें प्रथम इरियावही और पीछे करेमिभते स्थापन करनेवाले आगमपचागीके अनेक शास्त्रपाठोंके उत्थापनकरनेके दोषी वनतेहैं ओर खास अपने तपगच्छादिक सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंकीभी आज्ञालोपने वाले वनते हैं [इसका विशेष खुलासा निर्णय उपरमें देखो] ओर तपगच्छमें पहिले तो प्रथमकरेमिभते पीछेइरियावही करतेथे, इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजी,श्रीकुलमडनसूरिजी वगेरहोंने अपने२वनाये ग्रथोंमें प्रथमकरेमिभते और पीछे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक लिखाहे, मगर थोडे समयसे अपने प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथन विरुद्ध प्रथम इरियावहीकरनेका आग्रह चल पडा है, मगर जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थियोंको ऐसा आग्रहकरना योग्यनहींहै। देखो- सेनप्रश्न' में श्रीविजयसेनसूरिजीने सर्व पूर्वाचार्योंके ओर अपने गच्छकेभी पूर्वाचार्योंके विरुद्धहोकर सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभते करनेका कहा है,मगर तोभी उन्हींकेही सतानीय अतेवासी श्रीमानविजयजी ओर सुप्रसिद्धन्यायविशारदश्रीयशोविजयजीने 'धर्मसग्रह वृत्तिमें आवश्यक चूर्णि पचाशकचूर्णि योगशास्त्रवृत्ति आदि अनेक शास्त्रानुसार प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा है, इसी तरहसे आत्मार्थियोंको अपने गच्छका या गुरुकाभी झूठ पक्षपातको त्याग करके प्रथम करेमिभते पीछे इरियावहीकी जिनाज्ञानुसार सत्य वात को आवश्यमेवही ग्रहण करना उचित है

न्यायरत्नजी शातिविजयजीने महानिशीथ, दशवैकालिकादिकशास्त्रोंके भिन्न २ अपेक्षावाले अधूरे २ पाठोंसे शास्त्रकारमहाराजोंके

तदुपघातिक कर्मापगमतो निर्मलीभवन दर्शनादिगुणस्तस्मा भवति"

ऐसा कहकर सामान्यतासे सामायिक, चउवीसत्थो, वंदन, प्रतिक्रमण, काउसग्ग आदि करनेवालोंका फल बतलायाहै मगर यहां सामायिककरनेकी विधिमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते उच्चारण करनेका नहीं बतलाया इसलिये उत्तराध्ययन सूत्रवृत्तिके नामसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापनकरनेवालोंकी बडीभूलहै

४८-अब आत्मार्थी तत्त्वग्राही पाठकगणसे मेरा यही कहनाहै,कि-श्रीमहानिशीथसूत्रका उद्धार श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजनेकियाहै। श्रीदशवैकालिकसूत्रचूलिकाकी बडीटीकाभी इन्हीं महाराजने बनाया है,तथा आवश्यकसूत्रकी बडी टीकाभी इन्हीं महाराजने बनाया है। श्रावक प्रज्ञप्तिकी टीकाभी इन्हीं महाराजने बनायाहै, अब देखो-आवश्यक बडीटीकामें व श्रावकप्रज्ञप्तिटीकामें सामायिक विधिमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक पाठ है तथा महानिशीथसूत्रके तीसरेअध्ययनमें उपधान चैत्यवंदनसबंधी इरियावही करनेका पाठहै, और दशवैकालिक चूलिकाकीटीकामें साधुके गमनागमनसबंधी इरियावही करके स्वाध्यायादि करनेकापाठहै,इसलिये भिन्न२ अपेक्षावाले इन शास्त्रपाठोंके आपसमें किसीतरहकाभी विसंवाद नहीं है, और विसंवादी शास्त्रोंको व विसंवादी कथन करनेवालोंको शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहे है। इसलिये जैनशास्त्रोंको व पूर्वाचार्योंको अविसंवादी कहनेमें आतेहै, इसी तरह श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजभी अविसंवादी होनेसे इन्हीं महाराजके बनाये ऊपरके सर्व शास्त्रोंको अविसंवादी कहनेमेंआतेहै, और श्रीआवश्यकसूत्रकी बडी टीका व श्रावकप्रज्ञप्ति टीकामें सामायिक करने सबंधी प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका पाठ मौजूद होने परभी महानिशीथ, दशवैकालिक चूलिकाकी टीकाके भिन्न २ अपेक्षावाले अधूरे २ पाठोंका उलटा २ अर्थकरके शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेसे ऊपरके शास्त्रपाठोंमें और इन्हीं शास्त्रोंके करनेवाले श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजके वचनोंमें एकही विषय सबंधी आपसमें पूर्वापर विसंवाद रूप दूषणआताहै,मगर इन्हीं शास्त्रपाठोंमें व इन्हींमहाराजके कथनमें किसी प्रकारसेभी कभी विसंवादका दूषण नहीं आ सक्ता यह तो सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करनेके आग्रह करनेवालोंकीही पूर्ण अज्ञानताहै कि-ऐसे अविसंवादी आप्त

शास्त्रोंकों व ऐसे शासनप्रभावक गीतार्थ महापुरुषोंको विसवादीका झूठा कलक लगानेकाभी भय न करके अपना आग्रहकी प्रत्यक्ष अ सत्य वातको दृढकरनेके लिये ऐसे २ अनर्थ करते हैं। इसलिये आ त्मार्थी भव भिरुयोंको ऐसा असत्य आग्रह छोडकर प्रथम करेमिभते पीछे इरियावहीकरनेकी सत्यवातको श्रद्धापूर्वक अगीकार करनाही जिनाज्ञानुसार होनेसे श्रेयरूपहै इसीतरहसे आवश्यक चूर्णि-बृहद् वृत्ति लघुवृत्ति पचाशकचूर्णि वृत्ति श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति योगशा स्त्रवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रानुसार सामायिकमें प्रथमकरेमिभते पीछे इरियावहीकी सत्य वातको निषेध करनेवाले ओर महानिशीथ दशवे कालिक पचाशक चूर्णि-उत्तराध्ययन-समाचार भाष्य वृत्ति धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति वगैरह शास्त्रकारमहाराजोंके अपेक्षा विरुद्ध और अधूरे २ पाठोंके नामसे या किसीप्रकारकीभी कुयुक्तिसे सामायिकमें प्रथम इरियावही और पीछे करेमिभते स्थापन करनेवाले आगमपचागीके अनेक शास्त्रपाठोंके उत्थापनकरनेके दोषी बनतेहैं और खास अपने तपगच्छादिक सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंकीभी आज्ञालोपने वाले बनते हैं [इसका विशेष खुलासा निर्णय उपरमें देखो] और तपगच्छमें पहि ले तो प्रथमकरेमिभते पीछेइरियावही करतेथे, इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरि जी,श्रीकुलमडनसूरिजी वगैरहोंने अपने२वनाये ग्रथोंमें प्रथमकरेमिभ ते और पीछे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक लिखाहै, मगर थोडे समयसे अपने प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथन विरुद्ध प्रथम इरियावही करनेका आग्रह चल पडा है, मगर जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थि योंको ऐसा आग्रहकरना योग्यनहींहै। देखो- सेनप्रश्न' में श्रीविजयसे नसूरिजीने सर्व पूर्वाचार्योंके और अपने गच्छकेभी पूर्वाचार्योंके वि रुद्धहोकर सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभते करनेका कहा है,मगर तोभी उन्हींकेही सतानीय अतेवासी श्रीमानविजयजी ओर सु प्रसिद्धन्यायविशारदश्रीयशोविजयजीने 'धर्मसग्रह'वृत्तिमें आवश्यक चूर्णि पचाशकचूर्णि योगशास्त्रवृत्ति आदि अनेक शास्त्रानुसार प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा ह, इसी तरहसे आत्मार्थियोंको अपने गच्छका या गुरुकाभी झूठ पक्षपातको त्याग क रके प्रथम करेमिभते पीछे इरियावहीकी जिनाज्ञानुसार सत्य वात को आवश्यमेवही ग्रहण करना उचित है

न्यायरत्नजी शातिविजयजीने महानिशीथ, दशवेकालिकादिक-शास्त्रोंके भिन्न २ अपेक्षावाले अधूरे २ पाठोंसे शास्त्रकारमहाराजोंके

अभिप्रायविरुद्धहोकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते का स्थापन करनेके लिये 'सामाचारी समीक्षा' में अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध व कुयुक्तियोंसे भरा दिये हैं, उनका खुलासा ऊपरके लेखसे पाठकगण स्वयं विचार लेंगे इसी तरहसे आनंदसागरजीने 'धर्म संग्रह' की प्रस्तावनामें, चतुरविजयजीने 'संबोधसत्तरिप्रकरण वृत्ति' की टिप्पणिकामें, श्रीशांतिविजयजी अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांतसामाचारी' में, धर्मसागरजीने इरियावही षट्त्रिंशिका-प्रवचन परीक्षादिकमें औरभी कोइभी महाशय कोइभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका निषेधकरके, प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले सब शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले उपरके लेखसे समझ लेने चाहिये

और पर्युषणासंबंधी, तथा छ कल्याणक संबंधीभी न्यायरत्नजीने अनेक शास्त्रविरुद्ध और कुयुक्तियोंके संग्रहसे ऐसेर ही अनर्थ कियेहैं, उन सबका खुलासा समाधान पूर्वक निर्णय इसी ग्रंथमें और इस ग्रंथके प्रथम भागकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें और सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें अच्छी तरहसे खुलासा सहित छप चुका है। इसलिये यहां पर फिरसे विशेष लिखनेकी कोई जरुरत नहींहै, सत्य तत्वाभिलाषी पाठक गण वहांसे समझ लेंगे। औरभी न्यायरत्नजीने श्रीअभयदेवसूरिजी संबंधी व तिथि संबंधी जो जो शास्त्र विरुद्ध बातें लिखी है, उन सबका खुलासा श्रीमान् पन्यासजी श्री केशर मुनिजीने 'प्रश्नोत्तरमंजरी' के तीनों भागोंमें अच्छी तरहसे छपवाकर प्रसिद्ध कियाहै, उनके वाचनेसे सब खुलासा हो जावेगा और मैं भी तीसरे भागकी उद्घोषणामें थोडासा नमूनारूप लिखूंगा तब वहां जैनमुनियोंको रेल विहार निषेध, व व्याख्यानके समय मुंहपत्तिका बांधना और देशकालानुसार विशेष लाभ जानकर स्त्री-पुरुषोंकी सभामें साध्वियोंको धर्म शास्त्रका व्याख्यान करना [धर्मका उपदेश देना] वगैरह बातों संबंधीभी खुलासा लिखनेमें आवेगा पाठक गण वहांसे सर्व निर्णय समझ लेना इति शुभम्

विक्रम संवत् १९७८ वैशाख वदी पंचमी बुधवार.

हस्ताक्षर श्रीमान्-उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजीमहाराजके लघु शिष्य मुनि--मणिसागर जैन धर्मशाला, खानदेश--धूलिया

इस ग्रन्थकारके गुरुजी

श्रीमन्मुनिवर्य श्रीसुमति सागरजी महाराज।
ज्ञाति वोगाश्रोसवाल, नागोर मारवाड।
जन्म सवत १८१७। दोक्षा स वत् १८४४।

अभिप्रायविरुद्धहोकर सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते का स्थापन करनेके लिये '[illegible] समीक्षा' में अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध व कुयुक्तियोंमें अनर्थ किये हैं, उनका खुलासा ऊपरके लेखसे पाठकगण स्वयं विचार लेंगे इसी तरहसे आनंदसागरजीने 'धर्म संग्रह' की प्रस्तावनामें, चतुरविजयजीने 'सबोधसत्तरिप्र करण वृत्ति' की टिप्पणिकामें, श्रीशांतिविजयजी अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांतसामाचारी'में, धर्मसागरजीने इरियावही षट्त्रिंशिका प्रवचन परीक्षादिकमें औरभी कोईभी महाशय कोईभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका निषेधकरके, प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले सब शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले उपरके लेखसे समझ लेने चाहिये

और पर्युषणासंबंधी, तथा छ कल्याणक संबंधीभी न्यायरत्नजीने अनेक शास्त्रविरुद्ध और कुयुक्तियोंके संग्रहसे वैसे२ही अनर्थकियेहैं, उन सबका खुलासा समाधान पूर्वक निर्णय इसी ग्रंथमें और इस ग्रंथके प्रथम भागकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें और सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें अच्छी तरहसे खुलासा सहित छप चुका है। इसलिये यहां पर फिरसे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहींहै, सत्य तत्वाभिलाषी पाठक गण वहांसे समझ लेंगे। औरभी न्यायरत्नजीने श्रीअभयदेवसूरिजी संबंधी व तिथि संबंधी जो जो शास्त्र विरुद्ध बातें लिखी हैं, उन सबका खुलासा श्रीमान् पन्यासजी श्री केशर मुनिजीने 'प्रश्नोत्तरमंजरी' के तीनों भागोंमें अच्छी तरहसे छपवाकर प्रसिद्ध कियाहै, उनके वाचनेसे सब खुलासा हो जावेगा और मैं भी तीसरे भागकी उद्घोषणामें थोडासा नमूनारूप लिखूंगा तब वहां जैनमुनियोंको रेल विहार निषेध, व व्याख्यानके समय मुहपत्तिका बांधना और देशकालानुसार विशेष लाभ जानकर स्त्री-पुरुषोंकी सभामें साध्वियोंको धर्म शास्त्रका व्याख्यान करना [धर्मका उपदेश देना] वगैरह बातों संबंधीभी खुलासा लिखनेमें आवेगा पाठक गण वहांसे सर्व निर्णय समझ लेना इति शुभम्

विक्रम संवत् १९७८ वैशाख वदी पंचमी बुधवार
हस्ताक्षर श्रीमान्-उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजीमहाराजके लघु शिष्य मुनि—मणिसागर जैन धर्मशाला, खानदेश—धूलिया

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां, निर्णयं क्रियते खलु ॥१॥
आत्मार्थिनाञ्च लाभाय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहकोनाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्ध-मानस्वामीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोको श्रीजिनाज्ञाकीप्राप्ति रूप लाभके वास्ते और उत्सूत्रपरूपणा रूप पाखण्डमार्गकी शान्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निश्चयके साथ निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमे सम्बन्ध तो मुख्य करके अधिक मासके ३० दिनोकी गिनतीके प्रमाण करनेका है। और दो श्रावण अथवा दो भाद्र पद होनेसे आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमे श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन करनेका इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्त्तमानकालमें गच्छोंके पक्षपातसे आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम पड़ता है, उसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक युक्ति अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसको

अभिप्रायसे विरुद्धहोकरके दूसरे श्रावणमें ५० दिने श्रीपर्युषण पर्वका आराधन करने वालोंपर खूबही आक्षेपोकी बड़े जोरसे वर्षा करी और पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोको उत्थापन किये ओर जो सपसेधर्मकार्य होते थे जिन्होंमें विघ्नकारक छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तक प्रगट कराके कुपक्षके वृक्षको उत्पन्न कराया और तीसरे जैन पत्रवालेने भी इन्होंकेही अनुसार चल करके दूराग्रहके हठसे पर्युषणा विचारके लेखका गुजरातीमें भाषान्तर जैनपत्रके २३ वें अङ्ककी आदिमें प्रगट करके उत्सूत्र भाषणोके फल विपाक प्राप्त करनेके लिये और गच्छकदाग्रहके झगडेको वढानेके लिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोको अनेक तरहसे आक्षेपरूप कटुक वचन लिखके कुमपक्षे वृक्षको वढानेका कारण किया।

इनतीनोमहाशयोके इसतरहकेलेखोको मैंने अवलोकन किये तो जिनाज्ञा विरुद्ध एकान्त अपने गच्छ सबन्धी आग्रहके पक्षपातसे दूसरोको मिथ्या दूषण लगानेवाले और आत्मार्थि भव्यजीवोको श्रीजिनाज्ञाकाआराधन करनेमें विघ्न रूप मालूम हुए तब इन विघ्नको दूर करनेकी इच्छाहुई इसलिये मोक्षाभिलाषी जिनाज्ञा इच्छक भव्य जीवोको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें दृढ करनेके वास्ते और उत्सूत्रभाषक गच्छकदाग्रहियोको हितशिक्षाके लिये शास्त्रानुसार तथा शास्त्र युक्ति पूर्वक श्रीपर्युषणपर्वका आराधन सम्बन्धी वर्त्तमानिक विषवादका निर्णय करना उचित समझा सो करके तत्वान्वेषि पुरुषोको दिखाता हूं —

श्रीगणधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रमें १, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीनिशीथसूत्रके लघु भाष्यमें २, तथा वृहद्भा-

अवलोकन करनेसे असत्यको छोडकर सत्यको ग्रहण करके मोक्षाभिलाषी जन अपने आत्म कल्याणमें उद्यम करें, एही इस ग्रन्थकारका तथा इस ग्रन्थका मुख्य प्रयोजन है। और इस ग्रन्थका अधिकारी तो यही होगा जो कि अपने गच्छ सबंधी परंपराके पक्षपातका कदाग्रह रहित तथा जिज्ञासा इच्छक और शास्त्रोक्त शुद्ध व्यवहारको अङ्गीकार करनेवाला सम्य क्त्वधारी मोक्षाभिलाषी, नतु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी बहुलससारी गड्डरीह प्रवाही।

मङ्गलाचरण और सम्बन्ध चतुष्टय कहे बाद सब सज्जन पुरुषोंको निवेदन करनेमें आता है कि-वर्त्तमानकालमें सवत् १९६६ के लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण होनेसे श्री खरतर गच्छादिवाले पञ्चाङ्गी प्रमाण पूवक तथा श्रीपूर्वाचार्योंकी आज्ञानुजब आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करते हैं जिन्होंको प्रथम श्रीवल्लभविजयजीने अपनी मति कल्पनासे कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना जैनपत्रद्वारा आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकरके कुसपके वृक्षका बीज लगाया तथा प्रत्यक्ष श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करके भी मायावृत्तिसे आप आज्ञाके आराधक बनना चाहा, तथा उन्हीकाही अनुकरण करके दूसरे काशी से श्रीधमविजयजीने अपने शिष्य विद्याविजयजीके नामसे 'पर्युषणा विचार' का लेख प्रगट कराया जिसमें भी उत्सूत्र भाषणोंका तथा कुयुक्तियोंका सग्रह करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रोंके आगे पीछेके पाठोंको छोडकरके विना सम्बन्धके अधूरे अधूरे पाठ लिखकर शास्त्रकार महाराजोंके

अभिप्रायसे विरुद्ध होकरके दूसरे श्रावणमें ५० दिने श्रीपर्युषण पर्वका आराधन करने वालोंपर खूबही आक्षेपोंकी बड़े जोरसे वर्षा करी और पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको उत्थापन किये और जो सपसेधर्मकाय होते थे जिन्होंमें विघ्नकारक छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तक प्रगट कराके कुमपके वृक्षको उत्पन्न कराया और तीसरे जैन पत्रवालेने भी इन्होंकेही अनुसार चल करके दूराग्रहके हठसे पर्युषणा विचारके लेखका गुजरातीमें भाषान्तर जैनपत्रके २३ वें अङ्ककी आदिमें प्रगट करके उत्सूत्र भाषणोंके फल विपाक प्राप्त करनेके लिये और गच्छकदाग्रहके झगड़ेको वढ़ानेके लिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंको अनेक तरहसे आक्षेपरूप कटुक वचन लिखके कुमपके वृक्षको वढ़ानेका कारण किया।

इनतीनोमहाशयोके इसतरहकेलेखोको मैंने अवलोकन किये तो जिनाज्ञा विरुद्ध एकान्त अपने गच्छ सबन्धी आग्रहके पक्षपातसे दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेवाले और आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकाआराधन करनेमें विघ्न रूप मालूम हुए तव इन विघ्नको दूर करनेकी इच्छाहुई इसलिये मोक्षाभिलाषी जिनाज्ञा इच्छक भव्य जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें दृढ करनेके वास्ते और उत्सूत्रभाषक गच्छकदाग्रहियोंको हितशिक्षाके लिये शास्त्रानुसार तथा शास्त्र युक्ति पूर्वक श्रीपर्युषणपर्वका आराधन सम्बन्धी वर्त्तमानिक विषवादका निर्णय करना उचित समझा सो करके तत्वान्वेषि पुरुषोंको दिखाता हूं —

श्रीगणधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रमें १, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीनिशीथसूत्रके लघु भाष्यमें २, तथा वृहद्भा-

ष्यमें ३, और श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्यजी पूर्वधर कृत श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिमें ४, श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्री-दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रमें ५, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत तत्सूत्रकी चूर्णिमें ६, श्रीपार्श्वचन्द्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें ७, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ८, बृहद्भाष्यमें ९, तथा चूर्णिमें १०, और श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिमें ११, श्रीसुधर्म्मस्वामीजी कृत श्रीसमवायांगजी सूत्रमें १२, तथा श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध श्रीनवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें १३, और उक्त महाराज कृत श्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीभद्रबाहुस्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रमें १५, तथा निर्युक्तिमें १६, और श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी श्रीसन्देहविषौषधि वृत्तिमें १७, तथा निर्युक्तिकीवृत्तिमें १८, और विधिप्रपा नाम श्री समाचारी ग्रन्थमें १९, और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी कल्पद्रुमकलिकावृत्तिमें २० तथा श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्पलतावृत्तिमे २१ और उक्त महाराज कृत श्रीसमाचारीशतकनाम ग्रन्थमें २२, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीकल्पावचूरिमें २३, तथा श्रीतपगच्छके श्रीधर्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें २४, और श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिकावृत्तिमें २५, और श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुबोधिकावृत्तिमें २६, श्रीसंघविजयजी कृत श्रीकल्पप्रदीपिकावृत्तिमें २७, श्रीविजयविमल गणिजी कृत श्रीगच्छाचारपयन्नाकीवृत्तिमें २८ श्रीअञ्चलगच्छके श्रीउदयसागरजी कृत श्रीकल्पावचूरिरूपवृत्तिमें २९, श्रीखरतर

गच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारीग्रन्थमे ३० तथा श्रीसंघपट्टकवृहद्वृत्तिमे ३१ और श्रीहर्षराजजी कृत श्रीसंघ-पट्टककी लघुवृत्तिमे ३२, और श्रीपूर्वाचार्य्योंके बनाये तीन श्रीकल्पान्तरवाच्योमे ३५ इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमें आषाढ चौमासीसे ५० दिन जानेसे अवश्यमेव पर्युषणा करना कहा है उसीकेही अनुसार तथा श्रीपूर्वाचार्य्योंकी आज्ञा-मुजब वर्त्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्यु-षणा करनेमें आती है इसी विषयकी पुष्टिके लिये पाठक-वर्गको निःसन्देह होनेके वास्ते शास्त्रोंके थोडेसे पाठ भी लिख दिखाता हूं।

१ श्रीकल्पसूत्रके पृष्ठ ५३ से ५४ तकका पर्युषणा संबंधी पाठ नीचे लिखे मुजब जानो, यथा—

तेणकालेण तेणसमएण समणेभगवमहावीरे वासाण सवी सइराएमासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ ॥१॥ सेकेणट्ठेण भंते एव वुच्चइ समणेभगव महावीरे वासाण सवीसइ राए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ। जओण पाएण, अगा-रीण अगाराइ,कडियाइ उक्कंपियाइ,छन्नाइ लित्ताइ, घट्ठाइ मट्ठाइ, संपूमियाइ खाओदगाइ, खायनिद्धमणाइ अप्पणो अट्ठाए कडाइ, परिभुत्ताइ, परिणामियाइ भवंति॥ सेतेणट्ठेण एव वुच्चइ समणे भगव महावीरे वासाण सवीसइराए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ ॥२॥ जहाण समणेभगव महावीरे वासाण सवीसइ राए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ। तहाण गणहराबि वासाण सवीसइ राए मासे-वइक्कते वासावास पज्जोसविति ॥ ३ ॥ जहाण गणहराबि

ष्यमें ३, और श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर कृत श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिमें ४, श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्री-दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रमें ५, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत तत्सूत्रकी चूर्णिमें ६, श्रीपार्श्वचन्द्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें ७, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ८, वृहद्भाष्यमें ९, तथा चूर्णिमें १०, और श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिमें ११, श्रीसुधर्म्मस्वामीजी कृत श्रीसमवायांगजी सूत्रमें १२ तथा श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध श्रीनवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें १३, और उक्त महाराज कृत श्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीभद्रबाहुस्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रमें १५, तथा निर्युक्तिमें १६, और श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी श्रीसन्देहविषौषधि वृत्तिमें १७, तथा निर्युक्तिकीवृत्तिमें १८, और विधिप्रपा नाम श्री समाचारी ग्रन्थमें १९, और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी कल्पद्रुमकलिकावृत्तिमें २० तथा श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्पलतावृत्तिमे २१ और उक्त महाराज कृत श्रीसमाचारीशतकनाम ग्रन्थमें २२, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीकल्पावचूरिमें २३, तथा श्रीतपगच्छके श्रीधर्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें २४, और श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिकावृत्तिमें २५, और श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुबोधिकावृत्तिमें २६, श्रीसंघविजयजी कृत श्रीकल्पप्रदीपिकावृत्तिमें २७, श्रीविजयविमलगणिजी कृत श्रीगच्छाचारपयन्नाकीवृत्तिमें २८ श्रीअञ्चलगच्छके श्रीउदयसागरजी कृत श्रीकल्पावचूरिरूपवृत्तिमें २९, श्रीखरतर

गच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारीग्रन्थमें ३० तथा श्रीसंघपट्टकवृहद्वृत्तिमें ३१ और श्रीहर्षराजजी कृत श्रीसंघपट्टककी लघुवृत्तिमे ३२, और श्रीपूर्वाचार्योंके बनाये तीन श्रीकल्पान्तरवाच्योमे ३५, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमें आषाढ चौमासीसे ५० दिन जानेसे अवश्यमेव पर्युषणा करना कहा है उसीकेही अनुसार तथा श्रीपूर्वाचार्योंकी आज्ञामुजब वर्त्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा करनेमें आती है इसी विषयकी पुष्टिके लिये पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके वास्ते शास्त्रोंके थोड़ेसे पाठ भी लिख दिखाता हू।

१ श्रीकल्पसूत्रके पृष्ठ ५३ से ५४ तकका पर्युषणा संबधी पाठ नीचे लिखे मुजब जानो, यथा—

तेणकालेण तेणसमएण समणेभगवमहावीरे वासाण सवी सइराएमासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ ॥१॥ सेकेणट्ठेण भंते एव वुच्चइ समणेभगव महावीरे वासाण सवीसइ राए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ। जऊण पाएण, अगारीण अगाराइ, कडियाइ, उक्कपियाइ, छन्नाइ, लित्ताइ, घट्ठाइ मट्ठाइ, सधूपियाइ खाउ दगाइ, खायनिद्धमणाइ अप्पणो अट्ठाए कडाइ, परिभुत्ताइ, परिणामियाइ भवति॥ सेतेणट्ठेण एव वुच्चइ समणे भगव महावीरे वासाण सवीसइराए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ ॥२॥ जहाण समणेभगव महावीरे वासाण सवीसइ राए मासे विइक्कते वासावास पज्जोसवेइ। तहाण गणहराविं वासाण सवीसइ राए मासे-वइक्कते वासावास पज्जोसविति ॥ ३ ॥ जहाण गणहरावि

वासाण सवीसइराएमासे जाव पज्जोसविंति। तहाण गणहर सीमाविं वासाण जाव पज्जोसविंति॥४॥ जहाण गणहरसीसा वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाणं थेराविं वासावासस्राव पज्जोसविंति ॥५॥ जहाण थेरा वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाण जे इमे अज्जताए समणा निग्गथा विहरंति एएवि-अण वासाण जाव पज्जोसविंति।६॥ जहाण जे इमे अज्ज-त्ताए समणा निग्गथावि वासाण सवीसइराए मासे विइ-क्कन्ते वासवास पज्जोसविंति। तहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति॥७॥ जहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाण अम्हेवि वासाण सवीसइराए मासे विइक्कन्ते वसावास पज्जोसवेमो। अतरावियसे कप्पइ नोसे कप्पइ त^{म्}रयणि उवायणावित्तए॥८॥ इत्यादि

भावार्थ —तिसकाल तिससमयके विषे श्रमणभगवान् श्रीमहावीरस्वामी वर्षा संबंधी आषाढ चौमासीसे वीश दिन सहित एक मास याने ५० दिन जानेसे वर्षावासमें पर्युषणा करते भये, ॥१॥ यहा पर शिष्य पूछता है कि हेभगवान् किस कारणसे ऐसा कहते हो तब गुरु महाराज उत्तर देते हैं कि प्राय करके गृहस्थ लोग भगवान्का महात्म्य जान करके इस समय वर्षा बहुत होगी ऐसा विचार करके अपने घरोंको चटाइयोंसे आच्छादित करेंगे, चूनादिसे सपेदी करेंगे, घास तृणादिसे उपरमें बदोवस्त करेंगे गोबरसे लिपन करेंगे,आसपासमें वाड वगैरहसे आवता करेंगे, उंची नीची भूमीको तोडकर बराबर करेंगे पाषाणादिसे घस करके चीकणी करेंगे, मकानोंको धूपादिसे सुगंधयुक्त करेंगे और

अपने घरोके ऊपरका वर्षा सबधी पाणी निकलनेके लिये प्रणालिका करेंगे, और सब घरका पानी निकलनेके वास्ते नवीन खाल बनावेंगे, अथवा पहिलेका खाल होवे उसीका सुधारा करेंगे और उपयोगी सचित वस्तुओको अचितकरके रखेंगे, इत्यादि अनेक तरहके आरम्भादि कार्य पहिलेसेही अपने लिये करलेवेगे इसलिये उपरोक्त दोषोका निमित्त कारण न होने के वास्ते आषाढ चौमासीसे १ मास और २० दिन गये बाद भगवान् पर्युषणा करते थे ॥२॥ जैसे १ मास और २० दिन गयेबाद भगवान् पर्युषणा करते थे तैसेहीगणधरमहाराजभी १ मास और २० दिन गयेबाद पर्युषणा करते थे॥३॥ जैसे गणधर महाराज पर्युषणा करतेथे, तैसेही गणधरमहाराजके शिष्य प्रशिष्यादि भी पर्युषणा करते थे ॥४॥ जैसे गणधर महाराजके शिष्यादि पर्युषणा करते थे तैसेहीस्थविर भी करते थे ॥५॥ जैसे स्थविर करते थे तैसेही वर्तमानमें श्रमण निर्ग्रन्थ विचरने वाले है सो भी उपरोक्त विधिके अनुसार पर्युषणाकरते हैं॥६॥ जैसे वर्तमानमें श्रमण निग्रन्थ पर्युषणा करते हैं तैसेही हमारे आचार्य उपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते है ॥७॥ जैसे हमारे आचार्यउपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते है तैसेही हमभी आषाढ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिसमें भी कारण योगे ५० दिन के भीतर पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु कारण योगसे ५० वे दिनकी रात्रिकोभी उल्लघन करना नहीं कल्पता है, याने ५० वें दिनकी रात्रिको उल्लघन करनेवाले को जिनाज्ञा विरुद्ध दूषणकी प्राप्ति होवे ।

अब देखिये उपरोक्त सुप्रसिद्ध श्रीकल्पसूत्रानुसार दूसरे

वासाण सवीसइराएमासे जाव पज्जोसविंति। तहाण गणहर सीसावि वासाण जाव पज्जोसविंति॥४॥ जहाणगणहरसीसा वासाण जाव पज्जोसविंति । तहाण थेरावि वासावासंजाव पज्जोसविंति ॥५॥ जहाण थेरा वासाण जाव पज्जोसविंति । तहाण जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एएवि-अण वासाण जाव पज्जोसविंति ।६॥ जहाण जे इमे अज्ज-त्ताए समणा निग्गंथावि वासाण सवीसइराए मासे विइ-क्कन्ते वासवास पज्जोसविंति । तहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति ॥७॥ जहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाण अम्हेवि वासाण सवीसइराए मासे विइक्कन्ते वासावास पज्जोसवेमो । अंतरावियसे कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणि उवायणावित्तए ॥८॥ इत्यादि

भावार्थ—तिसकाल तिससमयके विषे श्रमणभगवान् श्रीमहावीरस्वामी वर्षा संबंधी आषाढ चौमासीसे वीश दिन सहित एक मास याने ५० दिन जानेसे वर्षावासमें पर्युषणा करते भये, ॥१॥ यहा पर शिष्य पूछता है कि हेभगवान् किस कारणसे ऐसा कहते हो तब गुरु महाराज उत्तर देते हैं कि प्राय करके गृहस्थ लोग भगवान्‌का महात्म्य जान करके इस समय वर्षा बहुत होगी ऐसा विचार करके अपने घरोको घटाइयोसे आच्छादित करेंगे चूनादिसे सपेदी करेंगे, घास तृणादिसे उपरमें बंदोबस्त करेंगे गोबरसे लिंपन करेंगे,आसपासमें वाड वगैरहसे जाबता करेंगे उंची नीची भूमीको तोडकर बराबर करेंगे पाषाणादिसे घस करके चीकणी करेंगे, मकानोको धूपादिसे सुगंधयुक्त करेंगे और

अपने घरोंके ऊपरका वर्षा सवधी पाणी निकलनेके लिये प्रणालिका करेंगे, और सब घरका पानी निकलनेके वास्ते नवीन खाल बनावेंगे, अथवा पहिलेका खाल होवे उसीका सुधारा करेंगे और उपयोगी सचित वस्तुओंको अचितकरके रखेंगे, इत्यादि अनेक तरहके आरम्भादि कार्य पहिलेसेही अपने लिये करलेवेगे इसलिये उपरोक्त दोषोंका निमित्त कारण न होने के वास्ते आषाढ चौमासीसे १ मास और २० दिन गये बाद भगवान् पर्युषणा करते थे, ॥२॥ जैसे १ मास और २० दिन गयेबाद भगवान् पर्युषणा करते थे तैसेहीगणधरमहाराजभी १ मास और २० दिन गयेबाद पर्युषणा करते थे॥३॥ जैसे गणधर महाराज पर्युषणा करतेथे, तैसेही गणधरमहाराजके शिष्य प्रशिष्यादि भी पर्युषणा करते थे ॥४॥ जैसे गणधर महाराजके शिष्यादि पर्युषणा करते थे तैसेहीस्थविर भी करते थे ॥५॥ जैसे स्थविर करते थे तैसेही वर्तमानमें श्रमण निर्ग्रन्थ विचरने वाले हैं सो भी उपरोक्त विधिके अनुसार पर्युषणाकरते है॥६॥ जैसे वर्तमानमें श्रमण निर्ग्रन्थ पर्युषणा करते हैं तैसेही हमारे आचार्य उपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते है ॥७॥ जैसे हमारे आचार्यउपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते है तैसेही हमभी आषाढ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिसमें भी कारण योगे ५० दिन के भीतर पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु कारण योगसे ५० वे दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करना नहीं कल्पता है, याने ५० वें दिनकी रात्रिको उल्लंघन करनेवाले को जिनाज्ञा विरुद्ध दूषणकी प्राप्ति होवे ।

अब देखिये उपरोक्त सुप्रसिद्ध श्रीकल्पसूत्रानुसार दूसरे

वामाण सवीसइराएमासे जाव पज्जोसविंति। तहाण गणहर सीमावि वासाण जाव पज्जोसविंति ॥४॥ जहाण गणहरसीसा वासाण जाव पज्जोसविंति । तहाण थेरावि वासावास जाव पज्जोसविंति ॥५॥ जहाण थेरा वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाण जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गथा विहरंति एएवि-अण वासाण जाव पज्जोसविंति ।६॥ जहाण जे इमे अज्ज-त्ताए समणा निग्गथावि वासाण सवीसइराए मासे विइ-क्कंते वासवास पज्जोसविंति । तहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति ॥७॥ जहाण अम्हवि आयरिया उवज्झाया वासाण जाव पज्जोसविंति। तहाण अम्हेवि वासाण सवीसइराए मासे विइक्कंते वसावास पज्जोसवेमो । अतरावियसे कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणि उवायणावित्तए ॥८॥ इत्यादि

भावार्थ—तिसकाल तिससमयके विषे श्रमणभगवान् श्रीमहावीरस्वामी वर्षा सबधी आषाढ चौमासीसे वीश दिन सहित एक मास याने ५० दिन जानेसे वर्षावासमें पर्युषणा करते भये, ॥१॥ यहा पर शिष्य पूछता है कि हेभगवान् किस कारणसे ऐसा कहते हो तब गुरु महाराज उत्तर देते हैं कि प्राय करके गृहस्थ लोग भगवानूका महा त्म्य जान करके इस समय वर्षा बहुत होगी ऐसा विचार करके अपने घरोंको चटाइयोंसे आच्छादित करेंगे, चूनादि से सपेदी करेंगे, घास तृणादिसे उपरमें बदोवस्त करेंगे गोवरसे लिपन करेंगे,आसपासमें वाड वगैरहसे जावता करेंगे उची नीची भूमीको तोडकर बराबर करेंगे पाषाणादिसे घस करके चीकणी करेंगे, मकानोको धूपादिसे सुगधयुक्त करेंगे और

पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, सा स्थापना आषाढपूर्णिमायां, योग्यक्षेत्राभावेतु पञ्च पञ्च दिनवृद्धया यावद्भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी एकादशसुपर्व तिथिषु क्रियते, गृहि ज्ञातायां तु यस्यां साम्वत्सरिकातिचारालोचनं १, लुञ्चनं २, पर्युषणायां कल्पसूत्राकर्णनं वा कथनं ३, चैत्यपरिपाटी ४, अष्टमतपः ५, साम्वत्सरिकंचप्रतिक्रमणं क्रियते, यथाचव्रत पर्यायवर्षाणि गण्यते सा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां, युगप्रधान कालकसूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्तु अभिवर्द्धितवर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यं, तत्सिद्धान्तटिप्पनानुसारेण तत्रहि युगमध्येपौषो युगान्तेच आषाढ एव वर्द्धते, तान्येतानि च अधुना न सम्यग् ज्ञायते अतो दिनपञ्चाशतैव पर्युषितव्यम् ॥

३ और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिकावृत्तिके पृष्ठ २४२से२४३ तकका तत्पाठ —

(सूत्रम्) अन्तरावियसे कप्पइ-इत्यादि, अर्थ अन्तरापिच अर्वागपि महाकार्यविशेषात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमीत इत कल्पते पर्युषणापर्वकर्तुं, परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमी अतिक्रमितुं । पूर्वं उत्सर्गनय प्रोक्त अन्तराविय से इत्यादिना अपवादनय प्रोक्त । एकादशसु पञ्चकेषु कुर्वत्सु आषाढ पूर्णिमा दिवसे प्रथम पर्व, एवमग्रे पञ्चभि पञ्चभि र्दिवसै एकैकं पर्व, एवं कुर्वता साधूनां पञ्चाशद्दिनै एकादश पर्वाणि भवन्ति, एतेषु एकादशपर्वदिवसेषु पर्युषणापर्व कर्त्तव्यं । पर्वसु एकस्मिन्दिने न्यूनेपि कारण विशेषेण पर्युषणा कर्त्तव्या, परं एकादशस्य पर्वस्य उपरि अधिके एकस्मिन्नपि दिने गते पर्युषणा पर्व न कर्त्तव्यमुपरिदिनं नोल्लङ्घनीय मित्यर्थः ।

श्रावणमे पर्युषणा करनेवालोंके । इमा द्वेषबुद्धिसे आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाना और दो श्रावण होते भी आषाढ़ चौमासीसे दो मास ऊपर बीस दिन याने ८० दिने (प्रत्यक्ष पंचाङ्गी विरुद्ध अपनी मति कल्पनासे) पर्युषणा करके भी आज्ञाके आराधक बनना सो गच्छकदाग्रहि उत्सूत्र भाषण करनेवालोंके सिवाय और कौन होगा सो विवेकी सज्ज-नोंको विचार करना चाहिये । और दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमे तथा दो भाद्रपद होनेसे भी दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनेवाले महाशयोंको हर वर्ष पर्युषणा मे प्रायः करके सब जगह पर बताता हुआ मूलमन्त्ररूप उपरोक्त सूत्रपाठको विवेक बुद्धिसे विचारके असत्यको छोड़ कर सत्यको ग्रहण करना चाहिये ।

और अब ऊपरके सब पाठकी सब व्याख्याओंके सबपाठ बहोत विस्तार हो जानेके कारणसे नहीं लिखता हू परन्तु (अन्तरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ त रयणि उवायणा वित्तए) इस अन्तके पाठकी थोड़ीसी व्याख्याओके पाठ लिखके पाठक वर्गको विशेष निःसन्देह होनेके लिये लिख दिखलाता हू ।

२ श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्प-लता वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तकका तत्पाठ ——

अन्तरावियसेकप्पइ पज्जोसवित्तए । अन्तरापि च अर्वा-गपि कल्पते पर्युषितु, "नोसेकप्पइ त रयणि" पर न कल्पते तां रजनीभाद्रपद शुक्लपञ्चमी, "उवाइणावित्तएत्ति," अति क्रमितु । उपनिवासे इत्यागमिकोधातु, इह पर्युषणाद्विधा-गृहिज्ञाता गृहयज्ञाताच, तत्र गृहिणामज्ञातायां वर्षा योग्य

पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, सा स्थापना आषाढपूर्णिमायां, योग्यक्षेत्राभावेतु पञ्च पञ्च दिनवृद्धया यावद्भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी एकादशसुपर्वं तिथिषु क्रियते, गृहि ज्ञातायां तु यस्यां साम्वत्सरिकातिचारालोचन १, लुञ्चन २, पर्युषणायां कल्पसूत्राकर्षण वा कथन ३, चैत्यपरिपाटी ४, अष्टमतप ५, साम्वत्सरिकचप्रतिक्रमण क्रियते, ययाचव्रत पर्यायवर्षाणि गण्यते सा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां, युगप्रधान कालकसूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्तु अभिवर्द्धितवर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्य, तत्सिद्धान्तटिप्पनानुसारेण तत्रहि युगमध्येपौषो युगान्तेच आषाढ एव वर्द्धते, तान्येतानि च अधुना न सम्यग् ज्ञायते अतो दिनपञ्चाशतैव पर्युषितव्यम् ॥

३ और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिकावृत्तिके पृष्ठ २४२से२४३ तकका तत्पाठ —

(सूत्रम्) अन्तरावियसे कप्पइ-इत्यादि, अर्थ अन्तरापिच अर्वागपि महाकायविशेषात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमीत इत कल्पते पर्युषणापवकर्तुं, पर न कल्पते तां रजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमी अतिक्रमितुं । पूर्वं उत्सर्गनय प्रोक्त अन्तरावियसे इत्यादिना अपवादनय प्रोक्त । एकादशसु पञ्चकेषु कुर्वत्सु आषाढ पूर्णिमास्यांमे प्रथम पर्व, एवमग्रे पञ्चभि पञ्चभिर्दिवसै एकैकपर्व, एव कुर्वतां साधूनां पञ्चाशद्दिनै एकादश पर्वाणि भवन्ति, एतेषु एकादशपर्वदिवसेषु पर्युषणापर्व कर्त्तव्य। पर्वसु एकस्मिन्दिने न्यूनेपि कारण विशेषेण पर्युषणा कर्त्तव्या, पर एकादशभ्य पर्वभ्य उपरि अधिके एकस्मिन्नपि दिने गते पर्युषणा पर्व न कर्त्तव्यमुपरिदिन नोल्लङ्घनीय मित्यर्थ ।

श्रावणमे पर्युषणा करनेवालोंको तथा द्वेषबुद्धिसे आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाना और दो श्रावण होते भी आषाढ़ चौमासीसे दो मास उपर बीस दिन याने ८० दिने (प्रत्यक्ष पचासकी विरुद्ध अपनी मति कल्पनासे) पर्युषणा करके भी आज्ञाके आराधक बनना सो गच्छकदाग्रहि उत्सूत्र भाषण करनेवालोंके सिवाय और कौन होगा सो विवेकी सज्ज-नोंको विचार करना चाहिये । और दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमे तथा दो भाद्रपद होनेसे भी दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनेवाले महाशयोंको हर वर्ष पर्युषणा मे प्राय करके सब जगह पर बचाता हुआ मूलमन्त्ररूप उपरोक्त सूत्रपाठको विवेक बुद्धिसे विचारके असत्यको छोड़ कर सत्यको ग्रहण करना चाहिये ।

और अब ऊपरके सब पाठकी सब व्याख्याओंके सबपाठ बहोत विस्तार हो जानेके कारणसे नहीं लिखता हूं परतु (अन्तरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ त रयणि उवायणा वित्तए) इस अन्तके पाठकी थोड़ीसी व्याख्याओंके पाठ लिखके पाठक वर्गको विशेष नि सन्देह होनेके लिये लिख दिखलाता हूं ।

२ श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्प-लता वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तकका तत्पाठ —

अन्तरावियसेकप्पइ पज्जोसवित्तए । अन्तरापि च अर्वा-गपि कल्पते पर्युषितु , "नोसेकप्पइ त रयणि" पर न कल्पते ता रजनीभाद्रपद शुक्लपञ्चमी, "उवाइणावित्तएत्ति," अति क्रमितु । उपनिपाये इत्यागमिकोधातु , इह पर्युषणाद्विधा-गृहिज्ञाता गृहज्ञाताच, तत्र गृहिणामज्ञातायां वर्षा योग्य

५ और श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिके पृष्ठ २५७ सें २५८ तकका तत्पाठ —

तत्र अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितु पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपद शुक्ल पचमी, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनिवासे इत्यागमिकोधातु । वस निवास इति गणबन्धीवाधातु । इहहि पर्युषणा द्विविधा गृहि ज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या, वर्षायोग्य पीठफल कादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्तद्रव्य,क्षेत्र काल भाव स्थापनाक्रियते सा चाषाढपूर्णिमाया,योग्यक्षेत्राभावेतु, पच पच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसितपचमीमेवेति गृहिज्ञाता तु द्विधा साम्वत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र साम्वत्सरिक कृत्यानि, "सावत्सरप्रतिक्रान्ति १ र्लुञ्चन २ चाष्टमत्तप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ सङ्घस्य क्षामण मिथ ५" एतत्कृत्य विशिष्टा भाद्रपदसितपचम्या कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनै वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छता गृहस्थाना पुरे वदन्ति सातु गृहिज्ञात मात्रैव, तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्तेचाषाढ एव वर्द्धते नाऽन्येमासा तच्चाधुना सम्यग्न ज्ञायतेऽत पचाशतैवदिनै पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ॥

६ और श्रीतपगच्छके श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिका वृत्तिके पृष्ठ १३० में तत्पाठ —

अन्तरावियसेकप्पइत्ति, अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, पर न कल्पते ता रजनी भाद्रपदशुक्लपचमीं "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनिवासे इत्यागमि

अधिकमासोऽपि गणनीय अधिकमासाभावे तु नरलाभ भव नया आषाढचतुर्मासात् पञ्चाशद्दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमी दिने पर्युषणा पर्व भवति, श्रीकालिकाचार्योणामादेशात् भाद्रपदशुक्लपञ्चमीत इत चतुर्थ्याक्रियते, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या रात्रिमुल्लङ्घ्य अग्रेपर्युषणा न कल्पते अनादि सिद्धाना तीर्थंकराणा आज्ञया। इदानीमपि चतुर्थ्या पर्युषणा कुर्वंत साधवो गीतार्थास्तीर्थंकराज्ञाराधका ज्ञेया ॥

४ और श्रीतपगच्छके श्रीकुलमहन सूरिजीकृत श्रीकल्पावचूरिके पृष्ठ ११२ में तत्पाठ —

अन्तरा वियसे कप्पइ, अतरापि च अर्वागपि कल्पते, "पज्जोसवेयव्व" पर्युषितु पर "नोसेकप्पइ" न कल्पते "त रयणि उवायणा वित्तए" तारजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अतिक्रमितु ॥ उपसिवासे इत्यागमिकोधातु ॥ इहहि पर्युषणा द्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य क्षेत्र, काल भाव, स्थापना क्रियते सा आषाढपूर्णिमाया, योग्य क्षेत्राभावेतु पच पच दिन वृद्धया यावद्भाद्रपदसित पचमीं, साचैकादशसु पर्वतिथिषु, क्रियते, गृहिज्ञाता यस्या तु साव त्सरिकातिचारालोचन, लुञ्चन, पर्युषणाया कल्पसूत्रकथन, चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सावत्सरिकप्रतिक्रमणचक्रियते, ययाच व्रतपर्याय वर्षाणि गण्यन्ते, सा नभस्य शुक्लपञ्चम्या कालकसूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या, यत्पुनरभिवर्द्धित वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते, तत्सिद्धात टिप्पनानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्येमासास्तानिचअधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिन पञ्चाशतैव पर्युषणा सङ्गतेतिवृद्धा ॥

५ और श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिके पृष्ठ २५७ सें २५८ तकका तत्पाठ —

तत्र अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितु पर न कल्पते ता रजनों भाद्रपद शुक्ल पचमी, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनिवासे इत्यागमिकोधातु । वस निवास इति गणनबन्धीवाधातु । इहहि पर्युषणा द्विविधा गृहि ज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या, वर्षायोग्य पीठफल कादौ प्राप्तेयत्नेन कल्पोक्तद्रव्य,क्षेत्र काल भाव स्थापनाक्रियते सा चाषाढपूर्णिमाया,योग्यक्षेत्राभावेतु, पच पच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसितपचमीमेवेति गृहिज्ञाता तु द्विधा साम्वत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र साम्वत्सरिक कृत्यानि, "सावत्सरप्रतिक्रान्ति१ र्लुञ्चन २ चाष्टमत्तप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच४ सङ्घस्य क्षामण मिथ ५" एतत्कृत्य विशिष्टा भाद्रपदसितपचम्या कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनै वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छना गृहस्थाना पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञात मात्रैव, तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्तेचाषाढ एव वर्द्धते नाऽन्येमासा तच्चाधुना सम्यग्न ज्ञायतेऽत पचाशतैवदिनै पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ॥

६ और श्रीतपगच्छके श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिका वृत्तिके पृष्ठ १३० में तत्पाठ —

अन्तराविययसेकप्पइत्ति, अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपदशुक्लपचमीं "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितुं, उपनियासे इत्यागमि

अधिकमासोऽपि गणनीय अधिकमासाभावे तु परलमात मम नया आषाढचतुर्मासात् पञ्चाशद्दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमी दिने पर्युषणा पर्व भवति, श्रीकालिकाचार्याणामादेशात् भाद्र-पदशुक्लपचमीत इत चतुर्थ्यां क्रियते, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या रात्रिमुल्लङ्घ्य अग्रेपर्युषणा न कल्पते अनादि सिद्धाना तीर्थंकराणा आज्ञया। इदानीमपि चतुर्थ्या पर्युषणा कुर्वत साधवो गीतार्थास्तीर्थंकराज्ञाराधका ज्ञेया ॥

४ और श्रीतपगच्छके श्रीकुलमडन सूरिजीकृत श्रीकल्पा-वचूरिके पृष्ठ ११२ में तत्पाठ —

अन्तरा वियसे कप्पइ, अतरापि च अर्वागपि कल्पते, "पज्जोसवेयव" पर्युषितु पर "नोसेकप्पइ" न कल्पते "त रयणि उवायणा वित्तए" तारजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अ-तिक्रमितु ॥ उपनिवासे इत्यागमिकोधातु ॥ इहहि पर्यु-षणा द्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य क्षेत्र, काल भाव, स्थापना क्रियते सा आषाढपूर्णिमायां, योग्य क्षेत्राभावेतु पच पच दिन वृद्धया यावद्भाद्रपदसित पचमीं, सा चैकादशसु पर्वतिथिषु, क्रियते, गृहिज्ञाता यस्या तु साव त्सरिकातिचारालोचन लुञ्चन, पर्युषणायां कल्पसूत्रकथन, चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सांवत्सरिकप्रतिक्रमणचक्रियते, ययाच व्रतपर्याय वर्षाणि गण्यन्ते, सा नभस्य शुक्लपञ्चम्या कालका-सूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या, यत्पुनरभिवर्द्धित वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते, तत्सिद्धात टिप्प-नानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते आषाढ एव वर्द्धते नान्येमासास्तानिचअधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिन पञ्चा-शतैव पर्युषणा सङ्गतेतिवृद्धा ॥

५ और श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिके पृष्ठ २५७ सें २५८ तकका तत्पाठ —

तत्र अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितु पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपद शुक्ल पचमी, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु उपनिवासे इत्यागमिकोधातु । वस निवास इति गणनयन्धीवाधातु । इहहि पर्युषणा द्विविधा गृहि ज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या, वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्तद्रव्य,क्षेत्र काल भाव स्थापना क्रियते सा चाषाढपूर्णिमाया, योग्यक्षेत्राभावेतु, पच पच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसितपचमीमेवेति गृहिज्ञाता तु द्विधा साम्वत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र साम्वत्सरिक कृत्यानि, "सावत्सरप्रतिक्रान्ति १ लुंचन २ चाष्टमन्तप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ सङ्घस्य क्षामण मिथ ५" एतत्कृत्य विशिष्टा भाद्रपदसितपचम्या कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनै वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छता गृहस्थाना पुरः वदन्ति सातु गृहिज्ञात मात्रैव, तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नाऽन्येमासा तच्चाधुना सम्यग्न ज्ञायतेऽत पचाशतैवदिनै पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ॥

६ और श्रीतपगच्छके श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिका वृत्तिके पृष्ठ १३० में तत्पाठ —

अन्तराविपसेकप्पइत्ति, अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपदशुक्लपचमीं "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनियासे इत्यागमि

अधिकमासोऽपि गणनीय अधिकमासाभावे तु सरलभाव नव
मया आषाढचतुर्मासात् पञ्चाशद्दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमी दिने
पर्युषणा पर्व भवति, श्रीकालिकाचार्याणामादेशात् भाद्र-
पदशुक्लपञ्चमीत इत चतुर्थ्यां क्रियते, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या
रात्रिमुल्लङ्घ्य अग्रेपर्युषणा न कल्पते अनादि सिद्धाना तीर्थं
कराणा आज्ञाया। इदानीमपि चतुर्थ्या पर्युषणा कुर्वंत
साधवो गीतार्थासीथकराज्ञाराधका ज्ञेया ॥

४ और श्रीतपगच्छके श्रीकुलमडन सूरिजीकृत श्रीकल्पा-
वचूरिके पृष्ठ ११२ में तत्पाठ —

अन्तरा वियसे कप्पइ, अतरापि च अर्वागपि कल्पते,
"पज्जोसवेयव" पर्युषितु पर "नोसेकप्पइ" न कल्पते
"त रयणि उवायणा वित्तए" तारजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अ-
तिक्रमितु ॥ उपनिवासे इत्यागमिकोधातु ॥ इहहि पर्यु-
षणा द्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या
वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य क्षेत्र,
काल भाव, स्थापना क्रियते सा आषाढपूर्णिमाया योग्य
क्षेत्राभावेतु पच पच दिन वृद्धया यावद्भाद्रपदसित पचमीं,
सावैकादशसु पर्वतिथिषु, क्रियते, गृहिज्ञाता यस्या तु साव
त्सरिकातिचारालोचन, लुञ्चन, पर्युषणायां कल्पसूत्रकथन,
चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सावत्सरिकप्रतिक्रमणञ्चक्रियते यथाच
व्रतपर्याय वर्षाणि गणयन्ते, सा नभस्य शुक्लपञ्चम्या कालक-
सूर्य्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या, यत्पुनरभिवर्द्धित
वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते, तत्सिद्धात टिप्प-
नानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते
नान्येमासास्तानिचअधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिन पञ्चा-
शतैव पर्युषणा सङ्गतेतिवृद्धा ॥

५ और श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिके पृष्ठ २५७ सें २५८ तकका तत्पाठ —

तत्र अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितु पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपद शुक्ल पचमी, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनिवासे इत्यागमिकोधातु । वस निवास इति गणन्नबन्धीवाधातु । इहहि पर्युषणा द्विविधा गृहि ज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या, वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्तद्रव्य,क्षेत्र काल भाव स्थापनाक्रियते सा चाषाढपूर्णिमाया,योग्यक्षेत्राभावेतु, पच पच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसितपचमीमेवेति गृहिज्ञाता तु द्विधा साम्वत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र साम्वत्सरिक कृत्यानि, "सावत्सरप्रतिक्रान्ति१ लुंचन २ चाष्टमत्तप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच४ सङ्घस्य क्षामण मिथ ५" एतत्कृत्य विशिष्टा भाद्रपदसितपचम्या कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनै वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छता गृहस्थाना पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञात मात्रैव, तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्तेचाषाढ एव वर्द्धते नान्येमासास्तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽत पचाशतैवदिनै पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ॥

६ और श्रीतपगच्छके श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिका वृत्तिके पृष्ठ १३० में तत्पाठ —

अन्तराविधसेकप्पइत्ति, अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, पर न कल्पते ता रजनीं भाद्रपदशुक्लपचमीं "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, उपनिवासे इत्यागमि

अधिकमासोऽपि गणनीय अधिकमासाभावे तु सरलभाव नव
नया आषाढचतुर्मासात् पञ्चाशद्दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमी दिने
पर्युषणा पर्व भवति, श्रीकालिकाचार्याणामादेशात् भाद्र-
पदशुक्लपञ्चमीत इत चतुर्थ्यांक्रियते, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या
रात्रिमुल्लङ्घ्य अग्रेपर्युषणा न कल्पते अनादि सिद्धाना तीर्थं
कराणा आज्ञाया। इदानीमपि चतुर्थ्या पर्युषणा कुर्वत
साधयो गीतार्थास्तीर्थंकराज्ञाराधका ज्ञेया ॥

४ और श्रीतपगच्छके श्रीकुलमहन सूरिजीकृत श्रीकल्पा-
वचूरिके पृष्ठ ११२ में तत्पाठ —

अन्तरा वियसे कप्पइ, अतरापि च अर्वागपि कल्पते,
"पज्जोसवेयव्व" पर्युषितु पर "नोसेकप्पइ" न कल्पते
"त रयणि उवायणा वित्तए" तारजनी भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अ
तिक्रमितु ॥ उपनिवासे इत्यागमिकोधातु ॥ इहहि पर्यु-
षणा द्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या
वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य क्षेत्र,
काल भाव, स्थापना क्रियते सा आषाढपूर्णिमायां योग्य
क्षेत्राभावेतु पच पच दिन वृद्ध्या यावद्भाद्रपदसित पचमीं,
सार्धेकादशसु पर्वतिथिषु, क्रियते, गृहिज्ञाता यस्या तु साव
त्सरिकातिचारालोचन लुञ्चन, पर्युषणायां कल्पसूत्रकथन,
चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सावत्सरिकप्रतिक्रमणचक्रियते, ययाच
व्रतपर्याय वर्षाणि गण्यन्ते, सा नभस्य शुक्लपञ्चम्या कालक-
सूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाक.र्या, यत्पुनरभिवर्द्धित
वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते, तत्सिद्धात टिप्प-
नानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते
नान्येमासास्तानिचअधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिन पञ्चा-
शतैव पर्युषणा सङ्गतेतिवृद्धा ॥

साम्वत्सरिककृत्याविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच, तत्र साम्वत्सरिककृत्यानि 'सावत्सर प्रतिक्रांति १ लुंचुन २ चाष्टमतप ३ सर्वाहृद्भक्तिपूजाच ४ संघसक्षामण मिथ ५ ॥ १ ॥"
एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पचम्यामेव कालिकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपिकार्या, केवल गृहिज्ञातातु सा यद् अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्रस्थितास्मइति पृच्छता गृहस्थ ना पुरोवदति तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगातेचाषाढएव वर्द्धते नान्येमासास्तट्टिप्पनकन्तु अधुनासम्यग् न ज्ञायते अत पंचाशतैवदिने पर्युषणायुक्तेतिवृद्धा ॥

उपरोक्त श्रीखरतरगच्छ तथा श्रीतपगच्छ उन दोनो गच्छवालोके छ पाठोका संक्षिप्त भावार्थ —अतरा वियसे कप्पइ । अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितुं, इत्यादि कहनेसे-जो आषाढ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करनेमें आती है जिसमें कारण योगे ५० दिनके अंदर ४९ वे दिन पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु ५० वे दिनकी जो भाद्रपद शुक्लपचमीकी रात्रिहै उसीको उल्लघन करना नहीं कल्पता है और उपधातुमे उपणा बनता है तथा परिउपसर्ग लगनेसे पर्युषणा बन जाता है सो उपधातु निवास अर्थमें वर्तती है अथवा गण सबधी वस धातु भी निवासार्थमें वर्तती है और ग्रामानुग्राम विहार करनेका निवारण करके सर्वथा प्रकारसे वर्षाकाले एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती है वो पर्युषणा यहा दो प्रकारकी है गृहस्थी लोगोकी जानी हुई तथा गृहस्थी लोगोकी नही जानीहुई तिसमें गृहस्थीलोगों की नहीं जानी हुई पर्युषणा जिसमें वर्षाकालके उचित

के धातु, वन निवास इति गणमव गीवाधातु। इयहि पर्युषणा द्विविधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्रगृहिणामज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, साच आषाढपूर्णिमायां योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्च दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्र पदसित पञ्चमीमेवेति। गृहिज्ञाता तु द्विधा सावत्सरिककृत्य विशिष्टा गृहिज्ञातमात्रा च तत्र सावत्सरिक कृत्यानि, "सावत्सरिकप्रतिक्रमण १, लुचन २ अष्टम तप ३ चैत्यपरिपाटी, सघक्षामण" एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पञ्चम्या कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यां जनप्रकटा कार्या, द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिने वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छता गृहस्थाना पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञातमात्रव तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ एव वर्द्धते नान्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायते अत पचाशतैवदिने पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ॥

७ और श्रीतपगच्छके श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिकावृत्तिके पृष्ठ १४६ में तथाच तत्पाठ —

अतरावियसेकप्पइ, अतरापिचअर्वागपि कल्पते पर्युषितु पर न कल्पते ता रात्रि भाद्रपदशुक्लपचमी, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितु, तत्र परिसामस्त्येन उषण वसन पर्युषणा, साद्विधा गृहस्थैर्ज्ञाता गृहस्थैरज्ञाताच, तत्र गृहस्थैरज्ञाता यस्या वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना क्रियते साचाषाढपूर्णिमाया, योग्य क्षेत्राभावेतु पच पच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्र पद सितपचम्याम्, एव गृहिज्ञाता तु द्विधा

साम्वत्सरिककृत्याविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच, तत्र साम्वत्सरिककृत्यानि "सावत्सर प्रतिक्रांति १ लुंञ्चन २ चाष्टमतप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ संघस्वक्षामण मिथ ५ ॥ १ ॥" एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पञ्चम्यामेव कालिकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपिकार्या, केवल गृहिज्ञातातु सा यद् अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैवयमत्रस्थितास्मइति पृच्छता गृहस्थ ना पुरोवदति तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्तेचाषाढएव वर्द्धते नान्येमासास्तट्टिप्पनकन्तु अधुनासम्यग् न ज्ञायते अत पचाशतैवदिने पर्युषणायुक्तेतिवृद्धा ॥

उपरोक्त श्रीखरतरगच्छ तथा श्रीतपगच्छ इन दोनो गच्छवालोके छ पाठोका संक्षिप्त भावार्थ —अतरा वियसे कप्पइ । अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, इत्यादि कहनेसे-जो आषाढ चैमासीसे ५० दिने पर्युषणा करनेमें आती है जिसमें कारण योगे ५० दिनके अंदर ४९ वे दिन पर्युषणा करना कल्पता है पन्तु ५० वे दिनकी जो भाद्रपद शुक्लपंचमीकी रात्रिहै उसीको उल्लंघन करना नही कल्पता है और उपधातुसे उषणा बनता है तथा परिउपसर्ग लगनेसे पर्युषणा बन जाता है सो उपधातु निवास अर्थमें वर्तती है अथवा गण संबधी वस धातु भी निवासार्थमें वर्तती है और ग्रामानुग्राम विहार करनेका निवारण करके सर्वथा प्रकारसे वर्षाकाले एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती है वो पर्युषणा इहा दो प्रकारकी है गृहस्थी लोगोकी जानी हुई तथा गृहस्थी लोगोकी नही जानीहुई जिसमें गृहस्थीलोगों की नहीं जानी हुई पर्युषणा जिसमें वर्षाकालके उचित

पाट पाटलादि द्रव्योंका योग बननेसे यत्र करके शास्त्रोक्त विधिसे द्रव्य क्षेत्र काल और भावकी स्थापना करनी जिसमें उपयोगी वस्तुओंका ग्रहणसो द्रव्य स्थापना, और विहारका निषेध परन्तु आहारादि कारणसे मर्यादा पूर्वक जानेका नियम सो क्षेत्रस्थापना, और वर्षाकालमें जघन्यसे ७० दिन तक तथा मध्यमसे १२० दिन तक और उत्कृष्टसे १८० दिन तक एक स्थानमें निवास करना सो कालस्थापना, और रागादि कर्मबन्धके हेतुओंका निवारण करके ईरियासमिति आदिका उपयोग पूर्वक वर्ताव करना सो भावस्थापना, इस तरहसे यो द्रव्यादि चतुर्विध स्थापना आषाढ पूर्णिमामें करनी परन्तु योग्य क्षेत्रके अभावमें तो आषाढ पूर्णिमासे पांच पांच दिनकी वृद्धि करके दशपंचक तिथियोंमें क्रमसें यावत् भाद्रपद सुदी पंचमी तक, आषाढ पूर्णिमासे दशपंचकमें परन्तु आषाढ सुदी १० मी के निवासकी गिनतीसे एकादशपंचकोंमें जहा द्रव्यादिका योग मिले वहा पूर्वोक्त कहे वैसे दोषोंका निमित्त कारण न होनेके लिये अज्ञात पर्युषणा स्थापन करनी और आषाढ चौमासीसे ५०दिने गृहस्थी लोगोकीजानी हुई पर्युषणा जिसमें वार्षिकातिचारोंकी आलोचना करनी, केशोंकालुंचन करना,श्रीकल्पसूत्रकासुनना वा पठनकरना, अष्टमतप करना, चैत्यपरिपाटी (जिन मन्दिरोंमें दर्शनकरने) और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना, और सर्व संघकोक्षामणे करना और दीक्षापर्यायके वर्षोंकी गिनती करना सो ज्ञातपर्युषणा भाद्रपदशुक्ल पंचमीमें होती थी, परन्तु युग प्रधान श्रीकालकाचार्य्यजीमहाराजके आदेशसे भाद्रशुक्लचतुर्थीके दिन करनेमें आती है। सो गीतार्थों की आचरणा होनेसे श्रीजिनाज्ञा

मुजबही जाननी सो भाद्र पदकी पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सर संबधिनी जाननी। और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो आषाढचौमासीसे बीस दिन करके याने श्रावणशुक्लपंचमी को गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी सो तो जैन सिद्धान्त का टिप्पणानुमार युगके मध्यमें पौषमास और युगके अन्तमे आषाढमासकी वृद्धि होती थी परन्तु और किसी भी मासकी वृद्धिका अभाव था। वोटिप्पणा तो अभी इस कालमें अच्छी तरहसे देखनेमे नही आता है इसलिये मासवृद्धि हो तो भी ५० दिनोंसे पर्युषणा करनी योग्य है इस तरहसे वृद्धाचार्य कहते हैं अर्थात् मासवृद्धि होनेसे जैनपंचागानुसार बीस दिने श्रावणमे पर्युषणा करनेमे आती थी परन्तु जैनपंचागके अभावसे लौकिक पंचागानुसार मासवृद्धि दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होतो भी उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेकी प्राचीनाचार्योंकी आज्ञा है इसी ही कारणसे श्रीलक्ष्मीवल्लभ गणिजीने अधिमासकी गिनती पूर्वक ५० दिन पर्यूषणा करनेका खुलासा लिखा है। उसी मुजब आत्मार्थियोंको पक्षपात छोड़कर वर्तना चाहिये।

और श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन तीनो महाशयोंके बनाये (श्रीकल्पकिरणावली श्रीकल्प दीपिका श्रीसुखबोधिका इन तीनो वृत्तियोंके) पर्युषणा सम्बन्धी पाठ ऊपरमे लिखे हैं उसीमे इन तीनो महाशयोंने, ज्ञात याने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा दो प्रकारकी लिखी है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ चौमा-

पाट पाटलादि द्रव्योंका योग बननेसे यत्र करके शास्त्रोक्त विधिसे द्रव्य क्षेत्र काल और भावकी स्थापना करनी जिसमें उपयोगी वस्तुओंका सग्रहसो द्रव्य स्थापना, और विहारका निषेध परन्तु आहारादि कारणसे मर्यादा पूर्वक जानेका नियम सो क्षेत्रस्थापना, और वर्षाकालमें जघन्यसे ७० दिन तक तथा मध्यमसे १२० दिन तक और उत्कृष्टसे १८० दिन तक एक स्थानमें निवास करना सो कालस्थापना, और रागादि कर्मबन्धके हेतुओंका निवारण करके इरियासमिति आदिका उपयोग पूर्वक वर्ताव करना सो भावस्थापना, इस तरहसे यो द्रव्यादि चतुर्विध स्थापना आषाढ पूर्णिमामें करनी परन्तु योग्य क्षेत्रके अभावमें तो आषाढ पूर्णिमासे पाच पाच दिनकी वृद्धि करके दशपचक तिथियोंमें क्रमसें यावत् भाद्रपद सुदी पचमी तक, आषाढ पूर्णिमासे दशपचकमें परन्तु आषाढ सुदी १० मी के निवासकी गिनतीसे एकादशपचकोंमें जहा द्रव्यादिका योग मिले वहा पूर्वोक्त कहे वैसे दोषोंका निमित्त कारण न होनेके लिये अज्ञात पर्युषणा स्थापन करनी और आषाढ चौमासीसे ५०दिने गृहस्थी लोगोंकीजानी हुई पर्युषणा जिसमें वार्षिकातिचारोंकी आलोचना करनी, केशोंकालुचन करना,श्रीकल्पसूत्रकासुनना वा पठनकरना, अष्टमतप करना, चैत्यपरिपाटी (जिन मन्दिरोंमें दर्शनकरने) और सावत्सरिक प्रतिक्रमण करना, और सर्वसघकोक्षामणे करना और दीक्षापर्यायके वर्षोंकी गिनती करना सो ज्ञातपर्युषणा भाद्रपदशुक्ल पचमीमें होती थी, परन्तु युग प्रधान श्रीकालकाचार्य्यजीमहाराजके आदेशसे भाद्रशुक्लचतुर्थीके दिन करनेमें आती है । सो गीतार्थों की आचरणा होनेसे श्रीजिनाज्ञा

मुजबही जाननी सो भाद्र पदकी पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सर संबंधिनी जाननी। और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो आषाढचौमासीसे बीस दिन करके याने श्रावणशुक्लपंचमी को गृहस्थी लोगोकी जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी सो तो जैन सिद्धान्त का टिप्पणानुसार युगके मध्यमें पौषमास और युगके अन्तमे आषाढमासकी वृद्धि होती थी परन्तु और किसी भी मासकी वृद्धिका अभाव था। वोटिप्पणा तो अभी इस कालमें अच्छी तरहसे देखनेमे नहीं आता है इसलिये मासवृद्धि हो तो भी ५० दिनोसे पर्युषणा करनी योग्य है इस तरहसे वृद्धाचार्य कहते हैं अर्थात् मासवृद्धि होनेसे जैनपंचांगा-नुसार बीस दिने श्रावणमे पर्युषणा करनेमे आती थी परन्तु जैनपंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार मासवृद्धि दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होतो भी उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्यु-षणा करनेकी प्राचीनाचार्योंकी आज्ञा है इसी ही कार-णसे श्रीलक्ष्मीवल्लभ गणिजीने अधिमासकी गिनती पूर्वक ५० दिन पर्यूषणा करनेका खुलासा लिखा है। उसी मुजब आत्मार्थियोंको पक्षपात छोडकर वर्तना चाहिये।

और श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन तीनो महाशयोके बनाये (श्रीकल्पकिरणावली श्रीकल्प दीपिका श्रीसुखबोधिका इन तीनो वृत्तियोके) पर्युषणा सम्बन्धी पाठ ऊपरमे लिखे है उसीमे इन तीनो महा-शयोने, ज्ञात याने गृहस्थी लोगोकी जानी हुई पर्युषणा दो प्रकारकी लिखी है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ चौमा-

पाट पाटलादि द्रव्योंका योग बननेसे यत्न करके शास्त्रोक्त विधिसे द्रव्य क्षेत्र काल और भावकी स्थापना करनी जिसमें उपयोगी वस्तुओंका संग्रहसो द्रव्य स्थापना, और विहारका निषेध परन्तु आहारादि कारणसे मर्यादा पूर्वक जानेका नियम सो क्षेत्रस्थापना, और यथाकालमें जघन्यसे ७० दिन तक तथा मध्यमसे १२० दिन तक और उत्कृष्टसे १८० दिन तक एक स्थानमें निवास करना सो कालस्थापना, और रागादि कर्मबन्धके हेतुओंका निवारण करके ईरियासमिति आदिका उपयोग पूर्वक वर्ताव करना सो भावस्थापना, इस तरहसे वो द्रव्यादि चतुर्विध स्थापना आषाढ पूर्णिमामें करनी परन्तु योग्य क्षेत्रके अभावमें तो आषाढ पूर्णिमासे पांच पांच दिनकी वृद्धि करके दशपंचक तिथियोंमें क्रमसे यावत् भाद्रपद सुदी पंचमी तक, आषाढ पूर्णिमासे दशपंचकमें परन्तु आषाढ सुदी १० मी के निवासकी गिनतीसे एकादशपंचकोंमें जहा द्रव्यादिका योग मिले वहा पूर्वोक्त कहे वैसे दोषोंका निमित्त कारण न होनेके लिये अज्ञात पर्युषणा स्थापन करनी और आषाढ चौमासीसे ५०दिने गृहस्थी लोगोकीजानी हुई पर्युषणा जिसमें वार्षिकातिचारोंकी आलोचना करनी, केशोंकालुंचन करना,श्रीकल्पसूत्रकासुनना वा पठनकरना, अष्टमतप करना, चैत्यपरिपाटी (जिन मन्दिरोंमें दर्शनकरने) और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना, और सर्वसंघकोक्षामणे करना और दीक्षापर्यायके वर्षोकी गिनती करना सो ज्ञातपर्युषणा भाद्रपदशुक्ल पंचमीमें होती थी, परन्तु युग प्रधान श्रीकालकाचार्य्यजीमहाराजके आदेशसे भाद्रशुक्लचतुर्थीके दिन करनेमें आती है। सो गीतार्थों की आचरणा होनेसे श्रीजिनाज्ञा

मुजबही जाननी सो भाद्र पदकी पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसवत्सर सबधिनी जाननी। और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सरमें तो आषाढचौमासीसे बीस दिन करके याने श्रावणशुक्लपचमीको गृहस्थी लोगोको जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी सो तो जैन सिद्धान्त का टिप्पणानुसार युगके मध्यमें पौषमास और युगके अन्तमे आषाढमासकी वृद्धि होती थी परन्तु और किसी भी मासकी वृद्धिका अभाव था। वोटिप्पणा तो अभी इस कालमें अच्छी तरहसे देखनेमे नही आता है इसलिये मासवृद्धि हो तो भी ५० दिनोसे पर्युषणा करनी योग्य है इस तरहसे वृद्धाचार्य कहते हैं अर्थात् मासवृद्धि होनेसे जैनपचागानुसार बीस दिने श्रावणमे पर्युषणा करनेमे आती थी परन्तु जैनपचागके अभावसे लौकिक पचागानुसार मासवृद्धि दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होतो भी उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेकी प्राचीनाचार्योंकी आज्ञा है इसी ही कारणसे श्रीलक्ष्मीवल्लभ गणिजीने अधिमासकी गिनती पूर्वक ५० दिन पर्यूषणा करनेका खुलासा लिखा है। उसी मुजब आत्मार्थियोंको पक्षपात छोडकर वर्तना चाहिये।

और श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोके बनाये (श्रीकल्पकिरणावली श्रीकल्प दीपिका श्रीसुखबोधिका इन तीनो वृत्तियोके) पर्युषणा सम्बन्धी पाठ ऊपरमे लिखे है उसीमे इन तीनो महाशयोने, ज्ञात याने गृहस्थी लोगोकी जानी हुई पर्युषणा दो प्रकारको लिखी है और अभिवर्द्धित सवत्सरमें आषाढ चौमा-

भीसे बीस दिने पर्युषणा करनेमे आती थी उसीको वार्षिक कृत्योंरहित केवल गृहस्थीलोगोंके कहने मात्रही ठहराते है सो कदापि नहीं बन सकता है क्योंकि अधिक मास होनेसे बीस दिनकी पर्युषणाकोही जैन पञ्चाङ्गके अभावसे अधिक मास होतो भी ५० दिने पर्युषणा पूर्वाचार्योंने ठहराई है इस लिये बीस दिनकी पर्युषणा कहनेमात्रही ठहरानेसे ५० दिनकी पर्युषणा भी कहनेमात्रही ठहर जायगी और वार्षिक कृत्य कभी दिन करनेका नहीं बनेगा इसलिये जैसे मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने ज्ञात पर्युषणमे वार्षिक कृत्य होते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसे बीस दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानने चाहिये क्योंकि ज्ञात पर्युषणा एकही प्रकारकी शास्त्रोंमे लिखी है परन्तु बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करके फिर आगे वार्षिक कृत्य करे ऐसा तो किसी भी शास्त्रमे नहीं लिखा है इसलिये जहा ज्ञात पर्युषणा वहाही वार्षिक कृत्य शास्त्रोक्त युक्ति पूर्वक सिद्ध होते हैं इसका विशेष विस्तार इनही तीनो महाशयोंके लिखे (अधिक मासकी गिनती निषेध सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि) लेखोंकी आगे समीक्षा होगी वहा लिखनेमे आवेगा।

अब देखिये बडेही आश्चर्यकीबातहै कि श्रीतपगच्छके इतने विद्वान् मुनीमण्डली वगैरह महाशय उपरोक्त व्याख्याओंको हर वर्ष पर्युषणाके व्याख्यानमे बाचते हैं इसलिये उपरोक्त पाठार्थोंको भी जानते हैं तथापि मिथ्या हठवादसे भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेके लिये पौष अथवा आषाढके अधिक होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक जैनपञ्चाङ्गानुसार प्राचीनकालमे आषाढ चौमासीसे बीस दिने श्रावण सुदीमें

पर्युषणा होती थी परन्तु जैन पंचांगके अभावसे वर्त्तमान कालमेंभी लौकिक पञ्चाङ्गानुसार अधिक मास होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है ऐसा उपरोक्त पाठार्थोंसे खुलासा दिखता है तथापि उपरोक्त पाठार्थोंका भावार्थ बदला करके मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है उसीकोही वर्त्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने जिनाज्ञा विरुद्धका भय न करते हुए भाद्रपदमें ठहरानेका वृथा आग्रह करते हैं सो क्या लाभ प्राप्त करेंगे। तथा उपरोक्त व्याख्याओंमें "अभिवर्द्धित वर्षे" इस शब्दसे श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुंदरजी तथा श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन सभी महाशयोंके लिखे वाक्यसे अधिक मासकी गिनती प्रत्यक्षपने सिद्ध है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध भी नहीं हो सकती है तथापि कोई निषेध करेगा सो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वजोंकी आज्ञा उल्लघनका दूषण लगेगा क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वक तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर कहा है इसका विस्तार आगे शास्त्रोंके पाठार्थों सहित तथा युक्ति पूर्वक लिखनेमें आवेगा—

और भी श्रीपार्श्वचन्द्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिके पृष्ठ ११२ से ११५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहां दिखाता हूं तथाच तत्पाठः—

सोसे बीस दिने पर्युषणा करनेमे आती थी उसीको वार्षिक कृत्योंरहित केवल गृहस्थी लोगोंके कहने मात्रही ठहराते है सो कदापि नहीं बन सकता है क्योंकि अधिक मास होनेसे बीस दिनकी पर्युषणाकोही लौकिक पंचांगके अभावसे अधिक मास होतो भी ५० दिने पर्युषणा पूर्वाचार्योंने ठहराई है इस लिये बीस दिनकी पर्युषणा कहनेमात्रही ठहरानेसे ५० दिनकी पर्युषणा भी कहनेमात्रही ठहर जावेगी और वार्षिक कृत्य कभी दिन करनेका नहीं बनेगा इसलिये जैसे मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने ज्ञात पर्युषण मे वार्षिक कृत्य होते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसे बीस दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानने चाहिये क्योंकि ज्ञात पर्युषणा एकही प्रकारकी शास्त्रोंमे लिखी है परन्तु बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करके फिर आगे वार्षिक कृत्य करे ऐसा तो किसी भी शास्त्रमे नहीं लिखा है इसलिये जहा ज्ञात पर्युषणा वहाही वार्षिक कृत्य शास्त्रोक्त युक्ति पूर्वक सिद्ध होते हैं इसका विशेष विस्तार इनही तीनो महाशयोंके लिखे (अधिक मासकी गिनती निषेध सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि) लेखोंकी आगे समीक्षा होगी वहा लिखनेमे आवेगा।

अब देखिये बडेही आश्चर्यकीबातहै कि श्रीतपगच्छके इतने विद्वान् मुनीमहली वगैरह महाशय उपरोक्त व्याख्याओंको हर वर्ष पर्युषणाके व्याख्यानमे बाचते है इसलिये उपरोक्त पाठार्थोंको भी जानते हैं तथापि मिथ्या हठवादसे भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेके लिये पौष अथवा आषाढके अधिक होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक जैनपंचांगानुसार प्राचीनकालमे आषाढ चौमासीसे बीस दिने श्रावण सुदीमें

पर्युषणा होती थी परन्तु जैन पञ्चांगके अभावसे वर्त्तमान-कालमेंभी लौकिक पञ्चाङ्गानुसार अधिक मास होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है ऐसा उपरोक्त पाठार्थोंसे खुलासा दिखता है तथापि उपरोक्त पाठार्थोंका भावार्थ बदला करके मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है उसीकोही वर्त्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने जिनाज्ञा विरुद्धका भय न करते हुए भाद्रपदमें ठहरानेका वृथा आग्रह करते हैं सो क्या लाभ प्राप्त करेंगे। तथा उपरोक्त व्याख्याओंमें "अभिवर्द्धित वर्षे" इस शब्दसे श्रीखरतरगच्छके श्रीसमय सुंदरजी तथा श्रीतपगच्छके श्रीकुलमंडनसूरिजी श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन सबी महाशयोंके लिखे वाक्यसे अधिक मासकी गिनती प्रत्यक्षपने सिद्ध है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध भी नहीं हो सकती है तथापि कोई निषेध करेगा तो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वजोंकी आज्ञा उल्लंघनका दूषण लगेगा क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वक तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर कहा है इसका विस्तार आगे शास्त्रोंके पाठार्थों सहित तथा युक्ति पूर्वक लिखनेमें आवेगा—

और भी श्रीपार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिके पृष्ठ ११२ से ११५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहां दिखाता हूं तथाच तत्पाठ —

मीसे बीस दिने पर्युषणा करनेमे आती थी उसीके वार्षिक कृत्योंरहित केवल गृहस्थो.लोगोंके कहने मात्रही ठहराते है सो कदापि नहीं बन सकता है क्योंकि अधिक मास होनेसे बीस दिनकी पर्युषणाकोही सिद्ध पचांगके अभावसे अधिक मास होतो भी ५० दिने पर्युषणा पूर्वाचार्योने ठहराते है इस लिये बीस दिनकी पर्युषणा कहनेमात्रही ठहरानेसे ५० दिनकी पर्युषणा भी कहनेमात्रही ठहरजा गी और वार्षिक कृत्य कभी दिन करनेका नहीं बनेगा इसलिये जैसे मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने ज्ञात पर्युषण मे वार्षिक कृत्य होते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसे बीस दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानने चाहिये क्योंकि ज्ञात पर्युषणा एकही प्रकारकी शास्त्रोंमे लिखी है परन्तु बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करके फिर आगे वार्षिक कृत्य करे ऐसा तो किसी भी शास्त्रमे नहीं लिखा है इसलिये जहा ज्ञात पर्युषणा वहाही वार्षिक कृत्य शास्त्रोक्त युक्ति पूर्वक सिद्ध होते हैं इसका विशेष विस्तार इनही तीनो महाशयोके लिखे (अधिक मासकी गिनती निषेध सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि) लेखोंकी आगे समीक्षा होगी वहा लिखनेमे आवे गा।

अब देखिये बडेही आश्चर्यकीबातहै कि श्रीतपगच्छके इतने विद्वान् मुनीमहली वगैरह महाशय उपरोक्त व्याख्याओंको हर वर्ष पर्युषणाके व्याख्यानमे बाचते हैं इसलिये उपरोक्त पाठार्थोको भी जानते हैं तथापि मिथ्या हठवादसे भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेके लिये पौष अथवा आषाढके अधिक होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक जैनपंचागानुसार प्राचीनकालमे आषाढ चौमासीसे बीस दिने श्रावण शुदीमें

पर्युषणा होती थी परन्तु जैन पचांगके अभावसे वर्त्तमान-कालमेंभी लौकिक पचाङ्गानुसार अधिक मास होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है ऐसा उपरोक्त पाठार्थोंसे खुलासा दिखता है तथापि उपरोक्त पाठार्थोंका भावार्थ बदला करके मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है उसीकोही वर्त्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने जिनाज्ञा विरुद्धका भय न करते हुए भाद्रपदमें ठहरानेका वृथा आग्रह करते हैं सो क्या लाभ प्राप्त करेंगे। तथा उपरोक्त व्याख्याओंमें "अभिवर्द्धित वर्षे" इस शब्दसे श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुदरजी तथा श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन सबी महाशयोंके लिखे वाक्यसे अधिक मासकी गिनती प्रत्यक्षपने सिद्ध है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध भी नहीं हो सकती है तथापि कोई निषेध करेगा तो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वजोंकी आज्ञा उल्लंघनका दूषण लगेगा क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वक तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर कहाहै इसका विस्तार आगे शास्त्रोंके पाठार्थों सहित तथा युक्ति पूर्वक लिखनेमें आवेगा—

और भी श्रीपार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिके पृष्ठ ११२ से ११५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहां दिखाता हूं तथाच तत्पाठ —

तेण कालेण तेण समएणमित्यादि। व्याख्यातार्थे वाचा वन्ति आषाढचातुर्मासिक दिनादारभ्य सविंशति रात्रेमासे व्यतिक्रान्ते भगवान् "पज्जोसवेइति" पर्युषणामकार्षीत्। परिमाणमस्येन उयण नियाम:। इत्युक्तेशिष्य प्रश्नयितुमाह सेकेणट्ठेणमित्यादि प्रश्नवाक्यसुबोध गुरुराह। जओणमित्यादि निर्वहुवाक्य यत ण प्रागवत् पएणमित्यादि अगारिणा गृहस्थाना, अगाराणि गृहाणि, कडियाइत्ति कठयुक्तानि,उक्कं-पियाइ-धवलितानि, छन्नाइ तृणादिभि, लित्ताइ-लिप्तानि छगणाद्यै क्वचित् गुत्ताइत्ति पाठ स्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरण द्वार-पिधानादिभि, घट्ठाइं विषमभूमिभञ्जनात्,मट्ठाइ श्लक्ष्णीकृतानि क्वचित्सम ट्ठाइतिपाठ स्तत्र समन्तात् मृष्टानि मसृणीकृतानि, सधूपियाइति सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि, खातो दगाइ कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि, खायनिद्धमणाइ निद्धमण खाल गृहात्सलिल येन निर्गच्छति, अप्पणोअट्ठाए आत्मार्थं स्वार्थ गृहस्थै कृतानि परिकर्मितानि करोति, कायइ करो-तीत्यादि विविधपरिकर्मार्थत्वात्, परिभुत्तानि तै स्वय परिभुज्यमानत्वात्, अतएव परिणामितानि अचित्तीकृतानि भवन्ति, तत सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुन प्रथममेव साधव स्थितास्म इति ब्रुयुस्तदा ते प्रव्रजितानामवस्थानेन सुभिक्ष सम्भाव्य गृहिणस्तत्रायो गोलकल्पा दताल क्षेत्रकर्षण, गृहच्छादनादीनि कुर्यु, तथा चाधिकरणदोषा अत पञ्चाशद्दिने स्थिता स्म इति वाच्य, गणहराविति गणधरापि एवमेवाकार्षु, अज्जत्ताए इति अद्य कालीना आर्य्यतया व्रतस्थविरा इत्येके,अम्हपित्ति अस्माक मपि आचार्य्योपाध्याया, अम्हेविति वयमपीत्यर्थ॥ अन्तरा

वियसे कप्पइ इत्यादि अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते युज्यते पर्युं षितु पर न कल्पते ता रजनी भाद्रपदशुक्लपञ्चमीं उवायणा वित्तएति अतिक्रमितु।वष निवासे इत्यागमिको धातु पर्युषितु वस्तुमिति सूत्रार्थ ॥ अत्र अन्तरा वियसे कप्पइ इति कथनात् पर्युषणा द्विधा सूचिता, गृहिज्ञाताज्ञातभेदात्। तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या, वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव स्थापना क्रियते, सा आषाढ शुक्लपौर्णमास्या, योग्यक्षेत्राभावेतु पञ्च पञ्च दिन वृद्ध्या यावद्भाद्रपदसितपञ्चम्या सार्चेकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते। गृहिज्ञाता तु यस्या सावत्सरिकातिचारालोचन, लुचन, पर्युषणा कल्पसूत्राकर्णन, चैत्यपरिपाटी, अष्टम, सावत्सरिकप्रतिक्रमण च क्रियते, यया च व्रतपर्य्याय वर्षाणि गण्यन्ते सा नभस्य शुक्लपञ्चम्या, एतावता यदा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या सावत्सरिकप्रतिक्रमण कृत तत ऊर्द्ध्वन्तु न कल्पते विहर्तुं, ततस्तदवधि विहर्त्तव्य। अन्तरापिचैकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते निवासो नतु प्रतिक्रमण। केश्चिदुच्यते यत्र वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणमपि देय,यदियत्रैव वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणचेत्तर्ह्याषाढशुक्ल पञ्चदश्यामपि तत्कर्त्तव्य न चैव दृष्टमिष्ट वा, ततो नियत निवासएव वासोयुक्त इति परमार्थ । अमुमेवार्थ श्रीसुधर्मस्वामिव्यास प्रतिपादयति। श्रीसमवायागे यथा समणे भगव महावीरे वासाण सवोसइ राए मासे विइक्कन्ते सत्तरिएहिंराइदिएहिसेसेहिं वासावास पज्जोसवेइत्ति । व्याख्यातु समणे इत्यादि वर्षाणा चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविशतिदिवसाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीतेष्वित्यर्थ । सप्तत्या च रात्रि दिवसेषु शेषेषु सवत्सरप्रतिक्रम-

तेण कालेण तेण समएणमित्यादि। व्याख्यातार्थं यावा
वर्षा आषाढचातुर्मासिक दिनादारभ्य सविंशति रात्रेमासे
व्यतिक्रान्ते भगवान् "पज्जोसवेइत्ति" पर्युषणामकार्षीत्।
परिणामस्स्येन उपण निवाम । इत्युक्तेशिष्य प्रश्नमितुमाह
सेकेणट्ठेणमित्यादि प्रश्नवाक्यसुबोध गुरुराह। जओणमित्यादि
निर्वचनवाक्य यत ण प्रायस पण्णमित्यादि अगारिणा गृह-
स्थाना, अगाराणि गृहाणि, कडियाइत्ति कटयुक्तानि, उक्कं-
पियाइ-धवलितानि, छन्नाइ तृणादिभि, लित्ताइं-लिप्तानि
छगणाद्यै क्वचित् गुत्ताइत्ति पाठ स्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरण द्वार-
पिधानादिभि, घट्ठाइं विषमभूमिभञ्जनात्, मट्ठाइं श्लक्ष्णीकृतानि
क्वचित् सम ट्ठाइ इति पाठ स्तत्र समन्तात् मृष्टानि मसृणीकृतानि,
संधूपियाइ इति सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि, खातो
दगाइ कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि, खायनिद्धमणाइ निद्धमण
खाल गृहात्सलिल येन निर्गच्छति, अप्पणोअट्ठाए आत्मार्थं
स्वार्थं गृहस्थै कृतानि परिकर्मितानि करोति, कायह करो-
तीत्यादि विविधपरिकर्मार्थत्वात्, परिभुत्तानि तै स्वय
परिभुज्यमानत्वात्, अतएव परिणामितानि अचित्तीकृतानि
भवन्ति, तत सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा
न भवन्ति। यदि पुन प्रथममेव साधव स्थितास्म इति ब्रुयुस्तदा
ते प्रव्रजितानामवस्थानेन सुभिक्ष सम्भाव्य गृहिणस्तप्तायो
गोलकल्पा दताल क्षेत्रकर्षण, गृहच्छादनादीनि कुर्यु, तथा
चाधिकरणदोषा अत पञ्चाशद्दिने स्थिता स्म इति वाच्य,
गणहराविति गणधरापि एवमेवाकार्षु, अज्जत्ताए इति अद्य-
कालीना आर्य्यतया व्रतस्थविरा इत्येके, अम्हपित्ति अस्माक
मपि आचार्य्योपाध्याया, अम्हेविति वयमपीत्यर्थं ॥ अन्तरा

यद्‌ा श्रुत्या अहोरात्रेण चातुर्मासिकप्रतिक्रमण विहितं तद्-
नन्तर प्रत्यूषे विहर्त्तव्य कारणान्तराभावे। तत्सद्भावे तु मार्ग-
शीर्षेणापि सह आषाढ मासेनापि च सह षण्मासा इति।
यत् पुनरभिवर्द्धितवर्षे दिन विंशत्या पर्युषितव्यमिति, उच्यते
तत्सिद्धान्त टिप्पनानुसारेण तत्र हि प्रायो युगमध्ये पौषो
युगान्ते चाषाढएववर्द्धते तानि च नाधुना सम्यग् ज्ञायन्ते
अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्द्धते स तत्रैव
गणयितव्य नान्याकल्पनाकार्य्या दूष्ट परित्यज्याऽदृष्टक-
ल्पनानसङ्गता आम्नाया ऽपरिज्ञानात्तु कल्पनापि न निश्चयि-
तव्येति साम्प्रत तु कालकाचार्य्याचरणाच्चतुर्थ्यामपि पर्युषणा
विदधति इत्यादि।

देखिये ऊपरके पाठमे श्रीसमवायाङ्गजी यथा तद्‌वृत्ति
और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रका निर्युक्ति तथा उसोकी
चूर्णिके पाठोक प्रमाण पूवक दिनाकी गिनतीसे आषाढ
चौमासोसे ५० वे दिन मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें
निश्चय निवास पूवक ज्ञात पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रम-
णादि करनेका प्रगटपने खुलासे दिखाया है और योग्य
क्षेत्रके अभावसे ५० वे दिनका रात्रिको भी उल्लघन न करते हुए
जगलमें वृक्ष नीचे पर्युपणा करलेनेका भो खुलासा लिखाहै
और चन्द्रसंवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे कात्तिक तक
स्वभावसेहो ७० दिन रहते है सो जघन्यकालावग्रह कहा
जाता है और प्राचीनकालमें जैन पचाङ्गानुसार पौष वा
आषाढको वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितसंवत्सरमें आषाढ चौमा-
सीसे वीस दिने श्रावण सुदीमें ज्ञात पर्युषणा करनेमें आती
थी तब भो पर्युपणाके पिछाड़ी कात्तिक तक स्वभावसेही

वरूप पर्व्वदिवसे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थं । वर्षासुवार्षि वर्षावास वषावस्थान 'पज्जोसवेयव्वंति' परिवसति भवंति वा क रोति पञ्चाशद्दिनेषु व्यतिक्रान्तेषु तथाविध वसत्यभावादि कारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, पर भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदय । वक्ष्यमाणस्यैवाय नियम नाभिवर्द्धितस्येत्यादि। तथाहि निर्युक्तिकार —एत्थ उ पणग पणगकारणीय जाव सवीसइमासो ॥ सुद्धदसमी ठियाव आसाढीपुण्णिमो सरण ॥१॥ इयसत्तरी जहण्णा असीइ णउइ दसुत्तर सयच ॥ जइ वास मग्गसिरे दसरायातिण्णि उक्कोसा ॥२॥ काउण मासकप्प तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालं बणाण छम्मासितो जेठोग्गहोहोइ ॥३॥ सुगमाश्चेमा नवर- माद्यगाथा द्वयस्य चूर्णि ॥ आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तण डगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो य कहितो तो सावणबहुल पञ्चमीए पज्जोसवेंति । असति खेत्ते सावणबहुल दसमीए । असति खेत्ते सावणबहुलपण्णरसीए एव पञ्च पञ्च उस्सार तेण जाव असतिखेत्ते भद्दवयसुद्धपञ्चमीए। अतोपरेण ण वट्टसि अतिकमितु आसाढपुण्णिमा तो आढत्त मग्गताण जाव भद्दवय जोण्हस्स पञ्चमीए एत्यन्तरे जतिवासखेत ण लद्ध ताहे रुक्खसहेट्ठे ठितो तोवि पज्जोसवेयव्व एतेसु पव्वेसु जहालम्भे पज्जोसवेयव्वमिति अपव्वे ण वट्टति अत्र पूर्वोक्तानि एकादश- पर्व्वाणि अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्व्वाणि ज्ञेयानि सवत्सरप्रतिक्रमण तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना तु सम्प्रत्यध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते ततएवावसेया। नवर कल्पमाश्रित्य जघन्यतो नभस्य सितप- ञ्चम्यारारभ्य कार्त्तिकचातुर्मासयावत् सप्ततिदिनमान एतावता

यद्। स्मृत्या अहोरात्रेण चातुर्मासिकप्रतिक्रमण विहित तद-नन्तर प्रत्यूपे विहृतव्य कारणान्तराभावे। तत्सद्भावे तु मार्गशीर्षेणापि सह आषाढ मासेनापि च सह पचमासा इति। यत् पुनरभिवर्द्धितवर्षे दिन विशत्या पर्युषितव्यमिति, उच्यते तत्सिद्धान्त टिप्पनानुसारेण तत्र हि प्रायो युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढएववद्धते तानि च नाधुना सम्यग् ज्ञायन्ते अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्द्धते स तत्रैव गणयितव्य नान्याकल्पनाकार्य्या दूष्ट परित्यज्याऽदृष्टकल्पनानसङ्गता आम्नाया ऽपरिज्ञानात्तु कल्पनापि न निश्चयितव्येति साप्रत तु कालकाचार्य्याचरणाच्चतुर्थ्यामपि पर्युषणा विदधति इत्यादि ।

देखिये ऊपरके पाठमें श्रीसमवायाङ्गजी यथा तद्वृत्ति और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रका निर्युक्ति तथा उसकी चूर्णिके पाठोक प्रमाण पूवक दिनाकी गिनतीसे आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसवत्सरमें निश्चय निवास पूवक ज्ञात पर्युषणामें सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि करनेका प्रगटपने खुलासे दिखाया है और योग्य क्षेत्रके अभावसे ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लघन न करते हुए जगलमें वृक्ष नीचे पर्युषणा करलेनेका भी खुलासा लिखा है और चन्द्रसवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे कात्तिक तक स्वभावसेही ७० दिन रहते हैं सो जघन्यकालावग्रह कहा जाता है और प्राचीनकालमें जैन पचाङ्गानुसार पौष वा आषाढकी वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितसवत्सरमें आषाढ चौमासीसे वीस दिने श्रावण सुदीमें ज्ञात पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणाके पिछाडी कात्तिक तक स्वभावसेही

वरूप पर्व्वदिवसे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थं । वर्षोल्लासकारो वर्षावास वर्षावस्थान 'पज्जोसवेइत्ति' परिवसति सर्वेषा च रोति पञ्चाशद्दिनेषु व्यतिक्रान्तेषु तथाविध वसत्यभावादि कारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, परं भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदय । पञ्चसप्ततरस्यैवायं नियमः नाभिवर्द्धितस्येत्यादि । तथाहि निर्युक्तिकार --एत्थ उ पणग पणगकारणीय जाव सवीसइमासो ॥ सुद्धदसमी ठियाण- आसाढीपुण्णिमो सरण ॥१॥ इयसत्तरी जहण्णा असीइ णउइ दसुत्तर सयच ॥ जइ वास मग्गसिरे दसरायातिणि उक्कोसा ॥२॥ काऊण मासकप्प तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालं बणाण छम्मासितो जेठोग्गहोहोइ ॥३॥ सुगमाश्चेमा नवरं- माद्यगाथा द्वयस्य चूर्णिं ॥ आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तण डगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो य कहितो तो सावणबहुल पञ्चमीए पज्जोसवेंति । असति खेत्ते सावणबहुल दसमीए । असति खेते सावणबहुलपन्नरसीए एव पञ्च पञ्च उस्सार तेण जाव असतिखेते भद्दवयसुद्धपञ्चमीए । अतोपरेण ण वट्टति अतिक्कमितु आसाढपुण्णिमा तो आढत्त मग्गताण जाव भद्दवय जोण्हस्स पञ्चमीए एत्थन्तरे जतिवासखेत ण लद्धं ताहे रुक्खसहेट्ठे ठितो तोवि पज्जोसवेयव्व एतेसु पव्वेसु जहालम्भे मज्जोसवेयव्वमिति अपव्वे ण वट्टति अत्र पूर्वोक्तानि एकादश- पर्व्वाणि अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्व्वाणि ज्ञेयानि संवत्सरप्रतिक्रमणं तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना तु सम्प्रत्यध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते ततएवावसेया । नवरं कल्पमाश्रित्य जघन्यतो नभस्य सितप ञ्चम्यारारभ्य कार्त्तिकचातुर्मासयावत् सप्ततिदिनमानं एतावता

यद्वा स्मृत्या अहोरात्रेण चातुर्मासिकप्रतिक्रमण विहित तद-नन्तर प्रत्यूषे विहत्तव्य कारणान्तराभावे। तत्सद्भावे तु मार्ग-शीर्षेणापि सह आषाढ मासेनापि च सह षण्मासा इति । यत् पुनरभिवर्द्धितवर्षे दिन विंशत्या पर्युषितव्यमिति, उच्यते तत्सिद्धान्त टिप्पनानुसारेण तत्र हि प्रायो युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढएववर्द्धते तानि च नाधुना सम्यग् ज्ञायन्ते अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्द्धते स तत्रैव गणयितव्य नान्याकल्पनाकार्य्या दृष्ट परित्यज्याऽदृष्टक-ल्पनानसङ्गता आम्नाया ऽपरिज्ञानात्तु कल्पनापि न निश्चयि-तव्येति साम्प्रत तु कालकाचार्य्याचरणाच्चतुर्थ्यामपि पर्युषणा विदधति इत्यादि ।

देखिये ऊपरके पाठमे श्रीसमवायाङ्गजी यथा तद्वृत्ति और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी निर्युक्ति तथा उसीकी चूर्णिके पाठोंक प्रमाण पूर्वक दिनोंकी गिनतीसे आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें निश्चय निवास पूर्वक ज्ञात पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रम-णादि करनेका प्रगटपने खुलास दिखाया है और योग्य क्षेत्रके अभावसे ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघन न करते हुए जंगलमें वृक्ष नीचे पर्युषणा करलेनेका भी खुलासा लिखाहै और चन्द्रसंवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे कात्तिक तक स्वभावसेही ७० दिन रहते हैं सो जघन्यकालावग्रह कहा जाता है और प्राचीनकालमें जैन पञ्चाङ्गानुसार पौष वा आषाढकी वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितसंवत्सरमें आषाढ चौमा-सीसे वीस दिने श्रावण सुदीमें ज्ञात पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणाके पिछाडी कात्तिक तक स्वभावसेही

चतुरूप यत्सांवत्सरे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थः । वर्षाकालाचो वर्षावास वर्षाकल्पान 'पज्जोसवेइत्ति' परिवसति सर्वथा क रोति पञ्चाशद्दिनेषु व्यतिक्रान्तेषु तथाविध वसत्यभावादि कारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, पर भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदय । अन्तराऽवसरत्वेवाय नियम नाभिवर्द्धितस्येत्यादि । तथाहि निर्युक्तिकार –एत्थय पण्ग पणगकारणीय जाव सवीसइमासे ॥ सुद्धदसमी ठियाच आसाढीपुण्णिमो सरण ॥१॥ इयसत्तरी जहण्णा असीइ णउइ दसुत्तर सयच ॥ जइ वास मग्गसिरे दसरायातिण्णि उक्कोसा ॥२॥ काऊण मासकप्प तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालं- बणाण छम्मासितो जेठोग्गहोहोइ ॥३॥ सुगमाश्चैता नवर- माद्यगाथा द्वयस्य चूर्णि ॥ आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तण डगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो य कहितो तो सावणबहुल पञ्चमीए पज्जोसवेंति । असति खेत्ते सोवणबहुल दसमीए । असति खेत्ते सावणबहुलपसरसीए एव पञ्च पञ्च उस्सार तेण जाव असतिखेत्ते भद्दवयसुद्धपञ्चमीए । अतोपरेण ण वट्टति अतिकमितु आसाढपुण्णिमा तो आढत्त मग्गताण जाव भद्दवय जोण्हस्स पञ्चमीए एत्थन्तरे जतिवासखेत ण लद्धु ताहे रुक्खसहेट्ठे ठितो तोवि पज्जोसवेयव्व एतेसु पव्वेसु जहालम्भे पज्जोसवेयव्वमिति अपव्वे ण वट्टति अत्र पूर्वोक्तानि एकादश- पर्वाणि अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्वाणि ज्ञेयानि सवत्सरप्रतिक्रमण तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना तु सम्प्रत्यध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते ततएवावसेया । नवर कल्पमाश्रित्य जघन्यतो नभस्य सितप- ञ्चम्याराभ्य कार्त्तिकचातुर्मासयावत् सप्ततिदिनमान एतावता

श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिका तीसरा खण्डका तीसरा उद्देशाके पृष्ठ ५८ से ५९ तकका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

अथ यस्मिन् काले वर्षावासे स्यातव्य यावन्तवा काल येन विधिना तदेतदुपदर्शयति । आसाढपुण्णिमाए वासावासत्तु होति अतिगमण मग्गसिरबहुल दसमीउ जावएक्कम्मि खेत्तम्मि ॥ आषाढपूर्णिमायां वर्षावास प्रयोग्य क्षेत्रे गमन प्रवेश कर्त्तव्य भवति तत्र चापवादतो मार्गशीर्षे बहुलदशमी यावदेकत्र क्षेत्रे वस्तव्य एतच्च चिक्खिल्ल वर्षादिक वक्ष्यमाण कारणमङ्गीकृत्योक्त,उत्सर्गतस्तु कार्त्तिकपूर्णिमायां निर्गन्तव्य इदमेव भावयति ॥ बाहिट्ठिया वसभेहि खेत्तगाहितु वास पाउग्ग कप्पकथेतुठ्ठवणा सावणबहुलस्स पञ्चाहे ॥ यत्राषाढमासकल्प कृतस्तत्रान्यत्र वा प्रत्यासन्नग्रामेस्थिता वर्षावासयोग्यक्षेत्रेवृषभासाधुसामाचारीं ग्राहयन्ति,तेच वृषभा वर्षा प्रयोग्य संस्तारक तृण डगल छार मल्लकादिकमुपधि गृह्णन्ति, तत आषाढपूर्णिमायां प्रविष्टा प्रतिपदमारभ्य पञ्चभिरहोभि पर्युषणा कल्प कथयित्वा श्रावण बहुल पञ्चम्या वर्षाकाले सामाचार्या स्थापना कुर्वन्ति पर्युषयन्तीत्यर्थ ॥ इत्थय अणभिग्गहिय वीसतिराय सवीसइ मास तेण परमभिग्गहिय गाहिणाय कत्तिओजाव ॥ अत्रेत्ति श्रावण बहुल पञ्चम्यादौ आत्मना पर्युषितेऽपि अनभिग्रहीतमनवधारित गृहस्थाना पुरत कर्त्तव्य किमुक्त भवति यदि गृहस्था पृच्छेयुरार्यायूयमत्र वर्षाकाले स्थितावा न वेति एव पृष्टे सति स्थितावयमत्रेति सावधारण न कर्त्तव्यं, किन्तु तत्सदिग्ध, यथा नाद्यापि निश्चित स्थिता अस्थिता वेति,इत्यमनभिगृहीत कियन्त काल वक्तव्य उच्यते

१०० दिन रहते थे इसलिये वर्त्तमानमें मास वृद्धि हो श्राव-णादि होते भी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रहनेका आ-ग्रह करना सो, अज्ञानतासे प्रत्यक्ष अनुचित है और जैन पंचाङ्ग इस कालमें अच्छी तरहसे नहीं जाना जाता है इसलिये उसीके अभावसे लौकिक पचाङ्गानुसार जिस महीनेकी जिस जगह वृद्धि होवे उसीकोही उसी जगह गिनना चा-हिये परन्तु अन्य कल्पना नहीं करनी, अर्थात् जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार पौष, आषाढके सिवाय चैत्र, श्रावणादि मासोंके वृद्धिकी गिनती निषेध करनेके लिये गच्छाग्रहसे अपनी मति कल्पना करके अन्यान्य कल्पनायें भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि लौकिक पचाङ्गानुसार चैत्र, श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेका प्रत्यक्ष प्रमाणको छोड करके पौष आषाढकी वृद्धि होनेवाला जैन पचाङ्ग वर्त्तमानमें प्रचलित नहीं होते भी उसी सम्बन्धी मास वृद्धिका अप्रत्यक्ष प्रमाणको ग्रहण करनेका आग्रह करना सो भी योग्य नहीं है क्योंकि जैन पचाङ्गके अभावसे लौकिक पचाङ्गानुसार वर्त्ताव करते भी उसी मुजब मास वृद्धिकी गिनती नही करना एसा कोई भी शास्त्रका प्रमाण नही होनेसे गच्छाग्रहकी युक्ति रहित कल्पना भी मान्य नही हो सकती है और आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना सो तो शास्त्रोक्त प्रमाण पूर्वक तथा युक्ति सहित प्रसिद्ध न्यायकी बात है ।

और अब प्राचीनकालमें जैन पचाङ्गानुसार पर्युषणा की मर्यादावाला एक पाठ वाचक वर्गको ज्ञात होनेके लिये दिखाता हूं श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगचद्र सूरिजीकी परंपरामें

श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिका तीसरा खण्डका तीसरा उद्देशाके पृष्ठ ५८ से ५९ तकका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

अथ यस्मिन् काले वर्षावासे स्यातव्य यावन्तवा काल येन विधिना तदेतदुपदर्शयति । आसाढपुण्णिमाए वासावासडु होति अतिगमण मग्गसिरबहुल दसमीउ जावएक्कम्मि खेत्तम्मि ॥ आषाढपूर्णिमाया वर्षावास प्रयोग्य क्षेत्रे गमन प्रवेश कर्त्तव्य भवति तत्र चापवादतो मार्गशीर्ष बहुलदशमी यावदेकत्र क्षेत्रे वस्तव्य एतच्च चिक्खिल्ल वर्षादिक वक्ष्यमाण कारणमङ्गीकृत्योक्त,उत्सर्गतस्तु कार्त्तिकपूर्णिमाया निर्गन्तव्य इदमेव भावयति ॥ बाहिट्ठिया वसभेहि खेत्त गाहित्तु वास पाउग्ग कप्पकथेतुट्ठवणा सावणबहुलस्स पञ्चाहे ॥ यत्राषाढमासकल्प कृतस्तत्रान्यत्र वा प्रत्यासन्नग्रामेस्थिता वर्षावासयोग्यक्षेत्रेवृषभासाधुसामाचारीं ग्राहयन्ति,तेच वृषभा वर्षा प्रयोग्य सस्तारक तृण डगल क्षार मल्लकादिकमुपधि गृह्णन्ति, तत आषाढपूर्णिमाया प्रविष्टा प्रतिपदमारभ्य पञ्चभिरहोभि पर्युषणा कल्प कथयित्वा श्रावण बहुल पञ्चम्या वर्षाकाले सामाचार्या स्थापना कुर्वन्ति पर्युषयन्तीत्यर्थ ॥ इत्थय अणभिग्गहिय वीसतिराय सवीसइ मास तेण परमभिग्गहिय गाहिणायं कत्तिओजाव ॥ अत्रेत्ति श्रावण बहुल पञ्चम्यादौ आत्मना पर्युषितेऽपि अनभिग्रहीतमनवधारित गृहस्थाना पुरत कर्त्तव्य किमुक्त भवति यदि गृहस्था पृच्छेयुरार्यायूयमत्र वर्षाकाले स्थितावा न वेति एव पृष्टे सति स्थितावयमत्रेति सावधारण न कर्त्तव्य, किन्तु तत्सदिग्ध, यथा नाद्यापि निश्चित स्थिता अस्थिता वेति,इत्यमनभिगृहीत कियन्त काल वक्तव्य उच्यते

यद्यभिवर्द्धितो भी मवरमरम्ततो विंशतिरात्रि दिनानि, अथ चान्द्रोमी तत स विंशतिरात्र मासं यावदनभिगृहीत कर्त्तव्य, तेण विसन्धि व्यत्यया ततः पर विंशति रात्र मासा ग्रोद्र्ध्वमनभिगृहीत निश्चित कर्त्तव्य गृहिज्ञातञ्च गृहस्थाना पृच्छता ज्ञापना कर्त्तव्या, यथा वयमत्र वर्षाकालेस्थिता एतत्र गृहिज्ञात कार्त्तिकमास यावत् कर्तव्य किं पुन कारणम् कियति काले व्यतीत एव गृहिज्ञात क्रियते नार्वागित्यत्रो- च्यते ॥ असिवाइ कारणेहि अहवा वास ण सुट्टु आरद्धं अभिवट्ढियमि वीसा इयरेसु सवीसइ मासो ॥ कदाचित्तत क्षेत्रे अशिव भवेत् आदिशब्दात् राजदुष्टादिक वा भयमुप- जायेत एवमादिभि कारणै, अथवा तत्र क्षेत्रे न सुष्ठु वर्षं वर्षितुमारब्ध येन धान्यनिष्पत्तिरुपजायते ततश्च प्रथममेव स्थिता वयमित्युक्ते पश्चादशिवादि कारणे समुपस्थिते यदि गच्छन्ति ततो लोको ब्रूयात् अहो एते आत्मान सर्वज्ञ पुत्र तयाख्यापयन्ति पर न किमपि जानन्ति मृषावाद वा भाषन्ते स्थिता स्म इति भणित्वा सम्प्रति गच्छन्तीति। अथाशिवादि कारणेषु सञ्जातेषु अपि न गच्छति तत आज्ञाऽतिक्रमणादि दोषा अपिच स्थिता स्म इत्युक्ते गृहस्थाश्चिन्तयेयुरवश्य वर्षं भविष्यति येनेति वर्षा रात्रमत्र स्थिता ततो धान्यविक्री- णीयु गृह वाच्छादयेयु हलादीनि वा स्थापयेयु यतएव मतो अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चन्द्रसम्वत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञात कुर्वन्ति॥ एत्थउ पणग पणग कारणीय, जाव सवीसइ मासो, सुद्ध दसमी ठियाण,आसाढीपुण्णिमोसरण॥ अत्रेति आषाढपूर्णि- मायां स्थिता पञ्चाह यावदेव सस्तारक डगलादि गृह्णन्ति

रात्री च पर्युषणाकल्प कथयन्ति तत श्रावण बहुलपञ्चम्या पर्युषणा कुर्वन्ति, अथाषाढपूर्णिमाया क्षेत्र न प्राप्तास्तत एव-मेव पञ्चरात्र वर्षावास प्रयोग्यमुपधि गृहीत्वा पर्युषणा कल्प च कथयित्वा श्रावणबहुलदशम्या पर्युषणयन्ति एव कारणेन रात्रि दिवाना पचक पचक वर्द्धयता तावत्स्थेय यावत् सविंशति रात्रो मास पूर्ण । अथवा ते आषाढशुद्ध दशम्यामेव वर्षाक्षेत्रे स्थितास्ततस्तेषा पचरात्रेण डगलादौ गृहीते पर्यु-षणा कल्पे च कथिते आषाढ पूर्णिमाया समवसरण पर्युषण भवति एषउत्सर्ग ॥ अत ऊर्द्ध्व काल पर्युषणमनुतिष्ठता सर्वो-ऽप्यपवाद् । अपवादोपि सविंशतिरात्रात् मासात् परतो नातिक्रमयितु कल्पते यद्येतावत्कालेऽपि गते वर्षायोग्यक्षेत्र न लभ्यते ततो वृक्षमूलेऽपि पर्युषितव्य ॥ अथ पचक परिहा-णिमधिकृत्य ज्येष्ठकल्पावग्रहप्रमाणमाह । इयसत्तरी जहन्ना असीइ णउइ दसुत्तरसयच जइवास मग्गसिरे दसराया तिण्णि उक्कोसा ॥ इयइति उपदर्शने ये किलाषाढपूर्णि-माया सविंशतिरात्रे मासे गते पर्युषयन्ति तेषा सप्ततिदिव सानि जघन्यो वर्षा वासावग्रहो भवति, भाद्रपदशुद्धपचम्या-नन्तर कार्तिकपूर्णिमाया सप्ततिदिनसद्भावात् । एव भाद्र-पदबहुलदशम्या पर्युषयन्ति तेषामशीतिर्दिवसा मध्यमो वर्षाकालावग्रह । श्रावणपूर्णिमाया नवतिदिवसा । श्रावण बहुलदशम्यां दशोत्तरशत दिवसा मध्यमएवकालावग्रहो भ-वति ॥ समवायागेनुक्रमपि इत्थ वक्तव्य । भाद्रपदामावास्याया पर्युषणे क्रियमाणे पचसप्ततिदिवसा । भाद्रपदबहुलपचम्या पचाशीति । श्रावणशुद्धदशम्या पचनवति । श्रावणामावस्या पचोत्तरशत । श्रावण बहुलपचम्या पचदशोत्तरशत । आषाढ

यद्यभिवर्द्धितो भी भवत्यन्ततो विंशतिरात्रि द्विमानि, अथ चान्द्रोभी तत स विंशतिरात्र मासं यावदनभिगृहीत क-र्त्तव्य, तेन विभक्ति व्यत्यया तत पर विंशति रात्र मासा चोर्द्ध्वंमभिगृहीत निश्चित कर्त्तव्य गृहिज्ञातञ्च गृहस्थाना पृच्छतां ज्ञापना कर्त्तव्या, यथा वयमत्र वर्षाकालेस्थिता एतच्च गृहिज्ञात कार्त्तिकमास यावत् कर्तव्य किं पुन कारणम् कियति काले व्यतीत एव गृहिज्ञात क्रियते भावागित्यत्रो-च्यते ॥ असिवाइ कारणेहिं अहवा वास न सुट्ठु आरद्धं अभिवड्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइ मासो ॥ कदाचित्तत् क्षेत्रे अशिव भवेत् आदिशब्दात् राजदुष्टादिकं वा भयमुप-जायेत एवमादिभि कारणै, अथवा तत्र क्षेत्रे न सुष्ठु वर्षं वर्षितुमारब्ध येन धान्यनिष्पत्तिरुपजायते ततश्च प्रथममेव स्थिता वयमित्युक्ते पश्चादशिवादि कारणे समुपस्थिते यदि गच्छन्ति ततो लोको ब्रूयात् अहो एते आत्मान सर्वज्ञ पुत्र तयाख्यापयन्ति पर न किमपि जानन्ति मृषावाद वा भाषन्ते स्थिता स्म इति भणित्वा सम्प्रति गच्छन्तीति । अथाशिवादि कारणेषु सञ्जातेषु अपि न गच्छति तत आज्ञाऽतिक्रमणादि दोषा अपिच स्थिता स्म इत्युक्ते गृहस्थाश्चिन्तयेयुरवश्य वर्षं भविष्यति येनेति वर्षा रात्रमत्र स्थिता ततो धान्यविक्री-णीयु गृह वाच्छादयेयु हलादीनि वा स्थापयेयु यतएव मतो अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चन्द्रसम्वत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञात कुर्वन्ति ॥ एत्थउ पणग पणग कारणीय, जाव सवीसइ मासो, सुद्ध दसमी ठियाण, आसाढीपुण्णिमोसरण ॥ अत्रेति आषाढपूर्णिमाया स्थिता पश्चाह यावदेव सस्तारक डगलादि गृह्णन्ति

२० दिने तथा ५० दिने ज्ञात याने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे सो यावत् कार्त्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है ।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहा नही लिखता हू। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोके पाठ आगेप्रशागोॅपात लिखनेमें भी आवेंगे ।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोको इतनाही कहना है कि वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोमें प्रत्यक्ष पने सासारिक तथा धार्म्मिक व्यवहार सब दुनियामें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोके परावर्तन करके दिनोकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निष्केवल हठवादसे ससारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओके अनुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोको कहता हू कि-वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमण्डली वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओका तात्पर्यार्थको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोकी

पूर्णिमायां तु पर्युषिते विंशत्युत्तर दिवसानां भवति ॥ एव मेतेषां प्रकाराणां वर्षावासानामेकतरेणे स्थित्वाकार्तिक चातुर्मासिक प्रतिपदि निर्गन्तव्य। अथ मार्गशीर्षे वर्षा भवति कर्द्दमजलाकुलाः पन्थान ततोऽपवादेनैक दशरात्रं यावत् तिष्ठति। अथ तथापि वर्षा नोपरते ततो द्वितीय दशरात्रं तथा यतिः अथैव मपि वर्षा न तिष्ठति ततस्तृतीयमपि दशरात्रमासेवेत एव त्रीणि दशरात्राणि उत्कर्षतस्तत्र क्षेत्रे आसितव्य मार्गशिर पौर्णमासी यावदित्यर्थं ॥ तत ऊर्द्ध यद्यपि कर्द्दमाकुलाः पन्थानो वर्ष वा गाढमनुवरत वर्षति यद्यपि च पानीयैः पूर्य्यमाणैस्तदानीं गम्यते तथापि अवश्य निर्गन्तव्य एव षण्मासिको ज्येष्ठकल्पावग्रह सम्पन्न ॥ अथ तमेव षाण्मासिकमाह। काउण मासकप्पं तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालंबणाण छम्मासिओ जेट्ठो ग्गहोहोइति। यस्मिन् क्षेत्रे आषाढमास कल्पकृत तदन्यद्गुणोवासयोग्य तथाविध क्षेत्रं न प्राप्त ततो मासकल्प कृत्वा तत्रैव वर्षावास स्थिताना ततश्चातुर्मासानन्तर कर्द्दमवर्षादिभि कारणै रतीते मार्गशीर्षमासे निर्गताना षाण्मासिको ज्येष्ठकल्पावग्रहो भवति एकक्षेत्रे अवस्थानमित्यर्थ ॥

देखिये ऊपरके पाठमें अधिकरण दोषोका निमित्तकारण। और कारण योगे गमन करना पडे तो साधुधर्मकी अवहेलना न होनेके लिये वर्षायोग्य उपधिकी प्राप्ति होनेसे योग्यक्षेत्रमें अज्ञात याने गृहस्थी लोगोको नहीं जानी हुई अनिश्चित पर्युषणा स्थापन करे वहा उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे (श्रीकल्पसूत्रका पठन करे) और योग्यक्षेत्रके अभावसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते चन्द्रसवत्सरमें ५० दिन तक तथा, अभिवर्द्धित सवत्सरमें २० दिनतक अज्ञात पर्युषणा करे परन्तु

२० दिने तथा ५० दिने ज्ञात यानें गृहस्थी लोगोंको जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे सो यावत् कार्त्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है ।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोंके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहां नहीं लिखता हूं। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सूत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोंके पाठ आगेप्रसंगोंपात लिखनेमें भी आवेंगे ।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोंमें प्रत्यक्ष पने सांसारिक तथा धार्म्मिक व्यवहार सब दुनियामें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोंके परावर्तन करके दिनोंकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निष्केवल हठवादसे संसारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओंके अनुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोंको कहता हूं कि- वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमण्डली वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंका तात्पर्यार्थको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोंकी

पूर्णिमाया तु पर्युषिते विंशत्युत्तर दिवसशतं भवति ॥ एव मेतेषां प्रकाराणां वर्षावासानामेकतरे स्थितानांकार्त्तिक चातुर्मासिक प्रतिपदि निर्गन्तव्य। अथ मार्गशीर्षे वर्षा भवति कर्द्दमजलाकुला पन्थान ततोऽपवादेनैक दशरात्र भव-तीति। अथ तथापि वर्षं नोपरतै ततो द्वितीय दशरात्र तथा सति अथैव नपि वर्षा न तिष्ठति ततस्तृतीयमपि दशरात्रमासैवेत एव त्रीणि दशरात्राणि उत्कर्षतस्तत्र क्षेत्रे आसितव्य मार्गशिर पौर्णमासीं यावदित्यर्थ ॥ तत ऊर्ध्व यद्यपि कर्द्दमाकुला पथानो यद् वा गोदमनुपरत वर्षति यद्यपि च पानीयै पूर्य्यमाणेस्तदानीं गम्यते तथापि अवश्य निर्गन्तव्य एव पञ्चमासिको ज्येष्ठकल्पावग्रह सम्पन्न ॥ अथ तमेव षाण्मासिकमाह। कारण मासकप्पं तत्थेव ठियाण अहवास मग्गसिरे सालवणाण छम्मासिओ जेट्ठो ग्गहोग्गोहइति। यस्मिन् क्षेत्रे आषाढमास कल्पकृत तदन्यद्वर्षावासयोग्य तथाविध क्षेत्र न प्राप्त ततो मासकल्प कृत्वा तत्रैव वर्षा-वास स्थिताना ततश्चातुर्मासानन्तर कर्द्दमवर्षादिभि कारणै रतीते मार्गशीर्षमासे निर्गताना षाण्मासिको ज्येष्ठकल्पावग्र-हो भवति एकक्षेत्रे अवस्थानमित्यर्थ ॥

देखिये ऊपरके पाठमें अधिकरण दोषोका निमित्तकारण। और कारण योगे गमन करना पड़े तो साधुधर्मकी अवहे-लना न होनेके लिये वर्षायोग्य उपधिकी प्राप्ति होनेसे योग्य-क्षेत्रमें अज्ञात याने गृहस्थी लोगोंकी नहीं जानी हुई अनिश्चित पर्युषणा स्थापन करे वहा उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे (श्रीकल्पसूत्रका पठन करे) और योग्यक्षेत्रके अभावसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते चन्द्रसवत्सरमें ५० दिन तक तथा अभिवर्द्धित सवत्सरमें २० दिनतक अज्ञात पर्युषणा करे परन्तु

२० दिने तथा ५० दिने ज्ञात याने गृहस्थी लोगोंको जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे सो यावत् कार्त्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहा नही लिखता हू। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोंके पाठ आगेप्रसगोंपात लिखनेमें भी आवेंगे।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोमें प्रत्यक्ष पने सासारिक तथा धार्म्मिक व्यवहार सब दुनियामें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोंके परावर्तन करके दिनोकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निष्केवल हठवादसे ससारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओके अनुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोंको कहता हू कि-वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहली वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओका तात्पर्यायको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोंकी

पूर्णिमाया तु पर्युषिते विंशत्युत्तर दिवशतं भवति ॥ एव मेतेषा प्रकाराणा मन्यतमेनाप्येकत्रे हिवस्थाकार्त्तिक चातुर्मासिक प्रतिपदि निर्गन्तव्य। अथ मार्गशीर्षे वर्षा भवति कर्द्दमजलाकुला पन्थान ततोऽपवादेनैक दशरात्र मव-तीति। अथ तथापि वर्षा नोपरते ततो द्वितीय दशरात्र तथा सति अथैव नपि वर्षा न तिष्ठति ततस्तृतीयमपि दशरात्रमास्थेयेत एव त्रीणि दशरात्राणि उत्कर्ष तस्तत्र क्षेत्रे आसितव्य मार्गशिर पौर्णमासीं यावदित्यर्थ ॥ तत ऊर्द्ध्व यद्यपि कर्द्दमाकुला पथानो वर्ष वा गाढमनुवरत वर्षति यद्यपि च पानीयै प्लाव्यमाणैस्तदापि गम्यते तथापि अवश्य निर्गन्तव्य एव षड्मासिको ज्येष्ठकल्पावग्रह सम्पन्न ॥ अथ तमेव षाण्मासिकमाह। काऊण मासकप्पं तत्थेव ठियाण अइवास मग्गसिरे सालबणाण छम्मासिओ जेट्ठो गहोहोइति। यस्मिन् क्षेत्रे आषाढमास कल्पकृत तदन्यद्वर्षावासयोग्य तथाविध क्षेत्र न प्राप्त ततो मासकल्प कृत्वा तत्रैव वर्षा-वास स्थिताना ततश्चातुर्मासानन्तर कर्द्दमवर्षादिभि कारणै रतीते मार्गशीर्षमासे निर्गताना षाण्मासिको ज्येष्ठकल्पावग्र-हो भवति एकक्षेत्रे अवस्थानमित्यर्थ ॥

देखिये ऊपरके पाठमें अधिकरण दोषोका निमित्तकारण। और कारण योगे गमन करना पडे तो साधुधर्मकी अवहे-लना न होनेके लिये वर्षायोग्य उपधिकी प्राप्ति होनेसे योग्य-क्षेत्रमें अज्ञात याने गृहस्थी लोगोंको नहीं जानी हुई अनिश्चित पर्युषणा स्थापन करे वहा उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे (श्रीकल्पसूत्रका पठन करे) और योग्यक्षेत्रके अभावसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते चन्द्रसवत्सरमें ५० दिन तक तथा अभिवर्द्धित सवत्सरमें २० दिनतक अज्ञात पर्युषणा करे परन्तु

सुन्दरजी कृत श्रीसमाचारी शतकमे २१ और श्रीपार्श्वचन्द्र गच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिमे २२ इत्यादि अनेक शास्त्रोमे अधिकमासको गिनतीमे प्रमाण किया है इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष अधिकमासकी गिनती कदापि निषेध नही कर सकते है इस जगह भव्य जीवोको निःसन्देह होनेके वास्ते थोडेसे अधिकमासकी गिनतीके विषयवाले पाठ लिख दिखाता हु —

श्रीतपगच्छके पूर्वज कहलाते श्रीनेमिचन्द्र सूरिजी महाराज कृत श्रीप्रवचनसारोद्धार मूलसूत्र गुजराती भाषा सहित मुबईवाले श्रावक भीमसिंह माणककी तरफसे श्रीप्रकरण रत्नाकरके तीसरे भागमे छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके पृष्ठ ३६४ सें ३६५ तक नीचे मुजब भाषा सहित पाठ जानो—

अवतरण—मासाण पञ्चभेयत्ति एटले मासना पाचभेदोनु एकसोने एकतालीसमुद्धार कहे छे। मूल—मासाय पचसुत्ते, नक्खत्ते चदीओय रिउमासो ॥ आइच्चोवियं अवरो, भिवढ्ढिओ तहय पचमओ ॥९०४॥

अर्थ सूत्र जे श्रीअरिहत परमात्मानु प्रवचन तेने विषे मास पाच कह्या छे। तेमा प्रथमजे नक्षत्रनी गणनाये थाय तेनी रीतकहे छे-चद्रमाचारके० सचरतो जेटले काले अभिजितादिकथी विचरतो उतराषाढा नक्षत्र सुधी जाय तेने प्रथम नक्षत्र मास कहिये। बीजो चदिओयके० चद्रथकीथाय ते अधारा पडवाथकी आरभीने अजवाली पूर्णिमा सुधी चद्रमास केहेवाये। त्रीजोरिओके० ऋतु ते लोक रुढिये साठ अहोरात्रीये ऋतु कहिये। तेनो अर्द्धमास एटले त्रीस अहो-

मर्यादाके प्रतिकूल तथा पञ्चाङ्गीके प्रमाणोंके भी विरुद्ध होकरके गच्छाग्रहके पक्षपातसे दे। श्रावण होते भी प्रत्यक्षपने ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथा आग्रह कदापि नहीं करेंगे। और उपरोक्त शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषों पर द्वेष बुद्धिसे वृथा उत्सूत्र रूप मिथ्याभाषणसे आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकर बाल-जीवोको भ्रममें गेरनेका साहस भी कदापि नहीं करेंगे।

और फिर अपनी चातुराइसे आप निर्दूषण बननेके लिये जैन शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं गिना है ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप कहके अज्ञजीवोंके आगे मिथ्यात्व फैलाते हैं उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इसजगह अधिक मासकी गिनतीके प्रमाण करने सम्बन्धी पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण यहा दिखाता हूं।

श्रीसुधर्मस्वामीजी कृत श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रमें १, तथा श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रमें २, औरसवत् १३०० के अनुमान श्रीमलयगिरिजी कृत उपरोक्त दोनो सूत्रोकी दोनो वृत्ति-योमें ४, श्रीभद्रबाहुस्वामिजीकृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके चूलिकाकी निर्युक्तिमें ५, तथा श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत तत् निर्युक्तिकी वृहद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें, वृह-द्भाष्यमें ७, चूर्णिमें ८ श्रीवृहत्कल्पके लघुभाष्यमें, वृहद्भाष्यमें९, चूर्णिमें १० और वृत्तिमें ११ श्रीसमवायागजीमें १२, तथा तद्वृत्तिमें १३ औरश्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४ श्रीनेमीचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रवचनसारोद्धारमें १५ श्रीसिद्ध-सेनसूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें १६, श्रीउदयसागरजी कृत तत्सूत्रकी लघुवृत्तिमें १७, श्रीजिनपतिसूरिजीकृत श्रीसमा-चारी ग्रन्थमें १८,श्रीसंघपट्टक लघुवृत्तिमें, वृहद्वृत्तिमें १९ श्रीजि नप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपासमाचारीमें २० और श्रीसमय

सुन्दरजी कृत श्रीसमाचारी शतकमे २१ और श्रीपार्श्वचन्द्र गच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिमे २२ इत्यादि अनेक शास्त्रोमे अधिकमासको गिनतीमे प्रमाण किया है इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष अधिकमासकी गिनती कदापि निषेध नही कर सकते है इस जगह भव्य जीवोको निःसन्देह होनेके वास्ते थोडेसे अधिकमासकी गिनतीके विषयवाले पाठ लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छके पूर्वज कहलाते श्रीनेमिचन्द्र सूरिजी महाराज कृत श्रीप्रवचनसारोद्धार मूलसूत्र गुजराती भाषा सहित मुबईवाले श्रावक भीमसिंह माणककी तरफसे श्रीप्रकरण रत्नाकरके तीसरे भागमे छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके पृष्ठ ३६४ से ३६५ तक नीचे मुजब भाषा साहित पाठ जानो—

अवतरण—मासाण पञ्चभेयत्ति एटले मासना पाच-भेदोनु एकसोने एकतालीसमुद्वार कहे छे। मूल—मासाय पचसुत्ते, नरकत्ते चदीओय रिउमासो ॥ आइच्चोविये अवरो, भिवढ्ढिओ तहय पचमओ ॥९०४॥

अर्थ सूत्र जे श्रीअरिहंत परमात्मानु प्रवचन तेने विषे मास पाच कह्या छे। तेमा प्रथमजे नक्षत्रनी गणनाये थाय तेनी रीतकहे छे -चद्रमाचारके० संचरतो जेटले काले अभिजितादिकथी विचरतो उत्तराषाढा नक्षत्र सुधी जाय तेने प्रथम नक्षत्र मास कहिये। बीजो चदिओयके० चद्रयकीथाय ते अधारा पडवाथकी आरभीने अजवाली पूर्णिमा सुधी चद्रमास केहेवाये। त्रीजोरिओके० ऋतु ते लोक रूढिये साठ अहोरात्रीये ऋतु कहिये। तेनो अर्द्धमास एटले त्रीस अहो-

रात्री प्रमाणनो ते ऋतुमास जाणवो। चोथो, आदित्य जे सूर्य तेहनु अयन एक तेने त्यारी दिवस होय। तेनो छठ्ठोभाग ते आदित्य मास कहिये। पाचमो अभिवर्द्धित ते तेर चद्रमासे थाय। थार चद्रमासे सवत्सर जाणवो परन्तु जेवारे एक वधे तेवारे तेने अभिवर्द्धित मास कहिये एनुज प्रमाण विशेष देखाडे छे। मूल –अट्ठवीससित्तवीस तिसत्त सत्तट्ठि भाग नरकतो॥ चदोअ उगतीस बसट्ठिभागाय बत्तीस ॥ ९०५ ॥

अर्थ –सतावीस अहोरात्री अने एक अहोरात्रीना सडसठ भाग करिये तेवा एक्वीस भागे अधिक एक नक्षत्र मासथाय। अने मासना उगणत्रीस अहोरात्री तेना उपर एक अहोरात्रिना बासठभाग करिये एवा बत्रीस भागे अधिक एक चद्रमास थाय।

मूल –उउमासो तीसदिणो, आइच्चोवि तीस होइ अद्धच। अभिवड्ढिओअ मासो चउवीस सएण छेएण ॥९०६॥ अर्थ –ऋतुमास ते सपूर्ण त्रीसदिवस प्रमाणनो जाणवो तथा आदित्यमास ते त्रीसदिवस अने उपर एक दिवसना साठिया त्रीसभाग करिये तेटला प्रमाणनो जाणवो। अने अभि वर्द्धितमास ते चउवीसे अधिक एकशतछेद एटले भाग तेज देखाडे छे ॥ ९०६ ॥ मूल –भागाणिगवीससय, तीसाएगा-हिया दिणाणव। एएजह निप्पत्ति, लहति समयाऊतह-नेय ॥ ९०७ ॥ अर्थ –ते पूर्वोक्त एकसोने चोवीसभाग एक अहोरात्रना करिये तेवा एकसो एकवीसभाग अने एक-दिवसे अधिक त्रीस एटले एकत्रीस दिवस अर्थात् एकत्रीस दिवसने एक अहोरात्रीना एकसो चोवीसभाग माहेला

एकसोने एकवीसभाग उपर एटेलु अभिवर्द्धित मासनु प्रमाण जाणवु एरीतेए पाचमासनी जेम नि प्पति एटले प्राप्तिथाय छे तेसमयके० सिद्धान्त थकी जाणवी इति गाथाचतुष्ट-यार्थ ॥ ९०७ ॥ अवतरण —वरिसाणपचभेयत्ति एटले वर्षना पाचभेदनु एकसोने बेतालीसमु द्वार कहे छे ।

मूल —सवछराउ पचउ "चदे चदे भिवढ्ढिए चेव । चदे भिवड्ढएतह वासट्ठिमासे ह्रि जुगमाण॥९०८॥ अर्थ —चद्रादिक सवत्सर पाचकह्याछे तेमा पूर्वोक्तचद्रमासे जे नीपन्योते चद्र सवत्सर जाणवो । तेनु प्रमाण त्रणसे चोपनदिवस अने एक दिवसना बासठभाग करिये तेवा बारभाग उपर जाणवा तेमज बीजा चद्रसवत्सरनु पण मानजाणवु । हवे चद्रस वत्सर थी एक अधिकमास थाय ऐटले तेने अभिवर्द्धित सवत्सरजाणवो तेनु प्रमाण त्रणसे त्र्यासीदिवस अने एक दिवसना बासठ-भाग करी तेमाना चुमालीसभाग एवो एक अभिवर्द्धित सवत्सर जाणवो एकत्रीश अहोरात्र अने एकदिवसना एकसो चोवीसभाग करिये तेनाहिला एकसो एकवीसभाग उपर ए अभिवर्द्धित मासनु मान जाणवु । हवे पूर्वोक्त माने अभि-वर्द्धित सवत्सर बे अने चद्रसवत्सर त्रण एवा पाच स वत्सरे एक युगमान थाय छे ते बासठचद्रमास प्रमाणक छे । साराश एकयुगमा त्रण चाद्रसवत्सर ते चाद्रसवत्सरना प्रत्येक बार-मास मली छत्रीस चाद्रमास अने बे अभिवर्द्धित सवत्सर तेमा एक अभिवर्द्धित सवत्सरना तेरे चाद्रमास ए प्रमाणे बीजा वर्षना पण तेरे मलो एकंदर छवीसमास अने पूर्वोक्त चाद्रमास छत्रीस मलीने बासठ चाद्रमासे एक युगनु मान-थाय ॥ ९०८ ॥ इति—

रात्री प्रमाणनो ते ऋतुमास जाणवो। चोथो, आदित्य जे सूर्य तेहनु अयन एकसोने ज्यासी दिवसनु होय। तेनो छट्ठोभाग ते आदित्य माम कहिये। पांचमो अभिवर्द्धित ते तेर चद्रमाभे थाय। यार चद्रमाभे सवत्सर जाणवो परन्तु जेवारे एक वधे तेवारे तेने अभिवर्द्धित माम कहिये एनुज प्रमाण विशेष देखाडे छे। मूल—अहरत्तसित्तवीस तिसत्त सत्तट्ठि भाग नखत्तो॥ चदोअ उगतीस बसट्ठिभागाय बत्तीस॥ ९०५॥

अर्थ—सतावीस अहोरात्री अने एक अहोरात्रीना शडसठ भाग करिये तेवा एकवीस भागे अधिक एक नक्षत्र मासथाय। अने मासना उगणत्रीस अहोरात्री तेना उपर एक अहोरात्रिना बासठभाग करिये एवा बत्रीस भागे अधिक एक चद्रमास थाय।

मूल—उउमासो तीसदिणो, आइच्चोवि तीस होइ अद्धच। अभिवद्धिओअ मासो चउवीस सएण छेएण॥९०६॥ अर्थ—ऋतुमास ते सपूण त्रीसदिवस प्रमाणनो जाणवो तथा आदित्यमास ते त्रीसदिवस अने उपर एक दिवसना साठिया त्रीसभाग करिये तेटला प्रमाणनो जाणवो। अने अभिवर्द्धितमास ते चउवीसे अधिक एकशतछेद एटले भाग तेज देखाडे छे॥ ९०६॥ मूल—भागाणिगवीससय, तीसाएगाहिया दिणाणव। एएजह निप्पत्ति, लहति समयाऊतहनेय॥ ९०७॥ अर्थ—ते पूर्वोक्त एकसोने चोवीसभाग एक अहोरात्रना करिये तेवा एकसो एकवीसभाग अने एकदिवसे अधिक त्रीस एटले एकत्रीस दिवस अर्थात् एकत्रीस दिवसने एक अहोरात्रीना एकसो चोवीसभाग माहेला

वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो । एकस्मिन् चन्द्रमासे अहो-
रात्रा एकोनत्रिंशद् भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागस्य अहो-
रात्रस्य एतच्चानन्तर चोक्त तत एव राशिस्त्रयोदशभिर्गुणितो
जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वा-
रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्रप्रमाणोऽभि-
वर्द्धितस वत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धित
स वत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते
इह युग चन्द्राऽभिवर्द्धितरूप पञ्चस वत्सरात्मक सूर्य्यस वत्सरा-
पेक्षया परिभाव्यमान मन्यूनातिरिक्तानि पञ्चवर्षाणि
भवन्ति सूर्य्यमासश्च सार्द्धत्रिंशदहोरात्रि प्रमाण चन्द्रमास
एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य ततो
गणितपरिभावनया सूर्य्यस वत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे
एकश्चान्द्रमासोऽधिको लभ्यते तथाच पूर्वाचार्य्यप्रदर्शितेय क-
रण गाथा ॥ चदस्स जो विसेसो आइच्चस्स य हविज्ज मासस्स
तीसइ गुणिओ सतो हवइ हु अहिमासओ एक्को ॥१॥ अस्याऽक्षर-
गमनिका आदित्यस्य आदित्य स वत्सर सम्बन्धिनो मासस्य
मध्यात् चन्द्रस्य चन्द्रमासस्य यो भवति विश्लेष इह विश्लेष
कृते सति यदवशिष्यते तदुपचारात् विश्लेष स त्रिंशता
गुण्यते गणित सन् भवत्येकोऽधिकमास तत्र सूर्य्यमासपरि-
माणात् सार्द्ध त्रिंशदहोरात्ररूपात् । चन्द्रमासपरिमाणमेकोन-
त्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येव रूप शो-
ध्यते तत स्थित पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यून तच्च
दिन त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभाग
त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशत् द्वाषष्टिभागा ते त्रिंशद्दिनेभ्य
शोध्यन्ते ततस्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिं-

देखिये उपरमे श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचद्र मूरिजीने अधिक मासकी गिनती मजूर करके तेरह चद्रनामसे अभिवर्द्धित सवत्सर कहा और एकयुगके बासट (६२) मासकी गिनती दिखाए अधिक मासके दिनोकी भी गिनती खुलासे लिखी है इस लिये वर्तमानमें श्रीतपगच्छवाले महाशयोंको अपने पूर्वजके प्रतिकुल होकर अधिकमासकी गिनती निषेध करनी नही चाहिये किन्तु अधिकमासकी गिनती अवश्य मेव मजूर करनी योग्य हैं।

औरसुनिये—श्रीमलयगिरिजी कृत श्रीचद्रप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ ९९ से १०० तक तत्पाठ—

युगसवत्सरो युगपूरक सवत्सर पचविध प्रज्ञप्त स्तद्यथा। चद्रश्चद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव उक्तच चदो चदो अभिवद्धितोय, चदो अभिवद्धितो चेव। पचसहिय जुगमिण, दिट्ठ ते लोकदसीहि ॥ १ ॥ पढम विइयाउ चदातइय अभिवद्धिय वियाणाहि। चदे चेव चउत्थ पनमसभिवद्धिय जाण ॥ २ ॥ तत्र द्वादशपूर्णमासी परावर्त्ता यावता कालेन परिसमाप्ति मुपयाति तावत्काल विशेषश्च द्रस वत्सर। उक्तच। पुन्निम परियट्टा पुण बारस मासे हवइ चदो। एकश्च पूर्णमासी परावर्त्त एकश्चद्रोमासस्तस्मिश्च चदे मासेऽहोरात्र परिमाण चितायामेकोनत्रिशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टि भाग अहोरात्रस्य एतत् द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतु पञ्चाशदधिकानि रात्रिंदिवाना द्वादशच द्वाषष्टि भागा रात्रिदिवसस्य एव परिमाणश्चाद्र सवत्सर तथा यस्मिन् स वत्सरे अधिकमास सम्भवेन त्रयोदश चद्रस्य मासा भवति सोऽभिवर्द्धित स वत्सर ॥ उक्तव ॥ तेरसय चद्रमासा

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसवत्सरेणमित्यादि। ता युगसवत्सरो युगपूरक सवत्सरपचविध प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चद्रश्चाद्रोऽभिवर्द्धितश्चाद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव ॥ उक्तच ॥ चदो चदो अभिवड्ढिओय चदोऽभिवड्ढिओ चेव पचसहिय युगमिण दिट्ठ ते लोक्क दसीहि ॥ १॥ पढम बिइयाउ चदा तइय अभिवड्ढिअ वियाणा हि चदेचेव चउत्थ पचममभिवड्ढिय जाण ॥२॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्तोया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयाति तावत् कालविशेषश्चन्द्र सवत्सर ॥ उक्तच ॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चदो ॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्च द्रमास स्तस्मि चाद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वापष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिगुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतु पञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवाना द्वादश च द्वापष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एव परिमाणश्चान्द्र सवत्सर। तथा यस्मिन् सवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसवत्सर ॥ उक्तव ॥ तेरसय चदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो ॥ एकस्मि चद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशश्च द्वापष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्त। तत एष राशिस्त्रयोदशभिगुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्राशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वापष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युग

शय द्वापष्टिभागादिनम्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति मूष्मसंवत्सर मरक त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च मूष्ममासा षष्टिसो भूयोऽपि मूर्य्यसम्बन्धर मरक त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तञ्च सट्टीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धमि बावीसे पव्वसए हवइ हु वीओ जुगतमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणा पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थ। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमास पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ सम्प्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिक्षु प्रतिवर्ष पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कृतौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्र संवत्सर एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि तत सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशति पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशति पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशति पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्त तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिक पर्वशत भवतीत्याख्यात सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसवत्सरेणमित्यादि। ता युगसवत्सरो युगपूरक सवत्सरपचविध प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चद्रश्चाद्रोऽभिवद्धितश्चाद्रोऽभिवद्धितश्चैव ॥ उक्तच ॥ चदो चदो अभिवढ्ढिओय चदोऽभिवढ्ढिओ चेव पचसहिय युगमिण दिट्ठ ते लोक्क दसीहि ॥ १॥ पढम विइयाउ चदा तइय अभिवढ्ढिअ वियाणा हि चदेचेव चउत्थ पचमममिवढ्ढिय जाण ॥२॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्ताया यावता कालेन परिसनाप्तिमुपयाति तावत् कालविशेषश्चन्द्र सवत्सर ॥ उक्तच ॥ पुण्णिम परियट्टा पुण वारसमासे हवइ चदो ॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चद्रमास स्तस्मि चाद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्ताया एकोनत्रिशदहोरात्रा द्वात्रिशच्च द्वापष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतु पञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवाना द्वादश च द्वापष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एव परिमाणश्चान्द्र सवत्सर। तथा यस्मिन् सवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवद्धितसवत्सर ॥ उक्तच ॥ तेरसय चदमासा वासो अभिवढ्ढिओय नायव्वो ॥ एकस्मि चद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिशद्भवन्ति द्वात्रिशच्च द्वापष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्त। तत एप राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वापष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवद्धितसवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवद्धितसवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युग

अथ द्वापष्टिभागादिनम्य एतावत्परिमाणचन्द्रमास इति भवति मृष्यग वत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिक- मासो युगे च मृष्यमासा षष्टितो भूयोऽपि मृष्यसम्वत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति । उक्तं च सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हयइ हु बीओ जुगतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पवणा पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः । एत स्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमास पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ सम्प्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षु प्रतिपद पर्वसंख्यामाह । ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कृतौ चन्द्रस्य संवत्स- रस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्र संवत्सर एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि तत सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशति पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्र- संवत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंव- त्सरस्य षड्विंशति पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि पञ्चमस्याऽभि- वर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशति पर्वाणि । कारणमनन्तर- मेवोक्त तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिक पर्वशत भवतीत्याख्यात सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति ।

क्रान्तेषु इत्यर्थ एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्ध प्रमाणे एको ऽधिको मासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते (पक्षशते) अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगस्य पर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसम्वत्सरे अधिकमास पञ्चमे चेति द्वौ युग अभिवर्द्धितसम्वत्सरौ सम्प्रति युगे सर्वसख्यया यावन्ति पर्व्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिक्षु प्रतिवर्ष पर्वसख्या माह ॥ तापढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालकृतौ चान्द्रस्य सम्वत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चाद्र सम्वत्सर एकै-कस्मिश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि तत सर्वसख्यया चान्द्रस वत्सरे चतुर्विंशति पर्वाणि भवन्ति द्वितीयस्यापि चाद्रसम्वत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धित सम्वत्सरस्य षड्-विंशति पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चाद्र सम्वत्सरस्य चतुर्विंशति पर्वाणि पञ्चमस्याभिवर्द्धितसम्व त्सरस्य षड्विंशति पर्वाणि कारणमनन्तरमेवोक्त तत एवमेव उक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वावरेणति पूर्वापरिगणितमिलनेन पञ्च-सायत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिक पर्वशत भवतीत्याख्यात सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति ।

देखिये उपरके दोनु पाठमें खुलासा पूर्वक प्रथम चन्द्र सवत्सर दूसरा चन्द्र सवत्सर तीसरा अभिवर्द्धित सवत्सर चौथा फिर चन्द्रसवत्सर और पाचमा फिर अभिवर्द्धित सवत्सर इन पाच सवत्सरो से एक युगकी स पूर्णता लोक-दर्शी केवली भगवान् ने देखी है कही हैं जिसमे एक चन्द्र मासका प्रमाण एकोनतीस स पूर्ण अहोरात्रि और एक अहो रात्रिके बासठ भाग करके बतीस भाग ग्रहण करनेसे २९ ।

चन्द्रासियर्टि तरूप पञ्चमयत्समरात्मक सूर्य्यमवत्सरापेक्षया परि भाव्यमानमन्यूनातिरिक्तानि पञ्चवर्षाणि भवन्ति सूर्य्यमासश्च सार्द्ध त्रिंशदहोरात्रिप्रमाण चन्द्रमास एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वा- त्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य ततो गणितप्रभावनया सूर्य्य- संवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकश्चन्द्रमासोऽधिको लभ्यते। स च यथा लभ्यते तथा पूर्वाचार्य्यप्रदर्शितेय करण गाथा ॥ चदम्म जो विसेमो आइच्चघसमइ हविज्ज मासस्स तीसइ गुणिओ मतो हयइ हु अहि मासगो एक्को॥१॥अस्याक्षरगमनिका आदित्यस्य आदित्यसंवत्सरसम्बन्धिनो मासस्य मध्यात् चद्रस्य चद्रमासस्य यो भवति विश्लेप इह विश्लेप कृते सति यदव- शिष्यते तदप्युपचाराद्विश्लेष स त्रिंशता गुणयते गुणित सन् भवत्येकोऽधिकमास तत्र सूर्य्यमासपरिमाणात् सार्द्ध त्रिंश- दहोरात्ररूप चद्रमासपरिमाणमेकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशश्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येत्येव रूप शोध्यते तत स्थित पश्चाद्दिन- मेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यून तच्च दिन त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभाग त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशदद्वाषष्टिभागास्ते त्रिंशद्दिनेभ्य शोध्यन्ते तत स्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशश्च द्वाषष्टि भागा दिनस्य एतावत्परिमाणश्चान्द्रोमास इति भवति सूर्य संवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्यमासा षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्यसम्वत्सर सत्क त्रिंशन्मासाति- क्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति । उक्तच सट्ठीए अइयाए हवइ हु अहि मासगो जुगद्ध मि बावीसे पव्वसए हवइहु बीओ जुग- तमि ॥१॥ अस्यापि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनतरोदित स्वरूपे पर्वणा पक्षाणा षष्टौ अतीतायां षष्टिसख्येषु पक्षेष्वति

पर्वकी व्याख्या सर्वतीर्थङ्कर महाराजो ने अर्थात् अनन्त तीर्थङ्करो ने कही है तैसे ही वृत्तिकार मलयगिरिजीने चन्द्र प्रज्ञप्तिकी तथा सूर्य्यप्रज्ञप्ति की वृत्तिमे खुलासे लिखी है और श्रीचद्रप्रज्ञप्ति वृत्तिमें पृष्ठ १११ से ११३ मे तथा १३४ मे और श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिमे पृष्ठ १२४ से १२८ तक नक्षत्र सवत्सर १ चन्द्र सवत्सर २ ऋतु सवत्सर ३ आदित्य (सूर्य्य) सम्वत्सर ४ और अभिवर्द्धित सवत्सर ५ इन पाच सवत्सरो का प्रमाण विस्तार पूर्वक वर्णन किया है जिसकी इच्छा होवें सो देखके नि सन्देह होना इस जगह विस्तार के कारण से सब पाठ नही लिखते है ।

और भी श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायागजी मूलसूत्र तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेव सूरिजी कृत वृत्ति और श्रीपार्श्वचन्द्रजी कृत भाषा सहित (श्रीमकसूदाबाद निवासी राय बहादुर धनपतसिहजीका जैनागम सग्रह के भाग चौथेमे) छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके ६१ मा और ६२ मा समवायाङ्गमे मासोकी गिनतीके सम्बन्ध वाला पृष्ठ ११९ और १२० का पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

पचसवच्छरियस्सण जुगस्सरिऊ मासेण मिज्जमाणस्स इगसठि उऊ मासापन्नता ।

अथैकषष्टिस्थानक तत्र पञ्चेत्यादि पञ्चभि स वत्सरैर्निर्वृतमिति पञ्चसावत्सरिक तस्यणमित्यलङ्कारे युगस्य कालमानविशेषस्य ऋतुमासेन चन्द्रादिमासेन मीयमानस्य एकषष्टि ऋतुमासा प्रज्ञप्ता इह चाय भावार्थ युग हि पञ्चसवत्सरा निष्पादयन्ति तद्यथा—चन्द्रश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चेति तत्र एकोनत्रिशदहोरात्राणि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा

३२।६२ अर्थात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे एक चन्द्रमास होता हैं इसको बारह चन्द्रमासों से बारह गुणा करने से एक चन्द्र सवत्सरमें तीनसे चौपन सपूर्ण अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके बारह भाग ग्रहण करनेसे ३५४।१२।६२ अर्थात् ३५४ दिन ११ घटीका और ३६ पल प्रमाणे एक चन्द्र सवत्सर होता हैं और जिस सवत्सरमें अधिकमास होता हैं उसीमें तेरह चन्द्रमास होने से अभिवर्द्धित नाम सवत्सर कहते हैं जिसका प्रमाण तीनसे तैयाशी अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके चौमालीस भाग ग्रहण करनेसे ३८३।४४।६२ अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित सवत्सर तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीका प्रमाण से होता हैं इस तरहके तीन चद्रसवत्सर और दोय अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पाच सवत्सरो से एक युग होता हैं अब एक युगके सर्वपर्वो की गिनती कहते हैं प्रथम चन्द्र सवत्सरके बारहमास जिसमें एक एक मासकी दोय दोय पर्वणि होनेसे बारहमासो की चौवीश (२४) पर्वणि प्रथम चन्द्र सवत्सरमे होती हैं तैसे ही दूसरा चन्द्र सवत्सरमें भी २४ पर्वणि होती हैं और तीसरा अभिवर्द्धित सवत्सरमें छवीश (२६) पवणि मासवृद्धि होने से तेरह-मासोकी होती है तथा चौथा चन्द्र सवत्सरमे २४ पवणि होती हैं और पाचमा अभिवर्द्धितसवत्सरमे २६ पर्वणि होती है सो कारण उपरके दोनु पाठमें कहा है इन सर्व पर्वो की गिनती मिलनेसे पाच सवत्सरोंकें एक युगकी एकसो चौवीश (१२४) पवणि अर्थात् पाक्षिक होती है यह १२४

पर्वकी व्याख्या सर्वतीर्थङ्कर महाराजो ने अर्थात् अनन्त तीर्थङ्करो ने कही है तैसे ही वृत्तिकार मलयगिरिजीने चन्द्र प्रज्ञप्तिकी तथा सूर्य्यप्रज्ञप्ति की वृत्तिमे खुलासे लिखी है और श्रीचद्रप्रज्ञप्ति वृत्तिमे पृष्ठ १११ से ११३ मे तथा १३४ मे और श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिमे पृष्ठ १२४ से १२८ तक नक्षत्र सवत्सर १ चन्द्र सवत्सर २ ऋतु सवत्सर ३ आदित्य (सूर्य्य) सम्वत्सर ४ और अभिवर्द्धित सवत्सर ५ इन पाच सवत्सरो का प्रमाण विस्तार पूर्वक वर्णन किया है जिसकी इच्छा होवें सो देखके नि सन्देह होना इस जगह विस्तार के कारण से सब पाठ नही लिखते है ।

और भी श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायागजी मूलसूत्र तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेव सूरिजी कृत वृत्ति और श्रीपार्श्वचन्द्रजी कृत भाषा सहित (श्रीमकसूदाबाद निवासी राय बहादुर धनपतसिहजीका जैनागम सग्रह के भाग चौथेमे) छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके ६१ मा और ६२ मा समवायाङ्गमे मासोकी गिनतीके सम्बन्ध वाला पृष्ठ ११९ और १२० का पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

पचसवच्छरियस्सण जुगस्सरिऊ मासेण मिज्जमाणस्स इगसठि उऊ मासापन्नता ।

अथैकषष्टिस्थानक तत्र पञ्चेत्यादि पञ्चभि स वत्सरैर्निर्वृतमिति पञ्चसावत्सरिक तस्यणमित्यलङ्कारे युगस्य कालमानविशेषस्य ऋतुमासेन चन्द्रादिमासेन मीयमानस्य एकषष्टि ऋतुमासा प्रज्ञप्ता इह चाय भावार्थ युग हि पञ्चसवत्सरा निष्पादयन्ति तद्यथा—चन्द्रश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चेति तत्र एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा

३२।६२ अथात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे एक चन्द्रमास होता हैं इसको बारह चान्द्रमासों से बारह गुणा करने से एक चन्द्र स वत्सरमें तीनसे चौपन स पूर्ण अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके बारह भाग ग्रहण करनेसे ३५४।१२।६२ अथात् ३५४ दिन ११ घटीका और ३६ पल प्रमाणें एक चन्द्र स वत्सर होता हैं और जिस स वत्सरमें अधिकमास होता हैं उसीमें तेरह चन्द्रमास होने से अभियद्धित नाम स वत्सर कहते हैं जिसका प्रमाण तीनसे तेंयाशी अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके चौमालीस भाग ग्रहण करनेसे ३८३।४४।६२ अथात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित स वत्सर तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीका प्रमाण से होता हैं इस तरहके तीन चद्रस वत्सर और दोय अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पाच सवत्सरो से एक युग होता हैं अब एक युगके सर्वपर्वोकी गिनती कहते है प्रथम चन्द्र सवत्सरके बारहमास जिसमें एक एक मासकी दोय दोय पर्वणि होनेसे बारहमासो की चौवीश (२४) पर्वणि प्रथम चन्द्र सवत्सरमें होती हैं तैसे ही दूसरा चन्द्र सवत्सरमे भी २४ पर्वणि होती है और तीसरा अभिवर्द्धित सवत्सरमें छवीश (२६) पर्वणि मासवृद्धि होने से तेरह-मासोकी होती हैं तथा चौथा चन्द्र स वत्सरमें २४ पर्वणि होती है और पाचमा अभिवर्द्धितसवत्सरमे २६ पर्वणि होती है सो कारण उपरके दोनु पाठमे कहा हैं इन सर्व पर्वोकी गिनती मिलनेसे पाच सवत्सरोकें एक युगकी एकसो चौवीश (१२४) पर्वणि अथात् पाक्षिक होती हैं यह १२४

४४ भाग ६२ ठिया तेहने वेगुणा कीजे ७६७ सातसो सडसठ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना २६ भाग ६२ ठिया थाय तेहने पहिले ३ चन्द्रवर्षना मानमाहि घातिये तिवारे १८३० अहोरात्रिथाय ऋतु मासनो मान ३० अहोरात्रिनु तेमाटे १८३० ने भागें हरिये तो १ युगने विषें ६१ ऋतुमास थाय।

पचसवच्छरिएण जुगे वावठि पुन्निमाउ वावठि अमावसाउ पन्नता

अथ द्विपष्ठिस्थानक पचेत्यादि तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसवत्सरा भवन्ति तेषु पट्त्रिशत् पौर्णमास्यो भवन्ति द्वौचाभिवर्द्धितसवत्सरौ भवतस्तत्र चाभिवर्द्धितसवत्सरस्त्रयोदशभिश्चद्रमासैर्भवतीति तयो पड्विशति पौर्णमास्य इत्येव द्विपष्ठिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्यापीति।

हिवे ६२ मो लिखे छे। पाचसवत्सरानो युगहोय तेह माहि ६२ पुनिम अने ६२ अमावस्या कही १ युगमाही ३ चन्द्रवर्ष होय तेह माहि मास ३६ बारेत्रिक ३६ पूर्णिमा अनें ३६ अमावस्या होय अने युगमाहि २ अभिवर्द्धित वर्ष होय तेहना मास २६ होय तेमाटे पूनिम २६ अमावस्या २६ सर्व पाच वर्षनामिलि ६२ पूर्णिमा अने ६२ अमावस्या होय॥

देखिये पञ्चमगणधर श्रीसुधर्मस्वामिजीने भी उपरके श्रीसमवायाङ्गजीके मूलसूत्र पाठमे और श्रीअभयदेवसूरिजी वृत्तिकारने भी अधिक मासकी गिनती बरोबर किवी और चद्रमासोसे चद्रसवत्सरका प्रमाण तथा अभिवर्द्धितमासोसे अभिवर्द्धितसवत्सरका प्रमाण दिनोकी गिनतीसें खुलासा करके एक युगके बासठ चद्रमासके हिसावसे ६२ पूर्णिमासी तथा ६२ अमावस्या और चद्रमासकी गिनतीके प्रमाणसे

अहोरात्रस्येत्येव प्रमाणेन २९ । ३२ । ६२ । कृष्णप्रतिपदा-रभ्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परि-माणचन्द्रसंवत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यष्टौ चतु पञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३५४ । १२ । ६२ । तथा एकत्रिंशदहा एकविंशत्युत्तरं च शत चतु-र्विंशतीत्युत्तरशतभागाना दिवसस्येत्येव प्रमाणोऽभिवर्द्धित-मास इति एतेन ३१ । १२१ । १२४ । च मासेन द्वादशमास प्रमोणोऽभिवर्द्धित संवत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यष्टा त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३८३ । ४४ । ६२ । तदेव त्रयाणा चन्द्रसंवत्सराणा द्वयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोरेकी करणे जातानि दिनाना त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणा १८३० ऋतु-मासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्टि ऋतुमासा इति ।

हिवे ६१ मो लिखे छे । चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पाचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतु-मासे करी मीयमानछे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवार १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना

४४ भाग ६२ ठिया तेहने वेगुणा कीजे ७६७ सातसो सडसठ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना २६ भाग ६२ ठिया थाय तेहने पहिले ३ चन्द्रवर्षना मानमाहि घातिये तिवारे १८३० अहोरात्रिथाय ऋतु मासनो मान ३० अहोरात्रिनु तेनाटे १८३० ने भागे हरिये तो १ युगने विर्षे ६१ ऋतुमास थाय ।

पचसवच्छरिएण जुगे वावठि पुन्निमाउ वावठि अमावसाउ पन्नता

अथ द्विपष्ठिस्यानक पचेत्यादि तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसवत्सरा भवन्ति तेपु पट्त्रिशत् पौर्णमास्यो भवन्ति द्वौचाभिवर्द्धितसवत्सरौ भवतस्तत्र चाभिवर्द्धितसवत्सरस्त्रयोदशभिश्चद्रमासैर्भवतीति तयो पड्विशति पौर्णमास्य इत्येव द्विपष्ठिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्यापीति ।

हिवे ६२ मो लिखे छे । पाचसवत्सरानो युगहोय तेह माहि ६२ पुनिम अने ६२ अमावस्या कही १ युगमाही ३ चन्द्रवर्ष होय तेह माहि मास ३६ बारेत्रिक ३६ पूर्णिमा अनें ३६ अमावस्या होय अने युगमाहि २ अभिवर्द्धित वप होय तेहना माम २६ होय तेनाटे पूनिम २६ अमावस्या २६ सर्व पाच वर्षनामिलि ६२ पूर्णिमा अने ६२ अमावस्या होय ॥

देखिये पञ्चमगणधर श्रीसुधर्मस्वामिजीने भी उपरके श्रीसमवायाङ्गजीके मूलसूत्र पाठमे और श्रीअभयदेवसूरिजी वृत्तिकारने भी अधिक मासकी गिनती वरोवर किवी और चद्रमासोसे चद्रसवत्सरका प्रमाण तथा अभिवर्द्धितमासोसें अभिवर्द्धितसवत्सरका प्रमाण दिनोकी गिनतीसें खुलासा करके एक युगके वासठ चद्रमासके हिसावसे ६२ पूर्णिमासी तथा ६२ अमावस्या और चद्रमासकी गिनतीके प्रमाणसे

अहोरात्रस्येत्येव प्रमाणेन २९।३२।६२। कृष्णप्रतिपदा-रभ्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परि-माणचन्द्रसंवत्सरस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यष्टा चतु पञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्ठिभागा दिवसस्य ३५४। १२।६२। तथा एकत्रिंशदहा एकविंशत्युत्तर च शत चतु-र्विंशतीत्युत्तरशतभागाना दिवसस्येत्येव प्रमाणोऽभिवर्द्धित-मास इति एतेन ३१।१२१।१२४। च मासेन द्वादशमास प्रमोणोऽभिवर्द्धित स वत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यष्टा त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्ठिभागा दिवसस्य ३८३।४४।६२। तदेव त्रयाणा चन्द्रसंवत्सराणा द्वयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोरेकीकरणे जातानि दिनाना त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणा १८३० ऋतु-मासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्ठि ऋतुमासा इति।

हिवे ६१ मो लिखे छे। चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पाचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतु-मासे करी मीयमानछे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने१ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवार १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना

४४ भाग ६२ ठिया तेहने वेगुणा कीजे ७६७ सातसो सडसठ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना २६ भाग ६२ ठिया थाय तेहने पहिले ३ चन्द्रवर्षना मानमाहि घातिये तिवारे १८३० अहोरात्रिथाय ऋतु मासनो मान ३० अहोरात्रिनु तेमाटे १८३० ने भागे हरिये तो १ युगने विषें ६१ ऋतुमास थाय।

पचसवच्छरिएण जुगे वावठि पुन्निमाउ वावठि अमावसाउ पन्नता

अथ द्विपष्ठिस्यामक पचेत्यादि तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसवत्सरा भवन्ति तेषु पट्त्रिशत् पौर्णमास्यो भवन्ति द्वौचाभिवर्द्धितसवत्सरौ भवतस्तत्र चाभिवर्द्धितसवत्सरस्त्रयोदशभिश्चद्रमासैर्भवतीति तयो पड्विशति पौर्णमास्य इत्येव द्विपष्ठिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्यापीति ।

हिवे ६२ मो लिखे छे। पाचसवत्सरानो युगहोय तेह माहि ६२ पुनिम अने ६२ अमावस्या कही १ युगमाही ३ चन्द्रवर्ष होय तेहमाहि मास ३६ वारेत्रिक ३६ पूर्णिमा अनें ३६ अमावस्या होय अने युगमाहि २ अभिवर्द्धित वर्ष होय तेहना मास २६ होय तेमाटे पूनिम २६ अमावस्या २६ सर्व पाच वर्षनामिलि ६२ पूर्णिमा अने ६२ अमावस्या होय ॥

देखिये पञ्चमगणधर श्रीसुधर्मस्वामिजीने भी उपरके श्रीसमवायाङ्गजीके मूलसूत्र पाठमे और श्रीअभयदेवसूरिजी वृत्तिकारने भी अधिक मासकी गिनती वरोवर किवी और चद्रमासोसें चद्रसवत्सरका प्रमाण तथा अभिवर्द्धितमासोसें अभिवर्द्धितसवत्सरका प्रमाण दिनोकी गिनतीसे खुलासा करके एक युगके वासठ चद्रमासके हिसावसे ६२ पूर्णिमासी तथा ६२ अमावस्या और चद्रमासकी गिनतीके प्रमाणसे

अहोरात्रस्येत्येव प्रमाणेन २९।३२।६२। कृष्णप्रतिपदा-रम्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परि-माणचन्द्रसंवत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यष्टा चतु पञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्ठिभागा दिवसस्य ३५४। १२।६२। तथा एकत्रिंशदहूा एकविंशत्युत्तर च शत चतु-र्विंशतीत्युत्तरशतभागाना दिवसस्येत्येव प्रमाणोऽभिवर्द्धित-मास इति एतेन ३१।१२१।१२४। च मासेन द्वादशमास प्रमाणोऽभिवर्द्धित संवत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यष्टा त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३८३।४४।६२। तदेव त्रयाणा चन्द्रसंवत्सराणा द्वयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोरेकी करणे जातानि दिनाना त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणा १८३० ऋतु-मासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्ठि ऋतुमासा इति।

हिवे ६१ मो लिखे छे। चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पाचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतु मासे करी मीयमानछे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने१ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवार १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना

पञ्चदशनक्षत्राणि त्रिशन्मुहूर्त्तानीति जातानि सर्वसंख्यया मुहूर्त्तानामष्टाशतानि दशोत्तराणि एतेषां च त्रिशन्मुहूर्त्तैरहोरात्रमिति कृत्वा त्रिशता भागो ह्रियते लब्धानि सप्तविंशति रहोरात्राणि अभिजिद्योगश्चैकविंशति सप्तषष्टीभागा इति तैरप्यधिकानि सप्तविंशतिरहोरात्राणि सकल नक्षत्रमण्डलोपभोगकालो नक्षत्रमासो उच्यते १ चन्द्रे भवश्चाद्र कृष्णपक्षप्रतिपदारभ्य यावत् पौर्णमासी परिसमाप्तिस्तावत् कालमान स च एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य २ कर्म्मनास ऋतुमास इत्येकोऽर्थे स त्रिंशद्दिवसप्रमाण ३ आदित्यमासस्त्रिंशदहोरात्राणि रात्रि दिवसस्य चार्द्धं दक्षिणायनस्यो उत्तरायणस्य वा षड्भागमान इत्यर्थ ४ अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचन्द्रमास प्रमाण संवत्सर पर तत् द्वादशभागप्रमाणो मासोऽपि अवयवे समुदायोपचारादभिवर्द्धित स चैकत्रिंशदहोरात्राणि चतुर्विंशत्युत्तरशतभागी कृतस्य चाहोरात्रस्य त्रिकहीन चतुर्विंशतिभागाना भवति एकविंशमिति भाव एतेषां चानयनाय इयं करण गाथा॥ जुगमासेहि उभइए, जगमिलद्ध हविज्ज नायव्व॥ मासाण पचन्ह, विषय राइदियपमाण॥१॥ इह सूर्य्यस्य दक्षिण मुत्तर वा अयन त्र्यशीत्यधिकदिनशतात्मक द्वि अयने वर्षमिति कृत्वा वर्षे षट्षष्त्यधिकानि त्रिणि शतानि भवन्ति पञ्चसंवत्सराद्युगमिति कृत्वा तानि पञ्चभिर्गुण्यन्ते जातानि अष्टादशशतानि त्रिंशद्दिवसाना एतेषां नक्षत्रमासदिवसानेनाय सप्तषष्टियुगे नक्षत्रमासा इति सप्तषष्ट्या भागा ह्रियते लब्धा सप्तविंशतिरहोरात्रा एकविंशतिरहोरात्रस्य सप्तषष्टीभागा १ तथा चन्द्रमास दिवसानयनाय द्वाषष्टियुगे चन्द्रमासा इति

६२ चन्द्र मासके १७३० दिन एक युगकी पूर्ति करनेवाले दिखाये हैं तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले मेरे धर्म्मबन्धु अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं जिनोको विचार करना चाहिये ॥

और भी श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्य श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्ति सभाष्यके भंडारवालीके दूसरे उद्देशे दूसरे खण्डमें—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से ६ प्रकारके मासोकी व्याख्या किवी हैं जिसमें से इस जगह एक काल मासकी व्याख्या वर्तमानिक श्रीतपगच्छवालोको अपनें पूर्वजका वचन याद करानेके वास्ते और भव्य जीवोको निःसन्देह होनेके लिये पृष्ठ १९८ वें का पाठ दिखाते हैं तथाच तत्पाठ—

कालमास श्रावणादि यद्वा कालमासो नक्षत्रादिक पञ्चविधस्तद्यथा नक्षत्रमास चंद्रमास ऋतुमास आदित्यमास अभिवर्द्धितमास अमीषामेव परिमाणमाह गाथा नक्खत्तो खलु मासो, सत्तावीस हवंति अहोरत्ता ॥ भागाय एक्कवीस, सत्तट्ठि कएण छेएण ॥१॥ अउण त्तीस चंदो, बिसट्ठि भागाय हुंति बत्तीसा ॥ कम्मो तीसइ दिवसो, तीसा अध्धच आइच्चो ॥२॥ अभिवढ्ढि इक्कतीसा चउवीस भागसयवडतिगहीण भावे मूलाइभ उपगय पुण कम्म मासेण ॥३॥ नक्षत्रेषु भवो नक्षत्र स खलु मास सप्तविंशत्यहोरात्राणि सप्तषष्ठी कृतेन छेदेन छिन्नस्याऽहोरात्रस्यैकविंशति सप्तषष्टीभागा तथाहि चंद्रस्य भरण्याद्राश्लेषा स्वाति ज्येष्टा शतभिषग् नामानि षट्नक्षत्राणि पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यानि तिस्त्र उत्तरा पुनर्वसु रोहिणी विशाखा चेति षट् पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्त भोग्यानि शेषाणि तु

पञ्चदशनक्षत्राणि त्रिंशन्मुहूर्त्तानीति जातानि सवसरत्यया मुहूर्त्तानामष्टाशतानि दशोत्तराणि एतेषां च त्रिंशन्मुहूर्त्तैरहोरात्रमिति कृत्वा त्रिंशता भागो ह्रियते लब्धानि सप्तविंशति रहोरात्राणि अभिजिद्भोगश्चैकविंशति सप्तषष्टीभागा इति तैरप्यधिकानि सप्तविंशतिरहोरात्राणि सकल नक्षत्रमण्डलोपभोगकालो नक्षत्रमासो उच्यते १ चद्रे भवश्चाद्र कृष्णपक्षप्रतिपदारभ्य यावत् पौर्णमासी परिसमाप्तिस्तावत् कालमान स च एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य २ कर्म्म नास ऋतुमास इत्येकोऽर्थे स त्रिंशद्दिवसप्रमाण ३ आदित्यमासस्त्रिंशदहोरात्राणि रात्रि दिवसस्य चार्द्ध दक्षिणायनस्यो उत्तरायणस्य वा षट्भागमान इत्यर्थ ४ अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचद्रमास प्रमाण सवत्सर पर तत् द्वादशभागप्रमाणो मासोऽपि अवयवे समुदायोपचारादभिवर्द्धित स चैकत्रिंशदहोरात्राणि चतुर्विंशत्युत्तरशतभागी कृतस्य चाहोरात्रस्स त्रिकहीन चतुर्विंशतिभागाना भवति एकविंशमिति भाव एतेषां चानयनाय इय करण गाथा॥ जुगमासेहि उभइए, जगमिलद्ध हविज्ज नायव्व॥ मासाण पधन्ह, विपय राइदियपमाण॥१॥ इह सूर्य्यस्य दक्षिण मुत्तर वा अयन त्र्यशीत्यधिकदिनशतात्मक द्वि अयने वर्षमिति कृत्वा वर्षे षट्षष्ट्यधिकानि त्रिणि शतानि भवन्ति पञ्चसत्सराद्युगमिति कृत्वा तानि पञ्चभिर्गुण्यन्ते जातानि अष्टादशशतानि त्रिंशद्दिवसाना एतेषां नक्षत्रमासदिवसानेनाय सप्तषष्टिर्युगे नक्षत्रमासा इति सप्तषष्ट्या भागा ह्रियते लब्धा सप्तविंशतिरहोरात्रा एकविंशतिरहोरात्रस्य सप्तषष्टीभागा १ तथा चद्रमास दिवसानयनाय द्वाषष्टिर्युगे चद्रमासा इति

६२ चन्द्र मासके १८३० दिन एक युगकी पूर्ति करनेवाले दिखाये है तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले मेरे धर्मबन्धु अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं जिन्होंको विचार करना चाहिये ॥

और भी श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्यजी श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्ति सभाष्यतके भण्डारवालीके दूसरे उद्देशे दूसरे खण्डमें—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से ६ प्रकारके मासोंकी व्याख्या किवी हैं जिसमें से इस जगह एक काल मासकी व्याख्या वर्तमानिक श्रीतपगच्छवालोंको अपनें पूर्वजका वचन याद करानेके वास्ते और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये पृष्ठ १९८ वें का पाठ दिखाते है तथाच तत्पाठ—

कालमास श्रावणादि यद्वा कालमासो नक्षत्रादिक पञ्चविधस्तद्यथा नक्षत्रमास चद्रमास ऋतुमास आदित्यमास अभिवर्द्धितमास अमीषामेव परिमाणमाह गाथा नक्खत्तो खलु मासो, सत्तावीस हवंति अहोरत्ता ॥ भागाय एक्कवीस, सत्तट्ठि कएण छेएण ॥१॥ अउण त्तीस चदो, विसट्ठि भागाय हुंति बत्तीसा॥ कम्मो तीसइ दिवसो, तीसा अध्धच आइच्चो ॥२॥ अभिवड्ढि इक्कतीसा चउवीस भाग सयवडतिगहीण भावे मूलाइक्क उवगय पुण कम्म मासेण ॥३॥ नक्षत्रेषु भवो नक्षत्र स खलु मास सप्तविंशत्यहोरात्राणि सप्तषष्ठी कृतेन छेदेन छिन्नस्याऽहोरात्रस्यैकविंशति सप्तषष्टीभागा तथाहि चद्रस्य भरण्यार्द्राश्लेषा स्वाति ज्येष्टा शतभिषग् नामानि षट्नक्षत्राणि पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यानि तिस्र उत्तरा पुनर्वसु रोहिणी विशाखा चेति षट् पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्त भोग्यानि शेषाणि तु

में लिखीहै सोही तेरह चद्रमास के अभि वर्द्धितसवत्सर का प्रमाणको बारह भाग में करनेसे एक भाग में ३१।१२४।१२१ होता है सोही प्रमाण एक अभिवर्द्धित मासका जानना, याने ३१ अहोरात्रि और एक अहोरात्रि के १२४ भाग करके उपरके तीन भाग छोड़कर वाकीके १२१ भाग ग्रहण करना अर्थात ३१ दिन तथा ५८ घटीका और ३३ पलसे दश अक्षर उच्चारणमें न्यून इतने प्रमाणका एक अभिवर्द्धित मास होताहै सो अवयवोके उच्चारणसे अभिवर्द्धित मास कहतेहै अर्थात् जिस सवत्सरमें जब अधिक मास होताहै तब तेरह चद्रमास प्रमाणे अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहै उसी के तेरहवा चद्रमासके प्रमाणको बारह भागोमें करके बारह चद्रमासोंके साथ मिलानेसे बारह चद्रमासोंमें तेरहवा अधिकमासके प्रमाणों (अवयवों) की वृद्धिहुई इसलिये अवयवोंके उच्चारणसे मासका नाम अभिवर्द्धित कहाजाता है एसे बारह अभिवर्द्धित मासोंसे जो हुवा सवत्सरका प्रमाण उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहैं परतु अधिक मासके कारणसे तेरह चद्रमासोंसे अभिवर्द्धित सवत्सर होताहै सो गिनतीके प्रमाणमेंतो तेरहाही मास गिनेजावेंगे सोतो श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीचद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति वृत्ति श्रीसमवायागजीसूत्रवृत्ति के जो पाठ उपरमे छपगये हैं उनपाठोंसे खुलासा दिखता है ।

और पाचाही प्रकारके मासोके निज निज मास प्रमाण से निज निज सवत्सरका प्रमाण तथा निज निज मासके और निज निज सवत्सरके प्रमाणसे पाच वर्षोंसे, एक युगके १८३० दिनोकी गिनती का हिसाब सबधी आगे यत्र (कोष्टक) लिखनेमें आवेगे जिससे पाठक वर्गको सरलता पूर्वक जलदी अच्छी तरहसे समजमें आसकेगा ।

द्वापष्ट्या तस्यैव युगदिन राशेर्भागा ह्रियते लब्धाहि एकोन-
त्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वाषष्टिभागा एव युगदिवसाना-
मेवैक्यषष्टियुगे कर्म्ममासा इत्येकषष्ट्या भाग ह्रियते लब्धानि
कर्म्ममासस्य त्रिंशत् दिनानि ३ तथा युगे षष्टि सूर्य्यमासा
इति षष्ट्या युगदिनाना भाग ह्रियते लब्धा सूर्य्यमासदि-
वसास्त्रिंशदहोरात्रस्यार्द्ध च ४ तथा युगदिवसा एव अभि-
वर्द्धितमासा दिवसानयनाय त्रयोदशगुणा क्रियन्ते जा-
तानि त्रयोविंशतिसहस्राणि सप्तशतानि नवत्यधिकानि
तेषा चतुश्चत्वारिंशते सप्तभि शतैभार्गो ह्रियते लब्धा एक-
त्रिंशद्दिवसा शेषावयवतिष्ठन्ते षट्विंशत्यधिकानि सप्तशतानि
चतुश्चत्वारिंशत्सप्तशतभागाना तत उभयेषामप्यङ्काना षड्-
भिरपवर्तना क्रियते जातामेकविंशशत चतुर्विंशत्युत्तरशत-
भागानामिति उक्ता पञ्चापि कालमासा ॥ १ ॥

देखिये उपरके पाठमें श्रीतपगच्छके मुख्याचार्य्यजी
श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी अपने (स्वय) नक्षत्रमास १ चद्रमास २
ऋतुमास ३ आदित्यमास ४ और अभिवर्द्धितमास ५ इन
पाचमासोकी व्याख्या करते पाचमा अभिवर्द्धित मासकी
और अभिवर्द्धित सवत्सरकी विशेष व्याख्या खुलासे कर
दिखाइ है कि—

अभिवर्द्धितनाम सवत्सर मुख्य तेरह चद्रमासोसें होता है
एक चद्रमासका प्रमाण गुनतीस दिन बत्रीस बासटीया भाग
अथात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे होता है
जिसको तेरह चद्रमासोसे तेरह गुना करने से दिन ३८३।
४४। ६२ भाग अथात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल
प्रमाणे एक अभिवर्द्धित सवत्सर होता है चद्रमासकी व्याख्या

में लिखीहै सोही तेरह चद्रमास के अभि वर्द्धितसवत्सर का प्रमाणको वारह भाग में करनेसे एक भाग में ३१।१६४।१२१ होता है सोही प्रमाण एक अभिवर्द्धित मासका जानना, याने ३१ अहोरात्रि और एक अहोरात्रि के १२४ भाग करके उपरके तीन भाग छोडकर वाकीके १२१ भाग ग्रहण करना अर्थात ३१ दिन तथा ५८ घटीका और ३३ पलसे दश अक्षर उच्चारणमें न्यून इतने प्रमाणका एक अभिवर्द्धित मास होताहै सो अवयवोके उच्चारणसे अभिवर्द्धित मास कहतेहै अर्थात् जिस सवत्सरमें जब अधिक मास होताहै तब तेरह चद्रमास प्रमाणे अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहै उसी के तेरहवा चद्रमासके प्रमाणको बारह भागोमें करके वारह चद्रमासोंके साथ मिलानेसे वारह चद्रमासोंमें तेरहवा अधिकमासके प्रमाणों (अवयवों) की वृद्धिहुई इसलिये अवयवोंके उच्चारणसे मासका नाम अभिवर्द्धित कहाजाता है एसे बारह अभिवर्द्धित मासोंसे जो हुवा सवत्सरका प्रमाण उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहैं परतु अधिक मासके कारणसे तेरह चद्रमासोंसे अभिवर्द्धित सवत्सर होताहै सो गिनतीके प्रमाणमेंतो तेरहाही मास गिनेजावेंगे सोते श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीचद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति वृत्ति श्रीसमवायागजीसूत्रवृत्ति के जो पाठ उपरमें छपगये हैं उनपाठोंसे खुलासा दिखता है ।

और पाचाही प्रकारके मासोके निज निज मास प्रमाण से निज निज सवत्सरका प्रमाण तथा निज निज मासके और निज निज सवत्सरके प्रमाणसे पाच वर्षोंसे एक युगके १८३० दिनोकी गिनती का हिसाव सवधी आगे यत्र (कोष्टक) लिखनेमें आवेगे जिससे पाठक वर्गको सरलता पूर्वक जल्दी अच्छी तरहसे समजमें आसकेगा ।

द्वापट्या तस्यैव युगदिन रात्रेभागा ह्रियते लब्धानि एकोन-त्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वापष्टिभागा एव युगदिवसामा-मेवैकषष्टियुगे कर्म्मगासा इत्येकषष्ट्या भाग ह्रियते लब्धानि कर्म्ममासस्य त्रिंशत् दिनानि ३ तथा युगे षष्टि सूर्य्यमासा इति षष्ट्या युगदिनाना भाग ह्रियते लब्धा सूर्य्यमासदि-वसास्त्रिंशदहोरात्रस्याद्द ४ तथा युगदिवसा एव अभि वर्द्धितमासा दिवसानयनाय त्रयोदशगुणा क्रियन्ते जा तानि त्रयोविंशतिसहस्राणि सप्तशतानि नवत्यधिकानि तेषा चतुश्चत्वारिंशते सप्तभि शतैभागो ह्रियते लब्धा एक त्रिंशद्दिवसा शेषाश्चवतिष्ठन्ते षट्विंशत्यधिकानि सप्तशतानि चतुश्चत्वारिंशत्सप्तशतभागाना तत उभयेषामप्यङ्काना षड्-भिरपवर्तना क्रियते जातामेकविंशशत चतुर्विंशत्युत्तरशत-भागानामिति उक्ता पञ्चापि कालमासा ॥ १ ॥

देखिये उपरके पाठमे श्रीतपगच्छके मुख्याचार्य्यजी श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी अपने (स्वय) नक्षत्रमास १ चद्रमास २ ऋतुमास ३ आदित्यमास ४ और अभिवर्द्धितमास ५ इन पाचमासोकी व्याख्या करते पाचमा अभिवर्धित मासकी और अभिवर्द्धित सवत्सरकी विशेष व्याख्या खुलासे कर दिखाइ है कि—

अभिवर्द्धितनाम सवत्सर मुख्य तेरह चद्रमासोसें होता है एक चद्रमासका प्रमाण गुनतीस दिन बत्रीस बासटीया भाग अर्थात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे होता है जिसको तेरह चद्रमासोसे तेरह गुना करने से दिन ३८३। ४४। ६२ भाग अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित सवत्सर होता है चद्रमासकी व्याख्या

में लिखीहै सोही तेरह चद्रमास के अभि वर्द्धितसवत्सर का प्रमाणको बारह भाग में करनेसे एक भाग में ३१।१२४।१२१ होता है सोही प्रमाण एक अभिवर्द्धित मासका जानना, याने ३१ अहोरात्रि और एक अहोरात्रि के १२४ भाग करके उपरके तीन भाग छोडकर बाकीके १२१ भाग ग्रहण करना अर्थात ३१ दिन तथा ५८ घटीका और ३३ पलसे दश अक्षर उच्चारणमें न्यून इतने प्रमाणका एक अभिवर्द्धित मास होताहै सो अवयवोके उच्चारणसे अभिवर्द्धित मास कहतेहै अर्थात् जिस सवत्सरमें जब अधिक मास होताहै तब तेरह चद्रमास प्रमाणे अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहै उसी के तेरहवा चद्रमासके प्रमाणको बारह भागोंमें करके बारह चद्रमासोंके साथ मिलानेसे बारह चद्रमासोंमें तेरहवा अधिकमासके प्रमाणों (अवयवों) की वृद्धिहुई इसलिये अवयवोंके उच्चारणसे मासका नाम अभिवर्द्धित कहाजाता है एसे बारह अभिवर्द्धित मासोंसे जो हुवा सवत्सरका प्रमाण उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहतेहैं परतु अधिक मासके कारणसे तेरह चद्रमासोंसे अभिवर्द्धित सवत्सर होताहै सो गिनतीके प्रमाणमेंतो तेरहाही मास गिनेजावेंगे सोतो श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीचद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति वृत्ति श्रीसमवायागजीसूत्रवृत्ति के जो पाठ उपरमे छपगये हैं उनपाठोंसे खुलासा दिखता है।

और पांचाही प्रकारके मासोके निज निज मास प्रमाण से निज निज सवत्सरका प्रमाण तथा निज निज मासके और निज निज सवत्सरके प्रमाणसे पाच वर्षोंसे एक युगके १८३० दिनोकी गिनती का हिसाब सबधी आगे यत्र (कोष्टक) लिखनेमें आवेगे जिससे पाठक वर्गको सरलता पूवक जल्दी अच्छी तरहसे समजमें आसकेगा।

और भी अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने सम्बन्धी सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि वृत्ति और प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारण से यहां नहीं लिखताहू तथापि विवेकी सज्जन उपरोक्त पाठार्थोंसे भी स्वयं समझ जावेंगे।

अब इस जगह जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणा से तथा जानके वर्तानेसे संसार वृद्धिका भय रखनेवाले और जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जनपुरुषोंको मैं निवेदन करता हुं कि देखो उपरमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिवृत्तिमें तथा श्रीसूर्य प्रज्ञप्तिवृत्तिमें सर्व (अनन्त) श्रीतीर्थंङ्कर महाराजोंके कथनानुसार श्रीमलयगिरिजीने। तथा श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराज श्रीसुधमस्वामीजीने और श्रीसमवायाङ्ग जी सूत्रकी वृत्तिमें श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजीने और श्रीप्रवचनसारोद्धारमें श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचन्द्र सूरिजीने। तथा श्रीबृहत्कल्पवृत्तिमें श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्ति सूरिजीने इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर किया हैं जैसे बारे मासोंकी गिनतीमें कोई न्यूनाधिक नहीं हैं तैसे ही अधिकमास होनेसे तेरहमासोंकी गिनतीमें भी कोई न्यूनाधिक नहीं हैं किन्तु सबी होबरो बर हैं सो उपरोक्त पाठार्थोंसे प्रत्यक्ष दिखता है सो विशेष करके अधिक मासकोभी मुहूर्त्तोंमें, दिनोंमें, पक्षो में, मासोंमें वर्षोंमें, गिनकर पांचसंवत्सरो के एकयुगकी गिनती के दिनोंका, पक्षोंका, मासोंका, वर्षोंका प्रमाण श्रीअनन्ततीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्यों ने और श्री खरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिकके पूर्वजोंने कहा है सो

आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक पुरुषोको प्रमाण करने योग्य है।

इस ससारको अनन्ते काल हो गये है जिसमे अनन्त चौवीशी व्यतित हो गइ चन्द्र सूर्य्यादिके विमान भी अनन्त कालसे सरू हैं इस लिये जैनज्योतिप भी अनन्ते कालसे प्रचलित है जिसमे अधिक मास भी अनन्ते कालसें चला आता है—मास वृद्धिके अभावसे वारह मासके सवत्सरका नाम चन्द्र सवत्सर है और मासवृद्धि होनेसे तेरहमासकी गिनतीके कारणसे सवत्सरका नाम अभिवर्द्धित सवत्सर है तीन चन्द्रसवत्सर और दोय अभिवर्द्धित सवत्सर इन पाच सवत्सरोसे एकयुग होता है एकयुगमे पाच सवत्सरोके बासठ (६२) मासोकी बासठ (६२) पूर्णिमासी और बासठ (६२) अमावस्याके एकसो चौवीश (१२४) पर्वणि अर्थात् पाक्षिक अनन्त तीर्थङ्करादिकोनें कही है जिससे अनन्तकाल हुए अधिकमासकी गिनती दिन, पक्ष, मास, वर्षादिमे चली आती है किसीने भी अधिकमासकी गिनती का एकदिन मात्र भी निषेध नही किया है तथपि वडे आफसोस की वात है कि, वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास की गिनती वडे जोरके साथ वारवार निषेध करके एकमासके ३० दिनोकी गिनती एकदम छोड देते है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर महाराजोकी श्रीगणधर महाराजोकी श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्योजी की तथा इनलोगोके खास पूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविकाचार्य्योजी की आज्ञा भङ्गका भय नही करते है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योजी की आज्ञा मुजब वर्तमानमे श्रीखरतरगच्छादिवाले अधिक-

और भी अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने सम्बन्धी सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि वृत्ति और प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहां नहीं लिखताहू तथापि विवेकी सज्जन उपरोक्त पाठोंसे भी स्वय समझ जावेंगे ।

अब इस जगह जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणा से तथा बातने बर्तानेसे संसार वृद्धिका भय रखनेवाले और जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जनपुरुषोंको मैं निवेदन करता हु कि देखो उपरमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिवृत्तिमें तथा श्रीसूर्य्य प्रज्ञप्तिवृत्तिमें सर्व (अनन्त) श्रीतीर्थंकर महाराजोंके कथनानुसार श्रीमलयगिरिजीने। तथा श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामीजीने और श्रीसमवायाङ्ग जी सूत्रकी वृत्तिमें श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजीने और श्रीप्रवचनसारोद्धारमें श्रीतपगच्छके पूज्य श्रीनेमिचन्द्र सूरिजीने । तथा श्रीवृहत्कल्पवृत्तिमें श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर किया हैं जैसे बारे मासोकी गिनतीमें कोई न्यूनाधिक नहीं हैं तैसे ही अधिकमास होनेसे तेरहमासोंकी गिनतीमें भी कोई न्यूनाधिक नहीं हैं किन्तु सबी होबरोबर हैं सो उपरोक्त पाठोंसे प्रत्यक्ष दिखता है सो विशेष करके अधिक मासकोभी मुहूर्त्तोंमें, दिनोंमें, पक्षो में, मासोमें वर्षोंमें, गिनकर पाचसवत्सरोके एकयुगकी गिनती के दिनोका, पक्षोका, मासोका, वर्षोंका प्रमाण श्रीअनन्ततीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्यो ने और श्री खरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिकके पूर्वजोने कहा है सो

आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य है ।

इस संसारको अनन्ते काल हो गये है जिसमे अनन्त चौवीशी व्यतित हो गई चन्द्र सूर्य्यादिके विमान भी अनन्त कालसे सरू हैं इस लिये जैनज्योतिष भी अनन्ते कालसे प्रचलित है जिसमें अधिक मास भी अनन्ते कालसें चला आता है—मास वृद्धिके अभावसे बारह मासके संवत्सरका नाम चन्द्र संवत्सर है और मासवृद्धि होनेसे तेरहमासकी गिनतीके कारणसे संवत्सरका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर है तीन चन्द्रसंवत्सर और दोय अभिवर्द्धित संवत्सर इन पाच संवत्सरोंसे एकयुग होता है एकयुगमें पाच संवत्सरोके वासठ (६२) मासोंकी वासठ (६२) पूर्णिमासी और वासठ (६२) अमावस्याके एकसो चौवीश (१२४) पर्वणि अर्थात् पाक्षिक अनन्त तीर्थङ्करादिकोनें कही हैं जिससे अनन्तकाल हुए अधिकमासकी गिनती दिन, पक्ष, मास, वर्षादिमें चली आती है किसीने भी अधिकमासकी गिनती का एकदिन मात्र भी निषेध नही किया है तथपि वडे आफसोस की वात हे कि, वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास की गिनती वडे जोरके साथ वारवार निषेध करके एकमासके ३० दिनोकी गिनती एकदम छोड देते है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर महाराजोकी श्रीगणधर महाराजोकी श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्योजी की तथा इनलोगोके खास पूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविकाचार्य्योजी की आज्ञा भङ्गका भय नही करते है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योजी की आज्ञा मुजब वर्तमानमें श्रीखरतरगच्छादिवाले अधिक-

मासको प्रमाण करके गिनतीमें मञ्जूर करते हैं जिन्होंको आज्ञा भङ्गका मिथ्या दूषण लगाके उलटा निषेध करते हैं फिर आप आज्ञाके आराधक बनते हैं यह कितनी बड़ी आश्चर्यकी बात है।

श्रीअनन्त तीर्थङ्करादिकोंने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया है इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष कदापि निषेध नही कर सकते हैं तथापि वर्तमानमें जो अधिक मासको गिनतीमें निषेध करते हैं जिन्होंको श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने पूर्वजोंकी आज्ञाभङ्गके सिवाय और क्या लाभ होगा सो निष्पक्षपाती आत्मार्थी पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगें।

प्रश्न —अजी तुम तो श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की शास्त्रसे अधिकमासकी दिनोंमें पक्षोमे, मासोमें, वर्षोंमे, गिनती करनेका प्रत्यक्षप्रमाण उपरोक्त शास्त्रोके प्रमाणसे दिखाया है परन्तु वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास तो एककाल चूलारूप है इसलिये गिनतीमे नही लेना एसा कहते हैं सो कैसें।

उत्तर —भो देवानुप्रिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमासको कालचूला कहके गिनतीमे निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योकि अधिकमासको कालचूला किस कारणसे कही है जिसका अभिप्राय और कालचूला कहनेसे भी विशेष करके गिनती करने योग्य है तथा कालचूलाकी ओपमा बहुत उत्तम श्रेष्ठ शास्त्रकारोने दिवी हैं सो हमतो क्या कुल जैन श्वेताबर जिनाज्ञाके आराधन करनेवाले आत्मार्थी सबी पुरुषोको मान्य करने योग्य है

और गिनती भी करने योग्य है जिसका कारण शास्त्रोके प्रमाण सहित दिखाते है श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णि श्रीमोहन-लालजी महाराजके सुरतका ज्ञानभंडारसे आई थी जिसके प्रथम उद्देशेके पृष्ठ २१ मे तत्पाठ—

इयाणि चूलेति दारं॥ णाम ठवणा गाहा णिख्वेव गाहा ॥ कठा ॥ णाम ठवणाउमयाउ दव्वचूला दुविहा आगमतो णो आगमतोय आगमउ जाणए अणुवउत्ते णो आगमतो जाणय भव्वसरीर जाणयभव्वसरीरवइरित्ता तिधा य दव्वचूला गाहा पुव्वद्ध ॥ कठ॥ पढमो वसद्दो वधारणे वितितउरु सुव्वये पुव्वद्धे जहा सखनि ॥उदाहरणा॥ सचित्तचूडा कुक्कटचूला सा मसपेसी चेव केवला लोकप्रतिता सीसाचूडा मोरसिहा तस्स मसपेसीए रोमाणि भवति अचित्ता चूला मणीकुतगा वा आदिसद्दाउ सीहकस्स पासाद थूभअग्गाणि ॥ दव्वचूलागता॥ इदाणि खेत्तचूला सा तिविहा ॥ अह तिरिय उढ्ढ। गाहा॥अह इति अधोलोक तिरिय इति तिरियलोक उढ्ढ॥ इति ऊर्द्ध लोक लोगस्स सद्दो पत्तेग चूला इति सिहा-होति। भवति। इमाइति प्रत्यक्षो तु शब्दो क्षेत्रावधारणे अहोलोगा दीण पच्छद्धेण जहा सख उदाहरणा सीमतग इति सीमतगो णरगो रयणप्पभाय पुढवीउ पढमो सो अह लोगस्स चूला। मदरोमेरु सो तिरियलोगस्सचूलातिक्रान्तत्वात् अहवा तिरिय लोगपति ठियस्स मेरोवरि चत्तालीस जोयणा चूला सो तिरिय लोगचूला वसद्दो समुच्चये पाय पूरणे वा इसित्ति अप्पभावे पइति प्रायो वृत्याभार इति भारक्र तस्स पुरिमस्स गाय पायसो इसिणय भवति आव एव ठिताभा पुढवी

दगिपभारगाम इति एतमभिप्राण तम्म भाव मङ्क सिद्धि विनाणाउ उपरि यारोहि ओयणेहि भवति तेण सा उट्ठलोग भयति। गता रोत्तचूला। इयाणि फाल भावचूलाउ दोविणा गाहाए भगति। अहिमामउठकाले। गाहा। आरमनाम वरिसाउ अहिउमासो अहिमामत अहिवढ्ढिय वरिसे भवति सोय अधिकत्यात् फालचूला भयति तु मद्दोर्यप्य दरिसणेण फेवल अधिको फालो फालचूला भवति अहो विवढ्ढमाणो फालो फालचूलाए भवति एव गहाउसप्पिणीए अते अति दूम समाए सा उस्सप्पिणीए अते फालसमचूला भवति। कालचूला गता। इयाणि भावचूला। भवण भाव पयाय इत्यर्थ॥ तस्स चूला भावचूला सोय दुविहा आगमउय णो आगमउय आगमउजाणए उयउत्तेण णो आगमउय इगाचेव तुणद्दो। खउवसम भावविसेसेण दट्ठुव्वो इमाइति। पकप्प भयण चूला एग मद्दोवधारणे चूलेगठिता चूलात्तिवा विभूसणति वा सीहरति वा एते एगठो॥ चूलेति दारगय॥ इति श्रीनिशीथसूत्रके पहिले उद्देशे की चूर्णिके पृष्ठ २२ तक

और भी १४४४ ग्रन्थकार सुप्रसिद्ध महान् विद्वान् श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहत्वृत्तिका पाठ सुनिये श्रीदशवैकालिकमूलसूत्र, अवचूरि, भाषार्थ, दीपिका और वृहत्वृत्ति सहित मुम्बईसे छपके प्रसिद्ध हुवा है जिनके पृष्ठ ६४० और ६४१का चूला विषयका नीचे मुजब पाठ जानो—यथा—

अधुनौघतश्चूडे आरभ्यते अनयोश्चायमभिसम्बन्ध। इहानन्तराध्ययने भिक्षुगुणयुक्त एव भिक्षुरुक्त सचैव भूतोऽपि कदाचित् कर्म्मपरतन्त्रत्वात् कर्म्मणश्च बलवत्त्वात्सीदेदत

एतन् स्थिरीकरण कर्तव्यमिति तदर्थाधिकारवच्चूडाद्वयमभि-
धीयते तत्र चूडाशब्दार्थमेवाभिधातुकाम आह॥दव्वे खेत्ते काले,
भावम्मिअ चूलिआय निरकेवो॥ त पुण उत्तरतत, सुअ गहि-
अत्थ तु सगहणी ॥ २६ ॥ व्यारया ॥ नाम स्थापनेक्षुसात्वा-
दनादृत्याह द्रव्ये क्षेत्रे काले भावे च द्रव्यादिविषयश्चूडाया
निक्षेपो न्यास इति। तत्पुनश्चूडाद्वयमुत्तरतन्त्रमुत्तरसूत्रम्
दशवैकालिकस्याचारपञ्चचूडावत् एतच्चोत्तरतन्त्र श्रुतगृही-
तार्थमेव दशवैकालिकाख्य श्रुतेन गृहीतोऽर्थोऽस्येति विग्रह
यद्येवमनार्थकमिदम्। नेत्याह सग्रहणी तदुक्ता नुक्तार्थ-
सक्षेप इति गाथार्थ द्रव्यचूडादिव्याचिरयासयाह ॥ दव्वे
सचित्ताई, कुक्कुड चूडामणी मऊराइ ॥ खेत्तमि लोगनिक्कुड
मदरचूडा अ कूडाइ ॥ २७ ॥ व्यारया ॥ द्रव्य इति द्रव्यचूडा
आगम नोआगम ज्ञशरीरेतरादिव्यतिरिक्ता त्रिविधा स
चित्ताद्या। सचित्ता अचित्ता मिश्राच। यथा सरयमाह—
कुक्कुट चूडा सचित्ता मणिचूडा अचित्ता मयूरशिखामिश्रा।
क्षेत्र इति क्षेत्रचूडा लोकनिष्कुटा उपरिवर्तिन मन्दरचूडा
च पाण्डुकम्बला। चूडादयश्च तदन्यपर्वताना क्षेत्रप्राधा-
न्यात् आदिशब्दादधोलोकस्य सीमतक तिर्य्यग् लोकस्य
मन्दर ऊर्द्ध्वलोकस्येषत्प्राग्भार इति गाथार्थ ॥ अइरित्त
अहिगमासा, अहिगा सवत्सराअकालमि ॥ भावे खउ वस-
मिए, इमाउ चूडामुणे अव्वा ॥ २८ ॥ व्यारया॥ अतिरिक्ता
उचितकालात् समधिका अधिकमासका प्रतीता अधिका
सवत्सराश्च षष्टाब्दाद्यपेक्षया काल इति कालचूडा भाव इति
भावचूडा क्षायोपशमिके भावे इयमेव द्विप्रकारा चूडा
मन्तव्या विज्ञेया क्षायोपशमिकत्वाच्छ्रुतस्येति गाथार्थ
तत्रापि प्रथमा रतिवाक्यचूडा इत्यादि।

और भी श्रीजिनभद्र गणिक्षमाश्रमणजी महाराज युग प्रधान महाप्रभाविक प्रसिद्ध है जिन्होंके शिष्य श्रीशीलाङ्गाचार्य्यजी भी महाविद्वान् श्रीआचाराङ्गादि ११ अङ्गरूप सूत्रोंकी टीका करनेवाले प्रसिद्ध है जिसमें श्रीआचाराङ्गजी तथा श्रीसूयगडाङ्गजी सूत्रकी टीका तो सुप्रसिद्धिसे वर्त रही है और बाकी श्रीस्थानाङ्गजी आदि नवसूत्रोंकी टीका विच्छेद होगई थी जिससे श्रीअभयदेवसूरिजीने दूसरी वार बनाई है सो प्रसिद्ध है श्रीशीलाङ्गाचार्य्यजी विक्रम संवत् ६५७ के लगभग हुये है सो श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी व्याख्या रूप टीका करते दूसरे श्रुतस्कन्धकी व्याख्याके आदिमें ही चूलाका विस्तार किया है परन्तु यहाँ थोड़ासा लिखता हु श्रीमकसुदाबाद निवासी धनपतिसिंह बहादुरकी तरफ से श्रीआचाराङ्गजी मूलसूत्र, भाषार्थ, दीपिका और वृहत् वृत्ति सहित छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके दूसरा श्रुतस्कन्धके पृष्ठ ४मे से चूलाविषयका थोड़ासा पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

चूडाया निक्षेप नामादि षड्विध नामस्थापने क्षुण्णे द्रव्यचूडा व्यतिरिक्ता सचित्ता कुक्कुटस्य अचित्ता मुकुटस्य चूडामिश्रामयूरस्य, क्षेत्रचूडा लोकनिकुटरूपा कालचूडा अधिकमासक स्वभावा भावचूडात्वियमेव क्षयोपशमिक भाववर्तित्वात् तथा (इसके पहले तीसरे पृष्ठमे) कालाग्र मधिकमासक यदिवाग्र शब्द परिमाणवाचक इत्यादि—

देखो ऊपरोक्त शास्त्रोके कर्तामें श्रीजिनदासमहत्तराचार्य्यजी पूर्वधरगीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है तथा श्रीहरिभद्र सूरिजी भी पूर्वधर गत गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है और श्रीजिनभद्रगणि

क्षमाश्रमणजी महाराजके पट्टधरशिष्य श्रीशीलागाचार्य्यजी महाराज भी महाप्रभाविक गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है। इस लिये उपरके पाठ सर्व जैनश्वेतांवर आत्मार्थी पुरुषोको प्रमाण करने योग्य हैं ऊपरके पाठमें नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से, छ (६) प्रकारकी चूला कही है जिसमे नाम, स्थापना, तो प्रसिद्ध है और द्रव्य चूलादि की व्याख्या खुलासा किवी है कि,—द्रव्यचूला दो प्रकारकी प्रथम आगमरूप शास्त्रोमें कही हुइ और दूसरी नो आगम सो मति, अवधि, मनपर्यव, तथा केवल ज्ञानसे जानी हुइ द्रव्य चूला सो भव्य शरीर अर्थात् ज्ञानीजी महाराज अपने ज्ञानसे पहलेसे ही देखके जानलेवे कि यह मनुष्य आगामी काले साधु आदि धर्मी पुरुष होने वाला है एसा जो मनुष्य का शरीर जिसको द्रव्य चूला कहते है, कारण कि, इस संसारमे अनन्तीवार शरीर पाया परन्तु उत्तम पदवी पाने योग्य शरीर पाना बहुत मुश्किल है तथापि अब पाया जिससें धर्मप्राप्तिका योग्य होवे एसे शरीर को ज्ञानी महाराजने भव्यशरीर कहा है सो उस शरीरको अनन्ते सव शरीरोसे उत्तम कहो तथा श्रेष्ट कहो अथवा चूलारूप कहो सबीका तात्पर्य्य एकार्थका है—और भी प्रसिद्ध द्रव्य चूला तीनप्रकारकी कही हे जिसमे प्रथम कुक्कुट (मुरगा) के मस्तक उपर शिखररूप मांसपेसी सहित होनेसे उसीको सचित्तचूला कही जाती हे तथा दूसरी मोर (मयूर) के मस्तक उपर शिखररूप मांसपेसी और रोम सहित होनेसें उसीको मिश्र चूला कही जाती है और तीसरी मणि तथा कुन्त और मुकुटादिकके उपर शिखररूप होवे उसीको अचित्त

और भी श्रीजिनभद्र गणिक्षमाश्रमणजी महाराज युग प्रधान महाप्रभाविक प्रसिद्ध है जिन्होंके शिष्य श्रीशीलाङ्का चार्यजी भी महाविद्वान् श्रीआचाराङ्गादि ११ अङ्गरूप सूत्रोंकी टीका करनेवाले प्रसिद्ध है जिसमें श्रीआचाराङ्गजी तथा श्रीसूयगडाङ्गजी सूत्रकी टीका तो सुप्रसिद्धिमें चल रही है और बाकी श्रीठाणाङ्गजी आदि नवसूत्रोंकी टीका विच्छेद होगई थी जिससे श्रीअभयदेवसूरिजीने दूसरी बार बनाई है सो प्रसिद्ध है श्रीशीलाङ्काचार्यजी विक्रम सवत् ६५२ के लगभग हुवे है सो श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी व्याख्या रूप टीका करते दूसरे श्रुतस्कन्धकी व्याख्याके आदिमें ही चूलाका विस्तार किया है परन्तु यहाँ थोडासा लिखता हु श्रीमक्सुदाबाद निवासी धनपतिसिंह बहादुरकी तरफ से श्रीआचाराङ्ग जी मूलसूत्र, भावार्थ, दीपिका और वृहत् वृत्ति सहित छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके दूसरा श्रुतस्कन्धके पृष्ठ ४में से चूलाविषयका थोडासा पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

चूडाया निक्षेप नामादि षड्विध नामस्थापने क्षुसे द्रव्यचूडा व्यतिरिक्ता सचित्ता कुक्कुटस्य अचित्ता मुकुटस्य चूडामिश्रामयूरस्य, क्षेत्रचूडा लोकनि कुटरूपा कालचूडा अधिकमासक स्वभावा भावचूडात्वियमेव क्षयोपशमिक भाववर्तित्वात् तथा (इसके पहले तीसरे पृष्ठमें) कालाग्र मधिकमासक यदिवाग्र शब्द परिमाणवाचक इत्यादि—

देखो ऊपरोक्तशास्त्रोंके कर्तामें श्रीजिनदासमहत्तराचार्यजी पूर्वधरगीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है तथा श्रीहरिभद्र सूरिजी भी पूर्वधर गत गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध हैं और श्रीजिनभद्रगणि

क्षमाश्रमणजी महाराजके पट्टधरशिष्य श्रीशीलागाचार्य्यजं
महाराज भी महाप्रभाविक गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है। इस
लिये उपरके पाठ सर्व जैनश्वेतांवर आत्मार्थी पुरुषोंकं
प्रमाण करने योग्य है ऊपरके पाठमे नाम, स्थापना, द्रव्य
क्षेत्र, काल, भाव से, छ (६) प्रकारकी चूला कही है जिसं
नाम, स्थापना, तो प्रसिद्ध है और द्रव्य चूलादि कं
व्याख्या खुलासा किवी है कि,—द्रव्यचूला दो प्रकारकं
प्रथम आगमरूप शास्त्रोंमे कही हुइ और दूसरी नो आग
सो मति, अवधि, मनपर्यव, तथा केवल ज्ञानसे जानी हु
द्रव्य चूला सो भव्य शरीर अथात् ज्ञानीजी महाराज अपं
ज्ञानसे पहलेसे ही देखके जानलेवें कि यह मनुष्य आगामं
कालै साधु आदि धर्मी पुरुष होने वाला हे एसा जो मनुष
का शरीर जिसको द्रव्य चूला कहते हैं, कारण कि, इ
ससारमे अनन्तीवार शरीर पाया परन्तु उत्तम पदवी पा
योग्य शरीर पाना वहुत मुश्किल है तथापि अव पाय
जिससे धर्मप्राप्तिका योग्य होवे एसे शरीर को ज्ञानी महा
राजने भव्यशरीर कहा है सो उस शरीरको अनन्ते स
शरीरोंसे उत्तम कहो तथा श्रेष्ट कहो अथवा चूलारू
कहो सर्वोका तात्पर्य्य एकार्थका है—और भी प्रसिद्ध द्रव
चूला तीनप्रकारकी कही है जिसमे प्रथम कुक्कुट (मुरगा
के मस्तक उपर शिखररूप मासपेसी सहित होनेसे उसीं
सचित्तचूला कही जाती है तथा दूसरी मोर (मयूर)
मस्तक उपर शिखररूप मासपेसी ओर रोम सहित होने
उसीको मिश्र चूला कही जाती है और तीसरी मणि तथ
कुन्त और मुकुटादिकके उपर शिखररूप होवे उसीको अचि

चूला कही जाती हैं इन्होंको चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवअवयोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरकी अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दीयी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण कृष्ण श्रेणिकादि अभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें है सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जायेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तानामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामे गिना जाता हैं तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोंमें १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोंमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रतिमाजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अंशमात्र भी

गिनतीमें नही छुटसकता है और तीसरी ऊर्द्ध(उचा) लोकमे सर्वार्थ सिद्धि विमानसे बारह योजन पर ईपत्प्रागभारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५०००० लक्ष योजन प्रमाणे लबी और चौडी हैं तथा बीचमे आठ योजन की जाडी हैं जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान है एसी जो सिद्ध सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेमे चूलामे गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमे करने योग्य है।

और कालचूला उसीको कहते है कि जो बारह चन्द्र मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितकाल है उसमे भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर बारह मासोके उपर पडता है सो लोकोमे प्रसिद्ध भी है और अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसें सवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है बारहमासोका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो की अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी कालचूला कहते हैं और उत्सर्पिणीके अन्तमे भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमे मजूर करना चाहिये क्योंकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

चूला कही जाती हैं इन्होंको चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवअवयोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरकी अथात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अथात रावण कृष्ण श्रेणिकादि अभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें हैं सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही है जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तानामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामें गिना जाता है तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोमें १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रति माजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अशमात्र भी

गिनतीमे नही छुटसकता है और तीसरी ऊर्द्ध (उचा) लोकमे सर्वार्थ सिद्धि विमानसे बारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५०००० लक्ष योजन प्रमाणे लबी और चौडी है तथा बीचमे आठ योजन की जाडी है जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान हैं एसी जो सिद्ध सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसे चूलामे गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमें करने योग्य हैं।

और कालचूला उसीको कहते है कि जो बारह चन्द्र मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितकाल है उसमे भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर बारह मासोके उपर पडता है सो लोकोमे प्रसिद्ध भी है और अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसे सवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है बारहमासोका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो की अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी कालचूला कहते हैं और उत्सर्पिणिके अन्तमे भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमे मजूर करना चाहिये क्योकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

चूला कही जाती है इन्होंको चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवयवोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरों अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण तथा श्रेणिकादि भावी द्रव्य निक्षेपमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें है सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तानामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामे गिना जाता हैं तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका हैं सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामे गिनी जाती है और मेरुके चार वनोमे १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रति माजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अशमात्र भी

गिनतीमे नही छुटसकता है और तीसरी ऊर्द्ध (उचा) लोकमे सर्वार्थ सिद्दि विमानसे बारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५००००० लक्ष योजन प्रमाणे लबी और चौडी हैं तथा बीचमे आठ योजन की जाडी है जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान है एसी जो सिद्द सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसे चूलामे गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमे करने योग्य है।

और कालचूला उसीको कहते है कि जो बारह चन्द्र मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितकाल है उसमे भी एक अधिक मासकी वृद्धि होकर बारह मासोके उपर पडता है सो लोकोमे प्रसिद्ध भी है और अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसे सवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है बारहमासोका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो की अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी कालचूला कहते हैं और उत्सर्पिणिके अन्तमे भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमे मजूर करना चाहिये क्योकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

चूला कही जाती है इसीको चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवयवोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरको अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण तथा श्रेणिकादि अभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें हैं सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तानामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उंचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उंचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामें गिना जाता है तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोंमें १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोंमें २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रतिमाजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अंशमात्र भी

गिनतीमें नही छुटसकता है और तीसरी ऊर्द्ध (उचा) लोकमे सर्वार्थ सिद्धि विमानसे वारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५००००० लक्ष योजन प्रमाणे लबी और चौडी हैं तथा बीचमे आठ योजन की जाडी है जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान हैं एसी जो सिद्ध सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमे करने योग्य हैं।

और कालचूला उसीको कहते हैं कि जो वारह चन्द्र मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितकाल है उसमें भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर वारह मासोके उपर पडता हैं सो लोकोमे प्रसिद्ध भी हैं और अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसे सवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है वारहमासोका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो की अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी काल-चूला कहते है और उत्सर्पिणिके अन्तमे भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमें मजूर करना चाहिये क्योकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

चूला कही जाती है इन्होंकी चूलाकी शोभा देनेका यही कारण है कि सब अवयवोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरकी अर्थात् चूलाकी शोभा शास्त्रकारोंने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण तथा श्रेणिकादि सभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें हैं सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही है जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तनामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामें गिना जाता है तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलाने गिनी जाती है और मेरुके चार वनोमे १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमें २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रतिमाजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अंशमात्र भी

गिनतीमे नही छुटसकता हैं और तीसरी ऊर्द्ध (उचा) लोकमे सर्वार्थ सिद्धि विमानसे बारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५००००० लक्ष योजन प्रमाणे लबी और चौडी हैं तथा बीचमे आठ योजन की जाडी है जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान है एसी जो सिद्ध सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसे चूलामे गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमे करने योग्य है।

और कालचूला उसीको कहते है कि जो बारह चन्द्र मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितकाल है उसमे भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर बारह मासोके उपर पडता हैं सो लोकोमे प्रसिद्ध भी है और अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसे सवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है बारहमासोका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो की अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी काल-चूला कहते है और उत्सर्पिणिके अन्तमे भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमे मजूर करना चाहिये क्योकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

चूला कही जाती है इन्होंके चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवयवोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरसें अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण कृष्ण श्रेणिकादि भावी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पायेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें है सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य है।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तनामा नरकावासा अधो-लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती है तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमें सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग्लोकका प्रमाण उंचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उंचा चला गया इस लिये तियग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामे गिना जाता है तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोमे १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की शाश्वती प्रति-माजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अक्षमात्र भी

गिनतीमे नही छुटसकता है और तीसरी ऊर्द्ध (उचा) लोको सर्वार्थ सिद्धि विमानसे बारह योजन पर ईषत्प्राग्भार नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५०००० लक्ष योजन प्रमाणे लंब और चौडी है तथा बीचमे आठ योजन की जाडी है जिस उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान है एसी जं सिद्ध सिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसे चूलामे गिन जाती है यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमे कर योग्य है।

और कालचूला उसीको कहते है कि जो बारह च मासोसे चन्द्रसवत्सर एकवर्ष होता है जिसका उचितका है उसमे भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर बार मासोके उपर पडता है सो लोकोमे प्रसिद्ध भी है अं अनादि कालसे अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमा करने योग्य है और अधिकमास ज्यादा पडनेसे सवत्सर नाम भी अभिवर्द्धित होजाता है बारहमासोका काल शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसे उसको कालचूला क जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोसे साठ (६०) वर्षो अपेक्षासे एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसको भी का चूला कहते है और उत्सर्पिणीके अन्तमे भी जो काल सोभी कालचूलामे गिना जाता है तथा कालचूलारूप अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमे मजूर कर चाहिये क्योकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपम सो निषेधकवाची नही है किन्तु विशेष शोभाकारी उ होनेसे अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथा वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास

चूला कही जाती हैं इन्होंको चूलाकी ओपमा देनेका यही कारण है कि सब अवयवोंमें विशेष शोभाकारी सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरकी अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दियी है, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनतीमें करके प्रमाण करने योग्य है, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण कृष्ण श्रेणिकादि अभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें हैं सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य हैं।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही है जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तानामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती है तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमे सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका है परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामे गिना जाता है तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका है सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोंमें १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान् की शाश्वती प्रतिमाजी है इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अंशमात्र भी

कारण यह है कि यह मास इस सवत्सरमे वारहमासोसे अधिक वडा इसलिये इसका नाम भी अर्थानुसार है इनकी गणनाके विना अर्थानुसार नाम अभिवर्द्धित सवत्सरका न होगा न होनेसे असङ्गति दोष रहता है यह चिन्तन करना चाहिये। अब अधिक मासकी गिनती नही करने वाले महाशय तेरह चन्द्रमासोके विना अभिवर्द्धित सवत्सर कैसे बनावेगे क्योकि तेरह चन्द्रमासोके विना अभिवर्द्धित-सवत्सर नही हो सकता है तथा अभिवर्द्धित सवत्सरके विना एकयुगके ६२ चन्द्रमासोकी ६२ अमावस्या और ६२ पूर्णिमासोके १२४ पाक्षिकोकी गिनती नही बन सकेगा इस लिये कालचूलारूप अधिक मासकी गिनती करनेसे अभिवर्द्धित सवत्सर तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है सोही श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खरतरगच्छके और तपगच्छादिके पूर्वाचार्य्योने अधिक-मासको दिनोमे पक्षोमे मासोमे वर्षोमे गिनतीमे प्रमाण करके एकयुगके ६२ चन्द्रमासोके १८३० दिनोकी गिनती कही है सो उपरोक्त शास्त्रोके पाठोसे लिख आये है जिससे जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोको अधिक मासकी गिनती मजूर करनी चाहिये इसके लिये आगे युक्ति भी दिखावेगे इति कालचूला सम्बन्धी किञ्चित् अधिकार—

और चौथी भावचूला भी आगमसे तथा नो आगमसे क्षयोपशमादिकी व्याख्या प्रसिद्ध है और श्रीदशवैका-लिकजी सूत्रकी दो चूला तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी दो चूला और मन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्टि-मन्त्रकी चार चूला इत्यादि सब भावचूला कही जाती है

फालगुला करके गिनती में नहीं लेते हैं और निषेध भी करते हैं। जिन्होंने मेरा इतना ही पुछना है कि आप लोग अधिक मासको फालगुल्य जानके गिनती नही करते हो तो अभिवर्द्धित नाम सवत्सर कैसे कहते हो और अभिवर्द्धित नाम सवत्सर तो फालगुलारूप अधिकमास ज्यादा होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनती करनेसे ही होता है तथाहि—

अभिवर्द्धीत्यभिवर्द्धित अभिवर्द्धितनामो सवत्सरोऽभिवर्द्धितसवत्सर अभिवर्द्धतनाम्नाभिवृद्धिरूप अभिवृद्धिस्तु अधिकमासे नैव बोधव्य अनयारीत्या अय सवत्सर अन्वर्थ सज्ञा लब्धवान् अन्वर्थसज्ञाया कारणतातु अधिकमासनिष्ठैव कारणत्यावच्छिन्नस्तु शिरोमौलिमुकुटहीरायमाणोऽधिक मास एव अधिकमासनिरुक्तिश्चेत्थ यतोऽत्र सवत्सरे द्वादशमासेभ्योऽधिक पतति अतोऽधिकमास एतद्गणनामन्तरेण तु अन्वर्थसज्ञायासङ्गत्यापत्तिरेवेति ध्येयम् ।

अर्थ जो और सवत्सरोकी अपेक्षासे ज्यादा हो याने अधिक महिनावाली होय सो अभिवर्द्धित सवत्सर इस सवत्सरमे वृद्धि जो है सो अधिकमास ही करके है इस कारणसे इस सवत्सरका अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम हुवा अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम रखनेमे अधिकमास कारण हुवा और अभिवर्द्धितनाम कार्य्य हुवा इनोका कार्य्य कारण भाव सिद्ध हुवा कारणताधर्मयुक्त होनेसे यह अधिकमास सब मासोके मस्तकके शोभा करने वाला जो मुकुट जिसकी शोभा करने वाला जो हीरारत्न उसकी तुल्य हुवा और जिस कारणसे इस महिने का नाम अधिकमास हुवा सो

कारण यह है कि यह मास इस सवत्सरमे वारहमासोसे अधिक बडा इसलिये इनका नाम भी अर्थानुसार है इनकी गणनाके विना अर्थानुसार नाम अभिवर्द्धित सवत्सरका न होगा न होनेसे असङ्गति दोष रहता है यह चिन्तन करना चाहिये। अब अधिक मासकी गिनती नही करने वाले महाशय तेरह चन्द्रमासोके विना अभिवर्द्धित सवत्सर कैसे बनावेगे क्योकि तेरह चन्द्रमासोके विना अभिवर्द्धित-सवत्सर नही हो सकता है तथा अभिवर्द्धित सवत्सरके विना एकयुगके ६२ चन्द्रमासोकी ६२ अमावस्या और ६२ पूर्णिमासीके १२४ पाक्षिकोकी गिनती नही बन सकेगा इस लिये कालचूलारूप अधिक मासकी गिनती करनेसे अभिवर्द्धित सवत्सर तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है सोही श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वाधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खरतरगच्छके और तपगच्छादिके पूर्वाचार्य्योने अधिकमासको दिनोमे पक्षोमे मासोमे वर्षोमे गिनतीमे प्रमाण करके एकयुगके ६२ चन्द्रमासोके १८३० दिनोकी गिनती कही है सो उपरोक्त शास्त्रोके पाठोसे लिख आये है जिससे जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोको अधिक मासकी गिनती मजूर करनी चाहिये इसके लिये आगे युक्ति भी दिखावेगे इति कालचूला सम्बन्धी किञ्चित् अधिकार—

और चौथी भावचूला भी आगमसे तथा नो आगमसे क्षयोपशमादिकी व्याख्या प्रसिद्ध है और श्रीदशवैकालिकजी सूत्रकी दो चूला तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी दो चूला और मन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्टिमन्त्रकी चार चूला इत्यादि सब भावचूला कही जाती हैं

सो त्रिभूवना कहो, शोभारूप कहो, शिखरूप कहो, विशेष सुन्दरता मुगटरूप कहो अथवा चूलारूप कहो, सब मतलबका तात्पर्य एकार्थका हैं इसलिये गिनती करने योग्य है और ऐसें द्रव्य, भाव, नाम, स्थापनासें चार निक्षेपे कहे हैं सो मान्य करने योग्य है तथापि द्रव्य, स्थापनादि का निषेध करने वालोंको (श्रीखरतरगच्छवाले तथा श्रीतप गच्छादि वाले सर्व धर्मबन्धु) मिथ्यात्वी कहते हैं तैसे ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावसे जो चूला कही है सो अनादि कालसे प्रवर्त्तना रूप हैं श्रीतीर्थंङ्करादि महाराजोने प्रमाण किवीं है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करके मान्य करने योग्य है तथापि क्षेत्रकालादि चूलायोंको गिनतीमें मान्य नही करते उलटा निषेध करते हैं और जो मान्य करते हैं जिन्होंको दूषण लगाते हैं ऐसे श्रीतीर्थंङ्करादि महाराजों के विरुद्ध वर्तने वाले विद्वान् नामधारक वर्तमानिक महाशयोंको आत्मार्थी पुरुष क्या कहेंगे जिसका निष्पक्षपाती श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे—

और अधिक मासको कालचूला कहनेसे भी गिनतीमें निषेध कदापि नही हो सकता है किन्तु अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोंसे श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अवश्यमेव गिनतीमें प्रमाण करणा योग्य है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीकारनें कालचूलाके नामसे अधिकमासकी गिनती उत्सूत्रभाषणरूप निषेध किवी है जिसका उतारा प्रथम इसजगह लिख दिखाते हैं और पीछे इसकी समालोचनारूप समीक्षा कर दिखावेंगे, जैनसिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ९०की

पक्ति १६॥ से पृष्ठ ९१ की पक्ति १३ वी तक चूला सम्बन्धी लेखका उतारा नीचे मुजब जानो—

[हम अधिक मासको कालचूला मानते हैं सो अब दिखाते है, चूला चार प्रकारकी शास्त्रोंमे कथन करी है, यथा—निशीथे दशवैकालिक वृत्तौ च॥ तथाहि—'चूला चातुर्विध्य। द्रव्यादिभेदात् तत्र द्रव्यचूला ताम्र चूलादि १ क्षेत्रचूला मेरोश्चत्वारिशद्योजन प्रमाण चूलिका २ कालचूला युगे तृतीयपञ्चमयोर्वर्षयोरधिकमासक ३ भावचूला तु दश-वैकालिकस्य चूलिकाद्वय ४ इति॥

(भावार्थ) जैसें निशीथसूत्र विषे और दशवैकालिक वृत्ति विषे है तैसें दिखाते है, चूला चार प्रकारकी है, द्रव्यादि भेद करके तिसमे द्रव्यचूला उनको कहते है कि जो मुरगादिके शिरपर होती है १ क्षेत्रचूला यह है कि-मेरुपर्वतकी चालीश योजन प्रमाण जो चूला है २ काल चूला उसको कहते है कि जो तीसरे वर्ष और पाँचमे वर्षमे अधिक मास होता है ३ भावचूला उसको कहते है कि जो दशवैकालिक की चूलिका है॥४॥

(पूर्वपक्ष) कालचूला कहनेसें आपकी क्या सिद्धि हुइ ?

(उत्तर) हे परीक्षक! कालचूला कहनेसें यह सिद्ध होता है कि चूलावाले पदार्थके साथ प्रमाणका विचार करना होवे तो उस पदार्थसें चूला न्यारी नही गिनी जाती है जैसे मेरुका लक्ष योजन प्रमाण कहेगे तब चूलिकाका प्रमाण भिन्न नही गिणेंगे।

तैसें चतुर्मासके विचारमे और वर्षके विचार करनेके

सो विभूषणा कहो, शोभारूप कहो, शिखररूप कहो, विशेष सुन्दरता मुगटरूप कहो अथवा चूलारूप कहो, सब मतलबका तात्पर्य एकार्थका हैं इसलिये गिनती करने योग्य है और पैमें द्रव्य, भाव, नाम, स्थापनामें चार निक्षेपे कहे हैं सो मान्य करने योग्य है तथापि द्रव्य, स्थापनादि का निषेध करने वालोको (श्रीखरतरगच्छवाले तथा श्रीतप गच्छादि वाले सर्व धर्म्मबन्धु) मिथ्यात्वी कहते हैं तैसे ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावसे जो चूला कही है सो अनादि कालसे प्रवर्त्तना रूप हैं श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोने प्रमाण कियी है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करके मान्य करने योग्य है तथापि क्षेत्रकालादि चूलायोको गिनतीमें मान्य नही करते उलटा निषेध करते हैं और जो मान्य करते हैं जिन्होको दूषण लगाते हैं ऐसे श्रीतीर्थङ्करादि महाराजो के विरुद्ध वर्तने वाले विद्वान् नामधारक वर्तमानिक महा शयोको आत्मार्थी पुरुष क्या कहेंगे जिसका निष्पक्षपाती श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे—

और अधिक मासको कालचूला कहनेसे भी गिनतीमें निषेध कदापि नही हो सकता है किन्तु अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार अवश्यमेव गिनतीमे प्रमाण करणा योग्य है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीकारनें कालचूलाके नामसें अधिकमासकी गिनती उत्सूत्रभाषणरूप निषेध किवी है जिसका उतारा प्रथम इसजगह लिख दिखाते हैं और पीछे इसकी समालोचनारूप समीक्षा कर दिखावेंगे, जैनसिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ८०की

जैन सिद्धान्त समाचारी कारनें (यथा निशीये दशवैकालिक वृत्तौच—इस वाक्यसे जैसे निशीथ सूत्र विषे और दशवैका-लिक वृत्तिविषे है तैसे दिखाते है) एसा लिखके भोले जीवोको शास्त्रके नाम लिख दिखाये परन्तु शास्त्रकारका बनाया पाठ नही लिखा एसा करना आत्मार्थी उत्तम पुरुषको योग्य नही है और पाठका भावार्थ लिखे बाद पूर्वपक्ष उठायके उत्तर लिखा है जिसमे भी शास्त्रोके विरुद्धार्थमे उत्सूत्र भाषणरूप बिलकुल सर्वथा अनुचित लिख दिया है क्योंकि (चूलावाले पदार्थके साथ प्रमाण का विचार करना होवे तो उस पदार्थसे चूला न्यारी नही गिनी जाती है) इन अक्षरो करके चूलाकी गिनती भिन्न नही करनी करते है सो भी मिथ्या है, क्योंकि शास्त्रकारो ने चूला की गिनती भिन्न करके मूलके साथ मिलाइ है सोही दिखाते है कि–देखो जैसे श्रीमन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपर-मेष्टि मन्त्रमे मूल पाचपदके ३५ अक्षर है तथा चार चूलिका के ३३ अक्षर हैं सो मूलके साथ मिलनें से नवपदोसे चूलि-कायो सहित ६८ अक्षरका श्रीनवकार परमेष्टि मन्त्र कहा जाता है और श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्रके दश अध्ययन है तथा दो चूलिका है जिसको भी शास्त्रकारोने अध्ययन रूप ही मान्य किवी है और निर्युक्ति, चूर्णि, अवचूरि, वृहद्-वृत्ति, लघुवृत्ति, शब्दार्थवृत्ति वगैरह सबी व्याख्याकारोने जैसे दश अध्ययनोका अनुक्रमे सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है तैसे ही दो चूलिकारूप अध्ययनकी भी अनुक्रम-णिका सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है और व्याख्यायोके श्लोकोकी सख्या भी चूलिकाके साथ सामिल करनेंमें आती

अयात्मे अधिक मासका विचार न्यारा नही करेंगे इस वास्ते अधिक मासको कालचूला कहा है]।

उपरके लेखकी समीक्षा करते है कि—प्रथमतो जैन सिद्धान्त समाचारीकारने निशीथ सूत्रके नामसे चूलाका पाठ लिखा है सो सूत्रमें बिलकुल नही है किन्तु निशीथ सूत्रकी चूर्णिमें जिनदास महत्तराचार्यजीने चूलासम्बन्धी व्याख्या किवी है और दशवैकालिक सूत्रकी वृत्तिके पाठका नाम लिखा सोभी नही है किन्तु दशवैकालिक सूत्रकी प्रथम चूलिका की वृहत् वृत्तिमें पाठ है और उपरमें जो चूला चातुर्विध्य इत्यादि पाठ लिखा है सो न तो चूर्णिकारका है और न वृत्तिकारका है क्योंकि चूर्णिकारने और वृत्तिकारने द्रव्यचूला, आगम नो आगमसे भव्यशरीर और सचित्त, अचित्त, मिश्र, तथा क्षेत्रचूला भी लिटुशिला और मेरुपर्वत अथवा मेरुचूलिका इत्यादि कालचूला भाव चूलाकी विस्तारसे व्याख्या किवी है सो हम उपरमे सम्पूर्ण पाठ लिख आये है। जिसको और जैनसिद्धान्त समाचारी कारका लिखा पाठको वाचकवर्ग आपसमे मिलावेंगे तो स्वय मालुम हो सकेगा कि जैनसिद्धान्त समाचारीकारने जो पाठ लिखा है सोनिकेवल बनावटी है क्योंकि हमने उपरमे सम्पूर्ण पाठ लिखा है जिसके साथ इस पाठका अक्षर अक्षर और पक्ति पक्ति नही मिलती है तथा चूर्णिकार की प्राकृत सस्कृत मिली हुवी भाषा है और वृत्तिकारकी निर्युक्ति सहित व्याख्या किवी हुई है। जिनसे उपरका पाठ बिलकुल भाषा वगैरादिमे बरोबर नही है इस लिये उपरका पाठ बनावटी है—सो प्रत्यक्ष दिखता है तथापि

जैन सिद्धान्त समाचारी कारनें (यथा निशीथे दशवैकालिक वृत्तौच—इस वाक्यसे जैसे निशीथ सूत्र विषे और दशवैकालिक वृत्तिविषे है तैसे दिखाते है) एसा लिखके भोले जीवोको शास्त्रके नाम लिख दिखाये परन्तु शास्त्रकारका बनाया पाठ नही लिखा एसा करना आत्मार्थी उत्तम पुरुषको योग्य नही है और पाठका भावार्थ लिखे बाद पूर्वपक्ष उठायके उत्तर लिखा है जिसमे भी शास्त्रोंके विरुद्धार्थमे उत्सूत्र भाषणरूप बिलकुल सर्वथा अनुचित लिख दिया है क्योंकि (चूलावाले पदार्थके साथ प्रमाण का विचार करना होवे तो उस पदार्थसे चूला न्यारी नही गिनी जाती है) इन अक्षरो करके चूलाकी गिनती भिन्न नही करनी करते है सो भी मिथ्या है, क्योंकि शास्त्रकारो ने चूला की गिनती भिन्न करके मूलके साथ मिलाई है सोही दिखाते है कि—देखो जैसे श्रीमन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्टि मन्त्रमे मूल पाचपदके ३५ अक्षर है तथा चार चूलिका के ३३ अक्षर हैं सो मूलके साथ मिलने से नवपदोसे चूलिकायो सहित ६८ अक्षरका श्रीनवकार परमेष्टि मन्त्र कहा जाता है और श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्रके दश अध्ययन है तथा दो चूलिका है जिसको भी शास्त्रकारोने अध्ययन रूप ही मान्य किवी है और निर्युक्ति, चूर्णि, अवचूरि, वृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, शब्दार्थवृत्ति वगैरह सबी व्याख्याकारोने जैसे दश अध्ययनोका अनुक्रमे सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है तैसे ही दो चूलिकारूप अध्ययनकी भी अनुक्रमणिका सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है और व्याख्यायोके श्लोकोकी संख्या भी चूलिकाके साथ शामिल करनेमे आती

अथारमें अधिक मासका विचार क्यारा नही करेंगे इस वास्ते अधिक मासको कालचूला कहा है]।

उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि—प्रथमतो जैन सिद्धान्त समाचारीकारने निशीथ सूत्रके नामसे चूलाका पाठ लिखा है सो सूत्रमें बिलकुल नही है किन्तु निशीथ सूत्रकी चूर्णिमें जिनदास महत्तराचार्यजीने चूलासम्बन्धी व्याख्या किवी है और दशवैकालिक सूत्रकी वृत्तिके पाठका नाम लिखा सोभी नही है किन्तु दशवैकालिक सूत्रकी प्रथम चूलिका की वृहत् वृत्तिमें पाठ है और उपरमें जो चूला चातुर्विध्य इत्यादि पाठ लिखा है सो न तो चूर्णिकारका है और न वृत्तिकारका है क्योंकि चूर्णिकारने और वृत्तिकारने द्रव्यचूला, आगम नो आगमसे भव्यशरीर और सचित्त, अचित्त, मिश्र, तथा क्षेत्रचूला भी [illegible] और मेरुपर्वत अथवा मेरुचूलिका इत्यादि कालचूला भाव चूलाकी विस्तारसे व्याख्या किवी हैं सो हम उपरमें सम्पूर्ण पाठ लिख आये हैं। जिसको और जैनसिद्धान्त समाचारी कारका लिखा पाठको वाचकवर्ग आपसमें मिलावेंगे तो स्वय मालुम हो सकेगा कि जैनसिद्धान्त समाचारीकारने जो पाठ लिखा है सोनिकेवल बनावटी है क्योंकि हमने उपरमे सम्पूर्ण पाठ लिखा है जिसके साथ इस पाठका अक्षर अक्षर और पक्ति पक्ति नही मिलती है तथा चूर्णिकार की प्राकृत सस्कृत मिली हुवी भाषा है और वृत्तिकारकी निर्युक्ति सहित व्याख्या किवी हुई है। जिनसे उपरका पाठ बिलकुल भाषा वर्गणादिमें बरोबर नही है इस लिये उपरका पाठ बनावटी है—सो प्रत्यक्ष दिखता है तथापि

मेरुपर्वत उपरे, चालीसुच्चा के०, चालीस योजननी उची, अने, वट्ट के०, वर्तुल तथा, मूलुवरि बारचउपिहुला के०, मूलने विषे बार योजन पहोली अने उपर चारयोजन पहोली, तथा, वेरुलिया के०, वैडूर्यनामे जे नीलारत्न तेनी, वर के०, प्रधान, चूला के०, चूलिका छे तेवली चूलिका केहवी छे, सिरिभवण पमाण चेइहरा के०, श्रीदेवीना भवन सरखा चैत्यग्रह एटले जिन भवण तेणे करि महाशोभित छे इति गाथार्थ ॥ ११३ ॥ उपरकी श्रीरत्नशेखर सूरिजी कृत गाथासे पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेगे कि, प्रगट पनेसे लक्षयोजनका मेरुके उपरकी चूलिकाके चालीस योजन का प्रमाण भिन्न गिना है तथापि जैनसिद्धान्त समाचारीकार भिन्न नही गिनना कहते है सो.कैसे बनेगा तथा और भी सुनिये जो चूलिकाके प्रमाणको भिन्न नही गिनोगे तो फिर चूलिकाके उपर एक चैत्य है जिसमे १२० शाश्वती श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजी है उन्होंकी गिनती कैसे करोगे क्योंकि मेरुमे तो १६ चैत्य कहे है जिसमे १९२० प्रतिमाजी है। तथा एक चूलिकाके चैत्यकी १२० प्रतिमाजीकी गिनती शास्त्रकारोने भिन्न किवी है सो, जैनमे प्रसिद्ध है। इस लिये चूलिकाकी गिनती अवश्यमेव करनी योग्य है तथापि जो मेरुके चूलिकाकी गिनती भिन्न नही करते है जिन्होंको एक चैत्यकी १२० शाश्वती जिन प्रतिमाजीकी गिनतीका निषेधके दूषणकी प्राप्ति होनेका प्रत्यक्ष दिखता है।

और भी आगे कालचूलाके विषयमें जैन सिद्धान्तसमाचारीके कर्त्ताने ऐसे लिखा है कि (तैसे चतुमासके विचारमे और वयके विचार करनेके अवसरमें अधिक मासका विचार

है इसे ही श्रीआचारांगजीकी चूलिका, श्रीव्यवहार सूत्रकी की चूलिका, श्रीमहानिशीथसूत्रकी चूलिका वगैरह सबी चूलिकायोंकी गिनती शास्त्रोंके साथ श्लोकोंकी संख्यामें आती है तथा व्याख्यानावसरमें भी चूलिका साथ सूत्र वाचनेमें आता है। परन्तु चूलिकाकी गिनती नही करनी इसे तो किसी भी जैन शास्त्रमें नही लिखा हैं इस लिये जो जो चूलावाले पदार्थ है उसीके प्रमाणका विचार और गिनतीका व्यवहारमें चूलाका प्रमाण सहित गिना जाता हैं और क्षेत्र चूलाके विषयमें जैनसिद्धान्त समाचारीकारने लिखा है कि (जैसे मेरुका लक्षयोजनका प्रमाण कहेंगें तब चूलिकाका प्रमाण भिन्न नही गिनेंगे) इन अक्षरोंको लिखके मेरुपर्वतके उपर जो चालीस योजनके प्रमाणवाली चूलिका है। जिसके प्रमाणकी गिणती मेरुसे भिन्न नही कहते है सोभी अनुचित है क्योंकि शास्त्रोंमें मेरुके लक्ष योजनका प्रमाण तथा चूलिकाका चालीस योजनका प्रमाण खुलासा पूर्वक भिन्न कहा है सोही दिखाते है कि—खास जैन सिद्धान्त समाचारीकारके ही परम पूज्य श्रीरत्नशेखर सूरिजीनें लघुक्षेत्र समास नामा ग्रन्थ बनाया है सो गुजराती भाषा सहित श्रीमुंबईवाला श्रावक भीमसिंहमाणक की तरफसे श्रीप्रकरण रत्नाकरका चौथाभागमे छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ २३४ मे मेरुकी चूलिकाके सम्बन्धवाली ११३ मी गाथा भाषा सहित नीचे मुजब जानो यथा—

तदुवरि चालीसुच्चा, वट्टामूलुवरि बारचउपिहुला
वेरुलिया वरचूला, सिरिभवण प्रमाण चेइहरा ॥ ११३ ॥

अर्थ—तदुपरि के, ते लाखयोजन प्रमाणना उंचा

सो अधिक मास नियम करके होनेसे युगके मध्यमे दो पौष तथा युगके अन्तमे दो आषाढ होते है जब दो आषाढ होते है तब ग्रीष्म ऋतुमे चेव निश्चय वो अधिकमास अतिक्रान्त (व्यतित) होगया इस लिये अभिवर्द्धित सवत्सरमे आषाढ चौमासीसे वीश दिन तक अनियत वास, परन्तु वीशमे दिन जो श्रावण शुक्लपञ्चमी उसी दिनसे नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे और चन्द्र सवत्सरमे पचास दिन तक अनियत वास, परन्तु पचासमे दिन जो भाद्रपदशुक्लपञ्चमी उसी दिनसे नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे—

अब उपरके पाठसे पाठकवर्ग पक्षपात रहित होकर स्वय विचार करेंगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो सकेगा कि खास चूर्णिकार महाराजने मास वृद्धिको गिनतीमे चेव (निश्चय) अवश्यमेव कहा है और प्रथम उद्देशेका जो पहिले पाठ लिखचुके है जिसमे कालचूलाकी भी उत्तम ओपमा दिवी है सो अधिक मासकी गिनती करनेसेही अभिवर्द्धित नाम सवत्सर बनता है सो विशेष उपर लिख आये है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीके कर्त्ताने चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमे कालचूला कहनेसे अधिक मासकी गिनती नही करना ऐसा लिखनेमें क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना इति ॥

तथा और इनके अगाडी श्रीतपगच्छके अर्वाचीन (थोडे कालके) तथा वर्त्तमानिक त्यागी, वैरागी, सयमी, उत्कृष्टि क्रिया करनेवाले जिनाज्ञा मुजब शास्त्रानुसार चलने वाले शुद्धपरूपक सत्यवादी ओर सुप्रसिद्ध विद्वान् नाम धराते भी प्रथम श्रीधर्म्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीमें

न्यारा नही करेंगे इस वास्ते अधिकमासको कालचूला कहते है) इन अक्षरोंको लिखके अधिक मासको कालचूला कहनेमें ऋतुमासकी और वर्षकी गिनतीमें नही लेना ऐसा कहते है सो भी अयुक्त है क्योंकि अधिक मासको कालचूला कहनेसे भी अवश्यमेव गिनतीमें लेना योग्य है सो उपरमें विस्तारसे लिख आये है, इसलिये अधिक मासकी गिनती कदापि निषेध नही हो सकती है श्रीतीर्थंकरादि महाराजोंने प्रमाण कियी है और अधिकमासको काल चूलाकी ओपमा देनेवाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज भी अधिक मासकी गिनती निश्चयके साथ करते हैं सोही दिखाते हैं श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिके दशवें उद्देशेमें पर्युषणाकी व्याख्याके अधिकारमें पृष्ठ ३२२का तथाच तत्पाठ –

अभिवड्ढिय वरिसे वीसती राते गते गिहिणा त करति तिसुचन्दवरिसे सवीसति राते गते गिहिणा त करति जत्थ अधिमासगो पडति वरिसे त अभिवड्ढिय वरिस भणति जत्थ ण पडति त चन्द वरिस––सोय अधिमासगो जुगस्सगते मज्जे वा भवति जतितो णियमा दो आसाढा भवति अहमज्जे दो पोसा–सीसो पुछति जम्हा अभिवड्ढिय वरिसे वीरुति रात, चन्द वरिसे सवीसति मासो उच्यते, जम्हा अभिवड्ढिय वरिसे गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो तम्हा वीस दिना अणभिग्गहिय करति, इयरेसु तिसु चन्द वरिसेसु सवीसति मासो इत्यर्थ ॥

देखिये उपरके पाठमे अधिक मास जिस वर्षमें पडता हैं उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहते है जहाँ अधिक मास जिस वर्षमें नही पडता है उसीको चन्द्र सवत्सर कहते है

सो अधिक मास नियम करके होनेसे युगके मध्यमे दो पोष तथा युगके अन्तमे दो आषाढ होते है जब दो आषाढ होते है तब ग्रीष्म ऋतुमे चेव निश्चय वो अधिकमास अतिक्रान्त (व्यतित) होगया इस लिये अभिवर्द्धित सवत्सरमे आषाढ चौमासीसे वीश दिन तक अनियत वास, परन्तु वीशमे दिन जो श्रावण शुक्लपञ्चमी उसी दिनसे नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे और चन्द्र सवत्सरमे पचास दिन तक अनियत वास, परन्तु पचासमे दिन जो भाद्रपदशुक्लपञ्चमी उसी दिनसे नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे—

अब उपरके पाठसे पाठकवर्ग पक्षपात रहित होकर स्वय विचार करेगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो सकेगा कि खास चूर्णिकार महाराजने मास वृद्धिको गिनतीमे चेव (निश्चय) अवश्यमेव कहा है और प्रथम उद्देशेका जो पहिले पाठ लिखचुके है जिसमे कालचूलाकी भी उत्तम ओपमा दिवी है सो अधिक मासकी गिनती करनेसेही अभिवर्द्धित नाम सवत्सर बनता है सो विशेष उपर लिख आये है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीके कर्त्ताने चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमे कालचूला कहनेसे अधिक मासकी गिनती नही करना ऐसा लिखनेमे क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना-इति ॥

तथा और इसके अगाडी श्रीतपगच्छके अर्वाचीन (थोडे कालके) तथा वर्त्तमानिक त्यागी, वैरागी, सयमी, उत्कृष्ट क्रिया करनेवाले जिनाज्ञा मुजब शास्त्रानुसार चलने वाले शुद्धप्ररूपक सत्यवादी और सुप्रसिद्ध विद्वान् नाम धराते भी प्रथम श्रीधर्म्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीमें

दूसरे श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिकामें तीसरे श्रीविनय विजयजीनें श्रीसुखबोधिकामें चौथे न्यायांभोनिधिजी श्री आत्मारामजीनें जैन सिद्धान्तसमाचारी नामा पुस्तकमें पांचवें। न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीनें मानवधर्म संहिता पुस्तकमें छठे श्रीवल्लभविजयजीनें वर्तमानिक जैन पत्र द्वारा सातवें श्रीधर्म्मविजयजीने पर्युषणा विचारनामकी छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तकमें और आठवा श्रावक भगुभाई फतेचंदने भी पर्युषणा विचार नामका लेख खास जैन पत्रके २३ में अङ्कके आदिमें। इन सबीमहाशयोनें जैन शास्त्रोंके अति गम्भिरार्थका तात्पर्य्य गुरुगमसे समझे विना श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंके तथा खास श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्योंके भी विरुद्ध होकर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप अधूरे अधूरे पाठ लिखके (परभवका भय न रखते मिथ्या) अपनी अपनी इच्छानुसार अधिक मास की गिनती निषेध सम्बन्धी अनेक तरहके विकल्प श्रीखरतरगच्छादिवालोंके ऊपर आक्षेपरूप किये है।

जिसको पढनेसें भोले जीवोंकी श्रद्धा भङ्ग होनेका कारण जानके निर्पक्षपाती आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक सत्य ग्राही भव्य जीवोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये उपरोक्त महाशयोंके लिखे हुए लेखोंकी समालोचनारूप समीक्षा शास्त्रानुसार तथा ग्रन्थकार महाराजके अभिप्राय सहित और युक्तिपूर्वक लिख दिखाता हु—

प्रश्न —तुम उपरोक्त महाशयोके लिखे हुए लेखोंकी समीक्षा करोगें जिसमें जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तक श्रीआत्मारामजी की बनाई हुई नही है किन्तु उनके शिष्य

श्रीकान्तिविजयजी तथाने श्रीअमरविजयजीने बनाई है ऐसा उस पुस्तकमें छपा है फिर श्रीआत्मारामजीका नाम उपरमे क्यों लिखा है और पर्युषणा विचार नामकी छोटी पुस्तकके लेखक भी श्रीधर्म्मविजयजी नहीं है किन्तु उनके शिष्य विद्याविजयजी है फिर श्रीधर्म्मविजयजीका नाम उपरमे क्यो लिखा है।

उत्तर—भो देवानुप्रिय! मेने उपरमे श्रीआत्माराम जीका और श्रीधर्म्मविजयजीका नाम लिखा है जिसका कारण यह हैं कि जैन शास्त्रानुसार गुरु महाराजकी आज्ञा विना शिष्य कोई कार्य्य नही कर सकता है इस लिये शिष्यके जो जो कार्य्य करनेकी जरूरत होवे सो सो गुरु महाराजसे निवेदन करे जब गुरु महराज योग्यता पूर्वक कार्य्य करने की आज्ञा देवें तब शिष्य गुरु महाराजकी आज्ञानुसार जो कार्य्य करना होवे सो कर सकता है उन कार्य्यके लाभा-लाभके अधिकारी गुरु महाराज होते है परन्तु शिष्य गुरु महाराजकी आज्ञानुसार कार्य्यकारक होता है इस लिये उस कार्य्यको करानेके मुख्य अधिकारी गुरु महाराज है इस न्यायके अनुसार प्रथम श्रीकान्तिविजयजीने तथा श्री-अमरविजयजीने, जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक वनानेके लिये श्रीआत्मारामजीसे आज्ञा मागी होगी और वनाये पीछे भी अवश्यमेव दिखाई होगी जिनको श्रीआत्माराम जीने पढके छपानेकी आज्ञा दिवी होगी तव छपके प्रसिद्ध हुई है जो श्रीआत्मारामजी वनानेकी तथा छपाके प्रसिद्ध करनेकी आज्ञा न देते तो कदापि प्रसिद्ध नही हो सकती इस लिये जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके प्रगटकारक

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोई कार्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना दोनों बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीवल्लभविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोई ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाविनाही प्रसिद्ध कर दिया होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा विना जो कोई भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्तसंसारी शास्त्रकारोंने कहा हैं ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता है तथापि अविनित पनेमें नही माने तो अपने गच्छसे अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मारामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुई होवे तब तो उस दोनो पुस्तकमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बातें लिखी है जिसके मुख्य लाभार्थी दोनो गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनो गुरुजनके नाम लिखे हैं—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लिखोकी समीक्षा करते है जिसमे प्रथम इस जगह श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी सुबोधिका (सुखबोधिका) वृत्तिविशेष करके श्रीतपगच्छमें प्रसिद्ध है तथा वर्तमानिक श्रीतपगच्छके साधु आदि प्राय सब कोई शुद्ध श्रद्धापूर्वक सरल जानके उसीको हर वर्ष गाव गावके विषे श्रीपर्युषणापर्वमे वाचते हैं जिसमे अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये लिखा हैं जिसको यहाँ लिखकर पीछे उसीमे जो अनुचित है

जिसकी समीक्षा करके दिखावुगा जिससे आत्मार्थी प्राणि योको सत्यासत्यकी स्वयमालुम हो सकेगा श्रीसुखबोधिका वृत्ति मेरे पास है जिसके पृष्ठ १४६ की दूसरी पुठीकी आदि से लेकर पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठीकी आदि तकका नीचे मुजब पाठ जानो यथा—

अन्तरावियत्ति अर्वागपि कल्पते पर न कल्पते ता रात्रि भाद्रशुक्लपञ्चमी उवायणा वित्तएत्ति अतिक्रमयितु तत्र परि- सामस्त्येन उपण वसन पर्युपणा सा द्वेधा गृहस्थज्ञाता गृहस्थै अज्ञाताच तत्र गृहस्थै अज्ञाता यस्या वर्षायोग्य पीठफल- कादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते साषाढपूर्णिमाया योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्चदिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपद सितपञ्चम्या एव गृहि- ज्ञाता तु द्वेधा सावत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र सावत्सरिक कृत्यानि॥सवत्सरप्रतिक्रान्ति१ लुञ्चन२ चाष्टम तप ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजा च ४ सघस्य क्षामण मिथ ५ ॥ १ ॥ एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रसितपञ्चम्यामेव कालिकाचार्यादेशा- च्चतुर्थ्यामपि केवलगृहिज्ञाता तु सा यत् अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासकदिनादारभ्य विशत्यादिनै वयमत्र स्थितास्म इति पृच्छता गृहस्थाना पुरो वदन्ति। तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढो वर्द्धते नान्येमासा- स्तट्टिप्पनकतु अधुना सम्यग् न ज्ञायते तत पञ्चाशतैश्च दिनै पर्युपणायुक्तेति वृद्धा अत्र कश्चिदाह ननु श्रावणवृद्धौ श्रावणसित चतुर्थ्यामेव पर्युपणायुक्ता नतु भाद्रसितचतुर्थ्या दिनानामशीत्यापत्ते । वासाण सवीसइराए मासेवइक्कते इति वचनबाधा स्यादिति चेन्मैव अहो देवाना प्रिय एवमाश्विन-

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोइ कार्य्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना सो भी बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीध-र्म्मविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोइ ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाबिनाही प्रसिद्ध कर दिया होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा बिना जो कोइ भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्तसंसारी शास्त्रकारोंने कहा है ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता हैं तथापि अविनित पनेसें नही माने तो अपने गच्छसे अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मा-रामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुइ होवे तब तो उस दोनो पुस्तकमें शास्त्रकारोंके विरु-द्धार्थमे अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बाते लिखी है जिसके मुख्य लाभार्थी दोनो गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनो गुरुजनके नाम लिखे है—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लिखोकी समीक्षा करते हैं जिसमे प्रथम इस जगह श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी सुबोधिका (सुखबोधिका) वृत्तिविशेष करके श्रीतपगच्छमे प्रसिद्ध है तथा वर्तमानिक श्रीतपगच्छके साधु आदि प्राय सब कोई शुद्ध श्रद्धापूर्वक सरल जानके उसीको हर वर्ष गाव गावके विषे श्रीपर्युषणापर्वमें वाचते हैं जिसमे अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये लिखा है जिसको यहाँ लिखकर पीछे [illegible]

णमित्यादि ॥ श्रीनिशीथचूर्णौ दशमोद्देशके एव यत्र कुत्रापि पर्यूपणानिरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेपितमेव नतु क्वाप्यागमे भद्दवयसुद्धपचमीए पज्जोसविज्ज इति पाठवत् अभिवढ्ढिअ वरिसे सावणसुद्धपचमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते तत कार्तिकमासप्रतिबद्ध चतुमासिक कृत्य करणे यथा नाधिकमास प्रमाण तथा भाद्रमासप्रतिबद्ध पर्युपणाकरणेऽपि नाधिकमास प्रमाणमिति त्यजकदाग्रहम् ।

श्रीविनयविजयजी कृत उपरके पाठका संक्षिप्त भावार्थ — अन्तरा वियसेत्ति इत्यादि कहनेसे आपाढपूर्णिमासे पचासमें दिन भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी जिसके अन्तरमे कारण योगे पर्यु-पणा करना कल्पे परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन करना नहीं कल्पे वर्षाकालमे सर्वथा एकस्थानमे निवास करना सो पर्युपणा-जिसमे योग्यक्षेत्रके अभावसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते दशपर्वतिथिमें यावत् पचासमे दिन भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे चतुर्थी की गृहस्थी लोगोको साधुके वर्षाकालका निवास अर्थात् पर्युपणाकी मालुम होती थी सो चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे परन्तु मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितनाम संवत्सरमे वीशदिने गृहस्थीलोगोको साधुके निवास (पर्युपणा) की मालुम होती थी सो जैन टिप्पनाके अनुसारे एकयुगके मध्यमें पोपकी तथा अन्तमे आपाढकी वृद्धिहोती थी इसके सिवाय और मासोके वृद्धिका अभावथा तव चन्द्रमें पचास दिनका तथा अभिवर्द्धितमे वीशदिनका नियम था, परन्तु अब वत्तमानकाले जैन टिप्पना नही वर्तता है तथा लौकिक टिप्पनामे हरेकमासोकी वृद्धि होती है इस लिये—पचाशतैवदिनै पर्युपणायुक्तेति वृद्धा—अथात् इस

षष्टी चतुर्मासककृत्य माश्विनसितचतुर्द्दश्यां कर्तव्यं स्यात् कार्तिकसितचतुर्द्दश्यां करणे तु दिनानां शतापत्त्या ॥ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइंदिएहिं ॥ इति समवायांगवचनबाधा स्यात् । न च वाच्य चतुर्मासकानां ह्री आषाढादिमासप्रतिबद्धानि तस्मात्कार्तिकचतुर्मासिक कार्तिकसितचतुर्द्दश्यामेव युक्तं दिनगणनायां त्वधिकमास कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां सप्ततिरेवेति कुत समवायांगवचनबाधा इति यतो यथा चतुर्मासकानि आषाढादिमास प्रतिबद्धानि तथा पर्युषणापि भाद्रपदमास प्रतिबद्धा तत्रैव कर्त्तव्या दिनगणनायां त्वधिकमास कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव कुतोऽशीतिवार्तापि न च भाद्रपदप्रतिबद्धं तु पर्युषणा अयुक्तं बहुष्वागमेषु तथा प्रतिपादनात् ॥ तथाहि ॥ "अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सालवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्ह पंचमीए पज्जोसवणा" ॥ इत्यादि ॥ पर्युषणाकल्पचूर्णौ तथा "तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्ज इत सोऊण निग्गओ, अभिमूहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो, पविट्ठेहिं अ भणिअ, भद्दवयसुद्धपंचमीए पज्जोसविज्जइ, समणसंघेण पडिवन्नं, ताहे रन्ना भणिअ, तद्दिवस मम लोगाणुवत्तीए इंदो अणुजाणेयव्वो होहित्ति साहू चेइए अणुपज्जुवासिस्सं, तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जइ, आयरिएहिं भणिअ, न वट्टति अतिक्कमितु, ताहे रन्ना भणिअ, ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहिं भणिअ, एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसवितं एवं जुगप्पहाणेहिं कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमतासव्वसाहू-

णमित्यादि ॥ श्रीनिशीथचूर्णौ दशमोद्देशके एव यत्र कुत्रापि पयूपणानिरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव नतु क्वाप्यागमे भद्दवयसुद्धपचमीए पज्जोसविज्ज इति पाठवत् अभिवड्ढिअ वरिसे सावणसुद्धपचमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते तत कार्तिकमासप्रतिबद्ध चतुर्मासिक कृत्य करणे यथा नाधिकमास प्रमाण तथा भाद्रमासप्रतिबद्ध पर्युषणाकरणेऽपि नाधिकमास प्रमाणमिति त्यजकदाग्रहम् ।

श्रीविनयविजयजी कृत उपरके पाठका संक्षिप्त भावार्थ — अन्तरा वियसेत्ति इत्यादि कहनेसे आपाढपूर्णिमासे पचासमें दिन भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी जिसके अन्तरमे कारण योगे पर्यु-षणा करना कल्पे परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन करना नही कल्पे वर्षाकालमे सर्वथा एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा-जिसमे योग्यक्षेत्रके अभावसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते दशपर्वतिथिमे यावत् पचासमें दिन भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे चतुर्थी को गृहस्थी लोगोको साधुके वर्षाकालका निवास अर्थात् पर्युषणाकी मालुम होती थी सो चन्द्रसवत्सरकी अपेक्षासे परन्तु मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितनाम सवत्सरमे वीशदिने गृहस्थीलोगोको साधुके निवास (पयुषणा) की मालुम होती थी सो जैन टिप्पनाके अनुसारे एकयुगके मध्यमे पोषकी तथा अन्तमे आपाढकी वृद्धिहोती थी इसके सिवाय और मासोके वृद्धिका अभावथा तब चन्द्रमें पचास दिनका तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिनका नियम था, परन्तु अब वर्त्तमानकाले जैन टिप्पना नही वर्तता है तथा लौकिक टिप्पनामे हरेकमासोकी वृद्धि होती है इस लिये—पचाशतैश्वदिनै पर्युषणायुक्तेति वृद्धा —अर्थात् इस

कालमें मास वृद्धि हो अथवा न हो परन्तु पचासदिने पर्युं-षणा करना योग्य है ऐसे वृद्धावाक्ये कहते हैं यहाँ कोई कहते हैं कि इस न्यायानुसार वर्तमान कालमें जब दो श्रावण होते हैं तब तो पचास दिनकी गिनतीसे दूजा श्रावण सुदी चौथके दिन पयुंषणा करना योग्य है परन्तु दो श्रावण होते भी भाद्रव सुदी चौथके दिन पयुंषणा करना योग्य नही है क्योंकि ८० दिन होजावेंगे, और श्रीकल्पसूत्रमें–वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते–अर्थात् आषाढ़ चौमासीसे एक मास और वीशदिन उपर, कुल पचाशदिन जानेसे पयुंषणा कहा है तथापि ८० दिने करनेसे सूत्रका इस वाक्यको बाधा आती हैं इस लिये ८० दिने पयुंषणा करना योग्य नही है,– ऐसा प्रश्नरूप वाक्य सुनके इसका उत्तर रूप वाक्य श्रीविनय विजयजी अपनी विद्वत्ताके जोरसे कहते हैं कि अहो देवाना प्रिय अहो इति आश्चर्य्ये हेमूर्ख अधिकमासकी गिनती करके दो श्रावण होनेसे दूजा श्रावणमे ५० दिने पर्युंषणा करना कहता हे तो दो आश्विन (आसोज) मास होनेसे ७० दिन की गिनती से दूजा आश्विन मासमे तेरेको चतुर्मासिक कृत्य करना पडेगा तथापि कार्तिक मासमे चतुर्मासिक कृत्य करेगा तो १०० दिन हो जावेगें, क्योंकि समणे भगवं महा-वीरे वासाणं सवीसइराए मासेवइक्कंते सत्तरिएराइ दिएहिं इति । श्रीसमवायांगजीमें पीछाडीके ७० दिन रहना कहा है इसवास्ते दूजा आसोजमें चौमासिक कृत्य करना पडेगा तथापि कार्तिकमे करेगा तो १०० दिन होजावेगें तो श्रीस-मवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा आवेगी इस लिये अधिक मासकी गिनती करनेसे दूजा श्रावणमे पर्युंषणा करना योग्य

है। ऐसा नही कहना क्योंकि चतुर्मासिक कृत्य आषाढादि-मासोमे करनेका नियम है तिस कारणसे दो आश्विनमास होवे तोभी कार्त्तिक चौमासी कार्त्तिक शुदी चतुर्द्दशीके दिन करना योग्य है जिसमे अधिकमास कालचूला होनेसे दिनो की गिनतीमे नही आता है इसलिये दो आश्विन होवे तो भी कार्तिकमे १०० दिने चौमासी किया ऐसा नही समझना किन्तु ७० दिने ही किया गया ऐसा कहनेसे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनमे बाधा नही आती है इस कारणसे जैसे चतुर्मासिक आषाढादि मासोमे करनेका नियम है तैसे ही पर्युषणा भी भाद्रपद मासमे करनेका नियम है जिससे उसी (भाद्रवे) मे करना चाहिये जिसमे भी अधिकमास आवे तो दिनोकी गिनतीमे नही लेनेसे दो श्रावण होते भी भाद्रवेमे पर्युषणा करनेसे ५० दिने ही किया ऐसा गिना जाता है इस लिये ८० दिनोकी वार्त्ता भी नही समझना तथा पर्युषणा भाद्रवेमे करनेका नियम है सो ही बहुत आगमोमे कहा है तैसा ही श्रीविनयविजयजीने यहाँ श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिका तथा श्रीनिशीथ चूर्णिका पाठ लिख दिखाया जिसमे भी श्रीकालकाचार्य्यजी महाराज आषाढ चतुर्मासीके पीछे कारणयोगे विहार करके सालिवाहनराजा की प्रतिष्ठानपुर नगरीमे आने लगे तब राजा और श्रमण सङ्घ आचार्य्यजी महाराजके सामने आये, और महा महोत्सवपूर्वक नगरीमे प्रवेश कराया और पर्युषणा पर्व नजिक आये थे जब आचार्य्यजी महाराजके कहनेसे भाद्रव शुदी पञ्चमीके दिन पर्युषणा करनेके लिये सर्व सङ्घने मजूर किया तब राजाने कहा कि महाराज उसी (पञ्चमी) के

कालमें मास वृद्धि हो अथवा न हो परन्तु पचासदिने पर्यु-षणा करना योग्य है ऐसे वृद्धाचार्य्य कहते हैं यहाँ कोई कहते हैं कि इस न्यायानुसार वर्तमान कालमें जब दो श्रावण होते हैं तब तो पचास दिनकी गिनतीसे दूजा श्रावण सुदी चौथके दिन पर्युषणा करना योग्य है परन्तु दो श्रावण होते भी भाद्रव सुदी चौथके दिन पर्युषणा करना योग्य नही है क्योंकि ८० दिन होजावेंगे, और श्रीकल्पसूत्रमें–वासाण सवीसइराए मासे वीइक्कंते–अर्थात् आषाढ चौमासीसे एक मास और वीशदिन ऊपर, कुल पचाशदिन जानेसे पर्युषणा कहा है तथापि ८० दिने करनेसे सूत्रका इस वाक्यको बाधा आती हैं इस लिये ८० दिने पर्युषणा करना योग्य नही है,– ऐसा प्रश्नरूप वाक्य सुनके इसका उत्तर रूप वाक्य श्रीविनय विजयजी अपनी विद्वत्ताके जोरसे कहते हैं कि अहो देवाना प्रिय अहो इति आश्चर्य्य हेमूर्ख अधिकमासकी गिनती करके दो श्रावण होनेसे दूजा श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करना कहता है तो दो आश्विन (आसोज) मास होनेसे ७० दिन की गिनती से दूजा आश्विन मासमे तेरेको चतुर्मासिक कृत्य करना पडेगा तथापि कार्तिक मासमे चतुर्मासिक कृत्य करेगा तो १०० दिन हो जावेगें, क्योंकि समणे भगवं महा-वीरे वासाण सवीसइराए मासेवइक्कंते सत्तरिएराइ दिएहि इति । श्रीसमवायांगजीमे पीछाडीके ७० दिन रहना कहा है इसवास्ते दूजा आसोजमें चौमासिक कृत्य करना पडेगा तथापि कार्तिकमे करेगा तो १०० दिन होजावेगें तो श्रीस-मवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा आवेगी इस लिये अधिक मासकी गिनती करनेसे दूजा श्रावणमे पर्युषणा करना योग्य

शयोके जान लेना—अब तीनो महाशयोंके लेखकी शास्त्रानु सार और युक्तिपूर्वक समीक्षा करता हु—इन तीनो महाशयो का मुख्य तात्पर्य्य सिर्फ इतना ही है कि अधिकमासको गिनतीमे नही लेना इस बातको पुष्ट करनेके लिये अनेक तरहके विकल्प लिखे है जिसको और अबमे समीक्षा करता हु उसीकी मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही पुरुष निष्पक्षपातसे पढके सत्यासत्यका स्वय विचारके गच्छका पक्षपातके दृष्टि रागका फदको न रखते असत्यको छोडना और सत्यको ग्रहण करना येही सज्जन पुरुषोकी मुख्य प्रतिज्ञाका काम है अब मेरी समीक्षा को सुनिये—श्रीधर्म्मसागरजी तथा श्रीजय विजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनो श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोको प्रथमतो अधिक मासको कालचूला जानके गिनतीमे निषेध करना ही सर्वथा अनुचित है क्यो कि श्रीअनन्ततीर्थङ्करगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज और प्रभाविकाचार्य्योंने अधिक मासकी दिनोमें, पक्षोमे, मासोमे, वर्षोमे, गिनती खुलासा पूर्वक किवी है तथा कालचूलाकी उत्तम ओपमा भी शास्त्रकारोने गिनती करने योग्य दिवी है और कालचूलाकी ओपमा देनेवाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर भी अधिक मासको निश्चयके साथ गिनते है जिसका और श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोने अधिक मासको गिनतीमे लिया है जिसके अनेक शास्त्रोके प्रमाणो सहित विस्तार पूर्वक उपरमे लिख आया हु जिन शास्त्रोके पाठोसे जैनश्वेताम्बर सामान्य पुरुष आ-त्मार्थी होगा और शास्त्रोके विरुद्ध परूपनासे ससारवृद्धिका भय रखनेवाला सम्यक्त्वी नामधारी होगा सो भी कदापि

दिन मेरे नगरीके लोगोकी मम्मतीसे इन्द्रध्वजका महोत्सव होता है जिससे एक दिनमें दो कार्य्यके महोत्सव बननेमें तकलीफ होगा इस लिये पर्युषणा छठकी करो तब आचार्य्यजी महाराजने कहा कि छठकी पर्युषणा करना नही कल्पे तब फिर राजाने कहा कि चौथको करो तब आचार्य्य जीने कहा यह बन सकता है, युगप्रधान महाराजकी इस बातको सर्व सङ्घने भी प्रमाण कियो है इत्यादि श्रीनिशीथ चूर्णिके दशवे उद्देशेमें इसी प्रकारसे पर्युषणाकी व्याख्या है सो भाद्रव मासमें करने की है जैसे ही मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सर (वर्ष)में श्रावण शुदी पञ्चमीकी पर्युषणा करनी ऐसा पाठ कोइ भी आगममें नही मिलता है तिस कारणसे कार्तिकमास बद्ध (आश्री) चतुर्मासिक कृत्य करनेमे जैसे अधिक मास प्रमाण नही है तैसे ही भाद्रव मास प्रति बद्ध पर्युषणा करने मे भी अधिकमास प्रमाण नही है इति अधिकमासकी गिनती करनेका कदाग्रहको छोडो—

उपरका लेख अधिकमासको गिनतीमे निषेध करनेके लिये श्रीविनयविजयजीकृत श्रीसुखबोधिकावृत्तिके उपरोक्त पाठसे हुवा है इसी ही तरहके मतलबका लेख श्रीधर्म्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमे तथा श्रीजयविजयजीने श्रीकल्प दीपिका वृत्तिमे अपने स्वहस्थे लिखा है सो यहाँ गौरवता ग्रन्थ बढ जानेके भयसे नही लिखते है जिसकी इच्छा होवे सो किरणावलीके तथा दीपिकाके नवमा व्याख्यानाधिकारे देख लेना इस तीनो महाशयोके लेख प्राय एक सदृश (तुल्य) है जिसमे भी विशेष प्रसिद्ध सुखबोधिका होनेसे मैने उपर लिखा है सोही भावार्थ तथा पाठ तीनो महा-

मासोकी गिनती तथा मासोके नाम	सवत्सरोके तथा मासोके प्रमाणसे	एक युगकेदिनो का प्रमाण
६७ नक्षत्र मासके	पाँच नक्षत्र सवत्सर और उपर सात नक्षत्र मास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६२ चन्द्र मासके	पॉच सवत्सर जिसमे वारह वारह मासोके तीन चन्द्र सवत्सर और तेरह तेरह मासोके दो अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पॉच सवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६१ ऋतु मासके	पाँच ऋतु सवत्सर और उपर एक ऋतुमास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६० सूर्य्य मासके	पॉच सूर्य्य सवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
५७ अभिवर्द्धित मास तथा उपर ७ दिन और एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करनेसे	चार अभिवर्द्धित सवत्सरके उपर नव (९) अभिवर्द्धित मास और ७ दिनके उपर एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जि-तना काल जानेसे	एक युगके १८३० दिन

अधिक मासकी गिनती निषेध नहीं करेगा तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय विद्वान् नाम धराते भी अपने बनाये ग्रन्थोंमें अपने स्वहस्ते श्रीतीर्थंकरादि महाराजोंके विरुद्ध होकर अधिक मासकी गिनती निषेध करते है सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नहीं इस लिये इन तीनो महाशयोंका कालचलाके नामसे अधिक मासकी गिनतीमें निषेध करना सर्वथा जैन शास्त्रोंके विरुद्ध है तथा और भी सुनिये जैन शास्त्रोंमें पांच प्रकारके मासोंमें और पांच प्रकारके संवत्सरोंमें एक युगके दिनोंका प्रमाण श्रीतीर्थंकरादि महाराजोंने कहा है सो सर्वही निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनती करने योग्य है जिसके कोष्ठक नीचे मुजब जानो यथा—

मासोंके नाम	दिनोंका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र मास	२७	६७	२१
चन्द्र मास	२९	६२	३२
ऋतु मास	३०	०	०
सूर्य्य मास	३०	६०	३०
अभिवर्द्धित मास	३१	१२४	१२१

संवत्सरोंके नाम	दिनोंका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र संवत्सर	३२७	६७	५१
चन्द्र संवत्सर	३५४	६२	१२
ऋतु संवत्सर	३६०	०	०
सूर्य्य संवत्सर	३६६	०	०
अभिवर्द्धित सं०	३८३	६२	४२

मासोकी गिनती तथा मासोके नाम	सवत्सरोके तथा मासोके प्रमाणसे	एक युगकेदिनो का प्रमाण
६७ नक्षत्र मासके	पॉच नक्षत्र सवत्सर और उपर सात नक्षत्र मास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६२ चन्द्र मासके	पॉच सवत्सर जिसमे बारह बारह मासोंके तीन चन्द्र सवत्सर और तेरह तेरह मासोंके दो अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पॉच सवत्सर जानेमे	एक युगके १८३० दिन
६१ ऋतु मासके	पॉच ऋतु सवत्सर और उपर एक ऋतुमास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६० सूर्य्य मासके	पॉच सूर्य्य सवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
५७ अभिवर्द्धित मास तथा उपर ७ दिन और एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करनेसे	चार अभिवर्द्धित सवत्सरके उपर नव (९) अभिवर्द्धित मास और ७ दिनके उपर एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानेसे	एक युगके १८३० दिन

अधिक मासकी गिनती निषेध नही करेगा तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय विद्वान् नाम धराते भी अपने बनाये ग्रन्थोंमें अपने स्वहस्ते श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोके विरुद्ध होकर अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नहीं इस लिये इन तीनो महाशयोका फाजवराये नामसे अधिक मासको गिनतीमें निषेध करना सर्वथा जैन शास्त्रोसे विरुद्ध है तथा और भी सुनिये जैन शास्त्रोमें पाच प्रकारके मासोसें और पाच प्रकारके सवत्सरोसे एक युगके दिनोका प्रमाण श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोने कहा है सो सर्वही निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनती करने योग्य है जिसके कोष्टक नीचे मुजब जानो यथा—

मासोके नाम	दिनोका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके	
		भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र मास	२७	६७	२१
चन्द्र मास	२९	६२	३२
ऋतु मास	३०	०	०
सूर्य्य मास	३०	६०	३०
अभिवर्द्धित मास	३१	१२४	१२१

सवत्सरोके नाम	दिनोका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके	
		भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र सवत्सर	३२७	६७	५१
चन्द्र सवत्सर	३५४	६२	१२
ऋतु सवत्सर	३६०	०	०
सूर्य्य सवत्सर	३६६	०	०
अभिवर्द्धित स०	३८३	६२	४२

मासोकी गिनती तथा मासोके नाम	सवत्सरोके तथा मासोके प्रमाणसे	एक युगकेदिनो का प्रमाण
६७ नक्षत्र मासके	पॉच नक्षत्र सवत्सर और उपर सात नक्षत्र मास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६२ चन्द्र मासके	पॉच सवत्सर जिसमे बारह बारह मासोंके तीन चन्द्र सवत्सर और तेरह तेरह मासोके दो अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पॉच सवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६१ ऋतु मासके	पॉच ऋतु सवत्सर और उपर एक ऋतुमास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६० सूर्य्य मासके	पॉच सूर्य्य सवत्मर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
५७ अभिवर्द्धित मास तथा उपर ७ दिन और एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करनेसे	चार अभिवर्द्धित सवत्सरके उपर नव (९) अभिवर्द्धित मास और ७ दिनके उपर एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानेसे	एक युगके १८३० दिन

उपरोक्त कोष्टको में पाँच प्रकारके मासोंका प्रमाणसे पाँच प्रकारके सवत्सरोंका प्रमाण, और एक युगके १८३० दिन का प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने कहा है जिसके अनुसार श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने भी श्रीवृहत-कल्पवृत्तिमें लिखा है सो पाठ भी उपर लिख आया हु जैन शास्त्रोंमें सूर्य्य मासकी गिनतीकी अपेक्षासे एकयुगके ६०सूर्य्य मासोंके पाँच सूर्य्य सवत्सरोंमें एक युगके १८३० दिन होते हैं जिसमें सूर्य्यमासकी अपेक्षा लेकर गिनती करनेसे मासवृद्धिका ही अभाव है परन्तु एकयुगके१८३० दिनकी गिनती बरोबर सामिल होनेके लिये खास ऋतुमासोंकी अपेक्षासे पाँच ऋतु सवत्सरोंमें सिर्फ एकही ऋतुमास वढता है और चन्द्रमासो की अपेक्षासे पाँच चन्द्रसवत्सरोंमें दो चन्द्रमास वढते हैं तथा नक्षत्रमासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे पाँच नक्षत्रसव त्सरोंमें सात नक्षत्रमास वढते है और अभिवर्द्धित मासोकी गिनतीकी अपेक्षासे तो चार अभिवर्द्धित सवत्सर उपर ९ अभिवर्द्धित मास और सात (७) दिन तथा एक अहो रात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानसे (नक्षत्रमास, चन्द्रमास, ऋतुमास, सूर्य्यमास, और अभिवर्द्धित, मास इन सबोके हिसाबके प्रमाण से) एक युगके १८३० दिन होजाते है सो उपरके कोष्टोमे खुलासा है उपरका प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वाचार्यो का तथा श्रीखरतरच्छके और श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोका कहा हुवा होनेसे इन महाराजोकी आशातनासे डरनेवाला प्राणी १८३०दिनोकी गिनतीमेंका एक दिन तथा घडी अथवा पल मात्र भी गिनतीमे निषेध नही कर सकता है तथापि

श्रीतपगच्छके अर्वाचीन तथा वर्तमानिक त्यागी, वैरागी सयमी, उत्कृष्टक्रिया करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक शुद्ध परूपक श्रद्धाधारी सम्यक्त्वी विद्वान् नाम धराते भी महान् उत्तम श्रीतीर्थङ्कर गणधर और पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खास श्रीतपगच्छकेही पूर्वजपूज्य पुरुषोकी आशातनाका भय न रखते चन्द्रमासोकी अपेक्षासे जो अधिक मास होता है जिसकी गिनती निषेध करके उत्तम पुरुषोके कहे हुवे पॉच प्रकारके मासोका तथा सवत्सरोका प्रमाणको भङ्ग करके एकयुगके दिनोकी गिनतीमे भी भङ्ग डालते हे जिन्होकी विद्वत्ताको मे कैसी ओपमा लिखु इसका विचार करता था जिसमे श्रीआत्मारामजीकाही बनाया अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थका लेख मुझे उसी वख्तयाद आया सो लिख दिखाता हु अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २९४ के अन्तसे पृष्ठ २९६ के आदि तक का लेख नीचे मुजब जानो— •

सविज्ञ गीतार्थ मोक्षाभिलाषी तिस तिसकाल सम्बन्धी बहुत आगमोंके जानकार और विधिमार्गके रसीये बहुमान देनेवाले सविज्ञ होनेसे पूर्वसूरि चिरन्तन मुनियोके नायक जो होगये है तिन्होंनें निषेध नही करा है, जो आचरित आचरण सर्वधर्मी लोक जिस व्यवहारको मानते है तिसको विशिष्ट श्रुत अवधि ज्ञानादि रहित कौन निषेध करे? पूर्व पूर्वतर उत्तमाचार्य्योंकी आशातनासे डरनेवाला अपितु कोई नही करे बहुल कर्मीको वजके ते पूर्वोक्तगीतार्थो ऐसे विचारते है जाज्वल्यमान अग्निमे प्रवेश करनेवालेमे भी अधिक साहस यह है उत्सूत्र प्ररूपणा, सूत्र निरपेक्ष देशना, कटुक विपाक, दारुण, खोटे फलकी देनेवाली, ऐसे जानते हुए भी

उपरोक्त कोष्टको में पाँच प्रकारके मासोंका प्रमाणसे पाँच प्रकारके संवत्सरोंका प्रमाण, और एक युगके १८३० दिन का प्रमाण श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने कहा है जिसके अनुसार श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने भी श्रीबृहत्कल्पवृत्तिमें लिखा है सो पाठ भी उपर लिख आया हुं जैन शास्त्रोंमें सूर्य्य मासकी गिनतीकी अपेक्षासे एकयुगके ६०सूर्य्य मासोंके पाँच सूर्य्य संवत्सरोंमें एक युगके १८३० दिन होते हैं जिसमें सूर्य्यमासकी अपेक्षा लेकर गिनती करनेसे मासवृद्धिका ही अभाव है परन्तु एकयुगके १८३० दिनकी गिनती बरोबर सामिल होनेके लिये खास ऋतुमासोंकी अपेक्षासे पाँच ऋतु संवत्सरोंमें सिर्फ एकही ऋतुमास वढता है और चन्द्रमासो की अपेक्षासे पाँच चन्द्रसंवत्सरोंमें दो चन्द्रमास वढते हैं तथा नक्षत्रमासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे पाँच नक्षत्रसंवत्सरोंमें सात नक्षत्रमास वढते है और अभिवर्द्धित मासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे तो चार अभिवर्द्धित संवत्सर उपर ९ अभिवर्द्धित मास और सात (७) दिन तथा एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानसे (नक्षत्रमास, चन्द्रमास, ऋतुमास, सूर्य्यमास, और अभिवर्द्धित, मास इन सबोंके हिसाबके प्रमाण से) एक युगके १८३० दिन होजाते है सो उपरके कोष्टोमे खुलासा है उपरका प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वाचार्यो का तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंका कहा हुवा होनेसे इन महाराजोंकी आशातनासे डरनेवाला प्राणी १८३०दिनोंकी गिनतीमेंका एक दिन तथा घडी अथवा पल मात्र भी गिनतीमे निषेध नही कर सकता है तथापि

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चन्द्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमे प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते है जिन्होका त्याग, वैराग्य, सयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके वदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगें सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार सेअधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमे सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिकदिनादारभ्य विशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोने लिखा है इस वाक्यमे अभिवर्द्धित वर्ष (सवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष मास वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है इसमे अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम सवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचियत्, मरीचि एक दुभाषित वचनसे दुःखरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं। संसारकी वृद्धि और माया मृषा करते है तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ़ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्त्त चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यच गतिका आयु बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे संसार समुद्रमें महादुःख अंगीकार करनें से।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमें आते है—दुषमकालमे वक्रजड बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक संसार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियो करके विधिमार्गको निषेध करने मे प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगममे नही कथन करी है तिनको करते है और जे आगमने निषेध नही करी है चिरतन जनोने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते है और कहते हैं—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमे श्री आत्मारामजीके लेखमे जो पूर्वाचार्य्योनें आचरीत (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवालाको

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चद्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमे प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते है जिन्होका त्याग, वैराग्य, सयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेगें सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना—

औरश्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार सेअधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमें सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुमासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोने लिखा है इस वाक्यमें अभिवर्द्धित वर्ष (सवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष मास वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है उसमे अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम सवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचियत, मरीचि एक दुर्भाषित वचनसे दु खरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं। संसारकी वृद्धि और माया मृषा करते हैं तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्त चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यच गतिका आयु बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे ससार समुद्रमें महादु ख अंगीकार करनें से।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमे आते है—दुषमकालमें वक्रजड बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक ससार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियो करके विधिमार्गको निषेध करने मे प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगममे नही कथन करी है तिनको करते है और जे आगमने निषेध नही करी है चिरतन जनोने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते है और कहते हैं—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमे श्री आत्मारामजीके लेखमें जो पूर्वाचार्योंनें आचरीत (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवालाको

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चद्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमे प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते है जिन्होका त्याग, वैराग्य, सयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगें सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार सेअधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमें सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिक-दिनादारभ्य विशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोने लिखा है इस वाक्यमें अभिवर्द्धित वर्ष (सवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष नाम वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है इसमे अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके विना अभिवर्द्धित नाम सवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचियत, मरीचि एक दुभाषित वचनसे दु खरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण ससार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका यन्ध करते हैं। ससारकी वृद्धि और माया मृपा करते हैं तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ़ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्ता चारी होवे शल्य सयुक्त होवे सो जीव तिर्यच गतिका आयु यन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे ससार समुद्रमें महादु ख अगीकार करनें से।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमें आते है—दुषमकालमे वक्रजड यहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक ससार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियो करके विधिमार्गको निषेध करने में प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगममे नही कथन करी है तिनको करते है और जे आगमने निषेध नही करी है चिरतन जनोने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते है और कहते है—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमें श्री आत्मारामजीके लेखमें जो पूर्वाचार्य्योनें आचरीत (प्रमाण) करी हुइ बातको निषेध करनेवालाको

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देशना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चद्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमें प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते है जिन्होका त्याग, वैराग्य, सयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगे सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार सेअधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यसें भी अधिक मास गिनतीमे सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोने लिखा है इस वाक्यमे अभिवर्द्धित वर्ष (सवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष नाम वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है इसमे अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम सवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचियत, मरीचि एक दुभाषित वचनसे दुःखरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका बन्ध करते है। संसारकी वृद्धि और माया मृषा करते है तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्ताचारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यच गतिका आयु बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे संसार समुद्रमें महादुःख अंगीकार करनें से।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमे आते है—दुषमकालमे वक्रजड बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक संसार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियो करके विधिमार्गको निषेध करने मे प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगममे नही कथन करी है तिनको करते हैं और जे आगमने निषेध नही करी है चिरतन जनोने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते है और कहते हैं—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमे श्री आत्मारामजीके लेखमें जो पूर्वाचार्य्योनें आचरीत (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवालाको

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चद्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमे प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते हैं जिन्होका त्याग, वैराग्य, सयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके वदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगें सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका विलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार सेअधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमे सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोने लिखा है इस वाक्यमे अभिवर्द्धित वर्ष (सवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष मास वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है इसमें अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम सवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचियत्, मरीचि एक दुर्भाषित वचनसे दुःखरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं। संसारकी वृद्धि और माया मृषा करते है तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्त्ता चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यंच गतिका आयु बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नहीं है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे संसार समुद्रमें महादुःख अंगीकार करनें से।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमें आते है—दुषमकालमे वक्रजड बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक संसार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियो करके विधिमार्गको निषेध करने में प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगममे नही कथन करी है तिनको करते है और जे आगमने निषेध नही करी है चिरतन जनोने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते है और कहते है—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमे श्री आत्मारामजीके लेखमे जो पूर्वाचार्य्योंनें आचरीत (प्रमाण) करी हुइ बातको निषेध करनेवालाको

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देशना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार करोकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चन्द्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमें प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते है जिन्होका त्याग, वैराग्य, संयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगें सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकारसे अधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोके लिखे वाक्यने भी अधिक मास गिनतीमें सिद्ध होता है सोही दिखाते है (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिक-दिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिता स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोंने लिखा है इस वाक्यमें अभिवर्द्धित वर्ष (संवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष नाम वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीसे होता है इसमें अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके विना अभिवर्द्धित नाम संवत्सर नही बनता है

देते हैं, मरीचिवत्, मरीचि एक दुर्भाषित वचनसे दुःखरूप समुद्रको प्राप्त हुआ, एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसार में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जीव चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं। संसारकी वृद्धि और माया मृषा करते है तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करे, और सन्मार्गका नाश करे सो गूढ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्त्ता चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यंच गतिका आयु-बन्ध करता है। उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टको देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र कहता है क्योंकि जिसका उरला परला काठा नही है ऐसे संसार समुद्रमें महादु ख अंगीकार करनें से ।

प्रश्न—क्या शास्त्रको जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है।

उत्तर—करता है सोई दिखाते है देखनेमें आते है—दुषमकालमे वक्रजड बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक संसार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियों करके विधिमार्गको निषेध करने मे प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियाको जे आगमसे नही कथन करी है तिनको करते है और जे आगमने निषेध नही करी है चिरंतन जनोने आच रण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते हैं और कहते हैं—यह क्रियाओ धर्मीजनोको करने योग्य नही है।

उपरमे श्री आत्मारामजीके लेखमे जो पूर्वाचार्य्योनें आचरीत (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवालाको

इन तीनो महाशयोने प्रथम अभिवर्द्धित वर्षे इत्यादि वाक्य लिखे जिससे अधिक मासकी गिनती सिद्ध हुई और (पञ्चाशतैव दिनै पर्युषणा युक्तेति वृद्धा) यह वाक्य लिखके इस कालमे पचास दिने पर्युषणा करना ऐसे सिद्ध किया जिसमें जैन टिप्पनाके अभावसे भी पचास दिनका तो निश्चय रक्खा इस लिये वर्तमान कालमे पर्युषणा सर्वथा भाद्रव पदमे ही करनेका नियम नही रहा क्योंकि श्रावण मासकी वृद्धि होने से दूजा श्रावणमे और दो भाद्रव होनेसे प्रथम भाद्रवमें पचास दिनकी गिनती पूरी होती है यह मतलब तीनो महाशयोके लिखे हुवे वाक्यसेभी सिद्ध होता है तथापि उपर का मतलबको ये तीनो महाशय जानते भी गच्छके पक्षपात के जोरसे अपनी विद्वत्ताकी लघुता कारक और अप्रमाण रूप विसवादी (पूर्वापर विरोधि) वाक्य अपने स्वहस्ते लिखते बिलकुल विचार न किया और आषाढ चौमासीसे दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रव शुदी तक ८० दिन प्रत्यक्ष होते है जिसको भी निषेध करनेके लिये (पर्युषणापि भाद्रपदमास प्रति बद्धा तत्रैव कर्तव्या दिनगणनायान्त्वधिक मास कालचूलेत्य विवक्षणाद्दिनाना पञ्चाशतैव कुतोऽशीति वार्त्तापि)इन अक्षरोको तीनो महाशयोने लिखे है जिस मे मास वृद्धि होनेसे भी भाद्रपदमे पयुषणा करना और दो श्रावण होवे तोभी भाद्रवेमे पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते है ऐसी वार्त्तापि नही करना क्योंकि अधिक मास कालचूला होनेसे दिनोंकी गिनतीमे नही आता है इस लिये ५० दिने पर्युषणा किया समझना ऐसे मतलबके वाक्य लिखना तीनो महाशयोके पूर्वापर विरोधी तथा पूर्वाचार्य्योकी आज्ञा

क्योंकि अधिक मासकी गिनती नही करनेसे बारह चन्द्रमासोंसे चन्द्र संवत्सर होता है परन्तु अभिवर्द्धित नाम नही बनेगा जब अधिक मासकी गिनती होगा तब ही तेरह चन्द्रमासोसे अभिवर्द्धित नाम संवत्सर बनेगा जिसका विस्तार ऊपर लिख आये हैं इस लिये अधिक मासकी गिनती तीनो महाशयोंके वाक्यसे सिद्ध प्रत्यक्ष पने होती है और फिरभी इन तीनो महाशयोंने (जैन टिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढो एव वर्द्धते नान्येमासा तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायते तत पञ्चाशतैव दिनै पर्युषणा सङ्गतेति वृद्धा) यह भी अक्षर लिखे हैं सो इन अक्षरोसे भी सूर्य्यवत् प्रकाशकी तरह प्रगट दिखाय होता है कि जैन टिप्पनामें पौष और आषाढकी वृद्धि होती थी सो टिप्पना इस कालमें नही हैं इस लिये पचास दिने पर्युषणा करना योग्य है यह श्रीतपगच्छके पूर्वज वृद्धाचार्योंका कहना है सो बातभी सत्य है क्योंकि इन तीनो महाशयोंके परमपूज्य श्रीतपगच्छके प्रभाविक श्रीकुलमण्डन सूरिजीने भी लिखी है जिसका पाठ इसी पुस्तकके नवमे (९) पृष्ठमे छप गया है—

अधिक मासकी गिनती अनेक जैन शास्त्रोंसे तथा ऊपरके वाक्यसे भी सिद्ध होती है और पचास दिने पर्युषणा करना अपने पूर्वजोंकी आज्ञासे तीनो महाशय लिखते हैं जिससे पाठकवर्ग विचार करे तो शीघ्रही प्रत्यक्ष मालुम हो सकता है कि वर्त्तमानमे दो श्रावण होतो दूजा श्रावणमे अथवा दो भाद्रव होतो भी प्रथम भाद्रवमे पचास दिनोंकी गिनतीसे ही पर्युषणा करना चाहिये यह न्याय स्वयं सिद्ध है

जिसमें प्राय करके गाव गावमें श्रीतपगच्छके सव साधुजी अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध करते है जिससे श्रीतीर्थङ्करगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्ये तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंकी आज्ञाभङ्गका कारण होता है सो आत्मार्थी पुरुषोंको करना उचित नही है इसलिये जो श्रीतपगच्छके वर्तमानिक मुनिमहाशयोंको जिनाज्ञा विरुद्ध परूपणाका भय होवे तो अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका छोड देना ही उचित है और आजतक निषेध किया जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकर अपनी आत्माको उत्सूत्र भाषणके पापकृत्योंसे बचानी चाहिये, तथापि विद्वत्ताके अभिमानसे और गच्छके कदाग्रहका पक्षपातके जोरसे उपर की बातको अङ्गीकार नही करते हुए अधिकमासकी गिनती निषेध करते रहेंगे तो आत्मार्थीपना नही रहेगा तथा अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे कोई आत्मार्थी प्रमाण नही कर सकता है इस लिये जैन शास्त्रानुसार श्रीतीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी तथा अपने पूर्वाचार्योंकी आज्ञा मुजब अधिकमासकी गिनती सर्वथा प्रकारसे अवश्यमेव प्रमाण करनी सोही सम्यक्त्व धारी पुरुषोंका काम है जैनटिप्पनानुसार पौष तथा आषाढमासकी वृद्धि होती थी जब भी गिनतीमे लेते थे इस कारणसे तेरह चन्द्रमासोंसे सवत्सरका नाम अभिवर्द्धित होता था, सो वर्तमान कालमें भी अनेक जैन शास्त्रोंमे प्रसिद्ध है तथा श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी, ये तीनो महाशय भी अभिवर्द्धित सवत्सर लिखते हैं जिसमें अधिकमासकी गिनती आजाती है इस मतलबका

खण्डनरूप सर्वथा जैन शास्त्रोमे और युक्तिसे भी प्रतिकुल है क्योंकि सवत्सरी अधिक मासको गिनतीमें लेनेसेही अभिवर्द्धित नाम सवत्सर बनता है सो अभिवर्द्धित सवत्सर तीनो महाशयोने उपरमें लिखा है सो अभिवर्द्धित सवत्सर का नाम श्रीतीर्थंकरादि महाराजोकी आज्ञानुसार कायम तीनो महाशय रखेंगे तो अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबका लिखना तीनो महाशयोका सर्वथा मिथ्या हो जायगा—

और अधिकमास कालचूला है सो दिनोकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबको कायम रखेंगे तो जो अधिकमास की गिनतीसे अभिवर्द्धित नाम सवत्सर होता है सो नही बनेगा यह दोनो बात पूर्वापर विरोधी होनेसे नही बनेगे इस लिये अबजो ये तीनो महाशय अधिकमासको दिनोकी गिनतीमें नही लेवेंगे तब तो श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि तथा श्रीतपगच्छके नायक पूर्वाचार्योंने अधिक मासको दिनो की गिनतीमें लिया है जिन महाराजोके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप तीनो महाशयोका वचन होगया सो आत्मार्थियेोको सर्वथा त्यागने योग्य है इस लिये तीनो महाशयोको जिनाज्ञा विरुद्ध परूपणाका भय होता तो अधिकमासकी गिनती निषेध किवी जिसका मिथ्या दुष्कृत्यादिसे अपनी आत्मा को उत्सूत्र भाषणके कृत्योसे बचानी थी सो तो वर्तमान कालमे रहे नही है परलोक गयेको अनेक वर्ष होगये है परन्तु वर्तमान कालमें श्रीतपगच्छके अनेक साधुजी विद्वान् नाम धराते है और उन्ही तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यको सत्य मानते है तथा हर वर्ष उसीको पर्युषणामे वाँचते है

अपने बनाये ग्रन्थमे लिखना क्या उचित है। कदापि नही और इसी ही श्रीधर्म्मरत्नप्रकरणके दूसरे भागमे पृष्ठ २४६ की आदिसे पृष्ठ २४७ की आदि तकका लेखमे विसवादी आदि वाक्य बोलने वालेको जो फलकी प्राप्ति होती है सो दिखाते है यथा—

अन्यथा भणनमयथार्थजल्पनमादिशब्दाद्वचक क्रिया दोषोपेक्षाऽसद्भावमैत्री परिग्रहस्तेषु सत्सु श्रावकस्येति भाव —अबोधेधर्माप्राप्तेर्बीज मूलकारण परस्य मिथ्या दृष्टे-र्नियमेन निश्चयेन भवतीति शेष ।

तथाहि–श्रावकमेतेषु वर्त्तमानमालोक्य वक्तार सम्भ-वन्ति ॥ धिगस्तु जैन शासन? यत्र श्रावकस्य शिष्टजन-निन्दितेऽलीकभाषणादौ कुकर्मणि निवृ`तिर्नोपदिश्यते ॥ इति निन्दाकरणादमी प्राणिनो जन्मकोटिष्वपि बोधि न प्राप्नुवन्तीत्यबोधि बीजमिदमुच्यते ततश्चाबोधिबीजाद् भव-परिवृद्धिर्भवति तन्निन्दाकारिणस्तन्निमित्तभूतस्य श्रावकस्यापि यद्वाचि—शासनस्योपघातेयो–नाभोगेनापि वर्त्तते सत-न्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येषा प्राणिनामिति ॥ १ ॥ बध्नात्यपि तदेवाल पर ससारकारण विपाकदारुण घोर सर्वानर्थ विवर्द्धन (मिति) ॥ २ ॥

टीकानो अर्थ–अन्यथा भणन एटले अयथार्थ भाषण आदि शब्द थी वचक क्रिया दोषोनी उपेक्षा तथा कपट मैत्री लेवी अेदोषो होय तो श्रावक बीजा मिथ्या दृष्टि जीवने नक्कीपणे अबोधिनु बीजथइ पडेछे एटले के तेथी बीजा धर्म्मपामी शक्ता नथी । कारणके अे दोषोमा वर्तता श्रावकने जोइ तेओ येवुबोलेके "जिन शासनने धिक्कार

विचार न करते उलटा विरुद्धार्थ में तीनो महाशयोंने अपने स्वय विसवादी (पूर्वापरविरोधि) वाक्यरूप अधिक मास कालचूला है सो दिनोकी गिनतीमें नही आता है ऐसा लिख दिया, और विसवादी वाक्यका विचार भी न किया। विसवादी पुरुषका दुनियामें भी कोई भरोसा नही करता है तथा राजदरबारमें भी विसवादी पुरुष झूठा अप्रमाणिक होता है और जैनशास्त्रोमें तो श्रावकको भी धर्म व्यवहारमें विसवादी वचन बोलनेका निषेध किया है सोही दिखाते हैं श्रीआत्मारामजीने अज्ञानतिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २५८में श्रावकको यथार्थ कहना अविसवादी वचन धर्म्म व्यवहारमें॥ तथा श्रीधर्म्मसग्रह वृत्तिके ग्रन्थमें भी यही बात लिखी है और श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें भी यही बात लिखी है सोही दिखाते है। श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्ति गुजरातीभाषा सहित श्रीपालीताणामें श्रीविद्याप्रसारकवर्ग है जिसकी तरफसे छपके प्रसिद्ध हुवी है जिसके दूसरे भागमें पृष्ठ २१४ विषे यथा—

ऋजुप्रगुण व्यवहरणमृजुव्यवहारो भावश्रावकलक्षणश्चतुर्द्धा चतु प्रकारो भवति तद्यथा—यथार्थभणनमविसवादि वचन धर्मव्यवहारे।

अर्थ—ऋजु एटले सरल चालवु ते ऋजुव्यवहार ते चार प्रकारनो छे जेमके एकतो यथार्थ भणन एटले अविसवादी बोलवु ते धर्मनीबाबतमा।

देखिये अब उपरमें श्रावकको भी धर्म्म व्यवहारमें विसवादीरूप मिथ्याभाषण बोलनेका जैन शास्त्रोमे नही कहा है। तो फिर विद्वान् साधुजी होकर विसवादी वाक्य

अपने बनाये ग्रन्थमे लिखना क्या उचित है। कदापि नही और इसी ही श्रीधर्म्मरत्नप्रकरणके दूसरे भागमे पृष्ठ २४६ की आदिसे पृष्ठ २४७ की आदि तकका लेखमे विसवादी आदि वाक्य बोलने वालेको जो फलकी प्राप्ति होती है सो दिखाते है यथा—

अन्यथा भणनमयथार्थजल्पनमादिशब्दाद्वचक क्रिया दोपोपेक्षाऽसद्भावमैत्री परिग्रहस्तेपु सत्सु श्रावकस्येति भाव —अबोधेर्धर्मोप्राप्तेर्बीज मूलकारण परस्य मिथ्या दृष्टे-र्नियमेन निश्चयेन भवतीति शेप ।

तथाहि—श्रावकमेतेपु वर्त्तमानमालोक्य वक्तार सम्भ-वन्ति ॥ धिगस्तु जैन शासन? यत्र श्रावकस्य शिष्टजन-निन्दितेऽलीकभापणादौ कुकर्मणि निर्वृतिर्नोपदिश्यते ॥ इति निन्दाकरणादमी प्राणिनो जन्मकोटिष्वपि बोधि न प्राप्नुवन्तीत्यबोधि बीजमिदमुच्यते ततश्चाबोधिबीजाद् भव-परिवृद्धिर्भवति तन्निन्दाकारिणस्तन्निमित्तभूतस्य श्रावकस्यापि यदवाचि—शासनस्योपघातेयो—नाभोगेनापि वर्त्तते सत-न्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येपा प्राणिनामिति ॥ १ ॥ बध्नात्यपि तदेवाल पर ससारकारण विपाकदारुण घोर सर्वानर्थ विवर्द्धन (मिति) ॥ २ ॥

टीकानो अर्थ—अन्यथा भणन एटले अयथार्थ भापण आदि शब्द थी वचक क्रिया दोपोनी उपेक्षा तथा कपट मैत्री लेवी अेदोपो होय तो श्रावक बीजा मिथ्या दृष्टि जीवने नक्कीपणे अबोधिनु बीजथइ पडेछे एटले के तेथी बीजा धर्म्मपामी शक्ता नथी। कारणके अे दोपोमा वर्तता श्रावकने जोइ तेओ येवुबोलेके "जिन शासनने धिक्कार

विचार न करते उलटा विरुद्धार्थमें तीनो महाशयोंने अपने स्वय विसवादी (पूर्वापरविरोधि) वाक्यरूप अधिक मास कालचूला है सो दिनोकी गिनतीमें नही आता है ऐसा लिख दिया, और विसवादी वाक्यका विचार भी न किया। विसवादी पुरुषका दुनियामें भी कोई भरोसा नही करता है तथा राजदरबारमें भी विसवादी पुरुष झूठा अप्रमाणिक होता है और जैनशास्त्रोमें तो श्रावकको भी धर्म व्यवहारमें विसवादी वचन बोलनेका निषेध किया है सोही दिखाते हैं श्रीआत्मारामजीने अज्ञानतिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २५८में श्रावकको यथार्थ कहना अविसवादी वचन धर्म्म व्यवहारमें॥ तथा श्रीधर्म्मसग्रह वृत्तिके ग्रन्थमें भी यही बात लिखी है और श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें भी यही बात लिखी है सोही दिखाते है। श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्ति गुजरातीभाषा सहित श्रीपालीताणामें श्रीविद्याप्रसारकवर्ग है जिसकी तरफसे छपके प्रसिद्ध हुवी है जिसके दूसरे भागमें पृष्ठ २१४ विषे यथा—

ऋजुप्रगुण व्यवहरणमृजुव्यवहारो भावश्रावकलक्षणश्चतुर्द्धा चतु प्रकारो भवति तद्यथा—यथार्थभणनमविसवादि वचन धमव्यवहारे।

अर्थ—ऋजु एटले सरल चालवु ते ऋजुव्यवहार ते चार प्रकारनो छे जेमके एकतो यथार्थ भणन एटले अविसवादी बोलवु ते धर्मनीबाबतमा।

देखिये अब उपरमें श्रावकको भी धर्म्म व्यवहारमे विसवादीरूप मिथ्याभाषण बोलनेका जैन शास्त्रोमें नही कहा है। तो फिर विद्वान् साधुजी होकर विसवादी वाक्य

अपने बनाये ग्रन्थमे लिखना क्या उचित है। कदापि नहीं और इसी ही श्रीधर्म्मरत्नप्रकरणके दूसरे भागमे पृष्ठ २४६ की आदिसे पृष्ठ २४७ की आदि तकका लेखमे विसवादी आदि वाक्य बोलने वालेको जो फलकी प्राप्ति होती है सो दिखाते है यथा—

अन्यथा भणनमयथार्थजल्पनमादिशब्दाद्वचक क्रिया दोषोपेक्षाऽसद्भावमैत्री परिग्रहस्तेषु सत्सु श्रावकस्येति भाव —अबोधेर्धर्माप्राप्तेर्बीज मूलकारण परस्य मिथ्या दृष्टे-र्नियमेन निश्चयेन भवतीति शेष ।

तथाहि—श्रावकमेतेषु वर्त्तमानमालोक्य वक्तार सम्भवन्ति ॥ धिगस्तु जैन शासन? यत्र श्रावकस्य शिष्टजन-निन्दितेऽलीकभाषणादौ कुकर्मणि निवृत्तिर्नोपदिश्यते ॥ इति निन्दाकरणादमी प्राणिनो जन्मकोटिष्वपि बोधि न प्राप्नुवन्तीत्यबोधि बीजमिदमुच्यते ततश्चाबोधिबीजाद् भव-परिवृद्धिर्भवति तन्निन्दाकारिणस्तन्निमित्तभूतस्य श्रावकस्यापि यदवाचि—शासनस्योपघातेयो—नाभोगेनापि वर्त्तते सत-न्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येषा प्राणिनामिति ॥ १ ॥ बध्नात्यपि तदेवाल पर ससारकारण विपाकदारुण घोर सर्वानर्थ विवर्द्धन (मिति) ॥ २ ॥

टीकानो अर्थ—अन्यथा भणन एटले अयथार्थ भाषण आदि शब्द थी वचक क्रिया दोषोनी उपेक्षा तथा कपट मैत्री लेवी अेदोषो होय तो श्रावक बीजा मिथ्या दृष्टि जीवने नक्कीपणे अबोधिनु बीजथइ पडेछे एटले के तेथी बीजा धर्म्मपामी शक्ता नथी। कारणके अे दोषोमा वर्तता श्रावकने जोइ तेओ येवुबोलेके "जिन शासनने धिक्कार

थाओ'' के ज्या श्रावकोने आवा शिष्टजनने निन्दनीय मृषा भाषण वगेरे कुकर्म थी अटकाववानो उपदेश करवामा नथी आवतो अेवी रीते निन्दा करवाथी ते प्राणिओ क्रोड-जन्मो लगी पण बोधिने पामी शकता नथी तेथी ते अबोधिबीज कहवायें छे अने ते अबोधिबीजथी तेवी निन्दा करनारनो ससारवधे छे एटलुज नहीं पण तेमा निमित्त भूत श्रावकनो ससार वधे छे, जे माटे कहेलु छे के—जे पुरुष अजाणता पण शासननी लघुता करावे ते बीजा प्राणिओने तेवी रीते मिथ्यात्वनो हेतु थई तेना जेटलाज, ससारनु कारण कर्म बाधवा समर्थ थइ पडे छे के जे कर्मविपाक दारुण घोर अने सर्व अनर्थनु वधारनार थइ पडेछे ॥ १-२ ॥

उपरमें अन्यथा अयथार्थ भाषण अर्थात् विसवादी वाक्यरूप मिथ्याभाषणादि करने वाला श्रावक निश्चय करके मिथ्या दृष्टि जीवोको विशेष मिथ्यात बढानेवाला होता है और उससे दूसरे जीव धर्म प्राप्त नही कर सकते हैं किन्तु ऐसे श्रावकको देखके जैन शासनकी निन्दा करने वालोको ससारकी वृद्धि होती है । और विसवादीरूप मिथ्याभाषण करनेवाला श्रावक भी निन्दा करानेका कारणरूप होनेसे अनन्त ससारी होता है तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुषोको विचार करना चाहिये कि श्रीधर्मसागरजी श्रीजय-विजयजी श्रीविनयविजयजी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् होते भी अनेक जैनशास्त्रोके विरुद्ध और अपने स्वहस्ते अभिवर्द्धित सवत्सर उपरमें लिखा है जिसका भी भङ्ग कारक अधिकमास की गिनती निषेधरूप विसवादी मिथ्या वाक्य भी अपने स्वहस्ते लिखते अनन्त ससार वृद्धिका भी

भय नही करते हैं तो अब ऐसे विद्वानोंको आत्मार्थी कैसे कहे जावे और अधिक मासकी गिनती निषेधरूप विसवादी मिथ्या वाक्य इन विद्वानोका आत्मार्थी पुरुष कैसे ग्रहण करेंगे अपितु कदापि नही तथापि जो अधिक मासकी गिनती निषेध श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा विरुद्ध होते भी वर्तमानिक पक्षपाती जन करते है जिन्होको सम्यक्त्वरूप रत्न कैसे प्राप्त होगा इस बातको पाठकवर्ग स्वय विचार शकते है—

ओर जैनशास्त्रानुसार अधिकमासके दिनोकी गिनती करनाही युक्त है इस लिये अधिकमास कालचूला है सो दिनोकी गिनतीमें नही आता है ऐसा मतलब तीनो महाशयोका शास्त्रोके विरुद्ध है सो उपरोक्त लेखसे प्रत्यक्ष दिखता है इन शास्त्रो के न्यायानुसार वर्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे भी भाद्रपदमे पर्युषणा करनेसे ८०दिन प्रत्यक्ष होते है सो बात जगत् भी मान्य करता है तथापि ये तीनो महाशय और वर्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय भी मजूर नही करते है तो इस जगह एक युक्ति भी दिखलाने के लिये श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोसें मेरा इतना ही पूछना है कि आषाढ चतुर्मासीसे किसी पुरुष वा स्त्रीने उपवास करना सरू किया तथा उसी वर्षमे दो श्रावण हुवे तो उस पुरुष वा स्त्रीको पचास (५०) उपवास कब पूरे होवेंगे और अशी (८०) उपवास कब पूरे होवेंगे इसका उत्तरमें श्रीतपगच्छके सर्व विद्वान् महाशयोको अवश्यमेव निश्चय कहना ही पडेगा कि— दो श्रावण होनेसे पचास उपवास दूजा श्रावण शुदी में और ८० उपवास दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रपदमे पूरे होवेंगे

इस युक्तिसे अधिक मासकी गिनती निश्चय के साथ श्रीतप-गच्छके विद्वान् महाशयोके कहने से भी सिद्ध होगई तथा अनेक शास्त्रानुसार ५० दिने दूजा श्रावण शुदीमें श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेवाले जिनाज्ञा के आराधक सिद्ध हो गये और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करने वाले, शास्त्रोकी मर्य्यादाके विरुद्ध होनेमें कोई शमय भी करेगा अपितु नही, तथापि इन तीनो महाशयोने(दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ८० दिनकी वार्त्ता भी नही समझना) ऐसे मतलबको लिखा है सो कैसे सत्य बनेगा तथापि वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहाशय विद्वान् होते भी उपरकी इस मिथ्या बातको सत्य मानके वारवार कहते है जिन्हो को मृषावादका त्यागरूप दूजामहाव्रत कैसे रहेगा सो भी विचारने की बात है, इस उपरोक्त न्यायानु-सार भी अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नही हो सकती हैं तथापि तीनो महाशय करते है सो सर्वथा महा मिथ्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें भाद्रव शुदी तक ८०दिन अवश्यमेव निश्चय होते है जिससे गिनती निषेध करना ही नही बनता है और मासवृद्धि होनेसे भी पर्युषणा भाद्रपद मास प्रति बद्ध है ऐसा लिखना भी तीनो महाशयोका सर्वथा जैनशास्त्रोंसे प्रतिकुल है क्योंकि प्राचीनकालमें भी मासवृद्धि होती थी जब भी वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के दिन पर्यु-षणा करनेमें आते थे जैसे चन्द्र सवत्सरमे पचास दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे तैसे ही अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीश दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे और वीश दिन तक अज्ञात पर्युषणा परन्तु वीशमे

दिनसे ज्ञात पर्युषणा करे सो १००दिन यावत् कार्तिकपूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमे ठहरे ऐसा श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठमे विस्तारपूर्वक कहा है ऐसे ही अनेक शास्त्रोमे कहा है जिसके पाठ भी श्रीवृहत्कल्प वृत्यादिकके कितने ही पहिले लिख आया हु और आगे भी लिख दिखावुगा और खास तीनो महाशयोके लिखे पाठसे भी अभिवर्द्धितमे वीश दिने श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेमे आतेथे इसका विशेष खुलासाके साथ आगे विस्तार पूर्वक लिखुगा जिससे वहाँ प्राचीनकालका तथा वर्तमानिक कालका अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा—

और आगे इन तीनो महाशयोने श्रीपर्युषणा कल्प चूर्णिका तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ लिखके मासवृद्धि वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रव मासमे ही पर्युषणा करने का दिखाया है इस पर मेरा इतना ही कहना है कि इन तीनो महाशयोने (श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिसे और श्रीनिशीथ-चूर्णिमे ग्रन्थकार महाराजने पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारपूर्वक पाठ लिखाथा जिसके) आगे और पीछे का सपूर्ण सम्बन्धका पाठको छोडके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र-भाषणरूप माया वृत्तिसे अधूरा थोडासा पाठ लिखके भोले जीवोको शास्त्रके पाठ लिख दिखाये और अपनी विद्वत्ताकी बात दृष्टिरागियोमे जमाई है इस लिये इस जगह भव्य जीवोको निःसन्देह होनेसे सत्य बातपर शुद्धश्रद्धा हो करके सत्यबात ग्रहण करे इस लिये दोनो चूर्णिकार पूर्वधर महाराज कृत सपूर्ण पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहाँ लिख दिखाता हु श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीपर्युषणा कल्प

इस युक्तिसे अधिक मासकी गिनती निश्चय के साथ श्रीतप-गच्छके विद्वान् महाशयोके कहने से भी सिद्ध होगई तथा अनेक शास्त्रानुसार ५० दिने दूसरा श्रावण शुदीमें श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेवाले जिनाज्ञा के आराधक सिद्ध हो गये और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करने वाले, शास्त्रोंकी मर्य्यादाके विरुद्ध होनेमें कोई शंसय भी करेगा अपितु नही, तथापि इन तीनो महाशयोने(दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ८० दिनकी वार्त्ता भी नही समझना) ऐसे मतलबकी लिखा है सो कैसे सत्य बनेगा तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहाशय विद्वान् होते भी उपरकी इस मिथ्या बातको सत्य मानके वारवार कहते है जिन्होको मृषावादका त्यागरूप दूजामहाव्रत कैसे रहेगा सो भी विचारने की बात है, इस उपरोक्त न्यायानु सार भी अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नही हो सकती है तथापि तीनो महाशय करते है सो सर्वथा महा मिथ्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें भाद्रव शुदी तक ८०दिन अवश्यमेव निश्चय होते है जिससे गिनती निषेध करना ही नही बनता है और मासवृद्धि होनेसे भी पर्युषणा भाद्रपद मास प्रति बद्ध है ऐसा लिखना भी तीनो महाशयोका सर्वथा जैनशास्त्रोंसे प्रतिकुल है क्योंकि प्राचीनकालमें भी मासवृद्धि होती थी जब भी वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के दिन पर्यु-षणा करनेमे आते थे जैसे चन्द्र संवत्सरमे पचास दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिनके उपरान्तसर्वथा विहार करना नही कल्पे और वीश दिन तक अज्ञात पर्युषणा परन्तु वीशमे

ण कहितो, तो सावण वहुलपञ्चमीएपज्जोसवेति असति खेसे सावण वहुलदसमीए, असति खेते सावणवहुलस्स पन्नरसीए, एव पचपच उसार तेण जाव, असति भद्दव सुद्ध पचमीए, अतो परेण ण वट्टति अतिकमितु, आसाढपुण्णिमातो अढत्त मग्गताण, जाव भद्दवय जोण्हस पञ्चमीए एत्यन्तरे जति ण लताहे रुक्खस्स हेट्ठेठितो तोविपज्जोसवेयव्व, एतेसु पव्वेसु जहा लभे पज्जोसवेयव्व, अपव्वे ण वट्टति, कारिणिया चउत्थीवि अज्ज कालएहि पवित्तिता कह पुण उज्जेणीए णगरीए, बलमित्त भाणुमित्तो रायाणो, तेसि भाइणेज्जो अज्ज कालए पव्वाविता, तेहिराईह पट्टुट्ठेहि, अज्ज कालतो निव्विसत्तोकत्तो सोपतिट्ठाण आगतो, तत्यय सालवाहणो राया सावगो तेण समणपुयणत्यणो पविसितो ॥ अते पुरन्त भणित अमावसाए उववास काउइअट्ठनिमाईसु उववास काउ ॥ इति पाठातर ॥ पारणए साहूण भिक्ख दातु पारिज्जव ॥ अन्नय पज्जोसवणादिवसे आसन्ने आगते अज्ज कालएण सालवाहणो भणितो, भद्दवय जोण्हस्स पचमीए पज्जोसवणा, रण्णा भणितो तद्दिवस मम इदो अणुजातव्वो होहित्ति तो निप्पज्ज वासिताणि चेतियाणि साहूणोय भविस्सतित्ति कोऊ तो छट्ठीए पज्जोसवणा भवतु, आयरिएण भणित न वट्टति अतिकामेसु, रण्णा भणिय तो चउत्थीए भवतु आयरिएण भणित एव होउत्ति ॥ चउत्थीए कतो पज्जोसवणा एव चउत्थीविजाता कारणिता, सुद्ध दसमी ठिताण आसाढी पुण्णिमी सरणाति जत्थ आसाढमासकप्पो कतो तत्थ खेत वासावास पाउग्ग अणच णत्थि खेत वासावास पाउग्ग अयवा अज्जासे चेव अणी खेत्त वासावास पाउग्ग सव्वप पडिपुण्ण सथारग डग-

(दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रका अष्टम अध्ययनके) चूर्णिके पत्र ३१ से ३२ तक तत्पाठ —

आसाढचाउम्मासिय पडिक्कमति, पंचाहि दिवसेहि पज्जो सवणा कप्प कड्ढेति, सावण बहुल पंचमीए पज्जोसवेति पण वासिद्दितेहि ण गहिता णित्थराडीणि, ताहे कय कहता चेव गिहति नठयादीणि एय आसाढपुण्णिमाए ठिता, जाव मग्गसिरबहुलस्स दसमी, तायएगमि खेत्ते अच्छेज्जा, तिण्णि दसराता, एयतिण्णिपुण दस राता, चिरखलादीहि कारणेहि॥ एत्यठ गाथा पतपति पज्जोसविते, सवीसति राय मासस्स आरातो जति गिहत्था पुच्छति, तुब्भे अज्जो वासा रत्त ठिता, अहवा ण ठिता एय, पुच्छितेहि, जति अहिवड्ढिय सवच्छरे, अत्य अहिमासतो पडिति तो आसाढपुण्णिमाओ वीसति राते गते भणति, ठितामोति आरतो ण कपयति खोत्थ ठिता मोति, अथ इतरे तिण्णिचद सवच्छरा तेसु सवीसति राते मासे गते भणति, ठितामोति आरतो ण कपयति वोतु ठिता मोति, धि कारण असिवादि, गाथा कयाइ, असिवादीणि उप्प ज्जेज्जा जेहि निग्गमणा होज्जा ताहेति, गिहत्था भणेज्ज, ण किंचि एते जाणति, मुसावात वाउलावेति, जेण ठितामोति भणित्ता, निग्गता, अहवा वास ण सुट्ठु आरद्धं, तेण लोगो भीता धणज्जधितु, ठितो साहूहि भणितो ठियामोति जाणति, एते वरिसास्सति तो सुयामो धन्न विक्किणामो, अधि करण घराणियत्यप्पति, हलादीणय सवप्प करेंति, जम्हा एते दोसा, तम्हा वीसती राते आगते, सवीसति राते वा मासे आगते, ण कपयति वोतु ठितामोति॥ एत्थउ गाथा॥ आसाढपुण्णिमाए ठिताण जतितणडगलादीणि गहियाणि, पज्जोसवणा कप्पोय

वासावासैकम्मि खेत्तकम्मि काले पवेसियव्व,अतो भणति, आसाढपुण्णिमा ॥ गाहा ॥ वायवति उस्सग्गेण पज्जोसवेयव्व, अहवा प्रवेष्टव्य, तम्मि पविठा उस्सग्गेण कत्तिय पुण्णिम जाव अच्छ ति, अववादेण मग्गसिर बहुल दसमी जाव तम्मि एग खेत्ते अच्छ ति, दसरायगाहणातो अववातो दसित्तो अणे वि दो दसराता अछेज्जा,अववातेण मार्गसिरमास तत्रैवास्त्ये-त्यर्थ ॥ कह पुण वासा पाउग्ग खेत्त पविसति,इमेण विहिणा वाहिठिता॥ गाहा॥ वाहिठियत्ति जत्थ,आसाढमासकप्पो कतो अणत्थवा आसण्णे ठिता वा समायारी खेत्त, वसभेहि गाहेंति चाववतीत्यर्थ ॥ आसाढपुण्णिमाए पविठा, पडिवयाउ आरम्भ पचदिणा,सथारग तण डलगछार मल्लादीय गिण्हति, तम्मिचेवपणगेरातिए पज्जो सवणा कप्प कहेति, ताहे सावण बहुल पञ्चमीए वासकाल सामायारि ठवेति, एत्थउअ ॥गाहा॥ एत्थतिणत्थ, आसाढपुण्णिमाए, सावण बहुलपञ्चमीए, वासावास पज्जोसविएवि, अप्पणो अणभिग्गहिय, अहवा जति गिहत्था पुच्छति अज्जो तुम्भे, अत्थेव वारिसाकाल ठिया, अहवा ण ठिया, एव पुच्छिएहि, अणभिग्गहिय त्ति सदिग्ध वक्तव्य, अह अन्यसब्दाद्यपि निश्चयो भवतीत्यर्थ ॥ एव सन्दिग्ध कियत्काल वक्तव्य ॥ उच्यते ॥ वीसतिराय, वीसतीमास, जति अभिवढ्ढियवरिस, तो, वीसतिराय, जाव अणाभिग्गहिय, अह चदवरिस तो सवीसतिराय, जाव अणभिग्गहिय भवति तेण तत्कालात्परत अप्पणो अभिरासुख्येन गृहीत, अभिगृहीत इद व्यवस्थिता इति, इहट्ठियामो वरिसाकालत्ति किं पुण कारणत्ति, वीसति राते, सवीसतिराते वा मासे गते, अप्पणो अभिग्गहिय गिहिणा

लगाइ कयपभूमीय वट् वामण गाइ अकोरय आइत, ताहे आसाढपुण्णिमाए चेव पज्जोसविज्जति, एव पनाह परिहाणि मविरत्थोच्यते, इय सत्तरी गाथा, इय प्रदर्शने आसाढचाउ मासिया तो सवीसति राते मासे गते पज्जोसवेंति, तेसि सत्तरी दिवसा जहण्णतो जेट्ठोग्गहो भवति, कह पुण सत्तरी, चउण्ह मासाण सवीस दिवस सत भवति, ततो सवीसति रातो मासो, पण्णास दिवसा सो वितो सेसा सत्तरी, दिवसा जे भद्दवय बहुलस्स दसमीए पज्जोसवेंति, तेसि असीति दिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण पुण्णिमाए पज्जोसवेंति तेसिं णउतिदिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण बहुल दसमी ठिता तेसि दसुत्तर दिवससत जेट्ठोग्गहो, एवमादीहि पगारेहि वरिसारत्त एग खेत्ते अच्छिता कत्तिय चाउमासिए णिग्गतव्व, अह वास ण उवरमति, तो मग्गसिरे मासे ज दिवस पक्क मट्टिय जात तद्दिवस चेव निग्गतव्व , उक्कोसेण तिन्नि दसराया न निग्गच्छेज्जा मग्गसिर पुण्णिमाएत्ति भणिय होइर मग्गसिर पुण्णिमाए परेण, जइविप्लवतेहि तहवि णिग्गतव्व, अथ न निग्गच्छति तो चउलहुग्ग, एव पचमासित जेट्ठोग्गहो जाओ, काउण गाहा ॥ आसाढमासकप्प काउ जत्थ अन्न वासा वासे पाउग्ग जत्थ आसाढमासकप्पो कओ तत्थ व पज्जोसविते आसाढ पुण्णिमाए वा सालबणाण मग्गसिर पिसव्व, वासा णतो विरमति तेण ण निग्गता असीवादीणिवा वाहिपव सालबणाण छमासि तो जेट्ठोग्गहो ॥ इत्यादि ॥

और श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णिके दशमे उद्देशेके पृष्ठ ३२१ से पृष्ठ ३२४ तक का पर्युषणा सम्बन्धीका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

अहवा आसाढ सुद्द दसमीए वासा खेत्त पयिठ्ठा, अहवा, जत्थ आसाढमासकप्पोकओ त वासप्पाउग्ग खेत्त, अण्ण च णत्थि वास पाउग्ग ताहे तत्थेव पज्जोसवेंति,वासध गाढ अणु वरय आषाढपुण्णिमाहि नत्थेव पज्जोसवेंति, एक्कारसीओ आढवेउ डगलादी त गेण्हति पज्जोसवणा कप्प कहेति, ताहे आसाढ पुण्णिमाए पज्जोसवेंति, एस उस्सग्गो, सेस काल पज्जोसवे-त्ताण सव्वो अववातो,अववातेवि सवीसति रातमासा तो परेण अतिक्कामेउ ण वहति, सवीसति राते मासे पुणे जतिवासखेत्त ण लब्भति तो रुक्क हेट्ठे वि पज्जोसवेयव्व त पुण्णिमाए पञ्चमीए दसमीए एवमादि पव्वेसु पज्जोसवेयव्व, णोअपव्वे ॥ सीसो पुच्छति इयाणि कह चउत्थिए अपव्वे पज्जोसवि-ज्जति, आयरिओ भणति, कारणिया चउत्थी, अज्जकाल गायरियाहि पवत्तिया, कह भण्णते कारण, कालगायरिओ विहरतो, उज्जेणि गतो तत्थ वासावासो वासातरठितो तत्थ ॥ णगरीए बलमित्तो राया, तस्स कणिट्ठो भाया भाणु-मित्तो जुवराया, तेसि भगणी भाणुसिरी णाम तस्स पुत्तो बलभाणू णाम, सोयपगितिभद्दविणीययाए साहू तो पज्ज वासति आयरिहि से धम्मो कहितो पडिबुद्धोपव्वावितोय, तेहि य बलमित्त भाणुमित्तेहि कालगज्जापज्जोसविते णिविसतो कत्तो, आयरिया भणति जहा, बलमित्त भाणुमित्ता काल-गायरियाण भागिणेज्जा भवति, माउलोत्ति, काउ महत आयर करेंति, अब्भुट्ठाणादियत च पुरोहियस्स अप्पत्तिय भणातिय, एसमुद्दपासण्डोवेतादितादिरोहणोअ अतो पुणो पुणो उल्लावेंतो, आयरिएण णिप्पठप्पसिण वागरणो कतो, ताहे,सो पुरोहितो आयरियस्स पदुट्ठो, रायाण भाणुलोमेहि

सया करेंति ॥ आरतो न करेंति उच्यते ॥ अभिवादि गाहा कयाइ ॥ अभिव भय आदिगाहगतो रायदुठाइ वा वास व सुद्ध आरट्ठ यागितु, एयमादिहि गारणेहि, जइ अच्छति तो आणा ताता दोगा, अहगच्छति ततो गिहत्या भणति गते, सब्बणुपुत्तगा ण किंचिजाणति, मुगायाय भासति, ठिता मोत्ति भणित्ता लेण गिण्हता लोगो या भणिज्ज साहूणत्थ वरिसारत्त ठिता, अयस्स यास भविस्सति, ततो भग्ग विक्कणति, लोगो घरादीनिच्छादेंति, अह हलादिक माणि वास ठवेति, भणिगाहिते गिरिणा तेय आरतो फतो, जम्हा एयमादिया अधिकरणदोसा, तम्हा अभिवड्ढि-ययरिसे,वीसतीराते गते गिहिणा त करेंति, तिसु चदवरिसे सवीसति राते मासे गते गिहिणा त करेंति, जत्य अधि-मासगो पडति वरिसे,त अभिवड्ढियवरिस भणति, जत्थ ण पडति, त चदयरिस सोय अधिमासगो जुगस्सगते मज्जे वा भवन्ति, जइ तो नियमा दो आसाढा भवति, अहमज्जे दो पोसा, सीसो, पुच्छति जम्हा अभिवड्ढियवरिसे वीसति-रात, चन्दवरिसे सवीसतिमासो ॥ उच्यते ॥ जम्हा अभि-वड्ढियवरिसे, गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कतो, तम्हा वीस दिना अणभिगाहिय तकरेति, इयरेसु तिसु चदवरिसेसु सवी-सतिमासा इत्यर्थं ॥ एत्थ पणग गाहा ॥ एत्यउ आसाढपुण्णि माए,ठिया डगलादीय गिण्हति,पज्जोसवणाकप्पच कहेंति, पचदिणा ततो सावण बहुल पञ्चमीए, पज्जोसवेंति, खेत्ता भावे कारणेन पणगेसु वुड्ढे दसमीए, पज्जोसवेंति, एव पण रसीए, एव पणगवड्ढी,तायकज्जति, जाव सवीसति मासो, पुणो सोय सवीसति मासो भद्दवयसुद्ध पञ्चमी पयुज्जति,

अहवा आसाढसुद्ध दसमीए वासा खेत्त पविठा, अहवा, जत्थ आसाढमासकप्पोकओ त वासप्पाउग्ग खेत्त, अस्म य णत्थि वास पाउग्ग ताहे तत्थेव पज्जोसवेंति,वासध गाढ अणु वरय आषाढपुस्मिनाहि तत्थेव पज्जोसवेति, एक्कारसीओ आढवेउ डुगलादी त गेरहति पज्जोसवणा कप्प कहेति, ताहे आसाढ पुस्मिनाए पज्जोसवेति, एस उस्सग्गो, सैस काल पज्जोसवेत्ताण सव्वो अववातो,अववातेवि सवीसति रातमासा सो परेण अतिक्कामेत्त ण वट्टति, सवीसति राते मासे पुणे जतिवासखेत्त ण लब्भति तो रुक्ख हेट्ठेवि पज्जोसवेयव्व त पुस्मिनाए पञ्चमीए दसमीए एवमादि पव्वेसु पज्जोसवेयव्व, णोअपव्वे ॥ सीसो पुच्छति इयाणि कह ववत्थिए अपव्वे पज्जोसविज्जति, आयरिओ भणति, कारणिया चउत्थी, अज्जकाल गायरियाहि पवत्तिया, कह भसने कारण, कालगायरिओ विहरतो, उज्जेणि गतो तत्थ वासावासो वासातरठितो तत्थ ॥ णगरीए वलमित्तो राया, तस्स कणिट्ठो भाया भाणुमित्तो जुवराया, तेसि भगणी भाणुसिरी णाम तस्स पुत्तो वलभाणू णाम, सोयपगितिभद्दविणीययाए साहू तो पज्ज वासति आयरिहि से धम्मो कहितो पडिवुद्धोपव्वावितोय, तेहि य वलमित्त भाणुमित्तेहि कालगज्जापज्जोसवितेणिविसतो कत्तो, आयरिया भणति जहा, वलमित्त भाणुमित्ता कालगायरियाण भागिणेज्जा भवति, माउलोत्ति, काउ महत आयर करेंति, अब्भुठाणदियत च पुरोहियस्स अप्पत्तिय भणातिय, एससुद्दपासडोवेतादितादिरोहणोअ अतो पुणो पुणो उल्लावेतो, आयरिएण णिप्पठप्पसिण वागरणे कतो, ताहे,सो पुरोहितो आयरियस्स पदुठ्ठो, रायाण भाणुलोमेहि

विप्परिणामेति एते रिमितो महाणुभावा एते जेण गच्छन्ति तेण पदेण जति रणो णागच्छति एताणि वा अभमितो अमिय भवति, तम्हा विणज्जाइ ताहे विसज्जिता अणे भणति, रणा नयाएण विसज्जिता कहं सद्ध मिकगारेकिल रणा अणेभणा करावित्ता, ताहे णिग्गता एवमादियाण कारणाण अणुक्कमेण णिग्गता विहरता पतिठ्ठाण णयर, तेण पविठा पतिठ्ठाण समणसंघस्स अज्जकालगेहिंसदिठ, जायाइ आगच्छामि ताव तुब्भेहिं णो पज्जोसवियव्व, तत्थ सालवाहणोराया सो सावगो सोयकालगज्जणत सोठणणिग्गतो अभिमुहो समणसंघोय महया विभूतीए पविठो, कालगज्जो पविठेहिं भणिय भद्दवय सुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जति, समणसंघेण पडिवण्ण,ताहे रणा भणिय तद्दिवस मम लोगाणु- वत्तीए इन्दो अणुजायव्वो होहेति, साहूचेतितेणपज्जवासे इस्सती तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जउ, आयरिएहि भणिय, ण वट्टति, अतिकामेउ ताहे रणा भणिय,तो अणागए, चउ त्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहिं भणिय एव भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसविय, एव जुगप्पहाणेंहि चउत्थी कारणे पवत्तिता, साचेयाणुमत्ता सव्व साधूण, रणा अते पुरियाउ भणिता तुब्भे अमावसाए उवावासकाउ पडिवयाए सव्व खज्ज भोज्ज विहीहिं साधू उत्तरपारणए पडिलाभेत्ता पारे ज्जाहा, पज्जोसवणाए अट्ठमतिकाउ पडीवयाए उत्तर- पारणय भवति तच सव्वभोगेण विकयततोपभिति मरहठ- विसपसवण पूववउत्तिवणोपवक्ले ॥ इयाणि पचगपरिहाणि- मधिकृत्य कालावग्राहोच्यते ॥ इय सत्तरी गाहा ॥ इय इति उत्सग्रदशने जे आसाढवाउम्मासिया तो सवीसति राते

मासे गते पज्जोसवेति, तेसि सत्तरी दिवसा जहण्णो वासा कालोगाहो भवति, कह सत्तरी उच्यते, चउग्गह मासाण विसुत्तर दिवससत भवति, सवीसति मासो पण्णास दिवसा, ते वीसुत्तरमज्जतो साधितो, सेसा सत्तरी, जे भद्दवय बहुलदसमीए पज्जोसवेति, तेसि असति दिवसा मज्झिमो वासा कालो गाहो भवति, सावणपुण्णिमाए पज्जोसवेंति तेसि णिउति दिवसा मज्झिमो चेव वासकालो गाहो भवति, जे सावण बहुलदसमी पज्जोसवेति तेसि दसुत्तर सतमज्झिमो चेव वासा कालोगाहो भवति, जे आसाढपुण्णिमाए पज्जोसवेंति, तेसि वीसुत्तर दिवससय जेठो वासोग्गहोभवइ सेसन्तरेसु दिवस पमाण वत्तव्व, पमातिप्पगारेहि वरिसारत्त एग्गखेत्ते, कत्तिय चउम्मासिय, पडिवयाए अवस्स णिग्गतव्व, अह मग्गसिर मासे वासति चिरक्खाजलाउलापथा तो अववातेण एक्क उक्कोसेण तिण्णि वा दसराया जावतम्मिखेत्ते अच्छति, मार्गशिरपौर्णमासीयावेत्यर्थ ॥ मग्गसिर पुण्णिमाए ज परतो जतिचिरक्खा पथा वास वा गाढ अणावरय वासति, जति विप्लवतेहि तहावि अवस्स णिग्गतव्व, अह ण णिग्गच्छति, तो चउगुरूगा, एव पञ्चमासि तो जेठो गाहो जातो,काउण मास गाहा, जमि खेत्ते कतोआसाढमासकप्पो तत्थ वासावास पाउग्ग खेत्ते अण्णमिअलद्धे वास पाउग्गे खेत्ते जत्थ आसाढमासकप्पो कतो तत्थेव वासावास ठिता तीसे वासा वासे चिरक्खादिएहि कारणेहि तत्थेव मग्गसिर ठिता एव सालवणाण कारणे अववातेण छ मासितो जेठो गहो भवतीत्यर्थ ॥

उपरोक्त दोनु पाठ मेरे देखनेमें आयेथे वैसेही छपा दिये हैं

विप्परिणामेति एते रिसितो महाणुभावा एते जेण गच्छन्ति तेण पहेण जति रणो णागच्छति पताणि वा असमितो अमिय भयति, तम्हा विनज्जाह ताहे विसज्जिता अणे भणति, रणा उयारण विगज्जिता कह सच मिकगारकिल रणा अगोमणा करावितो, ताहे णिग्गता एवमादियाण कारणाण अणुक्कमेण णिग्गता विहरता पतिठ्ठाण णयर, तेण पयिठा पतिठ्ठाणा समणमघस्सय अज्जकालगेहिमदिठ, जायाह आगच्छामि ताव तुब्भेहि णो पज्जोसवियव्व, तत्य सालयाहणोराया सो मायगो सोयकालगज्जणत सोउणणिग्गतो अभिमुहो समणसघोय महसा विभूतीए पयिठो, कालगज्जो पविठेहि भणिय भद्दवय सुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जति, समणसघेण पडियण,ताहे रणा भणिय तद्दियस मम लोगाणु- वत्तीए इन्दो अणुजायव्वो होहेत्ति, साहूचेतितेणपज्जवासे इसती तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जउ, आयरिएहि भणिय, ण वद्दति, अतिकामेउ ताहे रणा भणिय, तो अणागए, चउ- त्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहि भणिय एव भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसविय, एव जुगप्पहाणेहि चउत्थी कारणे पवत्तिता, साचेवाणुमत्ता सव्व साधूण, रणा अते पुरियाउ भणिता तुब्भे अमावसाए उवावासकाउ पडिवयाए सव्व खज्ज भोज्ज विहीहि साधू उत्तरपारणए पडिलाभेत्ता पारे ज्जाहा, पज्जोसवणाए अठ्ठमतिकाउ पडोवयाए उत्तर- पारणय भवति तच सव्वभोगेण विक्रयततोपमिति मरहठ- विसएसवण पुव्वउत्तिवणोपवक्ले ॥ इयाणि पचगपरिहाणि- मधिकृत्य कालावग्राहोच्यते ॥ इय सत्तरी गाहा ॥ इय इति उपप्रदर्शने जे आसाढचाउम्मासिया तो सवीसति राते

परन्तु वीशमे दिन श्रावणशुक्लपञ्चमीसे निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा होवे, और चन्द्रवर्षमें पचाश दिन तक अनिश्चय पर्युषणा परन्तु पचाशमे दिन भाद्रपद शुक्लपञ्चमीसे निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा होवे, सो जब आषाढपूर्णिमासेही योग्यक्षेत्र मिले और उपयोगी वस्तुका योग्य होवे तो ग्रहण करके चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे याने जो अकेला साधु होवे तब तो उस रात्रिको श्रीकल्पसूत्रका पठन करके अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करे और साधुओका समुदाय होवे तो सर्व साधु कायोत्सर्गमें सुने और वृद्धसाधुजी मधुर स्वरसे श्रीपर्युषणा कल्पका उच्चारण करके अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करे तथा योग्यक्षेत्र न मिले तो फिर पाँच दिन तक दूसरे स्थान (गाव) मे जाके उपयोगी वस्तु ग्रहण करके श्रावण कृष्ण पञ्चमीको पर्युषणा करे इसी तरहसे योग्यक्षेत्राभावादि कारणे अपवादसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते यावत् भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको अवश्यही पर्युषणा निश्चय करे तथापि भाद्रपदशुक्लपञ्चमी तक योग्यक्षेत्र नही मिलेतो जङ्गलमें वृक्ष नीचे भी अवश्यही पर्युषणा करे परन्तु पञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना नही कल्पे और भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके पहिले आषाढ पूर्णिमासे योग्यता मिलनेसे अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करनेमे आते है जिसमे स्थापन करे उसी रात्रिको श्रीपर्युषणा कल्प कहके पर्युषणा स्थापे जिसको गृहस्थी लोगोके न जानी हुई पर्युषणा कहते हैं और पचासमे दिन भाद्रपद शुक्लपञ्चमी की निश्चय प्रसिद्धसे पर्युषणा उसीमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करे जिसको गृहस्थी लोगोके

इसलिये कुछ विशेष अशुद्धता होवे तो दूसरी शुद्ध पुस्तकसे उपरोक्त दोनो पाठका मिलान करके वाँचना अब उपरोक्तदोनुं पाठका संक्षिप्त भावार्थ सुनो—वर्षाकालके लिये एक क्षेत्रमें प्रवेश करना ठहरना सो कितना काल तक सोही कहते है आषाढपूर्णिमासे लेकर उत्सर्गसे पर्युषणा करे अथवा प्रवेश करे सो यावत् कार्तिक पूर्णिमा तक रहे और अपवादसे मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी तक यावत् रहे तथा फिर भी कारणयोगे दो दशरात्रि (वीशदिन) याने मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे सो प्रथम किस विधिसे प्रवेश करके पर्युषणा करे वह दिखाते है—जहा आषाढमासकल्प रहा होवे वहाँ अथवा अन्य क्षेत्रमें आषाढपूर्णिमाके दिन चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद प्रतिपदा (एकम) से लेकर पाँच दिनमे उपयोगी वस्तु ग्रहण करके पञ्चमी रात्रि याने श्रावण कृष्णपञ्चमीकी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहके वर्षाकालकी समाचारी को स्थापन करे, याने पर्युषणा करे, सो अधिकरण दोष न होने के कारणसे और उपद्रवादि कारणसे दूसरे स्थानमे जावेतो अवहेलना न होवे इसलिये अनिश्चय पर्युषणा करे, अधिकरण दोषोका वर्णन संक्षेपसे पहिलेही लिखा गया है इसलिये पुन नही लिखता हु और निश्चय पर्युषणा कब करे सो कहते है कि अभिवर्द्धित वर्षमें वीशदिने और चन्द्रवर्षमे पचाशदिने निश्चय पर्युषणा करे, क्योंकि जैसे युगान्तमें जब दो आषाढ होते है तब ग्रीष्म ऋतुमे चेव निश्चय अधिक मास व्यतीत होजाता है इसलिये अभिवर्द्धित वर्षमे आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद प्रतिपदासे वीशदिन तक अनिश्चय पर्युषणा

पर्युषणा किवी होवे तो उत्कृष्ट से १२० दिन रहते है पीछे उत्सर्गसे कार्तिक पूर्णिमाको अवश्य विहार करे, परन्तु वर्षादि कारणसे विल्खल कर्दमादि कारण योगे अपवाद से मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे पीछे तो अपवाद से भी अवश्य निकले विहार करे, नही करे तो प्रायश्चित आवे जहा आपाढमास कल्प किया होवे वहा ही चौमासी ठहरे तथा मार्गशीर्ष पूर्णिमाको विहार करे तो उत्कृष्ट छ मासका कालावग्रह होता है इत्यादि—

अब पाठकवर्ग देखिये उपरका दोनु पाठ प्राचीनकाल में पूर्वधरोके समयका उग्रविहारी महानुभाव पुरुषोकी जैन ज्योतिषानुसार वर्तने का है जिसमें उत्सर्गसे आपाढ पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमातक पर्युषणा करे और अपवादसे श्रावण कृष्ण। ५। १०। ३०। श्रावण शुक्ल ५। १०। १५। भाद्र कृष्ण। ५। १०। ३०। और भाद्र शुक्ल ५। इन दिनोमे जहा योग्यक्षेत्र मिले वहा ही पर्युषणा करे। परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे, जिससे जघन्यमे ७० दिनकी पर्युषणा होती है तथा मध्यमसे। ७५। ८०। ८५। ९०। ९५। १००। १०५। ११०। ११५। ऐसे नव प्रकारकी पर्युषणा होती है और उत्कृष्टसे १२० दिन की पयुषणा होती है।

जिसमे चन्द्र संवत्सरमें अपवादसे भी पचास दिन की भाद्रवशुक्ल पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे जिससे पीछाडीके ७० दिन रहते है तैसेही अभिवर्द्धित संवत्सर मे अपवादसे भी वीशमे दिनकी श्रावणशुक्लपञ्चमी को उल्लङ्घन नही करे जिससें पीछाडीके कार्तिकपूर्णिमा तक १०० दिन रहते है और श्रावण शुक्लपञ्चमीको सांवत्सरिक

जानी हुई पर्युषणा कहते हैं और भाद्रपद शुक्लपञ्चमी के उपरान्त विहार करना सर्वथा नही कल्पे इस लिये योग्य-क्षेत्रके अभावमे वृक्ष नीचे भी अवश्यही निवास (पर्युषणा) करना कहा है जैसे चन्द्रवर्षमें पचास दिनका नियम है तैसे ही अभिवर्द्धितवर्षमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीकी निश्चय पर्युषणा करने का नियम था परन्तु वीशदिनमें श्रावण शुक्लपञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना सर्वथा प्रकारसे नही कल्पे इस तरह पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमादि पर्वतिथिमें पर्युषणा करे, परन्तु अपर्वमें नही, अब शिष्य पूछता है कि आप अपर्वमें पर्युषणा करना नही कहते हो फिर चतुर्थीका अपर्वमें कैसे पर्युषणा करते हो तब आचार्य्यजी महाराज कहते है कि कारण से चतुर्थी की पर्युषणा करनेमें आते हैं सोही कारण उपरोक्त पाठानुसार जैन इतिहासो में तथा श्रीकल्पसूत्र की व्याख्याओमें प्रसिद्ध है और इसीपुस्तकमें पहिले सक्षेप से लिखगया है इस लिये यहा भावार्थमें विस्तारके कारणसे नही लिखता हु, अब जघन्य, मध्यम, और उत्कृष्ट से पर्युषणाके कालावग्रहका प्रमाण कहते है कि चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल होता है तब आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पचासदिने पर्युषणा करे तो सत्तर (७०) दिवस जघन्यसे कार्त्तिक चौमासी तक रहते हैं परन्तु योग्यक्षेत्र मिलनेसे भाद्रव कृष्णदशमी को ही पर्युषणा कर लेवे उसीको ८० दिन मध्यमसे रहते है तथा श्रावण पूर्णिमा को पर्युषणा करे तो ९० दिन मध्यमसे रहते हैं। इसी तरह यावत् श्रावण कृष्णपञ्चमी को पर्युषणा किवी हो तो ११५ दिन मध्यम से रहते हैं और आषाढ पूर्णिमासे ही

पर्युषणा किवी होवे तो उत्कृष्ट से १२० दिन रहते है पीछे उत्सर्गसे कार्तिक पूर्णिमाको अवश्य विहारकरे, परन्तु वर्षादि कारणसे चिखल कर्दमादि कारण योगे अपवाद से मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे पीछे तो अपवाद से भी अवश्य निकले विहार करे, नही करे तो प्रायश्चित आवे जहा आषाढमास कल्प किया होवे वहा ही चौमासी ठहरे तथा मार्गशीर्ष पूर्णिमाको विहार करे तो उत्कृष्ट छ मासका कालावग्रह होता है इत्यादि—

अब पाठकवर्ग देखिये उपरका दोनु पाठ प्राचीनकाल में पूर्वधरोके समयका उग्रविहारी महानुभाव पुरुषोको जैन ज्योतिषानुसार बर्तने का है जिसमे उत्सर्गसे आषाढ पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमातक पर्युषणा करे और अपवादसे श्रावण कृष्ण। ५। १०। ३०। श्रावण शुक्ल ५। १०। १५। भाद्र कृष्ण। ५। १०। ३०। और भाद्र शुक्ल ५। इन दिनोमे जहा योग्यक्षेत्र मिले वहा ही पर्युषणा करे। परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे, जिससे जघन्यमे ७० दिनकी पर्युषणा होती है तथा मध्यमसे। ७५। ८०। ८५। ९०। ९५। १००। १०५। ११०। ११५। ऐसे नव प्रकारकी पर्युषणा होती है और उत्कृष्टसे १२० दिन की पर्युषणा होती है।

जिसमे चन्द्र सवत्सरमें अपवादसे भी पचास दिन की भाद्रवशुक्ल पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे जिससे पीछाडीके ७० दिन रहते है तैसेही अभिवर्द्धित सवत्सर मे अपवादसे भी बीशमें दिनकी श्रावणशुक्लपञ्चमी को उल्लङ्घन नही करे जिससें पीछाडीके कार्तिकपूर्णिमा तक १०० दिन रहते है और श्रावण शुक्लपञ्चमीको सावत्सरिक

जानी हुई पर्युषणा कहते हैं और भाद्रपद शुक्लपञ्चमी के उपरान्त विहार करना सर्वथा नही कल्पे इस लिये योग्य क्षेत्रके अभावमें वृक्ष नीचे भी अवश्यही निवास (पर्युषणा) करना कहा है जैसे चन्द्रवर्षमें पचास दिनका नियम है तैसे ही अभिवर्द्धितवर्षमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीकी निश्चय पर्युषणा करने का नियम था परन्तु वीशदिनमें श्रावण शुक्लपञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना सर्वथा प्रकारसे नही कल्पे इस तरह पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमादि पर्वतिथिमें पर्युषणा करे, परन्तु अपर्वमें नही, अब शिष्य पूछता है कि आप अपर्वमें पर्युषणा करना नही कहते हो फिर चतुर्थीका अपर्वमें कैसे पर्युषणा करते हो तब आचार्य्यजी महाराज कहते हैं कि कारण से चतुर्थी को पर्युषणा करनेमें आते हैं सोही कारण उपरोक्त पाठानुसार जैन इतिहासो में तथा श्रीकल्पसूत्र की व्याख्याओंमें प्रसिद्ध है और इसीपुस्तकमें पहिले सक्षेप से लिखागया है इस लिये यहा भाषार्थमें विस्तारके कारणसे नही लिखता हु, अब जघन्य, मध्यम, और उत्कृष्ट से पर्युषणाके कालावग्रहका प्रमाण कहते है कि चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल होता है तब आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पचासदिने पर्युषणा करे तो सत्तर (७०) दिवस जघन्यसे कार्त्तिक चौमासी तक रहते है परन्तु योग्यक्षेत्र मिलनेसे भाद्रव कृष्णदशमी को ही पर्युषणा कर लेवे उसीको ८० दिन मध्यमसे रहते हैं तथा श्रावण पूर्णिमा को पर्युषणा करे तो ९० दिन मध्यमसे रहते हैं। इसी तरह यावत् श्रावण कृष्णपञ्चमी को पर्युषणा किवी हो तो ११५ दिन मध्यम से रहते हे और आषाढ पूर्णिमासे ही

पर्यु षणा किवी होवे तो उत्कृष्ट से १२० दिन रहते है पीछे उत्सर्गसे कार्तिक पूर्णिमाको अवश्य विहार करे, परन्तु वर्षादि कारणसे चिरखल कर्दमादि कारण योगे अपवाद से मार्ग-शीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे पीछे तो अपवाद से भी अवश्य निकले विहार करे, नही करे तो प्रायश्चित आवे जहा आषाढमास कल्प किया होवे वहा ही चौमासी ठहरे तथा मार्गशीर्ष पूर्णिमाको विहार करे तो उत्कृष्ट छ मासका कालावग्रह होता है इत्यादि—

अब पाठकवर्ग देखिये उपरका दोनु पाठ प्राचीनकाल में पूर्वधरोके समयका उग्रविहारी महानुभाव पुरुषोको जैन ज्योतिषानुसार वर्तने का है जिसमे उत्सर्गसे आषाढ पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमातक पर्युषणा करे और अप-वादसे श्रावण कृष्ण। ५। १०। ३०। श्रावण शुक्ल ५। १०। १५। भाद्र कृष्ण। ५। १०। ३०। और भाद्र शुक्ल ५। इन दिनोमे जहा योग्यक्षेत्र मिले वहा ही पर्युषणा करे। परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे, जिससे जघन्यमें ७० दिनकी पर्युषणा होती है तथा मध्यमसे। ७५। ८०। ८५। ९०। ९५। १००। १०५। ११०। ११५। ऐसे नव प्रकारकी पर्युषणा होती है और उत्कृष्टसे १२० दिन की पर्युषणा होती है।

जिसमे चन्द्र सवत्सरमें अपवादसे भी पचास दिन की भाद्रवशुक्ल पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे जिससे पीछाडीके ७० दिन रहते हैं तैसेही अभिवर्द्धित सवत्सर मे अपवादसे भी वीशमे दिनकी श्रावणशुक्लपञ्चमी को उल्लङ्घन नही करे जिससें पीछाडीके कार्तिकपूर्णिमा तक १०० दिन रहते है और श्रावण शुक्लपञ्चमीको सांवत्सरिक

प्रतिक्रमणादि भी पूर्वधरोके समयमें जैन ज्योतिषानुसार करनेमें आतेथे सो उपरमें लिख आया हु और आगे भी खुलासापूर्वक लिखुगा वहां विशेष निर्णय होजावेगा—

और आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद योग्यतापूर्वक पांच पांच दिने पर्युषणा करे सो सिर्फ एक श्रीकल्पसूत्रका रात्रिको पठण करके पर्युषणा स्थापन करे परन्तु अधिकरण दोष उत्पन्न होने के कारणसे गृहस्थी लोगो को कहे नही और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचासदिने वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगो को पर्युषणाकी मालुम होती है सो यावत् कार्तिकपूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमें साधु ठहरे सर्वथा प्रकारसे एक स्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती है इस लिये आषाढ चौमासी पीछे योग्यतापूर्वक जहां निवास करे उसीको पर्युषणा कहते हैं सो अज्ञात पर्युषणा कही जाती है और चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिन सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से ज्ञात पर्युषणा कही जाती है इसका विशेष विस्तार आगे भी करने में आवेगा—

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिके तीस (३०)के पृष्ठमे (पढमकाल ठवणा भणामि किकारण जेण एव सुत्त काल ठवणाएसुत्ता देसेण परूवेयव्व कालो समयादिओ,गाथा—असंखेज्जसमया आवलिया एव सुत्तालावएणजावसवच्छर एत्यपुणउदूवद्धे वासारत्तेणपयगत अधिकारेत्यर्थ) इत्यादि व्याख्या प्रथम विधी है सो इस पाठमे कालकी व्याख्यासूत्रानुसार करनी कही है । समयादि काल करके असंख्याते समय जानेसे एक

आवलिका होती हैं १,६७,७७,२१६ आवलिका जाने से एक मुहूर्त होता है त्रीश मुहूर्त्तसे एक अहोरात्रिरूप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवसोंसे एकपक्ष होता है दो पक्षसे एकमास होता है इसी तरह से अनुक्रमे वर्ष, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरादि कालकी व्याख्या अनेक जैन शास्त्रोमे विस्तारपूर्वक प्रसिद्ध है ।

अव इस जगह पाठकवर्ग सज्जन पुरुषोंसे मेरेको इतना ही कहना है कि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिमे और श्रीनिशीथ चूर्णिमे खुलासा पूर्वक अधिकमासको निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनतीमे भी लिया है और अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीशदिने तथा चन्द्रसवत्सरमे पचास दिने निश्चय पर्युषणा कही है और मासवृद्धिके अभावसेही भाद्रपद शुक्लचतुर्थीको पचास दिनकेअन्तरमे कारणयोगे श्रीकालकाचार्य्यजीने पर्युषणा किवी सो दिखाया है और पचासदिने योग्यक्षेत्रके अभावसे जगलमे वृक्ष नीचे भी पर्युषणा करनी कही है परन्तु पचासमे दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करना भी नही कल्पे इत्यादि विस्तारपूर्वक सपूर्ण सम्बन्धके दोनो पूर्वधर महाराज कृत पाठ उपरोक्त छपगये है जिसको विचारो और श्रीधर्मसागरजी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनो महाशयोने दोनो चूर्णिकार पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमे वर्तमानमे मासवृद्धि दो श्रावण होनेसे भी आषाढ चौमासीसे यावत् ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा सिद्ध करनेके लिये आगे और पीछेके सम्बन्धके पाठको और अधिकमासके प्रमाण करनेके पाठको छोडकर अधूरा विना सम्बन्धका थोडासा पाठ लिखके भोले जीवोको शास्त्रोके नामसे पाठ

लिख दिखाया जिसमें भाद्रपदका ही नाममात्र लिखा परन्तु मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपद है किंवा मासवृद्धि होते भी भाद्र पद है जिसका कुछ भी लिखा नहीं और चूर्णिकार महाराजने समयादिके कालका प्रमाण दिखाया है जिसमें अधिक मास भी गिनतीमें सवथा आता है तथापि तीनो महाशयोने निषेध करदिया और मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदकी व्याख्या चूर्णिकारने किवी थी जिसको भी मासवृद्धि होते लिख दिया इस तरहका तीनो महाशयोंको विरुद्धार्थका अधूरा थोड़ासा पाठको विचारो और निष्पक्षपातसे सत्यासत्यका निर्णय करो जिसमें असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो जिससे आत्म कल्याणका रस्ता पावो यही सज्जन पुरुषोंको मेरा कहना है।

और बुद्धिजन सर्व सज्जन पुरुष प्राय जानते भी होवेंगे कि—जैन शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमे एक मात्रा, बिंदु तथा अक्षर वा पद की उलटी जो परूपना करे तथा उत्थापन करे और उलटा वर्ते वह प्राणी मिथ्या दृष्टि ससारगामी कहा जाता है, जमालीवत् अनेक दृष्टान्त जैनमे प्रसिद्ध है तथापि इन तीनो महाशयोने तो ससार वृद्धिका किञ्चित् भी भय न किया और चूर्णिकार महाराजने अधिक मासकी गिनती विस्तार पूर्वक प्रमाण किवी थी जिसको निषेध कर दिवी और अभिवर्द्धित सवत्सरमे बीशदिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही थी जिसके सब पाठको उत्थापन करके यावत् ८० दिने पर्युषणा चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमे स्थापन करके भोले जीवोको कदाग्रहमे गेरे हैं, हा, हा, अति खेद ॥—

और इसके अगाडी फिर भी तीनो महाशयोने प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे उत्सूत्र भाषणरुप अनेक शास्त्रोके विरुद्ध लिखके अपनी बात जमाई है कि (एव यत्र कुत्रापि पर्युषणा निरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव नतु क्वाप्यागमे भद्दवयसुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठवत् अभिवढ्ढियवरिसे सावण सुद्धपञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते) इन वाक्योको तीनो महाशयोने लिखके इसका मतलब ऐसे लाये है कि श्रीपर्युषणा कल्प चूर्णिमें तथा श्रीनिशीथचूर्णिमें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कहीहै इसी प्रकारसे जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणाकी व्यारव्या है तहा भाद्रपदके नामसे है परन्तु कोई भी शास्त्रमें भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठकी तरह मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सम्बत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठ नही दिखता है, इस तरहके तीनो महाशयो के लेख पर मेरा इतनाही कहना है कि इन तीनो महाशयोने (अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रोमें पाठ नही दिखता है) इस मतलबको लिखा है सो सर्वथा मिथ्या है क्योंकि जिन जिन शास्त्रोमें चन्द्र सवत्सरमें पचास दिने, ज्ञात, याने-गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है उसी शास्त्रोमें अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीश दिने ज्ञात पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है सो यह बात अनेक शास्त्रोमें खुलासा पूर्वक प्रगटपने लिखी है तथापि इन तीनो महाशयोने भोले जीवोको मिथ्या भ्रममें गेरनेके लिये अभिवर्द्धित सवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें पाठ नहीं दिखाता है ऐसा लिख दिया है तो अब ऐसे मिथ्या भ्रमको दूर करनेके लिये इस जगह शास्त्रोके प्रमाण

लिख दिखाया जिसमें भाद्रपदका ही नाममात्र लिखा परन्तु मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपद है किंवा मासवृद्धि होते भी भाद्र पद है जिसका कुछ भी लिखा नहीं और चूर्णिकार महाराजने समयादिसे कालका प्रमाण दिखाया है जिसमें अधिक मास भी गिनतीमें सर्वथा आता है तथापि तीनो महाशयोने निषेध करदिया और मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदकी व्याख्या चूर्णिकारने किवी थी जिसको भी मासवृद्धि होते लिख दिया इस तरहका तीनो महाशयोंको विरुद्धार्थका अधूरा थोडासा पाठको विचारो और निष्पक्षपातसे सत्यासत्यका निर्णय करो जिसमें असत्यको छोडो और सत्यको ग्रहण करो जिससे आत्म कल्याणका रस्ता पावो यही सज्जन पुरुषोंको मेरा कहना है ।

और बुद्धिजन सर्व सज्जन पुरुष प्राय जानते भी होवेगे कि–जैन शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमे एक मात्रा, बिंदु तथा अक्षर वा पद की उलटी जो परूपना करे तथा उत्थापन करे और उलटा वर्ते वह प्राणी मिथ्या दृष्टि ससारगामी कहा जाता है, जमालीवत् अनेक दृष्टान्त जैनमे प्रसिद्ध है तथापि इन तीनो महाशयोने तो ससार वृद्धिका किञ्चित् भी भय न किया और चूर्णिकार महाराजने अधिक मासकी गिनती विस्तार पूर्वक प्रमाण किवी थी जिसको निषेध कर दिवी और अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीशदिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही थी जिसके सब पाठको उत्थापन करके यावत् ८० दिने पर्युषणा चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमे स्थापन करके भोले जीवोको कदाग्रहमे गेरे है, हा, हा, अति खेद ॥—

विभक्तिव्यत्यया तत पर विशतिरात्रमासा चोर्द्ध्वमनभिगृहीत निश्चित कर्त्तव्य गृहीज्ञातच गृहिस्याना पृच्छता ज्ञापना कर्त्तव्या यथा वयमत्र वर्षाकालस्थिता एतच्च गृहिज्ञात कार्तिकमास यावत् कर्तव्य इत्यादि—

इसका भावार्थ ऐसा है कि—वर्षाकालमे साधु एक स्थानमे ठहरने रूप निवासकी पर्युषणा करे सो प्रथम गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है और दूसरी जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है इस प्रकारकी न जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक और जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक होती है सो कहते है कि—एक युगमे पाँच सवत्सर होते है जिसमे दो अभिवर्द्धित और तीन चन्द्रसवत्सर होते हैं जब अभिवर्द्धित सवत्सर होता है तब आषाढचौमासी प्रतिक्रमण किये बाद वीश अहोरात्रि अर्थात् श्रावण शुक्लपञ्चमी तक और चन्द्र सवत्सर होता है तब पचास अहोरात्रि अर्थात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमी तक गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है परन्तु पीछे जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है और कोई गृहस्थी लोग साधुजीको आषाढ चौमासी बाद पूछे कि आप यहाँ वर्षाकालमे ठहरे अथवा नही तब उसीको साधुजी अभिवर्द्धितमे वीशदिन और चद्रमे पचास दिनतक, हम यहाँ ठहरे है ऐसा अधिकरण दोषोकी उत्पत्तिके कारणसे न कहे और पीछे याने अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के बाद और चद्रमे पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके बाद गृहस्थी लोगोको कह देवे कि—हम यहाँ वर्षाकालमे ठहरे है ऐसा कहनेसे गृहस्थी लोगोको जानी हुई पर्युषणा कही

भी दिखाते हैं कि-श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें १ तथा वृहद्भाष्यमें ३, और चूर्णिमें ३, श्रीदशाश्रुतस्कन्ध चूर्णिमें ४, और वृत्तिमें ५, श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ६, वृहद्भाष्यमें ७, तथा चूर्णिमें ८, और वृत्तिमें ९, श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें १०, श्रीकल्पसूत्रकी नियुक्तिमें ११ तथा नियुक्तिकी वृत्तिमें १२ और श्रीकल्पसूत्रकी चार वृत्तिओंमें १६, श्रीगच्छाचारपयन्न'की वृत्तिमें १७, श्रीविधिप्रपासमाचारीमें १८, श्रीसमाचारीशतकमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक लिखा है कि—अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ चौमासीसे लेकरके २० दिने, याने-श्रावण सुदी पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी। सो इसीही विषय सम्बन्धी इसी ग्रन्थकी आदिमेंही श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंके पाठ भावार्थ सहित तथा श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २३।२५ में, श्रीपर्युषणाकल्पचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९२ में तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५।९६ में छप गया है और आगे भी कितनेही शास्त्रोंके पाठ छपेंगे जिनको और अब इसीही बातका विशेष खुलासा करता हूं जिसको विवेक बुद्धिसे पक्षपात रहित होकर पढोगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो जावेगा कि अभिवर्द्धितमें बीशदिने पर्युषणा होती थी इसके विषयमें उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठोंके साथ श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ भी पृष्ठ २३ तथा २४ में विस्तार पूर्वक छपगया है तथापि इस जगह थोड़ासा फिर भी लिख दिखाता हूं तथाच तत्पाठ यथा—

इत्थमनभिगृहीत कियन्त कालवक्तव्य,उच्यते। यद्यभि वर्द्धितो सौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रिंदिवानि अथ चन्द्रोसौ तत सविंशतिरात्रं मास यावदनभिगृहीत कर्त्तव्य। तेषामि

विभक्तिव्यत्यया तत पर विशतिरात्रमासा चोर्द्धमनभिगृहीत निश्चित कर्त्तव्य गृहीज्ञातच गृहिस्थाना पृच्छता ज्ञापना कर्त्तव्या यथा वयमत्र वर्षाकालस्थिता एतच्च गृहिज्ञात कार्तिकमास यावत् कर्तव्य इत्यादि—

इसका भावार्थ ऐसा है कि—वर्षाकालमे साधु एक स्थानमे ठहरने रूप निवासकी पर्युषणा करे सो प्रथम गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है और दूसरी जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है इस प्रकारकी न जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक और जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक होती है सो कहते है कि—एक युगमे पॉच सवत्सर होते है जिसमें दो अभिवर्द्धित और तीन चन्द्रसवत्सर होते हैं जब अभिवर्द्धित सवत्सर होता है तब आषाढचौमासी प्रतिक्रमण किये बाद वीश अहोरात्रि अर्थात् श्रावण शुक्लपञ्चमी तक और चन्द्र सवत्सर होता है तब पचास अहोरात्रि अर्थात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमी तक गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है परन्तु पीछे जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है और कोई गृहस्थी लोग साधुजीको आषाढ चौमासी बाद पूछे कि आप यहाँ वर्षाकालमे ठहरे अथवा नही तब उसीको साधुजी अभिवर्द्धितमे वीशदिन और चद्रमे पचास दिनतक, हम यहाँ ठहरे है ऐसा अधिकरण दोषोकी उत्पत्तिके कारणसे न कहे और पीछे याने अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के बाद और चद्रमे पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके बाद गृहस्थी लोगोको कह देवें कि—हम यहाँ वर्षाकालमे ठहरे है ऐसा कहनेसे गृहस्थी लोगोको जानी हुई पर्युषणा कही

जाती हैं ऐसी गृहस्थी लोगोंके जानी हुई पर्युषणा यावत् कार्तिक पूर्णिमा तक याने जो अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक १०० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे और चन्द्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे।

उपरोक्त श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत पाठके भावार्थ मुजबही अनेक जैन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक व्याख्या है सो उपरमें श्रीनिशीथचूर्णि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णि श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यो वगैरहके पाठ भी छपगये हैं और कितनेही शास्त्रोके पाठ इस ग्रन्थमें विस्तारके भयसे नही छपाये हैं सो अभी मेरे पास मौजूद है जिसमें भी उपर मुजबही चतुर्मासीमें पर्युषणा सम्बन्धी अज्ञात और ज्ञातकी खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं।

उपरके पाठमें श्रावण तथा भाद्रव मासका नाम नही है परन्तु वीश तथा पचास दिनका नाम लिखा है जिससे वीश दिनकी गिनती आषाढपूर्णिमासे श्रावण शुक्लपञ्चमीको और पचास दिनकी गिनती भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पूरी होती है इस लिये भावार्थमें श्रावण तथा भाद्रपदका नाम तिथि सहित लिखा जाता है—

उपरोक्त पाठमें आषाढ चौमासीसे कार्तिक चौमासी तककी व्याख्या दिनोकी गिनती सहित खुलासा पूर्वक पर्युषणा सम्बन्धी करी है परन्तु आषाढ चौमासीसे इतने दिन गये बाद पर्युषणामें वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि अमुक दिने करे ऐसा नही लिखा हैं परन्तु

आषाढ चौमासीसे अभिवर्द्धितमें वीशदिन तथा चन्द्रमे पचास दिन तक गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अनिश्चय और वीश तथा पचासके उपर जानी हुई निश्चय यावत् कार्तिक तकका लिखा है और श्रीकल्पसूत्रकी अनेक टीका ओमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धिसे पचासदिन तक न जानी हुई पर्युषणा परन्तु पचाश दिने वार्षिक कृत्यो करके प्रसिद्ध जानी हुई पर्युषणा चद्र सवत्सरमे खुलासा लिखी है तैसेही अभिवर्द्धितमे वीशदिने पर्युषणा जानी हुई लिखी है इस लिये अभिवर्द्धितमे वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको वार्षिक कृत्य सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगो को पर्युषणाकी मालुम होती थी और चद्रमे पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको वार्षिक कृत्य सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि करनेसे गृहस्थी लोगोको पर्युषणाकी मालुम होती थी क्योंकि जैसे न जानी हुई पर्युषणा वीश तथा पचास दिन तक शास्त्रकारोने खुलासा कही है तैसेही जानी हुई पर्युषणा अभिवर्द्धितमे १०० दिन और चद्रमें ७० दिन तक ऐसा खुलासा पूर्वक लिखा है सो पाठ भी सब उपरमे छप गया है।

और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी कही है परन्तु अमुकदिने ज्ञात पर्युषणा करे तथा अमुक दिने वार्षिक कृत्य सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि करे ऐसा कोई भी प्राचीन शास्त्रोमे नही दिखता है इसलिये ज्ञात पर्युषणा होवे उसी दिन वार्षिककृत्य सावत्सरिक प्रतिक्रमण केशलुच नादि समझने क्योंकि सबी शास्त्रकारोने गृहस्थी लोगोको ज्ञात पर्युषणा यावत् कार्तिकमास तक खुलासा लिख

दिया है जिससे ज्ञात पर्युषणा आषाढ़ चौमासीसे वीशे तथा पचाशे करे और सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि अन्य असुकदिने करे ऐसा कदापि नहीं बनता है किन्तु जहाँ ज्ञात पर्युषणा वहाँ ही वार्षिक कृत्य बनते है इसलिये अभिवर्द्धित सवत्सरमे आषाढ़ चौमासीसे लेकर वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको और चन्द्र सवत्सरमे पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि वार्षिक कृत्य अवश्यमेव निश्चय करनेमे आते थे यह निःसन्देहकी बात है तथा और भी जो पहिले तीनो महाशयोने लिखा है (अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिने वयमत्र स्थिता स्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति) और इसका मतलब ऐसे लाये है कि—अभिवर्द्धित सवत्सरमे आषाढ़चतुर्मासीसे लेकर वीशदिने याने श्रावण शुक्लपञ्चमी सेही कोई गृहस्थी लोग पूछे तो कह देवे कि वर्षाकालमे हम यहाँ ठहरे है॥ वर्षाकालमे एक स्थानमे सर्वथा निवास करना सो पर्युषणा है इस मतलबसे भी आषाढ़ चौमासीसे वीशदिने गृहस्थी लोगोकी जानी हुई पर्युषणा करे सो यावत् १०० दिन कार्तिक पूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमे ठहरे॥

उपरोक्त तीनो महाशयोके लिखे वाक्यार्थको भी विवेकी बुद्धिजन पुरुष निष्पक्षपातसे विचारेंगे तो प्रत्यक्ष मालुम हो जावेगा कि प्राचीन कालमे अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमीसे गृहस्थी लोगोकी जानी हुई पर्युषणा करनेमे आती थी क्योंकि जिस जिस शास्त्रानुसार चन्द्र सवत्सरमे पचासदिने जो जो कार्य्य करनेमे आते है

साही कार्य्य प्राचीन कालमे अभिवर्द्धित संवत्सरमे वीश दिने करनेमे आतेथे यह बात उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके न्यायानुसार सिद्ध होगई तथा और आगे भी लिखनेमे आवेगा इसलिये इन तीनो महाशयोका (अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीका पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें नही दिखता है) ऐसा लिखना सर्वथा अप्रमाण हो गया सो आत्मार्थी निष्पक्षपाती पाठकवर्ग विचार लेना—

और अभिवर्द्धित संवत्सरमे आषाढ चौमासीसे वीश दिने निश्चय पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे भी करनेमे आती थी तथापि इन तीनो महाशयोने पक्षपातके जोरसे उसको निषेध करनेके लिये गृहस्थी लोगोके जानी हुई पर्युषणा दो प्रकारकी ठहराकर अभिवर्द्धितमे वीशदिनकी पर्युषणाको केवल गृहस्थी लोगोके जानी हुई कहने मात्रही ठहराते है सो भी मिथ्या है क्योंकि अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थी लोगोको कह देवे कि हम यहाँ वर्षाकालमें ठहरे हैं ऐसा कहकर फिर एक मासके बाद भाद्रपदमें वार्षिक कृत्य करे इस तरहका कोई भी शास्त्रमें नही लिखा है इसलिये इन तीनो महाशयोंका कहना शास्त्रोंके प्रमाण विनाका होनेसे प्रत्यक्ष उत्सूत्रभाषणरूप है और आषाढपूर्णमासे योग्यक्षेत्राभावादि कारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवे पचकमे याने पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करे इस वाक्यको देखके— जो तीनो महाशय अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिनकी पर्युषणाको गृहस्थी लोगोके जानी हुई सिर्फ कहने

मात्रही ठहरा कर फिर वार्षिक कृत्य अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी दशपञ्चके पचासदिने ठहराते होवेंगे तो भी तीनों महाशयोको जैन शास्त्रोका अति गम्भिरार्थका तात्पर्य्य समझमें नही आया मालुम होता है क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें दशपञ्चके पचासदिने अवश्य पर्युषणा करनी कही है सो निश्चयसे चन्द्रसंवत्सरमें ही करनी कही है नतु अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि दशपञ्चक तकका विहार चन्द्रसंवत्सरमेंही होता है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो निश्चयसे चारपञ्चकमें वीशदिने निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा कियी जाती थी सो उपरमें भी विस्तार पूर्वक लिख आया हु—जिससे चारपञ्चकके उपर सर्वथा प्रकारसे विहार करनाही नही कल्पे तथापि अभिवर्द्धितमें वीश-दिनके उपरान्त विहार करे तो छकायके जीवोको विराधना करने वाला और आत्मघाति आज्ञा विराधक कहा जाता है सो श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्ति वगैरह शास्त्रोमें प्रसिद्ध है इसलिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें दशपञ्चक कदापि नही बनते हैं जहाँ जहाँ दशपञ्चके पचासदिने पर्युषणा करनेकी व्याख्या लिखी है सो सब चन्द्रसंवत्सरमें करनेकी समझनी—

और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थी लोगोको साधु कह देवें कि हम यहा वर्षाकालमें ठहरे हैं इस वाक्यको देखके तीनो महाशय वीशदिनकी पर्युषणाको कहने मात्रही ठहराते होवेंगे तब तो इन तीनो महाशयोकी गुरुगम रहित तथा विवेक बिनाकी अपूर्व विद्वत्ताको देखकर मेरे को बड़ा आश्चर्य आता है क्योंकि जैसे अभिवर्द्धित संवत्सर में वीश दिने गृहस्थी लोगोको साधु कह देवें कि हम यहाँ

वर्षाकालमें ठहरे है तैसेही चन्द्रसवत्सरमें भी पचासदिने कह देवे किहम वर्षाकालमें यहाँ ठहरे है ऐसे अक्षर खुलासा पूर्वक चन्द्रके तथा अभिवर्द्धितके लिये अनेक शास्त्रकारोने लिखे है सो इन शास्त्रकारोके लिखे वाक्यपरसे तो इन तीनो विद्वान् महाशयोकी विद्वत्ताके अनुसार चन्द्रसवत्सरमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीकी पर्युषणा भी गृहस्थी लोगोके कहने मात्रही ठहर जावेंगे और सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि वार्षिक कृत्य करनाही नही बनेगा क्योंकि ज्ञात पर्युषणा चन्द्रमे पचासदिने तथा अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीशदिने करे सो यावत् कार्त्तिकपूर्णिमा तक खुलासा पूर्वक शास्त्र कारोने लिख दिया है और अमुक दिने ज्ञात पर्युषणा करे और अमुक दिने वार्षिक कृत्य करे ऐसा कोई भी जगह नही लिखा है इसलिये तीनो महाशय जो ज्ञात पर्युषणा के दिन वार्षिक कृत्य मानेगे तब तो अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीशदिने वार्षिक कृत्य भी माननें पड़ेंगे और वीश दिनकी पर्युषणा कहने मात्रही है ऐसा लिखना भी मिथ्या होनेमें कुछ बाकी नही रहा और चन्द्रसवत्सरमें पचासदिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानोगे और अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीशदिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य नही मानोगे ऐसा मन कल्पनाका अन्याय तीनो महाशयोका आत्मार्थी बुद्धिजन पुरुष कदापि नही मान सकते हैं किन्तु वीशे तथा पचासे ज्ञात पर्युषणा वहाँ ही वार्षिक कृत्य यह न्यायशास्त्रानुसार होनेसे सर्व आत्मार्थियोको अवश्यही प्रमाण करने योग्य है इसलिये अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कृत्यो

सहित होती थी सो निश्चय निःसन्देहकी बात है और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी सभी शास्त्रकारोंने कही है इसलिये इन तीनो महाशयोंने ज्ञात पर्युषणाका भी दो भेद लिखके बीशदिनकी कहने मात्र ठहराई तथा पचासदिनकी वार्षिक कृत्योंसे ठहराई सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है क्योंकि जैसी ज्ञात पर्युषणा चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने होती थी तैसीही अभिवर्द्धित संवत्सरमे बीशदिने होती थी सो ज्ञात पर्युषणाका एकही भेद सर्व शास्त्रकारोंने लिखा है परन्तु ज्ञात पर्युषणाका दो भेद कोई भी प्राचीन शास्त्रोंमें नही है इसलिये तीनो महाशयोंका ज्ञात पर्युषणा दो प्रकारकी लिखना प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्ध है—

और आषाढपूर्णिमाको योग्यक्षेत्राभावादि कारणे श्रावण कृष्णपञ्चमी, दशमी वगैरह पाँच पाँचदिने जो पर्युषणा कही है सो गृहस्थी लोगोंको न जानी हुई और अनिश्चय होती है इसलिये अज्ञात और अनिश्चय पर्युषणामें वार्षिक कृत्य नही बनते हैं किन्तु बीशे तथा पचासे ज्ञात और निश्चय पर्युषणामे वार्षिक कृत्य बनते हैं।

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रके अष्टमाध्ययन (पर्युषणाकल्प) की चूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रके दशवें उद्देशेकी चूर्णिका पाठमे श्रीकालकाचार्य्यजीने कारणयोगे चतुर्थीकी पर्युषणा किवी है सो भी चन्द्रसंवत्सरमे किवी थी नतु अभिवर्द्धितमे क्योकि खास चूर्णिकार महाराजने अभिवर्द्धितमे बीशे तथा चन्द्रमे पचासे ज्ञात निश्चय पर्युषणा करनी कही है जिसका सब पाठ उपरोक्त छपगया है इसलिये मासवृद्धि होते भी भाद्रपदमे पर्युषणा स्थापते है सो मिथ्यावादी है क्योंकि

प्राचीनकालमें जैन ज्योतिषके पञ्चाङ्गकी रीतिसे चंद्रमे पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको और अभिवर्द्धितमे वीशदिने श्रावणशुक्लपञ्चमीको प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा वार्षिक कृत्योसे करनेमे आती थी जब जैन पञ्चाङ्गमें सिर्फ पौष तथा आषाढ मासकी वृद्धि होती थी और मासोंकी वृद्धिका अभाव था जिससे वर्षाकालके चारमासमें श्रावणादि कोई भी मासकी वृद्धि नही होती थी परन्तु अब वर्त्तमानकाल में जैनज्योतिषके पञ्चाङ्गका अभाव होनेसे लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होती है जिससे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास भी वढने लगे [और अभिवर्द्धित संवत्सरमे योग्यक्षेत्राभावादिकारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते यावत् चारपञ्चके वीशदिने पर्युषणा करनेका तथा चंद्रसंवत्सरमें भी योग्यक्षेत्राभावादि कारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते यावत् दशपञ्चके पर्युषणा करनेका कल्प कालानुसार श्रीसङ्घकी आज्ञासे विच्छेद हुआ है इसका विशेष विस्तार आगे करनेमें आवेगा]

इसलिये वर्त्तमानकालमें मासवृद्धि होवे तो भी आषाढ चौमासीसे पचास दिनकी गिनतीसे पर्युषणा करनेकी श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पूर्वज पूर्वाचार्य्योंकी आज्ञा है जिससे दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्रपद होवे तो प्रथम भाद्रपदमें प्रसिद्ध पर्युषणा श्रीजिनेश्वर भगवान्की तथा श्रीपूर्वाचार्य्योंकी आज्ञाके आराधन करनेवाले मोक्षार्थी प्राणी अवश्य करते हैं इसलिये दो श्रावण तथा दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनमास होनेसे पांचमासके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होता है जिसमें पचासदिने

उत्सूत्र भाषणरूप वृथा क्यों परिश्रम करके भोले जीवोंको भवजालमें गेरते ससारवृद्धिका भय कुछ भी नही रक्खा है इसलिये अब लाचार होकर भव्यजीवोंकी शुद्धश्रद्धा होनेके कारणरूप उपकारके लिये और तीनों महाशयोका सूत्र-कारके विरुद्ध उत्सूत्रभाषणके कदाग्रहको दूर करनेके वास्ते सूत्रकार और वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय को इस जगह लिख दिखता हु—

श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायाङ्गजीमूलसूत्र तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी कृत वृत्ति और गुजराती भाषासहित छपके प्रसिद्ध हुआ है जिसके पृष्ठ १२७ में तथाच तत्पाठ —

समणे भगव महावीरे वासाण सवीसइराइ मासे वइक्कंते सत्तरिएहि राइदिएहि सेसेहि वासावासपज्जोसवेइ ॥

अथ सप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते समणेत्यादि— वर्षाणा चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविशतिदिवाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीतेष्वित्यर्थ सप्तत्याञ्च रात्रिदिनेषु शेषेषु भाद्रवदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थं, वर्षास्वावासो वर्षावास वर्षावस्थान पज्जोसवेइत्ति परिवसति सर्वथा करोति पञ्चाशतिप्राक्तनेषु दिवसेषु तथाविध वसत्यभावादिकारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति अतिभाद्रवद शुक्लपञ्चम्या तु वृक्षमूला-दावपि निवसतीति हृदयमिति ॥

भावार्थ —श्रमण भगवन् श्रीमहावीरस्वामिजीने वर्षा-काल के चारमास कहे है जिसके १२० दिन होते हैं जिसमें एकमास अधिक वीशदिन याने ५० दिन जानेसे और ७० दिन पीछाडी बाकी रहनेसे भाद्रवद शुक्लपञ्चमीके

दिन वर्षाकालमे रहनेका सर्वथा प्रकारसे अवश्यही निश्चय करना सो 'पज्जोसवणा' अर्थात् पर्युषणा है जिसमें भाद्रपद शुक्ल पञ्चमीके पहिले ५० दिनके अन्दरमे योग्य क्षेत्राभावादि कारणे दूसरे स्थानमें भी विहार करके जाना बन सकता है परन्तु पचासमे दिन योग्य क्षेत्रके अभावसे जङ्गलमें वृक्ष नीचे भी अवश्यही पर्युषणा करे यह मुख्य तात्पर्य है ।

और चन्द्र सवत्सरमें पचास दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी ७० दिन रहते हैं तैसे ही मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी १०० दिन रहते हैं सो उपरमे अनेक जगह खुलासा पूर्वक छप गया है तैसेही इन्ही वृत्तिकार महाराजनें श्रीस्थानागजी सूत्रकी वृत्तिमे कहा है जिसका यहाँ पाठ दिखाता हु । छपी हुई श्रीस्थानागजी सूत्र वृत्तिके पृष्ठ ३६५ का तथाच तत्पाठ —

पढमपाउससित्ति ॥ इहाषाढ श्रावणौ प्रावृट् आषाढस्तु प्रथम प्रावृट् ऋतुना वा प्रथम इति प्रथमप्रावृट् अथवा चतुर्मासप्रमाणो वर्षाकाल प्रावृडिति विवक्षित स्तत्र सप्ततिदिनप्रमाणे प्रावृषे द्वितीये भागे तावन्नकल्पत एव गन्तु म्प्रथम भागेऽपि पञ्चाशद्दिनप्रमाणे विशति दिनप्रमाणे वा न कल्पते जीवव्याकुलभूतत्वा दुक्तच एत्थय अणभिग्गहिय, वीसइराइसवीसईमास ॥ तेणपरमभिग्गहिय, गिहिनायकत्तियजावत्ति ॥ १ ॥ अनभिगृहीत, मनिश्चित मशिवादिभि निर्गमभावात् आहच असिवादिकारणेहि, अहवावासनहुठ्ठु- आरद्ध ॥ अभिवड्ढियमिवीसा, इहरेसु सवीसईमासो ॥१॥ यत्र सवत्सरेऽधिकमासको भवति तत्राषाढ्या विशतिदिनानि याव दनभिग्रहिक आवासो ऽन्यत्र

मविंशतिरात्र गाम पदाभत द्विनामीति अत्र चैते दोषा एक्कायविराहणया,आयहण विममराणुकटेसु ॥ वुज्झणअभि हणकफरो, मसावमसेण शयगरठ ॥ १ ॥ अवमुवेसु पढेड, पुड्यां मदगवड्डोदुविएतु ॥ अप्पपयायणअगणि, इहरायण ओहरियकुथुत्ति ॥ २ ॥ तत स्तत्र प्रावृषि किमत आह एकस्माद् ग्रामा दपभिभूता दुतरग्रामाणा मनतिक्रमो ग्रा-मानुग्राम तेन ग्रामपरम्परयेत्यथ अथवा एक ग्रामात्पु-पश्चाद्ग्रामाभ्या ग्रामोऽनुग्रामो गामोग अणुगामोय गामा णुगाम तत्र दूइज्जित्त एत्ति द्रोतु विहतुमित्युत्सर्गो पवादमाह पचेत्यादि तथैव नपर मिह प्रत्यथेत ग्रामा-द्यालये निष्काशयेत् कश्चित् उदकौघेवा आगच्छति ततो नश्येदिति उत्तच आवाहे दुब्भिक्खे, भएदओघसिवामह-तासि ॥ परिभवण तालणवा, जया परोवाकरेज्जासित्ति ॥१॥ तथा वपासु वर्षाकाले वर्षावृष्टि वर्षावर्षोचपोसु वा आवा सोऽवस्थान वर्षावास स्त स च जधन्यत आकार्त्तिक्या दिन सप्ततिप्रमाणो मध्यमवृत्त्या च चतुर्मासप्रमाण उत्कृष्टत षण्मास मान स्तदुक्त इयसत्तरीजहन्ना, असिईनउईवीसुत्तरसयच ॥ जइवासैमग्गसिर, दसरायातिन्निउक्कोसा ॥१॥ [मासमित्यर्थ] काऊणमासकप्प, तथेवठिआणतीत मग्गसिरे ॥ सालवणाण-छम्मा, सिओव जिठ्ठोगहोहोइत्ति ॥ २ ॥ पज्जोसवियाणवि परीति सामस्त्येनो षिताना पर्युषणाकल्पेन नियमवद्धस्तु मारब्धानामित्यर्थ पर्युषणा कल्पश्च न्यूनोदरताकरण विकृति नवकपरित्याग पीठफलकादि सस्तारकादान मुच्चारादि मात्रकसग्रहण लोचकरण शैक्षाप्रव्राजन प्राग्गृहीताना भस्म-डगलकादीना परित्यजन मितरेषा ग्रहण द्विगुणवर्षोपग्रहो-

पकरणधरण मभिनवोपकरणग्रहण स क्रोशयोजनात्परतो गमनवर्जन मित्यादि ।

देखिये उपरोक्त पाठमें श्रीवृत्तिकार महाराजनें चार मासके वर्षाकालमें अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीस दिन और चन्द्र सवत्सरमें पचास दिन के उपरान्त विहार करने वालोको छ कायके जीवोंकी विराधना करने वाला कहा अर्थात् वीसे और पचासे अवश्यही पर्युषणा करनी कही सो यावत् कार्त्तिक तक याने अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाही१०० दिन और चन्द्रमें पचास दिने पर्युषणा करनेसे पीछाही ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे ॥ इत्यादि ॥

अब श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाकेआराधन करने वाले मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषो को इस जगह विचार करना चाहिये कि श्रीगणधर महाराजनें श्रीसमवायागजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनें वृत्तिमें मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसवत्सरमें जैन ज्योतिषके पचाङ्गकी रीतिमुजब वर्तनें के अभिप्रायसे चार मासके वर्षाकालमे प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाही ७०दिन रहने से पर्युषणा करनी कही है तथा विशेष खुलासा करते वृत्तिकार महाराजने योग्यक्षत्रके अभावसे वृक्ष नीचे भी पचास दिनेअवश्यही पर्युषणा करनी कही और अभिवर्द्धित सवत्सरमे वृत्तिकार महाराजने ओर पूर्वधरादि महाराजोने वीस दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही है जिससे पीछाही एकसो दिन रहते हैं,—तथापि ये तीनो महाशय अपनी कल्पनासे वृत्तिकार और पूर्वधारादि महाराजो का (अभिवर्द्धितमे वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाही एकसो

दिन रहते हैं) इस अभिप्राय के व्यवहारको जडमूलसे ही उठा करके अभिवर्द्धितमें भी पचास दिने पर्युषणा और पीछाडी ७० दिन रखनेका शास्त्रकारो के विरुद्धार्थमें वृथा आग्रहसे हठ करते हैं क्योंकि श्रीगणधर महाराजने श्रीसमवायागजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजीने वृत्तिमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाडी ७० दिन रहनेसे जो पर्युषणा करनी कही है सो चन्द्रसंवत्सरमें नतु अभिवर्द्धितमें तथापि तीनो महाशय श्रीसमवायागजीका पाठको अभिवर्द्धितमें स्थापन करते हैं सो नि केवल श्रीगणधर महाराजके और वृत्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करते हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पीछाडी ७० दिन रखनेका पाठको दिखाकर संशय रूप भ्रमजालमें भोले जीवोको गेरना सर्वथा शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमें है इसलिये मास वृद्धि होते भी वीस दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणा के पीछाडी एकसो दिन प्राचीन कालमे भी रहते थे उसमें कोई दूषण नही–और अब जैन पचाङ्गके अभावसे वर्तमानिक लौकिक पचाङ्गमें श्रावणादि हरेक मासोकी वृद्धि होनेसे शास्त्रानुसार तथा पूर्वाचार्योंकी आज्ञा मुजब पचास दिने दूजा श्रावण शुदीमें पर्युषणा श्रीखरतरगच्छादि वालोके करनेमें आती है जिन्होको पर्युषणाके पीछाडी कार्त्तिक तक एकसो दिन स्वाभावसेही रहते है सो शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक हैं क्योंकि दो श्रावणादि होनेंसे पाँच मासके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होता है जिसमे पचास दिने पर्युषणा होवे तब पीछाडीके एकसो दिन नियमित्त रीतिसे रहते हैं यह बात जगत्प्रसिद्ध है इसमे कोई भी दूषण नही है इसलिये

अधिक मासकी गिनती करने वाले श्रीखरतरगच्छादि वालोंको पर्युषणाके पीछाडी एकसौ दिन होते हैं परन्तु कोई शास्त्रके वचनको बाधाका कारण नही है और श्रीसमवायागजीमें पीछाडी ७० दिन रहने का कहा है सो मास वृद्धिके अभावसे है इसका खुलासा उपरोक्त देखो इसलिये मास वृद्धि होनेसे १०० दिन होवे तो भी श्रीसमवायागजी सूत्रके वचनको कोई भी बाधाका कारण नही है। तथापि तीनो महाशय श्रीसमवायागजी सूत्रके नामसे पीछाडीके ७० दिन रखनेका हठ करते है। और श्रीखरतरगच्छादि वालोंके उपर आक्षेपरूप पर्युषणाके पीछाडी ७० दिन रखने के लिये दो आश्विनमास होनेंसे दूजा आश्विनमें चौमासी कृत्य करनेका दिखाते है। और कार्त्तिक में करनेसें १०० दिन होते है जिससे श्रीसमवायागजी सूत्रका पाठके बाधक ठहराते है सो मिथ्या हैं क्योंकि श्रीखरतरगच्छवाले श्रीसमवायागजी सूत्रका पाठके बाधक कदापि नही ठहरते हैं किन्तु तीनो महाशय और तीनो महाशयोके पक्षधारी सब ही श्रीसमवायागजी सूत्रके पाठके उत्थापक बनते हैं सो ही दिखाताहु। तीनो महाशय (समणे भगव महावीरे वासाण सवीसइ राइमासे वीइक्कते इत्यादि) पाठको तो खास करके मजूर करते हैं। इस पाठमें पचास दिन कहे हैं, वर्तमानिक कालानुसार पचास दिने पर्युषणा इस पाठसे करनी मानो तो श्रावणमासकी वृद्धि होते दूजा श्रावण शुदीमें पचासदिने पर्युषणा तीनो महाशयोको और इन्होके पक्षधारिओंको मजूर करनी चाहिये। सो नही करते हैं और दो श्रावण होते भी ८० दिने पर्युषणा करते

हैं इसलिये श्रीसमवायांगजी सूत्रका इसी ही पाठको न माननेवाले तथा उत्थापक तीनो महाशय और इन्होंके पक्षधारी प्रत्यक्ष बनते है । तथापि निर्दूषण बनने के लिये अधिक मासकी गिनती निषेध करके, ८० दिनके बदले ५० दिन मानकर निर्दूषण बनते है । और पर्युषणाके पीछाडी दो आश्विनमास होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं। तथापि इसको निषेध करने के लिये अधिकमासकी गिनती निषेध करके १०० दिनके बदले ७० दिन मानकर अपनी मनो कल्पनासे निर्दूषण बनते है और श्रीसमवायागजी सूत्रका पाठके आराधक बनते है । परन्तु शास्त्रार्थको आत्मार्थी पुरुष निर्पक्षपातसे देखके विचार करते हैं तबतो तीनो अधिक मासका गिनतीमें निषेध करनेका तीनो महाशयोका और इन्होके पक्षधारिओका महान् अनर्थ देखके बड़े आश्चर्य स-हित खेदको प्राप्त होते हैं क्योंकि तीनो महाशय और इन्होके पक्षधारी अधिकमासकी गिनती निषेध करके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठके आराधक बनते है परन्तु खास इसी ही श्रीसम-वायागजी मूलसूत्रमें अनेक जगह खुलसा पूर्वक अधिकमासको प्रमाणकिया है जिसमें का ६१ और ६२ वा श्रीसमवायागका पाठ भी वृत्ति भाषा सहित इसी ही पुस्तकमे ३९ । ४० । ४१ पृष्ठ में छप गया है जिसमे पाच सवत्सरोका एक युगमें दोनु अधिकमास को दिनोमें पक्षोमें मासोमें वर्षोमें खुलासा पूवक गिनके प्रमाण दिखायाहै इस लिये अधिकमासकी गिनतीका निषेध कदापि नही हो शकता है तथापि अधिकमासकी गिनती निषेध करके जो श्रीसमवायागजी सूत्रका पाठके आराधक बनते है सो आराधकके बदले

उलटे विराधक बनते है और मासवृद्धि दो श्रावणादि होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करणी और वर्तमानिक पाँचमास के १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होते भी पर्युषणाके पीछाडी ७० दिन रखनेका आग्रहसे हठकरना, और पर्युषणाके पीछाडी मास वृद्धि होनेसे १०० दिन मानने वालेको दूषित ठहराना। और अधिक मासकी गिनती निषेध करके भी आप निर्दूषण बनना। ऐसा जो जो महाशय वर्तमानकालमें मानते है श्रद्धारखते है तथा परूपते भी है—सो नि केवल अनेक शास्त्रोके विरुद्धार्थमे उत्सूत्र भाषण करते दृष्टिरागी भोलेजीवो को जिनाज्ञा विरुद्ध कदाग्रहकी भ्रमजालमे गेरके अपनी आत्माको ससारगामी करते है इसलिये अधिकमासके निषेध करने वाले कदापि निर्दूषण नही बनशकते है,—और अधिक-मासका निषेध करनेको ऐसी बाललीला मिथ्यात्व रूप मन कल्पना की गपोल खीचडी, क्या, अनन्तगुणी अविसवादी सर्वज्ञ महाराज अतिउत्तमोत्तम श्रीतीर्थङ्कर केवलज्ञानी भगवान् उपदेशित शास्त्रोमें कदापि चल शकती है अपितु सर्वथा प्रकारसें नही, नही, नही, क्योकि अधिकमास को श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराज खुलासा पूर्वक गिनती मे प्रमाण करते है। इसलिये तीनो महाशय तथा इन्होके पक्षधारी वर्तमानिक महाशयोकी अधिक मासके निषेध करनेकी सर्व कल्पना ससार वृद्धि कारक मिथ्यात्वकी हेतु हैं इसलिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले आत्मार्थी मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषोसे मेरा यही कहना है कि—हे धर्म बन्धवो तुमको ससार वृद्धिका

पाप होवे और श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने की इच्छा होवे तो अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करो और दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्र पद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी मञ्जूर करो करावो श्रद्धो परूपो और मास वृद्धि होनेसे पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन स्वभाविक होते है जिसको मान्य करो इस तरहका जब प्रमाण करोगे तब ही जिनाज्ञाके आराधक निर्दूषण बनोगे। नहीं तो कदापि नहीं, आगे, इच्छा तुम्हारी—इतने परभी श्रीसमवायांगजी सूत्रका पर्युषणा के पहिले ५० और पीछाड़ी ७० दिनका पाठको दिखाकर मास वृद्धि होते भी दोनु बात रखने के लिये जितनी जितनी कल्पना जोजो महाशय करते रहेंगे सोसो सूत्रकारके विरुद्धार्थमें वृथा परिश्रम करके उत्सूत्र भाषक बनेंगे— क्योंकि ५० और ७० दिन चारमासके १२० दिनका वर्षाकाल सबधी पाठ है इसलिये दो श्रावणादि होनेसे पाँचमासके १५० दिनका वर्षाकालमे श्रीसमवायांगजीका पाठको लिखना सो प्रत्यक्ष सूत्रकारके वृत्तिकार के और न्याय युक्तिसे भी सर्वथा विरुद्धार्थमें हैं इसका विशेष खुलसा उपरोक्त देखो।

और एक युगके पाच सवत्सरोमें दोनु अधिकमासको खास श्रीसमवायाङ्गजी मूलसूत्रमे तथा वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमे खुलासा पूर्वक प्रमाण किये है जिसके विषयमे २२ शास्त्रोके प्रमाण तो इसी ही पुस्तक के पृष्ठ २७ तथा २८ और २९ मे छपगये है और भी सूत्र, वृत्ति, प्रकरण, वगैरह अनेक शास्त्रोके प्रमाण अधिक मासको गिनतीमे करने के लिये हमको मिले है सो आगे लिखने मे आवेगे, अधिक

मासको दिनोमे यावत् मुहूर्त्तोमे भी खुलासासे प्रमाण किया है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध करने वाले तीनो महाशय और इन्होंके पक्षधारी वर्तमानिक महाशय भी श्रीअनन्ततीर्थङ्कर, गणधर, पूर्वधर पूर्वाचार्य्यों के और अपने ही पूर्वजो के वचनो का खण्डन करते, सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, और प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके पाठोंके न माननेवाले तथा उत्थापक प्रत्यक्ष बनते है और भोले जीवोको भी उसी रस्ते पहोचाते मिथ्यात्वकी वृद्धिकारक ससार बढाते है। इस लिये गच्छके पक्षपातका कदाग्रहको छोड़के शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक अधिक मासको प्रमाण करनेकी सत्यबातको ग्रहण करना और सब जनसमाजको ग्रहण कराना यही सम्यक्त्व धारीसज्जन पुरुषो का काम है,—

और भी तीनो महाशय चौमासी कृत्य आषाढादि-मास प्रतिबद्धा की तरह मास वृद्धि होने से पर्युषणा भी भाद्रपदमास प्रतिबद्धा ठहराते है सो भी शास्त्रो के विरुद्ध है क्योंकि प्राचीन काल मे भी मास वृद्धि होनेसे श्रावणमास प्रतिबद्धा पर्युषणाथी और वर्त्तमान कालमे भी दो श्रावण होनेसे कालानुसार दूजा श्रावण मे पर्युषणा करने की शास्त्रकारो की आज्ञा हैं सोही श्रीखरतरगच्छादिमे करने मे आती है इसलिये मास वृद्धि होते भी प्राचीन कालमे भाद्र-पद प्रतिबद्धा और वर्तमानमे दो श्रावण होते भी भाद्रपद-प्रतिबद्धा पर्युषणा ठहराना शास्त्रोके विरुद्ध है इस बातका उपरमें विशेष खुलासा देखके सत्यासत्यका निर्णय पाठकवर्ग स्वयकर सकते हैं। और जैसे चौमासी कृत्यमे अधिक मासको गिना जाता है तैसे ही पर्युषणा में भी अधिक मास को

गप होवे और श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने की इच्छा होवे तो अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करो और दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्र पद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी मञ्जूर करो करावो अट्ठो पकरुपो और मास वृद्धि होनेसे पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन स्वभाविक होते है जिसको मान्य करो इस तरहका जब प्रमाण करोगे तब ही जिनाज्ञाके आराधक निर्दूषण बनोगे। नहीं तो कदापि नहीं, आगे, इच्छा तुम्हारी—इतने परभी श्रीसमवायागजी सूत्रका पर्युषणा के पहिले ५० और पीछाड़ी ७० दिनका पाठको दिखाकर मास वृद्धि होते भी दोनु बात रखने के लिये जितनी जितनी कल्पना जोजो महाशय करते रहेंगे सोसो सूत्र कारके विरुद्धार्थमें वृथा परिश्रम करके उत्सूत्र भाषक बनेंगे— क्योंकि ५० और ७० दिन चारमासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बधी पाठ है इसलिये दो श्रावणादि होनेसे पाँचमासके १५० दिनका वर्षाकालमें श्रीसमवायागजीका पाठको लिखना सो प्रत्यक्ष सूत्रकारके वृत्तिकार के और न्याय युक्तिसे भी सर्वथा विरुद्धार्थमें हैं इसका विशेष खुलसा उपरोक्त देखो।

और एक युगके पाच सवत्सरोंमें दोनु अधिकमासको खास श्रीसमवायाङ्गजी मूलसूत्रमे तथा वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोमे खुलासा पूर्वक प्रमाण किये है जिसके विषयमे २२ शास्त्रोके प्रमाण तो इसी ही पुस्तक के पृष्ठ २७ तथा २८ और २९ मे छपगये है और भी सूत्र, वृत्ति, प्रकरण, वगैरह अनेक शास्त्रोके प्रमाण अधिक मासको गिनतीमे करने के लिये हमको मिले है सो आगे लिखने मे आवेंगे, अधिक

मासको दिनोमे यावत् मुहूर्त्तोमे भी खुलासासे प्रमाण किया है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध करने वाले तीनो महाशय और इन्होके पक्षधारी वर्तमानिक महाशय भी श्रीअनन्ततीर्थङ्कर, गणधर, पूर्वधर पूर्वाचार्य्यों के ओर अपने ही पूर्वजो के वचनो का खण्डन करते, सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, और प्रकरणादि अनेक शास्त्रोके पाठोके न मानने वाले तथा उत्थापक प्रत्यक्ष बनते है और भोले जीवोको भी उसी रस्ते पहोचाते मिथ्यात्वकी वृद्धिकारक संसार बढाते है। इस लिये गच्छके पक्षपातका कदाग्रहको छोड़के शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक अधिक मासको प्रमाण करनेकी सत्यबातको ग्रहण करना और सब जनसमाजको ग्रहण कराना यही सम्यक्त्व धारीसज्जन पुरुषो का काम है,—

और भी तीनो महाशय चौमासी कृत्य आषाढादि-मास प्रतिबद्धा की तरह मास वृद्धि होने से पर्युषणा भी भाद्रपदमास प्रतिबद्धा ठहराते है सो भी शास्त्रो के विरुद्ध है क्योंकि प्राचीन काल मे भी मास वृद्धि होनेसे श्रावणमास प्रतिबद्धा पर्युषणाथी और वर्त्तमान कालमे भी दो श्रावण होनेसे कालानुसार दूजा श्रावण मे पर्युषणा करने की शास्त्रकारो की आज्ञा है सोही श्रीखरतरगच्छादिमे करने मे आती है इसलिये मास वृद्धि होते भी प्राचीन कालमे भाद्र-पद प्रतिबद्धा और वर्तमानमें दो श्रावण होते भी भाद्रपद-प्रतिबद्धा पर्युषणा ठहराना शास्त्रोके विरुद्ध है इस बातका उपरमे विशेष खुलासा देखके सत्यासत्यका निर्णय पाठकवर्ग स्वयकर सकते हैं। और जैसे चौमासी कृत्यमे अधिक मासको गिना जाता है तैसे ही पर्युषणा में भी अधिक मास को

अवश्यही गिना जाता हैं इस लिये धर्मकार्यों में और गिनती का प्रमाणमें अधिक मासका शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक प्रमाण करना ही उचित होनेसे आत्मार्थियों को अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये। अधिक मास को प्रमाण करना इसमें कोई भी तरहका हठवाद नहीं हैं किन्तु अधिक मास की गिनती निषेध करना सो नि केवल शास्त्रकारों के विरुद्धार्थमें हैं,—तथापि इन तीनों महाशयोंने बड़े ज़ोरसे अधिक मासकी गिनती निषेध किवी तब उपरोक्त समीक्षा मुजेभी अधिक मासकी गिनती करने के सम्बन्ध की करनी पड़ी और आगे फिर भी इन तीनों महाशयोंने अपनी चातुराई अधिक मास को निषेध करने के लिये प्रगट किवी है जिसमे के एक तीसरे महाशय श्री विनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिका वृत्तिका पाठ इसही पुस्तक के पृष्ठ ६९।७०।७१ मे छपा था जिसमेका पीछाड़ीका शेष पाठ रहा था जिसको यहाँ लिखके पीछे इसीकी समीक्षा भी करके दिखाता हु श्रीसुखबोधिकावृत्ति के पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठी की आदि से पृष्ठ १४८ के प्रथम पुठी की मध्य तक का पाठ नीचे मुजब जानो यथा —

कि काकेन भक्षित कि वा तस्मिन्मासे पाप न लगति उत बुभुक्षा न लगति इत्याद्युपहसन्मास्वकीय ग्रहिलत्व प्रकटयत स्त्वमपि अधिकमासे सति त्रयोदशसु मासेषु जाते ष्वपि साम्वत्सरिक क्षामणे, बारसण्ह मासाणमित्यादिक वदन्नधिकमासमङ्गीकरोषि एव चतुर्मास क्षामणे अधिक मास सद्भावेपि, चउण्हमासाणमित्यादि पक्षिक क्षामणके अधिक तिथि सम्भवेपि, पन्नरसण्ह दिवसाणमिति च ब्रूषे–

तथा नवकल्पिविहारोहि लोकोत्तरकार्येषु,आसाढेमासे दुप्पया, इत्यादि सूर्य्यचारे,लोकेपि दीपालिका अक्षय तृतीयादि पर्वसु धन कलत्रादिषु च अधिकमासो न गण्यते तदपि त्वं जानासि अन्यच्च सर्वाणि शुभकार्य्याणि अभिवर्द्धिते मासे नपुंसक इति कृत्वा ज्योति शास्त्रे निषिद्धानि अतएव आस्तां मन्योऽभिवर्द्धितो भाद्रपदवृद्धौ प्रथमो भाद्रपदोपि अप्रमाणमेव यथा चतुर्दशी वृद्धौ प्रथमा चतुर्द्दशी-मवगण्य द्वितीयायां चतुर्द्दश्यां पाक्षिक कृत्यं क्रियते— तथात्रापि एवं तर्हि अप्रमाणे मासे देवपूजा मुनि दानाऽवश्यकादि कार्य्यमपि न कार्य्यमित्यपि वक्तुमाधरोष्ट चपलयं यतो यानि हि दिनप्रतिबद्धानि देवपूजा मुनि दानादि कृत्यादि तानि तु प्रतिदिनं कर्त्तव्यान्येव यानि च सन्ध्यादि समय प्रतिबद्धानि आवश्यकादीनि तान्यपि य कश्चन सन्ध्यादि समयं प्राप्य कर्त्तव्यान्येव यानि तु भाद्रपदादि मास प्रतिबद्धानि तानि तु तद्द्वयसम्भवे कस्मिन्क्रियते इति विचारे प्रथम मवगण्य द्वितीये क्रियते इति सम्यग् विचारय तथाच पश्य अचेतना वनस्पतयोपि अधिकमास नागी कुर्वते येनाधिकमासे प्रथमं परितज्य द्वितीय एव मासे पुष्पति—यदुक्तम् आवश्यकनिर्युक्तौ, जइफुल्लाकणि आरडा, चूअग अहिमासयमिघुट्ट मि॥ तुहनखम फुल्लेउ, जइपच्चताकरिंति डमराइ॥१॥ तथा च कश्चित्॥ अभिवढ्ढियमिवीसा, इयरेसु सवीसइ मासो,। इति वचन बलेन मासाभिवृद्धौ विंशत्यादि नैरेव लोचादि कृत्य विशिष्टां पर्युषणां करोति तदप्ययुक्त, येन अभिवढ्ढिय मिवीसा इति वचनं गृहिज्ञातमात्रापेक्षया अन्यथा आषाढ-

अवश्यही गिना जाता है इस लिये धर्मकार्यो में और गिनती का प्रमाणमें अधिक मासका शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक प्रमाण करना ही उचित होनेसे आत्मार्थियो को अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये। अधिक मास को प्रमाण करना इसमें कोइ भी तरहका हटवाद नहीं है किन्तु अधिक मास की गिनती निषेध करना सो नि केवल शास्त्रकारो के विरुद्धार्थमें है,—तथापि इन तीनो महाशयोने बडे जोरसे अधिक मासकी गिनती निषेध किवी तब उपरोक्त समीक्षा मुजेभी अधिक मासकी गिनती करने के सम्बन्ध की करनी पडी और आगे फिर भी इन तीनो महाशयोने अपनी चातुराई अधिक मास को निषेध करने के लिये प्रगट किवी है जिसमें के एक तीसरे महाशय श्री विनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिका वृत्तिका पाठ इसही पुस्तक के पृष्ठ ६९।७०।७१ मे छपा था जिसमेका पीछाडीका शेष पाठ रहा था जिसको यहाँ लिखके पीछे इसीकी समीक्षा भी करके दिखाता हु श्रीसुखबोधिकावृत्ति के पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठी की आदि से पृष्ठ १४८ के प्रथम पुठी की मध्य तक का पाठ नीचे मुजब जानो यथा —

कि काकेन भक्षित कि वा तस्मिन्मासे पाप न लगति उत बुभुक्षा न लगति इत्याद्युपहसन्मास्वकीय ग्रहिलत्व प्रकटयत स्त्वमपि अधिकमासे सति त्रयोदशसु मासेषु जाते ष्वपि साम्वत्सरिक क्षामणे, बारसण्ह मासाणमित्यादिक वदन्नऽधिकमासमङ्गीकरोपि एव चतुर्मास क्षामणे अधिक मास सद्भावेपि, चउण्हमासाणमित्यादि पक्षिक क्षामणके ऽधिक तिथि सम्भवेपि, पन्नरसण्ह दिवसाणमिति च ब्रूषे—

और पाठकवर्ग तथा विशेष करके श्रीतपगच्छके मुनि महाशय और श्रावकादि महाशयों को मेरा इस जगह इतना ही कहना है कि आप लोग निष्पक्षपातसे विवेक बुद्धि हृदय में लाकर तीनों महाशयोंके लेखको एक नजरसे फेरकर भी तो विचार करके देखो इस जगह क्षामणा के सम्बन्धी दूसरो को कहनेके लिये तीनों महाशयोंने 'अधिकमासेसति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि, इत्यादि । तथा 'तथ चतुर्मासक-क्षामणेऽधिकमाससद्भावेऽपि,—यह वाक्य लिखके अधिकमास को गिनतीमें लेकर तेरह मास अभिवर्द्धित संवत्सरमें और चौमासेमें भी अधिक मासका सद्भाव मान्यकर अभिवर्द्धित चौमासा पाँचमास का दिखाया । इस जगह उपरोक्त इन वाक्यसे अधिकमासको तीनों महाशयोंने प्रमाण करके मंजूर कर-लिया और पहिले पर्युषणाके सम्बन्धी अधिक मासकी और अधिक आश्विनकी गिनती निषेध कर दिया, अब क्षामणा के सम्बन्धी अधिक मासको गिनतीमें खुलासा मंजूर करलिया तो फिर विसम्वादरूप बालकरूप व्यवहार युक्तिकारक अधिक मासकी गिनतीका निषेधरूप क्यों किया इसका विशेष विचार पाठकवर्ग स्वयं करलेना, और अब श्रीतपगच्छके वर्तमानिक महाशयोंको मेरा इतनाही कहना है कि आप लोग तीनों महाशयोंके वचनोंको प्रमाण करते हो तो इन्होंके लिखे अक्षरानुसार अधिक मासको गिनती मंजूर करोगे किम्वा विसम्वादी पूर्वापर विरोधी वाक्यरूप निषेधको मंजूर करोगे जो गिनती मंजूर करोगे तबतो वर्तमानिक लौकिक पञ्चांगमें दो श्रावण या दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनादि मासोंकी वृद्धि होवे तो अधिक मासको गिनतीमें

मतलब करलिया इत्यादि प्रश्न उठाकर इसका मतलब छोड़के—तुभी शास्त्रप्रसिद्ध क्षामणामें तेरहमास होते भी बारहमासके क्षामणे करता है इत्यादि लिख कर क्षामणाका संबंध लिख दिखाया और प्रश्न कारके ऊपर ही गेरके अपनी विद्वत्ता दिखाई परन्तु सम्पूर्ण प्रश्नके संबंधका समाधान उत्तरमें शास्त्रोंके प्रमाणसे तो दूर रहा परन्तु युक्ति पूर्वक भी कुछ नहीं कर शके यथा अलौकिक अपूर्व विद्वत्ता प्रश्नके उत्तर देनेमें तीनो विद्वानोने खर्च किया है सो पाठक वर्ग बुद्धि जन पुरुष स्वयं विचार लेना, और तुभी अधिकमास होनेसे तेरह मासके क्षामणा न करते बारह मासका करके अधिक मासको अङ्गीकार नही करता है इत्यादि तीनो महाशयोने लिखा हैं सो मिथ्या हैं क्योंकि अधिक मासकी गिनती करने वाले मुख्य श्रीखरतर गच्छवाले जब अधिक मास होता है तब अभिवर्द्धित संवत्सराश्रय सांवत्सरिक क्षामणे में तेरह मास तथा छवीश पक्षादि और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी पांचमास तथा दशपक्षादि खुलासा कहकर सांवत्सरिक और चौमासी क्षामणेमें अधिक मासको गिनतीमे प्रमाण करते है इसलिये अधिक-मासको क्षामणामें अङ्गीकार नही करता हैं ऐसा तीनो महाशयो का लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या हो गया और इस जगह किसीको यह संशय उत्पन्न होगा कि तेरह मास छवीश पक्षादि किस शास्त्रमे लिखे है तो इस बातका सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की आगे मे समीक्षा करुंगा वहाँ विशेष खुलासा शास्त्रोंके प्रमाणसे लिखा जायगा सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा ।

और पाठकवर्ग तथा विशेष करके श्रीतपगच्छके मुनि महाशय और श्रावकादि महाशयो को मेरा इन जगह इतना ही कहना है कि आप लोग निष्पक्षपातसे विवेक बुद्धि हृदय मे लाकर तीनो महाशयोके लेखको टुक नजरसे थोडासा भी तो विचार करके देखो इस जगह क्षामणा के सम्बन्धमें दूसरो को कहनेके लिये तीनो महाशयोने 'अधिकमासैसति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि, इत्यादि । तथा 'एव चतुर्मासक-क्षामणेऽधिकमास सद्भावेऽपि,–यह वाक्य लिखके अधिकमास को गिनतीमे लेकर तेरह मास अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें और चौमासामें भी अधिक मासका सद्भाव मान्यकर अभिवर्द्धित चौमासा पाँचमास का दिखाया । इस जगह उपरोक्त इस वाक्यसे अधिकमासको तीनो महाशयोने प्रमाण करके मजूर कर-लिया–और पहिले पर्युषणाके सम्बन्धमे अधिक श्रावणकी और अधिक आश्विनकी गिनती निषेध कर दिवी, जब क्षामणा के सम्बन्धमे अधिक मासको गिनतीमें खुलासा मजूर करलिया तो फिर विसम्वादी वाक्यरूप ससार वृद्धिकारक अधिक मासकी गिनतीका निषेध वृथा क्यो किया इसका विशेष विचार पाठकवर्ग स्वय करलेना,–और अब श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक महाशयोको मेरा इतनाही कहना है कि आप-लोग तीनो महाशयोके वचनोको प्रमाण करते हो तो इन्होके लिखे शब्दानुसार अधिक मासकी गिनती मजूर करोगे किम्वा विसवादी पूर्वापर विरोधी वाक्यरूप निषेधको मजूर करोगे जो गिनती मजूरकरोगे तबतो वर्त्तमानिक लौकिक पञ्चागमे दो श्रावण वा दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनादि मासोकी वृद्धि होनेसे अधिक मासका गिनतीमें

निषेध करनाही नही बनेगा, और जो निषेध को मंजूर करोगे तब तो अनेक सूत्र, वृत्ति भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके न मानने वाले उत्थापक बनोगे इसलिये जैसा तुम्हारी आत्माको हितकारी होवे वैसा पक्षपात छोड़कर ग्रहण करना सोही सम्यक्त्वधारी सज्जन पुरुषोंको उचित है मेरा तो धर्मबन्धुओंकी प्रीति में हितशिक्षारूप लिखना उचित था सो लिख दिखाया मान्य करना किंवा न करना सो तो आपलोगों की खुसी की बात है,—

और आगे भी सुनो, तीनों महाशयोंने पाक्षिक क्षामणे अधिक तिथि होते भी "पन्नरसण्हदिवसाण", ऐसा कहके अधिक तिथि को नहीं गिनता है यह वाक्य लिखा है इससे मालुम होता है कि तिथिओंकी हाणी वृद्धि की और पाक्षिक क्षामणा सबधी जैन शास्त्रकारों का रहस्यके तात्पर्य्यको तीनो महाशयोंके समजमें नही आया दिखता है नही तो यह वाक्य कदापि नही लिखते इसका विशेष खुलासा श्रीधर्मविजयजीके नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की में समीक्षा आगे करु गा वहाँ अच्छी तरह से तिथियो की हाणी वृद्धि सबधी और पाक्षिक क्षामणा सम्बधी निर्णय लिखनेमें आवेगा—और नवकल्पि विहारका लिखा सो मासवृद्धिके अभावसे नतु पौषादिमास वृद्धि होते भी क्योंकि मासवृद्धि पौष तथा आषाढकी प्राचीन कालमें होती थी जब और वर्त्तमानमे भी वर्षाऋतुके सिवाय मास वृद्धिमे अधिक मासकी गिनती करके अवश्यही दशकल्पि विहार होता है यह बात शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इस का भी विशेष निणय वहाँ ही करने मे आवेगा—और

(आसाढे मासे दुप्पया इत्यादि सूर्य्यचारे) इस वाक्यको लिखके तीनो महाशय अधिक मासमे सूर्यचार नही होता है ऐसा ठहराते है सो भी मिथ्या हैं क्योंकि अधिक मासमे अवश्यही निश्चय करके सूर्यचार आनादिकाल से होता आया है और आगे भी होता रहेगा तथा वर्तमान कालमे भी होता है सो देखिये शास्त्रोके प्रमाण श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रमे १ तथा वृतिमे २ श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रमे ३ तथा वृत्ति मे ४ श्री-बृहत्कल्प वृत्तिमे ५ श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके पञ्चम शतकके प्रथम उद्देशेमे ६ तत्वृत्तिमें ७ श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमे ८ तथा इन्ही सूत्रकी पाच वृत्तियो मे १३ श्रीज्योतिष-करंडपयन्नेकीवृत्ति मे १४ श्रीव्यवहारसूत्र वृत्तिमें १५ और लघु तथा बृहत्‌त्रैलोक्यसंग्रहणीसूत्र मे १७ तथा तिस की चार वृत्तियों मे २१ और क्षेत्रसमास के तीन मूल ग्रन्थो में २४ तथा तीन क्षेत्रसमासो की सात वृत्तिओ में ३१ इत्यादि अनेक शास्त्रोमें अधिक मासमें सूर्यचार होनेका कहा है अर्थात् सूर्यचारके १८४ माडलेके १८३ अन्तरे खुलासा पूर्वक कहे है जिसमे दिन प्रते सूर्य अपनी मर्यादा पूर्वक हमेसा गति करके १८३ दिने दक्षिणा-यनसे उत्तरायण और फिर १८३ दिने उत्तरायणसे दक्षिणायन इसीही तरहसे एक युगके पाच सूर्य संवत्सरोके १८३० दिनोमे सूर्यचारके १० आयन होते है जिससे चन्द्रमासकी अपेक्षासे दो मासकी वृद्धि होने से ६२ चन्द्रमासके १८३० दिन होते है इसलिये अधिक मासके दिनोकी गनती करनेसेही सूर्यचारके गतिका प्रमाण मिल शकेगा, अन्यथा नही ?

और लौकिक पञ्चागमे भी अधिक मासके दिनोकी गिनती सहित सूर्यचार होता है सोही वर्तमानिक संवत्सर

निषेध करनाही नहीं बनेगा, और जो निषेधको मंजूर करोगे तब तो अनेक सूत्र, वृत्ति भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके न मानने वाले उत्थापक बनोगे इसलिये जैसा तुम्हारी आत्माको हितकारी होवे वैसा पक्षपात छोड़कर ग्रहण करना सोही सम्यक्त्वधारी सज्जन पुरुषोंको उचित है मेरा तो धर्मबन्धुओंकी प्रीति सें हितशिक्षारूप लिखना उचित था सो लिख दिखाया मान्य करना किंवा न करना सो तो आपलोगो की खुसी की बात है,—

और आगे भी सुनो, तीनों महाशयोने पाक्षिक क्षामणे अधिक तिथि होते भी "पन्नरसण्हं दिवसाणं", ऐसा कहके अधिक तिथि को नहीं गिनता है यह वाक्य लिखा है इससे मालुम होता है कि तिथिओकी हाणी वृद्धि की और पाक्षिक क्षामणा सबंधी जैन शास्त्रकारोका रहस्यके तात्पर्य्यको तीनो महाशयोके समजमें नहीं आया दिखता है नहीं तो यह वाक्य कदापि नहीं लिखते इसका विशेष खुलासा श्रीधर्मविजयजीके नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की मे समीक्षा आगे करु गा वहाँ अच्छी तरह से तिथियो की हाणी वृद्धि सबंधी और पाक्षिक क्षामणा सम्बधी निर्णय लिखनेमें आवेगा—और नवकल्पि विहारका लिखा सो मासवृद्धिके अभावसे नतु पौषादिमास वृद्धि होते भी क्योकि मासवृद्धि पौष तथा आषाढकी प्राचीन कालमे होती थी जब और वर्त्तमानमे भी वर्षाऋतुके सिवाय मास वृद्धिमे अधिक मासकी गिनती करके अवश्यही दशकल्पि विहार होता है यह बात शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इस का भी विशेष निर्णय वहाँ ही करने मे आवेगा—और

रीतिसे किवी थी और इन्ही गाथाओंकी अनेक पूर्वाचा-
र्योंने विस्तार करके अच्छी तरहसे टीका वनाई है उन
सब व्याख्यायोको और सूत्रकारके सम्बधकी सब गाथायोको
छोडकरके सिर्फ एक पद लिखा सोभी मास वृद्धिके अभावका
था जिसको भी मास वृद्धि होते भी लिखके दिखाना सो
आत्मार्थी भवभीरु पुरुषोका काम नही हैं और में इस
जगह श्रीउत्तराध्ययनजीसूत्र के २६ वा अध्ययनकी गाथा ११
वीं,से १६ वी तक तथा व्याख्यायोके भावार्थ सहित विस्तार
के कारणसे नहीं लिख सक्ता हु परन्तु जिसके देखनेकी
इच्छा होवे सो रायबहादुर धनपतसिहजी की तरफसे
जैनागम सग्रहका ४१ वा भागमे श्रीउत्तराध्ययनजी मूलसूत्र
तथा श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत वृत्ति और गुजराती भाषा
सहित छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके २६ वा अध्ययन में
साधुसमाचारी सम्बधी पौरषीका अधिकार पृष्ठ ७६६ सें
७६९ तक गाथा ११वी से १६वी तथा वृत्ति और भाषा देखके
निर्णय करलेना और जिसके पास हस्तलिखित पुस्तक मूल
की तथा वृत्तिकीहोवे सोभी उपरोक्त अध्ययनकी गाथा ओर
वृत्ति देखलेना और श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रकार श्रीगणधर
महाराज अधिक मासको अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक
यावत् मुहूर्तामें भी गिनती करके मान्य करने वाले थे तथा
अधिक मासके भी दिनोकी गिनती सहित सूयचार को
मान्यने वाले थे इसलिये सूत्रकार गणधर महाराजके अभिप्राय
के सम्बन्धका सब पाठको छोडके एकपद लिखनेसें अधिक
मासमे सूर्यचार नही होता है ऐसा तीनो महाशयोका लिखना
कदापि सत्य नही होशक्ता है अर्थात् सर्वथा मिथ्या है ।

सो दिखाता हु,—सम्वत् १९६६ का जोधपुरी चंडु पञ्चागमें आषाढ शुक्र ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुवे तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोकी हाणी वृद्धि होके करके भी १८३ वे दिन मार्गशीष शुक्र ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुवा है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात हैं, इसी तरहसे लौकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९६९में खास दो आषढ मास होवेगे तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९०१ से लेकर सम्वत् १९९९वे तकके अधिक मासोका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नही लिखता हु, इसलिये तीनो महाशय अधिक मास में सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो जैनशास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक और लौकिक पञ्चाङ्गकी रीतिसे भी प्रत्यक्ष मिथ्या हैं तथापि तीनो महाशयोने भोले जीवोको अपने पक्ष मे लानेके लिये (आसाढेमासे दुप्पया) इस वाक्यको लिखके सूत्रकार गणधर महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध हो करके और फिरभी अधूरा लिख दिया क्योंकि गणधर महाराज श्रीसुधर्म्मस्वामिजीनें श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके छवीश (२६) वे अध्ययन मे साधुसमाचारी सम्बन्धी पौरस्याधिकारे—असाढे मासे दुप्पया, पोसेमासे चउप्पया ॥ चित्तासोएसु मासेसु, तिप्पया हवइपोरसी ११ इत्यादि १२।१३।१४।१५।१६ गाथाओ से खुलासा पूर्वक व्याख्या मास वृद्धिके अभावसे स्वभाविक

रीतिसे किवी थी और इन्ही गाथाओकी अनेक पूर्वाचार्योंने विस्तार करके अच्छी तरहसे टीका वनाई है उन सब व्याख्यायोको और सूत्रकारके सम्वधकी सब गाथायोको छोडकरके सिर्फ एक पद लिखा सोभी मास वृद्धिके अभावका था जिसको भी मास वृद्धि होते भी लिखके दिखाना सो आत्मार्थी भवभीरु पुरुषोका काम नही हैं और में इस जगह श्रीउत्तराध्ययनजीसूत्र के २६ वा अध्ययनकी गाथा ११ वी,से १६ वी तक तथा व्याख्यायोके भावार्थ सहित विस्तार के कारणसे नही लिख सक्ता हु परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो रायबहादुर धनपतसिहजी की तरफसे जैनागम सग्रहका ४१ वा भागमे श्रीउत्तराध्ययनजी मूलसूत्र तथा श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत वृत्ति और गुजराती भाषा सहित छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके २६ वा अध्ययन मे साधुसमाचारी सम्वधी पौरषीका अधिकार पृष्ठ ७६६ सें ७६९ तक गाथा ११वी से १६वी तथा वृत्ति और भाषा देखके निर्णय करलेना और जिसके पास हस्तलिखित पुस्तक मूल की तथा वृत्तिकीहोवे सोभी उपरोक्त अध्ययनकी गाथा ओर वृत्ति देखलेना और श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रकार श्रीगणधर महाराज अधिक मासको अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक यावत् मुहूर्तोमे भी गिनती करके मान्य करने वाले थे तथा अधिक मासके भी दिनोकी गिनती सहित सूर्यचार को मान्यने वाले थे इसलिये सूत्रकार गणधर महाराजके अभिप्राय के सम्बन्धका सब पाठको छोडके एकपद लिखनेसें अधिक माममे सूर्यचार नही होता है ऐसा तीनो महाशयोका लिखना कदापि सत्य नही होशक्ता है अर्थात् सर्वथा मिथ्या है।

को दिखाता हु,-सम्वत् १९८६ का जोधपुरी चंडु पञ्चांगमें आषाढ़ शुक्र ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुवे तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोंकी हानी वृद्धि हो करके भी १८३ वे दिन मार्गशीर्ष शुक्र ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुवा है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात हैं, इसी तरहसे लौकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९८९में खास दो आषढ मास होयेंगे तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९०१ से लेकर सम्वत् १९९९वे तकके अधिक मासोका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नही लिखता हु, इसलिये तीनो महाशय अधिक मास में सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो जैनशास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक और लौकिक पञ्चाङ्गकी रीतिसे भी प्रत्यक्ष मिथ्या है तथापि तीनो महाशयोने भोले जीवोको अपने पक्ष में लानेके लिये (आसाढेमासे दुप्पया) इस वाक्यको लिखके सूत्रकार गणधर महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध हो करके और फिरभी अधूरा लिख दिया क्योंकि गणधर महाराज श्रीसु धर्म्मस्वामिजीने श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके छवीश (२६) वे अध्ययन मे साधुसमाचारी सम्बन्धी पौरस्याधिकारे–असाढे मासे दुप्पया, पोसेमासे चउप्पया ॥ चित्तासोएसु मासेसु, तिप्पया हवइपोरसी ११ इत्यादि १२।१३।१४।१५।१६ गाथाओ से खुलासा पूर्वक व्याख्या मास वृद्धिके अभावसे स्वभाविक

निषेध करना नहीं बनेगा, और अधिक मासको निषेध करनेके लिये जो जो कल्पना उपरके पाठमे लिखी है सो सबही वृथा होजावेगी सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेना,—

और जैसे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजीके निंदक जैनाभास ढूंढिये और तेरहापन्थी हठग्राही कदाग्रहीलोग अपने पक्षकी भ्रमजालमे भोले जीवोको फसानेके लिये जिस सूत्रका पाठ लोगोको दिखाते हैं उन्ही सूत्रके पाठको जड मूलसेही उत्थापन करते है तैसेही इन तीनो महाशयोने भी किया अर्थात् श्रीदशाश्रुतस्कधसूत्रके अष्टमाध्ययनरूप पर्युषणा कलपचूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिके दशवे उद्देशेका पाठ लिखके भोले जीवोको दिखाया था उन्ही चूर्णिके पाठको जडमूलसे उत्थापन भी कर दिया, क्योंकि प्रथम पर्युषणा भाद्रपदमें ठहरानेके लिये दोनु चूर्णिके पाठ लिखे थे जिसमे स्वभाविकरीतिसे आषाढ चौमासीसे पचास दिनके अन्तरमें कारण योगसे श्रीकालकाचार्यजीने पर्युषणा किवी थी सोभी प्राचीनकालाश्रय गुनपचास (४९) वें दिन मास वृद्धिके अभावसे परन्तु शास्त्रोके प्रमाण उपरान्त एकावन दिने पर्युषणा नही किवी थी, तथापि इस जगह उन्हीं पाठको तीनो महाशयोने जडमूलसेही उत्थापन करके स्वभाविक रीतिसे प्रथम भाद्रपद था उसीको छोडकर दूसरे भाद्रपदमे ८० दिने पर्युषणा करनी लिख दिया, फिर निर्दूषण बनने के लिये उन्ही दोनु चूर्णिमें अधिक मासको प्रमाण किया था उन्हीं चूर्णिके पाठको उत्थापनरूप अधिक मासको निषेध भी कर दिया, हा, आफसोस,—

अब सज्जन पुरुषोसे मेरा इतनाही कहना है कि दो

और भी तीनो महाशय दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदको अप्रमाण ठहरा कर छोड़ देना और दूसरे भाद्रपद में पर्युषणा करना कहते है इसपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित खेद उत्पन्न होता है क्योंकि जैसे अन्य मतवाले जिस देवकी अनेक तरहसें अज्ञान दशाके कारणसें विटम्बना यद्वातद्वा करते है फिर उन्हीं देवकों अपने परमेश्वर मानकर पूजते भी है तैसेही इन तीनो महाशयोंने भी अज्ञानी मिथ्यात्वियोका अनुकरण किया अर्थात् जिस अधिक मास को कालचूला मान्यकरके गिनतीमें नही लेना ऐसा सिद्ध करके फिर अनेक तरहके विकल्पोसें अधिक मासको दूषण लगाके निंदते हुये निषेध करते है फिर उन्ही अधिक मासमें धर्मकार्य्य पर्युषणापर्व करना मजूर कर लिया, क्योंकि तीनो महाशय अधिक मासको कालचूला कहनेसें गिनतीमे नही आता है ऐसा तो पर्युषणाके सम्बधमे प्रथम लिखते हैं इसपर पाठकवर्ग बुद्धिजनपुरुष निष्पक्षपातसे विचार करो कि, कालचूला उसको कहते है जो एक वर्षका कालके उपरमे बढे एक वर्षके बारह मास स्वाभाविक होतेही है परन्तु जब तेरहवा मास बढेगा तब उसीको कालचूलाकी ओपमा होगा नतु बारहवा मासको जब तेरहवा मास को कालचूलाकी ओपमा हुई उसीको गिनतीमे निषेधभी करदेना, और प्रमाणभी करलेना यह कैसी विद्वत्ताका न्याय हुवा जो कालचूलाको निषेध करेंगे तब तो दूसरा भाद्रपदको कालचूलाकी ओपमा होती है उसीमे पर्युषणापर्व स्थापना नही बनेगा, और जो दूसरे भाद्रपदमे कालचूला जानके भी पर्युषणा स्थापेंगे तबतो दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणको

मान्य करलिये तब एक रुपैया तो स्वय मान्य होगया, तथापि निषेध करना, सो वे समझ पुरुषका काम है तैसेही तीनो महाशयोने भी जब देवपूजा, मुनिदानावश्यक (प्रतिक्रमण) वगैरह धर्मकर्म ३० दिनोमे मान्य लिये तब तो ३० दिनका एक अधिक मास तो स्वय मान्य होगया, तथापि फिर अधिक मासको गिनती करनेमे निषेध करना सो हठवादसे नि केवल हास्यका हेतु लज्जाका घर और तीनो महाशयोकी विद्वत्ताकी लघुताका कारण है ,—

तथा और भी सुनिये जब इस जगह तीनो महाशय ३० दिनोमे धर्मकर्म मान्य करते है जिससे अधिक मास भी गिनती में सिद्ध होता हैं फिर पर्युषणाके सबधमे दो श्रावण के कारणसे भाद्रपद तक प्रत्यक्ष ८० दिन होते है जिसको निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बनाते है और अधिक मासको निषेध करते है सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नही, इस लिये जो ८० दिनके ५० दिन मान्य करेंगे तब तो अधिक मासके ३० दिनोमे देवपूजा मुनिदानावश्यकादि कुछ भी धर्मकर्म करनाही नही बनेगा और अधिक मासके ३० दिनोमे धर्मकर्म करना तीनो महाशय मजूर करेंगे तो अधिक मासके ३० दिनका धर्मकर्म गिनतीमे आजावेगा तब तो दो श्रावण हनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते है जिसका निषेध करनाही नही बनेगा और ८० दिने पर्युषणा करनी सो भी शास्त्रोके प्रमाण विना होनेसे जिनाज्ञा विरुद्ध तीनो महाशयोके वचनसे भी सिद्ध होगई—इस वातको पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विशेष स्वय विचार लेना ,—

और आगे फिरभी तीनो महाशयोनें अभिवर्द्धित

भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ही पर्युषणा करनी जिनाज्ञानुजय शास्त्रानुसार है नतु दूसरेमें, इसलेपर भी हठग्राहीजन शास्त्रोके विरुद्ध होकरके भी दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करेंगे तो उन्होंके इच्छाकी बात ही न्यारी है,—

और तीनो महाशय दो चतुर्दशी होनेसे प्रथम चतुर्दशी को छोडकर दूसरी चतुर्दशीमें पाक्षिक कृत्य करनेका कहते है सोभी शास्त्रविरुद्ध है इसका विशेष खुलासा तिथिनिर्णयका अधिकारमें आगे विस्तार पूर्वक शास्त्रोके प्रमाण सहित करनेमें आयेगा,—

और अधिक मासमें देवपूजा, मुनिदान, पापकृत्योकी आलोचनारूप प्रतिक्रमणादि कार्य दिन दिन प्रति करनेका कहकर अधिक मासके तीस ३० दिनोमें धर्मकर्मके कार्य करनेका तीनो महाशय कहते है परन्तु अधिक मासको गिनती में लेनेका निषेध करते हैं, इसपर मेरेको तो क्या परन्तु हरेक बुद्धिजन पुरुषोको तीनो महाशयोकी अपूर्व बालबुद्धिकी चातुराईको देखकर बडाही आश्चर्यको उत्पन्न हुये बिना नही रहेगा क्योंकि जैसे कोई पुरुष एक रुपैये को अप्रमाण मानता है परन्तु १६ आने, तथा ३२ आधाने और ६४ पाव आने, आदिको मान्य करता हैं और एक रुपैये को मानने वालोका निषेध करता है, तैसेही इन तीनो महाशयोका लेखभी हुवा अर्थात् अधिक मासके ३० दिनोमें धर्मकर्म तो मान्य किये, परन्तु अधिक मासको मान्य नही किया और मान्य करनेवालोका निषेध किया सो क्या अपूर्व विद्वत्ता प्रगट तीनो महाशयोने किवी है, जैसे उस पुरुषने जब १६ आने तथा ३२ आध आने चौसठ पाव आने को

मान्य करलिये तब एक रुपैया तो स्वय मान्य होगया, तथापि निषेध करना, सो ये समझ पुरुषका काम है तैसेही तीनो महाशयोने भी जब देवपूजा, मुनिदानावश्यक (प्रतिक्रमण) वगैरह धर्मकर्म ३० दिनोमे मान्य लिये तब तो ३० दिनका एक अधिक मास तो स्वय मान्य होगया, तथापि फिर अधिक मासको गिनती करनेमे निषेध करना सो हठवादसे नि केवल हास्यका हेतु लज्जाका घर और तीनो महाशयोकी विद्वत्ताकी लघुताका कारण है ,—

तथा और भी सुनिये जब इस जगह तीनो महाशय ३० दिनोमे धर्मकर्म मान्य करते है जिससे अधिक मास भी गिनती में सिद्ध होता हैं फिर पर्युषणाके सबधमे दो श्रावण के कारणसे भाद्रपद तक प्रत्यक्ष ८० दिन होते है जिसको निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बनाते है और अधिक मासको निषेध करते है सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नही, इस लिये जो ८० दिनके ५० दिन मान्य करेगे तब तो अधिक मासके ३० दिनोमे देवपूजा मुनिदानावश्यकादि कुछ भी धर्मकर्म करनाही नही बनेगा और अधिक मासके ३० दिनोमे धर्मकर्म करना तीनो महाशय मजूर करेगे तो अधिक मासके ३० दिनका धर्मकर्म गिनतीमे आजावेगा तब तो दो श्रावण हनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते है जिसका निषेधकरनाही नही बनेगा और ८० दिने पर्युषणा करनी सो भी शास्त्रोके प्रमाण विना होनेसे जिनाज्ञा विरुद्ध तीनो महाशयोके वचनसे भी मिट्ट होगई—इस बातको पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विशेष स्वय विचार लेना ,—

और आगे फिरभी तीनो महाशयोनें अभिवर्द्धित

मध्यमर्मे वीश दिने पयुषणा होतीथी उनीको गृहस्थी लोगोके करने मात्रही ठहरानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णिका दशवा उद्देशाके पर्युषणा विषयका आगे पीछेका सबधको छोडकर चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थ में लिखे दो पद, लिखके वृथा परिश्रम करके वही भूल किवी हैं क्योंकि जो आषाढपूर्णिमाको पयुषणा कही हैं सो गृहस्थी लोगके न जानी हुइ, अप्रसिद्ध तथा अनिश्चयसे होती हैं उसमें लोचादिकृत्य करनेका कोई नियम नही हैं परन्तु वीशे, और पचासे, गृहस्थी लोगोकी जानी हुई प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा होती हे उसीमें लोचादिकृत्योका नियम हे इस लिये वीश दिनकी भी पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे होती थी इसका विशेष विस्तार उपरमें पहिले अनेक जगह छपगया हे और श्रीनिशीथचूर्णिके १० वे उद्देशेका पर्युषणा सबधी सपूर्ण पाठ भी उपरमे पृष्ठ ९५ से ९९ तक और भावार्थ १०० से १०४ तक छपगया है और आगे पृष्ठ १०६ से यावत् ११७ तक उसी बातके लिये अनेक शास्त्रोके प्रमाणसे और युक्तिपूर्वक विस्तारसे छपगया है सो पढनेसे सर्व निर्णय होजावेगा और आगे लौकिकमे दीवाली, अक्षय-तृतीयादि पर्व वगैरह तथा अन्यभी सर्व शुभकार्य्य अधिक मासको नपुंशक कहके ज्योतिषशास्त्रमें वर्जन किये हैं और अधिक मास में वनस्पति प्रफुल्लित नही होती हैं, इत्यादि बाते जो जो तीनो महाशयोनें लिखी है सो नि केवल शास्त्रकारोके अभिप्राय को जाने बिना विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोको अपने फन्दमें फसानेके लिये लिखके मिथ्यात्वके कारणसे वृथा परिश्रम

करके समय खोया है और आपका तथा आपके लेखको सत्य माननेवालोका ससार वृद्धिका कारणभी खुब किया है सो इन सब वातोका जवाब शास्त्रोके प्रमाणसे शास्त्रकार महाराज के अभिप्राय समेत तथा न्यायपूर्वक युक्ति सहित अच्छी तरहसे खुलासाके साथ आगे चौथे महाशय श्रीन्यायाम्भोनिधिजी और सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम से लिखनेमे आवेगा,—

परन्तु इस जगह निष्पक्षपाती सत्यग्राही श्रीजिनेश्वर भगवन्‌की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंसें थोडीसी वार्त्ता दिखाकर पीछे तीनो महाशयोकी समीक्षाको पूर्ण करुगा सो वार्त्ता अब सुनो ,—

तीनो महाशयोने श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठकी [अतरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ त रयणि उवायणा वित्तएत्ति] इस पदकी व्याख्या [अर्वागपि कल्पे पर न कल्पेता रात्रि (रजनी) भाद्रपदशुक्लपञ्चमी उवायणा वित्तएति अतिक्रमीतु इत्यादि] व्याख्या खुलासा पूर्वक किवी हैं जिसमे। प्रथम। आषाढ-चैामासीसे पचास दिनके अदरमे कारणयोगे पर्युषणा करना कल्पे परन्तु पचासवें दिनकी भाद्रपदशुक्लपञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना नही कल्पे। तथा दूसरी। पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवें पञ्चकमे पचास दिने पर्युषणा जैन पञ्चाङ्गानुसार मासवृद्धिके अभावसे लिखी। और तीसरी। जैन पञ्चाङ्गानुसार एक युगमे पोष और आषाढ दो मासकी वृद्धि होनेसें वीशदिने पर्युषणा लिखी। और चैाथी। अभी वर्त्तमानकालमे जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक-पञ्चाङ्गमे हरेक मासोकी वृद्धि होती है इसलिये आषाढ

मग्रसमर्में बीस दिने पर्युषणा होतीथी उसीको गृहस्थी लोगोके करने मात्रही ठहरानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णिका दशवा उद्देशाके पर्युषणा विषयका आगे पीछेका सबधको छोडकर चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थ में सिर्फ दो पद, लिखके वृथा परिश्रम करके वडी भूल किवी है क्योंकि जो आषाढपूर्णिमाको पर्युषणा कही है सो गृहस्थी लोगके न जानी हुइ, अप्रसिद्ध तथा अनिश्चयसे होती है उसमें लोचादिकृत्य करनेका कोई नियम नही हैं परन्तु बीसे, और पचासे, गृहस्थी लोगोकी जानी हुई प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा होती है उसीमें लोचादिकृत्योका नियम है इस लिये वीश दिनकी भी पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे होती थी इसका विशेष विस्तार उपरमें पहिले अनेक जगह छपगया है और श्रीनिशीथचूर्णिके १० वे उद्देशेका पर्युषणा सबधी सपूर्ण पाठ भी उपरमे पृष्ठ ९५ से ९९ तक और भावार्थ १०० से १०४ तक छपगया है और आगे पृष्ठ १०६ से यावत् ११७ तक उसी बातके लिये अनेक शास्त्रोके प्रमाणसे और युक्तिपूर्वक विस्तारसे छपगया है सो पढनेसे सर्व निर्णय होजावेगा और आगे लौकिकमे दीवाली, अक्षय-तृतीयादि पर्व वगैरह तथा अन्यभी सर्व शुभकार्य्य अधिक मासको नपुशक कहके ज्योतिषशास्त्रमें वर्जन किये हैं और अधिक मास में वनस्पति प्रफुल्लित नही होती हैं, इत्यादि बाते जो जो तीनो महाशयोनें लिखी है सो नि केवल शास्त्रकारोके अभिप्राय को जाने विना विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोको अपने फन्दमे फसानेके लिये लिखके मिथ्यात्वके कारणमें वृथा परिश्रम

होते भी पर्युषणाके पीछाडी ७० दिन रखनेका झगडा उठाया—

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वधर पूर्वाचार्य्य और प्राचीन सब गच्छोके पूर्वाचार्य्य जिसमे श्रीतपगच्छकेही पूर्वज पूर्वाचार्य्यादि महाराजोने अधिक मासको प्रमाण किया था सो इन तीनो महाशयोने उपरोक्त महाराजोकी आशातनाका भय न रखते हुए अधिकमासको निषेध कर दिया और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने जैसे सुमेरु पर्वतके उपर चालीशयोजनके शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोके शिखरोको और देव मन्दिरादिकके शिखरोको क्षेत्र चूलाकी उत्तम ओपमा कही है तैसेही चद्रसवत्सरके बारह मासोके उपर शिखररूप तेरह वा अधिकमासको भी कालचूलाकी उत्तम ओपमा देकर गिनतीमे लिया था जिसको इन तीनो महाशयोने धर्मकार्योकी गिनतीमे निषेध करने के लिये अधिकमास को नपुशकादि हलकी ओपमा देकर श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी विशेष बडी भारी आशातना किवी है और अपनी बात जमाने के लिये श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्र की चूर्णि तथा श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ लिखके दृष्टि रागियोको दिखाये थे सोभी शास्त्रकार महाराज के विरुद्धार्थ मे तथा उन्ही तीनो शास्त्रोमें अधिकमास को अच्छी तरहसे प्रमाण कियाथा तथापि इन तीनो महाशयोने उन्ही तीनो शास्त्रोके पाठोको जड मूलसे ही उत्थापन करके अधिक-मासको निषेध कर दिया और मासवृद्धिके अभावसे पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही थी तब पर्युषणाके पीछाडी ७०

पीछाडीसे पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा है। इस तरहसे तीनों महाशयोंने चार प्रकारसे खुलासा लिखा है इस पर बुद्धिजन पुरुष तत्त्वग्राही होके विचार करो कि प्राचीनकालमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवे पञ्चकमें पचास दिने मासवृद्धिके अभावसे जैन पञ्चाङ्गानुसार भाद्रपदशुक्लपञ्चमी परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे चतुर्थीको पर्युषणा होती है परन्तु अब लौकिकपञ्चाङ्गमें हरेक मासकी वृद्धि होनेसे श्रावणभाद्रपदादि मास भी बढने लगे इसलिये मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा हुई तब मासवृद्धि होते भी भाद्रपदमेंही पर्युषणा करनेका नियम नही रहा किन्तु दो श्रावण होनेसे दूजा श्रावणमें और दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनेका नियम इस वर्त्तमानिक कालमें रहा जिससे दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन मास होनेसे पर्युषणाके पीछाडी ७० दिनका भी नियम नही रहा अर्थात् मासवृद्धि होनेसें पर्युषणाके पीछाडी १०० दिन श्रीतपगच्छकेही पूर्वजोंकी आज्ञानुसार रहते हैं यह तात्पर्य तीनों महाशयोंके लिखे वाक्य परसें सूर्य्यकी तरह प्रकाश कारक निकलता हैं सो न्यायकीही बात है इस बातकी अपने पूर्वजोंकी आशातनासे डरनेवाला कोई भी प्राणी निषेध नही कर सकता है तथापि इन तीनों महाशयोंने अपनी विद्वत्ताकी बात जमानेके लिये खास अपनेही पूर्वजोंका उपरोक्त वाक्यको जड मूलसेंही उडाकर अपने पूर्वजोंकी आज्ञा लोपते हुवे दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका और मासवृद्धि

होते भी पर्युषणाके पीछाडी ७० दिन रखनेका झगडा उठाया—

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वधर पूर्वाचार्य्य और प्राचीन सब गच्छोके पूर्वाचार्य्य जिसमे श्रीतपगच्छकेही पूर्वज पूर्वाचार्य्यादि महाराजोने अधिक मासको प्रमाण किया था सो इन तीनो महाशयोने उपरोक्त महाराजोकी आशातनाका भय न रखते हुए अधिकमासको निषेध कर दिया और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने जैसे सुमेरु पर्वतके उपर चालीशयोजनके शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोके शिखरोको और देव मन्दिरादिकके शिखरोको क्षेत्र चूलाकी उत्तम ओपमा कही है तैसेही चद्रसवत्सरके बारह मासोके उपर शिखररूप तेरह वा अधिकमासको भी कालचूलाकी उत्तम ओपमा देकर गिनतीमे लिया था जिसको इन तीनो महाशयोने धर्मकार्योकी गिनतीमें निषेध करने के लिये अधिकमास को नपुशकादि हलकी ओपमा देकर श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी विशेष वडी भारी आशातना किवी है और अपनी बात जमाने के लिये श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्र की चूर्णि तथा श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ लिखके दृष्टि रागियोको दिखाये थे सोभी शास्त्रकार महाराज के विरुद्धार्थ मे तथा उन्ही तीनो शास्त्रोमें अधिकमास को अच्छी तरहसे प्रमाण कियाथा तथापि इन तीनो महाशयोने उन्ही तीनो शास्त्रोके पाठोको जड मूलसे ही उत्थापन करके अधिकमासको निषेध कर दिया और मासवृद्धिके अभावसे पचास दिने भाद्रपदमे पर्युषणा कही थी तब पर्युषणाके पीछाडी ७०

चौमासीसे पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा है । इस तरहसे तीनो महाशयोंने चार प्रकारसे खुलासा लिखा है इस पर बुद्धिजन पुरुष तत्त्वग्राही होके विचार करो कि प्राचीनकालमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवें पञ्चकमें पचास दिने मासवृद्धिके अभावसे जैन पञ्चाङ्गानुसार भाद्रपदशुक्लपञ्चमी परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे चतुर्थीको पर्युषणा होती है परन्तु अब लौकिकपञ्चाङ्गमें हरेक मासकी वृद्धि होनेसे श्रावणभाद्रपदादि मास भी बढने लगे इसलिये मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा हुई तब मासवृद्धि होते भी भाद्रपदमेंही पर्युषणा करनेका नियम नही रहा किन्तु दो श्रावण होनेसे दूजा श्रावणमें और दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनेका नियम इस वर्त्तमानिक कालमें रहा जिससे दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन मास होनेसे पर्युषणाके पीछाडी ७० दिनका भी नियम नही रहा अर्थात् मासवृद्धि होनेसें पर्युषणाके पीछाडी १०० दिन श्रीतपगच्छकेही पूर्वजोंकी आज्ञानुसार रहते हैं यह तात्पर्य तीनो महाशयोंके लिखे वाक्य परसें सूर्य्यकी तरह प्रकाश कारक निकलता है सो न्यायकीही बात है इस बातको अपने पूर्वजोंकी आशातनासे डरनेवाला कोई भी प्राणी निषेध नही कर सकता है तथापि इन तीनो महाशयोंने अपनी विद्वत्ताकी बात जमानेके लिये खास अपनेही पूर्वजोंका उपरोक्त वाक्यको जड मूलसेही उठाकर अपने पूर्वजोंकी आज्ञा लोपते हुवे दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका और मासवृद्धि

होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखनेका झगड़ा उठाया—

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वधर पूर्वाचार्य्य और प्राचीन सब गच्छोके पूर्वाचार्य्य जिनमे श्रीतपगच्छकेही पूर्वज पूर्वाचार्य्यादि महाराजोने अधिक मासको प्रमाण किया था सो इन तीनो महाशयोने उपरोक्त महाराजोकी आशातनाका भय न रखते हुए अधिकमासको निषेध कर दिया और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने जैसे सुमेरु पर्वतके उपर चालीशयोजनके शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोके शिखरोको और देव मन्दिरादिकके शिखरोको क्षेत्र चूलाकी उत्तम ओपमा कही है तैसेही चद्रसंवत्सरके बारह मासोके उपर शिखररूप तेरह वा अधिकमासको भी कालचूलाकी उत्तम ओपमा देकर गिनतीमे लिया था जिसको इन तीनो महाशयोने धर्मकार्योकी गिनतीमें निषेध करने के लिये अधिकमास को नपुंशकादि हलकी ओपमा देकर श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी विशेष बड़ी भारी आशातना किवी है और अपनी बात जमाने के लिये श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्र की चूर्णि तथा श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ लिखके दृष्टि रागियोको दिखाये थे सोभी शास्त्रकार महाराज के विरुद्धार्थ मे तथा उन्ही तीनो शास्त्रोमें अधिकमास को अच्छी तरहसे प्रमाण कियाथा तथापि इन तीनो महाशयोने उन्ही तीनो शास्त्रोके पाठोको जड मूलसे ही उत्थापन करके अधिक-मासको निषेध कर दिया और मासवृद्धिके अभावसे पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही थी तब पर्युषणाके पीछाड़ी ७०

दिन भी स्वभाविक रहते थे तथापि इन तीनो महाशयोंने उत्सूत्र भाषणरूप मायावृत्ति होनेसे वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रपद में पर्युषणा और पीछाड़ी के ७० दिन शास्त्रोके प्रमाण विरुद्ध हो करके स्थापन किये और तीनों महाशय खास आप भी स्वय एक जगह अधिकमास को कालचूला की उत्तम ओपमासे लिखते हैं दूसरी जगह नपुंशककी तुच्छ ओपमासे लिखते हैं आगे और भी एक जगह अधिकमासे ३० दिनोका धर्मकर्मको गिनती में लेते हैं दूसरी जगह ३० दिनोको ही सर्वथा निषेध करते है इसी तरहसे कितनी ही जगहपूर्वापरविरोधी (विसम्वादी) उटपटांगरूप वाक्य लिखके गच्छपक्षी जनोको शास्त्रानुसार की सत्य बात परसें श्रद्धा छोड़ा कर शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप कदाग्रहमें गेर दिये तथा आगे अनेक जीवोको गेरनेका कार्य कर गये हैं इसलिये खास तीनो महाशयोकी ओर इन्होके शास्त्र विरुद्ध लेखको सत्य मान्यकर उसी तरह सें अधिक मासकी निषेधरूप मिथ्यात्वके पीष्ट पेषणको पीसते रहेंगे जिससे भोले जीव भी उसीमे फसते रहेंगे उन्होकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने तथा और भी थोड़ासा सुन लिजिये श्रीभगवतीजी सूत्रमे १ ओर तत् वृत्तिमे २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें ३ और तीनकी छ व्याख्यायोमे ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमे १० ओर तीनकी चार व्याख्यायोमे १४ श्रीधर्मरत्न प्रकरणवृत्तिमे १५ श्रीसङ्घपट्टक वृहत् वृत्तिमे १६ श्रीश्राद्धविधिवृत्तिमें १९ इत्यादि अनेक शास्त्रोमे उत्सूत्रभाषक श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वाचार्य्यादि परम गुरुजन महा-

राजोकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोका वाक्यको न मानता हुवा उत्थापन करने वाला प्राणीको यावत् दुर्लभवोधि मिथ्यात्वी अनन्त ससारी कहा है तैसे ही न्यायाभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीने भी अज्ञान तिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ ३२०मे लिखा है—छठ दशम द्वादसे हि, मासद्धमासखमणे हि। अकरन्तो गुरुवयण, अनन्त ससारिओ भणिओ ॥ १ ॥ तथा और भी पृष्ठ २९५ का लेख इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ७९ और ८०, में छपगया है इससे भी पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी इन तीनो महाशयोने अधिकमासको निषेध करने के लिये कितनी वडी आशातना करके कितने शास्त्रोके पाठोको उत्थापन किये है तो फिर इन तीनो महाशयोमे अनन्त ससारका हेतु रूप मिथ्यात्वके सिवाय सम्यक्त्वका लेश मात्र भी कैसे सम्भव होगा क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करने वाला तथा आज्ञा न मानने वाला और उलटा उन्ही महात्माओके वचनोका उत्थापन करने वालाको जैन शास्त्रोंके जानकार बुद्धिजन पुरुष सम्यक्त्वी नही समझ सकते है इसलिये अब पाठक वर्ग पक्षपातका दृष्टिरागको छोडकर और श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञानुसार सत्य बातके ग्रहण करनेकी इच्छा रखकर उपरकी वार्ताको अच्छी तरहसे पढके सत्यासत्यका निर्णय करके असत्यको छोडो और सत्यको ग्रहण करो यही मोक्षाभिलाषि भवभिरु पुरुषोसे मेरा कहना है—

और प्रथम श्रीधर्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिमे

दिन भी स्थापित रहते थे तथापि इन तीनों महाशयोंने उत्सूत्र भाषणरूप भ्रमवृत्ति होनेसे वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रपद में पर्युषणा और पीछाड़ी के ७० दिन शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध ही करके स्थापन किये और तीनों महाशय खास आप भी स्वयं एक जगह अधिकमास को कालचूला की उत्तम ओपमासें लिखते हैं दूसरी जगह नपुंशककी तुच्छ ओपमासें लिखते हैं आगे और भी एक जगह अधिकमासे ३० दिनोंका धर्मकर्मको गिनती में लेते हैं दूसरी जगह ३० दिनोंको ही सर्वथा निषेध करते है इसी तरहसे कितनी ही जगह पूर्वापरविरोधी (विसम्वादी) उटपटांगरूप वाक्य लिखके गच्छपक्षी जनोंको शास्त्रानुसार की सत्य बात परसें श्रद्धा छोडा कर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप कदाग्रहमे गेर दिये तथा आगे अनेक जीवोंको गेरनेका कार्य कर गये हैं इसलिये खास तीनों महाशयोंकी और इन्होंके शास्त्र विरुद्ध लेखको सत्य मान्यकर उसी तरह सें अधिक मासकी निषेधरूप मिथ्यात्वके पीष्ट पेषणको पीसते रहेंगे जिससे भोले जीव भी उसीमे फसते रहेंगे उन्होंकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने तथा और भी थोडासा सुन लिजिये श्रीभगवतीजी सूत्रमे १ और तत् वृत्तिमे २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें ३ और तीनकी छ व्याख्यायोमे ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमे १० और तीनकी चार व्याख्यायोंमे १४ श्रीधर्मरत्न प्रकरणवृत्तिमें १५ श्रीसङ्घपट्टक वृहत् वृत्तिमे १६ श्रीश्राद्धविधिवृत्तिमें १९ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें उत्सूत्रभाषक श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वाचार्य्यादि परम गुरुजन महा

अब आगे चौथे महाशय न्यायाभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीनें, जैनसिद्धांतसमाचारी, नामा पुस्तक मे पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हु ,— जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर मायसिंहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अझीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमे श्रीतीर्थंकर गणधर,चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोके पाठो करके सहित और युक्ति पूर्वक देश कालानुसार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातो को प्रगट किवी थी, जिसको पढने से श्रीन्यायाभोनिधिजी तथा उन्होके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अतर मिथ्यात्वऔर द्वेषबुद्धिके कारणसे उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोके आगे पीछे के पाठोको छोडकर शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थ मे उलटा सबंध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोको उत्सूत्र भाषणरूप स्थापन किवी जिसके सब बातोकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमे शास्त्रोके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय सहित और युक्ति पूर्वक भव्य जीवोके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायाभोनिधिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहु तो जरूर करके अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बडा भारी-एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसे और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसे सब न

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनो महाशयोने श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोको श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिजनादि गाम गाममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससे आत्मसाधनका धर्मके बदले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी अटुर्में गिरके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके बड़ी आशातना करते हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पड़ते हैं इस विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने बड़ी धूर्ताई करके श्रीतपगच्छमें पर्युषणा सबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्यात्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठो ही महाशयोके उत्सूत्र भाषणके लेखोकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमे विस्तारपूर्वक लिखुगा और इन तीनो महाशयोने इस तरहसें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमे कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और उन्होकी तरह श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातनाका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हु —

॥ इति तीनो महाशयो के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

अब आगे चौथे महाशय न्यायाभोनिधिजी श्रीआत्मा-रामजीनें, जैनसिद्धांतसमाचारी, नामा पुस्तक में पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हु ,— जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर बायमिहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अजीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमे श्रीतीर्थंकर गणधर,चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोंके पाठो करके सहित और युक्ति पूर्वक देश कालानुसार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातो को प्रगट किवी थी, जिसको पढने से श्रीन्यायाभोनिधिजी तथा उन्होके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अतर मिथ्यात्व और द्वेषबुद्धिके कारणसे उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोके आगे पीछे के पाठोको छोडकर शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थ मे उलटा सबध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोकी उत्सूत्र भाषण-रूप स्थापन किवी जिसके सब बातोकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमे शास्त्रोंके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय सहित और युक्ति पूर्वक भव्य जीवोके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायाभोनि-धिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहु तो जरूर करके अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बडा भारी-एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसे और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसे सब न

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनो महाशयोने श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोंको श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिजनादि गाम गाममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससे आत्मसाधनका धर्मके बदले मिथ्यात्व विरुद्ध मिथ्यात्वकी श्रद्धामें गिरके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके वृथा आशातना करते हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पड़ते हैं इस विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने वही धूर्त्ताई करके श्रीतपगच्छमें पर्युषणा सबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्यात्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठों ही महाशयोके उत्सूत्र भाषणके लेखोंकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमे विस्तारपूर्वक लिखुगा और इन तीनो महाशयोंने इस तरहसें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमें कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और उन्होकी तरह श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हु—

॥ इति तीनो महाशयो के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

अब आगे चौथे महाशय न्यायाभोनिधिजी श्रीआत्मा रामजीनें, जैनसिद्धातसमाचारी, नामा पुस्तक मे पर्युषणा सम्ब न्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हु ,— जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर मायसिहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अज्ञीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमे श्रीतीर्थकर गणधर,चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोके पाठो करके सहित और युक्ति पूर्वक देश कालानु- सार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातो को प्रगट किवी थी, जिसको पढने से श्रीन्यायाभोनिधिजी तथा उन्होके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अतर मिथ्यात्वऔर द्वेषबुद्धिके कारणसे उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोके आगे पीछे के पाठोको छोडकर शास्त्र कार महाराजके विरुद्धार्थ मे उलटा सबध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोकी उत्सूत्र भाषण- रूप स्थापन किवी जिसके सब बातोकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमे शास्त्रोके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय सहित और युक्ति पूर्वक भव्य जीवोके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायाभोनि- धिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहु तो जरूर करके अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बडा भारी- एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसे और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसे सब न

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनो महाशयोंने श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोको श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिजनादि गाम गाममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससे आत्मसाधनका धर्मके बदले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी खाडमें गिरके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके बडी आशातना करते हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पडते हैं इस विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने बडी धूर्त्ताई करके श्रीतपगच्छमें पर्युषणा सबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्यात्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठो ही महाशयोके उत्सूत्र भाषणके लेखोकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमे विस्तारपूर्वक लिखुगा और इन तीनो महाशयोने इस तरहसें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमें कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और उन्होंकी तरह श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हु —

॥ इति तीनो महाशयो के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

उत्तर—श्रीजिनवल्लभसूरिजी कृत सघपट्टेकी श्रीजिन-पतिसूरीजी कृत वृहद्वृत्तिमे ८० दिने पर्युषणा करने वालोके पक्षको जिन वचन वाधाकारी कहा है सोई काव्य लिखते है यथा—वृद्धौ लोक दिशा नभस्य नभसो, सत्या श्रुतोक्त दिन॥ पञ्चाम परिहृत्य ही शुचिभयात्, पश्चाच्चतुर्मासकात् ॥ तत्रा-शीतितमे कथ विद्धते, मूढामह वार्षिक ॥ कुग्रहाधिगणय्य जैन वचसो, वाधा मुनि व्यसका ॥ १ ॥

भावार्थ—लौकिक रीतिसे श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होता है जब शास्त्रोमे आषाढ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसको छोडकर मूढ लोग अपना कदाग्रहसे ८० दिने क्यों करते है क्योकि ८० दिने पर्युषणा करनेसें जिन वचनको बाधा आती है याने शास्त्र विरुद्ध होता है जिसको नही गिनते है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले लिङ्गधारी चैत्यवासी हठग्राही मुनिजन मध्ये ठग धूतारे है।

प्रश्न—कैसे तिसका पक्ष जिन वचन वाधाकारी है।

उत्तर—श्रवण करो, प्रथम तो श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षाये वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढकी वृद्धि होती थी और इस समयमे लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मास वृद्धि होनेसे श्रावण और भाद्रपद मासकी भी वृद्धि होती है तब उनोकी वृद्धि होनेसे भी दशपञ्चके अर्थात् आषाढ चौमासीसे पचास दिने ही पर्युषणा करना सिद्ध होता है। सोई श्रीमान् चौदह पूर्वधारी श्रीभद्रबाहुस्वामीजी श्रीकल्पसूत्रके विषे कहते हैं। यथा—तेण कालेण तेण समएण समणे भगव

लिखते थोड़ासा नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हु—जिसमें पहिले श्री शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनानेवालेनें पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खण्डन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायाम्भोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुंगा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढकर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं,—अब शुद्धसमाचारी कारके पर्युषणा सम्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १२ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो,—

शिष्य प्रश्न करता है कि अपनें गच्छमें जो श्रावणमास बढे तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोंमें प्रमाण हैं।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके विषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ॥ पन्नासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति॥ भावार्थ श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ चौमासीकी चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमें दिन न करना।

प्रश्न—जो अधिकमास होनेसे अशीमे दिन पर्युषणा सांवत्सरिक पर्व करते है तिसका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमे दूषित भी किया है या नहीं।

उत्तर—श्रीजिनवल्लभसूरिजी कृत संघपट्टेकी श्रीजिन-पतिसूरीजी कृत वृहद्वृत्तिमें ८० दिने पर्युषणा करने वालोके पक्षको जिन वचन बाधाकारी कहा है सोई काव्य लिखते है यथा—वृद्धौ लोक दिशा नभस्य नभसो, सत्या श्रुतोक्त दिन॥ पञ्चास परिहृत्य ही शुचिभयात्, पञ्चाच्चतुर्मासकात् ॥ तत्राशीतितमे कथ विदधते, मूढामह वार्षिक ॥ कुग्रहाधिगणय्य जैन वचसो, बाधा मुनि व्यसका ॥ १ ॥

भावार्थ—लौकिक रीतिसे श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होता है जब शास्त्रोमे आषाढ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसको छोडकर मूढ लोग अपना कदाग्रहसें ८० दिने क्यों करते हैं क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेसें जिन वचनको बाधा आती है याने शास्त्र विरुद्ध होता है जिसको नही गिनते है इस लिये ८० दिने पयुषणा करनेवाले लिङ्गधारी चैत्यवासी हठग्राही मुनिजन मध्ये ठग धूतारे है ।

प्रश्न—कैसे तिसका पक्ष जिन वचन बाधाकारी है ।

उत्तर—श्रवण करो, प्रथम तो श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षाये वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढकी वृद्धि होती थी और इस समयमे लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मास वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद मासकी भी वृद्धि होती है तब उनोकी वृद्धि होनेसे भी दशपञ्चके अर्थात् आषाढ चौमासीसे पचास दिने ही पर्युषणा करना सिद्ध होता है। सोई श्रीमान् चौदह पूर्वधारी श्रीभद्रबाहुस्वामीजी श्रीकल्पसूत्रके विषे कहते हैं। यथा—तेण कालेण तेण समएण समणे भगव

लिखते पोहामा नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हु—जिसमें पहिले श्री कि-शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनाने वालेने पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खवडन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायाभोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुंगा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढ़कर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं ;—अब शुद्धसमाचारी कारके पर्युषणा सन्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १२ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो ,—

शिष्य प्रश्न करता है कि अपनें गच्छमें जो श्रावणमास बढे तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोमे प्रमाण हैं ।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके बिषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ ॥ पन्नासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति ॥ भावार्थ श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ चौमासीकी चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमे दिन न करना ।

प्रश्न —जो अधिकमास होनेसे अशीमे दिन पर्युषणा सावत्सरिक पर्व करते हैं तिसका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमें दूषित भी किया है वा नही ।

उत्तर—श्रीजिनवल्लभसूरिजी कृत सघपट्टकी श्रीजिन-पतिसूरीजी कृत वृहद्वृत्तिमें ८० दिने पर्युषणा करने वालोके पक्षको जिन वचन बाधाकारी कहा है सोई काव्य लिखते है यथा—वृद्धौ लोक दिशा नभस्य नभसो, सत्या श्रुतोक्त दिन॥ पञ्चास परिहृत्य ही शुचिभयात्, पञ्चाच्चतुर्मासकात् ॥ तत्राशीतितमे कथ विदधते, मूढामह वार्षिक ॥ कुग्रहाधिगणय्य जैन वचसो, बाधा मुनि व्यसका ॥ १ ॥

भावार्थ—लौकिक रीतिसे श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होता है जब शास्त्रोमे आषाढ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसको छोडकर मूढ लोग अपना कदाग्रहसें ८० दिने क्यों करते है क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेसें जिन वचनको बाधा आती है याने शास्त्र विरुद्ध होता है जिसको नही गिनते है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले लिङ्गधारी चैत्यवासी हठग्राही मुनिजन मध्ये ठग धूतारे है।

प्रश्न—कैसे तिसका पक्ष जिन वचन बाधाकारी है।

उत्तर—श्रवण करो, प्रथम तो श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षाये वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढकी वृद्धि होती थी और इस समयमे लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मास वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद मासकी भी वृद्धि होती है तब उनोकी वृद्धि होनेसे भी दशपञ्चके अर्थात् आषाढ चौमासीसे पचास दिने ही पर्युषणा करना सिद्ध होता है। सोई श्रीमान् चौदह पूर्वधारी श्रीभद्रबाहुस्वामीजी श्रीकल्पसूत्रके विषे कहते है। यथा—तेण कालेण तेण समएण समणे भगवं

लिखते थोड़ासा नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हुं—जिसमें पहिले जो कि-शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनानेवालेने पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खण्डन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायाम्भोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुंगा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढ़कर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं ,—अब शुद्धसमाचारीकारके पर्युषणा सम्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १२ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो ,—

शिष्य प्रश्न करता है कि अपने गच्छमें जो श्रावणमास बढे तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोंमें प्रमाण हैं ।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके विषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ ॥ पन्नासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति ॥ भावार्थ श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ चौमासीकी चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमें दिन न करना ।

प्रश्न —जो अधिकमास होनेसे अशीमे दिन पर्युषणा सांवत्सरिक पर्व करते है तिसका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमे दूषित भी किया है वा नहीं ।

उत्तर—श्रीजिनवल्लभसूरिजी कृत सघपट्टकी श्रीजिनपतिसूरीजी कृत वृहद्वृत्तिमें ८० दिने पर्युषणा करने वालोके पक्षको जिन वचन बाधाकारी कहा है सोई काव्य लिखते है यथा—वृद्धौ लोक दिशा नभस्य नभसो, सत्या श्रुतोक्त दिन॥ पञ्चास परिहृत्य ही शुचिभयात्, पश्चाच्चतुर्मासकात् ॥ तत्राशीतितमे कथ विदधते, मूढामह वार्षिक ॥ कुग्रहाधिगणय्य जैन वचसो, बाधा मुनि व्यसका ॥ १ ॥

भावार्थ—लौकिक रीतिसे श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होता है जब शास्त्रोमे आषाढ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसको छोडकर मूढ लोग अपना कदाग्रहसें ८० दिने क्यो करते हैं क्योकि ८० दिने पर्युषणा करनेसें जिन वचनको बाधा आती है याने शास्त्र विरुद्ध होता है जिसको नही गिनते है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले लिङ्गधारी चैत्यवासी हठग्राही मुनिजन मध्ये ठग धूतारे है।

प्रश्न—कैसे तिसका पक्ष जिन वचन बाधाकारी है।

उत्तर—श्रवण करो, प्रथम तो श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षाये वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढकी वृद्धि होती थी और इस समयमे लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मास वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद मासकी भी वृद्धि होती है तब उनोकी वृद्धि होनेसे भी दशपञ्चके अर्थात् 'आषाढ चौमासीसे पचास दिने ही पर्युषणा करना सिद्ध होता है। सोई श्रीमान् चौदह पूर्वधारी श्रीभद्रबाहुस्वामीजी श्रीकल्पसूत्रके विषे कहते है। यथा—तेण कालेण तेण समएण समणे भगव

लिखते चोराका नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हुं—जिसमें पहिले जो कि-शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनानेवालेनें पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खण्डन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायाम्भोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुङ्गा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढकर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं ,—अब शुद्धसमाचारीकारके पर्युषणा सम्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १२ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो ,—

शिष्य प्रश्न करता है कि अपने गच्छमें जो श्रावणमास बढे तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोमें प्रमाण हैं ।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके बिषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ ॥ पणासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति ॥ भावार्थ श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ चौमासीकी चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमें दिन न करना ।

प्रश्न —जो अधिकमास होनेसे अशीमे दिन पर्युषणा सांवत्सरिक पर्व करते हैं तिसका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमे दूषित भी किया है वा नही ।

मासकी गिनती प्रमाण किवी है। और ऐसा भी न कहना कि ज्योतिषादिक ग्रन्थोमें प्रतिष्ठादिक शुभकार्य्ये निषेध किया है तो पर्युषणा पर्व कैसे हुवें सो तो नार चन्द्रादिक ज्योतिष ग्रन्थोमे, लग्न, दीक्षा, स्थापना, प्रतिष्ठादिकार्य्ये कितनेही कारणोसें निषेध किये है नारचन्द्र द्वितीय प्रकरणे यथा ॥ रविक्षेत्र गतेजीवे, जीवक्षेत्र गते रवौ। दिक्षा स्थापनाचापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥१॥ इसवास्ते अधिक मासमे पर्युषणा करनेका निषेध किसी जगह भी देखनेमें नही आता है। इसी कारण सें पूर्वोक्त प्रमाणोसे श्रावण मासकी वृद्धि होनेसे दूसरे श्रावण शुदी ४ को और भाद्रव मासकी वृद्धि होनेसें पहिले भाद्रव शुदी ४ चौथकों पर्युषणापर्व ५० पचास दिने करना सिद्ध होता है परन्तु अशीमें दिने नही। एस्थल अति गम्भीरार्थका है मैंने तो पूर्वगीतार्थ प्रतिपादित सिद्धान्ताक्षरो करके और युक्ति करके लिखा है इस उपरान्त विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें, जो ज्ञानी भाव देखा है, सो सच्चा है और सर्व असत्य है। मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नही, इति श्रावण और भाद्रपद वढते पचास दिने पर्युषणा करणाधिकार ॥—

अब पाठकवर्ग उपरका लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशनामा ग्रन्थका पढके विचार करोकी लेखकपुरुषनें कैसी सरलरीतिसें लिखा है और अन्तमें किसी गच्छवालेको दूषित न ठहराते, (विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें जो ज्ञानी भाव देखा है सो सच्चा है ओर सर्व असत्य है मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नही है) ऐसा लिखनेसें लेखक पुरुष प० प्र० यतिजी

महावीरे वासाण सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते वासावास पज्जोसवेइ ।

भावार्थ —आषाढ चौमासीसें वीश दिन अधिक, एक मास अर्थात् ५० दिन जानेसे, श्रीमहावीर स्वामी पर्युषणा करे । इसी तरहसें वृहत् कल्पचूर्णिके विषे, दशपञ्चके पर्युषणा करना कहा है । यथा—आसाढ चउमासे पडिक्कन्ते, पचेहि पचेहि दिवसेहि गएहि, जत्थ २ वासजोग्ग खेत्त पडिपुन्न । तत्थ २ पज्जोसवेयव्व । जाव सवीसइ राइमासो· इत्यादि ।

भावार्थ —आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पाच पाच दिन व्यतीत करते जहा जहा वर्षावास योग्य स्थान प्राप्त होय । वहा वहा पर्युषणा करें, यावत् दशपञ्चक एक मास ओर वीश दिन तक पर्युषणा करें । और दशमा पचकमें अर्थात् पचासमें दिन तो योग्यक्षेत्र नही मिले तो वृक्षके नीचे भी रहकर पर्युषणा करें, इसी तरह श्रीसमवायाङ्गजी सूत्र तथा वृत्तिके विषे ७०वे समवायाङ्गमें कहा है । तथाहि । समणे भगव महावीरे वासाण सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते सत्तरिएहि राइदिएहि सेसेहि वासावास पज्जोसवेइ ।

भावार्थ —श्रमण भगवन् श्रीमहावीर स्वामीजी वर्षाकालके एकमास और वीश दिन गए बाद पर्युषणा करे । इसलिये पचास दिने करके ही पर्युषणा करना अवश्य है और पीछाडी ७० दिन कहे सो मास वृद्धिके अभावसे न कि मासवृद्धि होते भी । और ऐसा भी न कहना कि मासवृद्धि होनेसें अधिक मास गिनतीमें न आता है क्योकि वृहत् कल्पभाष्य तथा चूर्णिके विषे, अधिक

मासकी गिनती प्रमाण किवी है। और ऐसा भी न कहना कि ज्योतिषादिक ग्रन्थोमें प्रतिष्ठादिक शुभकार्य्य निषेध किया है तो पर्युषणा पर्व कैसे हुवे सो तो नार चन्द्रादिक ज्योतिष ग्रन्थोमें, लग्न, दीक्षा, स्थापना, प्रतिष्ठादिकार्य्य कितनेही कारणोसें निषेध किये है नारचन्द्र द्वितीय प्रकरणे यथा ॥ रविक्षेत्र गतेजीवे, जीवक्षेत्र गते रवौ। दिक्षा स्थापनाचापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥१॥ इसवास्ते अधिक मासमे पर्युषणा करनेका निषेध किसी जगह भी देखनेमें नही आता है। इसी कारण सें पूर्वोक्त प्रमाणोसे श्रावण मासकी वृद्धि होनेसे दूसरे श्रावण शुदी ४ को और भाद्रव मासकी वृद्धि होनेसें पहिले भाद्रव शुदी ४ चौथकों पर्युषणापर्व ५० पचास दिने करना सिद्ध होता है परन्तु अशीमे दिने नही। एस्थल अति गम्भीरार्थका है मैंने तो पूर्वगीतार्थ प्रतिपादित सिद्धान्ताक्षरो करके और युक्ति करके लिखा है इस उपरान्त विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें, जो ज्ञानी भाव देखा है, सो सच्चा है और सर्व असत्य है। मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नही, इति श्रावण और भाद्रपद वढते पचास दिने पर्युषणा करणाधिकार ॥—

अव पाठकवर्ग उपरका लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशनामा ग्रन्थका पढके विचार करोकी लेखकपुरुषनें कैसी सरलरीतिसें लिखा है और अन्तमे किसी गच्छवालेको दूषित न ठहराते, (विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें जो ज्ञानी भाव देखा है सो सच्चा है और सर्व असत्य है मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नही है) ऐसा लिखनेसें लेखक पुरुष प० प्र० यतिजी

श्रीरायचन्द्रजी न्याययुक्त निष्पक्षपाती भवभिरू है सो तो पाठकवर्ग भी विशेष विचार करते हैं और उपरके लेखमें श्रीसङ्घपट्टक बृहत् वृत्तिका जो श्लोक लिखा है सो श्रीतप- गच्छवालोंके लिये वृत्तिकार महाराजने नहीं लिखा था, तथापि श्रीतपगच्छवालोंके लिये उपरोक्त श्लोक समझते है उन्होंके समझ में फेर है क्योंकि श्रीसङ्घपट्टक की वृहद्वृत्ति सम्वत् १२५० के लगभग वनी थी उसी वख्त तपगच्छही नहीं हुवा था क्योंकि श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगच्चन्द्रसूरिजी महाराजसे सम्वत् १२८५ वर्षे तपगच्छ हुवा है और श्रीतप गच्छके पूर्वाचार्य जितने हुये है सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें मान्य करनेवाले तथा ५० दिने पर्युषणा करनेवाले थे इसलिये उपरका श्लोक श्रीतपगच्छवालोंके लिये नहीं है किन्तु उस समयमें कदाग्रहीशिथिलाचारी उत्सूत्रभाषक चैत्य- वाशी बहुत थे वे लोग शास्त्रोंके प्रमाण विनाभी ८० दिने पर्युषणा करते थे और भी श्रीचन्द्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्री जम्बूद्वीपपन्नति श्रीसमवायाङ्गजी वगैरह अनेक सूत्रवृत्ति चूर्ण्यादि शास्त्रानुसार और अन्यमतके भी ज्योतिष मुजब वे चैत्यवाशीजन प्राय करके ज्योतिषशास्त्रोंके विशेष जान कार थे, इसलिये अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण काया दिकको जानते हुये अधिक मासको अङ्गीकार करनेवाले थे तथापि मिथ्यात्वरूप अज्ञानदशाके हठवादसे लौकिकपञ्चाङ्ग में दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा चैत्यवाशी लोग करते थे जिससें ८० दिन होते थे उन्होंके लिये उपरका श्लोक लिखा गया है नतु कि श्रीतपगच्छवालोंके लिये ।

अब उपरोक्त शुद्ध समाचारीप्रकाशका लेखपर जो न्याया-

भोनिधिजीने जैनसिद्धान्त समाचारीमे उसीका खण्डन कराया है उसीको लिखके दिखाकर उसीके साथसाथमें मेभी समीक्षा न्यायाभोनिधिजीके नामसे करता हु जिसका कारण पृष्ठ ६६।६७।६८ में इसी ही पुस्तक में छपा है इसलिये न्यायाभोनिधिजीके नामसे ही समीक्षा करना मूजे उचित है सो करता हु—जैनसिद्धात समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पक्ति२२ वीसे पृष्ठ ८८ की पक्ति१० वी तक का लेख नीचे मुजब जानो—शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५४ पक्ति १४ में लिखा है कि [श्रावण मास वढे तो दूसरे श्रावणशुदी में और भाद्रव मास वढे तो प्रथम भाद्रव शुदीमे अपाढ चौमासी से ५० में दिन ही पर्युपणा करनी परन्तु ८० अशीमे दिन नही करनी, ऐसा लिखके पृष्ठ १५५मे अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी की रचित समाचारीका प्रमाण दिया है आगें इसी पृष्ठके पक्ति११ मे लिखा है कि तिसका पक्षको कोई ने कोई ग्रन्थमें दूपित भी किया है वा नही, इसके उत्तरमें श्रीजिनवल्लभ सूरिजीके सङ्घपट्टे की वड़ी टीकाकी शाक्षी दिवी है—(इस तरहका लेख शुद्ध समाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्वन्धी लिखके न्यायाम्भोनिधिजी अब उपरके लेखका लिखते है) उत्तर—हे मित्र ! इस लेखसे आपकी सिद्धि कभी न होगी क्योंकि तुमने अपने गच्छका मनन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया हैं यह तो ऐसा हुवा कि किसी लड केने कहा कि मेरी माता सति है शाक्षी कौन किं मेरा भाई इस वास्तें यह आपका लेख प्रमाणिक नही हो सकता है ।]

अव हम उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि हे सज्जन पुरुषो जैसे शुद्ध समाचारी कारने अपना कार्य्यसिद्ध करनेके

लिये अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजी कृत ग्रन्थका पाठ लिखाया है उसको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाण ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें अपना कार्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंके पाठ दिये है यह सर्व पाठ अप्रमाण ठहरनेसें श्रीन्यायाम्भोनिधिजीको अपने पूर्वाचार्य्योंका पाठ लिख दिखाना भी सर्व वृथा होगया तो फिर जैनसिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ३१ वा में श्रीधर्मघोष सूरिजी कृत श्रीसङ्घाचार भाष्यवृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३ में श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३। ४६। ५२। ५९। ६३, में श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणसूत्र वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३५ में श्रीजयचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रतिक्रमणगर्भहेतु नामा ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ४१ में श्रीविजयसेन सूरिजीका प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, और पृष्ठ ५१। ६१ में श्री कुलमण्डन सूरिजी कृत विचारामृतसंग्रहका पाठ, इत्यादि अनेक जगह ठाम ठाम अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें लिखके वृथा क्यों अन्याय किया होगा सो पाठकवर्ग भी विचार लेना ॥

अब दूसरा सुनो—श्रीन्यायाम्भोनिधिजी जैनसिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ १२ में श्रीखरतरगच्छके श्रीउपाध्यायजी श्रीक्षमाकल्याणजी गणिजी कृत श्रीगणधरसार्द्धशतक प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ३५। ३६ में श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजीकृत श्रीभगवतीजी वृत्तिका और समाचारी ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ७२। ८१मे श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनदत्त सूरिजीका पाठ, पृष्ठ ७२ में श्रीखास श्रीजिनपति सूरिजीके शिष्य श्री

सुमतिगणिजीका पाठ, पृष्ठ ८१ में श्रीउपाध्यायजी श्रीजय सागरजीका पाठ, पृष्ठ ८२। ८६। ९१में श्रीजिनप्रभ सूरिजीका पाठ, और पृष्ठ ८४ मे श्रीजिनवल्लभ सूरिजीका पाठ इसी तरहसे शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीखरतरगच्छके प्रभाविक पुरुषोका पाठ श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अपना कार्य्य सिद्ध करनेके लिये तो खास मान्य करके दिखाते है और शुद्ध समाचारी कारने अपना कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही पूर्वजोका (शास्त्रानुसार युक्ति सहित न्यायपूर्वक सत्य) पाठ लिख दिखाये उसीको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाणिक ठहराते हैं यह तो प्रत्यक्ष वडे अन्यायका रस्ता श्रीन्यायाम्भोनिधिजीने ग्रहण किया है सो विशेष पाठकवर्ग स्वय विचार लेना।

अब तीसरा और भी सुनो श्रीआत्मारामजीने खास (चतुर्थ स्तुतिनिर्णय) नामा ग्रन्थ तीन स्तुति वालोका खण्डन करनेके लिये बनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध है उसीके पृष्ठ ८३।८४।८५ मे श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरीजी कृत श्रीविधिप्रपाग्रन्थका पाठ और उसीकी भाषा पृष्ठ ८५।८६ ८७।८८ के आदि तक लिखके पुन पृष्ट ८८ के मध्यमें लिखते हैं कि—(इस विधिमें पडिक्कमणेकी आदिमे चारथुइसे चैत्यवदना करनी कही है और श्रुत देवता अरु क्षेत्र देवता का कायोत्सर्ग अरु इन दोनोकी थुइ करनी कही है—इस लेखको सम्यक्त्वधारी मानते हैं और मानतेथे फेर मानेगे भी परन्तु मिथ्या दृष्टि तो कभी नही मानेगा इस वास्ते सम्यक् दृष्टि जीवको तीन थुइका कदाग्रह अवश्य छोड देना योग्य है) इस तरहसे श्रीआत्मारामजी श्रीखरतरगच्छके

श्रीजिनप्रभ सूरिजीके लेखको न माननेवालेको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं तो इस जगह पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही खास परमपूज्य और पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको न मानने वाले तो स्वयं मिथ्या दृष्टि सिद्ध होगये फिर श्रीआत्मारामजी न्यायाम्भो निधिजी न्यायके समुद्र हो करके अपने स्वहस्ते जिन्होंके सन्तानिये श्रीजिनप्रभसूरिजीके लेखको न मानने वालोंको मिथ्या दृष्टि लिखते है और श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको अप्रमाण मान्यके खास आपही मिथ्या दृष्टि बनते है । हा अतिखेद ! इस बातको पाठकवर्ग निष्पक्षपातसे सत्य बातके ग्राही होकर अच्छी तरहसे विचार लेना ,—

अब चौथा और भी सुनो श्रीआत्मारामजी इन्ही चतुर्थस्तुतिनिर्णय पुस्तकके पृष्ठ १०१ । १०२ । १०३ में श्री बृहत्खरतरगच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत समाचारीका पाठ लिखके उसीको श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठकी तरह प्रमाणिक मानते है और श्रीजिनपतिसूरिजी कृत पाठकी श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठके साथ भलामण देते है जिसमें श्रीजिनपतिसूरिजीका पाठको भी न मानने वालोको मिथ्या दृष्टि सिद्ध करते है । और फिर आपही श्रीजिनपतिसूरिजीकृत सत्य पाठको जैनसिद्धान्त समाचारीमें अप्रमाण ठहराकर नही मानते है जिससें (उपरोक्त न्यायानुसार करके) मिथ्या दृष्टि बननेका कुछ भी भय न करते कितने अन्यायके रस्ते चलते है सो भी आत्मार्थी सज्जन पुरुष विचार लेना

अब पाचमा और भी सुन लिजिये श्रीआत्मारामजीने तत्त्वनिर्णय प्रासादग्रन्थ बनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध हैं जिसके पृष्ठ १४५ में लिखा है कि—

[अथ पक्षपात न होनेमें हेतु कहते हैं—

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेष कपिलादिषु ।
युक्तिमद्वचन यस्य, तस्य कार्य्य परिग्रह ॥ ३८ ॥

व्याख्या—मेरा कुछ श्रीमहावीरजीके विषे पक्षपात नही है कि जो कुछ महावीरजीने कहा है सोइ मैने मानना है अन्यका कहा नही, और कपिलादि मताधिपोसें द्वेष नही है कि कपिलादिकोका नही मानना किन्तु जिसका वचन शास्त्र युक्तिमत् अर्थात् युक्तिसें विरुद्ध नही है तिसका वचन ग्रहण करनेका मेरा निश्चय है ॥ ३८ ॥]

और इन्ही तत्त्वनिर्णय प्रासादकी उपोद्घात श्रीवल्लभ विजयजीने बनाई है जिसके पृष्ठ ३१ वे में लिखा है कि (पक्षपात करना यह बुद्धिका फल नही है परन्तु तत्त्वका विचार करना यह बुद्धिका फल है "बुद्धे फल तत्त्वविचारण चेति वचनात्" और तत्त्वविचार करके भी पक्षपातको छोड कर जो यथार्थ तत्त्वका भान होवे उसको अङ्गीकार करना चाहिये किन्तु पक्षपात करके अतत्त्वकाही आग्रह नही करना चाहिये यत —आगमेन च युक्त्या च, योऽर्थ समभिगम्यते । परिक्ष्य हेमवद्ग्राह्य, पक्षपाताग्रहेण किम्—

भावार्थ आगम (शास्त्र) और युक्तिके द्वारा जो अर्थ प्राप्त होवे उसको सोनेके समान परीक्षा करके ग्रहण करना चाहिये पक्षपातके आग्रह (हठ)से क्या है)—

अथ पाठकवर्ग श्रीआत्मारामजीके और श्रीवल्लभ-

श्रीजिनप्रभ सूरिजीके लेखको न मानने वालेको मिथ्या दृष्टि ठहराते है तो इस जगह पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही खास परमपूज्य और पूर्वाचार्य श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको न मानने वाले तो स्वय मिथ्या दृष्टि सिद्ध होगये फिर श्रीआत्मारामजी न्यायाभो निधिजी न्यायके समुद्र हो करके अपने स्वहस्ते जिन्होंके सन्तानिये श्रीजिनप्रभसूरिजीके लेखको न मानने वालोको मिथ्या दृष्टि लिखते है और श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको अप्रमाण मान्यके खास आपही मिथ्या दृष्टि बनते है । हा अतिखेद ! इस बातको पाठकवर्ग निष्पक्षपातसे सत्य बातके ग्राही होकर अच्छी तरहसे विचार लेना ,—

अब चौथा और भी सुनो श्रीआत्मारामजी इन्ही चतुर्थस्तुतिनिर्णय पुस्तकके पृष्ठ १०१ । १०२ । १०३ में श्री बृहत्खरतरगच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत समाचारीका पाठ लिखके उसीको श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठकी तरह प्रमाणिक मानते हैं और श्रीजिनपतिसूरिजी कृत पाठको श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठके साथ भलामण देते है जिसमें श्रीजिनपतिसूरिजीका पाठको भी न मानने वालोको मिथ्या दृष्टि सिद्ध करते है । और फिर आपही श्रीजिनपतिसूरिजीकृत सत्य पाठको जैनसिद्धान्त समाचारीमे अप्रमाण ठहराकर नही मानते है जिससें (उपरोक्त न्यायानु सार करके) मिथ्या दृष्टि बननेका कुछ भी भय न करते कितने अन्यायके रस्ते चलते है सो भी आत्मार्थी सज्जन पुरुष विचार लेना ,—

अब पाचमा और भी सुन लिजिये श्रीआत्मारामजीने तत्त्वनिर्णय प्रासादग्रन्थ बनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध हैं जिसके पृष्ठ १४५ मे लिखा है कि—

[अब पक्षपात न होनेमे हेतु कहते है—

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेष कपिलादिषु ।
युक्तिमद्वचन यस्य, तस्य कार्य्य परिग्रह ॥ ३८ ॥

व्याख्या—मेरा कुछ श्रीमहावीरजीके विषे पक्षपात नही है कि जो कुछ महावीरजीने कहा है सोइ मैने मानना है अन्यका कहा नही, और कपिलादि मताधिपोसे द्वेष नही है कि कपिलादिकोका नही मानना किन्तु जिसका वचन शास्त्र युक्तिमत् अर्थात् युक्तिसें विरुद्ध नही है तिसका वचन ग्रहण करनेका मेरा निश्चय है ॥ ३८ ॥]

और इन्ही तत्त्वनिर्णय प्रासादकी उपोद्घात श्रीवल्लभ विजयजीने बनाई है जिसके पृष्ठ ३१ वे में लिखा है कि (पक्षपात करना यह बुद्धिका फल नही है परन्तु तत्त्वका विचार करना यह बुद्धिका फल है "बुद्धे फल तत्त्वविचारण चेति वचनात्" और तत्त्वविचार करके भी पक्षपातको छोड कर जो यथार्थ तत्त्वका भान होवे उसको अङ्गीकार करना चाहिये किन्तु पक्षपात करके अतत्त्वकाही आग्रह नही करना चाहिये यत —आगमेन च युक्त्या च, योऽर्थ समभि-गम्यते । परिक्ष्य हेमवद्ग्राह्य, पक्षपाताग्रहेण किम्—

भावार्थ आगम (शास्त्र) और युक्तिके द्वारा जो अर्थ प्राप्त होवे उसको सोनेके समान परीक्षा करके ग्रहण करना चाहिये पक्षपातके आग्रह (हठ)से क्या है)—

अब पाठकवर्ग श्रीआत्मारामजीके और श्रीवल्लभ-

विजयजीके उपरोक्त लेखमें पक्षपात रहित विचारो कि-
जिस पुरुषका वचन शास्त्र और युक्ति सहित होवे उसको
सोनेके समान ज्ञानके सज्जन पुरुषोंको ग्रहण करना ही उचित
है, और शास्त्र तथा युक्ति रहित वचनको हटवादसें ग्रहण
करना सो निर्बुद्धि पुरुषोंका लक्षण है ऐसा दोनोका कहना है
सो इस पर मेरेको बडेही खेदके साथ लिखना पडता है
कि श्रीआत्मारामजी न्यायाम्भोनिधि नाम धारण करते
न्याय और युक्तिके समुद्र होते भी श्रीजिनेश्वर भगवान्
की आज्ञामुजब शास्त्रानुसार युक्ति करके सहित और
सत्यवचन शुद्ध समाचारी कारने श्रीजिनपतिसूरिजी महा-
राजका लिखा था सो ग्रहण करने योग्य था तथापि उनको
गच्छके पक्षपातसें वृथा क्यों निषेध किया होगा क्योंकि
श्रीजिनपतिसूरिजीका (श्रावण और भाद्रव मास अधिक होवे
तो भी पचासदिने पर्युषणा करना परन्तु ८० में दिन नही
करना इतने पर भी ८० दिने पर्युषणा करते है सो शास्त्र-
विरुद्ध है) यह वाक्य श्रीशुद्धसमाचारी ग्रन्थका और श्रीसंघ-
पट्टक वृहद्वृत्तिका लिखा है सो शास्त्रानुसार सत्य है इसी
ही वातका खुलासा इन्ही पुस्तकमें अनेक जगह ठामठाम
शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक विस्तारसे छप गया है
इसलिये उपरकी वातका निषेध करनाही नही बनता है शुद्ध
समाचारीकारने श्रीजिनपतिसूरिजी महाराज कृत ग्रन्थानु
सार ५० दिने पर्युषणा ठहराई और ८० दिन करने वालोंको
जिनाज्ञाके बाधक कहे है इसको श्रीआत्मारामजीने अप्रमाण
ठहराया तव इसका तात्पर्य्य यह निकला कि ५० दिने पर्यु-
षणा करनेवालोंकों दूषित ठहराये और ८० दिने पर्युषणा

करनेवालोको निर्दूषण ठहराये (हा अति खेद) इससें विशेष अन्याय दूसरा श्रीन्यायाम्भोनिधिजीका कौनसा होगा, कि–सूत्र, वृत्ति, भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रो मे श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्य्य सबी उत्तम पुरुष ठामठाम कहते है कि पर्युषणा पचास दिने करना कल्पे परन्तु पचासमे दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करके एकावनमे दिनकी करना न कल्पे इसलिये योग्यक्षेत्र न मिले तो जङ्गलमे वृक्षनीचे भी पर्युषणा करलेना इतने पर भी कोई पचास दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करके एकावनमे दिन पर्युषणा करे तो श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाका लोपी होवें यह बात तो प्राय जैनमें प्रसिद्ध भी है सो भी मासवृद्धिके अभावकी जैनपञ्चाङ्ग की रीतिसे वर्त्तनेकी थी परन्तु अब लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनी सोभी जिनाज्ञा मुजब है इसीही कारणसे श्रीजिनपतिसूरिजीने मासवृद्धि हो तोभी पचास दिने पर्युषणा कर लेनेका लिखा है सो सत्य है। और एकावन दिने भी पर्युषणा करने वाला जिनाज्ञाका लोपी होता है तो फिर ८० दिने पर्युषणा करने वाले क्या जिनाज्ञाके आराधक बन सकते है सो तो कदापि नही अर्थात् ८० दिने पर्युषणा करने वाले सर्वथा निश्चय करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजो की आज्ञाके लोपी है इसलिये ८०दिने पर्युषणा करने वालो को श्रीजिनपतिसूरिजीने जिनाज्ञाके विराधक ठहराए सो भी सत्य है इसलिये श्रीजिनपतिसूरीजी महाराजका दोनु वाक्य निषेध नही हो सकते है इतने परभी

श्रीन्यायाम्भोनिधिजी निषेध करते हैं सो नि केवल शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करके भोले जीवोंको कदाग्रहका रस्ता दिखाया है।

आगे छठा और भी सुनिये शुद्धसमाचारी कारके सत्य वाक्यको निषेध करनेके लिये अपना पक्षपातके जोरसे श्रीआत्मारामजीने (तुमने अपने गच्छका मनन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया है यह तो ऐसा हुवा कि किसी लडकेनें कहा कि मेरी माता सती है साक्षी कौन कि मेरा भाई इसवास्ते यह आपका लेख प्रमाणिक नही हो सकता है) यह वाक्य लिखे हैं इसकी पांच तरहसें तो समीक्षा उपरमें होगई है और भी छठी तरहसें अब सुनाता हु, कि-उपरोक्त लेखमें श्रीआत्मारामजीने शुद्ध समाचारी-कारका उपहास करनेके लिये विद्वत्ताके अभिमानसें एक लडकेका दृष्टान्त दिखाया है परन्तु शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपतिसूरिजीनें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार शास्त्रोकी मर्य्यादा पूर्वक सत्य वाक्य लिखा है इसलिये लडकेका दृष्टान्त शुद्ध समाचारी कारके उपर किञ्चि-मात्र भी नही घट सकता है तथापि श्रीआत्मारामजीने लिखा है सो नि केवल वर्त्तमानिक गच्छके पक्षपातसें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी अवज्ञा कारक है, और जैसे ग्रीष्म ऋतुमे मध्याह्नका समयके सूर्य्यको किसीने पत्थर फेंका तो भी सूर्य्य पर न गिरते पीछा लोट कर फेंकने वालेके शिर परही आनके गिर सकता है तैसेही श्रीआत्मारामजीका न्याय हुवा अर्थात् श्रीआत्मारामजीनें लडकेका दृष्टान्त शुद्ध समाचारीकार पर दिया था परन्तु

शुद्धसमाचारी कारके वचन जिनाज्ञा मुजब सत्य होनेसे न गिर सका परन्तु वह लडकेका दृष्टान्त पीछाही फिरके श्री आत्मारामजी तथा उन्होके परिवार वालोके उपरही आकर गिरता है क्योंकि खास श्रीआत्मारामजीनेंही जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें अपनाही कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनाही मनन दिखाकर और अपनेही गच्छके अर्वाचीन (थोडे कालके) पाठ दिखाये है सो भी श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप हैं और खास श्री-तपगच्छकेही पूर्वाचार्य्योंके विरुद्धार्थमे ग्रन्थकार महाराजका अभिप्राय के विरुद्ध होकरके आगे पीछेका सम्बन्धको छोड कर अधूरे अधूरे पाठ लिखके फिर अर्थ भी उलटे उलटे किये है (इसका नमुना मात्र खुलासा संक्षिप्तसे आगे करनेमे आवेगा) इसलिये उपरोक्त लडकेका दृष्टान्त श्री आत्मारामजी तथा उन्होके परिवार वालोके उपर अवश्य ही बरोबर घटता है इसवास्ते श्रीआत्मारामजीने शास्त्र-कारोके विरुद्धार्थमे जो जो बाते लिखी है सो तो सर्वही आत्मार्थियोको त्यागने योग्य होनेसे प्रमाणिक नही हो सकती है ,—और सातमी तरहसें आगे (श्रीवल्लभविजय जीके नामसें समीक्षा होगा उसमे विस्तारसे लिखनेमे आवेगा) वहासे समझ लेना ,—अब आगेकी भी समीक्षा करते है जैन सिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ८८ पंक्ति ११ वी सें पृष्ठ ८९ की पंक्ति १९ वी तकका लेख नीचे मुजब जानो—

[और पृष्ठ १५६–१५७ मे लिखा है, कि–"श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षायें वृद्धिकाही अभाव है । केवल पौष आषाढकी वृद्धि होती थी, और इस समय

श्रीन्यायाम्भोनिधिजी निषेध करते हैं सो भि केवल शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करके भोले जीवोंको कदाग्रहका रस्ता दिखाया है।

आगे छठा और भी सुनिये शुद्धसमाचारी कारके सत्य वाक्यको निषेध करनेके लिये अपना पक्षपातके जोरसे श्रीआत्मारामजीने (तुमने अपने गच्छका मनन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया है यह तो ऐसा हुवा कि किसी लडकेनें कहा कि मेरी माता सती है साक्षी कौन कि मेरा भाई इसवास्ते यह आपका लेख प्रमाणिक नही हो सकता है) यह वाक्य लिखे हैं इसकी पांच तरहसें तो समीक्षा उपरमें होगई है और भी छठी तरहसें अब सुनाता हुं, कि–उपरोक्त लेखमें श्रीआत्मारामजीने शुद्ध समाचारी-कारका उपहास करनेके लिये विद्वत्ताके अभिमानसें एक लडकेका दृष्टान्त दिखाया है परन्तु शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपतिसूरिजीनें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार शास्त्रोकी मर्य्यादा पूर्वक सत्य वाक्य लिखा है इसलिये लडकेका दृष्टान्त शुद्ध समाचारी कारके उपर किञ्चित्‌मात्र भी नही घट सकता है तथापि श्रीआत्मारामजीनें लिखा है सो नि केवल वर्त्तमानिक गच्छके पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी अवज्ञा कारक है, और जेसे ग्रीष्म ऋतुमे मध्याह्नका समयके सूर्य्यको किसीने पत्थर फेंका तो भी सूर्य्य पर न गिरते पीछा लोट कर फेंकने वालेके शिर परही आनके गिर सकता है तैसेही श्रीआत्मारामजीका न्याय हुवा अर्थात् श्रीआत्मारामजीनें लडकेका दृष्टान्त शुद्ध समाचारीकार पर दिया था परन्तु

अनुसारसें हरेक् वर्षमें आषाढ शुदि चतुर्द्दशीसें लेके भाद्रव शुदि ४ और तुमारे कहनेसें दूसरे श्रावण शुदि ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेंगें। क्योंकि तिथिया वध घट होती है तो किसी वर्षमे ४९ दिन आजायगे और किसी वर्षमे ४८ दिन भी आजायगे तब क्या आपकों जिन आज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा ?]

अब उपरके न्यायाम्भोनिधिजीके लेखकी समीक्षा करके आत्मार्थी सज्जन पुरुषोसें दिखता हु, कि–हे भव्यजीवो न्यायाम्भोनिधिजीके उपरका लेखकोमें देखता हु तो मेरेको बड़ाही खेदके साथ बहुत आश्चर्य्य उत्पन्न होता है क्योंकि श्रीन्यायाम्भोनिधिजीने तो शुद्धसमाचारी कारके वचनको खण्डन करना विचारके उपरका लेख लिखा था परन्तु शुद्ध समाचारी कारके सत्यवचन होनेसे खण्डन न हो सके, परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी के लिखे वाक्यसें अवश्यही श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी अवज्ञा (आशातना) का कारण होनेसे न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना सर्वथा उचित नही था क्योंकि देखो शुद्धसमाचारी की पुस्तक के पृष्ठ १५६ के अन्तमें और पृष्ठ १५७ के आदिमे ऐसा लिखा था कि (श्रावण और भाद्रपद्मास की जैन सिद्धान्त की अपेक्षाये वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढमासकी ही वृद्धि होती थी और इस समयमें तो लौकिक टीप्पणाके अनुसार हरेक मासोकी वृद्धि होनेसे श्रावण और भाद्रपद की वृद्धि होती है) इस शुद्ध समाचारी का लेखको खण्डन करने के लिये न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं कि—(हे मित्र मासवृद्धिका

में लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मासोंकी वृद्धि होनेमें श्रावण और भाद्रवकी भी वृद्धि होती है ॥ तिसमें उनोंकी वृद्धि होनेमें भी दशपञ्चक व्यवस्थाके लिये, आषाढ चौमासी से पचाश दिनेही पर्युषणा करना सिद्ध होता है" ॥ आगे इसीकी सिद्धिके वास्ते कल्प सूत्रका और विशेष कल्प भाष्य चूर्णिका पाठ दिखाया है, कि-"जाव सवीसइ राइमासो" इत्यादि (इतना लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्बन्धी अधूरा लिखके इसका न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं उत्तर)
हे मित्र! मासवृद्धिका जो जैन टिप्पणादिकका विशेष दिखाया है, यह तो अज्ञजनोंको केवल भरमानेके वास्ते है क्योंकि यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढमास की तो वृद्धि होती थी, अब हम आपको पूछते हैं कि-जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढमासकी वृद्धि हुई तब संवछरीको अब्भुट्ठिओ सूत्रके पाठमें क्या 'तेराण मासाण छवीसपखाण' वैसा पाठ कहोगे ? क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मासतो अवश्य होजायगे । और जैनसिद्धान्तो में तो किसी भी स्थानमे वैसा नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरहमास और छवीस पख्ख संवछरीको कहना । तो अब आपका प्रयास क्या काम आया परन्तु यह तो निःशङ्कित मालुम होता है कि-जैनटिप्पणाके अनुसारसे भी अधिक मासको कालचूलामें ही गिनना पडेगा । पूर्वपक्ष-कालचूला क्या होती है ? उत्तर हे परीक्षक! आगे दिखावेंगे और दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो । सो तो कल्पव्यवच्छेद हुवा है, यह सर्वजन प्रसिद्ध है । और लौकिक टिप्पणाके

और आपाढ की वृद्धि कहते है सोही बात शुद्धसमाचारी कारने भी जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये लिखी है सो सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकती है । तथापि न्यायाम्भोनिधिजी उपरकी सत्य बातको अज्ञ जनोको केवल भ्रमानेका ठहराते है हा ! हा ! अतिव खेद । उपरोक्त न्यायानुसार न्यायाभोनिधिजीने श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि-महाराजोकी और अपने ही पूर्वजोकी आशातना कारक अनन्त ससार वृद्धिका कारणरूप वृथा क्योंकिया होगा इसको विशेष पाठकवर्ग स्वय विचार लेना ,—

तथा थोडासा और भी सुन लिजीये—शुद्ध समाचारी कारने जैन सिद्धान्तो की अपेक्षाये पौष और आपाढ मास की वृद्धि दिखाई और लौकिक टिप्पणा की अपेक्षाये हरेक मासोकी वृद्धि दिखाई सो सत्य है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी (अज्ञजनोको केवल भ्रमानेका) ठहराते है तो इस लेखसे तो न्यायाम्भोनिधिजीने खास अपने ही पूज्य गुरुजन पूर्वाचार्य्योको भी अज्ञजनोको भ्रमाने वाले ठहरा दिये क्योकि जैसे उपरोक्त शुद्ध समाचारी कारनें अधिकमास सम्बन्धी लिखा है तैसे ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योने भी लिखा है । जब शुद्ध समाचारी कारके लेखको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञजनोको भ्रमानेका ठहराते है तब तो न्यायाम्भोनिधिजीके पूर्वाचार्य्योका लेख भी अज्ञजनोको भ्रमानेवाला ठहर गया जब न्यायाम्भोनिधिजीने अपने पूर्वाचार्य्योकी आशातनाका कुछ भी भय न रक्खा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीको न्याययुक्त आत्मार्थी कैसे मान सक्ते है अपितु नही इस बातको भी पाठकवर्ग विचार लो,—

जो जैन टिप्पनादिकका विशेष दिखाया है यह तो अज्ञ जनको केवल भ्रमाने के वास्ते है) अब हे पाठकवर्ग सज्जन पुरुषो उपरके न्यायाम्भोनिधिजी के वाक्यको पढके अच्छी तरहसे विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर केवली भगवान् और पूर्वधरादि महान् धुरन्धर प्रभाविक पूर्वाचार्य्य तथा खास न्यायाम्भोनिधिजीके ही पूज्य पूर्वाचार्य्य सबी महाराज जैनसिद्धान्त (शास्त्रो) की अपेक्षाये जैनपञ्चाङ्गमें युगके मध्यमें पौष और अन्तमें आषाढ मासकी मर्य्यादा पूर्व वृद्धि होती है ऐसा कहते है सो अनेक शास्त्रोमें प्रसिद्ध हैं जिसमें अनुमान पचास शास्त्रोके पाठो की तो मुझे भी मालुम है कि जैन शास्त्रोमें पौष और आषाढ की वृद्धि श्रीतीर्थङ्करादिकोने कही है इसी ही अनुसार शुद्धसमाचारी कारनें भी पौष और आषाढ की जैन सिद्धान्तो की अपेक्षायें वृद्धि लिखी हैं जिसको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञ जनोको भ्रमानेका ठहराते है सो यह तो ऐसा न्याय हुवा कि—

जैसे श्रीअनन्ततीर्थङ्करादि महाराज अनादिकाल हुवा उपदेश करते आये है कि । हे भव्यजीवो तुम्हारी आत्माको सुख चाहो तो द्रव्य भावसें जीवदया पालो इस वाक्यानुसार वर्त्तमानमें भी उपगारी पुरुष उपदेश करते है जिस उपदेशको कोई भी जैनाभास द्वेषबुद्धिवाला अज्ञजनोको केवल भ्रमानेका ठहरावे तो उस पुरुषनें श्रीअनन्त तीर्थ ङ्करादि महाराजोकी आशातना करके अनन्त ससार वृद्धिका कारण किया यह वात सर्वसज्जन पुरुष जैनशास्त्रोके जान- कार मजूर करते है तैसे ही श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि महा राज अनादि काल हुवा जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये पौष

और आपाढ की वृद्धि कहते है सोही बात शुद्धसमाचारी कारने भी जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये लिखी है सो सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकती है। तथापि न्यायाम्भोनिधिजी उपरकी सत्य बातको अज्ञ जनोको केवल भ्रमानेका ठहराते है हा! हा! अतिव खेद। उपरोक्त न्यायानुसार न्यायाभोनिधिजीने श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि-महाराजोकी और अपने ही पूर्वजोकी आशातना कारक अनन्त ससार वृद्धिका कारणरूप वृथा क्योंकिया होगा इसको विशेष पाठकवर्ग स्वय विचार लेना,—

तथा थोडासा और भी सुन लिजीये—शुद्ध समाचारी कारने जैन सिद्धान्तो की अपेक्षाये पौष ओर आपाढ मास की वृद्धि दिखाई और लौकिक टिप्पणा की अपेक्षाये हरेक मासोकी वृद्धि दिखाई सो सत्य है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी (अज्ञजनोको केवल भ्रमानेका) ठहराते है तो इस लेखसे तो न्यायाम्भोनिधिजीने खास अपने ही पूज्य गुरुजन पूर्वाचार्य्योको भी अज्ञजनोको भ्रमाने वाले ठहरा दिये क्योकि जैसे उपरोक्त शुद्ध समाचारी कारने अधिकमास सम्बन्धी लिखा है तैसे ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योने भी लिखा है। जब शुद्ध समाचारी कारके लेखको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञजनोको भ्रमानेका ठहराते है तब तो न्याया-म्भोनिधिजीके पूर्वाचार्य्योका लेख भी अज्ञजनोको भ्रमाने-वाला ठहर गया जब न्यायाम्भोनिधिजीने अपने पूर्वाचा-र्य्योकी आशातनाका कुछ भी भय न रक्खा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीको न्याययुक्त आत्मार्थी कैसें मान सकते है अपितु नही इस बातको भी पाठकवर्ग विचार लो,—

और आगे लिखा है कि (यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढ़मास की तो वृद्धि होती थी अब हम आपको पूछते हैं कि जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई तब सवच्छरीको अभ्भुठिओ सूत्रके पाटमें तेराण मासाण छवीस पखाण वैसा पाठ कहोगें क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मास तो अवश्य ही आयगें और जैन सिद्धान्तोमें तो किसी भी स्थानमें वैसा नहीं लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरह मास और छवीश पक्ष सवच्छरीको कहना तो अब आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखको देखता हु तो न्यायाम्भोनिधिजीके बुद्धिकी चातुराईका वर्णन में नही कर सकता हु क्योंकि जब शुद्ध समाचारी कारनें जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये पौष और आषाढमासकी वृद्धि लिखी जिसको तो न्यायाभोनिधिजी (अज्ञ जनोको केवल भ्रमानेका) ठहराते है और फिर आप भी शुद्ध समाचारीके मुजब उसी तरहसे पौष और आषाढमासकी वृद्धि इस जगह मंजूर करते है यह न्यायाभोनिधिजीके अपूर्व विद्वत्ताका नमुना है क्योंकि दूसरेकी बातका खण्डन करना और उसी बातको आप मंजूर भी करलेना ऐसा अन्याय करना आत्मार्थियोको उचित नही हैं और खामणाके सम्बन्धमे लिखा है सो भी जैन शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे बिना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके भोले जीवोंको सशयमे गेरे है क्योंकि जब जिस सवत्सर मे अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्ष होगये तथा धर्मकर्म और ससारिक सावद्य कार्य्य तेरह मासके

किये जाते है जिससे पुण्य और पाप तेरह मासके लगते है तो फिर बारह मासकी आलोचना करके एक मासके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना और पापकार्य्योंकी आलोचना नही करना यह तो प्रत्यक्ष अन्याय अल्पबुद्धिवाला भी कोई मजूर नही कर सकता है और जिन्होके ज्ञानमे एक समय मात्र भी धर्म अथवा कर्म बधके सिवाय वृथा नही जाता है ऐसे श्रीसर्वज्ञ भगवान्के शास्त्रोमे एक मासके धर्म और कर्मका न गिनना यह तो कभी नही हो सकता है इस लिये अधिक मास होनेसे अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्षादिकी आलोचना साम्वत्सरिमे करनी जैन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है इसका विशेष विस्तार सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी आगे समीक्षा होगा उसमे शास्त्रोके प्रमाण सहित अच्छीतरहसे करनेमे आवेगा सो पढके विशेष निर्णय कर लेना और आगे लिखा है कि—अधिकमास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे किसी भी स्थानमे नही लिखा है यह वाक्य भी मिथ्या है क्योंकि अनेक जगह अधिकमास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे लिखे है जिसका भी वहाही आगे निर्णय होगा ॥—

और (आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखपर तो मेरेको इतना ही कहना उचित है कि शुद्धसमाचारी कारने तो सिर्फ अधिकमासको गिनतीमे सिद्ध करके पचास दिने पर्युषणा दिखानेका प्रयास किया था सो शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित होनेसे उन्हका प्रयास सफल है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी हो करके अन्यायसे और शास्त्रोके

और आगे लिखा है कि (यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढमास की तो वृद्धि होती थी अब हम आपको पूछते हैं कि जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढमासकी वृद्धि हुई तब संवच्छरीको अब्भुट्ठिओ सूत्रके पाठमें तेरसण्हं मासाणं छवीस पक्खाणं ऐसा पाठ कहोगे क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मास तो अवश्य हो जायगें और जैन सिद्धान्तोंमें तो किसी भी स्थानमें ऐसा नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरह मास और छवीश पक्ष संवच्छरीको कहना तो अब आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखको देखता हु तो न्यायाम्भोनिधिजीके बुद्धिकी चातुराईका वर्णन में नही कर सकता हु क्योंकि जब शुद्ध समाचारी कारनें जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये पौष और आषाढमासकी वृद्धि लिखी जिसको तो न्यायाम्भोनिधिजी (अज्ञ जनोकी केवल भ्रमानेका) ठहराते है और फिर आप भी शुद्ध समाचारीके मुजब उसी तरहसे पौष और आषाढमासकी वृद्धि इस जगह मंजूर करते हैं यह न्यायाम्भोनिधिजीके अपूर्व विद्वत्ताका नमुना है क्योंकि दूसरेकी बातका खण्डन करना और उसी बातको आप मंजूर भी करलेना ऐसा अन्याय करना आत्मार्थियोको उचित नही हैं और खामणाके सम्बन्धमे लिखा है सो भी जैन शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे विना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके भोले जीवोंको संशयमे गेरे है क्योंकि जब जिस संवत्सर में अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्ष होगये तथा धर्मकर्म और संसारिक सावद्य कार्य्य तेरह मासके

किये जाते है जिससे पुण्य और पाप तेरह मासके लगते है तो फिर बारह मासकी आलोचना करके एक मासके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना ओर पापकार्य्योंकी आलोचना नही करना यह तो प्रत्यक्ष अन्याय अल्पबुद्धिवाला भी कोई मजूर नही कर सकता है और जिन्होके ज्ञानमे एक समय मात्र भी धर्म अथवा कर्म बधके सिवाय वृथा नही जाता है ऐसे श्रीसर्वज्ञ भगवान्के शास्त्रोमे एक मासके धर्म और कर्मका न गिनना यह तो कभी नही हो सकता है इस लिये अधिक मास होनेसे अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्षादिकी आलोचना साम्वत्सरिमे करनी जैन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है इसका विशेष विस्तार सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी आगे समीक्षा होगा उसमें शास्त्रोके प्रमाण सहित अच्छीतरहसे करनेमे आवेगा सो पढके विशेष निर्णय कर लेना और आगे लिखा है कि—अधिकमास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे किसी भी स्थानमे नही लिखा है यह वाक्य भी मिथ्या है क्योकि अनेक जगह अधिकमास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे लिखे है जिसका भी वहाही आगे निर्णय होगा ॥—

और (आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखपर तो मेरेको इतना ही कहना उचित है कि शुद्धसमाचारी कारने तो सिर्फ अधिकमासको गिनतीमे सिद्ध करके पचास दिने पर्युषणा दिखानेका प्रयास किया था सो शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित होनेसे उन्होका प्रयास सफल है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी हो करके अन्यायसें और शास्त्रोके

और आगे लिखा है कि (यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढ़मास की तो वृद्धि होती थी अब हम आपको पूछते हैं कि जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई तब सवच्छरीको अब्भुठिओ सूत्रके पाठमें तेराण मासाण छवीस पखाण वैसा पाठ कहोगें क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मास तो अवश्य हो जायगें और जैन सिद्धान्तोमें तो किसी भी स्थानमें वैसा नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरह मास और छवीश पक्ष सवच्छरीको कहना तो अब आपका प्रयास क्या काम आया) इस लेखको देखता हु तो न्यायाम्भोनिधिजीके बुद्धिकी चातुराईका वर्णन में नही कर सकता हु क्योंकि जब शुद्ध समाचारी कारनें जैन सिद्धान्तोकी अपेक्षाये पौष और आषाढ़मासकी वृद्धि लिखी जिसको तो न्यायाम्भोनिधिजी (अज्ञ जनोको केवल भ्रमानेका) ठहराते हैं और फिर आप भी शुद्ध समाचारीके मुजब उसी तरहसे पौष और आषाढ़मासकी वृद्धि इस जगह मजूर करते हैं यह न्यायाम्भोनिधिजीके अपूव विद्वत्ताका नमुना है क्योंकि दूसरेकी बातका खण्डन करना और उसी बातको आप मजूर भी करलेना ऐसा अन्याय करना आत्मार्थियोको उचित नही है और खामणाके सम्बन्धमे लिखा है सो भी जैन शास्त्रोके तात्पर्यको समझे बिना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके भोले जीवोंको सशयमें गेरे है क्योंकि जब जिस सवत्सर में अवश्य करके तेरह मास और छवीश पक्ष होगये तथा धर्मकर्म और ससारिक सावद्य कार्य्य तेरह मासके

४८ दिन भी आजायगे तब क्या आपको जिनाज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा) इस उपरके लेखसे तो न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करके और सर्वी उत्तम पुरुषोंको दूषित ठहरानेका कार्य्य करके नय गर्भित व्यवहारको और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको उत्थापन करके बडाही अनर्थ कर दिया है क्योंकि जैसे सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, प्रकरण, चरित्रादि अनेक शास्त्रोंमे एक नहीं किन्तु सैकडो बाते व्यवहार नयकी अपेक्षासें श्रीतीर्थङ्करादि महाराज कहते है तैसेही शुद्ध समाचारी कारने भी व्यवहार नयसे पचास दिने पर्युषणा कही है और श्रीकल्प सूत्रजीके मूल पाठका (अन्तरा वियसे कप्पइ) इस वाक्यसें पचास दिनके अन्दरमे पर्युषणा होवे तो कोई दूषण भी नही कहा है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी न्यायके समुद्र होते भी व्यवहार नयगर्भित श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की व्याख्याका और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठका उत्थापनके भयका जरा भी विचार न करते विद्वत्ताके अभिमानसे और पक्षपातके जोर सें ४८।४९ दिन होनेका दिखाकर मिथ्या दूषण लगाते है सो कदापि नही बनता है,—याने सर्वथा उत्सूत्र भाषणरूप है

और भी दूसरा सुनिये–जो तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिननीसे कोई वर्षमे भाद्रपद शुक्ल चौथ तक ४८ दिन होनेका लिखकर न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठहराते है इससें मालुम होता है कि तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिनतीसें भाद्रपद शुक्ल छठ (६) के दिन पूरे पचास दिन मान्य करके न्यायाम्भोनिधिजी पर्युषणा करते होवेंगे

विरुद्ध हो करके अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका प्रयास करते हैं सो यहाँ ही शमकी बात है और काल चूलासम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीने आगे लिखा हैं उसकी समीक्षा मैं भी आगे करूंगा—

और (दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो सो तो कल्पव्यव च्छेद हुया है यह सबजन प्रसिद्ध है) इस अक्षरो कोभी में देखता हु तो न्यायाम्भोनिधिजीका अन्याय देखकर मुझे बडाही आफसोस आता है क्योंकि शुद्ध समाचारी कारनें जिस अभिप्रायसे लिखा था उसीको समझे बिना अन्याय मार्गसे खण्डन करना न्यायाम्भोनिधिजीको उचित नही हैं क्योंकि शुद्धसमाचारी कारने तो इस कालमें पचास दिनेही पर्युषणा करनी चाहिये इस बातकी पुष्टिके लिये शुद्धसमा चारीके पृष्ठ १५७ । १५८ में श्रीकल्पसूत्रजीका मूलपाठ, श्रीवृ हत्कल्पचूर्णिका पाठ, और श्रीसमवायाङ्गजीका पाठ, लिखके पचास दिनेही पर्युषणा दिखाई थी परन्तु दशपञ्चक लिखके कुछ पाँच पाँच दिने प्राचीन कालकी रीतिसे पयुषणा नही लिखी थी तथापि न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारके अभिप्रायके विरुद्धार्थमे दशपञ्चकका कल्पविच्छेदकी बात लिखके पचास दिनकी पर्युषणाको निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकेगा और आगे फिर भी लिखा है कि–(लौकिक टिप्पणाके अनुसारसे हरेक वर्षमे आषाढ शुदी चतुर्दशीसे लेके भाद्रवा शुदी ४ और तुम्हारे कहने से दूसरे श्रावण शुदी ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेंगे क्योंकि तिथिया वध घट होती है सो किसी वर्षमे ४९ दिन आजायगे और किसी वर्षमे

४८ दिन भी आजायगे तब क्या आपको जिनाज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा) इस उपरके लेखसे तो न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करके और सबी उत्तम पुरुषोको दूषित ठहरानेका कार्य्य करके नय गर्भित व्यवहारको और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको उत्थापन करके वडाही अनर्थ कर दिया है क्योंकि जैसे सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, प्रकरण, चरित्रादि अनेक शास्त्रोमे एक नही किन्तु सैकड़ो वाते व्यवहार नयकी अपेक्षासे श्रीतीर्थङ्करादि महाराज कहते है तैसेही शुद्ध समाचारी कारने भी व्यवहार नयसे पचास दिने पर्युषणा कही है और श्रीकल्पसूत्रजीके मूल पाठका (अन्तरा वियसे कप्पइ) इस वाक्यसें पचास दिनके अन्दरमे पर्युषणा होवे तो कोई दूषण भी नही कहा है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी न्यायके समुद्र होते भी व्यवहार नयगर्भित श्रीजिनेश्वर भगवान्की व्याख्याका और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठका उत्थापनके भयका जरा भी विचार न करते विद्वत्ताके अभिमानसे और पक्षपातके जोर सें ४८।४९ दिन होनेका दिखाकर मिथ्या दूषण लगाते हैं सो कदापि नही बनता है,—याने सर्वथा उत्सूत्र भाषणरूप है

और भी दूसरा सुनिये—जो तिथियोके हानी वृद्धिकी गिनतीसें कोई वर्षमे भाद्रपद शुक्र चौथ तक ४८ दिन होनेका लिखकर न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठहराते है इससें मालुम होता है कि तिथियोके हानी वृद्धिकी गिनतीसें भाद्रपद शुक्र छठ (६) के दिन पूरे पचास दिन मान्य करके न्यायाम्भोनिधिजी पर्युषणा करते होवेंगे

विरुद्ध हो करके अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका प्रयास करते है सो यही ही भ्रमकी बात है और काल चूलासम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीने आगे लिखा हैं उसकी समीक्षा में भी आगे करूंगा—

और (दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो सो तो कल्पव्यवच्छेद हुया है यह सर्वजन प्रसिद्ध है) इन अक्षरो कोभी मैं देखता हु तो न्यायाम्भोनिधिजीका अन्याय देखकर मुझे बडाही आफसोस आता है क्योंकि शुद्ध समाचारी कारने जिस अभिप्रायसे लिखा था उसीको समझे बिना अन्याय मार्गसे खण्डन करना न्यायाम्भोनिधिजीको उचित नही हैं क्योंकि शुद्धसमाचारी कारने तो इस कालमें पचास दिनेही पर्युषणा करनी चाहिये इस बातकी पुष्टिके लिये शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५७ । १५८ में श्रीकल्पसूत्रजीका मूलपाठ, श्रीबृहत्कल्पचूर्णिका पाठ, और श्रीसमवायाङ्गजीका पाठ, लिखके पचास दिनेही पर्युषणा दिखाई थी परन्तु दशपञ्चक लिखके कुछ पाँच पाँच दिने प्राचीन कालकी रीतिसे पर्युषणा नही लिखी थी तथापि न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारके अभिप्रायके विरुद्धार्थमे दशपञ्चकका कल्पविच्छेदकी बात लिखके पचास दिनकी पर्युषणाको निषेध करना चाहते है सो कदापि नही हो सकेगा और आगे फिर भी लिखा है कि–(लौकिक टिप्पणाके अनुसारसे हरेक वर्षमे आषाढ शुदी चतुर्दशीसे लेके भाद्रवा शुदी ४ और तुम्हारे कहने से दूसरे श्रावण शुदी ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगे तो भी नही हो सकेगे क्योंकि तिथियां वध घट होती है सो किसी वर्षमे ४९ दिन आजायगे और किसी वर्षमे

प्राप्ति होनेसे सिद्धान्त विरुद्ध होगा, फिर तो ऐसा हुवा कि एक अङ्गको आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया तात्पर्य्य कि तुमने आज्ञाभङ्ग न हुवे इस वास्ते यह पक्ष अङ्गीकार किया तोभी आज्ञाभङ्गरूप दूषण तो आपके शिर परही रहा—पूर्वपक्ष–इस दूषणरूप यन्त्रमे तो आपको भी यन्त्रित होना पड़ेगा—उत्तर–हे समीक्षक यह आज्ञाभङ्ग-रूप दूषणका लेश भी हमको न समझना क्योंकि हम अधिक मासको कालचूला मानते है—]

अब उपरके लेखकी समीक्षा करते है कि हे सत्यग्राही सज्जन पुरुषो उपरके लेखमे न्यायाम्भोनिधिजीने अपनी चतुराई प्रगट कारक और प्रत्यक्षउत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोंको श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध रस्ता दिखानेके लिये अनु-चित क्यों लिखा है क्योंकि प्रथमतो पूर्वपक्षमें ही [आप तो मुखसे ही वाता बनाइ जाते हो] यह अक्षर लिखे है इससें मालुम होता है कि पहिले जो जो लेख न्यायाभो-निधिजीने लिखा है सो सों शास्त्रोके प्रमाण विना अपनी कल्पनासें लिखा है इसलिये न्यायाभोनिधिजीके जैसी दिलमे थी वैसीही पूर्वपक्षके अक्षरोमे लिख दिखाई है सो, हास्यके हेतुरूप है सो तो बुद्धिजन विद्वान् पुरुष समझ सक्ते है और इसके उत्तरका लेखमे भी सूत्रकार महा राजके अभिप्राय को जानेबिना उलटा विरुद्धार्थमें तीनो महाशयोकी तरह चौथे न्यायाम्भोनिधिजीने भी कर दिया क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावका है। और पर्युषणा के पीछाडी १०० दिन होनेसे कोई भी दूषण नही है याने मास वृद्धि होनेसे पर्युषणाके

शय तो अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है और आप चौथकाही पर्युषणा करते होवेंगे तब तो शुद्ध समाचारी कारको दूषण लगाना वृथा है इसको भी पाठकवर्ग विचार लो ,—

और पर्युषणाके पीछाडी जो ७० दिन न्यायाम्भोनिधि जी रखना कहते हैं सो किस हिसाबसे गिनती करके रखते हैं इसका विवेक बुद्धिसे हृदयमें विचार किया होता तो शुद्ध समाचारी कारको दूषण लगानेका लिखनाही भूल जाते क्योंकि तिथियोंकी हानी वृद्धिसे किसी वर्षमें ६९ और किसी वर्षमें ६८ दिन भी होजाते हैं सो पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष न्याय दृष्टिसे विचार कर लेना ,—

और भी आगे जैन सिद्धान्तसमाचारी पुस्तकके पृष्ठ ८९ की पंक्ति २० वीं सें पृष्ठ ९० की पंक्ति १७ वीं तक ऐसे लिखा है कि [पूर्वपक्ष, आप तो मुखसेंही बाता बनाई जाते हो परन्तु कोई सिद्धान्तके पाठसे भी उत्तर है वा नही-उत्तर- हे समीक्षक दृढतर उत्तर देते हैं देखो कि श्रावणमास बढने से दूसरे श्रावणमें और भाद्रव वढनेसे प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसे अङ्गीकार किया परन्तु श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ऐसा पाठ है, यथा—सवीसइ राइमासे वइक्कते सत्तरिराइदिएहिं सेसेहिं वासावास पज्जोसवेइत्ति, भावार्थ —जैसे आषाढ चौमासेके प्रतिक्रमण किये बाद एकमास और वीश दिनमे पर्युषणा करे तैसे पर्युषणाके बाद ७० सत्तर दिन क्षेत्रमें ठहरे—हे परीक्षक-अब इस पाठके विचारणेसे तुमको मास की वृद्धि हुये कार्त्तिक सम्बन्धी कृत्य आश्विनमासमें करना पडेगा और कार्त्तिक मासमे करोगे तो १०० रात दिनकी

अवश्य होजायगें] यह अक्षर पृष्ठ ८९ की पंक्ति ३।४ में लिखे हैं अब पाठकवर्ग विचार करो कि अधिकमास होनेसे तेरह मास अवश्य करके न्यायाम्भोनिधिजीने मान्य करलिये जब अधिकमास गिनतीमे मजूर हो चुका तब दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन न्यायाभोनिधिजीके वाक्यसे भी सिद्ध होगये तो फिर पचास दिने पर्युषणा करनेका पाठ दिखाना और ८० दिने अपनी कल्पनासे पर्युषणा करना यह कोई बुद्धिवाले विवेकी श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुष का काम नही है सो पाठकवर्ग भी विचार लेना,—

और भी दूसरा सुनो (श्रावणमास वढनेसें दूसरे श्रावण में और भाद्रव वढनेसें प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसे अङ्गीकार किया) इन अक्षरोका तात्पर्य्य ऐसे निकलता है कि शुद्ध समाचारीकारको तो ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्रविरुद्धका भय लगा तब पचास दिने पर्युषणा करनेका अङ्गीकार किया परन्तु न्यायाम्भोनिधिजीको ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्र विरुद्धका भय नही लगता है इस लिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसे दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा शास्त्रविरुद्धताको न गिनके करते हैं यह बात सिद्ध होगइ इस बातको पाठकवर्ग भी विशेष करके विचार लो,—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको दिखाकर दो श्रावणादि होते भी ७० दिन पयुषणाके पिछाडी रखने का जो न्यायाभोनिधिजी कहते है सो भी सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके और युक्ति के भी विरुद्ध है क्योंकि

पीछाड़ी १०० दिन शास्त्रानुसार रहते हैं इसलिये मासवृद्धि होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रहने का और १०० होनेसे दूषण लगाने का न्यायाम्भोनिधि जीका लिखना सर्वथा वृथा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें सूत्रकार वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय सहित संपूर्ण पाठसमेत युक्तिपूर्वक विस्तारसे पृष्ठ ११८से पृष्ठ १२९ तक छपगया है और आगे भी कितनीही जगह छप चुका है सो पढ़नेसें अच्छी तरहसें निर्णय होजावेगा तथापि उपरोक्त लेखमें न्यायाम्भोनिधिजीनें उटपटाङ्ग लिखा है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हु—[श्रावणमास बढ़ने सें दूसरे श्रावणमें और भाद्रव बढ़नेसे प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने अशीदिनका प्राप्तिके भयसें अङ्गीकार किया] इस लेखको लिखके आगे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका (सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते) इस पाठसें पचासदिने पर्युषणा दिखाई ॥ इन अक्षरोंसे तो जैसे शुद्ध समाचारी कारने ५० दिने पर्युषणा ठहराई थी तैसेही न्यायाम्भोनिधिजीने भी ठहराई इसमे तो शुद्ध समाचारी कारका लेखको विशेष पुष्टिमिली और न्यायाम्भोनिधिजीको अपना स्वय लेख भी बाधक होगया तो फिर दो श्रावण होनेसे भी भाद्रपदमे और दो भाद्रपद होनेसे दूसरे भाद्रपदमे न्यायाम्भोनिधिजी पर्युषणा करते हैं तब तो प्रत्यक्ष ८० दिन होते है और श्रीसमवायाङ्गजी आदि अनेक शास्त्रोमे ५० दिने पर्युषणा करनी कही है और अधिकमास भी अनेक शास्त्रोमे प्रमाण किया है तैसे ही खास न्यायाम्भोनिधिजी भी क्षामणा के सम्बन्धमे अधिकमास होनेसे [तिसवर्षमे तेरामास तो

अवश्य होजायगें] यह अक्षर पृष्ठ ८९ की पक्ति ३।४ में लिखे हैं अब पाठकवर्ग विचार करो कि अधिकमास होनेसे तेरह मास अवश्य करके न्यायाम्भोनिधिजीने मान्य करलिये जब अधिकमास गिनतीमे मजूर हो चुका तब दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन न्यायाम्भोनिधिजीके वाक्यसे भी सिद्ध होगये तो फिर पचास दिने पर्युषणा करनेका पाठ दिखाना और ८० दिने अपनी कल्पनासे पर्युषणा करना यह कोई बुद्धिवाले विवेकी श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुष का काम नही है सो पाठकवर्ग भी विचार लेना,—

और भी दूसरा सुनो (श्रावणमास वढनेसें दूसरे श्रावण में और भाद्रव वढनेसें प्रथम भाद्व मासमें पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसे अङ्गीकार किया) इन अक्षरोका तात्पर्य्य ऐसे निकलता है कि शुद्ध समाचारीकारको तो ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्रविरुद्धका भय लगा तब पचास दिने पर्युषणा करनेका अङ्गीकार किया परन्तु न्यायाम्भोनिधिजीको ८० दिने पर्युषणा करनेसे शास्त्र विरुद्धका भय नही लगता है इस लिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसे दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा शास्त्रविरुद्धताको न गिनके करते है यह बात सिद्ध होगइ इस बातको पाठकवर्ग भी विशेष करके विचार लो,—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको दिखाकर दो श्रावणादि होते भी ७० दिन पर्युषणाके पिछाडी रखने का जो न्यायाम्भोनिधिजी कहते है सो भी सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके और युक्ति के भी विरुद्ध है क्योंकि

आषाढ़ चौमासीसें प्रथम पचासदिन जानेमें और पिछाड़ी ७० दिन रहनेसे सब चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी श्रीसमवायाङ्गजी का पाठ है सो तो अल्पबुद्धि वाला भी समझ सकता है तो फिर न्यायाम्भोनिधिजी न्यायके और बुद्धिके समुद्र इतने विद्वान् होते भी दो श्रावणादि होनेसें पांचमास के १५० दिन का वर्षाकाल में पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखने का आग्रह करते कुछ भी विचार नही किया यहीही शरमकी बातहै और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी के ७० दिन रखनेका न्यायाम्भोनिधिजी चाहते होवे तोभी अनेक शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि व्यवहारिक गिनतीमें पचास दिने अवश्य ही निश्चय करके पर्युषणा करनी कही है, और दिनोकी गिनती में अधिकमास छुट नही सकता है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी ७० दिन रखेंगे तो भी शास्त्रविरुद्ध है और अधिक मासको गिनती में छोड़ कर पर्युषणा के पिछाड़ी ७० दिन रखेंगे तो भी अनेक शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि अधिक मासको अनेक शास्त्रोमें और खास श्रीसमवायागजी सूत्र में प्रमाण किया है इस लिये अधिकमास को गिनतीमें निषेध करना भी न्यायाभोनिधिजीका नही बन सकता है और चारमासके सम्बन्धी पाठको पांचमासके सम्बन्धमें न्यायाभोनिधीजी को सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमे लिखना भी उचित नही है इस लिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ पर अपनी कल्पनासे न्यायाभोनिधिजी अथवा उन्होके परिवारवाले और उन्होंके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय

जो जो कल्पना मासवृद्धि होते भी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रखनेके लिये करेंगे सो सो सभीही उत्सूत्र भाषण रूप भोले जीवोको मिथ्यात्वमें गेरने वाले होवेंगे इसलिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही सर्व-सज्जन पुरुषोसे मेरा यही कहना है कि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमे मासवृद्धिके अभावसे ७० दिनके अक्षर देखके मास वृद्धि होते भी आग्रह मत करो और मासवृद्धिको मजूर करके दूजा श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करके पिछाडी १०० दिन मान्यकरो जिससे उत्सूत्र भाषक न वनके श्रीजिनाज्ञाके आराधक वनोगें मेरा तो येही कहना है। मान्य करेंगे जिन्होकी आत्माका सुधारा है इतने पर भी जो हठग्राही नही मानेंगे जिन्होकी सम्यक्त्व रत्न विना आत्माका सुधारा कैसे होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने ,—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठपर न्यायाम्भोनिधि जीने अपनी चातुराई प्रगट किवी है कि—(हे परीक्षक अव इस पाठके विचारणेसे तुमको मास वृद्धि हुये कार्त्तिक सम्बन्धी कृत्य आश्विन मासमें करना पडेगा और कार्त्तिक मासमें करोगे तो १०० रात दिनकी प्राप्ति होनेसे सिद्धान्तसें विरुद्ध होगा फिर तो ऐसा हुवा कि एक अङ्गको आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया तात्पर्य्य कि—तुमने आज्ञाभङ्ग न हुवे इस वास्ते यह पक्ष अङ्गीकार किया तो भी आज्ञा भङ्गरूप दूषण तो आपके शिरपर ही रहा) इस लेखकी समीक्षा अव सुन लीजियें—हे पाठकवर्ग देखो न्यायाभोनिधिजीने तो शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठह-

आषाढ़ चौमासीसें प्रथम पचासदिन जानेमें और पिछाड़ी ७० दिन रहनेसे पंच चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी श्रीसमवायांगजी का पाठ है सो तो अल्पबुद्धि वाला भी समझ सकता है तो फिर न्यायाम्भोनिधिजी न्यायके और युक्तिके समुद्र इतने विद्वान् होते भी दो श्रावणादि होनेसें पांचमास के १५० दिन का वर्षाकाल में पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखने का आग्रह करते कुछ भी विचार नही किया यहीही शरमकी बातहै और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी के ७० दिन रखनेका न्यायाम्भोनिधिजी चाहते होवे तोभी अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि व्यवहारिक गिनतीसें पचास दिने अवश्य ही निश्चय करके पर्युषणा करनी कही है, और दिनोकी गिनती में अधिकमास छुट नही सकता है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी ७० दिन रक्खेंगे तो भी शास्त्रविरुद्ध है और अधिक मासको गिनती में छोड़ कर पर्युषणा के पिछाड़ी ७० दिन रक्खेंगे तो भी अनेक शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि अधिक मासको अनेक शास्त्रोंमें और खास श्रीसमवायांगजी सूत्र में प्रमाण किया है इस लिये अधिकमास को गिनतीमे निषेध करना भी न्यायाम्भोनिधिजीका नही बन सकता है और चारमासके सम्बन्धी पाठको पांचमासके सम्बन्धमें न्यायाम्भोनिधीजी को सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमे लिखना भी उचित नही है इस लिये श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठ पर अपनी कल्पनासे न्यायाम्भोनिधिजी अथवा उन्होके परिवारवाले और उन्होके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय

जिसको भी शास्त्र विरुद्ध ठहराकेँ न्यायाम्भोनिधिजी अपने ही पूर्वाचार्य्योंकी आशातनाके फलविपाकका भय नही करते है सो बडीही अफसोसकी बात है और मास-वृद्धि होनेसे कार्त्तिक सम्बन्धीकृत्य आश्विनमासमें करने का न्यायाम्भोनिधिजी लिखते है सो भी उन्हकी समझमें फेर है क्योकि शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छ वाले मासवृद्धि होनेसे शास्त्रानुसार पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन मान्य करते हैं इस लिये उन्होको तो कार्त्तिक सम्बन्धीकृत्य आश्विन मासमे करने की कोई जरूरत नही है, और आगे (एक अङ्गका आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया) इन अक्षरोको लिखके न्यायाम्भोनिधि-जीने अङ्ग याने शरीरका दृष्टान्त दिखाया परन्तु यह दृष्टान्त शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छवालोके उपर किञ्चित् भी नही घट सकता हैं क्योकि मासवृद्धिके अभावसे श्रीसमवायाङ्गजीमें कहे हुवे पर्युषणाके पिछाडीका ७० दिन मान्य करके उसी मुजब वर्त्तते हैं और मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसे अनेक शास्त्रोके प्रमाणसे पर्युषणाके पिछाडी १०० दिनको भी मान्य करके उसी मुजब वर्त्तते है इसलिये उन्होका तो शास्त्रानुसार वर्त्तनेका होनेसे श्रीजिनाज्ञारूपी वस्त्रो करके सर्व अङ्ग परिपूर्णतासे (आच्छादन) याने ढका हुवा है इसलिये एक अङ्ग खुल्ला रहनेका दूषण लगाना न्यायाभोनिधिजीका प्रत्यक्ष मिथ्या है परन्तु इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १६४ और १६५ में जो न्याय छपा है इसी न्यायानुसार उपरोक्त खुल्ला अङ्गका दृष्टान्त खास करके दोनो तरहसे न्यायाभोनिधिजीके

राने के लिये उपरका लेख लिखाया परन्तु आप शुद्धसमा-चारीकारने ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका इस ही पाठको अपनी शुद्धसमाचारीकी पुस्तकमें लिखा है। और इन्ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिकारक (शुद्धसमाचारी कारके परमपूज्य श्रीखरतरगच्छ नायक) श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरीजी प्रसिद्ध है जिन्होंने इन्ही पाठकी वृत्ति में चारमासके एकसो वीश (१२०) दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी अच्छी तरहका खुलासाके साथ व्याख्या किवी है। सो प्रसिद्ध है और मैंने भी मूलपाठ तथा वृत्ति और भावार्थ सहित इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १२० । १२१ में छपा दिया है इस लिये चारमास सम्बन्धी पाठको पांच मासके अधिकारमें लिखना भी न्यायाम्भोनिधिजी को अन्याय कारक है और दो श्रावण होनेसे पांचमासके वर्षाकालके १५० दिन होते हैं यह तो जगत प्रसिद्ध है जिसको अल्पबुद्धि वाले भी समझ सकते है जिसमें जैन शास्त्रोकी आज्ञानुसार वर्त्तमान काले पचास दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन तो स्वाभाविक रहते ही है यह बात भी शास्त्रानुसार तथा प्रसिद्ध है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी होकरके अन्याय के रस्तेमे वर्तके पांचमासके वर्षाकालमें पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको शास्त्र विरुद्ध कहकर चारमास सम्बन्धी पाठ लिखके दूषित ठहराते है। यह तो प्रत्यक्ष उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है और वर्तमानमे दो श्राव-णादि होनेसे पचास दिने पर्युषणा और पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन रहनेका श्रीतपगच्छके ही पूर्वाचार्य्योंने कहा है जिसका खुलासा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४६ मे छप गया है

भ्रष्टा ततो भ्रष्टा' कहनेमें आता है। अथवा। कोई एकस्त्री थी जिसने डाहीने हाथमे विधवाका चिह्न लम्बी कॉचली और वाम हाथने सधवाका चिह्न चुडा धारण किया था उसीनेही थोडी देर बाद फिर उससे विपरीत, याने, वाम हाथमे विधवाका चिह्न लम्बी कॉचली और डाहीने हाथने सधवाका चिह्न चुडा धारण किर लिया ऐसी पागल स्त्री न तो विधवाकी और न सधवाकी गिनतीमे आसकती है तैसेही दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक पचास दिनका और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक ७० दिन का आग्रह करने वालोको श्रावण और आश्विन बढनेंसे एक तरफ भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक नही हो सकते है क्योकि दोनो अङ्ग खुल्ले रहते हैं इसलिये उपरोक्त दृष्टान्तका न्याय उपरके महाशयोको बरोबर घटता है इसलिये अब उपरकी बातको न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोको और उन्होके पक्षधारियोको अवश्य करके विचारनी चाहिये और पक्षपातको छोडके सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित है।

और शुद्धसमाचारीकार दो श्रावणादि होनेसे ५० दिने पर्युषणा करके पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन अनेक शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित मान्य करता है इस लिये एक अग खुल्लेका दृष्टान्त न्यायाम्भोनिधिजी को लिखके आज्ञाभङ्ग रूप दूषण शुद्धसमाचारीकार को दिखाना सर्वथा करके उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है।

और आगे लिखा है कि—(पूर्वपक्ष इस दूषणरूप यन्त्र मे तो आपको भी यन्त्रित होना पडेगा उत्तर—हे समीक्षक ? यह आज्ञाभङ्गरूप दूषणका लेशभी हमको न

तथा उन्होंके परिवारवालोंके ऊपर बरोबर न्याय युक्त अच्छी तरहसे घटता है सोही दिखाता हुं कि-देखो न्यायाम्भोनिधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले और इन्होंके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके सभी महाशय-विशेष करके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको पर्युषणा सम्बन्धी सब कोई लिखते हैं मुखसे कहते हैं और उन्हीं पर पूर्ण श्रद्धा रखके बड़ाही आग्रह करते हैं उस पाठमें वर्षाकालके पचास दिन जानेसे और पिछाडी ७० दिन रहनेसे पर्युषणा करणा कहा है यह पाठ भावार्थ सहित आगे बहुत जगह छप गया है इस पर बुद्धिजन सज्जन पुरुष विचार करो कि-वर्त्तमानमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपदमें पर्युषणा करने वालोंको ८० दिन होते हैं जिससे पूर्वभागका एक अङ्ग सर्वथा खुल्ला हो जाता है और दो आश्विन मास होनेसे कार्तिक तक १०० दिन होते हैं जिससे उत्तर भागका एक अङ्ग भी सर्वथा खुल्ला हो जाता है इस तरहसे न्यायाम्भो निधिजी आदि जो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठसे दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ५० दिने पर्युषणा और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रखना चाहनेवाले महाशयोको श्रावण और आश्विन मास बढ़नेसे दोनो अङ्ग श्रीजिनाज्ञारूपी वस्त्र करके रहित प्रत्यक्ष बनते हैं यह तो ऐसा हुवा कि-दोनों खोईरे जोगटा मुद्रा और आदेश--कि वा-कोई एक ससारिक गृहस्थाश्रम छोडके साधु हुवा परन्तु साधुकी क्रिया न करसका और पीछा गृहस्थ भी न हो सका उसीको उभय भ्रष्ट याने न साधु और न गृहस्थ ऐसे को 'यतो

भ्रष्टा ततो भ्रष्टा' कहनेमें आता है। अथवा। कोई एकस्त्री थी जिसने डाहीने हाथमे विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और वाम हाथने सधवाका चिह्न चुडा धारण किया था उसीनेही थोडी देर बाद फिर उससे विपरीत, याने, वाम हाथमे विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और डाहीने हाथमें सधवाका चिह्न चुडा धारण किर लिया ऐसी पागल स्त्री न तो विधवाकी और न सधवाकी गिनतीमे आसकती है तैसेही दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक पचास दिनका और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक ७० दिन का आग्रह करने वालोको श्रावण और आश्विन वढनेसे एक तरफ भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक नही हो सकते है क्योंकि दोनो अङ्ग खुल्ले रहते हैं इसलिये उपरोक्त दृष्टान्तका न्याय उपरके महाशयोको वरोवर घटता है इसलिये अव उपरकी वातको न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोको और उन्होके पक्षधारियोको अवश्य करके विचारनी चाहिये और पक्षपातको छोडके सत्य वातको ग्रहण करना सोही उचित है।

और शुद्धसमाचारीकार दो श्रावणादि होनेसे ५० दिने पर्युषणा करके पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन अनेक शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित मान्य करता है इस लिये एक अग खुल्लेका दृष्टान्त न्यायाम्भोनिधिजी को लिखके आज्ञाभङ्ग रूप दूषण शुद्धसमाचारीकार को दिखाना सर्वथा करके उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है।

और आगे लिखा है कि—(पूर्वपक्ष इस दूषणरूप यन्त्र मे तो आपको भी यन्त्रित होना पडेगा उत्तर—हे समीक्षक ? यह आज्ञाभङ्गरूप दूषणका लेशभी हमको न

समझना क्योंकि इस अधिक मासको कालचूला मानते है)
इन अक्षरोंको लिखके न्यायाम्भोनिधिजी दो श्रावण होनेसे
भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसमें अधिक मासको
गिनती में छोड़कर ८० दिनके ५० दिन और दो आश्विन
मास होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन
होते हैं जिसको भी ७० दिन अपनी कल्पनासे मान्य करके
निरूपण करना चाहते है सो कदापि नही हो सकता है
क्योंकि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा गिनती
करने योग्य शास्त्रकारोने दिवी है जिसका विशेष निर्णय
तीनो महाशयोके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया
है और आगे फिर भी कालचूला सम्बन्धी श्रीनिशीथ
चूर्णिका अधूरा पाठ और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम
चूलिकाकी वृहद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके भावार्थ लिखे
बाद फिर भी अपनी कल्पनासे पूर्वपक्ष उठा कर उसीका
उत्तरमें भी पृष्ठ ९१ की पंक्ति १३ तक उत्सूत्र भाषणरूप
लिखा है जिसका उतारा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ५९ और
६० की आदि तक छपाके उसीकी समीक्षा पृष्ठ ६० से
६५ तक इन्ही पुस्तकमें अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक
छपगई है और श्रीनिशीथचूर्णिके प्रथमोद्देशेका काल
चूलासम्बन्धी सम्पूर्ण पाठ और श्रीदशवैकालिककी प्रथम
चूलिकाके वृहद्वृत्तिका सम्पूर्ण पाठ भावार्थके साथ
खुलासा पूर्वक इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४९ से पृष्ठ ५८ तक
विस्तारसे छपगया है और तीनो महाशयोके नामकी
समीक्षा में भी इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ७३ से ७८ तक और आगे
भी कितनी ही जगह छप गया है उसीको पढनेसे पाठक

वर्गको अवश्यही निर्णय हो जावेगा कि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा अवश्य ही गिनती करने योग्य शास्त्रकारोने दिवी है इस लिये अधिकमासकी निश्चय करके गिनती करना ही सम्यक्त्वधारियोको उचित है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकती है इतने पर भी आगे फिर भी पृष्ट ९१ के पक्ति १४ वी से पक्ति १८ वी तक लिखते है कि (इस अधिकमासको कालचूलामें तुमको भी अवश्य ही मानना पडेगा और नही मानोगे तो किसी तरहसें भी आज्ञा भङ्ग रूप दूषणकी गठडीका भार दूर नही होगा क्योकि पर्युषणाके वाद ७० (सत्तर) दिन रहने का कहा है काल-चूला न मानोगे तो १०० दिन हो जायगे) इन अक्षरोको लिखके शुद्धसमाचारी कारको पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन होनेसे दूषण लगाते है सो न्यायाम्भोनिधिजीका सर्वथा मिथ्या है क्योकि मासवृद्धि होते पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन होनेमे कोई दूषण नही है इसका विस्तार उपरमें तथा तीनो महाशयो के नामकी समीक्षामें और भी कितनी ही जगह छप गया है उसीको पढके पाठकवर्ग सत्यासत्यका निर्णय कर लेना ,—

और शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छवाले अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा जानके विशेष करके गिनतीमे वरोवर लेते हैं और न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको कालचूला कह करके भी शास्त्रकारोका तात्पर्य्य समझे विना श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके तथा श्री-निशीथचूर्णिकार और श्रीदशवैकालिकके चूलिकाकी वृहद्-

समझना क्योंकि इन अधिक मासको कालचूला मानते है) इन अक्षरोंको लिखके न्यायाम्भोनिधिजी दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसमें अधिक मासको गिनती में छोड़कर ८० दिनके ५० दिन और दो आश्विन मास होनेसे पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसको भी ७० दिन अपनी कल्पनासे मान्य करके निर्दूषण बनना चाहते है सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य शास्त्रकारोंने दिवी है जिसका विशेष निर्णय तीनो महाशयोंके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया है और आगे फिर भी कालचूला सम्बन्धी श्रीनिशीथ चूर्णिका अधूरा पाठ और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम चूलिकाकी बृहद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके भावार्थ लिखे बाद फिर भी अपनी कल्पनासे पूर्वपक्ष उठा कर उसीका उत्तरमें भी पृष्ठ ९१ की पङ्क्ति १३ तक उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसका उतारा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ५९ और ६० की आदि तक छपाके उसीकी समीक्षा पृष्ठ ६० से ६५ तक इन्ही पुस्तकमें अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक छपगई है और श्रीनिशीथचूर्णिके प्रथमोद्देशेका कालचूलासम्बन्धी सम्पूर्ण पाठ और श्रीदशवैकालिककी प्रथम चूलिकाके बृहद्वृत्तिका सम्पूर्ण पाठ भावार्थके साथ खुलासा पूर्वक इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४९ से पृष्ठ ५८ तक विस्तारसे छपगया है और तीनो महाशयोके नामकी समीक्षा में भी इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ७१ से ७८ तक और आगे भी कितनी ही जगह छप गया है उसीको पढ़नेसे पाठक

भाष्य, चूर्णि, वृत्त्यादि अनेक शास्त्रोंमे मासवृद्धि होनेसें श्रावणमासमे पर्युषणा करना लिखा है इसका विशेष निर्णय तीनो महाशयोकी समीक्षामे शास्त्रोके प्रमाण सहित न्याययुक्तिके साथ अच्छी तरहसे इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १०७ से पृष्ठ ११७ तक छप गया है उसीको पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा और दूसरा (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कहगये है) यह लिखा है सोभी प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीखरतरगच्छके अनेक पूर्वाचार्य्योंने अनेक ग्रन्थोमें दो श्रावण होनेसे दूसरा श्रावणमे पर्युषणा करनी कही है सोही देखो श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसङ्घपट्टक वृहद्वृत्तिमें १। तथा श्रीसमाचारी ग्रन्थमें। २। श्रीजिनप्रभ सूरिजी कृत श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमे। ३। तथा श्रीविधिप्रपा ग्रन्थमें। ४। श्रीउपाध्यायजी श्रीसमयसुन्दरजीकृत श्रीकल्पकल्पलता वृत्तिमें। ५। तथा श्रीसमाचारी शतकमें। ६। और श्रीलक्ष्मी वल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिका वृत्तिमे। ७। और श्रीतप गच्छ तथा श्रीखरतरगच्छसम्बन्धी (तपा खरतर प्रश्नोत्तर)नाम ग्रन्थ है उसीमें। ८। और श्रीपर्युषणा सम्बन्धी चर्चापत्रमे। ९। इत्यादि अनेक जगह खुलासापूर्वक दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करनेका श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्योंनें कहा है तैसे ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी अनेक ग्रन्थोमें दूसरे श्रावणमें ही पर्युषणा करना कहा है और खास न्यायाम्भोनिधिजी भी शुद्धसमाचारी पुस्तक सम्बन्धी अपनी जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति २२ वी से पृष्ठ ८८ प्रथम पंक्तितक लिखते हैं कि (श्रावण मास बढ़े

युक्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिकमासकी गिनती निषेध करते पर भवका भय कुछ भी नही किया यह बड़ाही अफसोस है।

और आगे भी न्यायाम्भोनिधिजी जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ८१ की पंक्ति १९ वी से पृष्ठ ८२ वें की प्रथम पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (पर्युषणा पर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणापर्व का निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथ ही कथन किया है परन्तु अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है देखो, सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मास ही के विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा कि अधिक मास होवे तो श्रावणमासमें करना ऐसा पर्युषणा पर्वके साथ विशेषण नही दिया है) उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु कि हे सज्जन पुरुषो न्यायाम्भोनिधिजीके उपर का लेखको मे, देखता हु तो मेरेको न्यायाम्भोनिधिजी में मिथ्या भाषणका त्यागरूप दूजा महाव्रतही नही दिखता है क्योंकि उपरके लेखमे तीन जगह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोको भ्रमाने के लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है सोही दिखाता हु कि प्रथमतो (पर्युषणापर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमे पर्युषणा पर्वका निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथही कथन किया है) यह अक्षर लिखके मासवृद्धि होते भी भाद्रपद मासप्रतिबन्ध पर्युषणा न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते है सो मिथ्या है क्योंकि

इति। पर्युषणामकार्षीत् सेकेणट्टेणमित्यादि। प्रश्नवाक्य जउण इत्यादि। निर्वचनवाक्य। प्रायेणागारिणा। गृहस्थानामागाराणि गृहाणि। कडियाइ कटयुक्तानि उक्कंपियाइ धवलितानि। छन्नाइ तृणादिभि लित्ताइ छगणादिभि क्वचित् गुत्ताइति पाठस्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरद्वारपिधानादिभि घट्ठाइ विषमभूमिभञ्जनात्। मट्ठाइ श्लक्ष्णीकृतानि क्वचित् समट्ठाइत्ति पाठस्तत्र समतात् मृष्टानि मसृणीकृतानि सपधूमियाइ सौगन्ध्यापादनार्थ धूपनैर्वासितानि। खातोदगाइ कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि खायनिद्धमणाइ निर्द्धमण खाल गृहात् सलिल येन निर्गच्छति अप्पणो अट्ठाए आत्माथ स्वाथ गृहस्थै कृतानि परिकर्म्मितानि करोति कायइ करोतीत्यादाविव परिकर्म्मार्थत्वात् परिभुक्तानि ते स्वय परिभुज्यमानत्वात् अतएव परिणामितानि भवन्ति। तत सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुन प्रथममेव साधव स्थिता स्म। इति ब्रूयु तदा ते गृहस्था मुनीना स्थित्या सुभिक्ष सम्भाव्य तप्तायोगोलकल्पा दन्तालक्षेत्रक कुर्यु तथा चाधिकरणदोषा अतस्तत्परिहाराय पञ्चशतादिनै स्थिता स्म इति वाच्य चूर्णिकारस्तु कडियाइ पासेहितो कवियाणि उवरि इत्याह। स्थविरा स्थविरकल्पिका अद्यत्ताएत्ति अद्यकालीना आर्य्यतया व्रत स्थविरत्वेन इत्येके अतरावियसे इत्यादि अतरापि च अर्वागपि कल्पते, पर्युषितु न कल्पते ता रजनी भाद्रपदशुक्लपञ्चमी उवायणावित्तएत्ति अतिक्रमितु। उसनिवासे इत्यागमिको धातु। इह हि पर्युषणाद्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात्। तत्र गृहिणामज्ञाता यस्या वर्षायोग्यपीठफलकादौ

तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रव बढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें आषाढ़ चौमासेसे ५० में दिनही पर्युषणा करना परन्तु ८० अशीमें दिन नही करना ऐसा लिखके पृष्ठ १५५ में अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी रचित समाचारीका प्रमाण दिया है) इन अक्षरोंको न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं और उपरोक्त श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्योंके ग्रन्थोंका दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने सम्बन्धी पाठोंको भी जानते हैं तथापि (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये हैं) इतना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके अपना महाव्रत भङ्गके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना—

और तीसरा (देखो सन्देहविषौषधी ग्रन्थमे भी भाद्रव मासहीके विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा है कि अधिक मास होवे तो श्रावण मासमे पर्युषणा करना ऐसा पर्युषणापर्वके साथ विशेषण नही दिया है) यह लिखा है सो भी मायावृत्तिसे प्रत्यक्ष मिथ्या लिखा है क्योंकि श्री जिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमे खुलासा पूर्वक दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करनी कही है जिसका पाठ भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इस जगह लिख दिखाता हु श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिके पृष्ठ ३० और ३१ का तथाच तत्पाठ —

साम्प्रतं पर्युषणा समाचारी विवक्षुरादौ पर्युषणा कदा विधेयेति श्रीमहावीरस्तद्गणधरशिष्यादीन् दृष्टान्तेनाह तेण कालेणमित्यादि । वासाणति । आषाढचतुर्मासकदिनादा रभ्य सविंशतिरात्रेमासे व्यतिक्रान्ते भगवान् पज्जोसवे

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-विषौषधी वृत्तिमें श्रीकल्पसूत्रजीके मूलपाठकी व्याख्या किये बाद इन्ही श्रीकल्पसूत्रका निर्युक्ति जो कि सुप्रसिद्ध श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत है उसकी व्याख्या किवी है उसीमें काल ठवणाधिकारे समयादि कालसे आवलिका, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर, युगादिकी व्याख्या करके आगे अधिक मासको अच्छी तरहसे प्रमाण किया है और प्राचीनकालाश्रय जैसे चन्द्रसवत्सरमे पचास दिने पर्युषणा तैसेंही अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीश दिने पर्युषणा खुलासा पूर्वक कही है और श्रीनिशीथचूर्णिके दशवे उद्देशेमे जैसे पर्युषणा सम्बन्धी व्याख्या है तैसेही उन्ही महाराजने भी प्राय उसीके सदृश अच्छी तरहसे व्याख्या किवी हैं

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभ सूरिजीने श्रीविधिप्रपा नाम ग्रन्थ बनाया है उसीके पृष्ठ ५३ मे जैसा पाठ है वैसाही नीचे मुजब जानो ,—

आसाढ चउम्मासियाओ नियमा पणासइमे दिणे पज्जोसवणा कायव्वा न इक्कपचासइमे जयावि लोइय टिप्पणयाणुसारेण दो सावणा दो भद्दवया वा भवति तयावि पण्णासइमे दिणे नउण कालचूलाविरकाए असीइमे सवीसइ राइमासे वइक्कते पज्जोसवणत्ति वयणाउ जउ अभिवद्धियमि वीसत्तुवुत्त त जुगमज्जे दो पोसा जुगअते दोवी आसाढत्ति सिद्धतटिप्पणयाणुरोहेण चेव घडइ ते सपय नवट्ट तित्ति जहुत्तमेव पज्जोसवणादिणति ॥

अब सत्यग्राही सज्जनपुरुषोंसे मेरा इतनाही कहना है कि उपरमे श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-

यत्रेन पन्चोषन द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव स्थापना क्रियते। माषाढ़पौणमास्यां पञ्चपञ्चदिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपदशितपञ्चम्यां मार्षिकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते। गृहिज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकातिचारालोचन लुञ्चन पर्युषणाकल्पसूत्रकर्षण चैत्य परिपाटी अष्टम सांवत्सरिकप्रतिक्रमण च क्रियते यथाच व्रतपर्य्याय वर्षाणि गण्यन्ते सा नभस्य शुक्लपञ्चम्यां कालिकसूर्य्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकट कार्य्या। यत्पुनरभिवर्द्धित वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते। तत्सिद्धान्तटिप्पणानामनुसारेण तत्र हि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्येमासा स्तानि चाधुना सम्यक् न ज्ञायन्ते ततो दिनपञ्चाशतैव पर्युषणासङ्गतेति वृद्धा ततश्च कालावग्रहश्चात्र जघन्यतो नभस्य शितपञ्चम्या आरभ्य कार्त्तिकचतुर्मासांत सप्ततिदिनमान उत्कर्षतो यथायोग्य क्षेत्रान्तराभावादाषाढमासकल्पेन सह वृष्टिसद्भावात् मार्गशीर्षेणापि सह षण्मासा इति।

देखिये उपरके पाठमें एकमास और वीश दिने पर्युषणा श्रीतीर्थङ्कर गणधर स्थिविराचार्य्यादि करते थे तैसेही वर्त्तमानमे भी एकमास वीश दिने याने पचास दिने पर्युषणा करनेमें आती है और मासवृद्धि होनेसें वीश दिने पर्युषणा जैन टिप्पणानुसार दिखाई और वर्त्तमानमे जैन टिप्पणाके अभावसें पचास दिनेही पर्युषणा करनी कही इससें दो श्रावण हो तो दूसरे श्रावणमे अथवा दो भाद्रपद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिनेही पर्युषणा सम्यक्त्व धारियोंको करनी योग्य है, तैसेही श्रीखरतरगच्छवाले करते है परन्तु हठवादियोंकी बातही जूदी है—

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-विषौषधी वृत्तिमें श्रीकल्पसूत्रजीके मूलपाठकी व्याख्या किये बाद इन्ही श्रीकल्पसूत्रको निर्युक्ति जो कि सुप्रसिद्ध श्रीभद्र-बाहु स्वामीजी कृत है उसकी व्याख्या किवी है उसीमे काल ठवणाधिकारे समयादि कालसे आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर, युगादिकी व्याख्या करके आगे अधिक मासको अच्छी तरहसे प्रमाण किया है और प्राचीनकालाश्रय जैसे चन्द्रसवत्सरमे पचास दिने पर्युषणा तैसेही अभिवर्द्धित सवत्सरमे वीश दिने पर्युषणा खुलासा पूर्वक कही है और श्रीनिशीथचूर्णिके दशवे उद्देशेमे जैसे पर्युषणा सम्बन्धी व्याख्या हे तैसेही उन्ही महाराजने भी प्राय उसीके सदृश अच्छी तरहसे व्याख्या किवी हैं

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभ सूरिजीने श्रीविधि-प्रपा नाम ग्रन्थ बनाया है उसीके पृष्ठ ५३ मे जैसा पाठ है वैसाही नीचे मुजब जानो ,—

आसाढ चउम्मासियाओ नियमा पन्नासइमे दिणे पज्जोसवणा कायव्व न इक्कपचासइमे जयावि लोइय टिप्पणया-णुसारेण दो सावणा दो भद्दवया वा भवति तयावि पन्नासइमे दिणे नउण कालचूलाविवक्खाए असीइमे सवीसइराइमासे वइक्कते पज्जोसवणतित्ति वयणाउ जच अभिवढ्ढियमि वीसइवुत्त त जुगमज्झे दो पोसा जुगअते दोवी आसाढत्ति सिद्धतटिप्पणयाणुरोहेण चेव घडइ ते सपय नवट्ट तित्ति जहुत्तमेव पज्जोसवणादिणति ॥

अब सत्यग्राही सज्जानपुरुषोसे मेरा इतनाही कहना है कि उपरमें श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजीने श्रीसन्देह-

पर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी ? और रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है। यथा—'यात्राविवाह मण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि ॥ परिहर्तव्यानि बुधै, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थ यात्रामण्डन, विवाहमण्डन, और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोंने सर्व नपुंसके मासि कहनेसें अधिक मासमें त्यागने चाहीये। अब देखीये ! इस लेखसें भी अधिक मासमें अति उत्तम पर्युषणापर्व करनेकी सङ्गति नही होसकती है।]

ऊपरके न्यायाम्भोनिधिजीका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु कि (पृष्ठ १५९ में नारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें वीरीका विवाह कर दिया है) इन अक्षरोको लिखके जो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९ मे नारचन्द्र ज्योतिषका श्लोक है उसी को न्यायाम्भोनिधिजी निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि उसी श्लोकका मतलब सत्य है देखो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९में नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका ऐसा श्लोक है यथा—रविक्षेत्रगते जीवे, जीव क्षेत्रगते रवौ। दीक्षा स्थापना चापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥ १ ॥ इस श्लोक लिखनेका तात्पर्य्य ऐसा है कि वादी शङ्का करता है कि अधिकमासमे शुभकार्य्य नही होते है तो फिर पर्युषणापर्व भी शुभकार्य्य अधिकमासमे कैसे होवे इस शङ्काका समाधान शुद्धसमाचारीकार प० प्र० यतिजी श्री रायचन्द्रजी ऐसे करते है कि अधिक मासके सिवाय भी 'रविक्षेत्रगते जीवे, याने सूर्य्यका क्षेत्रमें गुरुका जाना होवे

अर्थात् सिंहराशि पर गुरुका आना होवे तब सिंहे गुरु सिंहस्य तेरह मास तक कहा जाता है उसीमे और 'जीवक्षेत्र गते रवौ, याने गुरुका क्षेत्रमे सूर्य्यका जाना होवे अर्थात् गुरुका क्षेत्रमे सूर्य्य धन और मीन राशिपर पौष और चैत्र मासमे आता है तब उसीको मलमास कहे जाते हैं उसीमें अर्थात् सिंहस्यका और मलमासका ऐसा योग बने तब गृहस्थको दीक्षा देना तथा साधुको सूरि वगैरह पदमे स्थापन करना और प्रतिष्ठा करनी ऐसे कार्य्य नही करना चाहिये क्योंकि ऐसे योगमे दीक्षादि कार्य्य करनेसे इच्छित फल-प्राप्त नही हो सकता है इसलिये उपरोक्तादि अनेक कारण-योगे मुहूर्त्तके निमित्त कारणसे जो जो कार्य्य करनेमे आते हैं सो निषेध किये है परन्तु आत्मसाधनका धर्मरूपी महान् कार्य्य तो बिना मुहूर्त्तका होनेसे किसी जगह कोई भी कारणयोगे निषेध करनेमें नही आया है और अधिक मासमे धर्मकार्य्य पर्युषणादि करनेका कोई शास्त्रमे निषेध भी नही किया है इसलिये अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य अवश्यही करना चाहिये यह तात्पर्य्य शुद्धसमाचारी कारका जैनशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्यायसम्मत होनेसे मान्य करने योग्य सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकता है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी अपनी कल्पित बातको स्थापनेके लिये शुद्धसमाचारीकारकी सत्य बातका निषेध करते है सोभी इस पचमे कालके न्यायके समुद्रका नमुना है और शुद्धसमाचारीकार प० प्र० यतिजी श्रीराय-चन्द्रजी थे, इसलिये (हीरीके स्थानमे बीरीका विवाह कर दिया है) यह अक्षर न्यायाम्भोनिधिजीको बिना विचार

किये ऐसे मिथ्या लिखना उचित नही था, इनका विशेष विचार पाठकगण अपनी बुद्धिसे स्वय कर लेना ,—

और (इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है यथा— हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्ते न लग्नमन्वेष्य ॥ लग्नेशा ऽशाधिपयो,र्नीचास्तगमे च न शुभं स्यात् ॥१॥ भावार्थ अधिक मासादिक जितने स्थान बताये उसमे शुभकार्य्य नही होते हैं तो अब बारा मासिक पर्युषणापर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी) इस उपरके लेखमे न्यायाम्भोनिधिजीने अधिक मासमे पर्युषणा करनेका निषेध किया इस पर मेरेको प्रथमतो इतनाही लिखना पड़ता है कि उपरके श्लोकका अधूरा भावार्थ लिखके न्यायाम्भोनिधिजीनें भोले जीवोंको भ्रममें गेरे हैं इसलिये इस जगह उपरके श्लोकका पूरा भावार्थ लिखनेकी जरूरत हुई सो लिखके दिखाता हुं— हरिशयने, याने, जो श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) लौकिक में आषाढशुक्ल एकादशी (११) के दिनसे कार्त्तिकशुक्ल एका दशीके दिन तक चार मासका (परन्तु मासवृद्धि दो श्राव णादि होनेसे पाच मासका) कहा जाता है उसीमें १, और वैशाखादि अधिक मासमें २, गुरुका अस्तमें ३, शुक्रका अस्तमे ४, और ज्योतिष शास्त्र मुजब लग्नके नवांशाका अधिपति नीचा हो ५, अथवा अस्त हो ६, इतने योगोमे पण्डित पुरुषको लग्न नही देखना चाहिये क्योंकि उपरके योगोमे लग्न देखे तो शुभ फल नही हो सकता है इसलिये ज्योतिषशास्त्रोमें उपरके योगोमें लग्न देखनेकी मनाई किवी है इस तरहसे उपरोक्त श्लोकका भावार्थ होता है ॥ १ ॥

अब न्यायाम्भोनिधिजीने नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका

जो ऊपरमे श्लोक लिखके पर्युपणा पर्वका निषेध किया है उस सम्बन्धी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु, जिसमे प्रथमतो शुद्धसमाचारीकारने इसीही नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका जो श्लोक लिखाथा उसीको भावार्थ सहित मे ऊपरमे लिख आया हु—जिसमें खुलासे लिखा है कि तेरहमास तक सिंहस्थमें और पौष तथा चैत्र ऐसे मलमासमे मुहूर्त्तके निमित्तिक शुभकार्य्य नही होते हैं परन्तु विना मुहूर्त्त का धर्म कार्य्य करनेमें हरजा नही क्योकि तेरहमासका सिंहस्थमें पर्युपणादि धर्मकार्य्य तो अवश्य ही करने मे आते है और पौषमासमें श्रीपार्श्वनाथस्वामिजीका जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य और चैत्रमासमे श्रीआदिजिनेश्वर भगवान्‌का जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य करनेमे आते हैं और चैत्रमासमे ओलियाकी भी तपश्चर्या वगैरह करनेमें आती है और खास अधिकमासमे भी पाक्षिकादि धर्मकार्य्य करनेमें आता है इस लिये मुहूर्त्तके निमित्तिक कार्य्य अधिकमासमे नही हो मकते है परन्तु धर्मकार्य्य तो विना मुहूर्त्तका होनेसे अवश्यही करनेमे आता है यह तात्पर्य्य शुद्ध समाचारी कारका सत्यथा तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (पृष्ठ १५९ पंक्ति ६ मे नारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें वीरीका विवाह कर दिया है) ऐसा उपहासका वाक्य लिखके उपरोक्त सत्यबातका निषेध करदिया और फिर उसी स्थानका 'हरिशयने, इत्यादि श्लोक लिखके हरिशयने श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) जो चौमासामें और अधिक मासमे शुभकार्य्य का न होना दिखाकर पर्यु-

किये ऐसे मिथ्या लिखना उचित नही था, इसका विशेष विचार पाठकगण अपनी बुद्धिसे न्याय कर लेना ,—

और (इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है यथा— हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्तेन लग्नमन्वेष्य ॥ लग्नेशा 'शाधिपयो,र्नीचास्तगमे चन शुभ स्यात् ॥१॥ भावार्थ अधिक मासादिक जितने स्थान बतायें उसमे शुभकार्य्य नही होते हैं तो अब बारा मासिक पर्युषणापर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी) इस उपरके लेखसे न्यायाम्भोनिधिजीने अधिक मासमे पर्युषणा करनेका निषेध किया इस पर मेरेकों प्रथमतो इतनाही लिखना पड़ता है कि उपरके श्लोकका अधूरा भावार्थ लिखके न्यायाम्भोनिधिजीनें भोले जीवोंकों भ्रममें गेरे हैं इसलिये इस जगह उपरके श्लोकका पूरा भावार्थ लिखनेकी जरूरत हुई सो लिखके दिखाता हु— हरिशयने, याने, जो श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) लौकिक में आषाढशुक्ल एकादशी (११) के दिनसे 'कार्त्तिकशुक्ल' एका दशीके दिन तक चार मासका (परन्तु मासवृद्धि दो श्राव णादि होनेसे पाच मासका) कहा जाता हैं उसीमें १, और वैशाखादि अधिक मासमें २, गुरुका अस्तमें ३, शुक्रका अस्तमे ४, और ज्योतिष शास्त्र मुजब लग्नके नवांशाका अधिपति नीचा हो ५, अथवा अस्त हो ६, इतने योगोमे पण्डित पुरुषको लग्न नही देखना चाहिये क्योकि 'उपरके योगोमें लग्न देखे तो शुभ फल नहीं हो सकता है इसलिये ज्योतिषशास्त्रोमें उपरके योगोमे लग्न देखनेकी मनाई किवी है इस तरहसे उपरोक्त श्लोकका भावार्थ होता है ॥ १ ॥

अब न्यायाम्भोनिधिजीने नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका

में १७, रत्नकोषमें १८, लग्नचन्द्रिकामें १९, ज्योतिषसारमे २०, और ज्योतिर्विदाभरण वृत्तिमे २१, इत्यादि अनेक ज्योतिष शास्त्रोमे कितनेही मास १, कितनीही सक्रान्ति २, कितनेही वार ३, कितनीही तिथिया ४, कितनेही योग ५, कितनेही नक्षत्र ६, और जन्मका नक्षत्र ७, जन्मका मास ८, अधिक मास ९, क्षयमास १० अधिक तिथि ११ क्षय तिथि १२, व्यतीपात १३, और कृष्णपक्षकी तेरस चौदश अमावस्या इन क्षीण तिथियोमें १४, पापग्रहयुक्त चन्द्रमे १५, पापग्रह युक्त लग्नमे १६, गुरुका अस्तमे १७, शुक्रका अस्तमें १८, गुरु शुक्रकी वाल और वृद्धावस्थामे १९, ग्रहणके सात दिनोमे २०, लग्नका स्वामी नीचामे २१, और अस्तमे २२, सन्मुख योगिनीमे २३, चन्द्रदग्ध तिथिमे २४, सन्मुख राहुमे २५, सिंहस्थ में २६, मलमासमे २७, हरिशयनका चौमासामे २८, भद्रामे २९, और तिथि, वार, नक्षत्र, लग्न, दिशा वगैरह आपसमे अशुभ योगोमे ३०, इत्यादि अनेक निमित्त कारणोमे मुहूर्त्त निमित्तिक शुभकार्य्य वर्ज्जन किये है इस लिये न्याया म्भोनिधिजी तथा उन्होके परिवारवाले जो ज्योतिषशास्त्रोके अशुभ योगोसे शुभकार्य्योंका वर्ज्जन देखके धर्मकार्य्योंका भी वर्ज्जन करेंगे तब तो उन्होको धर्मकार्य्य कब करनेका वरत मिलेगा अथवा शुभयोग विना धर्मकार्य्य न करते किसीका आयुष्यपूर्ण हो जावे तो उन्हकी आत्माका सुधारा कब होगा सो पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार लेना—और मेरा इसपर आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको इतनाही कहना है कि न्यायाम्भोनिधिजी उपरोक्त ज्योतिष शास्त्रोके शुभाशुभयोगोको न देखते सिंहस्थमे तथा हरिशयनका

षणा पर्वका भी नही होनेका तत्सूत्र भावरूप दिखाते कुछ भी विचार न किया क्योंकि चौमासेमें मुहूर्त निमित्तिक शुभकार्य्य नही होते है परन्तु बिना मुहूर्तका श्रीपयुषणा पर्वतो खासकरके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने वर्षा ऋतुमें करनेका कहा है जिसका किञ्चिन्मात्र भी न्यायाम्भोनिधिजी विचार न करते श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें और विद्वान् पुरुषोंके आगे अपने नामकी हासी करानेका कारणरूप हरिशयन का चौमासमें और अधिक मासमें शुभकार्य्यका न होनेका दिखाकर पर्युषणापर्व न होनेका भोले जीवोको दिखाया। हा अतीव खेद इस उपरकी बातको पाठकवर्गको तथा न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोको और उन्होके पक्षधारियोको (सत्यग्राही हो कर) दीर्घदृष्टिसें विचारनी चाहिये,—

दूसरा औरभी सुनो—जो न्यायाम्भोनिधिजीके तथा उन्होके परिवारवालोके दिलमें ऐसाही होगा कि मुहूर्तके निमित्तका शुभकार्य्य न होवे वहा विना मुहूर्तका धर्मकार्य्य भी नही होना चाहिये तब तो उन्होके आत्माका सुधारा धर्मकार्य्योके बिना होनाही मुश्किल होगा क्योंकि ज्योतिषशास्त्रोके आरम्भसिद्धि ग्रन्थमें १, तथा लघु वृत्तिमें २, और वृहद्वृत्तिमें ३, जन्मपत्री पद्धतिमे ४, नारचन्द्र प्रकरणमें ५, तथा तट्टिप्पणमें ६, लग्नशुद्धिग्रन्थमें ७, तत् वृत्तिमें ८, मुहूर्तचिन्तामणिमें ९, वृहत् मुहूर्तसिन्धुमें १० दूसरी मुहूर्तचिन्तामणिमें ११, तथा पीयूषधारा वृत्तिमे १२, मुहूर्तमार्त्तण्डमे १३, विवाह वृन्दावनमे १४, प्रथम और दूसरा विवाहपडल ग्रन्थमे १५ १६, चार प्रकरणका नारचन्द्र

इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्ग को दिखाता हु- जिसमें प्रथमतो न्यायाम्भोनिधिजीकी ज्योतिषग्रन्थका विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्त दिखा करके पर्युषणा पर्वका निषेध करनाही उचित नही है इसका उपरमें अच्छी तरहसे खुलासा हो गया है और दूसरा यह है कि श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने मासवृद्धिको काल- चूलाकी उत्तम ओपमा दिवी है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने तीनो महाशयोका अनुकरण करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमे तथा इन महाराजोंकी आशातना का भय न करते मासवृद्धिको नपुंसककी तुच्छ ओपमा लिख करके भोले जीवोको अपने फन्दमे फसाये हैं सो बडाही अफसोस है और तीसरा यह है कि रत्नकोषाख्य (रत्नकोष) ज्योतिष शास्त्रमे तो मुहूर्त्तके निमित्तसे जो जो कार्य्य होते हैं उसीमें अनेक कारण योग वर्ज्जन किये हैं उसीको सब को छोडकरके सिर्फ एक अधिक मास सम्बन्धी लिखते हैं सो भी न्यायाभोनिधिजीको अन्याय कारक है इसलिये मुहूर्त्त के कार्य्योंको दिखाकर विना मुहूर्त्तका पर्युषणापर्व करनेका निषेध करना योग्य नही है ।

और भी चौथा सुनो-(यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभकार्य्य है सोभी पण्डित पुरुषोंनें सर्व नपुंसके मासि कहनेसें अधिक मासमे त्यागने चाहिये) इसपर मेरा इतना ही कहना है कि पूर्वोक्त तीनो महाशय और चौथे न्याया- म्भोनिधिजी यह चारो महाशय अधिकमासको नपुंसक कहके जो सर्व शुभकार्य्य त्यागने का ठहराते है । इससे तो यह सिद्ध होता है कि पौषध, प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य्य,

चौमासामे और अधिक मासादिमे धर्मकार्य्यं करते होवेंगे तब तो 'हरिशयनेऽधिके मासे' इत्यादि ऊपरका श्लोक नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका लिखके अधिक मासादि जितने स्थान बताये उसमें शुभकार्य्यं नही होता है, ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा पर्व करनेका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यो उत्सूत्र भाषणरूप दिखाया और उत्सूत्र भाषणका भय होता तो ऊपरकी मिथ्या बातों लिखी जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकरके अपनी आत्माकी शुद्धि करनी उचित थी और न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोको ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्या बातोका अब हठ भी करना उचित नही है—इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोसे मेरा यही कहना है कि ज्योतिषके शुभाशुभ योगोका और सिंहस्थका, चौमासाका, अधिक मासादिक का विचार न करते, निःशङ्कित होकर श्रीजिनोक्त मुजब धर्मकार्य्योंमे उद्यम करके अपनी आत्माका कल्याण करो आगे इच्छा तुम्हारी ,—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें लिखा है कि [रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है यथा यात्रा विवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि, परिहर्त्तव्यानि बुद्धै, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थ —यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोने सर्व नपुंसके मासि कहने से अधिक मासमें त्यागने चाहिये अब देखिये इस लेखसे भी अधिक मासमे अत्युत्तम पर्युषणापर्व करनेकी संगति नही हो सकती है]

इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्ग को दिखाता हु–जिसमें प्रथमतो न्यायाम्भोनिधिजीको ज्योतिषग्रन्थका विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्त दिखा करके पर्युषणा पर्वका निषेध करनाही उचित नही हे इसका उपरमे अच्छी तरहसे खुलासा हो गया है और दूसरा यह है कि श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने मासवृद्धिको काल-चूलाकी उत्तम ओपमा दिवी है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने तीनो महाशयोका अनुकरण करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमें तथा इन महाराजोकी आशातना का भय न करते मासवृद्धिको नपुसककी तुच्छ ओपमा लिख करके भोले जीवोको अपने फन्दमें फसाये हैं सो बडाही अफसोस है और तीसरा यह है कि रत्नकोपारय (रत्नकोप) ज्योतिष शास्त्रमे तो मुहूर्तके निमित्तसे जो जो कार्य्य होते हैं उसीमें अनेक कारण योग वर्ज्जन किये हैं उसीको सब को छोडकरके सिर्फ एक अधिक मास सम्बन्धी लिखते हैं सो भी न्यायाभोनिधिजीको अन्याय कारक है इसलिये मुहूर्त्त के कार्य्योंको दिखाकर विना मुहूर्त्तका पर्युषणापर्व करनेका निषेध करना योग्य नही है ।

और भी चौथा सुनो–(यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभकार्य्य है सोभी पण्डित पुरुषोनें सर्व नपुसके मासि कहनेसें अधिक मासमे त्यागने चाहिये) इसपर मेरा इतना ही कहना है कि पूर्वोक्ततीनो महाशय और चौथे न्याया-म्भोनिधिजी यह चारो महाशय अधिकमासको नपुसक कहके जो सर्व शुभकार्य्य त्यागने का ठहराते है । इससे तो यह सिद्ध होता है कि पौषध, प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य्य,

चौमासामे और अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य करते होवेंगे तब तो 'हरिशयनेऽधिके मासे' इत्यादि उपरका श्लोक नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका लिखके अधिक मासादि जितने स्थान बताये उसमें शुभकार्य्य नही होता है, ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा पर्व करनेका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यों उत्सूत्र भाषणरूप दिखाया और उत्सूत्र भाषणका भय होता तो उपरकी मिथ्या बातों लिखी जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकरके अपनी आत्माकी शुद्धि करनी उचित थी और न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोंको ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्या बातोंका अब हठ भी करना उचित नही है— इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि ज्योतिषके शुभाशुभ योगोंका और सिंहस्थका, चौमासाका, अधिक मासादिक का विचार न करके, निःशङ्कित होकर श्रीजिनोक्त मुजब धर्मकार्य्योंमे उद्यम करके अपनी आत्माका कल्याण करो आगे इच्छा तुम्हारी ,—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें लिखा है कि [रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है यथा यात्रा विवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि, परिहर्त्तव्यानि बुद्धै, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थ —यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोंने सर्व नपुंसके मासि कहने से अधिक मासमें त्यागने चाहिये अब देखिये इस लेखसे भी अधिक मासमें अत्युत्तम पर्युषणापर्व करनेकी-संगति नही हो सकती है]

इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्ग को दिखाता हुं- जिसमें प्रथमतो न्यायाम्भोनिधिजीको ज्योतिषग्रन्थका विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्त दिखा करके पर्युषणा पर्वका निषेध करनाही उचित नही है इसका उपरमे अच्छी तरहसे खुलासा हो गया है और दूसरा यह है कि श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने मासवृद्धिको काल-चूलाकी उत्तम ओपमा दिवी है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने तीनो महाशयोका अनुकरण करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमे तथा इन महाराजोकी आशातना का भय न करते मासवृद्धिको नपुंसककी तुच्छ ओपमा लिख करके भोले जीवोको अपने फन्दमें फसाये हैं सो बडाही अफसोस है और तीसरा यह है कि रत्नकोषादय (रत्नकोष) ज्योतिष शास्त्रमे तो मुहूर्त्तके निमित्तसे जो जो कार्य्य होते हैं उसीमें अनेक कारण योग वर्ज्जन किये हैं उसीको सब को छोडकरके सिर्फ एक अधिक मास सम्बन्धी लिखते हैं सो भी न्यायाम्भोनिधिजीको अन्याय कारक है इसलिये मुहूर्त्त के कार्य्योंको दिखाकर विना मुहूर्त्तका पर्युषणापर्व करनेका निषेध करना योग्य नही है ।

और भी चौथा सुनो--(यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभकार्य्य है सोभी पण्डित पुरुषोंनें सर्वे नपुंसके मासि कहनेसें अधिक मासमे त्यागने चाहिये) इसपर मेरा इतना ही कहना है कि पूर्वोक्त तीनो महाशय और चौथे न्यायाम्भोनिधिजी यह चारो महाशय अधिकमासको नपुंसक कहके जो सर्व शुभकार्य्य त्यागने का ठहराते है । इससे तो यह सिद्ध होता है कि पौषध, प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य्य,

चौमासामे और अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य करते होवेंगे तब तो 'हरिशयनेऽधिके मासे' इत्यादि उपरका श्लोक नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका लिखके अधिक मासादि जितने स्थान बताये उसमें शुभकार्य्य नही होता है, ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा पर्व करनेका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यों उत्सूत्र भाषणरूप दिखाया और उत्सूत्र भाषणका भय होता तो उपरकी मिथ्या वार्तों लिखी जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकरके अपनी आत्माकी शुद्धि करनी उचित थी और न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोको ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्या वातोका अब हठ भी करना उचित नही है— इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि ज्योतिषके शुभाशुभ योगोका और सिंहस्थका, चौमासाका, अधिक मासादिक का विचार न करते, नि शङ्कित होकर श्रीजिनोक्त मुजब धर्मकार्य्योंमे उद्यम करके अपनी आत्माका कल्याण करो आगे इच्छा तुम्हारी ,—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें लिखा है कि [रत्नकोषाख्य ज्योति शास्त्र विषे भी ऐसा कहा है यथा यात्रा विवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि, परि हर्त्तव्यानि बुद्धै, सर्वाणि नपुसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थ —यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोने सर्व नपुसके मासि कहने से अधिक मासमें त्यागने चाहिये अब देखिये इस लेखसे भी अधिक मासमें अत्युत्तम पर्युषणापर्व करनेकी सगति नही हो सकती है]

इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्ग को दिखाता हु-जिसमें प्रथमतो न्यायाम्भोनिधिजीको ज्योतिषग्रन्थका विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्त दिखा करके पर्युषणा पर्वका निषेध करनाही उचित नही हे इसका उपरमे अच्छी तरहसे खुलासा हो गया है और दूसरा यह है कि श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने मासवृद्धिको काल-चूलाकी उत्तम ओपमा दिवी है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने तीनो महाशयोका अनुकरण करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमे तथा इन महाराजोकी आशातना का भय न करते मासवृद्धिको नपुसककी तुच्छ ओपमा लिख करके भोले जीवोको अपने फन्दमे फसाये हैं सो बडाही अफसोस है और तीसरा यह है कि रत्नकोषारय (रत्नकोष) ज्योतिष शास्त्रमे तो मुहूर्त्तके निमित्तसे जो जो कार्य्य होते हैं उसीमें अनेक कारण योग वर्ज्जन किये है उसीको सब को छोडकरके सिर्फ एक अधिक मास सम्बन्धी लिखते हैं सो भी न्यायाम्भोनिधिजीको अन्याय कारक है इसलिये मुहूर्त्त के कार्य्योंको दिखाकर विना मुहूर्त्तका पर्युषणापर्व करनेका निषेध करना योग्य नही है ।

और भी चौथा सुनो–(यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभकार्य्य है सोभी पण्डित पुरुषोने सर्व नपुसके मासि कहनेसें अधिक मासमे त्यागने चाहिये) इसपर मेरा इतना ही कहना है कि पूर्वोक्त तीनो महाशय और चौथे न्याया-म्भोनिधिजी यह चारो महाशय अधिकमासको नपुसक कहके जो सर्व शुभकार्य्य त्यागने का ठहराते है । इससे तो यह सिद्ध होता है कि पौषध, प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य्य,

चौमासामे और अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य करते होवेंगे तब तो 'हरिशयनेऽधिके मासे' इत्यादि ऊपरका श्लोक नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका लिखके अधिक मासादि जितने स्थान बताये उसमें शुभकार्य्य नही होता है, ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा पर्व करनेका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यों उत्सूत्र भाषणरूप दिखाया और उत्सूत्र भाषणका भय होता तो ऊपरकी मिथ्या बातों लिखी जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकरके अपनी आत्माकी शुद्धि करनी उचित थी और न्यायाभोनिधिजीके परिवारवालोको ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्या बातोका अब हठ भी करना उचित नही है— इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि ज्योतिषके शुभाशुभ योगोका और सिंहस्थका, चौमासाका, अधिक मासादिक का विचार न करते, निःशङ्कित होकर श्रीजिनोक्त मुजब धर्मकार्य्योंमे उद्यम करके अपनी आत्माका कल्याण करो आगे इच्छा तुम्हारी ,—

और आगे फिर भी न्यायाभोनिधिजीनें लिखा है कि [रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है यथा यात्रा विवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि, परिहर्त्तव्यानि बुद्धै, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थ —यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोने सर्व नपुंसके मासि कहने से अधिक मासमें त्यागने चाहिये अब देखिये इस लेखसे भी अधिक मासमे अत्युत्तम पर्युषणापर्व करनेकी संगति नही हो सकती है]

और क्या होगा सो बुद्धिजन सज्जनपुरुष स्वय विचार लेना।

अब पाचमा और भी सुनो कि जो न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको नपुसक कहके यात्रा मण्डनका शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराते है परन्तु जैनके और वैष्णवके अनेक तीर्थ स्थान है उसीमे अमुक अधिकमासमे अमुक तीर्थयात्रा बन्ध हुई कोई देशी परदेशी यात्री यात्रा करने को न आया ऐसा देखनेमे तो दूर रहा किन्तु पाठकवर्गके सुननेमे भी नही आया होगा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीने कैसे लिखा होगा सो पाठक वर्ग विचार लेना।

और छठा यह है कि न्यायाम्भोनिधिजी किसी भी अधिक मासमे कोई भी श्रीशत्रुजय वगैरह तीर्थस्थानमे ठहरे होवे उस अधिक मासमे तीर्थयात्रा खास आपने किवी होगी तो फिर अधिक मासमे यात्राका निषेध भोले जीवोको वृथा क्यो दिखाया होगा सो निष्पक्षपाती सज्जन पुरुष स्वय विचार लो,—

और सातमी वारकी समीक्षामे कदाग्रहियोका मिथ्यात्व रूप भ्रमको दूर करनेके लिये मेरेको लिखना पडता है कि न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् न्यायके समुद्र होते भी गच्छका मिथ्या हठवादसे ससार व्यवहारमें विवाहादि वडे ही आरम्भके कराने वाले और अधोगतिका रस्तारूप लौकिक कार्य्य न होनेका दृष्टान्त दिखाकर महान् उत्तमोत्तम निरारम्भी ऊर्द्धगतिका रस्तारूप लोकोत्तर कार्य्यका निषेध करती वरत न्यायाम्भोनिधिजीके विद्वत्ताकी चातुराई किस जगह चली गईथी सो प्रत्यक्ष असङ्गत और उत्सूत्र भाषणरूप लिखते

दान, पुण्य, परोपगार, सात क्षेत्रमें द्रव्यखर्चना, जीव दया, देवपूजा, गुरुवन्दनादि देवगुरुभक्ति, साधर्मिक वात्सल्य, विनय, वैयावच्च, आत्मसाधनरूप स्वाध्याय, ध्यानादि, श्रावकके और धर्मोपदेशका व्याख्यानादि साधुके उचित जो जो शुभकार्य्य है उन्ही शुभकार्य्योंको अधिक मासको नपुंसक कहके त्याग देनेका चारो महाशयोंने उपदेश किया होगा। भक्तजनोको त्यागनेका नियम भी दिलाया होगा, आपने भी त्यागे होवेंगे और अधिक मासको नपुसक कहके शुभकार्य्य चारो महाशय त्यागनेका ठहराते है इससें अशुभ कार्य्योंका ग्रहण होता है इसलिये उपरोक्त कार्य्योसे विरुद्ध माने अधिक मासको नपुसक जानके सर्व शुभकार्य्य त्यागते हुए—निन्दा, ईर्षा, झगडादि अशुभकार्य्य करनेका चारो महाशयोने उपदेश किया होगा। दृष्टि रागियोसें करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी ऐसे ही किया होगा। तब तो (अधिक मासमें सर्वशुभकार्य्य त्यागनेका) ज्योतिष शास्त्रका नामसें चारो महाशयोका लिखके ठहराना उचित ठीक होसके परन्तु जो अधिक मासमें निन्दा ईर्षादि अशुभकार्य्य त्यागके देवगुरुभक्ति वगैरह शुभकार्य्य चारो महाशयोने करनेका उपदेश दिया होगा भक्तजनोसे करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी उपरके अशुभ कार्य्योंका त्यागकरके शुभकार्य्योंको किये होवेंगे तबतो अधिक मासमे ज्योतिष शास्त्रका नाम लेकरके सब शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराना चारो महाशयोका भोले जीवोको भ्रममे गेरके मिथ्यात्व बढानेके सिवाय

और क्या होगा सो बुद्धिजन सज्जनपुरुष स्वय विचार लेना।

अब पाचमा और भी सुनो कि जो न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको नपुसक कहके यात्रा मण्डनका शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराते है परन्तु जैनके और वैष्णवके अनेक तीर्थ स्थान है उसीमे अमुक अधिकमासमे अमुक तीर्थयात्रा बन्ध हुई कोई देशी परदेशी यात्री यात्रा करने को न आया ऐसा देखनेमे तो दूर रहा किन्तु पाठकवर्गके सुननेमे भी नही आया होगा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीने कैसे लिखा होगा सो पाठक वर्ग विचार लेना।

और छठा यह है कि न्यायाम्भोनिधिजी किसी भी अधिक मासमे कोई भी श्रीशत्रुजय वगैरह तीर्थस्थानमे ठहरे होवे उस अधिक मासमे तीर्थयात्रा खास आपने किवी होगी तो फिर अधिक मासमे यात्राका निषेध भोले जीवोको वृथा क्यो दिखाया होगा सो निष्पक्षपाती सज्जन पुरुष स्वय विचार लो,—

और सातमी वारकी समीक्षामे कदाग्रहियोका मिथ्यात्व रूप भ्रमको दूर करनेके लिये मेरेको लिखना पडता है कि न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् न्यायके समुद्र होते भी गच्छका मिथ्या हठवादसे ससार व्यवहारमें विवाहादि वडे ही आरम्भके कराने वाले और अधोगतिका रस्तारूप लौकिक कार्य्य न होनेका दृष्टान्त दिखाकर महान् उत्तमोत्तम निरारम्भी ऊर्द्धगतिका रस्तारूप लोकोत्तर कार्य्यका निषेध करती वरत न्यायाम्भोनिधिजीके विद्वत्ताकी चातुराई किस जगह चली गईथी सो प्रत्यक्ष असङ्गत और उत्सूत्र भाषणरूप लिखते

दान, पुण्य, परोपगार, सात क्षेत्रमें द्रव्यखर्चना, जीव दया, देवपूजा, गुरुवन्दनादि देवगुरुभक्ति, साधर्मिक वात्सल्य, विनय, वैयावच्च, आत्मसाधनरूप स्वाध्याय, ध्यानादि, श्रावकके और धर्मोपदेशका व्याख्यानादि साधुके उचित जो जो शुभकार्य्य है उन्ही शुभकार्य्योंको अधिक मासको नपुंसक कहके त्याग देनेका चारो महाशयोंने उपदेश किया होगा । भक्तजनोको त्यागनेका नियम भी दिलाया होगा, आपने भी त्यागे होवेंगे और अधिक मासको नपुंसक कहके शुभकार्य्य चारो महाशय त्यागनेका ठहराते है इससें अशुभ कार्य्योंका ग्रहण होता है इसलिये उपरोक्त कार्य्योंसे विरुद्ध याने अधिक मासको नपुंसक जानके सब शुभकार्य्य त्यागते हुए—निन्दा, ईर्षा, झगड़ादि अशुभकार्य्य करनेका चारो महाशयोने उपदेश किया होगा। दृष्टि रागियोसें करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी ऐसे ही किया होगा। तब तो (अधिक मासमे सबशुभकार्य्य त्यागनेका) ज्योतिष शास्त्रका नामसें चारो महाशयोका लिखके ठहराना उचित ठीक होसके परन्तु जो अधिक मासमे निन्दा ईर्षादि अशुभकार्य्य त्यागके देवगुरुभक्ति वगैरह शुभकार्य्य चारो महाशयोने करनेका उपदेश दिया होगा भक्तजनोसे करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी उपरके अशुभ कार्य्योंका त्यागकरके शुभकार्य्योंको किये होवेंगे तबतो अधिक मासमें ज्योतिष शास्त्रका नाम लेकरके सर्व शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराना चारो महाशयोका भोले जीवोको भ्रममे गेरके मिथ्यात्व बढानेके सिवाय

लेख लिखके अपनी चातुराई प्रगट किवी हैं उसीका उतारा नीचे मुजब जानो—

[अधिक मासको अचेतन रूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोको अङ्गीकार न करना इसमे तो क्याही कहना देखो आवश्यक निर्युक्ति विषे कहा है यथा—
जइ फुल्ला कणिआरडा, चूअग अहिमासयमिघुठमि।
तुहनखम फुल्लेउ, जइ पच्चता करिति डमराई ॥ १ ॥ भावार्थ हे अब अधिक मासमें कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फुलना उचित नही है क्योकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते हैं अब देखिये हे मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु—कि हे सज्जन पुरुषो न्यायाम्भोनिधिजीने प्रथमतो (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह अक्षर लिखे है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योकि दशलक्ष प्रत्येक वनस्पति तथा चौदह लक्ष साधारण वनस्पति यह चौवीश लक्ष योनीकी सब वनस्पति अवश्यमेव अधिक मासमें हवा पाणीके सयोगसे यथोचित नवीन पैदाश होती हैं औरवृद्धि पामती है प्रफुल्लित होती है और निमित्त कारणसे नष्ट भी होजाती है जैसे बारह मासोमें हानी वृद्धयादि वनस्पतिका स्वभाव है तैसे ही अधिक मास होनेसे तेरह मासोमें भी बरोबर है यह बात अनादि कालसे चली आती है और प्रत्यक्ष भी दिखती है क्योकि इस सवत् १९६६ का लौकिक पञ्चाङ्गमें दो

जरा भी विचार न आया क्योंकि विवाहादि कार्य्य तो चौमासामें और रिक्तातिथिमें तथा कृष्ण चतुर्दशी अमावस्यादि तिथि वगैरह कु वार कु नक्षत्र कु योगादि अनेक कारण योगोंमें निषेध किये हैं और श्रीपर्युषणादि धर्मकार्य्य तो विशेष करके चौमासामें रिक्तातिथिमें तथा कृष्ण चतुर्दशी अमावस्यादि तिथियोंमे कु वार कु नक्षत्र कु योगादि होते भी तिथि नियत पर्व करनेमे आते हैं इस बातका विवेक बुद्धिसे हृदयमे विचार किया होता तो विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्तसे महान् उत्तम पर्युषणा पर्व करनेका निषेध के लिये कदापि लेखनी नही चलाते यह बातपाठकवर्गको अच्छी तरहसे विचारनी चाहिये ,—

और भी आठमी तरहसे सुन लीजिये—कि पूर्वोक्त तीनो महाशयोने और चौथे न्यायाम्भोनिधिजीनें भोले जीवों के आत्मसाधनका धर्मकार्य्योंमें विघ्नकारक, अधिक मासको तुच्छ नपुंसकादिसे लिखा है सो नि केवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि धर्मकार्य्योंमें अधिक मास उत्तम श्रेष्ठ महान् पुरुषरूप है (इसलिये अधिकमासमे धर्मकार्य्योंका निषेध नही हो सकता है) इस बातका विशेष विस्तार दृष्टान्त सहित युक्तिके साथ अच्छी तरहसे सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा सो पढनेसे सब नि सन्देह हो जावेगा ,—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीने अधिक मास को निषेध करनेके लिये जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ९२ की पंक्ति १७ मे पृष्ठ ९३ की आदिमें अर्द्ध पंक्ति तक

लेख लिखके अपनी चातुराई प्रगट किवी हैं उसीका उतारा नीचे मुजब जानो—

[अधिक मासको अचेतन रूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोको अङ्गीकार न करना इसमे तो क्याही कहना देखो आवश्यक निर्युक्ति विपे कहा है यथा—
जइ फुल्ला कणिआरडा, चूअग अहिमासयमिघुठमि।
तुहनखम फुल्लेउ, जइ पच्चता करिति डमराई ॥ १ ॥ भावार्थ हे अब अधिक मासमें कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फुलना उचित नही है क्योकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते है अब देखिये हे मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु—कि हे सज्जन पुरुषो न्यायाम्भोनिधिजीने प्रथमतो (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह अक्षर लिखे है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योकि दशलक्ष प्रत्येक वनस्पति तथा चौदह लक्ष साधारण वनस्पति यह चौवीश लक्ष योनीकी सब वनस्पति अवश्यमेव अधिक मासमें हवा पाणीके सयोगसे यथोचित नवीन पैदाश होती है औरवृद्धि पामती है प्रफुल्लित होती है और निमित्त कारणसे नष्ट भी होजाती है जैसे बारह मासोमें हानी वृद्ध्यादि वनस्पतिका स्वभाव है तैसे ही अधिक मास होनेसे तेरह मासोमें भी बरोबर है यह बात अनादि कालसे चली आती है और प्रत्यक्ष भी दिखती है क्योकि इस सवत् १९६६ का लौकिक पञ्चाङ्गमें दो

जरा भी विचार न आया क्योंकि विवाहादि कार्य्य तो चौमासामें और रिक्तातिथिमें तथा कृष्ण चतुर्दशी अमावस्यादि तिथि वगैरह कु वार कु नक्षत्र कु योगादि अनेक कारण योगोमें निषेध किये हैं और श्रीपर्युषणादि धर्मकार्य्य तो विशेष करके चौमासामें रिक्तातिथिमें तथा कृष्ण चतुर्दशी अमावस्यादि तिथियोंमे कु वार कु नक्षत्र कु योगादि होते भी तिथि नियत पर्व करनेमे आते हैं इस बातका विवेक बुद्धिसे हृदयमे विचार किया होता तो विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्तसे महान् उत्तम पर्युषणा पर्व करनेका निषेधके लिये कदापि लेखनी नही चलाते यह बातपाठकवर्गको अच्छी तरहसे विचारनी चाहिये ,—

और भी आठमी तरहसे सुन लीजिये—कि पूर्वोक्त तीनो महाशयोने और चौथे न्यायाभोनिधिजीने भोले जीवों के आतमसाधनका धर्मकार्य्योंमें विघ्नकारक, अधिक मासको तुच्छ नपुसकादिसे लिखा है सो नि केवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि धर्मकार्य्योंमें अधिक मास उत्तम श्रेष्ठ महान् पुरुषरूप है (इसलिये अधिकमासमें धर्मकार्य्योंका निषेध नही हो सकता है) इस बातका विशेष विस्तार दृष्टान्त सहित युक्तिके साथ अच्छी तरहसे सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा सो पढनेसे सब नि सन्देह हो जावेगा ,—

और आगे फिर भी न्यायाभोनिधिजीने अधिक मास को निषेध करनेके लिये जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ९२ की पंक्ति १७ मे पृष्ठ ९३ की आदिमें अर्द्ध पंक्ति तक

लेना, देना, स्त्रियोको गर्भका होना और वृद्धि पामना, जन्मना, मरणा, और ससारिक व्यवहारमे व्यापारादि कृत्य करना, दुनीयामे रोगी, तथा निरोगी होना, और दान पुण्यादि भी करना, इत्यादि पाप और पुण्यके कार्य्य करना ही नही होता होगा तब तो मनुष्यादिकोको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराना न्यायाम्भोनिधिजीका बन सके परन्तु जो ऊपरके कहे, पाप, पुण्यके, कार्य्य दुनियाके लोग अधिक मासमे करते है इस लिये न्यायाम्भोनेधिजी का उपरका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे पक्षपाती हठ-ग्राहीके सिवाय आत्मार्थी बुद्धिजन कोई भी पुरुष मान्य नही कर सकते है इसको विशेष पाठकवर्ग विचारलेना ,—।

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखी है सो भी निर्युक्तिकार श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामिजीके विरुद्धार्थमे उत्सूत्रभाषणरूप और इस गाथाका सम्बन्ध तथा तात्पर्य्य समझे बिना भोले जीवोको सशयमे गेरे है इसका विशेष विस्तार सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम की समीक्षामे अच्छी तरहसे किया जावेगा सो पढ़के सर्वनिर्णय करलेना—और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ लिखा है कि (हे अब अधिक मासमे कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फूलना उचित नही है क्योंकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते है) इस लेखसे अधिक मासमे कणियरको फूलना ठहराते अबको नही फूलना ठहराकर कणियरको तुच्छ जातिकी और अबको उत्तम जातिका ठहराते है सोभी इन्होकी समझमें फेर है क्योंकि

श्रावण मास हुवे है तब भी दोनु श्रावण मासमें वर्षा भी खूब (गहरी) हुई है तथा वनस्पति को भी नवीन पैदा होते वृद्धि होते और हारी होते पाठकवर्गने भी प्रत्यक्ष देखा है और देश परदेशके सब वगीचोंमें भी दोनु मासोंमें फलों करके तथा फूलो करके वृक्ष प्रफुल्लित पाठकवर्गके देखनेमें आये होंगे और हरेक शहरोंमें वनमालि लोग अधिक मासमें शाक, भाजी, फल, फूल, वेचते हुवे सब पाठकवर्गके देखनेमें आते हैं यह बात तो हरेक अधिक मासमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है परन्तु कोई भी अधिक मासमें कोई भी देशमें कोई भी शहरमें शाक, भाजी, फल, फूलादि नवीन पैदा नही होते हैं तथा शहरमें भी वनमालि लोग वेचनेको नही आये हैं वैसा तो कोई भी पाठकवर्गके सुननेमें भी कभी नही आया होगा। यह दुनिया भरकी जगत् प्रसिद्ध बात है इस लिये अधिक मासको वनस्पति अवश्य ही अङ्गीकार करती है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोको अपना पक्षमें लानेके लिये लिख दिया—यह बडा ही अफसोस है।

और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजी (अधिक मासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोको अङ्गीकार न करना इसमें तो क्याही कहना) इस लेखको लिखके मनुष्यादिकोको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराते है इस पर तो मेरेको इतनाही कहना है कि न्यायाम्भोनिधिजीके कहनेसे तो सब दुनियाके सब लोगोको अधिक मासमें खाना, पीना, सोना, बैठना,

लेना, देना, स्त्रियोकी गर्भका होना और वृद्धि पामना, जन्मना, मरणा, और ससारिक व्यवहारमे व्यापारादि कृत्य करना, दुनीयामें रोगी, तथा निरोगी होना, और दान पुण्यादि भी करना, इत्यादि पाप और पुण्यके कार्य्य करना ही नही होता होगा तब तो मनुष्यादिकोको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराना न्यायाम्भोनिधिजीका बन सके परन्तु जो ऊपरके कहे, पाप, पुण्यके, कार्य्य दुनियाके लोग अधिक मासमे करते है इस लिये न्यायाम्भोनिधिजी का उपरका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे पक्षपाती हठग्राहीके सिवाय आत्मार्थी बुद्धिजन कोई भी पुरुष मान्य नही कर सकते है इसको विशेष पाठकवर्ग विचारलेना ,—।

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखी है सो भी निर्युक्तिकार श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामिजीके विरुद्धार्थमे उत्सूत्रभाषणरूप और इस गाथाका सम्बन्ध तथा तात्पर्य्य समझे बिना भोले जीवोको सशयमें गेरे है इसका विशेष विस्तार सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम की समीक्षामें अच्छी तरहसे किया जावेगा सो पढके सर्वनिर्णय करलेना—और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ लिखा है कि (हे अब अधिक मासमे कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फूलना उचित नही है क्योंकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते हैं) इस लेखसे अधिक मासमे कणियरको फूलना ठहराते अबको नही फूलना ठहराकर कणियरको तुच्छ जातिकी और अबको उत्तम जातिका ठहराते है सोभी इन्होकी समझमें फेर है क्योंकि

श्रावण मास हुवे है तब भी दोनु श्रावण मासमें वर्षा भी खूब (गहरी) हुई है तथा वनस्पति को भी नवीन पैदा होते वृद्धि होते और हानी होते पाठकवर्गने भी प्रत्यक्ष देखा है और देश परदेशके सब बगीचोंमें भी दोनु मासोंमें फलों करके तथा फूलो करके वृक्ष प्रफुल्लित पाठकवर्गके देखनेमें आये होंगे और हरेक शहरोंमें वनमालि लोग अधिक मासमें शाक, भाजी, फल, फूल, बेचते हुवे सब पाठकवर्गके देखनेमें आते हैं यह बात तो हरेक अधिक मासमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है परन्तु कोई भी अधिक मासमें कोई भी देशमें कोई भी शहरमें शाक, भाजी, फल, फूलादि नवीन पैदा नही होते हैं तथा शहरमें भी वनमालि लोग बेचनेको नही आये हैं वैसा तो कोई भी पाठकवर्गके सुननेमें भी कभी नही आया होगा। यह दुनिया भरकी जगत् प्रसिद्ध बात है इस लिये अधिक मासको वनस्पति अवश्य ही अङ्गीकार करती है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोको अपना पक्षमें लानेके लिये लिख दिया–यह बड़ा ही अफसोस है।

और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजी (अधिक मासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोको अङ्गीकार न करना इसमें तो क्याही कहना) इस लेखको लिखके मनुष्यादिकोको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराते है इस पर तो मेरेको इतनाही कहना है कि न्यायाम्भोनिधिजीके कहनेसे तो सब दुनियाके सब लोगोको अधिक मासमें खाना, पीना, सोना, बैठना,

लेना, देना, स्त्रियोको गर्भका होना और वृद्धि पामना, जन्मना, मरणा, और ससारिक व्यवहारमे व्यापारादि कृत्य करना, दुनीयामे रोगी, तथा निरोगी होना, और दान पुण्यादि भी करना, इत्यादि पाप और पुण्यके कार्य्य करना ही नही होता होगा तब तो मनुष्यादिकोको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराना न्यायाम्भोनिधिजीका बन सके परन्तु जो ऊपरके कहे, पाप, पुण्यके, कार्य्य दुनियाके लोग अधिक मासमे करते है इस लिये न्यायाम्भोनिधिजी का उपरका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे पक्षपाती हठग्राहीके सिवाय आत्मार्थी बुद्धिजन कोई भी पुरुष मान्य नही कर सकते है इसको विशेष पाठकवर्ग विचारलेना ,—।

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखी है सो भी निर्युक्तिकार श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामिजीके विरुद्धार्थमे उत्सूत्रभाषणरूप और इस गाथाका सम्बन्ध तथा तात्पर्य्य समझे बिना भोले जीवोको सशयमे गेरे है इसका विशेष विस्तार सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम की समीक्षामे अच्छी तरहसे किया जावेगा सो पढके सर्वनिर्णय करलेना—और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ लिखा है कि (हे अब अधिक मासमे कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फूलना उचित नही है क्योंकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते है) इस लेखसे अधिक मासमे कणियरको फूलना ठहराते अबको नही फूलना ठहराकर कणियरको तुच्छ जातिकी और अबको उत्तम जातिका ठहराते हैं सोभी इन्होकी समझमें फेर है क्योंकि

फणियर तो सभीही मासोमें फूलती है और आंबे भी सबीही मासोमें फूलके फलते है सो कलकत्ता, मुंबई वगैरह शहरोके अनेक पुरुष जानते है। और कणियर तो उत्तम जातिकी और अब तुच्छ जातिका कारण अपेक्षासे ठहरता है इसका विशेष खुलासा सातवे महाशयकी समीक्षामें करने में आवेगा और आगे फिर भी श्रीआवश्यक नियुक्ति की गाथा पर न्यायाम्भोनिधिजीने अपनी चातुराई को प्रगट कियीहै कि (अब देखाये हे मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है)

इस उपरके लेखकी समीक्षा पाठकवर्गको सुनाता हु कि न्यायाभोनिधिजी अच्छी जातीकी वनस्पतिको अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होनेका ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो न्यायाभोनिधिजी तथा इन्होके परिवारवाले भी जो अच्छी जातिकी वनस्पतिका अनुकरण करते होवेंगे तब तो अधिक मासको तुच्छही जानके खाना, पीना, देव दर्शन, गुरु वन्दन, विनय, भक्ति, वृद्धादिककी वैयावच्च, धर्मोपदेशका व्याख्यान, व्रत, प्रत्याख्यान, देवसी, राई, पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कार्य्य करके अपनी आत्माको पापकृत्योसे आलोचित देखकरके हर्षसें प्रफुल्लित चित्तवाले नही होते होवेंगे तब तो उपरका लेख वनस्पति सम्बन्धीका लिखना ठीक हैं और उपर कहे सो कृत्योसे आप हर्षित होते होवेंगे तब तो वनस्पतिकी बातको लिखके भोले जीवोको श्रीजिनाज्ञारूपी रत्नसे गेरनेका कार्य्य करना सो प्रत्यक्ष मिथ्यात्वका कारण है, और विद्वान् पुरुषोके आगे हास्यका हेतु है सो बुद्धिजन पुरुष विचार लेना ,—

रै भी दूसरा सुनो अचेतनरूप वनस्पतिको यह अ धिक मास उत्तम है किंवा तुच्छ है इस रीतिका कोई भी प्रकारका ज्ञान नही है इसलिये (अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है) यह अक्षर न्यायाम्भोनिधिजीके प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और भी मेरेको बडे ही अफसोसके साथ लिखना पडता है कि न्यायाम्भोनिधिजीने उपरमें वनस्पति सम्बन्धी उटपटाङ्ग लेख लिखते कुछ भी पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसे नही किया मालुम होता है क्योंकि–प्रथम। (अधिकमास को अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह अक्षर लिखे फिर आगे श्रीआवश्यकनिर्युक्ति की गाथा (शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें) लिखके भी भावार्थमे–दूसरा। (हे अम्ब अधिक मासमे कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फुलना उचित नही है) यह लिख दिया है इससे सिद्ध हुवा कि अधिकमासको वनस्पति जो कणियरकी जाति उसीने अङ्गीकार किया और प्रफुल्लित हुई और वनस्पतिकी जाति अबा भी अधिक मासको अङ्गीकार करके प्रफुल्लित होताथा तब उसको कहा कि तेरेको फूलना उचित नही है।

अब पाठकवर्ग विचार करो कि प्रथमका लेखमें अधिक मासको वनस्पति अङ्गीकार नही करनेका लिखा और दूसरे लेखमें अधिक मासमें वनस्पतिको फूलना अङ्गीकार करनेका लिखदिया इसलिये जो न्यायाम्भोनिधिजी प्रथम का अपना लेख सत्य ठहरावेगे तो दूसरा लेख मिथ्या हो जावेगा और दूसरा लेखको सत्य ठहरावेंगे तो प्रथमका लेख

मिथ्या हो जायेगा इसलिये पूर्वापर विरोधी (विसम्वादी) वाक्य लिखनेका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें कहा है (सो पाठ इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ८६। ८७। ८८ में छप गया है) उसीके अधिकारी न्यायाम्भोनिधिजी ठहर गये सो पाठकवर्ग विचार लेना ,—

और अधिकमासको तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते हैं सो तो निःकेवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारण करते है क्योंकि श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने अधिकमासको उत्तम माना है (इसका अधिकार इसी ही पुस्तकमें अनेक जगह वारम्वार छपगया है और आगे भी छपेगा) इस लिये अधिकमासको तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना उचित नही था सो भी पाठक वर्ग विचार लो ,—

और आगे फिर भी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ९३ की प्रथम पंक्तिसे १२ वी पंक्तितक ऐसे लिखा है कि (हे परीक्षक और भी युक्तियां आपको दिखाते है कि यह जगत्के लोक भी बारामासमें जिस जिस मासके साथ प्रतिबद्धकार्य्य होते है सो तिस तिस मासमें अधिक मासको छोडके अवश्य ही करते है जैसे कि आसोज मास प्रतिबद्ध दीवालीपर्व अधिक मासको छोडके आसोज मासमें ही करते है और आम्बलकी ओली छ मासके अन्तरमें करनेकी भी अधिक मासको छोडके आसोज मासमें और चैत्रमासमें करते है ऐसे अनेक लौकिक कार्य्य भी अपने माने मासमे ही करते है परन्तु आगे पीछे कोई भी नही करते है तो हे मित्र भाद्रवमास प्रतिबद्ध ऐसा परम पर्युषणा

पर्व और मासमे करना यह सिद्धान्तसे भी और लौकिक रीतिसे भी विरुद्ध है) यह न्यायाम्भोनिधिजी का उपरोक्त अपनी पुस्तकके पृष्ठ ९३ की पंक्ति १२ वी तकका लेख है,—

इस उपरके लेखकी विशेष समीक्षा खुलासाके साथ लौकिक और लोकोत्तर दृष्टान्त सहित युक्ति पूर्वक पाचवे महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामसे और सातवे महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामसे करनेमे आवेगा तथापि संक्षिप्तसे इस जगह भी करके दिखाता हु जिसमे प्रथमतो अधिक मासको निषेध करने के लिये न्यायाम्भोनिधिजी तथा इन्होके परिवारवाले और इन्होके पक्षधारी एक दो छोडके हजारो कुयुक्तिया करके बालदृष्टि रागियो को दिखाकर अपने दिलमे खुसी माने परन्तु जैन शास्त्रोकी स्याद्वादशैलीके जानकार आत्मार्थी विद्वान् पुरुषोके आगे एक भी कुयुक्ति नही चल सकती है किन्तु कुयुक्तियाके करने वाले उत्सूत्र भाषणका दूषणके अधिकारी तो अवश्यही होते है इस लिये उपरके लेखमे न्यायाभोनिधिजीने युक्तिया के नामसे वास्तविकमे कुयुक्तिया दिखा करके अधिक मासको गिनतीमे निषेध करना चाहा सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि दीवाली (दीपोत्सव) और ओलिया यह दोनु कार्य्य जैन शास्त्रोमे लोकोत्तर पर्वमे माने है सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायाभोनिधिजी ओलियाको लौकिक पर्व लिखते कुछ भी मिथ्या भाषणका भय न किया मालुम होता है, और दीवाली शास्त्रकारोने कार्त्तिक मास प्रतिबद्ध कही है सो जगत् प्रसिद्ध है और मारवाड पूर्व पञ्जाबादि देशोके जैनी अच्छी तरहसे जानते है और खास न्यायाभोनिधिजी

मिथ्या हो जायेगा इसलिये पूर्वापर विरोधी (विसम्वादी) वाक्य लिखनेका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें कहा है (सो पाठ इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ८६। ८७। ८८ में छप गया है) उसीके अधिकारी न्यायाम्भोनिधिजी ठहर गये सो पाठकवर्ग विचार लेना ,—

और अधिकमासको तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते हैं सो तो निः केवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारण करते है क्योंकि श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने अधिकमासको उत्तम माना है (इसका अधिकार इसी ही पुस्तकमें अनेक जगह वारम्वार छपगया है और आगे भी छपेगा) इस लिये अधिकमासको तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना उचित नही था सो भी पाठक वर्ग विचार लो ,—

और आगे फिर भी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ९३ की प्रथम पङ्क्तिसे १२ वी पङ्क्तितक ऐसे लिखा है कि (हे परीक्षक और भी युक्तिया आपको दिखाते है कि यह जगतके लोक भी बारहमासमें जिस जिस मासके साथ प्रतिबद्धकार्य्य होते है सो तिस तिस मासमें अधिक मासको छोडके अवश्य ही करते है जैसे कि आसोज मास प्रतिबद्ध दीवालीपर्व अधिक मासको छोडके आसोज मासमें ही करते है और आम्वलकी ओली छ मासके अन्तरमें करनेकी भी अधिक मासको छोडके आसोज मासमे और चैत्रमासमें करते है ऐसे अनेक लौकिक कार्य्य भी अपने माने माससे ही करते है परन्तु आगे पीछे कोई भी नही करते है तो हे मित्र भाद्रवमास प्रतिबद्ध ऐसा परम पर्युषणा

श्रीजिनाज्ञाके आराधक सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि जैसे पूर्वोक्त तीनो महाशयोंने अपने विद्वत्ताकी कल्पित बात जमानेके लिये पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापन करके अपना अनन्त ससार वृद्धिका भय नही किया तैसे ही चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजीने भी तीनो महाशयोंका अनुकरण करके पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर-गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करनेमे कुछ भी भय नही किया परन्तु मैंने भी भव्यजीवोंके शुद्ध श्रद्धा होनेके उपगारकी बुद्धिसे शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बातोंका देखाव करके कल्पित बातोंकी समीक्षाकर दिखाई है उसीको पढके सत्य बातका ग्रहण और असत्य बातका त्याग करके अपनी आत्माका कल्याण करने में उद्यम करेंगे और दृष्टिरागका पक्षपातको न रक्खेंगे यही मेरा पाठक वर्गको कहना है ,—

और न्यायाम्भोनिधिजीके लेख पर अनेक पुरुष सपूर्ण रीतिसें पूरा भरोसा रखतेथे कि न्यायाम्भोनिधिजी जो लिखेंगे सो शास्त्रानुसार सत्यही लिखेंगे ऐसा मान्यकरके उन्होंसे पूज्यभाव बहोत पुरुषोंका है। और मेरा भी था परन्तु शास्त्रोंका तात्पर्य्य देखनेसे जो जो न्यायाभोनिधिजीनें महान् उत्सूत्र भाषणरूप अनर्थ किया सो सो सब प्रगट होगया जिसका नमूनारूप पर्युषणा सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें कितनी जगह प्रत्यक्ष मिथ्या और उत्सूत्र भाषण किया है सो तो उपरकी मेरी लिखी हुई समीक्षा पढनेसे

श्रीवल्लभविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आवेगा, इसलिये शुद्ध समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ १५३ का पाठ सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमे अधिक मासको गिनती निषेध करना सो तो प्रत्यक्ष न्यायाम्भोनिधिजीका शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप है ,—

और दूसरा यह भी सुन लीजीये कि-श्रीनिशीथ चूर्णि कार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजने और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम चूलिकाकी बृहद्वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमान् हरिभद्र सूरिजी महाराजनें अधिकमासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य लिखी है तथापि इन महाराजके विरुद्धार्थमें न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् होते भी अधिक मासको कालचूला मानते भी निषेध करते है सो बडी ही विचारने योग्य आश्चर्य की बात है ,—

और दो श्रावण होनेसे भाद्रपदतक ८० दिन होते है तथा दो आश्विन होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं तथापि ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन न्यायाम्भोनिधिजीने अपनी कल्पनासें कालचूलाके बहाने बनाये सो कदापि नही बन सकते है इसका विस्तार तीनो महाशयो की और खास न्यायाम्भोनिधिजीकी भी समीक्षा मे अच्छी तरहसे उपरमे छप गया है सो पढके सर्वनिर्णय कर लेना —और दो श्रावण मास होनेसे दूसरे श्रावण मास प्रतिबद्ध पर्युषणा पर्व है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रव मासकी भ्रान्ति करना शास्त्र विरुद्ध है और अब न्याया-म्भोनिधिजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षाके अन्तमे

अब आगे पाचवे महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्ति-विजयजीने मानवधर्मसहिता नामा पुस्तकमे जो पर्युपणा सम्बन्धी लेख अधिक मासको निषेध करनेके लिये लिखा है उसकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु जिसमे प्रथमतो मानवधर्मसहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पक्कि १७ वी से पृष्ठ ८०१ की पक्कि२१॥ तक जैसा न्यायरत्नजीका लेख है वैसाही नीचे मुजब जानो ,—

[दो श्रावण होतो भी भादवेमे ही पर्युपणापर्व करना चाहिये, अगर कहा जाय कि–आपाढसुदी १४ चतुर्दशीसें ५० रोज लेना कहा यह कैसे सबुत रहेगा ? जवाब–कल्पसूत्रकी टीकामे पाठ है कि–अधिकमास कालपुरुपकी चूलिका यानी चोटी हे, जैसे किसी पुरुपका शरीर उचाईमे नापा जाय तो चोटीकी लबाई नापी नही जाती, इसी तरह कालपुरुपकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमे नही लिया जाता, कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनाना पञ्चाशदेव,–अगर लिया जाता हो तो पयुपणा पर्व–दूसरे वर्ष श्रावणमे और इस तरह अधिक महिनोके हिसावसे हमेशा उक्त पर्व फिरते हुवे चले जायगे, जैसे मुसल्मानोके ताजिये–हर अधिक मासमे बदलते रहते है, दूसरा यह भी दूपण आयगा कि–वर्षभरमे जो तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते हैं उनमें पञ्चमासिक प्रतिक्रमणपाठ बोलना पडेगा, शीतकालमे और उष्णकालमे तो अधिक महिना गिनतीमें नही लाना और चौमासेमे गिनतीमें लाकर श्रावणमे पयुपणा करना किस न्यायकी बात हुई ? अगर कहा जाय कि–पचास दिनकी गिनती

पाठवर्गको प्रत्यक्ष दिख आवेगा तथा और भी न्याया म्भोनिधिजीने जैनसिद्धान्तसमाचारी नामकी पुस्तकमें अनु मान १५० अथवा१६० शास्त्रोके विरुद्धार्थमें अनेक जगह प्रत्यक्ष मिथ्या तथा अनेक जगह मायावृत्तिरूप और अनेक जगह शास्त्रोके आगे पीछेके पाठ छोडके अधूरे अधूरे तथा शास्त्र कारके अभिप्रायके विरुद्ध अनेक जगह अन्याय कारक और अनेक सत्यबातोका निषेध करके अपनी कल्पित बातोका उत्सूत्र भाषणरूप स्थापन इत्यादि महान् अनर्थ करके भोले दृष्टिरागी गच्छ कदाग्रही बालजीवोंको श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाका मोक्षरूपी रस्तापरसे गेरके ससाररूपी मिथ्यात्व का रस्तामें फसानेके लिये जैन सिद्धान्त समाचारी, पुस्तक का नाम रखके वास्तविकमें अनन्त ससारकी वृद्धिकारक मिथ्यात्वरूप पाखण्डकी समाचारी न्यायाम्भोनिधिजीने प्रगट करके अपनी आत्माको इस ससाररूपी समुद्रमें क्या क्या इनामके योग्य ठहराई होगी तथा अब इन्होके परि वार वाले और इन्होके पक्षधारी भी उसी मुजब वर्तते है जिन्होको इस ससारमें क्या इनाम प्राप्त होगा सो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने ,–इस लिये श्रीसङ्घको और न्यायाम्भोनिधि जीके पक्षधारी तथा इन्होके परिवार वालोको उपर की पुस्तक सम्बन्धी बातोके लिये मेरा अभिप्राय इस पुस्तकके अन्तमें विनती पूर्वक जाहिर करनेमे आवेगा और पाचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजी तथा छठे महाशय श्रीवल्लभविजयजी और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षा मे प्रसङ्गोपात थोडी थोडी बातोका उपर की पुस्तक सम्बन्धी दर्शाव भी करनेमे आवेगा ,—

इति चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी सक्षिप्त समीक्षा समाप्त ॥

और दूसरा यह है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषोने सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, निर्युक्ति प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी कही है परन्तु एकावन ५१ मे दिने श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोको पर्युषणा करना नही कल्पे और एकावन दिने पर्युषणा करने वालोंको श्री जिनाज्ञाके लोपी कहे है सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायरत्नजी इतने विद्वान् हो करके भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके वचनको प्रमाण न करते हुए अनेक सूत्र, चूर्ण्यादि शास्त्रोके पाठोको उत्थापते हुए मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने भाद्रपदमें पयुषणापर्व करनेका लिखते कुछ भी उत्सूत्र भाषणका भय नहीं करते हैं यह बडाही अफसोस है,—

ओर दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे प्रत्यक्ष ८० दिन होते है तथा अधिकमास भी शास्त्रानुसार और न्याययुक्ति सहित अवश्य निश्चय करके गिनतीमे सर्वथा सिद्ध है सो उपरमे अनेक जगह छपगया है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करना भी उत्सूत्र भाषणरूप अन्याय कारक है तथापि न्यायरत्नजीने उत्सूत्र भाषणका विचार न करते अधिक मासकी गिनतीमे निषेध करनेके लिये जो जो विकल्प करके शास्त्रोके विरुद्धार्थमे भोले जीवोकी श्रद्धाभङ्ग होनेके लिये लिखा है उसीकी समीक्षा करता हु —जिसमे प्रथमतो दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसका अपनी कल्पनासे ५० दिन बनानेके लिये न्यायरत्नजी लिखते है कि—

[कल्पसूत्रकी टीकामे पाठ है कि अधिकमास काल-

लिख आती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन हो जायगें, उधर दोष आयगा, मत्वरमरीके पीछे ७० दिन शेष रखना–यह बात समवायाङ्गसूत्रमें लिखी है–उसका पाठ–वासाण सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइदिएहिं सेसेहिं, इसलिये यही प्रमाण वाक्य रहेगा कि–अधिकमास फाल्गुनपकी खोटी होनेसे गिनतीमें नही लेना, अधिक महिनेको गिनतीमें लेनेसे तीसरा यह भी दोष आयगा कि–चौवीस तीर्थंकरोके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमें आते हैं गिनतीमें वे भी बढ जायगें, फिर क्या ! तीर्थंकरोके कल्याणिक १२० से भी ज्यादे गिनना होगा? कभी नहीं, इस हेतुसे भी अधिकमास नही गिना जाता अधिक महिनेके कारणसे कभी दो भादवे हो तो दूसरे भादवेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसे दो आषाढमहिने होते हैं तब भी दूसरे आषाढमे चातुर्मासिककृत्य किये जाते हैं वैसे पर्युषणा भी दूसरे भादवेमे करना न्याययुक्त है।]

अब न्यायरत्नजीके उपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु जिसमें प्रथमतो (दो श्रावण हो तो भी भाद्रवेमेंही पर्युषणापर्व करना चाहिये) यह लिखना न्यायरत्नजीका शास्त्रोसे विरुद्ध है क्योंकि खास न्यायरत्नजी-केही परमपूज्य श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्योंने दो श्रावण होने में दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसका अधिकार उपरमें अनेक जगह और खास करके चारो महाशयोंके नामकी समीक्षामे अच्छी तरहसे छपगया है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें अपने पूर्वजोके विरुद्धार्थमें पर्युषणपर्व स्थापन करना न्यायरत्नजीको उचित नही है।

और दूसरा यह है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषोने सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, निर्युक्ति प्रकरणादि अनेक शास्त्रोमें मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी कही है परन्तु एकावन ५१ मे, दिने श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोको पर्युषणा करना नही कल्पे और एकावन दिने पर्युषणा करने वालोंकों श्री जिनाज्ञाके लोपी कहे है सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायरत्नजी इतने विद्वान् हो करके भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके वचनको प्रमाण न करते हुए अनेक सूत्र, चूर्ण्यादि शास्त्रोके पाठोको उत्थापते हुए मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करनेका लिखते कुछ भी उत्सूत्र भाषणका भय नही करते हैं यह बडाही अफसोस है,—

और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे प्रत्यक्ष ८० दिन होते है तथा अधिकमास भी शास्त्रानुसार और न्याययुक्ति सहित अवश्य निश्चय करके गिनतीमे सर्वथा सिद्ध हैं सो उपरमे अनेक जगह छपगया है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करना भी उत्सूत्र भाषणरूप अन्याय कारक है तथापि न्यायरत्नजीने उत्सूत्र भाषणका विचार न करते अधिक मासको गिनतीमे निषेध करनेके लिये जो जो विकल्प करके शास्त्रोके विरुद्धार्थमे भोले जीवोकी श्रद्धाभङ्ग होनेके लिये लिखा है उसीकी समीक्षा करता हु—जिसमें प्रथमतो दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते है जिसका अपनी कल्पनासे ५० दिन बनानेके लिये न्यायरत्नजी लिखते है कि—

[कल्पसूत्रकी टीकामे पाठ है कि अधिकमास काल-

पुरुषकी चूलिका यानी चोटी है जैसे किसी पुरुषका शरीर उंचाइमे नापा जाय तो चोटीकी लबाई नापी नही जाती है इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमे नही लिया जाता कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ— कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनाना पञ्चाशदेव]

इस उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमासको काल पुरुषकी चोटी लिखकर गिनतीमें नही लेनेका ठहराया है सो नि केवल श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने अधिक मासको दिनोमें पक्षोमें मासोमें वर्षोमें अनादिकाल हुवा निश्चय करके गिनतीमें लिया है आगे लेखेंगे और वर्त्तमान कालमें भी श्रीसीमधर स्वामीजी आदि तीर्थङ्कर गणधरादि महाराज महाविदेह क्षेत्रमें अधिक मासको गिनतीमें लेते हैं तैसेही इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें भी अनेक आत्मार्थी पुरुष अनेक शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक देशकालानुसार अधिक मासको अवश्यही गिनतीमें लेते हैं इस बातका अनेक जगह उपरमे अधिकार छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये अधिकमासको गिनतीमें नही लेनेका ठहराना न्यायरत्नजीका उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे प्रमाणिक नही हो सकता है।

और न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चूलिका कहकर चोटी अथात् घासकी तरह केशाकी चोटीवत् लिखते है, सो भी शास्त्रोके विरुद्ध है क्योकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चूलिका याने शिखरकी ओपमा गिनती करने योग्य दिवी है । जैसे। लक्ष योजनका सुमेरु,

पर्वतके चालीश योजनका शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोके शिखरो को और देव मन्दिरोके शिखरोको शास्त्रकारोने क्षेत्रचूलाकी ओपमा दिवी है नतु केशाकी चोटीवत् घासकी, और श्रीपञ्चपरमेष्टि मन्त्रके शिखररूप चार पदोकी तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रके शिखररूप दो अध्ययनको और श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके शिखर-रूप दो अध्ययनको शास्त्रकारोने भावचूलाकी ओपमा दिवी है जिसकी अवश्यही गिनती करनेमें आती है। तैसेही। चन्द्रसवत्सररूप कालपुरुषके शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग शास्त्रकारोने दिवी है और अधिक मास होनेसे तेरह मासोका अभिवद्धितसवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने कहा है सो अनेक शास्त्रोमें प्रसिद्ध है और खास करके अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा लिखने वाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज भी निश्चय करके गिनतीमेलेनेका लिखते है,और भी दूसरा सुनो कि–जैसे। श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके निज निज अगुलियोके प्रमाणसे मस्तक तक शरीरकी लबाई १०८ अगुलीकी होती है और मस्तक पर बारह अगुलीकी उष्णिका (शिखा) को शिखररूप चूलाकी ओपमा है जिसको सामिल लेकर १२० अगुलीका श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके शरीरके गिनतीका प्रमाण सबी शास्त्रकारोने कहा है। तैसेही। सवत्सररूप कालपुरुष का निज स्वभाविक प्रमाण ३५४ दिन, ११ घटीका और ३६ पलका है तथा सवत्सररूप कालपुरुषका शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी ओपमा है जिसका प्रमाण २९ दिन

पुरुषकी चूलिका यानी चोटी है जैसे किसी पुरुषका शरीर उचाइमे नापा जाय तो चोटीकी उचाइ नापी नही जाती है इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमे नही लिया जाता कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ—कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनाना पञ्चाशदेव]

इस उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमासको काल पुरुषकी चोटी लिखकर गिनतीमें नही लेनेका ठहराया है सो नि केवल श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने अधिक मासको दिनोमें पक्षोमें मासोमें वर्षोमें अनादिकाल हुया निश्चय करके गिनतीमें लिया है आगे लेवेंगे और वर्त्तमान कालमें भी श्रीसीमधर स्वामीजी आदि तीर्थङ्कर गणधरादि महाराज महाविदेह क्षेत्रमे अधिक मासको गिनतीमें लेते हैं तैसेही इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें भी अनेक आत्मार्थी पुरुष अनेक शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक देशकालानुसार अधिक मासको अवश्यही गिनतीमे लेते है इस बातका अनेक जगह उपरमें अधिकार छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये अधिकमासको गिनतीमे नही लेनेका ठहराना न्यायरत्नजीका उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे प्रमाणिक नही हो सकता है।

और न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चूलिका कहकर चोटी अर्थात् घासकी तरह केशाकी चोटीवत् लिखते है सो भी शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने चूलिका याने शिखरकी ओपमा गिनती करने योग्य दिवी है। जैसे। लक्ष योजनका सुमेरु,

पर्वतके चालीश योजनका शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोके शिखरो को और देव मन्दिरोके शिखरोको शास्त्रकारोने क्षेत्रचूलाकी ओपमा दिवी है नतु केशाकी चोटीवत् घासकी, और श्रीपञ्चपरमेष्टि मन्त्रके शिखररूप चार पदोको तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रके शिखररूप दो अध्ययनको और श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके शिखर-रूप दो अध्ययनको शास्त्रकारोने भावचूलाकी ओपमा दिवी है जिसकी अवश्यही गिनती करनेमें आती है। तैसेही। चन्द्रसवत्सररूप कालपुरुपके शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग शास्त्रकारोने दिवी है और अधिक मास होनेसे तेरह मासोका अभिवर्द्धितसवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने कहा है सो अनेक शास्त्रोमे प्रसिद्ध है और खास करके अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा लिखने वाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज भी निश्चय करके गिनतीमे लेनेका लिखते है, और भी दूसरा सुनो कि–जैसे। श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके निज निज अगुलियोके प्रमाणसे मस्तक तक शरीरकी लबाई १०८ अगुलीकी होती है और मस्तक पर बारह अगुलीकी उष्णिका (शिखा) को शिखररूप चूलाकी ओपमा है जिसको सामिल लेकर १२० अगुलीका श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके शरीरके गिनतीका प्रमाण सबी शास्त्रकारोने कहा है। तैसेही। सवत्सररूप कालपुरुप का निज स्वभाविक प्रमाण ३५४ दिन, ११ घटीका और ३६ पलका है तथा सवत्सररूप कालपुरुपका शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी ओपमा है जिसका प्रमाण २९ दिन

३० घटीका और ५८ पलका है जिसको मानिके लेकर २९ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे तेरह मासोंकी गिनती का हिसाबसे अभिवर्द्धित संवत्सर सबी शास्त्रकारोंने और खास श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी कहा है। और अधिक मासको कालचूला कहनेसे भी गिनतीमे अवश्यही लेना शास्त्रकारोंने कहा है इस सम्बन्धी इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ ४८ से ६५ तक तथा और भी अनेक जगह छपगया है सो पढनेसे सर्व निःसन्देह हो जावेगा इसलिये न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चोटी लिखकरके गिनतीमें नही लेनेका ठहराते हैं सो वृथा अपनी कल्पनासे भोले जीवोंकी शास्त्रानुसार सत्य बात परसे श्रद्धाभङ्ग कारक उत्सूत्र भाषण करते हैं सो ऊपरके लेखसे पाठकवर्ग विशेष अपनी बुद्धिसे भी विचार सकते हैं,—

और श्रीकल्पसूत्रकी टीकाका प्रमाण न्यायरत्नजीने दिखाया सो तो (अधेबुये पोपेधान, जैसेगुरु तैसेयजमान) की तरह करके अनेक शास्त्रोके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको पुष्ट किया है क्योंकि प्रथम श्रीधर्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावलीमे श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोके विरुद्धार्थमे अपनी कल्पनासे जैन शास्त्रोके अतीव गम्भीरार्थके तात्पर्य्यको समझे बिना उत्सूत्र भाषणरूप जैसे तैसे लिखा है उसीको देखके दूसरे श्रीजय-विजयजीने श्रीकल्पदीपिकामें तथा तीसरे श्रीविनयविजय जीने श्रीसुखबोधिकामे भी उसी तरहके उत्सूत्र भाषणके गप्पोको लिखे है और उसीका शरणा लेकरके चौथे न्यायाभो निधिजीने भी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमे अपनी

चातुराईके साथ उत्सूत्र भाषणकी बाते प्रगट किवी है और ऐसेही गाडरीया प्रवाहवत् उसी बातोको वर्त्तमानमे न्यायरत्नजो जैसे भी लिखते हैं परन्तु तत्त्वार्थको जरा भी नही विचारते है क्योकि श्रीविनयविजयजी वगैरह चारो महाशयोने कालचूलाके नामसे अधिक मासको गिनतीमे नही लेनेका शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमे ठहराया है जिसकी समीक्षा अच्छी तरहसे इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ५८से यावत् पृष्ठ २१६ तक उपरमे छप चुकी है सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा तथापि श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुख-बोधिकाके अनुसार अपनी अपनी चातुराइसे विशेष कुयुक्तियाके विकल्प उठा करके भोले जीवोको भ्रममें गेरनेके लिये न्यायरत्नजी वगैरहने वृथा परिश्रम किया है उन कुयुक्तियाका समाधान युक्तिपूर्वक लिखना महा सरु है जिसमे न्यायरत्नजीने श्रीकल्पसूत्रकी टीकाका पाठ श्री-विनयविजयजी कृत दिखाया सो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे मैंने उसीकी समीक्षा तो पहिलेही कर दिखाई है इसलिये श्रीविनयविजयजीकृत उत्सूत्र भाषण रूप उपरके पाठको न्यायरत्नजीको लिखना भी उचित नही है और पक्ष-ग्राहियोके सिवाय आत्मार्थी पुरुषोको मान्य करना भी उचित नही है याने सर्वथा त्यागने योग्य हैं सो उपरके लेखसे पाठकवर्ग भी अच्छी तरहसे विचार लेना ,—

और आगे फिर भी अधिक मासको गिनतीमे नही लेनेके लिये न्यायरत्नजीने अपनी चातुराईको प्रगट करके लिख दिखाई है कि (अगर लिया जाता हो तो पर्युषणा पर्व दूसरे वर्ष श्रावणमें और इस तरह अधिक महिनोके

हिसावमें हमेशा उक्त पत्र फिरते हुवे चले आयने जैसे मुस-ल्मानोके ताजिये हर अधिकमासमें बदलते रहते हैं) न्यायरत्नजीका इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित खेद उत्पन्न होता है और न्यायरत्नजीकी बड़ीही अज्ञता प्रगट दिखती है सोही दिखाता हु—जिसमें प्रथम तो आश्चर्य्य उत्पन्न होनेका तो यह कारण है कि स्याद्वाद, अनेकांत, अविसंवादी, अनन्तगुणी, परमोत्तम ऐसे श्रीसर्वज्ञ भगवान् श्रीजिनेन्द्र महाराजोंके कथन करे हुवे अत्युत्तम अहिंसा धर्मके वृद्धिकारक ऊर्द्ध गतिका रस्तारूप धर्म ध्यान दानपुण्य परोपकारादि उत्तमोत्तम शुभकार्य्योंका निधि शान्त चित्तको करने वाले और पापपङ्क (कर्मरूप मेल) को नष्टकरने वाले श्रीपर्युषणा पर्वके साथ उपरोक्त गुणोसे प्रतिकुल मिथ्यात्वी और चितविट्टबक पाखडरूप अधर्मकी वृद्धिकारक तथा छ (६) कायके जीवोका विनाश कारक नरकादि अधोगतिका रस्तारूप आर्त्तरौद्रादि युक्त ताजियाका दृष्टान्त न्यायरत्नजीनें दिखाया इसलिये मेरेको आश्चर्य्य उत्पन्न हुवा कि जो न्यायरत्नजीके अन्त करणमें सम्यक्त्व होता तो चिन्तामणिरत्नरूप श्रीपर्युषणापर्वके साथ कांचका टुकडारूप ताजियाका दृष्टान्त लिखके अपनी कल्पित वातको जमानेके लिये अधिक मासका निषेध कदापि नही दिखाते इस बातको पाठकवर्ग भी विचार लेना ,—

और बड़ा खेद उत्पन्न होनेका तो कारण यह है कि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और खास न्यायरत्नजीके पूज्य अपने श्रीतपगच्छके ही पूर्वा-

चार्य्योंने अनेक शास्त्रोमे अधिकमासको सर्वथा करके परिपूर्ण रीतिसें विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ निश्चय करके अवश्यही गिनतीमे लिया है जिसमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति १ तथा वृत्ति २ श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति ३ तथा वृत्ति ४ श्रीज्योतिषकरण्ड पयन्ना ५ तथा वृत्ति ६ श्रीप्रवचनसारोद्धार ७ तथा वृत्ति ८ श्रीसमवायाङ्गजीसूत्र ९ तथा वृत्ति १० श्रीजम्बुद्वीपप्रज्ञप्ति ११ तथा तीनकी दो (२) वृत्ति १३ इत्यादि अनेक शास्त्रोके पाठ न्यायरत्नजीनें देखे है जिसमें अधिक मासको गिनतीमें लिया है जिसमें भी श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्ति तो न्यायरत्नजीने एकवार नही किन्तु अनेकवार देखी है उसी में तो विशेष करके समयादि कालकी व्याख्या किवी है कि असख्याता समय जानेसे एक आवलिका, १, ६७, ७७, २१६, आवलिका जानेसे एकमुहूर्त्त होता है त्रीश मुहूर्त्तसें एक अहोरात्रि रूप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवस जानेसे एकपक्ष होता है दो पक्षसे एकमास होता है दो माससे एक ऋतु होता है छ ऋतुयोसे एक सम्वत्सर होता है इसी री तरहसें नक्षत्र सम्वत्सरके, चन्द्रसम्वत्सरके, ऋतु सम्वत्सर के, सूर्य्यसम्वत्सरके, और अभिवर्द्धितसम्वत्सरके, मुहूर्त्तोका जूदा जूदा हिसाब विस्तारपूर्वक दिखाकर पाच सम्वत्सरोका एक युगके ५४९०० मुहूर्त्त दिखाये है जिसमें एक युगके पाच सवत्सरोमें दो अधिक मासके भी मुहूर्त्तोकी गिनती साथमे लेनेसे ही ५४९०० मुहूर्त्तका हिसाब मिलता है अन्यथा नही इस तरहसे कालकी व्याख्या समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास, वर्ष, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरोपम और उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी कालसे अनन्तकालकी

ग्यारयाकी गिनतीमें अधिक मासको प्रमाण किया है और अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण कारणादि लिखित पूर्वक श्रीमलयगिरिजी महाराजने श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्तिमें विस्तार किया है इस ग्रन्थको न्यायरत्नजीने अनेक बार देखा है और श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है और खास न्यायरत्नजीने मानवधर्म्मसंहिता पुस्तकके पृष्ठ २४ की पङ्क्ति २० वी से २२॥ पङ्क्ति तक ऐसे लिखा है कि (उत्सूत्र भाषण समान कोई बड़ा पाप नही सब क्रियाधरी रहेगी उक्त पाप दुर्गतिको ले जायगा जमालिजीने गौतमगणधर जैसी क्रिया किइ लेकिन देख लो किस गतिको जाना पड़ा) और पृष्ठ ५८८ की पङ्क्ति १४-१५ में फिर भी लिखते हैं कि (सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्रके पाठको उत्थापन करेगा उसका निर्वाह होना मुश्किल है) इस लेखपरसे सज्जन पुरुषोको विचार करना चाहिये कि-श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोने अधिकमास को गिनतीमें प्रमाण किया हुवा है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है तथापि पक्षपातके जोरसे न्यायरत्नजीने अनन्ततीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ भगवानोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करनेके लिये सर्वज्ञ प्रणीत अनेक शास्त्रोंके पाठोको उत्थापन करके उत्सूत्र भाषणका बड़ा भारी पाप दुर्गतिको देनेवाला तथा संसारमें रुलानेवाला अपना लिखा हुवा उपरका लेखको भी सर्वथा भूल गये इसलिये मेरेको बड़ा खेद उत्पन्न हुवा कि न्यायरत्नजी जानते हुए भी उत्सूत्र भाषणरूप

ससारकी खाडमें गिरे और अपनी आत्माका बचाव तो करना दूर रहा परन्तु भोले जीवोको भी उसी रस्ते पहुचाये सो उपरके लेखसे पाठकवर्ग विशेष विचार लेना ,—

और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये न्यायरत्नजीने मुसलमानोके ताजिये हरेक अधिक मासके हिसावसे फिरनेका दृष्टान्त दिखाके सर्वज्ञकथित पर्युषणा पर्व भी अधिक मासके हिसावसे फिरते रहनेका न्यायरत्न जीने लिखा सो वडी अज्ञता प्रगट किवी है जिसका कारण यह है कि श्रीसर्वज्ञ भगवानोने मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी खास करके विशेष जीवदयादिकके ही कारणे वर्षा ऋतुमे आषाढ चौमासीसे उपरके लिखे दिनोके गिनतीकी मर्य्यादा [प्रमाण] से निश्चय करके श्रावण अथवा भाद्रपद मेंही—कारण, कार्य्य, ऋतु, मास, तिथिका नियमसे ही श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है तथापि न्याय-रत्नजी अधिक मासके हिसावसे पर्युषणापर्व फिरते हुए चले जानेका लिखकर जैन शास्त्रोके विरुद्धार्थमें आषाढ, ज्यैष्ठ, वैशाखादिमें पर्युषणा होनेका दिखाते है इसलिये न्याय रत्नजीकी अज्ञतासे कुछ कम हो तो पाठकवर्ग सत्यार्थकी बुद्धिसे स्वय विचार लेना ,—

तथा और भी न्यायरत्नजीके विद्वत्ताकी चातुराईका नमुना सुनिये—कि श्रीजैन शास्त्रोमें पाच प्रकारके सवत्सरो से एक युगका प्रमाण कहा हैं जिसमें सूर्य्यकी गतिका हिसावसे सूर्य्यसवत्सरकी अपेक्षासे जैनमे मासवृद्धिका अभाव हैं परन्तु चन्द्रकी गतिका हिसावसे चन्द्रसवत्सरकी अपेक्षासे एक युगकी पूरतीकेही लिये खास दो अधिकमास

होते हैं जब अधिकमास जिस संवत्सरमें होता है तब उस संवत्सरमें तेरह मास होनेसे संवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित कहा जाता है—अधिक मासको गिनतीमें लिया जिससे संवत्सरका भी प्रमाण बढ़ गया और युगकी पूर्त्तीका भी बरोबर हिसाब मिलगया—अधिक मास अनादिकाल हुए होता रहता है तथा मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन वर्षा ऋतुमेंही करना कहा है यह बात आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंसे छुपी हुई नही है याने प्रसिद्ध है इस-लिये श्रीपर्युषणापर्व अधिक मास हो तो भी वर्षा ऋतुके सिवाय और ऋतुयोंमें कदापि नही हो सकते हैं और मुसलमान लोग तो सिर्फ एक चन्द्र दर्शनकी अपेक्षासे २९।३० दिनका महिना मान्यकरके बारह महिनोके ३५४ दिनका एक वर्ष मानते हैं और अधिक मासका भिन्न व्यवहारको नही मानते हैं याने चन्द्रके हिसाबसे बारह बारह महिनोका एक एक वर्ष मानते चले जाते हैं परन्तु अपने माने मास तारीख नियत ताजियें भी करते रहते हैं और जैन तथा दूसरे हिन्दू अधिक मासको मान्य करके तेरह मासोका वर्ष मानते है तथा अपने माने मास, तिथि नियत पर्व भी करते है इसलिये जैन तथा दूसरे हिन्दूयाके तो ऋतु, मास, तिथि नियत पर्व अधिक मास होतो भी फिरते हुए नही चले जाते है परन्तु मुसलमान लोग अधिक मासको नही मानते हुए अनुक्रमे सीधा हिसाबसें ही वर्त्तते है इस लिये लौकिकमें अधिक मास होनेसे मुसलमानोके ताजिये अमुक ऋतुमे तथा अमुक लौकिक मासमे होते है यह

नियम नही रहता है याने हर अधिक मासके हिसाबसे पश्चादानुपूर्वीसें अर्थात् आषाढ, ज्येष्ठ, वैशाख, चैत्र, फाल्गुन, माघ, पौषादि हरेक मासोमें होते है इसलिये मुसल्मानोंके ताजिये फिरनेका दृष्टान्त लिखके श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका दिखाना सो पूरी अज्ञताका कारण है—इसलिये श्रीसर्वज्ञ कथित श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके सबन्धी मुसल्मानोके ताजियाका दृष्टान्त उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे न्यायरत्नजीको लिखना उचित नही है इस बातको सज्जन पुरुष ऊपरके लेखसे स्वय विचार सकते है ,—

और आगे फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी कल्पनासें लिखा है कि (दूसरा यह भी दूषण अयगा कि वर्षभरमें जो तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते है उसमे पञ्चमासिक प्रतिक्रमणका पाठ बोलना पडेगा शीतकालमें और उष्णकालमे तो अधिक महिना गिनतीमे नही लाना और चौमासेमें गिनतीमें लाकर श्रावणमें पर्युषणा करना किस न्याय की बात हुई) इस लेखसे न्यायरत्नजीनें जैनशास्त्रो का तथा अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने वालोका तात्पर्य्यको समझे विना दूसरा दूषण लगाया सो मिथ्याभाषण करके बडी भूल करी है क्योकि जिस चौमासेमें अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित चौमासा कहा जाता है सवत्सरवत् अर्थात् जिस सवत्सरमें अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहते है इसी ही न्यायानुसार अधिक मास होवे तब उस चौमासेमें पञ्चमास तथा सवत्सरमें तेरह मासका पाठ सर्वत्र प्रतिक्रमणमे अवश्य

होते हैं जब अधिकमास जिस संवत्सरमें होता है तब उस संवत्सरमें तेरह मास होनेसे संवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित कहा जाता है—अधिक मासको गिनतीमें लिया जिससे संवत्सरका भी प्रमाण बढ़ गया और युगकी पूर्त्तीका भी बरोबर हिसाब मिलगया—अधिक मास अनादिकाल हुए होता रहता है तथा मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन वर्षा ऋतुमेंही करना कहा है यह बात आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंसे छुपी हुई नही है याने प्रसिद्ध है इस-लिये श्रीपर्युषणापर्व अधिक मास हो तो भी वर्षा ऋतुके सिवाय और ऋतुयोंमें कदापि नही हो सकते हैं और मुसलमान लोग तो सिर्फ एक चन्द्र दर्शनकी अपेक्षासे २९।३० दिनका महिना मान्यकरके बारह महिनोंके ३५४ दिनका एक वर्ष मानते है और अधिक मासका भिन्न व्यवहारको नही मानते हैं याने चन्द्रके हिसाबसे बारह बारह महिनोंका एक एक वर्ष मानते चले जाते है परन्तु अपने माने मास तारीख नियत ताजियें भी करते रहते हैं और जैन तथा दूसरे हिन्दू अधिक मासको मान्य करके तेरह मासोंका वर्ष मानते है तथा अपने माने मास, तिथि नियत पर्व भी करते है इसलिये जैन तथा दूसरे हिन्दूयोंके तो ऋतु, मास, तिथि नियत पर्व अधिक मास होतो भी फिरते हुए नही चले जाते है परन्तु मुसलमान लोग अधिक मासको नही मानते हुए अनुक्रमसे सीधा हिसाबसें ही वर्त्तते है इस लिये लौकिकमें अधिक मास होनेसे मुसलमानोंके ताजिये अमुक ऋतुमे तथा अमुक लौकिक मासमे होते है यह

नियम नही रहता है याने हर अधिक मासके हिसाबसे पश्चादानुपूर्वीसें अर्थात् आषाढ, ज्यैष्ठ, वैशाख, चैत्र, फाल्गुन, माघ, पौषादि हरेक मासोमें होते है इसलिये मुसल्मानोंके ताजिये फिरनेका दृष्टान्त लिखके श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका दिखाना सो पूरी अज्ञताका कारण है—इसलिये श्रीसर्वज्ञ कथित श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके सबन्धी मुसल्मानोके ताजियाका दृष्टान्त उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे न्यायरत्नजीको लिखना उचित नही है इस बातको सज्जन पुरुष ऊपरके लेखसे स्वय विचार सकते है,—

और आगे फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी कल्पनासें लिखा है कि (दूसरा यह भी दूषण अयगा कि वर्षभरमें जो तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते है उसमे पञ्चमासिक प्रतिक्रमणका पाठ बोलना पडेगा शीतकालमे और उष्ण कालमें तो अधिक महिना गिनतीमे नही लाना और चौमासेमें गिनतीमें लाकर श्रावणमें पर्युषणा करना किस न्याय की बात हुई) इस लेखसे न्यायरत्नजीनें जैनशास्त्रो का तथा अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने वालोका तात्पर्य्यको समझे बिना दूसरा दूषण लगाया सो मिथ्या-भाषण करके बडी भूल करी है क्योकि जिस चौमासेमें अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित चौमासा कहा जाता है सवत्सरवत् अर्थात् जिस सवत्सरमे अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित सवत्सर कहते है इसी ही न्यायानुसार अधिक मास होवे तब उस चौमासेमें पञ्चमास तथा सवत्सरमें तेरह मासका पाठ सर्वत्र प्रतिक्रमणमे अवश्य

ही बोला जाता है इसका विशेष निर्णय आगेमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा ,—

और शीतकाल हो तथा उष्णकाल हो अथवा वर्षा काल हो परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें जो अधिकमास होगा उसी कालमें अवश्य ही गिनतीमें करके प्रमाण करना यह तो स्पष्ट शिष्ट न्याययुक्ति की बात है जैसे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास बढनेमें गिनतीमें लिये जाते है तैसे ही शीतकालमें तथा उष्णकालमें भी जो मास बढे सो ही गिनाजाता है इस लिये न्यायरत्नजीनें उपरका लेखमें शीत कालमें और उष्णकालमें अधिक मासको गिनतीमें नही लानेका लिखती वखत विवेक बुद्धिसे विचार किया होता तो मिथ्या भाषणका दूषण नही लगता सो पाठकवर्ग विचार लेना,—

और इसके अगाडी फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी विद्वत्ताकी चातुराई को प्रगट करनेके लिये लिखा है कि [अगर कहा जाय कि पचाशदिनकी गिनती लिइजाती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन होजायेगे उधर दोष आयगा सवत्सरीके बाद ७० दिन शेष रखना यह बात सम वायाङ्ग सूत्रमें लिखी हैं उसका पाठ—वासाण सवीसइराइ मासे वइक्कन्ते सत्तरिराइदिएहि सेसेहि,—इस लिये वही प्रमाणवाक्य रहेगा कि अधिक मास कालपुरुषकी चोटी होनेसे गिनतीमें नही लेना] इस लेखपर मेरेको बडे अफ सोसके साथ लिखना पडता है कि न्यायरत्नजीको विद्वत्ताकी चातुराई किस ज[illegible]ली गई होगी सो अपने नामके विद्यासागरादि [illegible]नुचितरूप कार्य्यकरके उपरके

लेखमे दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसके ५० दिन बनालिये और दो आश्विन होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासें बना लिये परन्तु श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके कथित सूत्र सिद्धान्तोके पाठोका उत्थापनरूप मिथ्यात्वका कुछ भी भय नही किया क्योकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने अनेक सूत्र सिद्धान्तोमें समयादि सूक्ष्मकालकी गिनतीसें एकयुगके दोनु ही अधिक मासको गिनतीमें लिये है इसका विस्तार उपरमें अनेक जगह छप गया हैं और षट्द्रव्यरूप वस्तुयोमे एककाल द्रव्यरूप वस्तु भी शाश्वती है जिसके अनन्ते कालचक्र व्यतीत होगय है और आगे भी अनन्ते कालचक्र व्यतीत होवेगे जिसमें चन्द्र, सूर्य्यके, शाश्वते विमान होनेसे चन्द्रके गतिका हिसाबसें अनन्ते अधिक मास भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके सामने व्यतीत होगये और आगे भी होवेंगे इस लिये सम्यक्त्वधारी मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणी होगा सो तो कालद्रव्यकी गिनतीके दो अधिक मास तो क्या परन्तु एक समय मात्र भी गिनती में कदापि निषेध नही कर सकता है तथापि न्यायरत्नजी जैनश्वेताम्बर धर्मोपदेष्टा तथा विद्यासागरका विशेषण धारण करते भी श्रीसर्वज्ञ कथित सिद्धान्तोमे कालद्रव्य रूप शाश्वती वस्तुका एक समयमात्र भी निषेध नही हो सके जिसके बदले एक दम दो मासकी गिनती निषेध करके श्रीजैनश्वेताम्बरमे उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्यात्वके उपदेष्टा होनेका कुछ भी भय नही करते है, हा अतीव खेद,—इस लेखका तात्पर्य्य यह है कि जैन शास्त्रानुसार

ही गीना जाता है इसका विशेष निर्णय आगेमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा ,—

और शीतकाल हो तथा उष्णकाल हो अथवा वर्षा काल हो परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें जो अधिकमास होगा उसी कालमें अवश्य ही गिनतीमें करके प्रमाण करना यह तो स्वयं सिद्ध न्याययुक्ति की बात है जैसे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास बढनेसें गिनतीमें लिये जाते हैं तैसे ही शीतकालमें तथा उष्णकालमें भी जो मास बढे सो ही गिनाजाता है इस लिये न्यायरत्नजीनें उपरका लेखमें शीत कालमें और उष्णकालमें अधिक मासको गिनतीमें नही लानेका लिखती वखत विवेक बुद्धिसे विचार किया होता तो मिथ्या भाषणका दूषण नही लगता सो पाठकवर्ग विचार लेना,—

और इसके अगाडी फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी विद्वत्ताकी चातुराई को प्रगट करनेके लिये लिखा है कि [अगर कहा जाय कि पचाशदिनकी गिनती लिइजाती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन होजायेगे उधर दोष आयगा सवत्सरीके बाद ७० दिन शेष रखना यह बात समवायाङ्ग सूत्रमें लिखी हैं उसका पाठ—वासाण सवीसइराइ मासे वइक्कन्ते सत्तरिराइदिएहि सेसेहि,—इस लिये वही प्रमाणवाक्य रहेगा कि अधिक मास कालपुरुषकी चोटी होनेसे गिनतीमें नही लेना] इस लेखपर मेरेको बडे अफसोसके साथ लिखना पडता है कि न्यायरत्नजीको विद्वत्ताकी चातुराई किस जगहने चली गई होगी सो अपने नामके विद्यासागरादि विशेषणेको अनुचितरूप कार्य्यकरके उपरके

उत्थापन करते है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी उपरका पाठ श्रीगणधर महाराजने कहा है तथापि इसका तात्पर्य्य समझे बिना दो श्रावण होनेसे पाच मासके १५० दिनका वर्षाकालमे उपरका पाठ सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमे न्यायरत्नजी लिखते है इसलिये न्यायरत्नजीको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठोका तात्पर्य्य समझमे नही आया मालुम होता है तो फिर न्यायरत्न का और विद्यासागरका जो विशेषण श्रीशान्तिविजयजी ने धारण किया है सो कैसे सार्थक हो सकेगा सो पाठक वर्ग सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेना ,—

और न्यायरत्नजी कालपुरुषकी चोटीकी भ्रान्तिसे अधिक मासको गिनतीमे निषेध करते है सो भी जैन शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे बिना उत्सूत्र भाषण करते हैं इसका निर्णय इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४८ से ६५ तक तथा चारो महाशयोके नामकी समीक्षामे और खास न्यायरत्नजीकेही नामकी समीक्षामे उपरमे पृष्ठ २२० । २२१ । २२२ तक अच्छी तरहसे खुलासाके साथ छप गया है सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा कि शिखररूप चूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य दिनी है इसलिये चोटी कहके निषेध करनेवाले मिथ्यावादी है सो उपरोक्त लेख से पाठकवर्ग स्वय विचार लेना ,—

और इसके अगाडी फिर भी न्यायरत्नजीने लिखा है कि (अधिक महिनेको गिनतीमे लेनेसे तीसरा यह भी दोष आयगा कि चौइस तीर्थङ्करोके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमे आते हैं गिनतीमें वे भी बढ जायगे

एक समय मात्र भी जो काल अतीत हो जावे उसको अव उपही गिनती करनेमें आती है तो फिर दो अधिक मासको गिनतीमे लेने इसमे तो क्याही कहना याने दो अधिक मासकी निश्चय करके अवश्यही गिनती करना सोही सम्य क्त्व धारियोंको उचित है इसलिये दो अधिक मासकी गिनती निषेध करके ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन न्यायरत्नजीनें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी कल्पनासे बनाये सो कदापि नही बन सकते है इसलिये दो श्रावण होनेसे अनेक शास्त्रानुसार पचास दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना और पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन भी अनेक शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते है जिसको मान्य करने मे कोई दूषण नही है तथापि न्यायरत्नजीनें दूषण लगाया सो मिथ्या है इस उपरके लेखका विशेष विस्तार तीनों महाशयोके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ११७ से पृष्ठ १२८ तक तथा चौथे महाशयके नामकी समीक्षामें भी पृष्ठ १७४ से पृष्ठ १८५ तक भी अच्छी तरहसे सूत्रकार श्री गणधर महाराजके तथा वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय सहित युक्तिपूर्वक छप चुका है सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा ,—

तथा थोडासा और भी सुन लिजीये कि, श्रीसम-वायाङ्गजी सूत्रमे श्रीगणधर महाराजने तथा वृत्तिकार महाराजने अनेक जगह खुलासापूर्वक अधिक मासको गिनतीमे प्रमाण किया है तथापि न्यायरत्नजी हो करके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिक मासकी गिनती निषेध करके मूलसूत्रके पाठोको तथा वृत्तिके पाठोको

उत्थापन करते है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी उपरका पाठ श्रीगणधर महाराजने कहा है तथापि इसका तात्पर्य्य समझे बिना दो श्रावण होनेसे पाच मासके १५० दिनका वर्षाकालमे उपरका पाठ सूत्रकार तथा वृत्ति-कार महाराजके विरुद्धार्थमे न्यायरत्नजी लिखते हे इसलिये न्यायरत्नजीको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठोका तात्पर्य्य समझमे नही आया मालुम होता है तो फिर न्यायरत्न का और विद्यासागरका जो विशेषण श्रीशान्तिविजयजी ने धारण किया है सो कैसे सार्थक हो सकेगा सो पाठक वर्ग सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेना ,—

और न्यायरत्नजी कालपुरुषकी चोटीकी भ्रान्तिसे अधिक मासको गिनतीमे निषेध करते है सो भी जैन शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे बिना उत्सूत्र भाषण करते है इसका निर्णय इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४८ से ६५ तक तथा चारो महाशयोके नामकी समीक्षामे और खास न्यायरत्नजीकेही नामकी समीक्षामे उपरमे पृष्ठ २२० । २२१ । २२२ तक अच्छी तरहसे खुलासाके साथ छप गया है सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा कि शिखररूप चूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य दिनी है इसलिये चोटी कहके निषेध करनेवाले मिथ्यावादी है सो उपरोक्त लेख से पाठकवर्ग स्वय विचार लेना ,—

और इसके अगाडी फिर भी न्यायरत्नजीने लिखा हे कि (अधिक महिनेको गिनतीमे लेनेसे तीसरा यह भी दोष आयगा कि चौइस तीर्थङ्करोके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमे आते हैं गिनतीमें वे भी बढ जायगे

फिर क्या तीर्थङ्करोंके कल्याणिक १२० से भी ज्यादे गिनना होगा क्या नही इस हेतुसे भी अधिक मास नही गिना जाता) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकगणको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमासको गिनतीमें लेने वालोंको तीसरा दूषण लगाया इस पर तो मेरे को इतनाही कहना उचित है कि न्यायरत्नजीने श्री अनन्ततीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना करके खूब मिथ्यात्व बढ़ाया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराज अधिक मासको गिनतीमें मान्य करते हैं सो अनेक सिद्धान्तोंमें प्रसिद्ध है और न्यायरत्नजी अधिक मासको गिनतीमें मान्य करने वालोंको दूषण लगाते हैं जिससे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी प्रत्यक्ष आशातना होती है इसलिये जो न्यायरत्नजीको श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनासें अनन्त संसार वृद्धिका भय लगता हो तो अधिक मासको गिनतीमें लेने वालोंको दूषण लगाया जिसकी आलोचना लेकर अपनी आत्माको दुर्गतिसे बचाना चाहिये आगे न्यायरत्नजीकी जैसी इच्छा मेरा तो धर्मबन्धुकी प्रीतिसे लिखना उचित है सो लिख दिखाया है और अधिक मासको श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने गिनतीमें मान्य किया है उसीके अनुसार कालानुसार युक्तिपूर्वक वर्त्तमानमें भी अधिक मासको आत्मार्थी पुरुष मान्य करते हैं जिन्होको एक भी दूषण नही लग सकता है परन्तु कल्पित दूषणोको लगाने वालोको तो उत्सूत्र भाषणरूप अनेक दूषणोके अधिकारी होना पडता है सो आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुष इन्ही पुस्तकके पढनेसे स्वय विचार सकते हैं।

और अनन्ते कालचक्र हुए अधिक मास भी होता रहता है तैसेही अनन्त चौवीशी होगई जिसमें श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके कल्याणक भी होते रहते हैं परन्तु किसीने भी कल्याणक वढ जानेके भयसें अधिक मासकी गिनती निषेध नही करी है तथापि इस पञ्चमें कालके विद्यासागर न्याय-रत्नका विशेषण धरानेवाले श्रीशान्तिविजयजी इतने वडे विद्वान् कहलाते भी जैन शास्त्रोके गम्भीरार्थको समझे विना कल्याणक वढ जानेके भयसे अधिक मासकी गिनती निषेध करते है यह भी एक अलौकिक आश्चर्य्यकी वार्त हैं क्योंकि जैन ज्योतिषशास्त्रानुसार मासवृद्धिके कारणसे जव दो पौष अथवा दो आषाढ होते थे तब उस समय कोई भव्य जीवोको श्रीतीर्थङ्कर महाराजोके कल्याणककी तपश्चर्य्यादि करनेका इरादा होता था तब पहिले श्री-ज्ञानीजी महाराजको पूछके पीछे करते थे जिसमे दो मासके कारणसे कोई भगवान्का प्रथम मासमें कल्याणक होया होवे उसी कल्याणकको प्रथम मासमें आराधन करते थे और कोई भगवान्का दूसरे मासमें कल्याणक होया होवे उसी कल्याणकको दूसरे मासमें आराधन करते थे जिससें जिन जिन भगवान् का जो जो कल्याणक मास वृद्धिके कारणसे प्रथम मासमें अथवा दूसरे मासमे होया होवे उसीको उसी मुजब श्रीज्ञानीजी महाराजको पूछके आराधन करते थे, पक्षवत्, अर्थात् अमुक भगवान् का अमुक कल्याणक अमुक मासके प्रथम पक्षमें होया होवे उसीको प्रथम पक्षमें आराधन करते थे और दूसरे पक्षमें होया होवे उसीको दूसरे पक्षमे आराधन करते थे उसी तरह

फिर क्या तीर्थंकरोंके कल्याणिक १२० है सो क्यों गिनना होगा कभी नही इस हेतुसे भी अधिक मास नही गिना जाता) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमासको गिनतीमें लेने वालोंको तीसरा दूषण लगाया इस पर तो मेरे को इतनाही कहना उचित है कि न्यायरत्नजीने श्री अनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातना करके खूब मिथ्यात्व बढाया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराज अधिक मासको गिनतीमें मान्य करते हैं सो अनेक सिद्धान्तोंमें प्रसिद्ध है और न्यायरत्नजी अधिक मासको गिनतीमें मान्य करने वालोको दूषण लगाते हैं जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी प्रत्यक्ष आशातना होती है इसलिये जो न्यायरत्नजीको श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातनासें अनन्त ससार वृद्धिका भय लगता हो तो अधिक मासको गिनतीमें लेने वालोको दूषण लगाया जिसकी आलोचना लेकर अपनी आत्माको दुर्गतिसे बचाना चाहिये आगे न्यायरत्नजीकी जैसी इच्छा मेरा तो धर्मबन्धुकी प्रीतिसे लिखना उचित है सो लिख दिखाया है और अधिक मासको श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोने गिनतीमें मान्य किया है उसीके अनुसार कालानुसार युक्तिपूर्वक वर्त्तमानमें भी अधिक मासको आत्मार्थी पुरुष मान्य करते है जिन्होको एक भी दूषण नही लग सकता है परन्तु कल्पित दूषणोको लगाने वालेको तो उत्सूत्र भाषणरूप अनेक दूषणोके अधिकारी होना पडता है सो आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुष इन्ही पुस्तकके पढनेसे स्वय विचार सकते है।

गिनतीमें लेनेवालोको दूषण लगाना यह तो न्यायरत्नजीका हठवादसे प्रत्यक्ष अन्यायकारक है सो पाठकवर्ग भी विचार सकते है ।

और भी दूसरा सुनो–खास न्यायरत्नजीने संवत् १९६६ की सालका वयान याने शुभाशुभका फल संक्षिप्तसे जैनपत्र के साथमें जूदा हेण्डबिलमें प्रसिद्ध किया है उसीमें [इस वर्षमे श्रावण महिना दो है ऐसा लिखा है तथा अधिक मास के कारणसे दोनु ही श्रावणकी गिनती सहित तेरह मासो के प्रमाणसे तेरह अमावस्या और तेरह पूर्णिमाकी सब घडियोकी गिनती दिखाइ है और प्रथम श्रावण वदी ११ तथा १२ के दिन और दूसरे श्रावण वदी १० के दिन अच्छा योग्य बताया है और प्रथम श्रावण शुदीमें सप्त नाडीचक्रमें सूर्य्य और गुरु जलनाडी पर आनेका लिखा है और प्रथम श्रावण शुदी पञ्चमीके दिन सिंह राशि पर शुक्र आनेका लिखा है फिर दूसरे श्रावण शुक्लपक्षमे बुधका उदय होगा वहा दुनियाके लोग सुखी रहनेका लिखा है फिर प्रथम श्रावण वदी ४ बुधवार तक दुर्मति नामा संवत्सर रहनेका लिखा है बाद याने प्रथम श्रावण वदी पञ्चमी गुरुवारका दुन्दुभि नामका संवत्सर लगनेका लिखा है फिर दूसरे श्रावणमे मीन राशि पर शनि और मङ्गल वक्र होनेका लिखा है] इस तरहसे खुलासाके साथ न्यायरत्नजी अपने स्वहस्ते दोनु श्रावण महिनोको वरोवर लिखते है गिनतीमे लेते है छपाके प्रसिद्ध करते है (और दोनु श्रावणके कारण से तेरह मासोके ३८३ दिनका वर्ष दुनियामे प्रसिद्ध है) इस पर निष्पक्षपाती आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको न्याय दृष्टिसे

दो मासके कारणसें श्रीज्ञानीजी महाराजके कहने मुजब कल्याणक आराधन करनेमें आते थे और अधिक मासको गिनतीमें भी करनेमें आता था इसलिये अधिक मासकी गिनती करनेमें श्रीतीर्थङ्कर महाराजोंके कल्याणक गिनतीमें नहीं बढ सकते हैं और इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें श्रीज्ञानीजी महाराजका अभाव होनेसे और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसें प्रथम मासका प्रथम कृष्णपक्ष और दूसरे मासका दूसरा शुक्लपक्षमें मास तिथि नियत कल्याणकादि धर्मकार्य्य तथा लौकिक और लोकोत्तर पर्व करनेमें आते हैं जिसका युक्तिपूर्वक दृष्टान्त सहित खुलासा महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आयेगा सो पढनेसें विशेष निर्णय हो जावेगा इस लिये न्यायरत्नजी कल्याणक बढ जानेके भयसें अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं सो जैन शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करते हैं सो उपरके लेखसे पाठकवर्ग भी विशेष विचार सकते हैं ।

और इसके अगाडी फिर भी न्यायरत्नजीने लिखा है कि (अधिक महिनोंके कारणसे कभी दो भाद्रवे हो तो दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसे दो आषाढ महिने होते हैं तब भी दूसरे आषाढमे चातुर्मासिक कृत्य किये जाते हैं वैसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रवेमें करना न्याययुक्त है)

उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु कि हे सज्जन पुरुषो उपरके लेखमे न्यायरत्नजीने मासवृद्धि के कारणसे दो आषाढ और दो भाद्रपद लिखे जिससे अधिकमास गिनतीमें सिद्ध होगया फिर अधिक मासको

गिनतीमें लेनेवालोको दूषण लगाना यह तो न्यायरत्नजीका हठवादसे प्रत्यक्ष अन्यायकारक है सो पाठकवर्ग भी विचार सकते है ।

और भी दूसरा सुनो–खास न्यायरत्नजीने सवत् १९६६ की सालका बयान याने शुभाशुभका फल सक्षिप्तसे जैनपत्र के साथमें जूदा हेण्डबिलमें प्रसिद्ध किया है उसीमें [इस वर्षमे श्रावण महिना दो है ऐसा लिखा है तथा अधिकमास के कारणसे दोनु ही श्रावणकी गिनती सहित तेरह मासी के प्रमाणसे तेरह अमावस्या और तेरह पूर्णिमाकी सब घडियोकी गिनती दिखाइ है और प्रथम श्रावण वदी ११ तथा १२ के दिन और दूसरे श्रावण वदी १० के दिन अच्छा योग्य बताया है और प्रथम श्रावण शुदीमें सप्त नाडीचक्रमें सूर्य्य और गुरु जलनाडी पर आनेका लिखा है और प्रथम श्रावण शुदी पञ्चमीके दिन सिह राशि पर शुक्र आनेका लिखा है फिर दूसरे श्रावण शुक्लपक्षमे बुधका उदय होगा वहा दुनियाके लोग सुखी रहनेका लिखा है फिर प्रथम श्रावण वदी ४ बुधवार तक दुर्मति नामा सवत्सर रहनेका लिखा है बाद याने प्रथम श्रावण वदी पञ्चमी गुरुवारका दुन्दुभि नामका सवत्सर लगनेका लिखा है फिर दूसरे श्रावणमे मीन राशि पर शनि और मङ्गल वक्र होनेका लिखा है] इस तरहसे खुलासाके साथ न्यायरत्नजी अपने स्वहस्ते दोनु श्रावण महिनोको बरोबर लिखते है गिनतीमे लेते है छपाके प्रसिद्ध करते है (और दोनु श्रावणके कारण से तेरह मासोके ३८३ दिनका वर्ष दुनियामे प्रसिद्ध है) इस पर निष्पक्षपाती आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको न्याय दृष्टिसे

विचार करना चाहिये कि न्यायरत्नजी आप स्वयं दोनु श्रावण मासकी हकीकत जूदी जूदी लिखते है फिर गिनतीमें निषेध भी करते है यह तो ऐसे हुवा कि ममजननी वन्ध्या अथवा मम वदने जिह्वा नास्ति, इस तरहसे बाललीलावत् न्यायरत्नजी विद्याके सागर हो करके भी कर दिया हाय अफसोस,—

अब इस जगह मेरेको लाचार होकर लिखना पड़ता है कि न्यायरत्नजीकी विद्वत्ताकी चातुराई किस देशके कोनेमे चली गई होगा सो पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसे किये बिना श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमे प्रमाण करके तेरह मासोका अभिवर्द्धित संवत्सर अनेक सिद्धान्तोमे कहा है जिसके उत्थापनका भय न करते उलटा अधिक मासको गिनती करने वालोको माया वृत्तिसे मिथ्या दूषण लगादिये और फिर आपभी अधिक मासको प्रमाण करके लोगोमे ज्योतिषशास्त्रके विद्वान् भी प्रसिद्ध होते है परन्तु अधिक मासको गिनतीमे करनेवालोको मिथ्या दूषण लगानेका और पूर्वापर विरोधी विसवादी रूप मिथ्या वाक्यके फल विपाकका जरा भी भय नही करते है इसलिये जैन शास्त्रानुसार तो दूसरोको मिथ्या दूषण लगानेके और विसवादी भाषणके कर्मबन्धकी आलोचनाके लिये बिना अथवा भावान्तरमें भोगे बिना छूटना बहुत मुश्किल है सो जैन शास्त्रोका तात्पर्य्यके जानकार विवेकी पुरुष स्वय विचार सकते है और न्यायरत्नजीको भी उत्सूत्र भाषणका भय हो तो न्याय दृष्टिसें तत्त्वार्थको अवश्य ही ग्रहण करना चाहिये ,—

तथा और भी न्यायरत्नजीको थोड़ासा मेरा यही कहना है कि अधिकमासको आप कालपुरुषकी चोटी जान कर गिनतीमें नही लेनेका ठहराते हो तब तो दो आषाढ, दो श्रावण दो भाद्रवेका लिखना आपका वृथा हो जावेगा और दो आषाढादि मासोको लिखते हो तथा उसी मुजब वर्तते हो तब तो कालपुरुषकी चोटी कहके अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो आपका वृथा है और दो आषाढ, दो श्रावण, दो भाद्रवे लिखना सब धर्म और कर्मका व्यवहार भी दोनु मासका करना फिर गिनतीमें नही लेना यह तो कभी नही हो सकता है इसलिये दोनु मासका धर्म और कर्मका व्यवहारको मान्य करके दोनु मासको गिनतीमें लेना सो ही न्यायपूर्वक युक्तिकी बात है तथापि निषेध करना धर्मशास्त्रोंके और दुनियाके व्यवहारसे भी विरुद्ध है इस लिये इसका मिथ्या दुष्कृत ही देना आपको उचित है नही तो पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्यका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकणकी वृत्तिमें कहा है सो, पाठ इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ८६ । ८७ । ८८ में छपगया है उसीके अधिकारी होना पड़ेगा सो आप विद्वान् हो तो विचार लेना ,—

और दो आषाढ होनेसे दूसरे आषाढमें चौमासी कृत्य किये जाते है जिसका मतलब न्यायरत्नजीके समझमें नही आया है सो इसका निर्णय सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा और दो भाद्रवे होनेसें दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणापर्व करना न्याय युक्त न्यायरत्नजी ठहराते है परन्तु शास्त्रसम्मत न्याय युक्त नही है क्योंकि

शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने अवश्यही पर्युषणा करना कहा है और दो श्रावण होनेसे दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते है जिससे दूसरे भाद्रवेमें ८० दिने पर्युषणा करना और ठहराना शास्त्रोंके और युक्तिके विरुद्ध है इसलिये प्रथम भाद्रवेमें ही ५० दिने पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्याय सम्मत है इसका विशेष निर्णय तीनो महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४० । १४१ । १४२ की आदि तक अच्छी तरहसे छप गया है उसीको पढ़नेसे सब निर्णय हो जावेगा ।

और फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी बनाई मानवधर्म संहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पङ्क्ति ४ से १० तक तिथियाँ की हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें और पृष्ठ ८०१ की पङ्क्ति २२ से पृष्ठ ८०२ पङ्क्ति १० तक पर्युषणामें तिथियाकी हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसकी समीक्षा आगे तिथि निर्णयका अधिकार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा वहां अच्छी तरहसे न्याय रत्नजीकी कल्पनाका (और न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें जो तिथियाकी हानी तथा वृद्धि सम्बन्धी उत्सूत्र भाषण किया है उसीका भी) निर्णय साथ साथमेंही करनेमें आवेगा सो पढनेसे तिथियाकी हानी तथा वृद्धि होनेसे धर्मकार्य्योंमे किसी रीतिसे वर्तना चाहिये जिसका अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा ,—

इति पाँचवे महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ॥

और सप्टेम्बर मासकी २७ मी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुक्ल २ वीर सवत् २४३५ के रविवारका मुम्बईसे प्रसिद्ध होनेवाला जैन पत्रके २५ वें अङ्कके पृष्ठ ४ मे गत वर्षे न्यायरत्नजीकी तरफसे लेख प्रसिद्ध हुवा हैं जिसमें खास करके श्रीखरतरगच्छ वालोंको श्रीमहावीर स्वामीजीके ६ कल्याणकके सम्बन्धमें पूछा हैं और आपने श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराजके तथा श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके विरुद्धार्थमें श्रीपञ्चाशक मूलसूत्रका तथा तद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके श्रीमहावीर स्वामीजीके पाच कल्याणक स्थापन करके ६ कल्याणकका निषेध किया है सो उत्सूत्र भाषण करके अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठोंका उत्थापन करके श्रीगणधर महाराजके, श्रीश्रुत केवली महाराजके, पूर्वधर महाराजोंके और बुद्धिनिधान पूर्वाचार्य्योंके वचनका अनादर करते पञ्चमकालके अपने हठवादकी विद्वत्ता न्यायरत्नजीने अनन्त ससारकी बढाने वाली प्रसिद्धकरी हैं जिसकी समीक्षा और आगस्ट मासकी २९ वी तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण सुदी १३ वीर सवत् २४३५ रविवारका जैन पत्रके २१ वें अङ्कके पृष्ठ १५ वा में जो न्यायरत्नजीकी तरफसे फिर भी लेख प्रसिद्ध हुवा हैं उसीमें 'खरतरगच्छ मीमासा, नामकी किताब छपवा कर प्रसिद्ध करके [जैसे न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्तसमाचारी, पुस्तकका नाम रखके वास्तविकमें उत्सूत्र भाषण का मिथ्यात्वरूप पाखण्डको प्रगट किया हैं (जिसका किञ्चिन्मात्र इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १५१ और पृष्ठ २१५। २१६ में दिखाया है, उसीका नमुनारूप पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षा भी

शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने अवश्यही पर्युषणा करना कहा है और दो श्रावण होनेसे दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते हैं जिससे दूसरे भाद्रवेमें ८० दिने पर्युषणा करना और ठहराना शास्त्रोंके और युक्तिके विरुद्ध है इसलिये प्रथम भाद्रवेमें ही ५० दिने पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्याय सम्मत है इसका विशेष निर्णय तीनो महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४० । १४१ । १४२ की आदि तक अच्छी तरहसे छप गया है उसीको पढ़नेसे सब निर्णय हो जावेगा ।

और फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी बनाई मानवधर्म संहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पङ्क्ति ४ से १० तक तिथियाँ की हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें और पृष्ठ ८०१ की पङ्क्ति २२ से पृष्ठ ८०२ पङ्क्ति १० तक पर्युषणामें तिथियाकी हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसकी समीक्षा आगे तिथि निर्णयका अधिकार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेंमें आवेगा वहां अच्छी तरहसे न्याय रत्नजीकी कल्पनाका (और न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें जो तिथियाकी हानी तथा वृद्धि सम्बन्धी उत्सूत्र भाषण किया है उसीका भी) निर्णय साथ साथमेंही करनेमें आवेगा सो पढनेंसे तिथियाकी हानी तथा वृद्धि होनेसे धर्मकार्य्योंमे किसी रीतिसे वर्तना चाहिये जिसका अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा ,—

इति पाँचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ॥

और सप्टेम्बर मासकी २७ मी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुक्ल २ वीर संवत् २४३४ के रविवारका मुम्बईसे प्रसिद्ध होनेवाला जैन पत्रके २४ वें अङ्कके पृष्ठ ४ में गत वर्षे न्यायरत्नजीकी तरफसे लेख प्रसिद्ध हुवा हैं जिसमें खास करके श्रीखरतरगच्छ वालोको श्रीमहावीर स्वामीजीके ६ कल्याणकके सम्बन्धमें पूछा हैं और आपने श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराजके तथा श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके विरुद्धार्थमें श्रीपञ्चाशक मूलसूत्रका तथा तद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके श्रीमहावीर स्वामीजीके पाच कल्याणक स्थापन करके ६ कल्याणकका निषेध किया है सो उत्सूत्र भाषण करके अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोके पाठोका उत्थापन करके श्रीगणधर महाराजके, श्रीश्रुत केवली महाराजके, पूर्वधर महाराजोके और बुद्धिनिधान पूर्वाचार्य्योंके वचनका अनादर करते पञ्चमकालके अपने हठवादकी विद्वत्ता न्यायरत्नजीने अनन्त ससारकी वढाने वाली प्रसिद्धकरी हैं जिसकी समीक्षा और आगस्ट मासकी २९ वी तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण सुदी १३ वीर सवत् २४३५ रविवारका जैन पत्रके २१ वें अङ्कके पृष्ठ १५ वा में जो न्यायरत्नजीकी तरफसे फिर भी लेख प्रसिद्ध हुवा हैं उसीमें 'खरतरगच्छ मीमासा, नामकी किताब छपवा कर प्रसिद्ध करके [जैसे न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्तसमाचारी, पुस्तकका नाम रखके वास्तविकमें उत्सूत्र भाषण का मिथ्यास्वरूप पाखण्डको प्रगट किया हैं (जिसका किञ्चिन्मात्र इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १५१ और पृष्ट २१५ । २१६ में दिखाया हे, उसीका नमुनारूप पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षा भी

शास्त्रोंमें आषाढ चौमासीसे ५० दिने अवश्यही पर्युषणा करना कहा है और दो मासके होनेसे दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते है जिससे दूसरे भाद्रवेमें ८० दिने पर्युषणा करना और ठहराना शास्त्रोंके और युक्तिके विरुद्ध है इसलिये प्रथम भाद्रवेमें ही ५० दिने पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्याय सम्मत है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४० । १४१ । १४२ की आदि तक अच्छी तरहसे छप गया है उसीको पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा ।

और फिर भी न्यायरत्नजीने अपनी बनाई मानवधर्म संहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पंक्ति ४ से १० तक तिथियाँ की हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें और पृष्ठ ८०१ की पंक्ति २४ से पृष्ठ ८०२ पंक्ति १० तक पर्युषणामें तिथियाकी हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें शास्त्रोंके प्रमाण बिना अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसकी समीक्षा आगे तिथि निर्णयका अधिकार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा वहां अच्छी तरहसे न्याय रत्नजीकी कल्पनाका (और न्यायाम्भोनिधिजीने जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें जो तिथियाकी हानी तथा वृद्धि सम्बन्धी उत्सूत्र भाषण किया है उसीका भी) निर्णय साथ साथमेंही करनेमें आवेगा सो पढनेसे तिथियाकी हानी तथा वृद्धि होनेसे धर्मकार्योंमे किसी रीतिसे वर्तना चाहिये जिसका अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा,—

इति पाँचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्त ॥

प्रश्नोत्तर छपे हैं जिसमें किसी मुम्बईवाले श्रावकने प्रश्न किया हैं कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमा करिये तो दोष लागेके केम) इस प्रश्नका श्रीपालणपुरसे श्रीवल्लभविजयजीने यह जवाब दिया कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमा नज थाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) इस लेखका मतलब ऐसे निकलता हैं कि गुजराती प्रथम श्रावण वदी हिन्दी दूसरे श्रावण वदीसे लेकर दूसरे श्रावण शुदीमें अर्थात् आषाढ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणा करने वालोंको जिनाज्ञा भङ्गके दूषित ठहराये तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीने श्रीपालणपुर श्रीवल्लभविजयजीको सुन्दर ओपमा सहित वन्दनापूर्वक विनय भक्तिसे एक पोष्टकार्ड लिख भेजा उसीमें लिखा था कि—आगष्ट मास की-८ वी तारीखका जैन पत्रके १८ वें अङ्कमें (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमा नजथाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) यह अक्षर जिस सूत्र अथवा वृत्तिके आधारमे आपने छपवाये होवें उसी सूत्र अथवा वृत्तिके पाठ लिखकर भेजनेकी कृपा करना आपको मध्यस्थ और विद्वान् सुनते हैं इस लिये आपने शास्त्रके प्रमाण विना अपनी कल्पनासे भूठ नही छपवाया होगा तो जरूर शास्त्रपाठके अक्षर लिख कर भेजेंगें इत्यादि—इस तरहका पोष्टकार्डमें मतलब लिख कर खानगीमें भेजाथा सो कार्ड श्रीवल्लभविजयजीको श्रीपालणपुरमें खास हाथोहाथ पहुंच गया परन्तु श्रीवल्लभविजयजीने उस कार्डका कुछ भी पीछा जवाब लिखकर नही भेजा जब कितनेही दिन तक तो जवाब आनेकी राह देखी तथापि कुछ भी जवाब नही आया तब फिर भी

इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ १५१ से २१४ तक उपरमें छप चुकी हैं) तैसेही न्यायरत्नजीने भी प्रायः उन्ही बातोंको अपनी चातुराईसे कुछ कुछ न्यूनाधिक करके] मिथ्यात्वका पोषणरूप मानु अपनी और अपने गच्छवाली हठवादी भक्तजनोंकी संसार वृद्धिका कारणरूप शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निषेध और शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें कल्पित बातोंका स्थापनकर पुस्तक प्रगटकरके अविसंवादी अत्युत्तम जैनमें विसंवादरूप मिथ्यात्वका झगडा फैलाना न्यायरत्नजी चाहते हैं, जिसकी और गत वर्षके लेखकी समालोचनारूप समीक्षा इस जगह लिखके न्यायरत्नजीके उत्सूत्र भाषणकी तथा कुतर्कोंकी चातुराईका दृष्टांत प्रगट करना चाहु तो जरूर करके २५० अथवा ३०० पृष्ठका यहां विस्तार बढ जावें जिससे आठो महाशयोंके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी अभी जो समीक्षा सरु है उसीमें अन्तर पड जावें और यह ग्रन्थ भी बहुत बडा हो जावें इसलिये अभी यहां न्यायरत्नजी सम्बन्धी विशेष न लिखते पर्युषणा सम्बन्धी विषय पूरा होये बाद अन्तमें थोडासा संक्षिप्तसे लिखनेमें आवेगा जिससे श्रीजिनाज्ञा इच्छक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको सत्यासत्यका निर्णय स्वय मालुम हो सकेगा,—

और अब छठे महाशय श्रीवल्लभविजयजीकी तरफसे पर्युषणा सम्बन्धी जो लेख जैन पत्रमें प्रगट हुवा है उसीकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु—जिसमें प्रथमही आगष्ट मासकी ८ वी तारीख संवत् १९०९ गुजराती प्रथम श्रावण वदी ७ रविवारका मुम्बईसे प्रसिद्ध होने वाला जैनपत्रके १८ वें अङ्कके पृष्ठ १० विषे गुजराती भाषामें

बुरी बातोकी होशियारी भी आगे ही आगे बढती हुई नजर आती है। इस वास्ते खबरदार होकर होशियारीके साथ विचार कर सार निकालनेका ख्याल रखना योग्य है– ताकि पीछेसे पश्चात्ताप करनेकी जरूरत न रहे।

राज्य अंग्रेज सरकारका हैं कानून (कायदे) सबके लिये तैयार है। चाहे अमीर हो, चाहे गरीबहो, चाहे राजा हो, चाहे रक हो। चाहे शहरी हो, चाहे गँवार हो। जो एक कहेगा दो सुनेगा।

थोडे समयकी बात है, लश्कर से बुद्धि सागर नामा खरतर गच्छीय मुनिके नामका पत्र हमारे पास आया, जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखा था, हमने मुनासिब नही समजा कि' वृथा समय खोकर परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे। कितनेही समयसे गच्छ सबधी टटा प्राय दबा हुवा है, तपगच्छ खरतरगच्छ दोनो ही गच्छ प्राय परस्पर सपसे मिले जुलेसे मालुम होते है' उनमें फरक पडनेसे कुछ दबे हुए जैन शासनके वेरिओका जोर हो जानेका सम्भव है। यह तो प्रसिद्धही है कि दोनोकी लडाईमे तीसरेका काम हो जाता है। यद्यपि महात्मा मोहनलालजी महाराज खरतर गच्छके थे, तथापि तपगच्छ- वाले उनको अधिकसे अधिक मान देते थे। यही गच्छ पक्षकी कुछक शाति लोकोके देखनेमें आती थी। मरहूम महात्मा भी तपगच्छकी बाबत अपना जुदा ख्याल नहीं जाहिर करते थे। बलकि खुद आप भी तपगच्छकी समा चारी करते थे जो कि प्राय प्रसिद्ध ही है परन्तु सूर्पनखा समान जीव उभय पक्षको दु खदायी होते हैं तद्वत् बुद्धिसागर

दूसरा पत्र श्रीवल्लभविजयजीको, उपर लिखे मतलबके लिये भेजभेजें आया तोभी श्रीवल्लभविजयजीने कुछ भी जबाब नही दिया तब श्रीपालणपुरके प्रसिद्ध आदमी पीताम्बर भाई हाथी भाई महताके नामसे एक पत्र लिखा उसीमें भी विशेष समाचार पर्युषणा सम्बन्धी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे श्रावणमें आषाढ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करने वालोको आज्ञाभङ्गरूपी दूषण लगाया जिसका खुलासे उत्तर पूछाया था और उसी पत्रमें ५० दिने पर्युषणा शास्त्रकारोने करनेका कहा है उसी सम्बन्धी पाठ भी लिख भेजे थे वह पत्र श्रीवल्लभविजयजीको पीताम्बर भाईने पहुचाया और जबाब भी पूछा इतने पर भी श्रीवल्लभविजयजीने अपनी बातका जबाब नही दिया और शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण भी नही किये परन्तु स्वपक्षपातका पण्डिताभिमानकेजोरसे अन्याय कारक विशेष झगडा फैलानेका कारण करके माया वृत्तिसे आप निर्दूषण बन कर श्रीबुद्धिसागरजीको दूषित ठहरानेके लिये अक्टोबर मासकी ३१ वी तारीख सन् १९०९ आसोज वदी ३ वीर संवत् २४३५ का अङ्क २९ वा के पृष्ठ ४-५ में अपनी चातुराइको प्रगट करी है जिसको इस जगह लिख दिखाता हु,—

[खबरदार! होवो होशियार!! करो विचार! निकालो सार!!! लेखक—मुनि-वल्लभविजय-पालणपुर,

इसमें शक नही कि, अंग्रेज सरकारके राज्यमें, कला-कौशल्यकी अधिकता हो चुकी है, हो रही है और होती रहेगी! परंतु गाम वसे वहा भङ्गी चमारादि अवश्य होते है! तद्वत् अच्छी अच्छी बातोकी होशियारीके साथमे बुरी

निकले होठे,-अर्थात् जिस आदमीके जैसी बात दिलमें होवे उस आदमीसे वैसेही अन्तरकी बातके सूचकरूप शब्द करके सहित भाषा निकलती है तैसेही छठे महाशयजीने भी मानु अपनी आत्मामें रहनेवाले गुणोके सूचक शब्द लिखके प्रसिद्ध किये हैं सो वह द्रव्य शब्दके भाव गुण छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीमें अवश्य ही दिखते हैं सोही पाठकवर्गको दिखाता हु और साथ साथमें छठे महाशयजीकी अन्याय कारक अन्यान्य बातोकी समीक्षा भी करता हु ,—

छठे महाशयजीने (गाम वसे वहाँ भङ्गी चमारादि अवश्य होते हैं) यह अक्षर लिखे हैं इस पर मेरेको इतना ही कहना उचित हैं कि श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधन करनेवाले जो सज्जन हैं सोही मानो गाम वसता है उसी गामरूपी श्रीजिनशासनमें उत्सूत्र भाषक निन्दकादि भङ्गी चमारोकी तरह उक्त महाशयजी आदि वसते हैं सो उस गामकी निन्दारूप मलिनताको उठाते हुए भी आप पवित्र बनना चाहते है सो कदापि नही बन सकते हैं और आगे फिर भी लिखा हैं कि (अच्छी अच्छी बातोकी होशियारीके साथमें बुरी बुरी बातोकी होशियारी भी आगे ही आगे बढती हुई नजर आती हैं) छठे महाशयजीके इन अक्सरो पर मेरेको यही कहना पडता है कि इस अंग्रेजी राज्यमें कलाकौशल्यता और न्यायशीलताके कारणसे श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञारूपी अच्छी अच्छी होशियारीकी वृद्धिके साथ साथमें बुरी बुरी होशियारीकी तरह प्रथम कदाग्रहके बीज लगानेवाले

खरतर गच्छीय मुनि नाम धारकोंने भी अपनी मन कामना पूर्ण न होनेसे, रावणके समान ढूंढियाका भेष लेकर मुद्दारस करना चाहा है।]

पाठकवर्गको छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके ऊपर का लेखकी समालोचनारूप समीक्षा करके दिखाता हु जिसमें प्रथमतो मेरेको इतना ही कहना उचित हैं कि छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी साधु नाम धारक होकर खास आप झगडेका मूल खडा करके दूसरेको दूषित करना और अन्याय कारक माया वृत्तिका मिथ्या भाषणसे आप निर्दूषण बनना चाहते है सो सर्वथा अनुचित हैं क्योंकि प्रथम ही आपने (शास्त्रकारोंकी रीति मूजब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार आषाढ चौमासीसे पचास दिने श्रावणवृद्धिके कारणसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोको) आज्ञाभङ्ग का दूषण लगा के जैन पत्रमें छपवा कर प्रगट कराया तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीने आपको खानगीमें शास्त्रका प्रमाण पूछा था उन्होंको शास्त्रका प्रमाण आप खानगीमें पीछा नही लिख सके और अन्यायकी रीतिसे उलटा रस्ता पकडके खानगीकी वार्त्ताको प्रसिद्धीमें लाकर वृथा निष्प्रयोजनकी अन्यान्य बातोको और भङ्गी चमार सूर्पनखा वगैरह अनुचित शब्दोको लिखके विशेष झगडेका मूल खडा करके भी आप निर्दूषण बनकर अपने अन्यायको न देखते हुए और शास्त्रके पाठकी बात न्याय रीतिसे पूछने वाले को दूषित ठहराते हुए अपने योग्यता माफक शब्द प्रगट किये याने लौकिकमें कहते हैं कि—जैसी-होवे कोठे, वैसी

निकले होठे,–अर्थात् जिस आदमीके जैसी बात दिलमें होवे उस आदमीसे वैसेही अन्तरकी बातके सूचकरूप शब्द करके सहित भाषा निकलती है तैसेही छठे महाशयजीने भी मानु अपनी आत्मामें रहनेवाले गुणोके सूचक शब्द लिखके प्रसिद्ध किये हैं सो वह द्रव्य शब्दके भाव गुण छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीमें अवश्य ही दिखते है सोही पाठकवर्गको दिखाता हु और साथ साथमें छठे महाशयजीकी अन्याय कारक अन्यान्य बातोकी समीक्षा भी करता हु ,—

छठे महाशयजीने (गाम वसे वहाँ भङ्गी चमारादि अवश्य होते हैं) यह अक्षर लिखे हैं इस पर मेरेको इतना ही कहना उचित हैं कि श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधन करनेवाले जो सज्जन है सोही मानो गाम वसता है उसी गामरूपी श्रीजिनशासनमें उत्सूत्र भाषक निन्दकादि भङ्गी चमारोकी तरह उक्त महाशयजी आदि वसते हैं सो उस गामकी निन्दारूप मलिनताको उठाते हुए भी आप पवित्र बनना चाहते है सो कदापि नही बन सकते हैं और आगे फिर भी लिखा हैं कि (अच्छी अच्छी बातोकी होशियारीके साथमें बुरी बुरी बातोकी होशियारी भी आगे ही आगे बढती हुई नजर आती हैं) छठे महाशयजीके इन अक्षरो पर मेरेको यही कहना पड़ता है कि इस अंग्रेजी राज्यमें कलाकौशल्यता और न्यायशीलताके कारणसे श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञारूपी अच्छी अच्छी होशियारीकी वृद्धिके साथ साथमें बुरी बुरी होशियारीकी तरह प्रथम कदाग्रहके बीज लगानेवाले

तथा कुमार्गमें चलनेवाले और दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेवाले "छठे महाशयजी वगैरह अनेक पक्षपाती पुरुष झूठी झूठी होशियारीकी बातोंका शरणा लेते हैं सो बड़ी ही अफसोसकी बात है,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (खबरदार होकर होशियारीके साथ विचारकर बार मिका लेनेका ख्याल रखना योग्य है ताकि, पीछेसे पश्चाताप करनेकी जरूर न रहे) इस अक्षरोंको लिखके छठे महाशयजी दूसरेको होशियार होनेका बताते हैं परन्तु अपनी आत्माकी तरफ कुछ भी होशियारी न दिखाते हुए बिन विचारा काम करके इस भव तथा पर भव और भवो भवमें पश्चाताप करनेका कुछ भी भय नही रखते हैं क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम धुरन्धराचार्योंने और खास छठे महाशयजीके ही पूर्वज पूज्यपुरुषोने अनेक सूत्र, वृत्ति, चूर्णि, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें आषाढ चौमासीसे एक मास और वीश दिने याने पचास दिने श्री पर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है और इस वर्त्तमान कालमें लौकिक पञ्चाङ्गमें श्रावणादि मासोकी वृद्धि होनेके कारणसे आषाढ चौमासीसे पचास दिन दूसरे श्रावणमें पूरे होते हैं तब शास्त्रानुसार पचास दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक ठहरे और जैन शासनके प्रभावक तथा युगप्रधान और बुद्धिनिधान उत्तमाचार्य्योंकी श्रीजिनाज्ञा मुजब दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेकी अनुक्रमे अखण्डित सहल परम्परा (अनुमान १४०० वर्ष हुए जैनपञ्चाङ्गके अभाव

से आत्मार्थी पुरुषोंकी) चली आती है उसी मुजब मोक्षाभि-
लाषी सज्जन वर्त्तते है जिन्होको छठे महाशयजीने अपनी
क्षुद्रबुद्धिकी तुच्छ विद्वत्ताके अभिमानसे उत्सूत्र भाषणका
भय न करते एकदम आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके छापामें
छपानेकी आज्ञा करी और शास्त्रानुसार चलने वालोको
मिथ्या दूषण लगानेके कारणसे झगडा फैलानेके कारण
का जरा भी विचार नही किया और जब श्रीतीर्थङ्कर
गणधरादि महाराजोने पचास दिने पर्युषणा करनेका कहा
है उसीके अनुसारे आत्मार्थी सज्जन पुरुष दूसरे श्रावणमे
पचास दिने पर्युषणा करते है जिन्होको छठे महाशयजी
आज्ञाभङ्गका दूषण लगाते है जिससे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि
महाराजोके वचनका अनादर होकर उन महाराजोकी महान्
आशातना होती है तथा अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकर-
णादि शास्त्रोंके पाठोके मुजब नही वर्त्तनेसे उत्थापन होता
है और उन महाराजोकी आशातना तथा अनेक शास्त्रोंके
पाठोका उत्थापन और उन महाराजोकी आज्ञानुसार
अनेक शास्त्रोके प्रमाणयुक्त वर्त्तने वालोको स्वपक्षपातके
पण्डिताभिमानसे मिथ्या दूषण लगाना सो नि केवल उत्सूत्र-
भाषणरूप है और उत्सूत्र भाषणके लिये ,—

श्रीभगवतीजी सूत्रमे १ तथा तद्वृत्तिमे २ श्रीउत्तरा-
ध्ययनजी सूत्रमें ३ तथा तीनकी छ (६) व्याख्यायोमें ९
श्रीदशवैकालिक सूत्रमें १० तथा तीनकी चार व्याख्यायोमे १४
श्रीसूयगडाङ्गजी (सूत्रकृताङ्गजी) सूत्रकी निर्युक्तिमें १५ तथा
तद्वृत्तिमे १६ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमे १७ तथा तद्वृत्तिमें १८
श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १९ श्रीआवश्यकजी सूत्रकी

बृहद्वृत्तिमें २० तथा प्रथम लघु वृत्तिमें २१ और दूसरी लघु वृत्तिमें २२ श्रीविशेषावश्यकमें २३ तथा तद्वृत्तिमें २४ श्रीलघुप्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्तिमें २५ श्रीमूलशुद्धिप्रकरणमें २६ श्रीमहानिशीथ सूत्रमें २७ श्रीधर्मरत्नप्रकरणमें २८ तथा तद् वृत्तिमें २९ श्रीसङ्घपट्टक बृहद्वृत्तिमें ३० श्रीश्राद्धविधि वृत्तिमें ३१ श्रीआगम अष्टोत्तरीमें ३२ तथा तद्वृत्तिमें ३३ श्रीसन्देह दोलावलीवृत्तिमें ३४ श्रीसम्बोधसत्तरीमें ३५ तथा तद्वृत्तिमें ३६ श्रीवैराग्यकल्पलतामें ३७ श्रीत्रिषष्ठिशलाकापुरुष चरित्रमें ३८ और श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोंमें ४५ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें और भाषाके स्तवन, पद, ढाल वगैरहमें भी अनेक जगह लिखा है कि शास्त्रपाठ तथा एकाक्षरमात्रभी प्रमाण नही करनेवाला निन्हव उत्सूत्र भाषककों श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य परम गुरुजन महाराजोंकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोके वाक्यको न मानता हुवा उत्थापन करने वाला बहुलकर्मी, माया सहित मिथ्या भाषण करने वाला, संयमसे भ्रष्ट, घोर नरक में गिरने वाला, चतुरगतिरूप संसारमें कटुक विपाक दारुण (भयङ्कर) फलको भोगने वाला, सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट, मिथ्यात्वी, दुर्लभबोधि, अनन्त संसारी, मोहन्यादि आठ कर्मोंके चीकणे बन्धको बाँधने वाला, पापकारी इत्यादि अनेक विशेषण शास्त्रोंमे कहे है जिसके सब पाठ इस जगह लिखनेसे बहुत विस्तार हो जावे तथापि भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये थोड़ेसे पाठ भी लिख दिखाता हु,

श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीउत्तराध्ययनवृत्तौ अष्टादशाध्ययने—संयतराजर्षि क्षत्रियमुनिर्वदति हे महामुने

ये पापकारिणो नरा पाप असत् परूपण कुर्वन्तीत्येव शीला पापकारिणो ये नरा भवन्ति ते नरा घोरे भीषणे (भयङ्करे) नरके पतन्ति च पुन धर्मं सत् परूपणरूप चरित्राराध्यदिव्य दिव सम्बन्धीनी उत्तमा गति गच्छन्ति इत्यादि ॥ इस पाठमें उत्सूत्र परूपणा करने वालेको भयङ्कर नरक और सत्य परूपणा करने वालेको देव लोगकी गति कही हैं। और श्रीशान्तिसूरिजीकृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण मूल तथा तद्वृत्ति श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत भाषा सहित श्री पालीताणासे श्रीजैनधर्म विद्याप्रसारकवर्गकी तरफसे छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके तीसरे भागके पृष्ठ ८२। ८३। ८४ का पाठ गुजराती भाषा सहित नीचे मुजब जानो,—

यथा—अइ साहस मेय ज, उस्सुत्त परूवणा कडुविवागा ॥
जाणतेहिवि दिज्जइ, निद्देसो सुत्तबज्झत्थे ॥१०१॥

मूलनो अर्थ—उत्सूत्रपरूपणा कडवा फल आपनारी छे एवु जाणताछता पण जेओ सूत्रबाह्य अर्थमा निश्चयआपी देछे ते अति साहसछे ॥ १०१ ॥

टीका—ज्वलज्ज्वालानल प्रवेशकारिनर साहसादप्यधिकमतिसाहसमेतद्वर्त्तते यदुत्सूत्रपरूपणा सूत्रनिरपेक्ष देशना कटुविपाका दारुणफला जानानैरवबुध्यमानैरपि दीयते वितीर्य्यते निर्देश्यो निश्चय सूत्रबाह्ये जिनेन्द्रागमानुक्तेऽर्थे वस्तु विचारे किमुक्त भवति—

दुब्भासिएण इक्केण, मरीईदुक्खसागर पत्तो ।
भमिओ कोडाकोडि, सागरसिरिनामधिज्जाण ॥१॥

उस्सुत्तमाचरन्तो—बधइकम्म सुचिक्कण जीवो । ससारञ्च पवड्ढइ, मायामोस च कुव्वइय ॥ २ ॥ उम्मग्गदेसओमग्ग—नास

बृहद्वृत्तिमें २० तथा प्रथम लघु वृत्तिमें २१ और दूसरी लघु वृत्तिमें २२ श्रीविशेषावश्यकमें २३ तथा तद्वृत्तिमें २४ श्रीलघुप्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्तिमें २५ श्रीमूलशुद्धिप्रकरणमें २६ श्रीमहानिशीथ सूत्रमें २७ श्रीधर्मरत्नप्रकरणमें २८ तथा तद् वृत्तिमें २९ श्रीषट्पटक बृहद्वृत्तिमें ३० श्रीश्राद्धविधि वृत्तिमें ३१ श्रीआगम अष्टोत्तरीमें ३२ तथा तद्वृत्तिमें ३३ श्रीसन्देह दोलावलीवृत्तिमें ३४ श्रीसम्बोधसत्तरीमें ३५ तथा तद्वृत्तिमें ३६ श्रीवैराग्यकल्पलतामें ३७ श्रीत्रिषष्ठिशलाकापुरुष चरित्रमें ३८ और श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोंमें ४५ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें और भाषाके स्तवन, पद, ढाल वगैरहमें भी अनेक जगह लिखा है कि शास्त्रपाठ तथा एकाक्षरमात्रभी प्रमाण नही करनेवाला निन्हव उत्सूत्र भाषकको श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य परम गुरुजन महाराजोकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोके वाक्यको न मानता हुवा उत्थापन करने वाला बहुलकर्मी, माया सहित मिथ्या भाषण करने वाला, सयमसे भ्रष्ट, घोर नरक में गिरने वाला, चतुरगतिरूप ससारमें कटुक विपाक दारुण (भयङ्कर) फलको भोगने वाला, सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट, मिथ्यात्वी, दुर्लभबोधि, अनन्त ससारी, मोहन्यादि आठ कर्मोंके चीकणे बन्धको बाँधने वाला, पापकारी इत्यादि अनेक विशेषण शास्त्रोंमें कहे हैं जिसके सब पाठ इस जगह लिखनेसे बहुत विस्तार हो जावे तथापि भव्यजीवोंको नि सन्देह होनेके लिये थोडेसे पाठ भी लिख दिखाता हु,

श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीउत्तराध्ययनवृत्ती अष्टादशाध्ययने–सयतराजर्षिं क्षत्रियमुनिर्वदति हे महामुने

अयमत्राशय—सम्यक्त्व ज्ञानचरणयो कारण यतएवमागम—
ता दसणिस्सनाण, नाणेण विणा पहुति चरणगुणा ॥
अगुणस्स नत्थि मुक्खो, नत्थि अमुक्खस्स निव्वाण ॥१॥ इति
तच्च गुरुबहुमानिन एव भवत्यतो दु करकारकोऽपि तस्मि-
न्नवज्ञानविद्ध्यात् तदाज्ञाकारि च भूयाद्यत उक्त—
छट्ठट्ठम दसमदुवालसेहिं, मासद्ध मास खमणेहिं ॥
अकरतो गुरुवयण, अणत ससारिओ भणिओ ॥१॥इत्यादि

इहा आशय एछे के सम्यक्त्व ए ज्ञान अने चारित्रनु
कारणछे जे माटे आगममा आरीते कहेलुछे—सम्यक्त्व वत-
नेज ज्ञान होयछे अने ज्ञान विना चारित्रना गुण होवा
नथी अगुणीने मोक्ष नथी अने मोक्ष वगरनाने निर्वाण
नथी, हवे ते सम्यक्त्व तो गुरुनो बहुमान करनारनेज होयछे
एथी करीने दु करकारी थईने पण तेनी अवज्ञा नही कर-
ता तेना आज्ञाकारी थवु जे माटे कहेलुछे के छठ, अठम,
दशम, द्वादश तथा अर्द्धमासखमण अने मासखमण करतो
थको पण जो गुरुनो वचन नही माने तो अनत ससारी
थायछे।

और श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धविधिवृत्तिका
गुजरातीभाषान्तर श्रा—चीमनलाल शाकलचद मारफती-
याने श्रीमुंबईमें छपवा कर प्रसिद्ध किया है जिसके पृष्ठ
१८८ का लेख नीचे मुजब जानो,—

आशातनाना विषयमा उत्सूत्र [सूत्रमा कहेला आ-
शयथी विरुद्ध] भाषणकरवाथी अरिहतनी के गुरुनी अव
हेलना करवी ए मोटी आशातनाओ अनन्तससारनी हेतुछे
जेमके उत्सूत्र प्ररूपणाथी सावद्याचार्य, मरीची,जमाली,कुल

जो गूढहिययमाइल्लो । सढसीलोयससल्लो-तिरियाउ बधए जीवो ॥३॥ उम्मग्गदेसणाए-चरणं नासंति जिणवरिंदाण। वावन्नदंसणा खलु-नहुलब्भा तारिसा दट्ठुं ॥४॥ इत्यागम वचनानि श्रुत्वापि स्वाग्रहग्रहग्रस्त चेतसो यदन्यथान्यथा व्याचष्टे विदधाति च-तन्महासाहसमेवा नवाकूपारापार गभीर पारावारोदरविवरभावि भूरिदु खभाराङ्गीकारादिति।

टीकानो अर्थ—यद्यपी आगमना येमआरंभणतनासाहस करता पण अधिक आ अतिसाहसछे के सूत्रनिरपेक्ष देशना कहवा एटले भयङ्कर फल आपनारीछे एम जाणनारा होयने पण सूत्रयाह्य एटले जिनागममा नही कहेल अर्थना एटले वस्तु विचारमा निर्देश एटले निश्चय आपीदेछे—एटले शुकह्यु तेकहेछे—मरीचि एकदुर्भाषितथी दु खसादरियामा पडी क्रोडाक्रोडसागरोपम भम्यो । १ । उत्सूत्र आचरता जीव चीकणा कर्म बाधेछे ससारवधारेछे अने मायामृषा करेछे । २ । उन्मार्गनी देशना करनार मार्गनो नाशकरनार गूढ हृदयथी मायावी शठ अने सशल्य जीव तिर्यचनो आयुष्य बाधेछे ।३। जेओ उन्मार्गनी देशनाथी जिनेश्वरना चारित्रनो नाशकरेछे तेवा दर्शनभ्रष्ट लोकोने जोवा पणसारा नही ।४। आवगेरे आगमना वचनो साभलीने पण पोताना आग्रहमा ग्रस्त बनी जे काइ आडु अवलु बोलेछे तथा करेछे ते महा साहसजछे केमके एतो अपार अने असार ससाररूप दरि याना पेटमा थनार अनेक दु खनुभार एकदम अङ्गीकार करवा तुल्य छे ।

और फिर भी तीसरा भागके पृष्ठ २४२ का पाठ भाषा सहित नीचे मुजब जानो यथा—

मुजब वर्तने वाले गच्छपक्षी दृष्टिरागी विचारे भोले जीवोके कैसे कैसे हाल होवेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें—

उपरमे उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी इतना लेख लिखनेका कारण यही है कि उत्सूत्रभाषक पुरूष श्रीतीर्थपती श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी और अपने पूर्वजोकी आशातना करने वाला और भोले जीवोको भी उसी रस्ते पहुचानेके कारणसें ससारकी वृद्धि करता है जिससे उसीको पर भवमें तथा भवो भवमे नरकादि अनेक विडम्बना भोगनी पडती है इसलिये महान् पश्चात्तापका कारण बनता है और इस भवमे भी उत्सूत्र भाषकको अनेक उपद्रव भोगने पडते है, तैसे ही छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने भी उत्सूत्र भाषण करके श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक पुरूषोको मिथ्या आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाकर जैनपत्रमें प्रसिद्ध कराके झगडेका मूल खडा किया और बडे जोरके साथ पुन जैनपत्रमे फैलाया जिससे आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जन-पुरुष तथा अपने [छठे महाशयजीके] पक्षधारी श्रीतप-गच्छके सज्जन पुरूष और खास छठे महाशयजीके मण्डलीके याने श्रीन्यायाम्भोनिधिजीके परिवार वाले भी कितने ही पुरुष छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीपर पूरा अभाव करते है कि ना हक वृथा जो सपसे कार्य्य होलेथे जिसमें विघ्नकारक झगडा खडा किया है इसलिये छठे महाशय जीको इन भवमें भी पूरे पूरा पश्चात्ताप करनेका कारण होगया है तथा करते भी है।

और उत्सूत्र भाषण करके दूसरोको मिथ्या दूषण लगा-

आलुओनाए जिनेरे पमाक आंको अमन अमारी थयाछे कह्युं छे के—उत्सूत्तभासगाण, बोहिणासो अणतसंसारो। पाण च्चए वि निरा उस्सुत्त ता न भासंति ॥ १ ॥ तित्थयर पवयण सुअ, आयरिअ गणहर महड्ढीअ। आसायंतो बहुसो, अणत संसारिओ होइ ॥ २ ॥ उत्सूत्रना भाषकने बोधिबीजनो नाश थायछे अने अनन्त संसारनी वृद्धिथायछे माटे प्राणजता पण धीरपुरुषो उत्सूत्र वचन बोलता नथी तीर्थङ्कर, प्रवचन [जिनशासन] ज्ञान, आचार्य, गणधर, उपाध्याय, ज्ञानादिकनी महर्द्धिकसाधु, साधु ए ओनी आशातना करता प्राणी घणुकरी अनन्त संसारी थायछे।

और सुप्रसिद्ध युगप्रधान श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणजी महाराजने श्रीआवश्यकभाष्य [विशेषावश्यक] में कहा है यथा—जे जिनवयणु तिन्नं, वयण भासन्ति जे उ मन्नति। सम्मदिठीण त, दसणंपि संसार वुड्ढि करंति ॥ १ ॥

भावार्थ—जो प्राणी श्रीजिनेश्वर भगवान् का वचनके विरुद्धवचन [उत्सूत्र] भाषण करता होवे और उसीको जो मानता होवे उस प्राणीका मुख देखना भी सम्यक्त्वधारियोको संसार वृद्धि करता है ॥ १ ॥

अब आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुषोको निष्पक्षपातकी दीर्घदृष्टिसें विचार करना चाहिये कि उत्सूत्र भाषण करने वाला तो संसारमे रुले परन्तु उत्सूत्र भाषकका मुख देखने वाले अर्थात् उस उत्सूत्र भाषक सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट, दुष्टाचारीको श्रद्धापूर्वक वन्दनादि करने वालोको भी संसार की वृद्धिका कारण होता है तो फिर इस वर्त्तमान पञ्चम कालमें उत्सूत्र भाषकोको परमपूज्यमानके उन्हीके कहने

मुजब वर्तने वाले गच्छपक्षी दृष्टिरागी विचारे भोले जीवोके कैसे कैसे हाल होवेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें—

उपरमें उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी इतना लेख लिखनेका कारण यही है कि उत्सूत्रभाषक पुरुष श्रीतीर्थंपती श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी और अपने पूर्वजोकी आशातना करने वाला और भोले जीवोको भी उसी रस्ते पहुचानेके कारणसें संसारकी वृद्धि करता है जिससे उसीको पर भवमें तथा भवो भवमे नरकादि अनेक विडम्बना भोगनी पड़ती है इसलिये महान् पश्चात्तापका कारण बनता है और इस भवमे भी उत्सूत्र भाषकको अनेक उपद्रव भोगने पड़ते है, तैसे ही छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने भी उत्सूत्र भाषण करके श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक पुरुषोको मिथ्या आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाकर जैनपत्रमें प्रसिद्ध कराके झगड़ेका मूल खड़ा किया और बड़े जोरके शाथ पुन जैनपत्रमें फैलाया जिससे आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जन-पुरुष तथा अपने [छठे महाशयजीके] पक्षधारी श्रीतप-गच्छके सज्जन पुरुष और खास छठे महाशयजीके मण्डलीके यानि श्रीन्यायाम्भोनिधिजीके परिवार वाले भी कितने ही पुरुष छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीपर पूरा अभाव करते है कि ना हक वृथा जो संपसे कार्य्य होतेथे जिसमें विघ्नकारक झगड़ा खड़ा किया है इसलिये छठे महाशय-जीको इन भवमें भी पूरे पूरा पश्चात्ताप करनेका कारण होगया है तथा करते भी है।

और उत्सूत्र भाषण करके दूसरोको मिथ्या दूषण लगा-

मेरे कारणसें उपरोक्त शास्त्रोंके प्रमाणानुसार पर भवमें तथा शवोभवमें छठे महाशयजीको पूरे पूरा पश्चात्ताप करना पड़ेगा इस लिये प्रथमही पूर्वापरका विचार किये बिना पश्चात्ताप करनेका काम्य करना छठे महाशयजी को योग्य नही था तथापि किया तो अब मेरेको धर्मबन्धु की प्रीतिसें छठे महाशयजीको यही कहना उचित है कि आपको उपरोक्त कार्य्योंसे संसार वृद्धिके कारणसें यावत् भवोभवमें पश्चात्ताप करनेका भय लगता होवे तो गच्छका पक्षपात और पण्डितताभिमान को दूरकरके सरलतापूर्वक मन वचन कायासें श्रीचतुर्विध संघसमक्ष उपर कहे सो आपके कार्य्योंका मिथ्या दुष्कृत देकर तथा आलोचना लेकर और अपनी भूल पीछी ही जैनपत्र द्वारा प्रगट करके उपरोक्त उत्सूत्रभाषणके फल विपाकोंसें अपनी आत्माको बचा लेना चाहिये नही तो बड़ी ही मुश्किलीके साथ उपर कहे सो विपाकोको भवान्तरमें भोक्ते हुए जरूर ही पश्चात्ताप करनाही पड़ेगा वहा किसीका भी पक्षपात नही है इस लिये आप विवेक बुद्धिवाले विद्वान् हो तो हृदयमें विचार करके चेत जावो मैंने तो आपका हितके लिये इतना लिखा है सो मान्य करोगे तो बहुत ही अच्छी बात है आगे इच्छा आपकी ,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजी—अंग्रेज सरकारके कायदे कानून दिखाकर एक कहेगा दो सुनेगा—ऐसा लिखते हैं इस पर मेरेको बड़ेही अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि छठे महाशयजी साधु हो करके भी इतना मिथ्यात्वको वृथा क्यों फैलाते है क्योंकि सम्यक्त्वधारी

आत्मार्थी सज्जन पुरुष होते है सो तो अपनी भूलको मञ्जूर कर दूसरेकी हितशिक्षारूप सत्य वातको प्रमाण करके उपकार मानते हुए सुख शान्तिसे सप करके वर्त्तते है और मिथ्यात्वी होते है सो सत्य बातकी हितशिक्षाको कहनेवाले पर क्रोध-युक्त हो कर अपनी भूलको न देखते हुए अन्यायसे झगडे का मूल खडा करनेके लिये (हितशिक्षाको ग्रहण नही करते हुए) एककी दो सुनाकर रागद्वेषसे विसवाद करते हैं तैसेही छठे महाशयजीने भी एककी दो सुनानेका दिखाया परन्तु शास्त्रार्थसे न्याय पूर्वक सत्य बातको ग्रहण करने की तो इच्छा भी न रक्खी, इस बातको दीर्घ दृष्टिसे सज्जन पुरुष अच्छी तरहसे विशेष विचार सकते है,--

और सरकारी कानून कायदेका छठे महाशयजीने लिखा है इस पर भी मेरेको यही कहना पडता है कि प्रथम झगडा खडा करनेवाले और दूसरोको मिथ्या दूषण लगानेवाले तथा मायावृत्तिकी धूर्त्ताचारीसे वक्रोक्तिकरके-पण्डिताभिमानसे अनुचित शब्द लिखनेवाले और खानगी में न्याय रीतिसे पूछने वालेको प्रसिद्धीमे लाकर उसीको अयोग्य ओपमा लगाके अवहेलना करने वाले आप जैसोको हितशिक्षा देनेके लिये तो जरूर करके सरकारी कानून तैयार हैं परन्तु आप साधुपदके भेषधारी हो इसलिये सज्जन पुरुष ऐसा करना उचित नही समझते हैं तथापि आप तो उसीके योग्य हो-महाशयजी याद रक्खो-सरकारके विरुद्ध चलनेसें इसीही भवमे जलदि शिक्षा मिलती है तैसेही श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके विरुद्ध चलने वाले उत्सूत्र भाषकको भी इस भवमें लौकिकमें तिर-

ऐसे कारणोंसे उपरोक्त शास्त्रोंके प्रमाणानुसार पर भवमें
तथा शासनमें छठे महाशयजीको पूरे पूरा पश्चात्ताप
करना पड़ेगा इस लिये प्रथमही पूर्वापरका विचार
किये बिना पश्चात्ताप करनेका कार्य्य करना छठे महाशयजी
को योग्य नही था तथापि किया तो अब मेरेको धर्मबन्धु
की प्रीतिसें छठे महाशयजीको यही कहना उचित है कि
आपको उपरोक्त कार्य्योंसे संसार वृद्धिके कारणसे
यावत् भवोभवमें पश्चात्ताप करनेका भय लगता होवे
तो गच्छका पक्षपात और पण्डिताभिमान को दूरकरके
सरलतापूर्वक मन वचन कायासें श्रीचतुर्विध संघसमक्ष
उपर कहे सो आपके कार्य्योंका मिथ्या दुष्कृत देकर तथा
आलोचना लेकर और अपनी भूल पीछी ही जैनपत्र द्वारा
प्रगट करके उपरोक्त उत्सूत्रभाषणके फल विपाकोंसें अपनी
आत्माको बचा लेना चाहिये नही तो वही ही मुश्किलीके
साथ उपर कहे सो विपाकोको भवान्तरमें भोक्ते हुए जरूर
ही पश्चात्ताप करनाही पड़ेगा वहां किसीका भी पक्षपात
नही है इस लिये आप विवेक बुद्धिवाले विद्वान् हो तो
हृदयमें विचार करके चेत जावो मैंने तो आपका हितके
लिये इतना लिखा है सो मान्य करोगे तो बहुत ही अच्छी
बात है आगे इच्छा आपकी ,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजी—अंग्रेज सरकारके
कायदे कानून दिखाकर एक कहेगा दो सुनेगा—ऐसा
लिखते हैं इस पर मेरेको बडेही अफसोसके साथ लिखना
पडता है कि छठे महाशयजी साधु हो करके भी इतना
मिथ्यात्वको वृथा क्यों फैलाते हैं क्योंकि सम्यक्त्वधारी

चौमासीसे दिनोकी गिनती करके पचास दिनेही निश्चय करके पर्युषणा करनेका कहा है तथापि आप लोग दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे ८० दिने पर्युषणाकरते हो और ८० दिनके ५० दिन भोले जीवोको दिखाते हो सो भी माया सहित उत्सूत्र भाषण हैं ।

६ छठा—मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है तथापि आप लोग मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

७ सातमा—श्रीनिशीथ भाष्यमें १ तथा चूर्णिमे २ श्रीवृहत्कल्पभाष्यमें ३ तथा चूर्णिमें ४ और वृत्तिमें ५ श्रीसमवायाङ्गजीमें ६ तथा तद्वृत्तिमें ७ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसे चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें पचासदिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको भी आप लोग वर्त्तमानमें दो श्रावणादि होनेसे पाच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें भी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रहनेका ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

८ आठमा—अधिक मास होनेसे प्राचीन कालमें भी पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन रहते थे तथा वर्त्तमानमें भी श्रावणादि अधिक मास होनेसे पर्युषणाके पिछाडी १००दिन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते हैं जिसको निषेध करते हो और १०० दिन मानने वालेको दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं ।

९ नवमा—अधिक मासके ३० दिनोका शुभाशुभकृत्य तथा धर्मकर्म ओर सर्व व्यवहारको गिनतीमें लेकर मान्य करते हो

स्वर्गादि तथा परभवमें और भवो भवमें बहुत भारी बार बार नरकादिमें शिक्षा मिलती है इस बातका विचार सज्जन पुरुष सब करते है तब तो आपके गुरुजन न्यायाम्भोनिधिजी परीक्षको और आपके गच्छवासी हठग्राही जो जो पूर्व उत्सूत्र भाषक हुए है तथा वर्त्तमानमें आप जैसे है और भी आगे होवेंगे उन्होंको क्या क्या शिक्षा मिलेगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने क्योंकि आप लोग उत्सूत्र भाषणकी अनेक बातें कर रहे हो जिसमेंसें थोडीसी बाते नमुना रूप इस जगह लिख दिखाता हूं,—

१ प्रथम–अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो उत्सूत्रभाषण है।

२ दूसरा–अधिकमास होनेसे तेरह मासोके पुण्यपापादि कार्य्य करके भी तेरह मासोके पापकृत्योकी आलोचना नही करते हो और दूसरे तेरह मासोके पापकृत्योकी आलोचना करते है जिन्होको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

३ तीसरा–श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेवालोको मिथ्या दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

४ चौथा–जैन ज्योतिषाधिकारे सर्वत्र शास्त्रोमें अधिक मासको गिनतीमें अच्छी तरहसे खुलासेके साथ प्रमाण करा है तथापि आप लोग जैन शास्त्रोमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण नही करा है ऐसा प्रत्यक्ष महा मिथ्या बोलते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

५ पांचमा–पर्युषणाधिकारे सर्वत्र जैन शास्त्रोमें आषाढ

चौमासीसे दिनोकी गिनती करके पचास दिनेही निश्चय करके पर्युषणा करनेका कहा है तथापि आप लोग दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे ८० दिने पर्युषणाकरते हो और ८० दिनके ५० दिन भोले जीवोको दिखाते हो सो भी माया सहित उत्सूत्र भाषण हैं।

६ छठा–मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है तथापि आप लोग मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

७ सातमा–श्रीनिशीथ भाष्यमें १ तथा चूर्णिमे २ श्रीवृहत्कल्पभाष्यमें ३ तथा चूर्णिमें ४ और वृत्तिमे ५ श्रीसमवायाङ्गजीमें ६ तथा तद्वृत्तिमें ७ इत्यादि अनेक शास्त्रोमें मासवृद्धिके अभावसे चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें पचासदिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको भी आप लोग वर्त्तमानमें दो श्रावणादि होनेसे पाच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें भी पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रहनेका ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

८ आठमा–अधिक मास होनेसे प्राचीन कालमें भी पर्युषणाके पिछाडी १०० दिन रहते थे तथा वर्त्तमानमें भी श्रावणादि अधिक मास होनेसे पर्युषणाके पिछाडी १००दिन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते हैं जिसको निषेध करते हो और १०० दिन मानने वालोको दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं।

९ नवमा–अधिक मासके ३० दिनोका शुभाशुभकृत्य तथा धर्मकर्म और सर्व व्यवहारको गिनतीमें लेकर मान्य करते हो

स्वर्गादि तथा परभवमें और भवो भवमें दुःख गहरी बार बार नरकादिमें शिक्षा मिलती है इस बातका विचार सज्जन पुरुष सब करते है तब तो आपके गुरुजन न्यायाम्भो निधिजी महाराजको और आपके गच्छवासी हठग्राही जो जो पूर्वे उत्सूत्र भाषक हुए है तथा वर्तमानमें आप जैसे है और भी आगे होवेंगे उन्होंको क्या क्या शिक्षा मिलेगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने क्योंकि आप लोग उत्सूत्र भाषणकी अनेक बातें कर रहे हो जिसमेंसे थोडीसी बाते नमुना रूप इस जगह लिख दिखाता हू,—

१ प्रथम—अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो उत्सूत्रभाषण है।

२ दूसरा—अधिकमास होनेसे तेरह मासोके पुण्यपापादि कार्य्य करके भी तेरह मासोके पापकृत्योकी आलोचना नही करते हो और दूसरे तेरह मासोके पापकृत्योकी आलोचना करते है जिन्होको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

३ तीसरा—श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार अधिक मासको गिनतीमे प्रमाण करनेवालोको मिथ्या दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

४ चौथा—जैन ज्योतिषाधिकारे सर्वत्र शास्त्रोमें अधिक मासको गिनतीमें अच्छी तरहसे खुलासेके साथ प्रमाण करा है तथापि आप लोग जैन शास्त्रोमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण नही करा है ऐसा प्रत्यक्ष महा मिथ्या बोलते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

५ पाचमा—पर्युषणाधिकारे सर्वत्र जैन शास्त्रोमे आषाढ

अनन्त ससारकी वृद्धिरूप यह भी महान् उत्सूत्र भाषण है।

१४ चौदहमा–श्रीजैनशास्त्रोमें षट्द्रव्यरूप शाश्वती वस्तुयोमेसें कालद्रव्य रूपभी एक शाश्वती वस्तु है जिसका एक समयमात्र भी जो कालव्यतीत होजावें उसीका गिनती मे कदापि निषेध नही हो सकता है यह अनादि स्वय सिद्ध मर्यादा है तथापि आपलोग समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्षसें, दो पक्षका जो एकमास बनता है उसी को गिनतीमे निषेध करके अनादि स्वय सिद्ध मर्य्यादाको अपनी कल्पनासें तोडमोडकरके ३० मासें–एकमासका गिनतीमें निषेध करनेके हिसाबसें, ३० वर्षे–एकवर्ष, ३०युगे–एकयुग, इसी तरहसे, ३० कोडा कोडी सागरोपमें–एक कोडाकोडी सागरोपमके कालको–उडा कर गिनतीमें निषेध करनेका वृथा प्रयास करते हो सो भी यह महान् उत्सूत्र भाषण है।

और १५ पदरहमा–जैनपञ्चाङ्ग का अभी वर्त्तमानकालमे विच्छेद है तथापि आपलोगोकी तरफसे मिथ्यात्वकी वृद्धिकारक मनमानी अपनी कल्पनाका पञ्चाङ्गको जैन-पञ्चाङ्ग ठहराकर प्रसिद्ध करवाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है

१६ सोलहमा–श्रीनिशीथसूत्रके भाष्यादि शास्त्रोमे सूर्य्योदयकी पर्व तिथिको न माननेवालेको मिथ्यात्वी कहा है और लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी वगैरह तिथिया होती है उसीमें पर्वरूप प्रथम चतुर्दशी सूर्य्योदयसें लेकर अहोरात्रि ६० घडी तक सपूर्ण चतुर्दशीका ही वर्ताव रहता है उसीमें अपर्व रुप त्रयोदशीके वर्तावका गन्ध भी नही है तथापि आप लोग अपने पक्षपातके जोरसे और पण्डिताभिमानका

इस न्यायानुसार दो आश्विनमास होनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासे कहते हो सो भी प्रत्यक्ष अन्यायकारक उत्सूत्र भाषण है।

१० दशमा–जैन शास्त्रोंमें मास वृद्धिको बारह मासोंके ऊपर शिखररूप अधिक मासको कहा है और लौकिकमें भी पुरुषोत्तम अधिक मास कहा है इसलिये धर्म्मव्यवहारमें अधिक मास बारह मासोंसे विशेष उत्तम महान् पुरुषरूप है जिसको भी आप लोग नपुंसक नि सत्व तुच्छादि कहके भोले जीवोंके धर्म्मकार्य्योंमें हानी पहुचानेका कारण करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं।

११ इग्यारमा–अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य शास्त्रकारोंने दिनी हैं तथापि आप लोग कालचूला कहनेसे अधिक मास गिनतीमें नही आता है ऐसा कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१२ बारहमा–अधिक मासमें प्रत्यक्ष वनस्पति फल फूलादिसे प्रफुल्लित होती है तथापि आप लोग नही फूलनेका कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१३ तेरहमा–अधिक मासके कारणसे श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अभिवर्द्धितसंवत्सर तेरह मासोंका कहा है तथापि आप लोग अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरका प्रमाणको तथा अभिवर्द्धित संवत्सरकी संज्ञाको नष्ट कर देते हो इसलिये श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कारक

शास्त्रोमें भी पूर्णिमा अथवा अमावस्याके दिन ग्रहण होने का कहा है तथापि आप लोग सब दुनियाके तथा शास्त्रो के भी विरुद्ध होकरके प्रगट पने ग्रहणयुक्त पूर्णिमा अथवा अमावस्याको चतुर्दशी ठहराकर चतुर्दशीकाही ग्रहण मानते हो यह तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक उत्सूत्र भाषण है।

२० वीशमा—चतुर्दशी का क्षय होनेसे पाक्षिककृत्य पूर्णिमा अथवा अमावस्याको करनेका जैनशास्त्रोमें कहा है तथापि आप लोग नही करते हो और दूसरे करने वालोको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२१ एकवीशमा—आप लोग एकान्त आग्रहसे सूर्य्योदयके विनाकी तिथिको पर्वतिथिमें नही मानना, ऐसा कहते हो परन्तु जब चतुर्दशीका क्षय होता है तब सूर्य्योदयकी त्रयोदशीको चतुर्दशी कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२२ बावीशमा—श्रीजैनज्योतिषकी गिनती मुजब, चन्द्र के गतिकी अपेक्षासे श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति तथा श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति वृत्ति वगैरह अनेक जैनशास्त्रोमें पर्वकी तिथियाके क्षय होनेका लिखा है और लौकिक पञ्चाङ्गमें भी कालानुसार पर्वकी तिथियाका क्षय होता है और जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेकी पूर्वाचार्य्योंकी खास आज्ञा है, तैसेही आप लोग—दीक्षा, प्रतिष्ठा वगैरह धर्म्म व्यवहारके कार्य्योंमें घड़ी, पल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग राशिचन्द्र, शुभाशुभ मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास वगैरह सब व्यवहार लौकिक पञ्चाङ्गानुसार करते हो तथापि आप लोग, लौकिक पञ्चाङ्गमें जो पर्वतिथियाका क्षय होता है उसीको नही मानते हो और माननेवालोको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

कल्पमें अबरदस्ति सूर्य्योदयकी पर्वरूप प्रथम चतुर्दशीको पर्वरूप नही मानते हुए, अपर्वरूप त्रयोदशी बनाकरके गल्याते, असल्याते, अनन्ते जीवोंकी हानी तथा आत्मस्याद्वादि पञ्चाश्रव सेवनका और भव भ्रमार व्यवहारके कार्य्योंसे आरम्भादि होनेका कारणमें अधोगतिके रस्ता की सर्वोत्तम कार्य्योमें आपलोग कटीबद्ध तैयार हो और अपने सयमरूप जीवितव्यके नष्ट होनेका और मिथ्यात्वी बननेका कुछ भी भय नही करतेहो इस लिये यह भी उत्सूत्र भाषण है ।

१७ सतरहमा–भी इसीही तरहसे लौकिक पञ्चाङ्गमें दो दूज, दो पञ्चमी, दो अष्टमी, दो एकादशी, वगैरह सूर्य्योदयकी पर्वतिथियां होती है जिसको बदल कर, अपर्वकी–दो एकम, दो चतुर्थी, दो सप्तमी, दो दशमी वगैरह करके मानते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

१८ अठारहमा–भी इसीही तरहसे विशेष करके लौकिक पञ्चाङ्गमें सपूर्ण चतुर्दशी पर्वरूप तिथि होती है और दो पूर्णिमा तथा दो अमावस्या भी होती है जिसको तोडमोड करके सपूर्ण चतुर्दशीकी, त्रयोदशी और दो पूर्णिमाकी तथा दो अमावस्याकी भी दो त्रयोदशी कोइ भी जैन शास्त्रोके प्रमाण बिना अपनी कपोल कल्पनासे बना लेते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं ।

१९ एगुनवीशमा–लौकिक पञ्चाङ्गमें जब कोई कोई वरस दो पूर्णिमा अथवा दो अमावस्या होती है उसीमें चन्द्र अथवा सूर्य्यका ग्रहण प्रथम पूर्णिमाको अथवा प्रथम अमावस्याको होता है जिसकी सब दुनिया मानती है और

शास्त्रोंमें भी पूर्णिमा अथवा अमावस्याके दिन ग्रहण होने का कहा है तथापि आप लोग सब दुनियाके तथा शास्त्रो के भी विरुद्ध होकरके प्रगट पने ग्रहणयुक्त पूर्णिमा अथवा अमावस्याको चतुर्दशी ठहराकर चतुर्दशीकाही ग्रहण मानते हो यह तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक उत्सूत्र भाषण है।

२० वीशमा–चतुर्दशी का क्षय होनेसे पाक्षिककृत्य पूर्णिमा अथवा अमावस्याको करनेका जैनशास्त्रोमें कहा है तथापि आप लोग नही करते हो और दूसरे करने वालोको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२१ एकवीशमा–आप लोग एकान्त आग्रहसे सूर्य्योदयके बिनाकी तिथिको पर्वतिथिमें नही मानना, ऐसा कहते हो परन्तु जब चतुर्दशीका क्षय होता है तब सूर्य्योदयकी त्रयोदशीको चतुर्दशी कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२२ बावीशमा–श्रीजैनज्योतिषकी गिनती मुजब, चन्द्र के गतिकी अपेक्षासे श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति तथा श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति वृत्ति वगैरह अनेक जैनशास्त्रोंमें पर्वकी तिथियाके क्षय होनेका लिखा है और लौकिक पञ्चाङ्गमें भी कालानुसार पर्वकी तिथियाका क्षय होता है और जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेकी पूर्वाचार्य्योंकी खास आज्ञा है, तैसेही आप लोग–दीक्षा, प्रतिष्ठा वगैरह धर्म्म व्यवहारके कार्य्योंमें घडी, पल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग राशिचन्द्र, शुभाशुभ मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास वगैरह सब व्यवहार लौकिक पञ्चाङ्गानुसार करते हो तथापि आप लोग, लौकिक पञ्चाङ्गमे जो पर्वतिथियाका क्षय होता है उसीको नही मानते हो और माननेवालोको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२३ तेवीसवां—लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी होती है उन्होंके मुजब आप लोगोंके पूर्वजोंने भी दो चतुर्दशी लिखी है जिनको आप लोग नहीं मानते हो और लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब युक्तिपूर्वक कालानुसार और पूर्वाचार्योंकी परम्परासे दो चतुर्दशी वगैरह पर्व तिथियोंको माननेवालोंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२४ चौवीसवां—आपके पूर्वज कृत ग्रन्थमें तिथिका घटावध सम्बन्धी जो प्रमाण बताया है उसी मुजब आप लोग नहीं मानते हो और स्वच्छन्दाचारीसे (अपनी मति की कल्पना करके) सपूर्ण प्रथम पर्वतिथिको अपर्व ठहरा करके दूसरी–दो अथवा तीन पल (एक मिनिट) मात्र की अल्पतर तिथिमें जाते हो और दूसरे–कालानुसार युक्ति पूर्वक तथा विशेष धर्म्मवृद्धिके लाभका कारण जानके प्रथम सपूर्ण ६० घडी की पर्वतिथिको मानते हैं तैसेही दूसरी पर्व तिथिको भी यथायोग्य मानते हैं जिन्होंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

इस तरहकी अनेक बातें आपलोगोंमें उत्सूत्र भाषणकी हो रही है जिसका तथा आपके गुरुजी श्रीन्यायाम्भो निधिजीनें भी जैनसिद्धान्त समाचारी पुस्तकका नाम रखके अनुमान ५० जगह उत्सूत्र भाषण करा है जिसका भी नमुनारूप थोडीसी बातें आगे लिखनेमें आवेंगे और उपरकी सब बातोंका निर्णय शास्त्रोंके प्रमाणसे और युक्ति पूर्वक मेरे लिखीत इन्ही ग्रन्थको आदिसे अन्त तक स्थिर चित्तसें सत्यग्राही होकर निष्पक्षपातसें मध्यस्थ दृष्टि रखकर विशुद्धभावसें पढनेवाले आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको अच्छी तरहसें मालूम हो सकेगा,—

और उत्सूत्र भाषणके फलविपाक सम्बन्धी उपरमे ही पृष्ट २४९ से २५६ तक लिखनेमें आया है उसीका भय लगता हो, तथा श्रीजिनेश्वर भगवान् के वचन पर आपलोगोकी कुछ भी श्रद्धा हो, और अपनेही श्रीतपगच्छके नायक श्रीदेवेन्द्र सूरिजी तथा श्रीरत्नशेखर सूरिजीके उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी उपरोक्त वाक्योको आपलोग सत्यमानतेहो, और श्रीदेवेन्द्र सूरीजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति आपलोगोके समुदाय में विशेष करके व्याख्यानाधिकारे तथा पठन पाठनमे भी वारवार आती है उन्हीके वाक्यार्थकी आपके हृदयमें धारणा हो, तो ऊपरका लेखको परमहितशिक्षारूप समझके उत्सूत्र भाषण करते हो जिसको छोडो, तथा उत्सूत्र भाषण करा होवे उसीका मिथ्या दुष्कृत देवो, और गच्छके पक्षपात को तथा पण्डिताभिमानको छोडके श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञा मुजब शास्त्रोके महत् प्रमाणानुसार आषाढ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेका और अधिक मासको गिनतीमें प्रमाणादि अनेक सत्य बातोको ग्रहण करो, और भक्तजनोको करावो जिससे आपकी और आपके भक्तजनोकी आत्मसिद्धिका रस्तापावो—श्रीजिनाज्ञारूपी सम्यक्त्वरत्नके सिवाय मोक्ष साधनमे गच्छका पक्षपात तथा पण्डिताभिमान कुछ भी काम नही आता है इसलिये गच्छ पक्षको छोडके श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातको ग्रहण करना सोही आत्मार्थी विवेकी विद्वान् सज्जन पुरुषोको परम उचित है ।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (थोडे समयकी बात है बुद्धिसागर नामा खरतरगच्छीय

मुनिके नामका पत्र हमारे पास आया जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखाथा हमने मुनासिब नही समझा कि वृथा समय खोकर परस्पर द्वेषाग्नी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे) इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीने अपनी मायावृत्तिकी चातुराईको खूब प्रगट करी है क्योंकि प्रथम आपनेंही दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया था उसी सम्बन्धी आपको श्रीबुद्धिसागरजीनें शास्त्रका प्रमाण खानगीमें ही पत्र भेजके पूछा था जिसका जबाब पीछा खानगीमें ही लिख भेजनेमें तो कठे महाशयजी आपको बहुत समय वृथा खोनेका और परस्पर द्वेषोंकी वृद्धि होनेका बड़ा ही भय लगा परन्तु लम्बा चौड़ा लेख जैनपत्रमें भङ्गी चमारादि शब्दोंसे तथा निष्प्रयोजनकी अन्यान्य बातोंको और श्रीबुद्धिसागरजीको सूर्पनखाकी वृथा अनुचित ओपमा लगाके उन्हकी खानगीकी पूछी हुई बातको (पीछा ही खानगीमें जबाब न देते हुए) प्रसिद्धमें लाकर अन्यायके रस्तेसे उन्हकी अवहेलना करनेमें और श्रीखरतरगच्छवालोंके परमपूज्य प्रभावकाचार्यजी श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त सत्यवाक्यको पक्षपातके जोरसे अप्रमाण ठहरा कर श्रीखरतरगच्छवालोंके दिलमे पूरे पूरा रज उत्पन्न करके–और दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें भी—सर्व संघको, कान्फरन्सको, शेठियोंको, वकीलको, बेरिस्टरको, नाणाकोथली (रुपैयोंकी थेली) वगैरहको सावधान सावधान करके श्रीसंघके आपसमें और

कोर्ट कचेरीमें बड़ेही भारी झगड़ेके कारण करनेका लेख लिखनेमें तथा प्रसिद्ध करानेमें तो छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आपको खूब लम्बा चौड़ा समय भी मिल गया, और परस्पर आपसमें ईर्षाकी वृद्धि होनेका किञ्चित् भी भय न लगा परन्तु श्रीबुद्धिसागरजीके पत्रका जबाब खानगीमें लिखनेसें छठे महाशयजीको वृथा समय खोनेका तथा परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम करने का भय लगा, यह कैंसी अलौकिक विद्वत्ताकी चातुराई (सज्जन पुरुषोंको आश्चर्य्य उत्पन्नकारक) छठे महाशयजी आपने गच्छ पक्षी दृष्टिरागी बालजीवोंको दिखाकर अपनी बातको जमाई सो आत्मार्थी विवेकी विद्वान् पुरुष स्वय विचार लेवेंगे ।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (कितनेही समयसे गच्छ सम्बन्धी टंटा प्राय दबा हुआ है तपगच्छ खरतरगच्छ दोनोंही पक्ष प्राय परस्पर सपसे मिले जुलेसे मालूम होते हैं) इस लेख पर भी मेरेको यही कहना उचित है कि गच्छ सम्बन्धी टंटा दबाकरके शान्त करनेका और सपसे वर्त्तनेका श्रीखरतरगच्छवालोंकी महान् सरलताका कारण है क्योंकि श्रीतपगच्छके तो आप जैसे अनेक महाशय सपके मूलमे अग्नी लगाके श्री खरतरगच्छवालोंकी सत्य बातका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषण करके अपनी मति कल्पनाकी मिथ्या बातका स्थापन करनेके लिये विशेष करके हर वर्ष गाम गाममें पर्युषणाके व्याख्यानाधिकारे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा-नुसार अनेक शास्त्रोंके महत् प्रमाण मुजब अधिक मासकी

धुमिके नामका पत्र हमारे पास आया जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखा था इसमें मुनासिब नही समझा कि वृथा समय खोकर परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे) इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीने अपनी मायावृत्तिकी चातुराईको खूब प्रगट करी है क्योंकि प्रथम आपनेंही दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया था इसी सम्बन्धी आपको श्रीबुद्धिसागरजीनें शास्त्रका प्रमाण खानगीमें ही पत्र भेजके पूछा था जिसका जबाब पीछा खानगीमें ही लिख भेजनेमें तो कठे महाशयजी आपको बहुत समय वृथा खोनेका और परस्पर ईर्षाकी वृद्धि होनेका बड़ा ही भय लगा परन्तु लम्बा चौड़ा लेख जैनपत्रमें भङ्गी चमारादि शब्दोंसे तथा जिनप्रयो जनकी अन्यान्य बातोंको और श्रीबुद्धिसागरजीको सूर्य नखाकी वृथा अनुचित ओपमा लगाके उन्हकी खानगीकी पूछी हुई बातको (पीछा ही खानगीसे जबाब न देते हुए) प्रसिद्धमे लाकर अन्यायके रस्तेसे उन्हकी अवहेलना करनेमें और श्रीखरतरगच्छवालोके परमपूज्य प्रभावका-चार्य्यजी श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक शास्त्रोके प्रमाणयुक्त सत्यवाक्यको पक्षपातके जोरसे अप्रमाण ठहरा कर श्रीखरतरगच्छवालोके दिलमे पूरे पूरा रज उत्पन्न करके–और दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें भी—सर्व संघको, कान्फरन्सको, शेठियोको, वकी लको, बेरिस्टरको, नाणाकोथली (रुपैयोकी थेली) वगै रहको सावधान सावधान करके श्रीसंघके आपसमें और

कोर्ट कचेरीमें बड़ेही भारी झगड़ेके कारण करनेका लेख लिखनेमें तथा प्रसिद्ध करानेमें तो छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आपको खूब लम्बा चौड़ा समय भी मिल गया, और परस्पर आपसमें ईर्षाकी वृद्धि होनेका किञ्चित् भी भय न लगा परन्तु श्रीबुद्धिसागरजीके पत्रका जवाब खानगीमें लिखनेसे छठे महाशयजीको वृथा समय खोनेका तथा परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम करनेका भय लगा, यह कैसी अलौकिक विद्वत्ताकी चातुराई (सज्जन पुरुषोको आश्चर्य्य उत्पन्नकारक) छठे महाशयजी आपने गच्छ पक्षी दृष्टिरागी बालजीवोको दिखाकर अपनी बातको जमाई सो आत्मार्थी विवेकी विद्वान् पुरुष स्वय विचार लेवेंगे।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (कितनेही समयसे गच्छ सम्बन्धी टंटा प्राय दबा हुआ है तपगच्छ खरतरगच्छ दोनोही पक्ष प्राय परस्पर सपसे मिले जुलेसे मालूम होते हैं) इस लेख पर भी मेरेको यही कहना उचित है कि गच्छ सम्बन्धी टंटा दबाकरके शान्त करनेका ओर सपसे वर्त्तनेका श्रीखरतगच्छवालोकी महान् सरलताका कारण है क्योंकि श्रीतपगच्छके तो आप जैसे अनेक महाशय सपके मूलमे अग्नी लगाके श्री खरतरगच्छवालोकी सत्य बातका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषण करके अपनी मति कल्पनाकी मिथ्या बातका स्थापन करनेके लिये विशेष करके हर वर्षे गाम गाममें पर्युषणाके व्याख्यानाधिकारे श्रीजिनेश्वर भगवानूकी आज्ञानुसार अनेक शास्त्रोके महत् प्रमाण मुजब अधिक मासकी

गिनती अनादि मर्य सिद्ध है जिसका खवहन करके और श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महान् पुरुषराचार्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके भी पूर्वाचार्योंने श्रीवीर प्रभुके, छ कल्याणक अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहे हैं तथापि आप लोग श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातनाका भय न करते उन्ही महाराजोंसे विरुद्ध हो करके, छ कल्याणकका निषेध करते हो और श्रीखरतरगच्छवालोंके ऊपर मिथ्या कटाक्ष करते हुए अनेक बातोंका टंटा खडा करनेका कारण करनेवाले आप जैसे अनेक कदाग्रह तैयार हैं और अपने संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं इस बातको इसीही ग्रन्थको संपूर्ण पढनेवाले विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे और इसका विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थके अन्तमें भी करनेमें आवेगा यहा श्रीखरतरगच्छवालोंकी कैसी सरलता है और श्रीतपगच्छवाले आप जैसोंकी कैसी वक्रता है जिसका भी अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा।

और आगे फिरभी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (उनमें–अर्थात्, तपगच्छके खरतरगच्छके आपसमें—फरक पडनेसें फुळक दवे हुए जैनशासनके वेरियोका जोर हो जानेका सम्भव है) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना पडता है कि–छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आप श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके आपसमें विरोध वढाकर सपको नष्ट करना नही चाहते हो और दोनु गच्छको सपसे मिले जुलेसें रहनेकी जो आप अन्तर भावसे इच्छा रखते हो तबतो श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक महत् शास्त्रोंके प्रमाण

युक्त श्रीखरतरगच्छवालोकी सत्य बातोको प्रमाण करके अपनी कल्पित बातोको छोड़ दो और श्रीखरतरगच्छवालो पर मिथ्या आक्षेप जो आपने उत्सूत्र भाषण करके करा है तथा श्रीबुद्धिसागरजी पर जो जो अन्यायसे अनुचित लेख लिखके जैनपत्रमें प्रसिद्ध कराया है जिसकी क्षमा मागकर उत्सूत्र भाषणका मिथ्या दुष्कृत दो और अपनी भूलको पिछीही जैन पत्रमें प्रगट करके सुखशान्तिसे सप करके वर्त्तो तब दोनु गच्छके सप रखने सम्बन्धी आपका लिखना सत्य हो सकेगा परन्तु जब तक छठे महाशयजी आपके बिना विचारके करे हुए अनुचित कार्य्योंकी आप क्षमा नही मागोगे और सत्य बातोका ग्रहण भी नही करते हुए अपनी कल्पित बातोके स्थापन करनेके लिये जो वार्त्ताका प्रकरण चलता होवे उसीको छोड़के अन्यायके रस्तेसे अन्यान्य अनुचित बातोको लिखके विशेष झगडा वढाते रहोगे तब तो दोनु गच्छके सप रखने सम्बन्धी आपका लिखना प्रत्यक्ष मायावृत्तिका मिथ्या है और भोले जीवोको दिखाने मात्रही है अथवा लिखने मात्रही है सो बिवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे और दोनु गच्छके आपसमें वादविवादके कारणसे दबे हुए जैनशासनके वेरियोका जोर होनेसें मिथ्यात्व वढनेका छठे महाशयजी जो आपको भय लगता होवे तो आपनेही प्रथम जैनपत्रमें शास्त्रानुसार चलनेवालोको मिथ्या दूषण लगाके उत्सूत्र भाषणसे झगडा खडा करा और पुन पुन (दीर्घकाल चलने रूप) जैन पत्रमें फैलाया है जिसको पिछीही अपने हाथसें मिथ्या दुष्कृतसे क्षमाके साथ अपनी भूलको जैन

गिनती प्रमादि स्वय सिद्ध है जिसका प्रवचन करके और श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महान् पुरुषेराचार्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके भी पूर्वाचार्योंने श्रीवीर-प्रभुके, छ कल्याणक अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहे हैं तथापि आप लोग श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातनाका भय न करते उन्ही महाराजोंसे विरुद्ध हो करके, छ कल्याणकका निषेध करते हो और श्रीखरतरगच्छवालोंके ऊपर मिथ्या कटाक्ष करते हुए अनेक बातोंका टटा खडा करनेका कारण करनेवाले आप जैसे अनेक कदाग्रह तैयार हैं और अपने ससार वृद्धिका भय नही रखते हैं इस बातको इसीही ग्रन्थको सपूर्ण पढनेवाले विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे और इसका विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थके अन्तमें भी करनेमें आवेगा यहा श्रीखरतरगच्छवालोंकी कैसी सरलता है और श्रीतपगच्छवाले आप जैसोंकी कैसी वक्रता है जिसका भी अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा।

और आगे फिरभी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (उनमें–अर्थात्, तपगच्छके खरतरगच्छके आपसमें—फरक पडनेसें कुछक दवे हुए जैनशासनके वेरियोंका जोर हो जानेका सम्भव है) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना पडता है कि–छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आप श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके आपसमें विरोध वढाकर सपको नष्ट करना नही चाहते हो और दोनु गच्छको सपसें मिले जुलेसें रहनेकी जो आप अन्तर भावसे इच्छा रखते हो तबतो श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक महान् शास्त्रोंके प्रमाण

बातका खुलासा पूछा तब उस पण्डितको उसी बातका खुलासा करनेकी बुद्धि नही होनेसे अपने विद्वत्ताकी इज्जत रखनेके लिये उस बातका सम्बन्धको छोडके निष्प्रयोजन की वृथा अन्यान्य बातोको लाकर अनुचित शब्दोसे यावत् क्रोधका सरणा ले करके अपनी विद्वत्ताकी बातको जमाता है परन्तु विवेकी विद्वान् पुरुष उस पण्डितका मिथ्या पण्डिताभिमानको और अन्यायके पाखण्डको अच्छी तरह से समझ लेते हैं–तैसेही छठे महाशयजी आपनें भी करा अर्थात् आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाने सम्बन्धी श्रीबुद्धि-सागरजीनें आपको शास्त्रका प्रमाण पूछा उसीको शास्त्रका प्रमाण बतानेकी आपकी बुद्धि नही होनेसे और शास्त्रका प्रमाण भी आपको नहीं मिलनेसे ऊपर कहे सो नामधारी पण्डितवत् आपने भी अपनी विद्वत्ताकी इज्जत रखनेके लिये शास्त्रका प्रमाण बतानेके सम्बन्धको छोड करके निष्प्रयो-जनकी वृथा अन्यान्य बातोंको लिखकर अनुचित शब्दसे यावत् क्रोधका सरणा लेकर अपनी विद्वत्ताको जमानी चाही परन्तु निष्पक्षपाती विद्वान् पुरुषोके आगे आपका मिथ्या पण्डिताभिमानका और अन्यायके पाखण्डका दर्शाव अच्छी तरहसे खुल गया हैं कि–छठे महाशयजीके पास शास्त्रका प्रमाण न होनेसे श्रीबुद्धिसागरजीकी सूर्प-नखाकी ओपमा वगैरह प्रत्यक्ष मिथ्या वाक्य लिखके अपने नामकी हासी कराई है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीनें सूर्प-नखाकी तरह दोनु पक्षको दुःखदाई होनेका कोई भी कार्य्य नही करा है तथा न दूतियाका सरणा लिया है

पत्रमेंही सुधार करो जिससे दोनुं गच्छवालोंके आपसमें भेद बना रहेगा और दोनु गच्छके आपसमें अपको नष्ट करनेवाले आप लोगोंकी तरफसे पर्युषणाके व्याख्यानमें तथा छापे द्वारा जो जो कार्य्य करनेमें आते हैं उनको भी बन्ध कर दीजिये जिससे दोनु गच्छवालोंके आपसमें जो भेद है उसीसे भी खूब गहरा विशेष भेद हो जावेगा; तब जैन शासनके वैरियोंका कुछ भी जोर नही हो सकेगा, इतने पर भी आप जैसे शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक सत्य बात को ग्रहण नही करते हुए, अन्यायसे वाद विवाद करके भगडेको वढाते रहोंगे जिस पर जो जो जैनशासनके निन्दक शत्रुयोका जोर वढनेका कारण होगा तो जिसके दोषाधिकारी खास आप लोगही होवोगे सो विवेकबुद्धिसे हृदयमें विचार लेना, और आगे श्रीमोहनलालजीके सम्बन्ध में लिखकर तपगच्छकी समाचारीके बाबत जो आपने लिखा है इसका जबाब–अबी भवमें महाशय श्रीमाणक-मुनिजी प्रगट हुवे हैं जिसने अपनी अकलका नमुना जैन पत्रमें प्रगट करा है उसीका जबाब आगे लिखनेमें आवेगा वहा श्रीमोहनलालजी सम्बन्धी भी लिखनेमें आवेगा,–

और छठे महाशयजीने फिर भी अपनी विद्वत्ता की चातुराईका दर्शाव दिखाया है कि–(सूर्पनखा समान जीव उभय पक्षको दु खदायी होते है तद्वत् बुद्धिसागर खरतरगच्छीय मुनि नाम धारकने भी अपनी 'मन कामना पूर्ण न होनेसे रावणके समान ढूंढियोका सरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है) इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि–जैसे किसी पण्डितको किसी आदमीने कोई

जीवोंके सत्यबातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको, हरण करके मिथ्यात्व बढाते है तैसेही श्रीअनन्त जिनेश्वर भगवानोका कहा हुवा तथा प्रमाण भी करा हुवा अधिकमासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये, आप लोग भी अधिकमासकी अनेक प्रकारसे निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले जीवोके सत्य बातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको हरण करके मिथ्यात्व वढाते हो इसलिये श्रीजैनशासनके निन्दक मिथ्यात्वी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो।

२ दूसरा -श्रीजैनशास्त्रोंमें नाम, स्थापना, द्रव्य, और भाव, यह चारोही निक्षेपे मान्य करने योग्य, उपयोगी कहे हैं तथापि ढूंढिये लोग उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनन्त ससारकी वृद्धि कारक, स्थापनादि निक्षेपोंको निषेध करके विना उपयोगके ठहराते हैं तैसेही श्रीजैनशास्त्रोंमे द्रव्य, क्षेत्र, काल, और भावसे, चारोही प्रकारकी चूलाका प्रमाण गिनती करने योग्य, उपयोगी कहा है और गिनतीमें भी लिया है तथापि आप लोग उत्सूत्र भाषण का भय न करते कालचूलादिका प्रमाणको गिनतीमे निषेध करके प्रमाण नही करते हो सो भी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो।

३ तीसरा–ढूंढिये लोग 'मूलसूत्र मानते हैं मूलसूत्र मानते है' ऐसा पुकारते हैं परन्तु अपनी मति कल्पनासे अनेक जगह शास्त्रोंके पाठोका उलटा अर्थ करते हैं और अनेक शास्त्रोके पाठोको तथा अर्थको भी छुपाते हैं और शास्त्रोके प्रमाण विना भी अनेक कल्पित बातोंको करके मिथ्यात्वमे फसते हैं और भोले जीवोंको फसाते हैं तैसेही आपलोग भी 'पञ्चाङ्गी मानते हैं पञ्चाङ्गी मानते हैं' ऐसा

और न युद्धारम्भ करना चाहा है—तथापि श्रीवल्लभविजयजीने मिथ्या लिखा यह बड़ाही अफसोस है परन्तु 'गतीको' भी-जैसा अपने जैसी मनभती है तद्वत् तैसेही छठे महाशयजीने भी निर्दोषी श्रीबुद्धिसागरजीको दोषित ठहरानेके लिये अपने तुल्य मुनका मूर्पनखाके समानका तथा ढूंढियाका मरना लेनेका और युद्धारम्भ करनेका मिथ्या आक्षेप करा मालूम होता है क्योंकि उपरके तुल्य छठे महाशयजीमेंही प्रत्यक्ष है सोही दिखाता हूं,—

जैसे-मूर्पनखा दोनु पक्षवालोंको दुःखदाई हुई तैसेही छठे महाशयजी (श्रीवल्लभविजयजी) भी दोनु गच्छवालोंके आपसका मधको नष्ट करनेके लिये वाद विवादसे झगड़ेका मूल लगाके दोनु गच्छवालोंको तथा अपने गुरुजनोंके नामको और अपने सम्प्रदायवालोंको भी दुःखदाई हुवे है इस लिये मेरेको भी इस ग्रन्थकी रचना करके आठों महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके कुतर्कोंकी (शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक) समीक्षा करके मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये इतना परिश्रम करना पड़ा है सो इस ग्रन्थको पढ़नेवाले विवेकी मध्यस्थ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे,—

और छठे महाशयजी आप लोग अनेक बातोंमें ढूंढिया का सरणा ले कर उन्होंकाही अनुकरण करते हो जिसमेंसें थोड़ीसी बातें इस जगह दिखाता हूं,—

१ प्रथम-श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजीको मानने पूजनेका निषेध करनेके लिये ढूंढिये लोग अनेक प्रकारकी श्रीजिनमूर्तिकी निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले

जीवोंके सत्यबातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको, हरण करके मिथ्यात्व बढाते है तैसेही श्रीअनन्त जिनेश्वर भगवानोका कहा हुवा तथा प्रमाण भी करा हुवा अधिकमासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये, आप लोग भी अधिकमासकी अनेक प्रकारसे निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले जीवोंके सत्य बातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको हरण करके मिथ्यात्व बढाते हो इसलिये श्रीजैनशासनके निन्दक मिथ्यात्वी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो।

२ दूसरा-श्रीजैनशास्त्रोमे नाम, स्थापना, द्रव्य, और भाव, यह चारोही निक्षेपे मान्य करने योग्य, उपयोगी कहे है तथापि ढूंढिये लोग उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनन्त संसारकी वृद्धि कारक, स्थापनादि निक्षेपोको निषेध करके बिना उपयोगके ठहराते हैं तैसेही श्रीजैनशास्त्रोमें द्रव्य, क्षेत्र, काल, और भावसे, चारोही प्रकारकी चूलाका प्रमाण गिनती करने योग्य, उपयोगी कहा है और गिनतीमे भी लिया है तथापि आप लोग उत्सूत्र भाषण का भय न करते कालचूलादिका प्रमाणको गिनतीमे निषेध करके प्रमाण नही करते हो सो भी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो।

३ तीसरा-ढूंढिये लोग 'मूलसूत्र मानते हैं मूलसूत्र मानते हैं' ऐसा पुकारते हैं परन्तु अपनी मति कल्पनासे अनेक जगह शास्त्रोके पाठोका उलटा अर्थ करते हैं और अनेक शास्त्रोके पाठोंको तथा अर्थको भी छुपाते हैं और शास्त्रोंके प्रमाण बिना भी अनेक कल्पित बातोंको करके मिथ्यात्वमे फसते है और भोले जीवोको फसाते हैं तैसेही आपलोग भी 'पञ्चाङ्गी मानते हैं पञ्चाङ्गी मानते हैं' ऐसा

और न युद्धारम्भ करना चाहा है—तथापि श्रीवल्लभविजयजीने मिथ्या लिखा यह बड़ाही अफसोस है परन्तु 'गतीको' की-वेश्या अपने जैसी समझती है तद्वत् तैसेही छठे महाशयजीने भी निर्दोषी श्रीबुद्धिसागरजीको दोषित ठहरानेके लिये अपने कृत्य मुजब सूर्पनखाके समानका तथा ढूंढियाका सरखा लेनेका और युद्धारम्भ करनेका मिथ्या आक्षेप करा मालूम होता है क्योंकि उपरके कृत्य छठे महाशयजीमेंही प्रत्यक्ष है सोही दिखाता हूं,—

जैसे—सूर्पनखा दोनु पक्षवालोंको दुःखदाई हुई तैसेही छठे महाशयजी (श्रीवल्लभविजयजी) भी दोनु गच्छवालोंके आपसका सपको नष्ट करनेके लिये वाद विवादसे झगड़ेका मूल लगाके दोनु गच्छवालोको तथा अपने गुरुजीके नामको और अपने सम्प्रदायवालोको भी दुःखदाई हुवे है इस लिये मेरेको भी इस ग्रन्थकी रचना करके आठों महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके कुतर्कोंको (शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक) समीक्षा करके मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये इतना परिश्रम करना पड़ा है सो इस ग्रन्थको पढनेवाले विवेकी मध्यस्थ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे,—

और छठे महाशयजी आप लोग अनेक बातोंमें ढूंढिया का सरणा ले कर उन्होंकाही अनुकरण करते हो जिसमेंसे थोडीसी बातें इस जगह दिखाता हूं,—

१ प्रथम—श्रीजिनेश्वर भगवान्की प्रतिमाजीको मानने पूजनेका निषेध करनेके लिये ढूंढिये लोग अनेक प्रकारकी श्रीजिनमूर्तिकी निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले

असत्यको छोडकर सत्यको ग्रहण करनेकी इच्छाही नही रखते हैं तैसेही आप लोगोंके भी कृत्य है (इस बातका इस ग्रन्थके अन्तमें खुलासा करनेमें आवेगा) इस लिये उपरकी बातमें भी ढूढियाका सरणा आप लोगही लेते हो ।

६ छठा—जैसे कितनेही ढूढिये लोग शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनमूर्त्तिको मानने पूजने वगैरहकी सत्य बातोको जानते हुए भी अपने मत कदा ग्रहकी झालमें फस करके इस लोककी मानता पूजनाके लिये अपने दृष्टि-रागी भक्तजनोके आगे मिथ्यात्वके उदयसें सत्य बातोका निषेध करके अपने अन्ध परम्पराकी उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित बातोका स्थापन करके ससार वृद्धिका कार्य्य करते हैं तैसेही कितनीही बातोमे आपके गुरुजी न्याया-म्भोनिधिजी (श्रीआत्मारामजो) नें भी किया है और आप लोग भी करते हो (जिसका खुलासा आगे करनेमें आता है) इस लिये भी ढूढियाका सरणा आप लोगही लेते हो।

७ सातमा—जैसे कितनेही ढूढिये श्रीजैन तीर्थोंको छोडके अन्य मतियोके मिथ्यात्वी तीर्थोंमें जाते हैं तैसेही खास श्रीवल्लभविजयजीनें भी कराया अर्थात् घासीराम और जुगलराम इन दोनु ढूढक साधुयोने (श्रीजिनेश्वर भग-वान् तुल्य श्रीजिनमूर्त्तिकी तथा श्रीजैनशासनके प्रभाविक महान् उत्तम श्रीजैनाचार्य्योंकी) द्वेष बुद्धिसे वृथा निन्दा करनेका और शास्त्रोके विरुद्ध होकरके उत्सूत्र भाषणका तथा अपनी मति कल्पना मुजब मिथ्या बातोमें वर्त्तनेका मिथ्यात्वरूप ढूढक मतका पाखण्डको ससार वृद्धिका कारण

पुकारते हो परन्तु अपनी मति कल्पनासे अनेक जगह शास्त्रोंके पाठोंका उलटा अर्थ करते हो और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको तथा अर्थको भी छुपाते हो और शास्त्रोंके प्रमाण बिना भी अनेक कल्पित बातों करके विवादमें पड़ते हो और भोले जीवोंको फसाते हो (इसका विशेष खुलासा आगे करनेमें आवेगा) इस लिये भी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो ।

४ चौथा—जैसे ढूंढिये लोगोंकी गाम गाममें वारम्वार श्रीजिन प्रतिमाजीकी और श्रीजैनाचार्य्योंकी निन्दा अव हेलना करनेकी आदत है जिससे अपने ससार वृद्धिका भय नही रखते हैं तैसेही आप लोगोंकी भी गाम गाममें श्री पर्युषणापर्वका व्याख्यान वगैरहमें श्रीवीरप्रभुके छ (६) कल्याणककी और श्रीजिनेन्द्रभगवान् का तथा पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण करा हुवा अधिक मासकी निन्दा अवहेलना करनेकी आदत है जिससे आप लोग भी उत्सूत्र भाषणका भय न करते हुए ससार वृद्धिसे कुछ भी डरते नही हो इस लिये भी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो ।

५ पाँचमा—जैसे ढूंढिये लोग चर्चा करो चर्चा करो ऐसा पुकारते हैं परन्तु चर्चाका समय आनेसे मुख छिपाते हैं और जो बातकी चर्चा करनेकी होवे जिसकी शास्त्रार्थ से न्यायपूर्वक चर्चा करनी छोड़कर अन्यायसे निष्प्रयोजन की अन्य अन्य बातोका झगड़ा खड़ा करके यावत् क्रोधका सरणा लेकर—राड़ नपुती जैसी वृथा लड़ाई करके निन्दा ईर्षासे ससार वृद्धिका कारण करते है परन्तु शास्त्रोक्त चर्चा वार्त्ताकी रीतिसें एक भी बातके सत्यअसत्यका निर्णय करके

बेर उसी गामका प्रतिष्ठित आदमी मारफत अथवा अपना जानकार सवेगी तथा ढूढिया तो क्या परन्तु ब्राह्मण, सेवग, वगैरह हरेक जातिका हरेक धर्मवाला पुरुषकी मारफत उसीका निर्णय करनेमें आता है तैसेही श्रीबुद्धिसागरजीने भी किया अर्थात् दो पत्र आपको शास्त्रका प्रमाण पूछनेके लिये भेजे तथापि आपका कुछ भी जवाब नही आया तब तीसरी बेर प्रसिद्ध आदमी अपना जानकारके मारफत, आपको भेजे हुए पूर्वोक्त पत्रोंका जवाब पूछाया उसमें सरणा लेनेका कदापि नहीं हो सकता है परन्तु आप लोग अनेक बातोंमे ढूढियाका सरणा लेते हो सो ऊपरमेंही लिख आया हू सो विचार लेना,—

और दोनु गच्छवालोके आपसमें वादविवाद तथा कोर्ट कचेरीमें झगड़ा टंटा रूप वृथा युद्ध करनेको तथा करानेको आपही तैयार हो सो तो आपके लेखसें प्रत्यक्ष दीखता है।

महाशयजी अब--किसकी मन कामना पूर्ण न होनेसें किसीने ढूढियाका सरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है और सूर्पनखाकी तरह दोनु पक्षको दु:खदाई भी कौन हुवा है सो ऊपरका लेखको तथा आगेका लेखको और इन्ही ग्रन्थको पढकर हृदयमें विवेक बुद्धि लाकर विचार कर लीजिये,---

ओर भी आगे छठे महाशयजी अपने और अपने गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजीके उत्सूत्र भाषणके कृत्योको तथा उन कृत्योके फल विपाकोको न देखते हुए श्रीबुद्धिसागरजी ने शास्त्रोके पाठोका प्रमाण सहित पत्र लिखकर पालणपुर

जानकर छोड़ दिया और शास्त्रानुसार सत्य बातोंको ग्रहण करनेकी इच्छासे श्रीवृद्धिविजयजीके पास जैन दीक्षा लेने को आये तब श्रीवृद्धिविजयजीने तथा उन्होंके दृष्टिरागी श्रावकोंने विचार किया कि-चासीराम और जुगलरामने ढूंढक मतके साधु भेषमें अनुचित कार्यों (अशुचीकी क्रियायों) में अपने शरीरको अपवित्र किया है इसलिये इन दोनुका शरीर प्रथम पवित्र कराके पीछे दीक्षा देनी चाहिये ऐसा विचार करके दोनुको पवित्र करनेके लिये जैन तीर्थोंमें न भेजते हुए अन्य मतियोंके मिथ्यात्वी तीर्थ में काशी गङ्गाजी भेजकरके पवित्र कराये (इसका विशेष आगे लिखनेमें आवेंगा) इसलिये भी ढूंढियाका सरणा आपही लेते हो।

इत्यादि अनेक बातोंमें छठे महाशयजी आप लोगही ढूंढियाका सरणा लेकर उन्होंकाही अनुकरण करते हो, तथापि आपने श्रीबुद्धिसागरजीको ढूंढियाका सरण लेनेका लिखा है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीने ढूंढियाका सरणा लेनेका कोई भी कार्य्य नही करा है इतने पर भी आपके दिलमें यह होगा कि श्रीबुद्धिसागर जीने ढूंढियाकी मारफत पत्र हमको पहुचाया इसलिये ढूंढियाका सरणा लेनेका हमने लिखा है तो भी महाशयजी यह आपका लिखना सर्वथा अनुचित है क्योंकि दुनियामें यह तो प्रसिद्ध व्यवहार है कि—कोई गामसे किसी आदमीको एक पत्र भेजा जिसका जबाब नही आया तो थोड़े दिनोंके बाद दूसरा भी पत्र भेजनेमे आता है, दूसरे पत्रका भी जबाब नही आनेसें तीसरी

बेर उसी गामका प्रतिष्ठित आदमी मारफत अथवा अपना जानकार संवेगी तथा ढूंढिया तो क्या परन्तु ब्राह्मण, सेवग, वगैरह हरेक जातिका हरेक धर्मवाला पुरुषकी मारफत उसीका निर्णय करनेमें आता है तैसेही श्रीबुद्धिसागरजीने भी किया अर्थात् दो पत्र आपको शास्त्रका प्रमाण पूछनेके लिये भेजे तथापि आपका कुछ भी जवाब नही आया तब तीसरी बेर प्रसिद्ध आदमी अपना जानकारके मारफत, आपको भेजे हुए पूर्वोक्त पत्रोका जवाब पूछाया उसमें सरणा लेनेका कदापि नहीं हो सकता है परन्तु आप लोग अनेक बातोमे ढूंढियाका सरणा लेते हो सो ऊपरमेंही लिख आया हूं सो विचार लेना,—

और दोनु गच्छवालोके आपसमें वादविवाद तथा कोर्ट कचेरीमें झगडा टटा रूप वृथा युद्ध करनेको तथा करानेको आपही तैयार हो सो तो आपके लेखसें प्रत्यक्ष दीखता है।

महाशयजी अब- किसकी मन कामना पूर्ण न होनेसें किसीने ढूंढियाका सरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है और सूर्पनखाकी तरह दोनु पक्षको दु खदाई भी कौन हुवा है सो ऊपरका लेखको तथा आगेका लेखको और इन्ही ग्रन्थको पढकर हृदयमें विवेक बुद्धि लाकर विचार कर लीजिये,---

और भी आगे छठे महाशयजी अपने और अपने गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजीके उत्सूत्र भाषणके कृत्योको तथा उन कृत्योके फल विपाकोको न देखते हुए श्रीबुद्धिसागरजी ने शास्त्रोके पाठोका प्रमाण सहित पत्र लिखकर पालणपुर

मिलापी महता पीताम्बरदास हाथीभाईको भेजा था उस पत्रके गाथोंके पाठोंको छोड़करके और विरुद्धार्थी हो करके उस पत्रपर द्वेषबुद्धिसे छठे महाशयजीने वृथाही आक्षेप किया है और उसके साथ कितनीही निष्प्रयोजनकी बातें लिखी है उसीका जवाब आगे (छठे महाशयजीके दूसरे गुजराती भाषाके लेखका जवाब छपेगा) वहां लिखनेमें आवेगा,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (बनारससे प्रसिद्ध हुवा मुनि धर्म्मविजयजीके शिष्य मुनि विद्याविजयजीका, पर्युषणा विचार नामा लेख देख लेना) इसपर भी मेरेको प्रथम इतनाही कहना है कि तीसरे महाशयजी श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें पर्युषणा सम्बन्धी प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड़ करके गच्छ कदाग्रहके हठवादसे उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनेक कुतर्को करी है (जिसका निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ से १५० तक उपरमेंही छप चुका है) उन्ही कुतर्कोंको देखके सातमें महाशयजी श्रीधर्म्मविजयजी तथा उन्हके शिष्य विद्याविजयजी भी कदाग्रहकी परम्परामें पड़के उत्सूत्र भाषणकेही कुतर्कोका संग्रह करके, शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायके विरुद्ध होकरके अधूरे अधूरे पाठ लिखकर भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये अपना लेख प्रगट करा है (इसका जवाब आगे छपेगा) उसीकोही गुजराती भाषामें जैन पत्रवालेनेभी अपना संसार बढ़ानेके लिये अपने जैन पत्रमें प्रगट करा है और उसी उत्सूत्र भाषणकी कुतर्कोंको छठे महाशयजी आप भी देखनेका लिखकर उन्होंको पुष्ट

करके उसी तरहके उत्सूत्र भाषणके फलप्राप्त करनेके लिये आप भी उसीमें फसे, हाय अफसोस—गच्छ कदाग्रहके वस होकरके अपना पक्ष जमानेके लिये सत्य असत्यका निर्णय किये विना अपनी मतिकल्पनासे इतने विद्वान् कहलाते भी स्वच्छन्दाचारीसे लिखते कुछ भी विचार नहीं किया यह तो इस कलियुगकाही प्रभाव है,—

और दूसरा यह है कि न्याय अन्यायको न देखने वाले तथा दृष्टिरागके झूठे पक्षग्राही और कदाग्रहके कार्य्यमें आगेवान ऐसे श्रीकलकत्तानिवासी श्रीतपगच्छके लक्ष्मीचन्दजी सीपाणीको पालणपुरसे श्रीवल्लभविजयजीकी तरफका पत्र आया था उसी पत्रमें ६–७ जगह मिथ्या बातें लिखी है उसी पत्रके अक्षर अक्षरका उतारा, मेरे (इस ग्रन्थकारके) पास है उसी उतारेकी नकलको यहाँ लिखकर उसीकी समीक्षा करनेका मेरा पूरा इरादा था परन्तु विस्तारके कारणसे सब न लिखते नमुनारूप एक बात लिख दिखाता हू—

छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी लक्ष्मीचन्दजी सीपाणीको लिखते हैं कि [बनारससे पर्युषणा विचार नामा ट्रेकट निकला है उसीकाही भाषान्तर छापेवालेने छापा है इसमे हमारा कोई मतलब नही है ना हम इस बातको मन वचन काया करके अच्छी समझते हैं] इस जगह सज्जन पुरुषोको विचार करना चाहिये कि सीपाणीजीके पत्रमें पर्युषणा विचारको तथा उसीका भाषान्तर छापेवालेनें छापेमें प्रसिद्ध करा है उसीको छठे महाशयजी मन, वचन, कायासे अच्छा नही समझते हैं

निवासी महता बीताम्बरदास झावीभाइको भेजा था उन पत्रके शास्त्रोंके पाठोंको छोड़करके और विरुद्धाही हो करके उन पत्रपर द्वेषबुद्धिसे छठे महाशयजीने बृथाही आक्षेप किया है और उनके साथ कितनीही निष्प्रयोजनकी बातें लिखी है उसीका जबाब आगे (छठे महाशयजीके दूसरे गुजराती भाषाके लेखका जबाब छपेगा) वहा लिखनेमें आवेगा,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (बनारससे प्रसिद्ध हुवा मुनि धर्म्मविजयजीके शिष्य मुनि विद्याविजयजीका, पर्युषणा विचार नामा लेख देख लेना) इसपर भी मेरेको प्रथम इतनाही कहना है कि तीसरे महाशयजी श्रीविनयविजयजीने श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें पर्युषणा सम्बन्धी प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड करके गच्छ कदाग्रहके हठवादसे उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनेक कुतर्को करी है (जिसका निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ से १५० तक उपरमेंही छप चुका है) उन्ही कुतर्कोंको देखके सातमें महाशयजी श्रीधर्म्मविजयजी तथा उन्हके शिष्य विद्याविजयजी भी कदाग्रहकी परम्परामें पडके उत्सूत्र भाषणकेही कुतर्कोंका सग्रह करके, शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायके विरुद्ध होकरके अधूरे अधूरे पाठ लिखकर भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेंके लिये अपना लेख प्रगट करा है (इसका जवाब आगे छपेगा) उसीकोही गुजराती भाषामें जैन पत्रवालेनेभी अपना ससार वढानेके लिये अपने जैन पत्रमे प्रगट करा है और उसी उत्सूत्र भाषणकी कुतर्कोंको छठे महाशयजी आप भी देखनेका लिखकर उन्हीको पुष्ट

और इसके आगे दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने अपने लेखके अन्तमे जो लिखा है उसीको यहा लिखके (पीछे उसीकी समीक्षा कर) दिखाता हू ,—

[बुद्धिसागर मुनिजी ! याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा, जो कि–तुम्हारे गच्छके आचार्योंसें पहिलेका होगा मगर तुम्हारेही गच्छके आचार्यका लेख प्रमाण न किया जावगा ! जैसा कि तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व–सावत्सरिक कृत्य–करना ! क्योकि, यही तो विवादास्पद है कि, श्रीजिनपतिसूरिजीने समाचारीमे जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है हा यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कही भी दिखा देवे कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें--सावत्सरिक प्रतिक्रमण, केशलुञ्चन, अष्टमतप , चैत्यपरिपाटी, और सर्वसघके साथ खामणारूप पर्युषणा वार्षिक पर्व करना, तो हम माननेको तैयार है !]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि–हे सज्जन पुरुषो छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीके अन्तरमें कपट भरा हुवा होनेसें ऊपरका लेख भी कपटयुक्त लिखा है क्योंकि (बुद्धिसागर मुनिजी याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा जो कि तुम्हारे गच्छके आचार्य्योंसे पहिले का होगा) यह अक्षर छठे महाशयजीके मायावृत्तिसे दृष्टिरागी भोले जीवोको दिखाने मात्रही है नतु प्रमाण

तो फिर उसी बातको माने पर्युषणा विचारको देख लेखका लिख करके उसीको छापामें पुष्ट किया, यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिका कारण है इसलिये जो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य छठे महाशयजी सत्य मानेंगे तो छापेमें पर्युषणा विचारको पुष्ट करनेका जो वाक्य लिखा है सो वृथा हो जायेगा और छापेका वाक्य सत्य मानेंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य मिथ्या हो जावेंगा और पूर्वा पर विरोधी विसवादी दोनु तरहके वाक्य कदापि सत्य नही हो सकते हैं इसलिये दोनुंमेंसे एक सत्य और दूसरा मिथ्या माननाही प्रसिद्ध न्यायकी बात है, जिससे सीपाणी जीके पत्रका वाक्यको सत्य मानोंगे तो छापेका लेख विस वादीरुप मिथ्या होनेकी आलोचना छठे महाशयजी आप को लेनी पडेगी और छापेका वाक्यको सत्य मानोगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य विसवादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना लेनी पडेगी और पर्युषणा विचारमे उत्सूत्र वाक्य लिखे हैं उसीके अनुमोदनके फलाधिकारी होना पडेगा सो विवेक बुद्धि हो तो अच्छी तरह विचार लेना,—

और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके खबरदारका इस लेखमें तथा सावधान सावधानका दूसरा गुजराती भाषाका लेखमें और सीपाणिजीके पत्रका लेखमे इन तीनो लेखोका वाक्यमें कितनीही जगह मायावृत्ति (कपट) का संग्रह है इससे श्रीवल्लभविजयजीको कपट विशेष प्रिय मालूम होता है और चर्चाचन्द्रोदय की पुस्तकमें भी श्री वल्लभविजयजीको 'दम्भप्रिय' लिखा है सोही नाम उपरके कृत्योसे सत्य कर दिखाया है,—

और इसके आगे दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने अपने लेखके अन्तमें जो लिखा है उसीको यहा लिखके (पीछे उसीकी समीक्षा कर) दिखाता हू ,—

[बुद्धिसागर मुनिजी ! याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा, जो कि–तुम्हारे गच्छके आचार्योंसें पहिलेका होगा मगर तुम्हारेही गच्छके आचार्यका लेख प्रमाण न किया जावगा ! जैसा कि तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व–सावत्सरिक कृत्य–करना ! क्योंकि, यही तो विवादास्पद है कि, श्रीजिनपतिसूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है हा यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कही भी दिखा देवे कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमे और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें--सावत्सरिक प्रतिक्रमण, केशलुञ्चन, अष्टमतप , चैत्यपरिपाटी, और सर्वसघके साथ खामणारूप पर्युषणा वार्षिक पर्व करना, तो हम माननेको तैयार है !]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि–हे सज्जन पुरुषो छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीके अन्तरमें कपट भरा हुवा होनेसें ऊपरका लेख भी कपटयुक्त लिखा है क्योंकि (बुद्धिसागर मुनिजी याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा जो कि तुम्हारे गच्छके आचार्य्योंसे पहिले का होगा) यह अक्षर छठे महाशयजीके मायावृत्तिसे दृष्टिरागी भोले जीवोको दिखाने मात्रही है नतु प्रमाण

सो फिर उसी बातको याने पर्युषणा विचारको देख लेनेका छिन्न करके उसीको बाधामें पुष्ट किया, यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिका कारण है इसलिये श्री सीपाणीजीके पत्रका वाक्य छठे महाशयजी सत्य मानेंगे तो आपके पर्युषणा विचारको पुष्ट करनेका जो वाक्य लिखा है सो वृथा हो जावेगा और आपेका वाक्य सत्य मानेंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य मिथ्या हो जावेगा और पूर्वा पर विरोधी विसंवादी दोनु तरहके वाक्य कदापि सत्य नही हो सकते हैं इसलिये दोनुमेंसे एक सत्य और दूसरा मिथ्या माननाही प्रसिद्ध न्यायकी बात है, जिससे सीपाणी जीके पत्रका वाक्यको सत्य मानोंगे तो छापेका लेख विस वादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना छठे महाशयजी आप को लेनी पडेगी और छापेका वाक्यको सत्य मानोंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य विसंवादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना लेनी पडेगी और पर्युषणा विचारमे उत्सूत्र वाक्य लिखे हैं उसीके अनुमोदनके फलाधिकारी होना पडेगा सो विवेक बुद्धि हो तो अच्छी तरह विचार लेना,—

और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके खबरदारका इस लेखमें तथा सावधान सावधानका दूसरा गुजराती भाषाका लेखमें और सीपाणिजीके पत्रका लेखमे इन तीनो लेखोका वाक्यमें कितनीही जगह मायावृत्ति (कपट) का संग्रह है इससे श्रीवल्लभविजयजीको कपट विशेष प्रिय मालूम होता है और चर्चाचन्द्रोदय की पुस्तकमें भी श्री वल्लभविजयजीको 'दम्भप्रिय' लिखा है सोही नाम उपरके कृत्योसे सत्य कर दिखाया है,—

परानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणयुक्त श्रीखरतरगच्छके बुद्धि निधान प्रभाविकाचार्य्योंने अनेक शास्त्रोकी रचना भव्य जीवोके उपगारके लिये करी है जिसको न माननेवाले दम्भप्रियेजी जैसे प्रत्यक्ष श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके उत्थापक श्रद्धारहित जैनाभास मिथ्यात्वी बनते है इस बातको विशेष सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेवेंगे,—

२ दूसरा यह है कि--श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध करनेवाले श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजकृत श्रीअष्टकजी सूत्रकी वृत्ति तथा श्रीपञ्चलिङ्गी प्रकरण मूल और तद्वृत्ति श्रीखरतरगच्छ के श्रीजिनपति सूरीजी कृत ओर श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध बुद्धिनिधान महान् प्रभाविक श्रीमदभयदेवसूरिजी महाराजनें श्रीनवाङ्गी वृत्ति उपरान्त श्रीउवाइजी श्रीपञ्चाशक जी श्रीषोडषकजी वगैरहकी अनेक वृत्ति और प्रकरणस्तोत्रादि बहुतही शास्त्रोकी रचना करी है तथा और भी श्रीखरतरगच्छके अनेक आचार्य्योंनें सैकडो शास्त्रोकी रचना करी है जिन्हकोमानते हैं व्याख्यानमे वाचते हैं तथापि दम्भप्रियेजी (तुम्हारे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) ऐसा लिखते हैं सो कितनी मायावृत्तिसे अन्याय कारक है इसको भी निष्पक्षपाती सज्जन स्वय विचार सकते हैं ,—

और श्रीजिनेश्वर सूरिजीसे निश्चय करके श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध हुवा है इसलिये श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेव सूरिजी भी श्रीखरतरगच्छमें हुवे हैं तथापि श्रीजिनवल्लभ सूरजीसे अथवा श्रीजिनदत्त सूरिजीसे १२०४ में खरतर हुवा

करनेके लिये यदि ऊपरके अक्षर प्रमाण करनेके लिये होवे तो–अधिक मासकी गिनती, तथा पचास(५०) दिने पर्युषणा और श्रीवीरप्रभुके छ (६) कल्याणक, सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही वगैरह अनेक बातें श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने और पूर्वधरादि श्रीजैन आगममें प्रभाविक पूर्वाचार्य्योंने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें प्रगटपने खुलासेके साथ कही है जिस पर छठे महाशयजी की श्रद्धा नही जिससे प्रमाण नही करते हुए उलटा निषेध करके उत्सूत्र भाषणसे संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं।

बडीही आश्चर्य्यकी बात है कि श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोकी तथा पूर्वाचार्य्योंकी कथन करी हुई अनेक बातें प्रमाण न करते हुए उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मतिकल्प नासे चाहे वैसा वर्त्ताव करना और पूर्वाचार्य्यो का प्रमाण मजूर करनेका दिखाकर आप भले बनना यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे छठे महाशयजीने अपने दम्भप्रिये नामको सार्थक करके विशेष पुष्ट करनेके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो इन्ही ग्रन्थको पढनेवाले सज्जन पुरुष स्वय विचार लेवेंगे,–

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीने लिखा है कि (तुम्हारेही गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) यह लिखना छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीको श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातना कारक पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोका उत्थापनरूप मिथ्यात्वकी वढाने वाला ससार वृद्धिका कारणभूत है क्योंकि–

१ प्रथमतो–श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोकी परम्

परानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणयुक्त श्रीखरतरगच्छके बुद्धि निधान प्रभाविकाचार्य्योंने अनेक शास्त्रोकी रचना भव्य जीवोके उपगारके लिये करी है जिसको न माननेवाले दम्भप्रियेजी जैसे प्रत्यक्ष श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके उत्थापक श्रद्धारहित जैनाभास मिथ्यात्वी बनते हैं इस बातको विशेष सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेवेंगे,—

२ दूसरा यह है कि--श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध करनेवाले श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजकृत श्रीअष्टकजी सूत्रकी वृत्ति तथा श्रीपञ्चलिङ्गी प्रकरण मूल और तद्वृत्ति श्रीखरतरगच्छ के श्रीजिनपति सूरीजी कृत ओर श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध बुद्धिनिधान महान् प्रभाविक श्रीमदभयदेवसूरिजी महाराजनें श्रीनवाङ्गी वृत्ति उपरान्त श्रीउवाइजी श्रीपञ्चाशक जी श्रीपोडपकजी वगैरहकी अनेक वृत्ति और प्रकरणस्तोत्रादि बहुतही शास्त्रोकी रचना करी है तथा और भी श्रीखरतरगच्छके अनेक आचार्य्योंनें सैकडो शास्त्रोकी रचना करी है जिन्हकोमानते हैं व्याख्यानमे वाचते हैं तथापि दम्भप्रियेजी (तुम्हारे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) ऐसा लिखते हैं सो कितनी मायावृत्तिसे अन्याय कारक है इसको भी निष्पक्षपाती सज्जन स्वय विचार सकते हैं ,—

और श्रीजिनेश्वर सूरिजीसे निश्चय करके श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध हुवा है इसलिये श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेव सूरिजी भी श्रीखरतरगच्छमें हुवे हैं तथापि श्रीजिनवल्लभ सूरजीसे अथवा श्रीजिनदत्त सूरिजीसे १२०४ में खरतर हुवा

करनेके लिये यदि ऊपरके अक्षर प्रमाण करनेके लिये होवे तो–अभिव गणजी गिनती, तथा पचास(५०) दिने पर्युषणा और श्रीवीरप्रभुके ६ (छ) कल्याणक, सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही वगैरह अनेक बातें श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने और पूर्वधरादि श्रीजैन आगमके प्रामाविक पूर्वाचार्य्योंने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें प्रगटपने खुलासेके साथ कही है जिस पर छठे महाशयजी की श्रद्धा नही जिससे प्रमाण नही करते हुए उलटा निषेध करके उत्सूत्र भाषणसे संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं।

यही आश्चर्यकी बात है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी तथा पूर्वाचार्य्योंकी कथन करी हुई अनेक बातें प्रमाण न करते हुए उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति-कल्पनासे चाहे वैसा वर्ताव करना और पूर्वाचार्य्यों का प्रमाण मंजूर करनेका दिखाकर आप भले बनना यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे छठे महाशयजीने अपने दम्भप्रिये नामको सार्थक करके विशेष पुष्ट करनेके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो इन्ही ग्रन्थको पढनेवाले सज्जन पुरुष स्वय विचार लेवेंगे,–

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीने लिखा है कि (तुम्हारेही गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) यह लिखना छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीको श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातना कारक पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोका उत्थापनरूप मिथ्यात्वको बढाने वाला संसार वृद्धिका कारणभूत है क्योंकि–

१ प्रथमतो–श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी परम्

परानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणयुक्त श्रीखरतरगच्छके बुद्धि निधान प्रभाविकाचार्य्योंने अनेक शास्त्रोकी रचना भव्य जीवोके उपगारके लिये करी है जिसको न माननेवाले दम्भप्रियेजी जैसे प्रत्यक्ष श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके उत्थापक श्रद्धारहित जैनाभास मिथ्यात्वी बनते है इस बातको विशेष सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेवेगे,—

२ दूसरा यह है कि--श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध करनेवाले श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजकृत श्रीअष्टकजी सूत्रकी वृत्ति तथा श्रीपञ्चलिङ्गी प्रकरण मूल और तद्वृत्ति श्रीखरतरगच्छ के श्रीजिनपति सूरीजी कृत ओर श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध बुद्धिनिधान महान् प्रभाविक श्रीमदभयदेवसूरिजी महाराजनें श्रीनवाङ्गी वृत्ति उपरान्त श्रीउवाइजी श्रीपञ्चाशक जी श्रीषोडपकजी वगैरहकी अनेक वृत्ति और प्रकरणस्तोत्रादि बहुतही शास्त्रोकी रचना करी है तथा और भी श्रीखरतरगच्छके अनेक आचार्य्योंने सैकडो शास्त्रोकी रचना करी है जिन्हकोमानते है व्याख्यानमें वाचते हैं तथापि दम्भप्रियेजी (तुम्हारे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेगा) ऐसा लिखते हैं सो कितनी मायावृत्तिसे अन्याय कारक है इसको भी निष्पक्षपाती सज्जन स्वय विचार सकते है ,—

और श्रीजिनेश्वर सूरिजीसे निश्चय करके श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध हुवा है इसलिये श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेव सूरिजी भी श्रीखरतरगच्छमें हुवे हैं तथापि श्रीजिनवल्लभ सूरजीसे अथवा श्रीजिनदत्त सूरिजीसे १२०४ में खरतर हुवा

ऐसा कहते हैं सो मिथ्यावादी है इसका विशेष विस्तार शास्त्रोंके प्रमाण सहित इस ग्रन्थके अन्तमें करनेमें आवेगा,—

३ तीसरा यह है कि—न्याय दम्भप्रियेजीके गुरुजी श्री न्यायाम्भोनिधिजीने चतुर्थ स्तुतिनिर्णय पुस्तकमें श्रीखर तरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजी श्रीजिनवल्लभ सूरिजी श्री जिनपतिसूरिजी वगैरह आचार्य्योंकी समाचारियोंके पाठ लिखे हैं और श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यका वचनको नही माननेवालोंको पृष्ठ ८८ के मध्यमें मिथ्यात्वी ठहराये हैं (इसका खुलासा इन्ही ग्रन्थके पृष्ठ १५९ । १६० में छपगया है) और दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करके अपने गुरुजीके लेखसे ही आप मिथ्यात्वी बनते है सो भी बड़ीही आश्चर्यकी बात है ,—

४ चौथा यह है कि—दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करते हैं इसको देखके और भी कितनेही अज्ञानी तथा गच्छ कदाग्रही अपने अपने गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण मान करके और सब गच्छवालोंके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण नही मानेंगे जिस से श्रीजिनवाणीरूपी पञ्चाङ्गीके सैकडो शास्त्रोंका उत्थापन होगा और अपनी अपनी मतिकल्पना करके चाहे जैसा वर्त्ताव करना सरू करेंगे तो श्रीजिनेश्वर भगवान्की अति उत्तम, अविसंवादी, श्रीजैनशासनकी अखण्डित मर्य्यादा भी नही रहेगी और कदाग्रही लोग अपने अपने पक्षका आग्रह में फसके मिथ्यात्व बढाते हुवे संसार वृद्धि करेंगे जिसके दोषाधिकारी दम्भप्रियेजी वगैरह होवेंगे और आप दूसरे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नही करोगे तो दूसरे गच्छवाले

आपके गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नही करेंगे जिससें भी वृथा वाद विवादसे मिथ्यात्व वढता रहेगा और सत्य असत्यका निर्णय भी नही हो सकेगा और दम्भप्रियजी अनेक गच्छोके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करते है परन्तु श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नहीं करते हैं यह भी तो प्रत्यक्ष अन्यायकारक हठवादका लक्षण है इसलिये दम्भप्रियेजी वगैरह महाशयोसे मेरा यही कहना है कि–

श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महारजोकी परम्परा मुजब, पञ्चाङ्गीके प्रमाण पूर्वक कालानुसार, न्यायकी युक्ति करके सहित श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंका तो क्या परन्तु सब गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करना सोही आत्मार्थी मोक्षाभिलापी सज्जनोको परम उचित है।

वैसेही इस ग्रन्थकारने भी श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागर जी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनो महाशयोके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लिखित पाठोको इसीही ग्रन्थके आदिका भागमें पृष्ठ ९। १०। ११ में लिखे है और उसीका भावार्थ भी पृष्ठ १२ से १५ तक लिखके उसीका तात्पर्य्यको पृष्ठ १६ में प्रमाण किया हैं (और इन तीनो महाशयोनें प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोडके गच्छ कदाग्रहका मिथ्या पक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप अनेक वातें लिखी है जिसकी समीक्षा भी शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ सें १५० तक उपरमें छप गई है) और भी श्रीतपगच्छके अनेक आचार्य्यो के लेख प्रमाण करनेमें आते हैं जैसे इस ग्रन्थकारने श्रीतप- गच्छके आचार्य्योंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लेखोको

अमधरं ताव बिगमणं दो तेहिं वसन्निय ठियामोत्ति, पच्छा लोगो सचेमार पतिगमवि एते ण यावति एवं पव पच्चोवघातो भवति, ट्वियामोत्तिय भणि ते लोगो चितेर आणंते अवस्स वरिसइ ताये लोगो घरछंदेण हलकुलियादी करेंति, तम्हा सवीसति राते मासे अभिग्गहीत गहोसातमि स्वयं । एत्थ सगाथा एयेति, आसाढ चउम्मासिए पडिकंते, पञ्चेहिं पञ्चेहिं दिवसेहिं गतेहिं, जत्थ जत्थ वासावास-योग्गं खेत्त पडिपुण्ण तत्थ तत्थ पज्जोसवे यव्व, जाव सवीसइ रातो मासो, उस्सग्गेण पुण आसाढपुद्दसमि पच्चट्ठ, एय सत्तरी गाथा, एव सत्तरी भवति, सवीसति राते मासे पज्जो सवेत्ता, कत्तिय पुण्णिमाए पडिकमित्ता, बितियदिवसे णिग्ग माण, पञ्चसत्तरी भद्दवयअमावसाए पज्जोसवेताण, भद्दवयबहुलदसमीए असीत्ति, भद्दवयबहुलपञ्चमीए पञ्चासीति सावणपुण्णिमाए णउत्ति, सावणसुद्दसमीए पञ्चणउत्ति, सावण सुद्दपञ्चमीए सत, सावण अमावसाए पञ्चुत्तर सय, सावण बहुलदसमीए दसुत्तर सत, सावणबहुलपञ्चमीए पन्नरसुत्तर सत, आसाढपुण्णिमाए वीसुत्तर सत, कारणे पुण छम्मासितो जेठोत्ति उक्कोसो उग्गहो भवन्ति, कथ जति वा पच्चट्ठ अस्य व्याख्या, कत्तिएण गाथा उवट्ठिए, आसाढ मासकप्पए कते वासावासपाउग्ग खेत्तासती, तत्थेव वासो कातव्वो, पञ्चहिं दिवसेहिं पज्जोसवणा कप्प कथिता, चाउम्मासिए चेव पज्जोसवेंति, त पुण इमेण कारणेण मग्गसिर अत्थिज्जइ जति वासति पच्चट्ठ आलम्बण मास पडेति, चिरकप्पो, आसाढे वासा रत्तिया चत्तारि मग्गसिरोय एते छम्मासिओ जेट्ठोग्गहो, पत्थाणेहि पवत्तेहिपि णिग्गतव्व ।

देखिये ऊपरके पाठमे पर्युषणाधिकारे चेव निश्चय करके अधिकमासको गिनतीमें कहा है और पूर्वधरादि उग्रविहारी महानुभावोके लिये निवासरूप पर्युषणा (योग्यक्षेत्र तथा उपयोगी वस्तुयोका योग होनेसे) उत्सर्गसे आषाढपूर्णिमाकोही करनी कही परन्तु योग्यक्षेत्रादिके अभावसे अपवादसे पाच पाच दिनकी वृद्धि करते अभि-वर्द्धित सवत्सरमे वीश दिन (श्रावण शुक्लपञ्चमी) तक तथा चन्द्रसवत्सरमे पचास दिन (भाद्रपदशुक्लपञ्चमी) तक पर्यु-षणा करनी कही–आषाढपूर्णिमाकी तथा पाच पाच दिन की वृद्धिकी पर्युषणाको अधिकरणदोषोकी उत्पत्ति न होनेके कारण गृहस्थी लोगोके न जानी हुई अज्ञात पर्यु-षणा कही है इसका विशेष खुलासा इन्ही ग्रन्थमे अनेक जगह छपगया है और वीशदिने तथा पचास दिने गृहस्थी लोगोकी जानी हुई ज्ञातपर्युषणा कही उसीमे वार्षिक कृत्य वगैरह करनेमें आतेथे इसकाभी खुलासा इन्ही ग्रन्थमें अनेक जगह छप गया है जिसमे भी विशेष विस्तार पूर्वक पृष्ठ १०१ से ११७ तक अच्छी तरहसे निर्णय करनेमे आया है। और मासवृद्धिके अभावसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते है तैसेही मासवृद्धि होनेसे पयपणाके पिछाडी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते हैं इसका भी विस्तार अनेक जगह छपगया है जिसमें भी विशेष करके पृष्ठ १२१ से १२९ तक और १४४ से १८३ तक अच्छी तरहसे निर्णयके साथ छपगया है और उत्कृष्टसे १८० दिन का कल्प कहा है ,—

और तीसरा श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थकापाठलिखभेजाथा सोहीपाठ यहा दिखाताहू यथा –

सावणे भद्दवए वा, अहिगमासे चाउम्मासीओ ॥ पचास इमे दिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे, इति—

भावार्थ —श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होतो भी आषाढ चौमासीसे पचासमें दिन पर्युषणा करना चाहिये परन्तु असीमें दिन नही करना। इस जगह सज्जन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि ऊपरोक्त तीनों शास्त्रोंके पाठ आगमानुसार तथा युक्ति पूर्वक होनेसे छठे महाशयजीको प्रमाण करने योग्य थे तथापि गच्छका पक्षपातके और पण्डिताभिमानके जोरसे ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण न करते हुवे श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको तथा श्रीबृहत्कल्प चूर्णिके पाठको छुपाकरके मायावृत्तिसें श्रीजिनपति सूरिजी की समाचारीके पाठ पर अपनी विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है कि (यही तो विवादास्पद है कि श्रीजिनपति सूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकमजारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है) छठे महाशयजीके इस लेख पर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीवल्लभविजयजीको अनुमान २२। २३ वर्ष दीक्षा लिये हुए है तथा कुछ व्याकरणादि भी पढे हुए सुनते हैं परन्तु इस जगह तो श्रीवल्लभविजयजीने अपनी खूब अज्ञता प्रगट करी हैं क्योंकि श्रीनिशीथसूत्रके लघु भाष्यमें, १ तथा बृहद्भाष्यमें २ और चूर्णिमें ३ श्रीबृहत्कल्पसूत्रके लघु भाष्यमें ४ तथा बृहत्भाष्यमें ५ और चूर्णिमें ६ श्रीदशाश्रुत स्कन्धसूत्रमें ७ तथा चूर्णिमें ८ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ९ तथा तद्वृत्तिमें १० और श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें ११ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें कहा है कि पचास दिने अवश्यही पर्युषणा

करनी चाहिये। तथापि पर्य्युषणा करने योग्यक्षेत्र नही मिले तो विजन (जङ्गल) में भी वृक्ष नीचे पचास वें दिन अरूर पर्युषणा करनी परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन नही करना यह बात तो प्रसिद्ध है इसीके सम्बन्धमें इन्ही ग्रन्थके आदिमें श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी वृत्तिका पाठ पृष्ठ १८।१९ में और श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २१ से २५ तक, और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ९१ सें ९४ तक, और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५ से ९९ तक, तथा तद्भावार्थ पृष्ठ १०० सें १०५ तक छप गया है,—

ऊपरोक्त शास्त्रोमें आषाढ चौमासीसे पाच पाच दिनोकी वृद्धि करते (दशवें पञ्चकमें) पचासवें दिने प्रसिद्ध पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसवत्सरमें करनी कही है और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सरमें पाच पाच दिनोकी वृद्धि करते (चौथे पञ्चकमें) वीशवे दिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही सो प्राचीनकालाश्रय पूर्वधरादि उग्रविहारी महाराजोके लिये श्रीजैनज्योतिषके पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेके सम्बन्धमें कही परन्तु अबी इस वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्ग के अभावसे और पड़ते कालके कारणसे ऊपरका व्यवहार श्रीसन्घकी आज्ञासे विच्छेद हुवा है सोही दिखाता हू।

श्रीतीत्थोगालिय (तीर्थोद्धार) पयन्नामें कहा है-यथा,—

वीसदिणेहि कप्पो, पचगहाणीय कप्पठवणाय,
नवसय तेणउएहि, वुच्छिन्ना सघआणाए॥ १॥

देखिये ऊपरकी गाथामें वीश दिनका कल्प, तथा पाच पाच दिनकी वृद्धि करके अज्ञातपर्युषणास्थापन करनेसे पिछाडी कालावग्रह सबधी श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, श्रीदशाश्रुतचूर्णि,

श्रीनिशीथचूर्णि,श्रीबृहत्कल्पचूर्णिके, पाठ खुलासापूर्वक छप गये हैं सोही पचकउरिहाणीका कल्प, और कल्प स्थापना पाने-योग्य क्षेत्रके अभावसे पांच पांच दिनकी वृद्धिसें अज्ञातपर्युषणा स्थापन करे उसी रात्रिको सभा श्रीकल्पसूत्र के पठन करनेका कल्प, यह तीनों बातें वीर सम्वत् ९९३ (विक्रम सम्वत् ५२३) में श्रीसंघकी आज्ञासे विच्छेद हुई। तब चन्द्रसम्वत्सरमें और अभिवर्द्धितसम्वत्सरमें भी आषाढ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करनेके कल्पकी मर्य्यादा रही तथा पचासवें दिनही श्रीकल्पसूत्रके पठन करनेके कल्पकी मर्यादा भी रही और उसी वर्षे श्रीमान् परम उपगारी श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणजी महाराजने श्रीजैन शास्त्रोंको पुस्तका रूढमें किये उसी समय श्रीदशाश्रुत स्कन्धसूत्रके आठमें अध्ययनको लिखती वख्त, जिन चरित्र तथा स्थिरावली और साधुसमाचारीका संग्रह करके अष्टम अध्ययनको संपूर्ण किया तब पांच पांच दिनकी वृद्धिसे अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें चार पक्षक वीश दिनका तथा चन्द्र सम्वत्सरमें दशपक्षकका (कल्प) व्यवहारको न लिखा और चन्द्रस० अभिवर्द्धितस० इन दोनु सम्वत्सरोंमें ५० दिनका एकही नियम होनेसे पचास दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है यह श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रका अष्टमाध्ययन श्रीकल्पसूत्रजीके नामसे जूदा भी प्रसिद्ध है उसी श्री कल्पसूत्रका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ भावार्थ सहित इन्ही ग्रन्थकी आदिमें पृष्ठ ४।५।६ तक छप चुका है सोही पाठार्थ सूर्य्यकी तरह प्रकाश करता है कि इस वर्त्तमानकालमे आषाढ चौमासीसे पचास दिन जहां पूरे होवे वहांही पर्यु

षणा करनी चाहिये इसीही श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठादिके अनुसार श्रीजिनपतिसूरीजीने समाचारीमें लिखाहै कि-अधिक मास हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करना परन्तु असी दिने नही करना चाहिये–इस लेखको देखके छठे महाशयजी लिखते है कि (यहीतो विवादास्पद है श्रीजिन पति सूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजब किया है) इस पर मेरेको इतनाही कहना है कि श्रीकल्पसूत्रके पर्युषणा सम्बन्धी साधुसमाचारीका मूलपाठ इन्ही ग्रन्थके पृष्ठ ४।५ मे छपा हैं उसी मूलपाठकी अनेक दफो मुजब श्रीजिनपति सूरिजीने समाचारीमें पूर्वोक्त हुकम जारी किया है सो श्रीजैन आगमानुसार है इसका निर्णय ऊपरमेंही कर दिखाया हैं इसलिये छठे महाशयजी आपको श्रीजिनपति सूरिजीके वाक्यमें जो शङ्कारूपी मिथ्यात्वका भ्रम पडा है सो उपरका लेखको पढके निकालदो और मिथ्या पक्षको छोड़कर सत्य बातको ग्रहण करके, निःसन्देहरूपी सम्यक्त्व रत्नको प्राप्तकरो क्योंकि आपके विवादास्पदका निर्णय उपरमेही होगया है। और पृष्ठ १५७ से १६५ तक भी पहिले छपगया है।

बडेही आश्चर्यकी बात है कि–श्रीवल्लभविजयजीको २२।२३ वर्ष दीक्षा लिये हुवे और हर वर्षे गाम गाममें श्रीपर्युषणापर्वके व्याख्यानमें खुलासा पूर्वक व्याख्या सहित वचाता हुवा श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठका तथा मूलपाठके व्याख्या का अर्थ भी उन्हकी समझमें नही आया होगा इसलिये ५० दिने पर्युषणा करनेका श्रीजिनपति सूरिजीका लेख पर शङ्का करी इससे मालुम होता है कि पर्युषणा सम्बन्धी

श्रीकल्पसूत्रके पाठसे तथा तट्पाठकी व्याख्यासे आप अज्ञ होवेंगे अथवा तो भोले जीवोंको गच्छ कदाग्रहका भरमें गेरनेके लिये जानते हुवे भी तीसरे अभिनिवेश मिथ्यात्वके आधिन हो करके मायावृत्तिसे लिखा होगा सो विवेकी विद्वान् स्वयं विचार लेवेंगे ‘—

और आगे छठे महाशयजी धर्मप्रियजीने फिरभी लिखा है कि (हां यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कहीं भी दिखा देवें कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावण में और दो भाद्रपद होवें तो पहिले भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केश लुञ्चन, अष्टमतप, चैत्यपरिपाटी, और सर्व सङ्घके साथ क्षामणारूप पर्युषणा वार्षिकपर्व करना तो हम माननेको तैयार है)

श्रीवल्लभविजयजीके इस लेखपर मेरेको प्रथमतो इतना ही कहना है कि ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने-वालोंको आपने आज्ञा भगका दूषण लगाया तब श्रीबुद्धि सागरजीने आपको पत्र द्वारा पूछा कि कौनसे शास्त्रोंके पाठ मुजब ५० दिने पर्युषणा करनेवालोंको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया है सो बतावो इस तरहसे शास्त्रका प्रमाण पूछा उसीको आप शास्त्रका प्रमाणतो बता सके नहीं तब पण्डिताभिमानके जोर की मायावृत्तिसे निष्प्रयो जनकी अन्य अन्य बाते लिखके उलटा उन्हींसे ही शास्त्रका प्रमाण पूछने लगे सो धर्मप्रियजी यह आपका पूछना अन्यायकारक है क्योंकि प्रथम आपने ही आज्ञा भगका दूषण लगाया है इसलिये प्रथम आपको ही शास्त्रका प्रमाण बताना न्याययुक्त उचित है तथापि जब तक आप

अपनी बात सबन्धी शास्त्रका प्रमाण नही बतावोगे तब तक आपका दूसरोको पूछना है सो निकेवल बाललीलावत् विवेकशून्यतासे अपने नामकी हासी करनेका कारण है सो विद्वान् पुरुष स्वय विचार सकते है ,—

दूसरा–श्रीवल्लभविजयजी से मेरा (इस ग्रन्थकारका) बडेही आग्रहके साथ यही कहना है कि आपने ५० दिने पर्युषणा करनेवालोको आज्ञा भगका दूषण लगाया सो शास्त्रप्रमाण मुजब और न्यायकी युक्ति करके सहित सिद्ध कर दिखावो अथवा नही सिद्धुकरसकोतो श्रीचतुर्विध सघ समक्ष मन वचन कायासे अपनी उत्सूत्रभाषणके भूलकी क्षमा मागकर मिथ्या दुष्कृतसे अपनी आत्माको भवान्तर में उत्सूत्रभाषण की शिक्षा भोगनेसे बचालेवो ,—

और आप इन दोनु मेसें एक भी नही करोगे और इस बातको छोड कर निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य बातोसे वृथा वाद विवाद खण्डन मण्डन तथा दूसरेकी निन्दा अवहेलनासे झगडा टटा करके आपसमे जो जो सपसें शासन उन्नतिके और भव्य जीवोके उद्धारके कार्य होते है जिसमें विघ्न कारक राग द्वेष निन्दा ईर्षासे कर्म्म बन्धके हेतु करोगे करावोगे और मिथ्यात्वको वढावोगे जिसके दोषाधिकारी निमित्त भूत दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजी खास आपही होवोगे इस लिये निष्प्रयोजनकी अन्याय कारक वृथा अन्य अन्य बातो को छोडकर अपनी बात सबन्धी शास्त्रका प्रमाण दिखावो अथवा अपनी भूल समझके क्षमाके साथ मिथ्या दुष्कृतदेवो नही तो आप आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी हो ऐसा कोईभी सज्जन नही मान सकेंगे किन्तु इस लौकिकमें दृष्टिरागि-

श्रीकल्पसूत्रके पाठसे तथा तत्पाठकी व्याख्यासे आप अज्ञ होवेंगे अथवा तो भोले जीवोंको गच्छ कदाग्रहका भ्रममें गेरनेके लिये जानते हुवे भी तीसरे अभिनिवेश मिथ्यात्वके आधिन हो करके मायावृत्तिसे लिखा होगा सो विवेकी विद्वान् स्वय विचार लेवेंगे ‘—

और आगे छठे महाशयजी दम्भप्रियजीने फिरभी लिखा है कि (हाँ यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कहीं भी दिखा देवें कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावण में और दो भाद्रपद होवें तो पहिले भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केश लुञ्चन, अष्टमतप , चैत्यपरिपाटी, और सर्व सङ्घके साथ खामणारूप पर्युषणा वार्षिकपर्व करना तो हम माननेको तैयार है)

श्रीवल्लभविजयजीके इस लेखपर मेरेको प्रथमतो इतना ही कहना है कि ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने-वालोको आपने आज्ञा भगका दूषण लगाया तब श्रीबुद्धि-सागरजीने आपको पत्र द्वारा पूछा कि कौनसे शास्त्रोके पाठ मुजब ५० दिने पर्युषणा करनेवालोको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया है सो बतावो इस तरहसे शास्त्रका प्रमाण पूछा उसीको आप शास्त्रका प्रमाणतो बता सके नही तब पण्डिताभिमानके जोर की मायावृत्तिसे निष्प्रयो-जनकी अन्य अन्य बाते लिखके उलटा उन्हीसे ही शास्त्रका प्रमाण पूछने लगे सो दम्भप्रियजी यह आपका पूछना अन्यायकारक है क्योकि प्रथम आपने ही आज्ञा भगका दूषण लगाया है इसलिये प्रथम आपको ही शास्त्रका प्रमाण बताना न्याययुक्त उचित है तथापि जब तक आप

इतनाही कहना है कि ५० दिने पर्युषणा करनेकी वृद्धि हैं तो फिर जानते हुवे भी तीसरे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी क्यो वनके पञ्चाङ्गीका प्रमाण पूछकरके भोलेजीवो को सशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रममें गेरे है और अधिकमास की गिनती निश्चय करके स्वय सिद्ध है सो कदापि निषेध नही हो सकती है जिसका खुलासा इस ग्रन्यमे अनेक जगह छपगया है इसलिये दो श्रावण होतेभी ८० दिने भाद्रपदमे अथवा दो भाद्रपद होनेसे भी ८० दिने दूसरे भाद्रपदमे पर्युषणा अपनी मति कल्पनासे श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध क्यो करते है क्योकि पचासवे दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करनेवालेको शास्त्रामे आज्ञा विराधक कहा है इसलिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले अवश्यही आज्ञाके विराधक है यह तो प्रत्यक्ष सिद्ध है और ८० दिने पर्युषणा करनेका कोईभी श्रीजैनशास्त्रोमे नही लिखा है परन्तु ५०दिने पर्युषणा करनेका तो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें लिखा है सो इसीही ग्रन्यमे अनेक जगह छपगया है तथापि दभप्रियजीने अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमे ५० दिने पाच कृत्योसे पर्युषणा वार्षिक पर्व करने सबधी पचागीका पाठ पूछके भोले जीवोको भ्रममे गेरे है सो दभ-प्रियेजीके मिथ्यात्वका भ्रमको दूर करनेके लिये और मोक्षा-भिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोको नि सन्देह होनेके लिये इस जगह मेरेको इतनाही कहना है कि–श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठमें ५०दिने पर्युषणा करनी कही है इसलिये श्रावणमासकी वृद्धि होनेसें दूसरे श्रावणमे अथवा भाद्रपदमासकी वृद्धि होनेसें प्रथम भाद्रपदमें जहा ५०दिन पूरे होवे वहाही प्रसिद्ध पर्युषणामें

मोसे पृछता मानताके लिये पण्डितताभिमानके जोरसे उत्सूत्रभाषणसे संसार वृद्धिका भय न करते बालजीवोको कदाग्रहमें गेरके मिथ्यात्वको बढ़ानेवाले आप हो सोतो श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यको जाननेवाले विवेकी सज्जन अवश्यही मानेंगे यह तो प्रसिद्धही न्यायकी बात है,—

तीसरा यह है कि दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करने सबन्धी पञ्चाङ्गीका पाठ पूछके मानने को छठे महाशयजी आप तैयार हुए हो परन्तु अपनी तरफसें पचागीका पाठ बता सकते नहीं हो इससें यह भी सिद्ध होगया कि इस वर्तमान कालमें दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणापर्व कबकरना जिसकी आपको अबीतक शास्त्रोके प्रमाण मुजब पूरे पूरी मालूम नहीं है तो फिर दूसरोको आज्ञा भगका दूषण लगाके निषेध करना यहतो प्रत्यक्ष आपका महामिथ्या उत्सूत्रभाषणरूप वृथा ही झगडेको बढानेवाला हुवा सो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

चौथा औरभी सुनो यहतो प्रसिद्ध बात है कि आषाढ चौमासीसे ५० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन वार्षिक कृत्यादिसे करना कहा है इस न्यायके अनुसार दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमे ५० दिने पर्युषणा करना सोतो अल्प बुद्धिवाले भी समझ सक्ते है। तो फिर क्या छठे महाशयजीको इतनी भी बुद्धिनहीहै सो ५० दिने दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करने सबधी पञ्चाङ्गीका पाठ पूछते है। इसपर कोई कहेगा कि छठे महाशयजी की ५० दिने पर्युषणा करनेकी बुद्धि तो है। इसपर मेरेको

इतनाही कहना है कि ५० दिने पर्युषणा करनेकी वृद्धि हैं सो फिर जानते हुये भी तीसरे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी क्यों यनके पञ्चाङ्गीका प्रमाण पूछकरके भोलेजीवो को सशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रममें गेरे है और अधिकमास की गिनती निश्चय करके स्वय सिद्ध है सो कदापि निषेध नही हो सकती है जिसका खुलासा इस ग्रन्थमे अनेक जगह छपगया है इसलिये दो श्रावण होतेभी ८० दिने भाद्रपदमे अथवा दो भाद्रपद होनेसे भी ८० दिने दूसरे भाद्रपदमे पर्युषणा अपनी मति कल्पनासे श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध क्यों करते है क्योंकि पचासवे दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करनेवालेको शास्त्रमे आज्ञा विराधक कहा है इसलिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले अवश्यही आज्ञाके विराधक है यह तो प्रत्यक्ष सिद्ध है और ८० दिने पर्युषणा करनेका कोइभी श्रीजैनशास्त्रोमे नही लिखा है परन्तु ५०दिने पर्युषणा करनेका तो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमे लिखा है सो इसीही ग्रन्थमे अनेक जगह छपगया है तथापि दभप्रियजीने अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पाच कृत्योमे पर्युषणा वार्षिक पर्व करने सबधी पचागीका पाठ पूछके भोले जीवोको भ्रममे गेरे है सो दभप्रियेजीके मिथ्यात्वका भ्रमको दूर करनेके लिये और मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोको नि सन्देह होनेके लिये इस जगह मेरेको इतनाही कहना है कि—श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठमें ५०दिने पर्युषणा करनी कही है इसलिये श्रावणमासकी वृद्धि होनेसें दूसरे श्रावणमे अथवा भाद्रपदमासकी वृद्धि होनेसें प्रथम भाद्रपदमे जहा ५०दिन पूरे होवे वहाही प्रसिद्ध पर्युषणामें

साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंमे वार्षिकपर्व कर-
नेका समझना चाहिये क्योंकि जहां प्रसिद्ध पर्युषणा वहांही
वार्षिक कृत्यादि करनेका नियम है सो तो श्रीकल्पसूत्रकी
नव (९) व्याख्यायोंमें श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छा
दिके सबी टीकाकारोंने खुलासा पूर्वक लिखा है इसका
विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसे लेकर पृष्ठ २७ तक छप
गया है और उन्ही टीकाओंमें पचास दिने भाद्रपद शुक्ल
पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसे वार्षिक
पर्वरूप प्रसिद्ध पर्युषणा करनी कही है सो तो मास
वृद्धिके अभावमे चन्द्रसंवत्सरमें नतु मासवृद्धि होते भी
अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि प्राचीनकालमें भी पौष
अथवा आषाढ नामकी वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें
वीश दिने श्रावणशुक्ल पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि
पाँच कृत्योंसे प्रसिद्ध पर्युषणा जैनपञ्चाङ्गानुसार करनेमें
आती थी इस बातका निर्णय श्रीकल्पसूत्रकी टीकाओंमें
तथा इसीही ग्रन्थमे अनेक जगह और विशेष करके पृष्ठ
१०७ से ११७ तक छप गया है परन्तु इस वर्त्तमान कालमें
वीश दिने पर्युषणा करनेका कल्पविच्छेद होनेसे तथा जैन
पञ्चाङ्गके अभावसे और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी
वृद्धि होनेके कारणसे ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा वार्षिक
कृत्यादिसे करनेकी शास्त्रोंकी तथा श्रीखरतरगच्छके और
श्रीतपगच्छादिके पूर्वज पूर्वाचार्य्योंकी मर्य्यादा है सो तो इस
ग्रन्थकी आदिसेही लेकर ऊपर तकमें अनेक जगह छप गया
है और सातमें महाशयजी, श्रीधर्म्मविजयजीके नामकी सभी
क्षामे भी छपेगा (और वर्षाकालमें जीवदयादिके लियेही

खास करके दिनोकी गिनतीसे पर्युषणा करनेका श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमे खुलासा पूर्वक कहा है) इस लिये इस वर्त्तमान कालमें दूसरे श्रावण मे अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि पाच कृत्यो सहित अवश्यही निश्चय करके करनी चाहिये सो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके प्रमाणानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वय सिद्ध है सो तो ऊपरके लेखको तथा इस ग्रन्थको आदिसे अन्ततक आठो महाशयोके लेखकी समीक्षाको पढनेवाले मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन स्वय विचार लेवेंगे तथा छठे महाशयजी आप भी हृदयमें विवेक बुद्धि लाकरके न्याय दृष्टिसे पढकर अच्छी तरहसे विचारो और आप सत्यवादी महाव्रतधारी आत्मार्थी होवो तो पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणानुसार और खास आपके गच्छके भी पूर्वाचार्य्योंकी मर्य्यादानुसार ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमे सावत्सरिक प्रतिक्रमणादि पाँच कृत्योसे प्रसिद्ध पर्युषणा वार्षिकपर्व करनेका ऊपरोक्त प्रत्यक्ष न्यायानुसार तथा युक्तिपूर्वक शास्त्रोके प्रमाणको ग्रहण करो और शास्त्रोके प्रमाण बिना तथा युक्तिके विरुद्धका मिथ्या कदाग्रहको छोडो और ५० दिने पर्युषणापर्व करनेका निषेध करने सम्बन्धी जितनी कुतर्का करनी है सो सबीही ससारवृद्धिकी हेतुरूप तथा भोले जीवोकी सत्यबात परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके गच्छ कदाग्रहके मिथ्यात्वका भ्रममें गेरनेके लिये अपने विद्वत्ताकी हासी करानेवाली है सो भवभीरू मोक्षाभिलाषी आत्मार्थियोको करनी उचित नही है तो फिर छठे

महाशयजीने शास्त्रानुसार ५० दिने पर्युषणा पर्व करने वालोंको मिथ्या आशातनाका दूषण लगाके उत्सूत्र भाषण रूप ८० दिने पर्युषणा करनेकी पुष्टकिया जिसकी आलोचना लिये विना कैसे आत्मका सुधारा होगा सो न्यायदृष्टि वाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें मिथ्यात्वके झगडेको बढानेके लिये जो लेख लिखा है उसीका नमूना यहाँ लिख दिखा करके पीछे उसीकी समीक्षा करता हूं—नवेम्बर मासकी ७वी तारीख सन् १९०८ गुजराती आश्विन वदी १ हिन्दी कार्तिक वदी १ वीर सवत् २४३५ का जैनपत्रके ३० वा अङ्कके पृष्ठ पाचमा की आदिमें ही लिखा है कि,—

[वन्दे वीरम्—लेखक मुनि वल्लभविजय मु० पालणपुर

सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

आचार्य्य सावधान ! उपाध्याय सावधान ! पन्यास सावधान ! गणी सावधान ! साधुसाध्वी सावधान ! यतीवर्ग सावधान ! श्रावक श्राविका सावधान ! शेठीयाओ सावधान ! कोन्फरन्स सावधान ! वकील प्लीडर सावधान ! बेरिस्टरएटलो सावधान ! नाणा कोथली सावधान ! लागता वलगता सावधान ! कागज कलम सावधान ! खडीओ रुशनाई सावधान ! सावधान ! सावधान !! सावधान !!! तपगच्छमान धरावनार सावधान ! खरतरगच्छीय सावधान !]

छठे महाशयजीके इन अक्षरों पर मेरेको बडाही आश्चर्य्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीकी विवेक

बुद्धि कैसी शून्य होगई है सो अपनी हासी करानेवाले विना विचारे शब्द लिखते कुछ भी लज्जा नही आई क्योंकि श्रीवल्लभविजयजी आत्मार्थी महाव्रतधारी साधु होते तो वकील, बेरिस्टर, और नाणा कोथली, वगैरहको सावधान! सावधान!! पुकारके कोर्ट कचेरीमे झगडा वढानेकी तैयारी कदापि नही करते तथापि करी इससे विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे कि–श्रीवल्लभविजयजीनें भेष धारण करके साधु नाम धराया परन्तु अन्तरमे श्रद्धारहित होनेसे शास्त्रार्थ पूर्वक सत्य असत्यका निर्णय करना छोड़ करके श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें कोर्ट कचेरीमे झगडेको वढानेके लिये श्रीजैनशासनकी निन्दा करानेवाले तथा मिथ्यात्वको वढानेवाले और अपने नामको लज्जनीय शब्द लिखते पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया और शक्त दिवाने वडेही पागलकी तरह—नाणा कोथली (रुपैयोकी थेली) तथा कागद कलम और खडीओ रुशनाई (हात शाही) अचेतन अजीव वस्तुयोको सावधान! सावधान!! पुकारा–वाह क्या विद्वत्ताकी चातुराईका नमूना छठे महाशयजीने प्रकाशित किया है सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे,–

और दूसरा यह है कि खास छठे महाशयजीकी सम्मति पूर्वक पञ्जाब अमृतशहरसे, घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजी भेजकर पवित्र करवाये जिसका कारण सक्षिप्तसें इसीही ग्रन्थके पृष्ट १७५–१७६ में छपगया है और विशेष विस्तार पूर्वक पञ्जाब लाहोरसे जसवन्तराय जैनीको मारफत श्रीआत्मानन्द जैन पत्रिका मासिक पत्र प्रसिद्ध

महाशयजीने शास्त्रानुसार ५० दिने पर्युषणा पर्व करने वालोंको मिथ्या आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके उत्सूत्र भाषण रूप ८० दिने पर्युषणा करनेका पुष्टकिया जिसकी आलोचना लिये विना कैसे आत्मका सुधारा होगा सो न्यायदृष्टि वाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ,—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें मिथ्यात्वके झगडेको बढानेके लिये जो लेख लिखा है उसीका नमूना यहाँ लिख दिखा करके पीछे उसीकी समीक्षा करता हूं—नवेम्बर मासकी ७मी तारीख सन् १९०९ गुजराती आश्विन वदी १ हिन्दी कार्त्तिक वदी १ वीर सवत् २४३५ का जैनपत्रके ३० वा अङ्कके पृष्ठ पांचमा की आदिमें ही लिखा है कि,—

[वन्दे वीरम्–लेखक मुनि वल्लभविजय मु० पालणपुर

सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

आचार्य्य सावधान ! उपाध्याय सावधान ! पन्यास सावधान ! गणी सावधान ! साधुसाध्वी सावधान ! यतीवर्ग सावधान ! श्रावक श्राविका सावधान ! शेठीयाओ सावधान ! कोन्फरन्स सावधान ! वकील प्लीडर सावधान ! बेरिस्टअेटलो सावधान ! नाणा कोथली सावधान ! लागता वलगता सावधान ! कागज कलम सावधान ! सहीओ रुशनाई सावधान ! सावधान ! सावधान !! सावधान !!! तपगच्छमान धरावनार सावधान ! खरतरगच्छीय सावधान !]

छठे महाशयजीके इन अक्षरो पर मेरेको बडाही आश्चर्य्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीकी विवेक

भारी कर्मोके वध किये हैं और श्रीजैनशासनके निन्दकोको भी उसी रस्ते पहुचानेके लिये नरकादि अधोगतिका सार्थवाह (कुदनमल्ल ढूढक) बना है और पुस्तक प्रगट कराई हैं जिसमें छठे महाशयजीके गुरुजीकी तथा उन्होके सम्प्रदाय वालोकी भी निन्दा करी हैं तथा खास छठे महाशयजी वगैरहको भी अनेक शब्द लिखते तीनवार धीक्कार भी लिख दिया हैं और श्रीजैनशासनकी निन्दा करके मिथ्यात्व बढानेका कारण किया–उसीको तो छठे महाशयजीने कुछ जबाब भी न दिया और सर्व श्रीसङ्घको तथा वकील, बेरिस्टर वगैरहको सावधान करके कोर्ट कचेरीमें श्रीजैनशासनके निन्दक कुदनमल्लको शिक्षा दिलानेकी किञ्चिन्मात्र भी बहादुरी न दिखाई परन्तु श्री खरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमे वृथाही कोर्ट कचेरीमें झगडा फैलानेके लिये और मिथ्यात्व बढानेके लिये, वकील, बेरिस्टर, वगैरको सावधान करके बडीही बहादुरी दिखाई है सो बडीही आश्चर्यकी बात है कि श्रीजैनशासनके दुशमन निन्दको से तो मुख छिपाते हैं और आपसमे झगडा करनेकी बहादुरी दिखाते कुछ लज्जा भी नही पाते है,—

अब छठे महाशयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतनाही कहना है कि–आप सम्यक्त्वी और श्रीजैनशासनके प्रेमी होवो तो प्रथम श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें न्यायानुसार शास्त्राथ पूर्वक अन्तरका पक्षपात छोडकर सत्य असत्यका निर्णय करके असत्यको छोडके सत्यको ग्रहण करो और श्रीजैनशासनके निन्दक कुदनमल्लके

होता है उसीमें सन् १९०८ के २-३ अङ्कमें छप चुका है उसी घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजी भेजकर पवित्र कराने सम्बन्धी ढूंढकसाधुनामधारक कुंदनमलने १४ पृष्ठकी छोटीसी एक पुस्तक बनाकरके प्रगट कराई है सो पुस्तक छठे महाशयजीने बांची है और उन्हके पास भी है उसी पुस्तकमें छठे महाशयजीके गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी सम्बन्धी तथा श्रीजैनश्वेताम्बर मुर्त्तिपूजने वाले सम्बन्धी और श्रीसिद्धाचलजी श्रीगीरनारजी श्रीआबूजी श्रीसमेतशिखरजी वगैरह श्रीजैनतीर्थों सम्बन्धी अनेकतरहके अनुचित शब्द लिखके निन्दा करी है उसीके निमित्त भूत छठे महाशयजी वगैर हुवे है और उसी पुस्तकके पृष्ठ ३-४में घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजीके जलसे पवित्र कराये तैसेही छठे महाशयजीके गुरुजी श्रीआत्मारामजीको गङ्गाजीके जलसे पवित्र न करानेके कारण अपने गुरुजीको और अपने गुरुजीकी सम्प्रदायमें दीक्षा लेनेवालोको अपवित्र ठहरनेका कलङ्क लगवाया और पृष्ठ ११ में घासीराम, जुगलरामको गङ्गाजी भेजने वालोको तथा भेजाने वालोको और सम्मती देकर अच्छा समझने वाले छठे महाशयजी आदिको मिथ्यात्वी, पाखण्डी, वगैरह शब्दोका इनाम देकर फिर पृष्ठ १३ के अन्तमें गङ्गाजी भेजने वालोको श्रीजैन शासनको लाछन (कलङ्क) लगानेवाले ठहराकरके तीन वार धीक्कारका इनाम दिया है ।

इस जगह निष्पक्षपाती सज्जन पुरुषोको विचार करना चाहिये कि श्रीजैनतीर्थोंकी तथा श्रीजैनतीर्थोको मानने वालोकी द्वेष बुद्धिसे वड़ेही अनुचित शब्दोसें निन्दा करके

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (अमो नहोता धारताके महात्मा मुनि मोहनलालजीना काल पछी अेहवो पण काल आवशे के जे आपसमा जजाल फेलावी फालमारी पायनालकरी हाल वेहाल करी देशे पण भवितव्यताने कोण रोके) इत्यादि अनेक तरहके अनुचित शब्द लिखके श्रीमोहनलालजी पर तथा उन्होके समुदाय वालोपर द्वेषबुद्धिसें खूबही कटाक्ष करके नाटकरूपसें कितनीही बातोमे उन्होको कलङ्क लगाया है उसीका भी युक्ति पूर्वक जवाब यहा लिखनेसे वहुतही विस्तार होजावे इस लिये श्रीमोहनलालजीके तथा उन्होके सप्रदायके पूर्णप्रेमी और गुरुभक्त (पन्यासजी श्रीजशमुनिजी, पन्यासजी श्रीहर्ष-मुनिजी, और पन्यासजी श्रीकेशरमुनिजी वगैरह मडली के साधुओमेसे) जो महाशय होवेंगे सो दम्भप्रियजीके लेखका जबाव लिखके श्रीमोहनलालजीका तथा उन्होकी समुदाय वालोका कलङ्कको दूर करेगा ।

और इसके आगे फिर भी लिखा है कि (प्रश्नोत्तर-मालिका नामे अेक चोपडी रतलाममा वीरसवत् २४३५ नाकारतक सुदीपाँचमें वेरिस्टरनुसोटु नाम लखी छपा-ववामा आवेल छे जेमा तपगच्छ उपर हुमलोकर्या सिवाय बीजु काई पण मालम पडतु नथी कारणके जेजे सवालो लख्याछे प्राय सर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोप-डीना उत्तर रूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी ज-इन धर्म्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपडीमा आवी गयेल छे) छठे महाशयजीके ऊपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु जिसमें प्रथमतो—प्रश्नोत्तरमालिका,

मिथ्यात्वका पाखराडको च्छेदन करनेके लिये अपनी बहा दुरी प्रगट करो—जबतक कुंदनमल्लके मिथ्यात्व बढानेवाले लेखका जवाब आप नही देवोगे तबतक आपकी विद्वत्ता वृथाही समझमें आवेगी और ढूढकोंके मुखपर श्याही फिरानेके इरादेसे काव्य करनेकी अक्कल आपने दोडाई थी परन्तु पूर्वापरका विचार किये विना काव्य कराया जिससे आपकेही मुखपर श्याही फिरने जैसा कारण बनगया और श्रीजैनतीर्थोकी तथा अपने गुरुजी वगैरहकी निन्दा करानेके निमित्त भूत दोषाधिकारी भी आपकोही बनना पडा है और अपने वडोंको अपवित्र ठहरानेका कलङ्क भी लगवाया है इसलिये कुदनमल्ल ढूढकके निन्दारूपी मिथ्या गप्पोंका जवाब देना आपकोही उचित है तथापि उन्हका जबाब देना आपको मुश्किल होवे तो आपके मण्डलीमें विद्वत्ता का अभिमान धारण करनेवाले बहुतसें साधुजी है उन्हके पास उसीका जवाब दिलाना चाहिये इतने पर भी आप की तथा आपके मण्डलीके साधुओंकी कुदनमल्लके लेखका जवाब देनेकी बुद्धि नही होवे तो मेरी तरफसे इस ग्रन्थको सपूर्ण हुए बाद "कुदनमल्लके मिथ्यात्वका पाखण्डच्छेदन कुठार" नामा ग्रन्थ आप लिखो तो बनाकर प्रगट करू जिसमें श्रीजैनतीर्थों पर तथा श्रीजैनतीर्थोको माननेवालो पर और आपके गुरुजी वगैरह पर जो जो आक्षेप करके दूषण लगाया है जिसका न्यायानुसार युक्तिपूर्वक अच्छी तरहसे जवाब लिखके सबके आक्षेपको दूर करनेमें आवेगा और कुदनमल्लने अपने अन्तर गुण युक्त जो जो शब्द लिखे हैं उन्होंकाही न्याय युक्तिपूर्वक खास कुदनमल्लकेही ऊपर घटानेमें आवेगा,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (अमो नहोता धारताके महात्मा मुनि मोहनलालजीना काल पछी अेहवो पण काल आवशे के जे आपसमा जजाल फेलावी फालमारी पायमालकरी हाल बेहाल करी देशे पण भवितव्यताने कोण रोके) इत्यादि अनेक तरहके अनुचित शब्द लिखके श्रीमोहनलालजी पर तथा उन्होके समुदाय वालोपर द्वेषबुद्धिसे खूबही कटाक्ष करके नाटकरूपसे कितनीही बातोमें उन्होको कलङ्क लगाया है उसीका भी युक्ति पूर्वक जवाब यहा लिखनेसे बहुतही विस्तार होजावे इस लिये श्रीमोहनलालजीके तथा उन्होके सप्रदायके पूर्णप्रेमी और गुरुभक्त (पन्यासजी श्रीजशमुनिजी, पन्यासजी श्रीहर्ष-मुनिजी, और पन्यासजी श्रीकेशरमुनिजी वगैरह मडली के साधुओमेंसे) जो महाशय होवेगे सो दभप्रियजीके लेखका जवाब लिखके श्रीमोहनलालजीका तथा उन्होकी समुदाय वालोका कलङ्कको दूर करेगा।

और इसके आगे फिर भी लिखा है कि (प्रश्नोत्तर-मालिका नामे अेक चोपडी रतलाममा वीरसवत् २४३५ नाकारतक सुदीपाँचमें वेरिस्टरनुखोटु नाम लखी छपा-ववामा आवेल छे जेमा तपगच्छ उपर हुमलोकया सिवाय बीजु काई पण मालम पडतु नथी कारणके जेजे सवालो लख्याछे प्राय सर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोप-डीना उत्तर रूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी ज-इन धर्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपडीमा आवी गयेल छे) छठे महाशयजीके ऊपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हु जिसमें प्रथमतो--प्रश्नोत्तरमालिका,

मिथ्यात्वका पाखण्डको छेदन करनेके लिये अपनी बहादुरी प्रगट करो—जबतक कुदनमल्लके मिथ्यात्व बढानेवाले लेखका जवाब आप नही देवोगे तबतक आपकी विद्वत्ता वृथाही समझनेमें आवेगी और ढूंढकोके मुखपर शाही फिरानेके इरादेसे काव्य करनेकी अक्कल आपने दोडाई थी परन्तु पूर्वापरका विचार किये विना काव्य कराया जिससे आपकेही मुखपर शाही फिरने जैसा कारण बनगया और श्रीजैनतीर्थोकी तथा अपने गुरुजी वगैरहकी निन्दा करानेके निमित्त भूत दोषाधिकारी भी आपकोही बनना पडा है और अपने वडोको अपवित्र ठहरानेका कलङ्क भी लगवाया है इसलिये कुदनमल्ल ढूढकके निन्दारूपी मिथ्या गप्पोका जबाब देना आपकोही उचित है तथापि उन्हका जबाब देना आपको मुश्किल होवे तो आपके मण्डलीमें विद्वत्ता का अभिमान धारण करनेवाले बहुतसें साधुजी है उन्हके पास उसीका जबाब दिलाना चाहिये इतने पर भी आप की तथा आपके मण्डलीके साधुओकी कुदनमल्लके लेखका जवाब देनेकी बुद्धि नही होवे तो मेरी तरफसे इस ग्रन्थको सपूर्ण हुए बाद "कुदनमल्लके मिथ्यात्वका पाखण्डच्छेदन कुठार" नामा ग्रन्थ आप लिखो तो बनाकर प्रगट करू जिसमें श्रीजैनतीर्थो पर तथा श्रीजैनतीर्थोको माननेवालो पर और आपके गुरुजी वगैरह पर जो जो आक्षेप करके दूषण लगाया है जिसका न्यायानुसार युक्तिपूवक अच्छी तरहसे जबाब लिखके सबके आक्षेपको दूर करनेमें आवेगा और कुदनमल्लने अपने अन्तर गुण युक्त जो जो शब्द लिखे हैं उसीकाही न्याय युक्तिपूर्वक खास कुदनमल्लकेही ऊपर घटानेमें आवेगा,—

युक्त बात है इसलिये प्रथम वाद विवादका कारण श्रीखर-तरगच्छवालोकी तरफसे नही किन्तु श्रीतपगच्छवालोकीही तरफसे होता है ,—

और (वेरिस्टरनु खोटुनाम लखी छपावामां आवेलछे) छठे महाशयजीका यह भी लिखना द्वेष बुद्धिका मिथ्या है क्योकि यह तो दुनियामें प्रसिद्ध व्यवहार है कि—ऋषभ, महावीर, वर्द्धमान, गौतम, इन्द्र, लक्ष्मीपति, अमर, राजा, महाराज, सिहजी, इत्यादि अपने ससारिक सम्बन्धियोमें अनेक तरहके व्यवहारिक नाम होते है उसी नामको बोलनेमें अथवा लिखनेमें कोई दूषण नही है और श्रीजैन-शास्त्रोमे भी व्यवहारिक नामसें अनेक वाते लिखनेमें आती है तैसेंही उन्हको भी अपने ससारिक सम्बन्धियोमें व्यवहारिक नामसे वेरिस्टर कहते हैं सोही नाम लिखा है उसीको छठे महाशयजी झूठा ठहराते हैं सो तो प्रत्यक्ष द्वेष बुद्धिका कारण है ,—

और छठे महाशयजीनें लिखा है कि (तपगच्छ उपर हुमलो कर्या सिवाय बीजु काई पण मालम पडतु नथी) इन अक्षरो पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सत्ययुग चौथे कालमे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके अमृत समान धर्मोपदेशको सुन करके भी—भारी कर्मे मिथ्यात्वी प्राणी उन्हीमहराजोके अवर्णवाद बोलकर ससार वृद्धिका कारण करते थे तो अब इस कलियुग पञ्चमकालमें गच्छकदाग्रही, हठवादी, पण्डिताभिमानी, दु खगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य वाले, अन्तरमें श्रद्धारहित, मिथ्याभाषक, कलयुगी भारी कर्मप्राणी—श्रीजैनशास्त्रोके प्रत्यक्ष प्रमाणोका अवर्णवाद

नामा छोटीसी पुस्तकको देख करके बडे महाशयजी श्रीवल्लभ विजयजी और श्रीफलकत्तानिवासी लछमीचन्दजी सीपाणी वगैरह महाशय कहते फिरते हैं कि-देखो प्रथम वाद विवाद का कारण खरतरगच्छवालोंकी तरफसे होता है जिसका नमूनारूप प्रश्नोत्तरमालिका नामा पुस्तक लोगोंको दिखाते हैं परन्तु प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तक बननेका कारण समझे बिना द्वेष बुद्धिसे मिथ्या मायवृत्ति करके प्रथम वाद विवादके कारण करनेका श्रीखरतरगच्छवालोंको झूठा दूषण लगाते हैं क्योंकि प्रथम रतलामसे श्रीतपगच्छके श्रावक वृद्धिचन्दजी छोगालालजी गाधीने श्रीहैदराबादमें चौमासा ठहरे हुवे न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीको पत्र द्वारा, पाच–छ 'कल्याणकादि सम्बन्धी कितने ही सवाल पूछे जिसके जबाब सप्टेम्बर मासकी २७ वी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुदी २ वीर सवत् २४३४ के जैनपत्रका २४ वा अङ्कके पृष्ट ४ में छपे हैं उसीमें श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक सम्बन्धी पूछा तब उसीके निमित्त कारणसे उसीका जबाब रूपमें श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकसम्बन्धी शास्त्रोंके पाठो सहित कितनेही शास्त्रानुसार सवालो पूर्वक—प्रश्नोत्तर-मालिका नामा पुस्तक छपी है इसलिये प्रश्नोत्तरमालिका छपनेके निमित्त कारण श्रीशान्तिविजयजी है जो श्रीशान्ति विजयजी श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक सम्बन्धी नही पूछते तो श्रीखरतरगच्छवालोंको उसीका जबाबरूपमें प्रश्नोत्तरमालिका छपा करके प्रगट करनेकी कोई जरूरत नही थी परन्तु प्रथम जो कोई सवाल पूछेगा उसीका जवाब तो शास्त्रानुसार अवश्यही देना सो न्याय

युक्त बात है इसलिये प्रथम वाद विवादका कारण श्रीखर-तरगच्छवालोकी तरफसे नही किन्तु श्रीतपगच्छवालोकीही तरफसे होता है,—

और (वेरिस्टरनु खोटुनाम लखी छपावामा आवेलछे) छठे महाशयजीका यह भी लिखना द्वेष बुद्धिका मिथ्या है क्योकि यह तो दुनियामें प्रसिद्ध व्यवहार है कि—ऋषभ, महावीर, वर्द्धमान, गौतम, इन्द्र, लक्ष्मीपति, अमर, राजा, महाराज, सिहजी, इत्यादि अपने ससारिक सम्बन्धियोमें अनेक तरहके व्यवहारिक नाम होते है उसी नामको बोलनेमें अथवा लिखनेमें कोई दूषण नही है और श्रीजैन-शास्त्रोमे भी व्यवहारिक नामसें अनेक बाते लिखनेमें आती है तैसेंही उन्हको भी अपने ससारिक सम्बन्धियोमें व्यवहारिक नामसे वेरिस्टर कहते हैं सोही नाम लिखा है उसीको छठे महाशयजी झूठा ठहराते हैं सो तो प्रत्यक्ष द्वेष बुद्धिका कारण है,—

ओर छठे महाशयजीनें लिखा है कि (तपगच्छ उपर हुमलो कर्या सिवाय बीजु काई पण मालम पडतु नथी) इन अक्षरो पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सत्ययुग चौथे कालमे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके अमृत समान धर्मोपदेशको सुन करके भी—भारी कर्म मिथ्यात्वी प्राणी उन्हीमहराजोके अवर्णवाद बोलकर ससार वृद्धिका कारण करते थे तो अब इस कलियुग पञ्चमकालमें गच्छकदाग्रही, हठवादी, पण्डिताभिमानी, दु खगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य वाले, अन्तरमें श्रद्धारहित, मिथ्याभाषक, कलयुगी भारी कर्मप्राणी—श्रीजैनशास्त्रोके प्रत्यक्ष प्रमाणोका अवर्णवाद

घोलके, समार वृद्धिका कारण करे तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है तैसेही छठे महाशयजी दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने भी किया, अपात्-प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तकमें शास्त्रोके पाठ दिखाये और शास्त्रानुसार कितनीही बातें भी लिखी है उसको प्रमाण करना तो दूर रहा परन्तु तपगच्छ उपर हुमलो (जुलम) करनेका ठहरा करके श्रीजैनशास्त्रोंकी बातोके अवर्णवाद लिखे सो तो उन्होंकेही कर्मोका दोष है ,—

और आगे फिर भी प्रश्नोत्तरमालिका सम्बन्धी छठे महाशयजी लिखते हैं कि (जे जे सवालो लख्या छे प्राय सर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोपडीना उत्तररूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी जइनधर्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपडीमा आवी गयेल छे) इस लेख पर भी प्रथमतो मेरेको इतनाही कहना है कि–कलकत्तेसे चोपडी (पुस्तक) प्रगट होनेका जो छठे महाशयजी लिखते हैं सो तो भूलसे मिथ्या है क्योंकि कलकत्तेसे पुस्तक प्रगट नही हुई थी किन्तु (न्यायाम्भोनिधिजीकेही उत्सूत्र भाषणके अन्यायपर) मकसूदाबादके श्रावकने मुबईमें छपवाकर 'शुद्ध समाचारी प्रकाश' नामा पुस्तक प्रगट किई है उसीमें श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्यजी महाराजोकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके पाठार्थो सहित जो जो बाते लिखनेमें आई है उसीका और प्रश्नोत्तरमालिकामें भी जो जो शास्त्रोकी बातें लिखके सवाल पूछनेमे आये हैं। उसीके एक सवालका भी जवाबमें उत्सूत्र भाषणके सिवाय शास्त्रार्थ पूर्वक कुछ भी जवाब जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें नही लिखा है।

और (ढूंढिओऐ पण याद राखवु सामायिक लेतां प्रथम इरियावहिया केहवी अने पछी करेमिभतेनो पाठ केहवो १, श्रीमहावीर स्वामिना पांच कल्याणक २, वगेरे वातोमा तो तमोने पण बाधाज आवशे माटे तपगच्छ उपरथयेल आक्षेप जोई फुलीने फालका न थाशो आबावतमा तो तमो पण जवाब दारजछो) इन अक्षरो करके छठे महाशयजी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये इस जगह ढूंढियोको भी अपने सामिल मिलाते हुवे उन्हींकाही सरणा लेकरके सामायिक सम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी श्रीखरतरगच्छवालोके साथ वाद विवादरूप युद्ध करना चाहते हैं और बहुत वर्षोंका गच्छसम्बन्धी विवाद दबा हुवा था, उसीको भी पीछाही सरु करके शुद्धसमाचारी प्रकाशकी सत्य बातोका उत्तररूपमें जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक, परन्तु वास्तविकमें उत्सूत्र भाषणके सग्रहकी-पुस्तकको आगे करके अपना मन्तव्यको पुष्ट किया इसलिये इस जगह—ऊपरकी दोनु पुस्तकोकी सब बातोके सत्य असत्यका निर्णय करके मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोको दिखाना मेरेको उचित है परन्तु बहुत विस्तार हो जानेके कारणसे नमूनारूप थोडीसी बातोका निर्णय करके संक्षिप्तसे दिखाता हु, जिसमें प्रथम शुद्धसमाचारी प्रकाशमें सामायिकका अधिकार है तथा जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक पुस्तकमें भी प्रथम सामायिकका अधिकार है और छठे महाशयजी भी ढूंढियोका साथ करके प्रथम सामायिक सम्बन्धी लिखते हैं इसलिये मैंभी इस जगह प्रथम सामायिक सम्बन्धी शास्त्रार्थ पूर्वक थोडासा लिखता हु —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमें भी कहा है सोही दिखाता हु –

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआव श्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउकेश गच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री मदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमें ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमें ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमे १०, श्रीपूर्णपल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमे १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमे १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूर्णिमे १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमे १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमे १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमे १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत सग्रह ग्रन्थमे १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) मे २०,और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसग्रह ग्रन्थकी वृत्ति–जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीने शुद्ध करी है उसीमे २१, इत्यादि अनेक शस्त्रोमे श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोके अनेक पूर्वाचार्य्योंने श्रावकके सामायिक विधिमे (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमे सब पाठ यहा लिखनेसे बहुत विस्तार होजावे तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको नि सन्देह होनेके लिये अपनेही पूवजोके बनाये ग्रन्थोके पाठ इस जगह लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हु –

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआव श्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउक्केशगच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री मदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमे ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमें ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमे १०, श्रीपूर्णतल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमें १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमे १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूर्णिमे १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमे १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमे १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमे १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत संग्रह ग्रन्थमे १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) में २०,और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसंग्रह ग्रन्थकी वृत्ति–जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीनें शुद्ध करी है उसीमे २१, इत्यादि अनेक शस्त्रोमे, श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोंके अनेक पूर्वाचार्य्योंनें, श्रावकके सामायिक विधिमे (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमे सब पाठ यहा लिखनेसे बहुत विस्तार होजावे तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको नि सन्देह होनेके लिये अपनेही पूर्वजोके बनाये ग्रन्थोके पाठ इस जगह लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हुं –

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी बृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउक्केशगच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री मदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमें ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमें ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमें १०, श्रीपूर्णपल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमें १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमे १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूर्णिमे १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमे १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमे १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमे १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत संग्रह ग्रन्थमे १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) मे २०,और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसंग्रह ग्रन्थकी वृत्ति–जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीने शुद्ध करी है उसीमे २१, इत्यादि अनेक शास्त्रोमे, श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोके अनेक पूर्वाचार्य्योंनें श्रावकके सामायिक विधिमे (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमे सब पाठ यहा लिखनेसे बहुत विस्तार होजावे तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको निःसन्देह होनेके लिये अपनेही पूर्वजोके बनाये ग्रन्थोके पाठ इस जगह लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हु –

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउकेशगच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमे ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमे ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्रीश्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमें १०, श्रीपूर्णपल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोंकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमें १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमे १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूर्णिमे १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमे १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमे १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमे १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत सग्रह ग्रन्थमे १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) में २०,और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसग्रह ग्रन्थकी वृत्ति–जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीने शुद्ध करी है उसीमे २१, इत्यादि अनेक शस्त्रोमे श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोके अनेक पूर्वाचार्य्योंने श्रावकके सामायिक विधिमे (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमे सब पाठ यहा लिखनेसे बहुत विस्तार होजावे इसलिये श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको नि सन्देह होनेके लिये अपनेही पूर्वजोके बनाये ग्रन्थोके पाठ इस जगह लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हुं –

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी बृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउकेश गच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री मदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमे ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमे ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमें १०, श्रीपूर्णपल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोंकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमें १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमे १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूणिमे १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमे १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमे १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमे १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत सग्रह ग्रन्थमे १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) मे २०,और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसग्रह ग्रन्थकी वृत्ति–जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीनें शुद्ध करी है उसीमे २१, इत्यादि अनेक शास्त्रोमे श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोके अनेक पूर्वाचार्य्योंनें श्रावकके सामायिक विधिमे (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये वाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमे सब पाठ यहा लिखनेसे वहुत विस्तार होजावे तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोको नि सन्देह होनेके लिये अपनेही पूर्वजोके वनाये ग्रन्थोके पाठ इस जगह लिख दिखाता हु—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो —

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करना श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हु —

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउक्केशगच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुन श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमे ८, श्रीवडगच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमे ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमे १०, श्रीपूर्णपल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड श्लोकोकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

और श्रीतपगच्छके प्रभाविक श्रीहीरविजयजीसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी कृत श्रीधर्म्मसंग्रहकी वृत्तिको सुप्रसिद्ध श्रीयशोविजयजीने शुद्ध करी है उसीका पाठ यहां दिखाता हुं —

यथा—आवश्यकसूत्रमपि सामायिअं नाम सावज्ज-जोगपरिवज्जणं णिरवज्जजोगपडिसेवणं चेत्ति, तत्रायमावश्यकचूर्णि,पञ्चाशकचूर्णि,योगशास्त्रवृत्त्याद्युक्तो विधिर्यथा-श्रावकः सामायिककर्ता द्विधा भवति ऋद्धिमाननृधिकश्च योऽसावनृद्धिकः स चतुर्षु स्थानेषु सामायिकं करोति जिन-गृहे, साध्वन्तिके, पोषधशालायां, स्वगृहे वा यत्र वा, विश्राम्यति निर्व्यापारो वा आस्ते तत्र च यदा साधुसमीपे करोति तदायंविधिः यदि कस्माच्चिदपि भयं नास्ति केन-चिद्विवादो नास्ति, ऋणं वा न धारयति माभूत्तत् कृता-कर्षणापकर्षणनिमित्तसक्लेश, तदा स्वगृहेऽपि सामायिकं कृत्वा ईर्या शोधयन् सावद्यां भाषां परिहरन्, काष्ठ-लोष्ठ्वादिना यदि कार्य्यं, तदा तत्स्वामिनमनुज्ञाप्य प्रति लिख्य प्रमार्ज्यंच गृह्णन्, खेलसिंघाणकादीन् विवेचयश्च स्थंडिलं प्रत्यवेक्ष्य, प्रमृज्य पञ्चसमितिसमितस्त्रिगुप्तिगुप्त साध्वाश्रयं गत्वा, साधून्नमस्कृत्य सामायिकं करोति, तत्सूत्रं यथा करेमिभंते सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्सभंते पडिक्कमामि निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि त्ति ॥ एवं कृतसामायिकः, ईर्यापथिक्याः प्रतिक्रामति पश्चादागमनमालोच्य,यथाज्येष्ठ-माचार्य्यादीन्वन्दते, पुनरपि गुरुं वन्दित्वा प्रत्युपेक्षितासने

साम्प्रतमष्टादश सत्कार द्वारमाह ॥ ततो वैकालिकानन्तर विकालवेलायामन्तमुहूर्त्तरूपायां सामेवब्यनक्ति अस्तमिते दिवाकरे अर्द्धबिम्बाद्वाक् इत्यर्थ ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्येति शेष । पुनर्वन्दते जिनांश्च मान् । प्रसिद्ध चैत्यवन्दनविधिनेति ॥२२८॥ अथैकोनविंशतिवन्दनकोपलक्षितमावश्यकद्वारमाह ॥ ततस्तृतीयपूजानन्तर श्रावक पोषधशालाङ्गत्वा यतनया प्रमार्ष्टि ततो नमस्कारपूर्वक व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थत्वात । स्थापयित्वैव तत्र सूरि स्थापनाचार्य्यं । ततो विधिना सामायिक करोति ॥ २२९ ॥ अथ तत्र साधवोऽपि सन्ति । श्रावकेण गृहे सामायिक कृत । ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा कि करोति इत्याह । साधुसाक्षिक, पुन सामायिक कृत्वा । ईर्य्या प्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत् । तत आचार्य्यादिन् वन्दित्वा। स्वाध्याय काले चावश्यक करोति ॥२३०॥

देखिये ऊपरके पाठमें सामको पूर्वोक्त विधिसे श्री जिनराजकी पूजा करके प्रसिद्ध विधिसे चैत्यवन्दन करे बाद पौषधशालामें जाकर यतना पूर्वक प्रमार्जना करके गुरु अभावसे नमस्कार पूर्वक स्थापनाचार्य्यजीकी स्थापना करके तिस विधिसे अर्थात् श्रीआवश्यकादि शास्त्रोक्त विधिसे सामायिक करे और पौषधशालामे श्रीगुरुजी महाराज होवे और अपने घरसे सामायिक करके पौषध शालामें गया होवे तो फिर भी गुरु साक्षि करेमिभंतेका उच्चारण करके पीछे इरियावही पडिक्कमके आचार्य्यादि महाराजोको वन्दना करे और स्वाध्याय करे पीछे अवसर होनेसे प्रतिक्रमण करे——

कलिकालसर्वज्ञ विरुद-धारक श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्री योगशास्त्रकी वृत्ति ३, और आदिशब्दसें श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार—सामायिक करने वाले दो प्रकारकेश्रावककी विधिमे खुलासा पूर्वक प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे सें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अच्छीतरहसे स्पष्ट करके लिखा है। और श्रावक अपने घरमे वा गुरु अभावसे पौषध शालामे सामायिक करे वहा 'जाव नियम पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीगुरुजी महाराजके सामने सामायिक करे वहा 'जावसाहू पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीजिनमन्दिरमे सामायिक करे वहा 'जावचेईय पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे—इसका ऊपरोक्त शास्त्रोंमें खुलासे पाठ है ।

और भी श्रीतपगच्छके श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध-प्रतिक्रमणवृत्ति (श्रीवन्दीत्ता सूत्रकी अर्थदीपिका टीका) में भी श्रावकके नवमा सामायिक व्रताधिकारे ऊपर मुजब ही पाठ है और उसीका भाषान्तर श्रीमुम्बईवाले श्रावक-भीमसिह माणकनें निर्णयसागर प्रेसमे श्रीजैनकथा रत्नकोष भाग चौथा (४) मे छपवाया है जिसके पृष्ठ ३३७ से ३३८ तक देख लेना —

और ऊपरोक्त अनेक शास्त्रोके पाठ भावार्थ सहित एक दूसरा और भी ग्रन्थ छपता है उसीमे विस्तार पूर्वक अनेक पाठ छपगये है जिसका भेद आगे खोलुगा—

अब मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन पुरुषोको इस जगह विचार करना चाहिये कि—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि

निविष्ट, शृणोति, पठति, पृच्छति वा, एव चैत्यभवनेऽपि द्रष्टव्य,यदा तु पोषधशालाया स्वगृहे वा सामायिक गृहीत्वा तत्रैवास्ते तदागमन नास्ति यस्तु राजादि महर्द्धिक स गन्धसिन्धुरस्कन्धाधिरूढ छत्रचामरादिराज्यालङ्कृतो हास्तिकाश्वीयपादातिकरथकाद्या परिकरितो भेरीभाकारभरिताम्बरतलो बन्दिवृन्दकोलाहलाकुलीकृतनभस्तलोऽनेकसामन्तमण्डलेश्वराहमहमिकाप्रेक्ष्यमाणपादकमल पौरजनैः सश्रद्धमङ्गुल्योपदर्श्यमानो मनोरथैरुपस्पृश्यमानस्तेषामेवाञ्जलिबन्धान् लाजाञ्जलिपातान् शिर प्रणामाननुमोदमान अहो धन्यो धर्मो य एवविधैरुपसेव्यते इति प्राकृतजनैरपि श्लाघ्यमानोऽकृतसामायिक एव जिनालय साधुवसति वा गच्छति तत्र गतो राजककुदानि छत्रचामरोपानन्मुकुटखड्गरूपाणि परिहरति आवश्यकचूर्णौ तु मउड न अवणेइ कुण्डलाणि णाम मुद्द च पुप्फतबोलपावारगमादि वोसिरइत्ति भणित जिनार्चन साधुवन्दन वा करोति यदि त्वसौ कृतसामायिक एव गच्छे त्तदा गजाश्वादिभिरधिकरण स्यात्तच्च न युज्यते कर्त्तु तथा सामायिकेन पादाभ्यामेव गन्तव्य तच्चानुचित भूपतीना आगतस्य च यद्यसौ श्रावकस्तदा न कोऽप्यभ्युत्थानादि करोति अथ यथा भद्रकस्तदा पूजा कृतास्तु इति पूर्वमेवासन मुञ्चति आचार्य्याश्च पूर्वमेवोत्थिता आसते मा उत्थानानुत्थानकृता दोषा भूवन्निति आगतश्चासौ सामायिक करोतीति पूर्ववत्,—

देखिये ऊपरके पाठमे श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि १, श्री यशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णि २, तथा

और इस वर्त्तमान कालमें सुप्रसिद्ध न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी अनेक शास्त्रोके अवलोकन करनेवाले गीतार्थ कहलाते थे इसलिये श्रीपूर्वधर महाराज कृत श्री आवश्यक चूर्णि वगैरह २१ शास्त्रोके प्रमाण सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही सम्बन्धी ऊपरमेही पृष्ठ ३१७–३११ मे छपे है उन्ही शास्त्रोके पाठोको सामायिक सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें वाचे है लोगोको सुनाये है और उन्ही शास्त्रकार महाराजोको श्रीजैनशास्त्रोके अतीव गहनाशयको समझनेवाले, बुद्धिनिधान, प्रभाविक, श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक, सत्यवादी, पर उपगारी, मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी, और भव्य जीवोको मोक्षसाधनका श्रीजिनाज्ञाके आराधनरूप रस्ताको दिखाने वाले गीतार्थ उत्तमपुरुष मानते थे लोगोको भी कहते थे और उन्ही महाराजोके बनाये ऊपरोक्त पञ्चाङ्गीके शास्त्रोको नही माननेवालोको मिथ्यात्वी ठहरा करके उन्ही महाराजोकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीकी श्रद्धारहित जैनाभास ससारगामी कहते थे और शास्त्रोके पाठोको छुपा करके अथवा आगे पीछेके सम्बन्धको छोड करके शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उलटे तात्पर्य्य भोले जीवोको दिखाने वालोको ससारमें परिभ्रमण करनेवाले ठहराते थे सोही खास न्यायाम्भोनिधिजीके बनाये चतुर्थस्तुतिनिर्णय’ वगैरह ग्रन्थोसे प्रत्यक्ष दिखता है तथापि बडेही अफसोसकी बात है कि दूरभवि बहुलकर्मी मिथ्यात्वीकी तरह पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि अनेक शास्त्रोके पाठोपर श्रीआत्मारामजीकी अन्तरमें श्रद्धा नही

महाराजीकी आज्ञानुसार पूर्वधरादि श्रीप्राचीनाचार्य्योंने तथा सबीही गच्छोंके पूर्वाचार्य्योंने और श्रीतपगच्छके भी प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक खास विस्ताधिकारे प्रथम वरेभिक्षतेश उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही कही है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक प्राय करके सबीही श्रावक महाशयोंको ऊपर मुजब वर्तना तो दूर रहा परन्तु ऊपर मुजब श्रद्धा भी नहीं रखते है और उल्टे उन शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासे वर्त्तते हैं उन्होंको श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक तथा खास अपनेही गच्छके प्रभाविक पुरुषोंकी आज्ञाके आराधक और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंपर श्रद्धारखनेवाले कैसे कहे जावें और अनेक शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणकी विधिको छोड़ करके अन्ध परम्परासे गड्डरीह प्रवाहवत् उन्ही शास्त्रोंके विरुद्ध वर्त्तने वालोंकी क्रिया भी कैसे सफल होगा—और श्रीजैनशास्त्रोंके एक पद पर अथवा एक अक्षर पर भी जो पुरुष श्रद्धा नही रक्खे वह प्राणी जमालिकी तरह निन्हव, मिथ्यादृष्टि कहा जाता है सो तो अनेक शास्त्रोंमे प्रसिद्ध बात है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक जो जो मुनि महाशय और श्रावक महाशय ऊपरोक्त अनेक शास्त्रो पर तथा उन शास्त्रोंके कर्त्ता श्रीजैनशासनके प्रभाविक पुरुषोंके वचनो पर और खास अपनेही गच्छके पूर्वज पुरुषोंके वचनो पर श्रद्धामहीरखते है उन्होंको—पक्षग्राही, दृष्टिरागी, शास्त्रोंकी श्रद्धा रहितके सिवाय और सम्यक्त्वी कौन कहेगा सो तत्त्वग्राही पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—

और इस वर्त्तमान कालमें सुप्रसिद्ध न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी अनेक शास्त्रोके अवलोकन करनेवाले गीतार्थ कहलाते थे इसलिये श्रीपूर्वधर महाराज कृत श्री आवश्यक चूर्णि वगैरह २१ शास्त्रोंके प्रमाण सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही सम्बन्धी ऊपरमेही पृष्ठ ३१०–३११ में छपे है उन्ही शास्त्रोके पाठोको सामायिक सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें वाचे है लोगोको सुनाये है और उन्ही शास्त्रकार महाराजोको श्रीजैनशास्त्रोके अतीव गहनाशयको समझनेवाले, बुद्धिनिधान, प्रभाविक, श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक, सत्यवादी, पर उपगारी, मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी, और भव्य जीवोको मोक्षसाधनका श्रीजिनाज्ञाके आराधनरूप रस्ताको दिखाने वाले गीताथ उत्तमपुरुष मानते थे लोगोको भी कहते थे और उन्ही महाराजोके बनाये ऊपरोक्त पञ्चाङ्गीके शास्त्रोको नही माननेवालोको मिथ्यात्वी ठहरा करके उन्ही महाराजोकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीकी श्रद्धारहित जैनाभास ससारगामी कहते थे और शास्त्रोके पाठोको छुपा करके अथवा आगे पीछेके सम्बन्धको छोड करके शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उलटे तात्पर्य्य भोले जीवोको दिखाने वालोको ससारमे परिभ्रमण करनेवाले ठहराते थे सोही खास न्यायाम्भोनिधिजीके बनाये 'चतुथस्तुतिनिर्णय' वगैरह ग्रन्थोमें प्रत्यक्ष दिखता है तथापि बडेही अफसोसकी बात है कि दूरभवि बहुलकर्मी मिथ्यात्वीकी तरह पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि अनेक शास्त्रोके पाठोपर श्रीआत्मारामजीकी अन्तरमें श्रद्धा नही

थी इसलिये श्रीपूर्वधरादि महाराजोंके बनाये श्रीआवश्यक चूर्णि वगैरह पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोपर उन्होंको सशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रम रहा अथवा अपनी विद्वत्ताके अभिमानमें ससार वृद्धिका भय नही करते अभिनिवेशिकमिथ्यात्वके अधिकारी बनके ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोके तात्पर्य्यको जानते हुवे भी प्रमाण नही करे और भोले जीवोको भी पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि शास्त्रोंके पाठोकी शुद्ध श्रद्धा रहित बनानेके लिये 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अन्य अन्य विषयोके अधिकारवाले अधूरे अधूरे पाठ लिखके उसीका भी उलटा तात्पर्य्य बालजीवोको दिखा करके (उत्सूत्र भाषणरूप अनेक जगह लिखके) अपनी समुदायवालोको तथा अपने गच्छ वालोको सशयरूपी मिथ्यात्वके भ्रममें गेरे हैं और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका आराधनरूपी मोक्षसाधनका रस्ताकी सत्यबातोका निषेध करके ससार वृद्धिके कारणरूप मिथ्यात्वको फैलानेवाली अपनी मतिकल्पनाकी मिथ्या बातोको स्थापन करी है जिसका विस्तारसें शास्त्रार्थ पूर्वक इस जगह निर्णय करनेसे बडाही विस्तार होजावे तथापि न्यायाम्भोनिधिजी का (अपनी समुदायवालो पर तथा अपने गच्छवालो पर) गेरा हुवा मिथ्यात्वका भ्रमको अवश्यही दूर करके मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोकी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यकत्व रत्नकी प्राप्तिके उपगारके लिये सत्य बातोका दशाव भी जरूरही होना चाहिये इसलिये जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके उत्तररूपमें 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' नामा ग्रन्थ छपना भी सरू होगया है उसीमें न्यायाम्भोनिधि

जीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमे जो जो उत्सूत्र भाषण किये है जिसका अच्छीतरहसे विस्तार पूर्वक निर्णय छप रहा है परन्तु इस जगह भी न्यायदृष्टिवाले आत्मार्थी भव्यजीवोको निःसन्देह होनेकेलिये सामायिकाधिकार-सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें जो जो उत्सूत्र भाषण किये हैं उसीका निर्णयके साथ संक्षिप्तसे दिखाता हु—

१ प्रथम—सामायिकाधिकारे पहिले करेमिभंतेका उच्चारण कियेपीछे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अनेक शास्त्रोमे कहा है सो ऊपरमेंही छपगया है और सामायिकाधिकार सम्बन्धी कोई भी शास्त्रोमे पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्य नही है याने कोई भी शास्त्रमे सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण किसी भी पूर्वाचार्य्यजीनें नही कहा है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० के मध्यमें सामायिकविधि सम्बन्धी अनेक शास्त्रोंके आपस्में पूर्वापर विरोध विसंवाद ठहराते हैं सो उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' नामा ग्रन्थके पृष्ट ३ से ७ तक छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सबी शास्त्रोमे कही है जिसके विषयमे श्रीपूर्वधरादि प्रभाविक पुरुषोके बनाये ग्रन्थोंमें तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोने भी ऊपर मुजबही कहा है उसीके अनेक पाठ अर्थ सहित 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' के पृष्ठ ७ से २६ तक खुलासा पूर्वक छपगये है परन्तु सामायिकमे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते किसी भी शास्त्रमे नही लिखी है सोही दिखाता हु —

भी इसलिये श्रीपूर्वधरादि महाराजोंके बनाये श्रीआवश्यक चूर्णि वगैरह पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंपर उन्होंको संशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रम रहा अथवा अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें संसार वृद्धिका भय नही करते अभिनिवेशिकमिथ्यात्वके अधिकारी बनके ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंके तात्पर्यको जानते हुये भी प्रमाण नही करे और भोले जीवोंको भी पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि शास्त्रोंके पाठोंकी शुद्ध श्रद्धा रहित बनानेके लिये 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अन्य अन्य विषयोंके अधिकारवाले अधूरे अधूरे पाठ लिखके उसीका भी उलटा तात्पर्य बालजीवोंको दिखा करके (उत्सूत्र भाषणरूप अनेक जगह लिखके) अपनी समुदायवालोंको तथा अपने गच्छ वालोंकी संशयरूपी मिथ्यात्वके भ्रममें गेरे हैं और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका आराधनरूपी मोक्षसाधनका रस्ताकी सत्यबातोंका निषेध करके संसार वृद्धिके कारणरूप मिथ्यात्वको फैलानेवाली अपनी मतिकल्पनाकी मिथ्या बातोंको स्थापन करी है जिसका विस्तारसें शास्त्रार्थ पूर्वक इस जगह निर्णय करनेसे बहुतही विस्तार होजावे तथापि न्यायाम्भोनिधिजी का (अपनी समुदायवालो पर तथा अपने गच्छवालो पर) गेरा हुवा मिथ्यात्वका भ्रमको अवश्यही दूर करके मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंकी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यकत्व रत्नकी प्राप्तिके उपगारके लिये सत्य बातोंका दर्शाव भी जरूरही होना चाहिये इसलिये जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके उत्तररूपमें 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' नामा ग्रन्थ छपना भी सरू होगया है उसीमें न्यायाम्भोनिधि

संघाचारभाष्य वृत्तिमें दशत्रिक सहित श्रावकके चैत्यवन्दनकीविधि कथाओ सहित कही है जिसमें सातमीत्रिकमें यतनापूर्वक तीनवार भूमि प्रमार्जन करके इरियावही पूर्वक चैत्यवन्दन करने सम्बन्धी पुष्कली श्रावककी कथा कही है उसीके भी आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्याया० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३१ में लिखके ग्रन्थकार महाराजको गुरुविरोधीका दूषणके अधिकारी ठहरा करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमे सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय सपूर्ण पाठ सहित ग्रन्थकार महाराजके अभिप्राय पूर्वक 'आत्मभ्रमो०के' पृष्ठ ४८ से ६८ तक छपगया है ।

५ पाचमा—श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें स्वाध्याय करने सम्बन्धी विस्तारसे पाठ है जिसकी भी एक गाथा न्याया० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३३ के मध्यमें लिखके उसी गाथामें दो जगह दो मात्रा भी जादा लगाके अर्थ भी उलटा करा और अपने पूर्वजकोही विसवादीका दूषण लगा करके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमे सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापी सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ६९ से ७७ तक छपगया है ।

६ छठा—श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्तिमें आवश्यकचूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे कही है उसी शास्त्रोकी विधि मुजब श्रावक

२ दूसरा—श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्म स्वामीजी कृत श्रीमहानिशीथ सूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधानके अधिकारमें चैत्यवन्दनादि सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है जिसके सम्बन्धवाले आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायाम्भोनिधिजीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० वार्में लिख करके गण धर महाराजके विरुद्वार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय सपूर्ण पाठार्थ सहित 'आत्मभ्रमोच्छेदन भानु' नामा ग्रन्थके पृष्ठ २१ के अन्तसें पृष्ठ ३१ तक अच्छी तरहसें छपगया है।

३ तीसरा—श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके चूलिकाकी ७वी गाथाकी बृहद्वृत्तिमें साधुके उपदेशाधिकारमें गमनागमनादि कारणसें इरियावही करके स्वाध्यायादि करने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है (श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्र, अवचूरि, भाषार्थ, दीपिका, और बृहद्वृत्ति सहित छपी हुई प्रसिद्ध है जिसके पृष्ठ ६७९। ६८०। ६८१ में छपगया है) जिसके सम्बन्धवाले सब पाठको छोड़ करके सिर्फ एकपद मात्रही न्यायाम्भोनिधिजीने जैन० नामक, पुस्तकके, पृष्ठ ३१ की आदिमे लिखके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमे सामयिकाधिकारे प्रथम इरियावही स्थापी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' के पृष्ठ ३८ से ४८ तक छपगया है।

४ चौथा—श्रीतपगच्छके श्रीधर्मघोषसूरिजी कृत श्री

९ नवमा- श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्ही महाराजकृत श्रीप्रतिक्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमें साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमे भी प्रतिक्रमणके सम्बन्धी सब पाठको छोड करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमे न्या०ने 'जैन०ना० पु०के' पृष्ठ ३५ वा के मध्यमें थोडासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके बिना भाषार्थमे सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ट ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा- श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवे शतकके प्रथम उद्देशमे पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही कही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९८१।९८२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकारवाले पाठको छोड करके न्या०ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमे थोडासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमे प्रथम

अपने घरसे सामायिक करके पौषधशालामें गुरुमहाराजके पास प्रतिक्रमण करनेके लिये आये वहां इरियावही पूर्वक षडावश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेके सम्बन्धमें पाठ है जिसका सम्बन्ध छोड़कर ग्रन्थकार महाराजको भी विसवादके दूषित ठहरानेके लिये उलट पुलट अधूरा पाठ, न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३४ के आदिमें लिखके ग्रन्थकार महाराजकेविरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनकरी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय, 'आत्म०के' पृष्ठ ७७ से ८३ तक छपगया है।

७ सातमा—श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजीकी चूर्णिमें सामायिक विधिके विषे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासे लिखा है उसी पाठको तो छुपा दिया और पौषधविधि सम्बन्धी पाठको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३४ के अन्तमें लिखके चूर्णिकार महाराजको विसवादीका दूषण लगाके उन्हीं महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिककी विधिमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ८४।८५।८६ में छपगया है।

८ आठमा—श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीविवाहचूलिया सूत्रमें सिंहनामा श्रावकने इरियावही पूर्वक चार प्रकारका पौषधकरा उसी सम्बन्धी खुलासे पाठ है तथापि न्याया-म्भोनिधिजीने पौषध सम्बन्धी पाठको छोड़ करके अधूरा पाठ 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३५ की आदिमें लिखके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म०' के पृष्ठ ८७।८८।८९ तक छपगया है।

९ नवमा--श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्ही महाराजकृत श्रीप्रतिक्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमे साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमे भी प्रतिक्रमणके सम्बन्धी सब पाठको छोड़ करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमे न्या०ने 'जैन०ना० पु०के' पृष्ठ ३५ वा के मध्यमे थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके बिना भावार्थमे सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा--श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवें शतकके प्रथम उद्देशमे पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही यही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९८१।९८२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकारवाले पाठको छोड़ करके न्या०ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमें थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमे प्रथम

अपने घरसे सामायिक करके पौषधशालामें गुरुमहाराजके पास प्रतिक्रमण करनेके लिये आये वहा इरियावही पूर्वक षडावश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेके सम्बन्धमें पाठ है जिसका सम्बन्ध छोड़कर ग्रन्थकार महाराजको भी विसवादके दूषित ठहरानेके लिये उलट पुलट अधूरा पाठ, न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३४ के आदिमें लिखके ग्रन्थकार महाराजकेविरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनकरी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय, 'आत्म०के' पृष्ठ ७७ से ८३ तक छपगया है।

७ सातमा—श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजीकी चूर्णिमें सामायिक विधिके विषे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासे लिखा है उसी पाठको तो छुपा दिया और पौषधविधि सम्बन्धी पाठको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३४ के अन्तमें लिखके चूर्णिकार महाराजको विसवादीका दूषण लगाके उन्ही महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिककी विधिमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ८४।८५।८६ में छपगया है।

८ आठमा—श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीविवाहचूलिया सूत्रमे सिहनामा श्रावकने इरियावही पूर्वक चार प्रकारका पौषधकरा उसी सम्बन्धी खुलासे पाठ है तथापि न्याया-भोनिधिजीने पौषध सम्बन्धी पाठको तोड करके अधूरा पाठ 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३५ की आदिमे लिखके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमे सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निणय 'आत्म०' के पृष्ठ ८७।८८।८९ तक छपगया है।

९ नवमा- श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुल-मण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्ही महाराजकृत श्रीप्रति-क्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमें साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमे भी प्रतिक्रमणके सम्ब-धी सब पाठको छोड करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमे न्या०ने 'जैन०ना० पु०के' पृष्ठ ३५ वा के मध्यमे थोडासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके बिना भाषार्थमे सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ट ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा--श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवें शतकके प्रथम उद्देशमे पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही कही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९८१। ९८२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकार-वाले पाठको छोड करके न्या०ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमें थोडासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृतिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमे प्रथम

अपने घरसे सामायिक करके पौषधशालामें गुरुमहाराजके पास प्रतिक्रमण करनेके लिये आये यहां इरियावही पूर्वक यहावश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेके सम्बन्धमें पाठ है जिसका सम्बन्ध छोडकर ग्रन्थकार महाराजको भी विसवादके दूषित ठहरानेके लिये उलट पुलट अधूरा पाठ, न्याया० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३४ के आदिमें लिखके ग्रन्थकार महाराजकेविरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनकरी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय, 'आत्म०के' पृष्ठ ७७ से ८३ तक छपगया है ।

७ सातमा—श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजीकी चूर्णिमें सामायिक विधिके विषे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासे लिखा है उसी पाठको तो छुपा दिया और पौषधविधि सम्बन्धी पाठको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३४ के अन्तमें लिखके चूर्णिकार महाराजको विसवादीका दूषण लगाके उन्हीं महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिककी विधिमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ८४।८५।८६ में छपगया है ।

८ आठमा—श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीविवाहचूलिया सूत्रमें सिहनामा श्रावकने इरियावही पूर्वक चार प्रकारका पौषधकरा उसी सम्बन्धी खुलासे पाठ है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने पौषध सम्बन्धी पाठको तोड करके अधूरा पाठ 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३५ की आदिमे लिखके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमे सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म०' के पृष्ठ ८७।८८।८९ तक छपगया है ।

९ नवमा- श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुल-मण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्हीं महाराजकृत श्रीप्रति-क्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमें साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमे भी प्रतिक्रमणके सम्बन्धी सब पाठको छोड करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमे न्या०ने 'जैन०ना० पु०के' पृष्ठ ३५ वा के मध्यमे थोडासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके बिना भावार्थमे सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा- श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवे शतकके प्रथम उद्देशमे पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही कही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९८१। ९८२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकार-वाले पाठको छोड करके न्या०ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमे थोडासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमे प्रथम

इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९३ से ९६ के मध्य तक छपगया है।

११ इग्यारहमा–श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीका खुलासा पूर्वक पाठ है तथापि उस पाठको छुपा करके अथवा लुप्त करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसे किसी भारी कर्मे प्राणीने अपनी मति कल्पना मुजब नवीन पाठ बना करके समाचारी ग्रन्थमें लिख दिया है उसीकोही न्यायाम्भोनिधि जीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३६ में लिखके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी है सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ९६ के अन्तसे पृष्ठ १०४ तक छपगया है।

१२ बारहमा--श्रीखरतरगच्छवाले सामान्य विशेष पाठको, तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिके, और चूर्णिके, पाठको मान्य करते है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३८ मे सामान्य पाठको तथा श्रीआवश्यक वृद्दवृत्तिके और चूर्णिके पाठको तुम मान्य नही करते हो ऐसे लिखके श्रीखरतर गच्छवालोको मिथ्या दूषण लगाया सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १०७ से १११ तक छपगया है।

१३ तेरहमा- खास न्यायाम्भोनिधिजी अपनी बनाई 'चतुर्थ स्तुतिनिर्णय' नामा पुस्तकके पृष्ठ ८८ के मध्यमे श्री

जिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा समाचारी ग्रन्थके पाठ को नही माननेवालोको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं परन्तु आप 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ३८ में इन्ही महाराज कृत उन्ही ग्रन्थके पाठको नही मानते हुये द्वेषबुद्धिसे आक्षेप करके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य वात परसे भोले जीवोकी श्रद्धाभङ्ग करनेका कारण किया है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १११ के अन्तसे पृष्ठ ११५ तक छपगया है।

१४ चौदहमा—श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोकी परम्परानुसार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजनें श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें श्रावकके नवमा सामायिक व्रतमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये वाद पीछेसे इरियावही खुलासे लिखी हैं जिसको श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी श्रीजैनाचार्य्योदि महाराजोने श्रद्धापूर्वक प्रमाणकरी है और श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीदेवगुप्तसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीयशोदेवसूरिजी, श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी, श्रीविजयसिंहाचार्य्यजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी, श्रीतिलकाचार्य्यजी, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजी, श्रीकुलमण्डनसूरिजी, श्रीरत्नशेखरसूरिजी, श्रीमानविजयजी (कृत वृत्ति शुद्धकर्ता श्रीयशोविजयजी) आदि महाराजोने अपने अपने वनाये ग्रन्थोमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे लिखी है उसी मुजब मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणियोको श्रद्धापूर्वक मञ्जूर करनी चाहिये तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैन० ना०' पु० के पृष्ठ ४१ ४२में पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यक चूर्णिके पाठ पर और

इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९३ मे ९६ के मध्य तक छपगया है।

११ इग्यारहमा–श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीका खुलासा पृथक पाठ है तथापि उस पाठको छुपा करके अथवा लुप्त करके ग्रन्थकार महाराजके अभिप्रायमें मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसे किसी भारी कर्मे प्राणीने अपनी मति कल्पना मुजब नवीन पाठ बना करके समाचारी ग्रन्थमें लिख दिया है उसीकोही न्यायाम्भोनिधि जीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३६ में लिखके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी है सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ९६ के अन्तसे पृष्ठ १०४ तक छपगया है।

१२ बारहमा--श्रीखरतरगच्छवाले सामान्य विशेष पाठ को, तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिके, और चूर्णिके, पाठको मान्य करते है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३८ में सामान्य पाठको तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिके और चूर्णिके पाठको तुम मान्य नही करते हो ऐसे लिखके श्रीखरतर गच्छवालोको मिथ्या दूषण लगाया सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १०७ से १११ तक छपगया है।

१३ तेरहमा- खास न्यायाम्भोनिधिजी अपनी बनाई 'चतुर्थ स्तुतिनिर्णय' नामा पुस्तकके पृष्ठ ८८ के मध्यमें श्री

जिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा समाचारी ग्रन्थके पाठ को नही माननेवालोको मिथ्या दृष्टि ठहराते है परन्तु आप 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ३८ में इन्ही महाराज कृत उन्ही ग्रन्थके पाठको नही मानते हुये द्वेषबुद्धिसे आक्षेप करके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बात परसे भोले जीवोकी श्रद्धाभङ्ग करनेका कारण किया है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १११ के अन्तसे पृष्ठ ११५ तक छपगया है।

१४ चौदहमा--श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी परम्परानुसार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजनें श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें श्रावकके नवमा सामायिक व्रतमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही खुलासे लिखी है जिसको श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी श्रीजैनाचार्य्यादि महाराजोने श्रद्धापूर्वक प्रमाणकरी है और श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीदेवगुप्तसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीयशोदेवसूरिजी, श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी, श्रीविजयसिंहाचार्य्यजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी, श्रीतिलकाचार्य्यजी, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजी, श्रीकुलमण्डनसूरिजी, श्रीरत्नशेखरसूरिजी, श्रीमानविजयजी (कृत वृत्ति शुद्धकर्त्ता श्रीयशोविजयजी) आदि महाराजोने अपने अपने बनाये ग्रन्थोमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे लिखी है उसी मुजब मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणियोको श्रद्धापूर्वक मञ्जूर करनी चाहिये तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैन० ना०' पु० के पृष्ठ ४१-४२में पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यक चूर्णिके पाठ पर और

उत्तमपुरुषोंके बनाये ग्रन्थों पर श्रद्धा नही रखते हुये अपने अन्तरके मिथ्यात्वको प्रगट करके भोले जीवोंको भी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नसे भ्रष्ट करनेका काम्य किया सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसे निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ११८ से पृष्ठ १५५ तक छपगया है।

१५ पदरहमा–*श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने* चैत्य वन्दनादिके सूत्रोंके उपधान कहे है तथा खास न्यायांभोनिधिजी भी अपना बनाया 'तत्त्वनिर्णय प्रासाद' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ४५७ से ४६४ तक उपधानकी व्याख्या उपर मुजबही करी है और श्रीभगवतीजीमें सामायिकको स्वयं आत्मा कहा है इसलिये आत्माके उपधान नही होते हैं और किसी भी शास्त्रमें सामायिकके उपधान नही लिखे है तथापि जैन० ना०' पु० के पृष्ठ ४३ में सामायिकके उपधान ठहराते है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १५६से १६९ तक छपगया है।

१६ सोलहमा–श्रीदशवैकालिकजी सूत्रकी चूलिकामें श्रीसीमधरस्वामीजी महाराजने साधुकेही अधिकारका वर्णन किया है सो प्रसिद्ध है तथापि न्या०ने 'जैन० ना० पु०के' पृष्ठ ४४ ४५ मे श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिके पाठको अगाडीका पिछाडी और पिछाडीका अगाडी उलट पुलट करके भी अधूरा लिखके फिर पृष्ठ ४५ के अन्तमे साधुके अधिकार वाले पाठको श्रावकके अधिकारमे स्थापन करनेके लिये खूबही परिश्रम किया है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १७० से १९५ तक छपगया है।

१७ सतरहमा—श्रीजैनधर्माचार्य्यजी पूर्वापर विरोध

रहित अविसवादीपने ग्रन्थ रचना करते हैं तथापि न्या०ने जैन० ना० पु० के पृष्ठ ४७ में श्रीखरतरगच्छनायक श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमदभयदेव सूरिजी महाराजको और श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमद्देवेन्द्रसूरिजी महाराजको विसवादी पूर्वापर विरोधि लिखनेवाले ठहराये हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसे निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ १९७ से २१६ तक छपगया हैं।

१८ अठारहमा—श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजीने आचारदिनकर नामा ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक लिखी है जिसका तात्पर्य्य समझे विना न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ४८ के आदिमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करने के लिये परिश्रम करके लिखा है सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ २१९।२२०।२२१ तक छप गया है।

१९ एकोनवीशहमा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी महान् परम्परानुसार श्रीखरतरगच्छमें प्रथम करेमिभतेके उच्चारण करनेका अखण्डित व्यवहार आज तक चला आता है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ४८ के मध्यमें प्रथम इरियावहीकी परम्परा ठहराई हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म० के पृष्ठ' २२३—२२४ मे छपगया है।

२० वीशहमा—श्रीआवश्यकचूर्णि, बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, श्रीपञ्चाशकवृत्ति, चूर्णि, श्रीयोगशास्त्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्रोकी सामायिक विधिको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के'

पृष्ठ ४८ कि मध्यमे तुच्छ शब्दसे लिखके (शास्त्रों की तथा शास्त्रकार श्रीपूर्वधरादि महाराजोंकी आशातना करके) निषेध करी है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म०के' पृष्ठ २२५ से छपना सरू है।

२१ एकवीशहमा–श्रीजैनशास्त्रोमे सर्व जगह सामायिक सम्बन्धी प्रथम करेमिभते करनेकी एकही विधि है तथापि न्या० ने जै० सा० पु० के पृष्ठ ४८ अन्तमे सामायिक सम्बन्धी पूर्वापर विरोधी दो विधि स्थापन करी हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है उसका निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदन-भानु' नामा ग्रन्थमे छपना सरू है।

ऊपर मुजब २१ प्रकारके उत्सूत्र भाषण न्यायाम्भोनिधि जीनें सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये लिखे हैं और कितनी जगह मायावृत्तिरूप, कितनीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या, कितनीही जगह अन्याय कारक, कितनीही जगह श्रीजैनशास्त्रोके अतीव गहनाशयको समझे विना उलटा भी लिख दिया है इत्यादि अनेक तरहके अनुचित लेखों करके सामायिकमें प्रथम इरियावही (श्रीजैनशास्त्रोके तथा श्रीजैनाचार्य्योके विरुद्ध) स्थापनेके लिये अपने तथा अपने पक्षधारियोके संसार वृद्धिके निमित्तभूत खूबही परिश्रम किया है उसीके सबका निर्णय देखनेकी इच्छा होवे तो 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु' मे शास्त्रार्थपूर्वक युक्ति सहित अच्छी तरहसे होगया है सो पढनेसे सर्व खुलासा हो जावेगा–और पर्युषणासम्बन्धी यह ग्रन्थ प्रसिद्ध होये बाद थोडेही दिनोमे 'आत्मभ्रमो-च्छेदनभानु' भी प्रगट होनेका सम्भव है।

अथ सत्यग्राही सज्जनपुरुषोको निष्पक्षपाती हो करके विचार करना चाहिये कि–एक सामायिक विषयमे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही सम्बन्धी २१ शास्त्रोके प्रत्यक्ष प्रमाणोको न्यायके समुद्र हो करके भी श्रीआत्मारामजीने छोड दिये ओर आप उन्ही शास्त्रोके पाठोकी श्रद्धा रहित बनकरके उन्ही शास्त्रोके तथा उन्ही शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमे प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये ऊपरोक्त कैसा अनर्थ करके–कही उपधानसम्बन्धी, कही साधुके जाने आने सम्बन्धी, कही चैत्यवन्दनसम्बन्धी, कही स्वाध्यायसम्बन्धी, कही षडावश्यकरूप प्रतिक्रमणसम्बन्धी, कही पौषधसम्बन्धी, इत्यादि अनेक तरहके अन्य अन्य विषयोके सम्बन्धमे शास्त्रकार महाराजोने इरियावही कही है जिसके बदले उन्ही शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमे सामायिकमे प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके पाठोको छोड करके अधूरे अधूरे पाठ लिखते न्यायाम्भोनिधिजीको पर भवका कुछ भी भय नही लगा और इस लौकिकमे भी अपनी विद्वत्ताकी हासी करानेके कारणरूप इतना अन्याय करते कुछ शर्म भी नही आई इसलिये सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही सबी गच्छोके प्रभाविक पुरुषोने अनेक शास्त्रोमे प्रत्यक्ष पने अविसवादरूप खुलासा पूर्वक लिखी है जिसको जानते हुवे भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके जोरसे श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी वगैरह प्रभाविक पुरुषोको विसवादीका मिथ्या दूषण लगा करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनेका विसवाद-

रूपी मिथ्यात्वको बढाने वाला झगडा (अविसंवादी श्री जैनशासनमें इस वर्तमान कालके बालजीवोंको भ्रष्टाभ्रष्ट करनेके लिये) श्रीआत्मारामजीने अपनी विद्वत्ताके अभिमानसे खूबही फैलाया है ,—

और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करनेका निषेध करके प्रथम इरियावही स्थापन करने सम्बन्धी ऊपरोक्त जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जैसे उत्सूत्र भाषणोसे मिथ्यात्व फैलाया है तैसेही श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक निषेध करके पाँच कल्याणक स्थापन करने वगैरह कितनी बातोमें भी खूबही उत्सूत्र भाषणोसे मिथ्यात्व फैलाया है जिसका खुलासा आगे लिखुगा—

और श्रीआत्मारामजीको अपने पूर्व भवके पापोदयसे पहिले ढूंढियोके मिथ्या कल्पित मतमें दीक्षा लेनी पडी थी वहाँ भी अपने कल्पित मतके कदाग्रहकी बात जमानेके लिये अनेक शास्त्रोके उलटे अर्थ करते थे तथा अनेक शास्त्रोके पाठोको छोडके अनेक जगह उत्सूत्र भाषण करके ससार वृद्धिका भय न करते हुवे भोले दृष्टिरागियोको मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें गेरते थे और मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसे श्रीजिनेश्वर भगवानूकी आज्ञा मुजब सत्य बातोको कल्पित समझते थे और श्रीजिनेश्वर भगवानूकी आज्ञा विरुद्ध अपने मत पक्षकी कल्पित मिथ्या बातोको सत्य समझते थे और हजारो श्रीजैन शास्त्रोको उत्थापन करके सत्य बातोके निन्दक शत्रु बनते थे इत्यादि अनेक तरहके कार्य्योंसे अपने ढूढक मतकी मिथ्या कल्पित बातोको पुष्ट करके अपने मतको फैलाते थे परन्तु कितनेही वर्षोंके बाद अपने पूर्व भवके महान् पुण्योदय होनेसे ढूढकमतके माख

ढकोसबपोल दिनदिनप्रति खुलतीगई जिससे कल्पित ढूंढकमत को श्रीजैनशास्त्रोकेविरुद्ध और संसारवृद्धिका हेतु भूत जानकर छोड़दिया और श्रीजैनशास्त्रोके प्रमाणानुसार सत्यबातोंको ग्रहण करनेके लिये संवेगपक्ष अङ्गीकारकरके अनेकशास्त्रोका अवलोकनकिया और श्रीजैनतत्त्वादर्श, अज्ञानतिमिरभास्कर, तत्त्वनिर्णयप्रासाद वगैरह भाषाके ग्रन्थोका संग्रह करके प्रसिद्धभी कराये जिससे विद्वान्‌भी कहलाये तथा ढूंढकमतकी मिथ्यात्वरूप पाखन्डके भ्रमजालसे कितनेही भव्यजीवोका उद्धार भी किया और अनेक भक्तजनोसे खूबही पूजाये-शिष्य-वर्गका समुदाय भी बहुत हुवा तथा शुद्ध प्ररूपक, उत्कृष्टक्रिया करने वाले भी कहलाये और श्रीमद्विजयानन्दसूरि-न्यायाम्भो-निधिजीवगैरह पदवियोकोभी प्राप्तभये जिससे दुनियामें प्रसिद्ध भी हुवे परन्तु यह तो दुनियामें प्रसिद्ध बात है, कि-जिस आदमीका जो स्वभाव पहिलेसे पड़ा होवे उस आदमीको कितनेही अच्छे सयोगोंसे चाहे जितना उत्तम गिनो अथवा श्रेष्ठ पदमें स्थापनकरो तो भी अपना पहिलेका पड़ा हुवा स्वभाव नही छुटता है सोही बात नीति शास्त्रोंके 'सुभाषितरत्न भाण्डागारम्' नामा ग्रन्थके पृष्ठ १०६ में कही है। तैसाही वर्ताव न्यायाम्भोनिधिजी नामधारक श्रीआत्मारामजीने भी किया है, अर्थात् पूर्वोक्त ढूंढकमतके साधुपनेमें अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थ-में अनेक जगह उत्सूत्र भाषणकरने वगैरहके कार्य्योंका जो पहिले स्वभाव था सो नहींजानेके कारणसे उसीमुजबही संवेगपक्षेमें भी अपने विद्वत्ताके अभिमानसे कल्पितबातोंको स्थापन करनेके लिये पर भवका भय न करके एक 'जैनसिद्धान्त समाचारी', परन्तु वास्तवमें "उत्सूत्रोके कुयुक्तियोंकी भ्रमखाड" नामक पुस्तकमें अनुमान १६० शास्त्रोंकेविरुद्ध लिखके, ६० जगह अन्दाज उत्सूत्र

भाषण भी लिखे हैं जिसके नमूनारूप एक सामायिक विषय सम्बन्धी स लिहसे ऊपरमेंही लिखनेमें आया है, और पर्युषणाके विषयमें भी अनेक जगह उत्सूत्र भाषण किये हैं उसकी भी समीक्षा इसही ग्रन्थके पृष्ठ १५१ से २१६ तक छप गई है सो पढ़नेसे निष्पक्षपाती सत्यग्राही सज्जन स्वय विचार लेवेंगे।

और 'शुद्धसमाचारी'की पुस्तकमें पौषधाधिकारे, विधिमार्गमें उत्सर्गसे अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या इनच्यारों पर्वतिथियोंमें पौषध करनेसम्बन्धी श्रीसूयगडागजी, उत्तराध्ययन जी,उववाईजी, धर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, योगशास्त्र वृत्ति, धर्मबिन्दु वृत्ति, नवपद प्रकरण वृत्ति, समवायाग वृत्ति, पचाशक वृत्ति, आवश्यक चूर्णि, तथा वृहद् वृत्ति, और श्रीभगवतीजीसूत्र वृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके पाठ दिखाये थे जिसका तात्पर्यार्थको समझे विना शास्त्रोंके विरुद्ध होकर हमेशा पौषधकरनेका ठहरानेके लिये श्रीआवश्यकसूत्रकी चूर्णिमें तथा वृहद्वृत्तिमें और लघुवृत्तिमें और श्रीप्रवचनसारोद्धार वृत्तिमें, श्रीसमवायांगजीसूत्रकी वृत्तिमें श्रीपचाशकजीकी चूर्णिमें तथा वृत्तिमें और श्रीउपाशकदशाग वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमें श्रावककी ११ पडिमाके अधिकारमें पाचवी पडिमाकी विधिमें "श्रावक दीनमें ब्रह्मचर्य व्रत पाले और रात्रिको नियम करे" ऐसे खुलासे पाठ हैं तिसपरभी न्यायांभोनिधिजीने अन्धपरपरासे विवेक शून्यहोकर शास्त्रकार महाराजोंकेविरुद्धार्थमें अपनीमतिकल्पनासे श्रीआवश्यकवृत्ति वगैरहके पाठका"दिवसका ब्रह्मचर्यपाले रात्रिको कुशीलसेवे" ऐसा वीपरीत अर्थ करके मैथुन सेवनकी हिंसाका उपदेश करनेका शास्त्रकारोंको झूठा दूषण लगाके वडाभारी अनर्थ करके जैनसिद्धांत

रूप पुस्तकमें दुर्लभबोधिका कारण किया है

इत्यादि, इसी तरहसे अनेक बातोंमें बहुत उत्सूत्रोंसे बड़ा अनर्थ किया है उसके सबका निर्णयतो "आत्मभ्रमोच्छेदन भानु" के अवलोकनसे अच्छी तरहसे हो जावेगा।

और न्यायाम्भोनिधिजीने 'जैनसिद्धान्त समाचारी' पुस्तकका नाम रक्खा परन्तु वास्तवमें उत्सूत्र भाषणोंके और कुयुक्तियोंके संग्रहकी पुस्तक होनेसे आत्मार्थी भव्यजीवोंके मोक्षसाधन में विघ्नकारक और श्रीजिनाज्ञासे बालजीवोंकी श्रद्धाभ्रष्ट करनेवाली मिथ्यात्वके पाखन्डकी भ्रमजालरूप हैं सो इसके बनानेवालोंको, तथा ऐसी जाल बनानेमें संसारवृद्धिकी हेतु भूत खूबही दलाली कौशिस करनेवालोंको, और मिथ्यात्वको बढ़ा करके संसारमें भ्रमानेवाली ऐसीजाल प्रगट करनेमें श्रीभावनगरकी श्रीजैनधर्मप्रसारकसभाके मेम्बरलोग उस समय आगेवान् हुए जिन्होंको, और इसके बनानेकी खुसीमानकर अनुमोदना करनेवालोंको और इसी मुजब अन्धपरंपराके गड्डरीह प्रवाहकी तरह चलकर श्रीजिनाज्ञानुसार सत्यबातो की निन्दा करनेवालोंको, श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक सम्यक्त्वी आत्मार्थी जैनी कैसे कहे जावे इस बातको तत्त्वग्राही मध्यस्थ सज्जनस्वय विचारलेवेंगे—

और शास्त्रोंकेविरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणा करनेवालेको मिथ्यात्वी अनन्त संसारी अनेकशास्त्रोंमें कहाहै और न्यायाम्भोनिधिजी नाम धारक श्रीआत्मारामजीने तो एक 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें इतने शास्त्रोंके विरुद्ध लिखके इतने उत्सूत्र भाषण किये हैं तो फिर पहिले ढूंढकमतकी दीक्षामें और अन्यकार्योंमें कितने उत्सूत्रभाषण करकेकितने शास्त्रोंकेविरुद्ध प्ररूपणाकरी होगी जिसके फल विपाकका कितना अनन्त संसार बढाया होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने।

भाषण भी लिखे हैं जिसके नमूनारूप एक सामायिक विषय सम्बन्धी स लिखते ऊपरमेंही लिखनेमें आया है, और पर्युषणाके विषयमें भी अनेक जगह उत्सूत्र भाषण किये है उसकी भी समीक्षा इसही ग्रन्थके पृष्ट १५१ से २१६ तक छप गई है सो पढनेसे निष्पक्षपाती सत्यग्राही सज्जन स्वय विचार लेवेंगे।

और 'शुद्धसमाचारी'की पुस्तकमें पौषधाधिकारे, विधिमार्गमें उत्सर्गसे-अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या इनच्यारों पर्वतिथियोंमें पौषध करनेसम्बन्धी श्रीसूयगडांगजी, उत्तराध्ययन जी,उववाईजी, धर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, योगशास्त्र वृत्ति, धर्मबिन्दु वृत्ति, नवपद प्रकरण वृत्ति, समवायाग वृत्ति, पचाशक वृत्ति, आवश्यक चूर्णि, तथा वृहद् वृत्ति, और श्रीभगवतीजीसूत्र वृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके पाठ दिखाये थे जिसका तात्पर्यार्थको समझे विना शास्त्रोके विरुद्ध होकर हमेशा पौषधकरनेका ठहरानेके लिये श्रीआवश्यकसूत्रकी चूर्णिमें तथा वृहद्वृत्तिमें और लघुवृत्तिमें और श्रीप्रवचनसारोद्धार वृत्तिमें, श्रीसमवायांगजीसूत्रकी वृत्तिमें श्रीपचाशकजीकी चूर्णिमें तथा वृत्तिमें और श्रीउपाशकदशाग वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोमें श्रावककी ११ पडिमाके अधिकारमें पाचवी पडिमाकी विधिमें "श्रावक दीनमें ब्रह्मचर्य व्रत पाले और रात्रिको नियम करे" ऐसे खुलासे पाठ हैं तिसपरभी न्यायांभोनिधिजीने अन्धपरपरासे विवेक शून्यहोकर शास्त्रकार महाराजोंकेविरुद्धार्थमें अपनीमतिकल्पनासे श्रीआवश्यकवृत्ति वगैरहके पाठका"दिवसका ब्रह्मचर्यपाले रात्रिको कुशीलसेवे" ऐसा वीपरीत अर्थ करके मैथुन सेवनकी हिंसाका उपदेश करनेका शास्त्रकारोंको झूठा दूषण लगाके बडाभारी अनर्थ करके जैनसिद्धांत रूप पुस्तकमें दुर्लभबोधिका कारण किया है

हेतुभूत मिथ्या वातको छोड करके आत्मकल्याणके लिये सत्य वातोके तत्त्वग्राही होना चाहिये और छठे महाशय जीने ढूंढियाको भी अपने शामिल करके सामायिकसम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी लिखके अपने पक्षकी बात जमानेका परिश्रम किया इसलिये मैने भी सामायिक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी ऊपरमे इतना लिखके सत्यग्राही भव्यजीवोको संक्षिप्तसे शास्त्रार्थ दिखाया है और कल्याणक सम्बन्धी पर्युषणका विषय पूरा हुवे बाद पीछेसे लिखनेमे आवेगा सो पढ़नेसे सब निर्णय हो जावेगा ,—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतना ही कहना है कि आषाढचौमासीसे पचास दिने दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करनेवालोको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीने आपको पत्रद्वारा शास्त्रका प्रमाण पूछा उन्हको शास्त्रका प्रमाण आपने बताया नही और छापेमे भी पर्युषणा विषयसम्बन्धी शास्त्रार्थ पूर्वक निर्णय करना छोड करके अपनी बात जमानेके लिये निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य बातोको लिखके प्रगट करी ओर अन्यायसे विशेष झगडा फैलानेका कारण किया इसलिये मैने भी आपके अन्यायको निवारण करनेके लिये मुख्य मुख्य बातोका संक्षिप्तसे खुलासा करके सत्य तत्त्वग्राही सज्जन पुरुषोको दिखाया हैं जिसको पढ़नेसे न्याय अन्यायका तथा श्रीजिनाज्ञाके आराधक विराधकका निर्णय निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वय कर लेवेंगे और मरिचिने एक उत्सूत्र भाषणसे एक कोडा कोडी सागरोपम जितना

और न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीजैनतत्त्वादर्शमें, अज्ञान तिमिर भास्करमें, और श्रीजैनधर्म्मविषयिक प्रश्नोत्तरमाला पुस्तकमेंभी उत्सूत्रभाषणरूपलिखा है जिसकेसम्बन्धमें आगे लिखनेमें आवेगा

और इस तरहसे अनेक शास्त्रोंकेपाठोंकी भ्रष्टारहित तथा शास्त्रोंके आगेपीछेके सम्बन्धवालेपाठोंको छोड़करके शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठलिखके उलटे वीपरीत अर्थ करनेवाले और शास्त्रकारमहाराजोंको विसवादोका मिथ्या दूषण लगानेवाले और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार सत्यबातोंका उत्थापन करके अपनी मतिकल्पनासे अन्धपरम्पराकी मिथ्या बातोंको स्थापन करते हुवे। अविधिरूप उन्मार्गके पाखण्डको फैलानेमें सार्थवाहकी तरह आगेवान बननेवाले और अपनेही गच्छके प्रभावक पुरुषों को दूषित ठहरानेवाले औरबाल जीवोंको सत्य बातोंके निन्दक बना करके दुलभबोधिके कारणसे ससारकीखाड़मे गेरनेवाले ऐसे ऐसे महान् अनर्थ करनेवालेको गच्छपक्षकादृष्टिरागसे-गीतार्थ, न्यायाम्भोनिधिजी (न्यायके समुद्र) और युगप्रधान, कलिकाल सर्वज्ञ समान जैनाचार्य्य वगैरहकी लम्बी लम्बी ओपमालगाके ऐसे उत्सूत्री गाढकदाग्रहियोकी महिमा बढा करके आडबरसे भोले जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें फँसानेके लिये उत्सूत्रभाषणोंके महान् अनर्थका विचार न करके उपरोक्त मिथ्या गुण लिखनेवालोंकी क्यागतिहोगी तथा कितनाससारबढावेंगे औरसम्यक्त्व रत्न कैसे प्राप्तकर सकेंगे सो तो श्रीज्ञानीजीमहाराज जाने।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंको मेरा इतनाही कहना है कि ऊपरके लेखको पढके दृष्टिरागके पक्षपातको न रखते हुये ससार वृद्धिकी

हेतुभूत मिथ्या वातको छोड करके आत्मकल्याणके लिये सत्य वातोके तत्त्वग्राही होना चाहिये और छठे महाशय जीने ढूंढियाको भी अपने सामिल करके सामायिकसम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी लिखके अपने पक्षकी वात जमानेका परिश्रम किया इसलिये मेने भी सामायिक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी ऊपरमे इतना लिखके सत्यग्राही भव्यजीवोको संक्षिप्तसे शास्त्राथ दिखाया हे और कल्याणक सम्बन्धी पर्युषणका विषय पूरा हुवे वाद् पीछेसे लिखनेमे आवेगा सो पढनेसे सब निर्णय हो जावेगा ,—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतनाही कहना है कि आषाढचौमासीसे पचास दिने दूसरे श्रावणमे पयुषणा करनेवालोको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीने आपको पत्रद्वारा शास्त्रका प्रमाण पूछा उन्हको शास्त्रका प्रमाण आपने बताया नही और छापेमे भी पर्युषणा विषयसम्बन्धी शास्त्रार्थ पूवक निर्णय करना छोड करके अपनी बात जमानेके लिये निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य वातोको लिखके प्रगट करी ओर अन्यायसे विशेष झगडा फैलानेका कारण किया इसलिये मेने भी आपके अन्यायको निवारण करनेके लिये मुख्य मुख्य वातोका संक्षिप्तसे खुलासा करके सत्य तत्त्वग्राही सज्जन पुरुषोको दिखाया है जिसको पढनेसे न्याय अन्यायका तथा श्रीजिनाज्ञाके आराधक विराधकका निर्णय निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वय कर लेवेंगे और मरिचिने एक उत्सूत्र भाषणसे एक कोडाकोडी सागरोपम जितना

संसार बढाया इस न्यायानुसार आपके गुरुजी न्यायाम्भो-निधिजीने इतने उत्सूत्र भाषणोंसे कितना संसार बढाया होगा सो तो आप लोगोंको भी न्याय दृष्टिसे हृदयमें विचार करना उचित है और अब आप लोग भी उसी तरहके उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्या झगडा करते हुए श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार मोक्षमार्गकी हेतुरूप सत्य-बातोंका निषेध करके श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध संसार वृद्धिकी हेतु-भूत मिथ्या कल्पित बातोंको स्थापन करके बाल जीवोंकी सत्यबात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करते हो और मिथ्यात्वको बढाते हो सो कितना संसार बढावोगे सो तो श्रीज्ञानीजी महा-राज जाने—यदि आपको संसार वृद्धिका भय होवे और श्रीजिनाज्ञाके आराधन करनेकी इच्छा होवे तो जमालिके शिष्योंकी तरह आपभी करो तथा न्यायाम्भोनिधिजीके समुदायवालोंको भी ऐसेही करना चाहिये क्योंकि जमा-लिके उत्सूत्र परूपनाकी उन्हके शिष्योंको जबतक मालूम नही थी तबतक तो जमालिके कहने मुजबकी सत्य माना परन्तु जब अपने गुरुकी श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्र परू-पनाकी मालूम होगई तब उसीको छोड करके श्रीवीर प्रभुजीके पास आकर सत्यग्राही होगये तैसेही न्यायाम्भो-निधिजीके शिष्यवर्गमें भी जो जो महाशय आत्मार्थी सत्य ग्राही होवेंगे सो तो दृष्टिरागका पक्षको न रखके अपने गुरुकी उत्सूत्र भाषणकी बातोंको छोडकर शास्त्रानुसार सत्य बातोंको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करेंगे और भक्तजनोंको करावेंगे ।

इति छठे महाशयजीके लेखकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ।

और सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीकी तरफसे 'पर्युषणा विचार'नामा छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तक प्रगट हुई है जिसमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके विरुद्ध तथा श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना कारक और सत्य बातका निषेध करके अपने गच्छ कदाग्रहकी मिथ्या कल्पित बातको स्थापन करनेके लिये श्रीजैनशास्त्रोके अतीव गहनाशयको समझे बिना शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमे बिना सम्बन्धके और अधूरे अधूरे पाठ दिखाके उलटे तात्पर्य्यसे उत्सूत्र भाषण रूप अनेक कुतर्को करके अपने पक्षके एकान्त आग्रहसे दूसरोको मिथ्या दूषण लगाके भोले जीवोको मिथ्यात्वके भ्रममे गेरे है और अपनी विद्वत्ताकी हासी कराई है इसलिये अब मै इस जगह भव्य जीवोके मिथ्यात्वका भ्रम दूर होनेसे शुद्ध श्रद्धानरूपी सम्यक्त्वकी प्राप्तिके उपगारके लिये और विद्वत्ताके अभिमानसे उत्सूत्र भाषण करनेवालोको हित शिक्षाके लिये पर्युषणा विचारके लेखकी समीक्षा करके दिखाता हूं ,—

यद्यपि पर्युषणा विचारकी पुस्तकमें लेखक नाम विद्याविजयजीका छपा है परन्तु यह ग्रन्थकार उसीकी समीक्षा उन्होंके गुरुजी श्रीधर्मविजयजीके नामसे लिखता हैं जिसका कारण इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६७।६८ में छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये इस ग्रन्थकारको सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीके नामसेही समीक्षा लिखनी युक्त है सोही लिखता हे जिसमें प्रथमही पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमें लिखा है कि (आत्मकल्याणाभिलाषी भव्यजीव

संसार बढाया इस न्यायानुसार आपके गुरुजी न्यायाम्भो-
निधिजीने इतने उत्सूत्र भाषणोंमें कितना संसार बढाया
होगा सो तो आप लोगोंको भी न्याय दृष्टिसे हृदयमें
विचार करना उचित है और अब आप लोग भी उसी
तरहके उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्या झगडा करते हुए श्रीजिने-
श्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार मोक्षमार्गकी हेतुरूप सत्य-
बातोंका निषेध करके श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध संसार वृद्धिकी हेतु-
भूत मिथ्या कल्पित बातोंको स्थापन करके बाल जीवोंकी
सत्यबात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करते हो और मिथ्यात्वको बढाते
हो सो कितना संसार बढावोगे सो तो श्रीज्ञानीजी महा
राज जाने—यदि आपको संसार वृद्धिका भय होवे और
श्रीजिनाज्ञाके आराधन करनेकी इच्छा होवे तो जमालिके
शिष्योंकी तरह आपभी करो तथा न्यायाम्भोनिधिजीके
समुदायवालोंको भी ऐसेही करना चाहिये क्योंकि जमा
लिके उत्सूत्र परूपनाकी उन्हके शिष्योंको जबतक मालूम
नही थी तबतक तो जमालिके कहने मुजबकी सत्य माना
परन्तु जब अपने गुरुकी श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्र परू-
पनाकी मालूम होगई तब उसीको छोड करके श्रीवीर-
प्रभुजीके पास आकर सत्यग्राही होगये तैसेही न्यायाम्भो
निधिजीके शिष्यवर्गमे भी जो जो महाशय आत्मार्थी सत्य
ग्राही होवेंगे सो तो दृष्टिरागका पक्षको न रखके अपने
गुरुकी उत्सूत्र भाषणकी बातोंको छोडकर शास्त्रानुसार सत्य
बातोंको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करेंगे और
भक्तजनोंको करावेंगे।

इति छठे महाशयजीके लेखकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता।

समझेगा तबतक उसीको आत्म कल्याणकारस्ता भी नही मिलेगा तो फिर भाव करके श्रीजिनाज्ञा मुजब श्रावकधर्म और साधुधर्म कैसे बनेगा याने—निर्मूलता समूलताका विचार छोड करके धर्मकृत्योके करनेवालोंको मोक्ष साधन नही हो सकेगा है क्योंकि उन्होंका धर्मकृत्य तो तत्वा-तत्वका उपयोगशून्य होजाता है इसलिये आत्मार्थी प्राणियोको निर्मूलता समूलताका विचार करना अवश्यही युक्त है तथापि सातवे महाशयजीने दोनुका विचार छोडनेका लिखा है सो जैनशास्त्रोके विरुद्ध होनेसे मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है इस बातको तत्वज्ञ पुरुष स्वय विचार लेवेंगे ,—

और (अपनी परम्परा पर आरूढ होकर धर्मकृत्योंका करते हैं) सातवें महाशयजीके इन अक्षरो पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-अपनी परम्परापर आरूढ होकर धर्मकृत्योको करनेका जो आप कहते हो तब तो पर्युषणा विचारके लेखमें आपको दूसरोका खण्डन करके अपना मण्डन करना भी नही बनेगा क्योंकि सबी गच्छवाले अपनी अपनी परम्परापर आरूढ होकर धर्मकृत्य करते है जिन्होका खण्डन करके अपना मण्डन करना सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है और परम्परा द्रव्य और भावसे दो प्रकारकी शास्त्रकारोंने कही है जिसमे पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित वर्त्ताव सो तो गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परा ससार वृद्धिकी हेतु भूत होनेसे आत्मार्थियोको त्यागने योग्य है और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित वर्त्ताव सो भाव परम्परा मोक्षकी कारण होनेसें आत्मार्थियोको प्रमाण करने योग्य हैं

निमूलता समूलताका विचार छोड अपनी परम्परा पर आरुढ होकर धर्मकृत्योको करते हैं) इस लेखको देखतेही मेरेको यहाही विचार उत्पन्न हुआ कि–मातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी और उन्होंकी समुदायवाले साधुजी बहुत वर्षोसे काशीमें रह करके अभ्यास करते हैं इसलिये विद्वान् कहलाते हैं परन्तु श्रीजैनशास्त्रोका तात्पर्य्य उन्होंकी समझमें नही आया मालूम होता हैं क्योंकि आत्मार्थी प्राणियोको निमूलता समूलता इन दोनुका विचार अवश्यमेव करना उचित है और निर्मूलता, याने–शास्त्रोंके प्रमाण विना गच्छ कदाग्रहके परम्पराकी जो मिथ्या बात होवे उसीको छोड देना चाहिये और समूलता, याने शास्त्रोके प्रमाणयुक्त कदाग्रह रहित गच्छ परम्पराकी जो सत्य बात होवे उसीको ग्रहण करना चाहिये और हेय, ज्ञेय, उपादेय, इन तीनो बातोकी खास करके प्रथमही विचारनेकी आवश्यकता श्रीजैनशास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक दर्शाई है इसलिये निर्मूलता, हेय त्यागने योग्य होनेसे और समूलता, उपादेय ग्रहण करने योग्यहोनेसें दोनु का विचार छोड देना कदापि नही हो सकता है और आत्मकल्याणाभिलाषी निर्मूलता त्यागने योग्यका तथा समूलता ग्रहण करने योग्यका विचार जबतक नही करेगा तबतक उसीको श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध वर्त्तनेका अथवा श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्त्तनेका, बन्धका अथवा मोक्षका, मिथ्यात्वका अथवा सम्यक्त्वका, संसार वृद्धिका अथवा आत्मकल्याणके कार्य्योका, भेदभावके निर्णयको प्राप्त नही हो सकेगा और जबतक ऊपरकी बातोकी भिन्नताको नही

हुवे श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित कल्पित बातोको छोड करके श्रीजिनाज्ञा मुजब पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्वक सत्यबातोको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करनेके कार्य्योंमें उद्यम करना चाहिये जिससें आत्मकल्याण होगा नतु तत्वातत्वका विचारशून्य अन्धपरम्परामें–जैसे कि, ८० दिने पर्युषणा करना १, फिर मायावृत्तिसे अधिक मासका निषेध भी करना २, तथा श्री वीरप्रभुके छ कल्याणकोका निषेध करना ३, और सामायिक करते पहिलेही इरियावही करना ४, और आबीलमें अनेक द्रव्य भक्षण करने कराने ५, इत्यादि अनेक बातें शास्त्रोके प्रमाण विना गड्डरीह प्रवाहकी तरह आत्मार्थियोको त्यागने योग्य गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परासे प्रचलित है नतु शास्त्रोके प्रमाणानुसार भावपरम्परासे क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें दिनोकी गिनतीसे ५० दिने पर्युषणा कही है १, और अधिकमासको भी खुलासा पूर्वक गिनतीमें लिया है २, तथा श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोको भी अच्छी तरहसें खुलासा पूर्वक कहे हैं ३, और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करना कहा है ४, और आबीलमें भी दो द्रव्योका भक्षण करना कहा है ५, सोही ऊपरोक्त बातें शास्त्रानुसार भावपरम्परामें होनेसे आत्मार्थियोको ग्रहण करने योग्य है इन ऊपरकी बातोका निर्णय आठोही महाशयोके उत्सूत्र भाषणके लेखोकी समीक्षा सहित इस ग्रन्थको सपूर्ण पढनेवाले निष्पक्षपाती तत्वग्राही सज्जन पुरुषोको स्वय मालूम हो जावेगा।

और द्रव्य भाव परम्पराका विशेष विस्तार देखनेकी इच्छा होवे तो श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजीकृत श्रीआगम अष्टोत्तरी नामा ग्रन्थ 'आत्म हितोपदेश नामा पुस्तकमें' गुजराती भाषा सहित श्रीअहमदाबादसे छपके प्रसिद्ध होगया है सो पढ़नेसे अच्छी तरहसे मालूम हो जावेंगा।

और श्री सर्वज्ञ कथित श्रीजैनशासन अविसवादी होने से श्रीतीर्थङ्कर भगवानोंके जितने गणधर महाराज होते हैं उतनेही गच्छ कहे जाते हैं उन्ह सबीही गच्छवाले महानुभावोंकी ऐकही परूपना तथा एकही वर्ताव होता है और इस वर्त्तमान कालमें तो बहुतही गच्छवालोंके आपसमें अनेक तरहके विसवाद होनेसे जुदी जुदी परूपना तथा जुदा जुदा वर्ताव है और बहुतही गच्छ-वाले अपने अपने गच्छकी परम्परा मुजब धर्मकृत्य करते हुये आप श्रीजिनाज्ञाके आराधक बनते हैं और दूसरे गच्छवालोंको झूठे ठहरा करके निषेध करनेके लिये–राग, द्वेष, निन्दा, इर्षासे खण्डन मण्डन करके, आपसमें बड़ाही भारी विसवादसे मिथ्यात्वको बढानेवाला झगड़ा करते हैं इसलिये वर्तमान कालमें अपनी अपनी परम्परापर दृढ रहने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है क्योंकि अपनी अपनी परम्परा पर आरूढ होकर धर्मकृत्य करने वाले सबी गच्छवाले श्री जिनाज्ञाके आराधक हो जावेंगे तो फिर अविसवादी श्री जैनशासनकी मर्य्यादा कैसे रहेगा इसलिये वर्त्तमान कालमें अपने अपने गच्छपरम्पराकी बातोंका पक्षपात न रखते

हुवे श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित कल्पित बातोको छोड करके श्रीजिनाज्ञा मुजब पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्वक सत्यबातोको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करनेके कार्य्योंमें उद्यम करना चाहिये जिससें आत्मकल्याण होगा नतु तत्वातत्वका विचारशून्य अन्धपरम्परामें—जैसे कि, ८० दिने पर्युषणा करना १, फिर मायावृत्तिसे अधिक मासका निषेध भी करना २, तथा श्री वीरप्रभुके छ कल्याणकोका निषेध करना ३, और सामायिक करते पहिलेही इरियावही करना ४, और आबीलमें अनेक द्रव्य भक्षण करने कराने ५, इत्यादि अनेक बातें शास्त्रोके प्रमाण विना गडुरीह प्रवाहकी तरह आत्मार्थियोको त्यागने योग्य गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परासे प्रचलित है नतु शास्त्रोके प्रमाणानुसार भावपरम्परासे क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें दिनोकी गिनतीसे ५० दिने पर्युषणा कही है १, और अधिकमासको भी खुलासा पूर्वक गिनतीमें लिया है २, तथा श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोको भी अच्छी तरहसें खुलासा पूर्वक कहे हैं ३, और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करना कहा है ४, और आबीलमें भी दो द्रव्योका भक्षण करना कहा है ५, सोही ऊपरोक्त बातें शास्त्रानुसार भावपरम्परामे होनेसे आत्मार्थियोको ग्रहण करने योग्य है इन ऊपरकी बातोका निर्णय आठोही महाशयोके उत्सूत्र भाषणके लेखोकी समीक्षा सहित इस ग्रन्थको सपूर्ण पढनेवाले निष्पक्षपाती तत्वग्राही सज्जन पुरुषोको स्वय मालूम हो जावेगा।

देखिये सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने शास्त्र विशारदकी पद्वीको अङ्गीकार करी है तथापि पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमेंही श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे विना निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ने सम्बन्धी और अपनी २ परम्परा पर आरूढ होकर धर्मकार्य करने सम्बन्धी दो उत्सूत्रभाषण प्रथमही बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेवाले लिख दिये और पूर्वापरका कुछ भी विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नही किया इसलिये शास्त्रविशारद पद्वीको भी लजाया–यह भी एक अलौकिक आश्चर्य्य-कारक विद्वत्ताका नमूना है, खैर—अब पर्युषणा विचारके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं—

पर्युषणा विचारका प्रथम पृष्ठके मध्यमें लिखा है कि–(पक्षपाती जन परस्पर निन्दादि अकृत्योंमें प्रवर्त्तमान होकर सत्यधर्मकी अवहेलना करते हैं) इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशयजीने अपने कृत्य मुजब तथा अपने अन्तरगुण युक्तही ऊपरका लेख में सत्यही दर्शाया है क्योंकि खास आपही अपने पक्षकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातोंको निषेध करके सत्यबातोंकी तथा सत्यबातोंको मानने वालोंकी निन्दा करते हुवे कुयुक्तियोंसे बालजीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लियेही पर्युषणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके अविसंवादी श्रीजैन-शासनमें विसंवादका झगडा बढानेसे श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेमें कुछ कम नही किया है सो

तो पर्युषणाविचारके लेखकी मेरी लिखी हुई सब समी-क्षाको पढनेवाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ,—

और आगे फिरभी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी पक्ति १५वी सें पक्ति१८ वीं तक लिखा है कि (क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष वे युक्ति प्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्यके स्थापन करने के लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुए मालूम पडते हैं) सातवे महाशयजीका यह लिखना उपयोगशून्य ताके कारणसे है क्योकि क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष वे युक्तिप्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्य को स्थापन करनेके लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले सातवे महाशयजी ठहराते है तो क्या वर्त्तमान कालमें साधु और श्रावक श्रीजिनाज्ञाकी सत्यबातरूपी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये और श्रीजैनशासनके निन्दक ढूढिये और तेरहा पन्थी लोगोको तथा अन्यमति-योको भी समझानेके लिये युक्ति प्रयुक्ति करनेवाले सबीही अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहर जावेंगे सो कदापि नही इसलिये सातवें महाशयजीका ऊपरका लिखना उत्सूत्र भाषणरूप भूलका भरा हुवा है क्योकि जो जो कल्पित बातोको स्थापन करनेके लिये जानते हुवे भी कुयुक्तियो करके बालजीवोको मिथ्यात्वमें गेरेंगे सो अभि निवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहरेंगे किन्तु सब नही ठहर सकते हैं परन्तु यह बात तो सत्य है कि 'जैसा खावे अन्न–तैसा होवे मन्न' इस कहावतानुसार अपने पक्षकी कल्पित बातें जमानेके लिये खास आप अनेक बातोमें

देखिये सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने शास्त्र विशारदकी पदवीको अङ्गीकार करी है तथापि पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमेंही श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे विना निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ने सम्बन्धी और अपनी २ परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकार्य कहने सम्बन्धी दो उत्सूत्रभाषण प्रथमही बालजीवोको मिथ्यात्वमें फँसानेवाले लिख दिये और पूर्वापरका कुछ भी विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नही किया इसलिये शास्त्रविशारद पदवीको भी लजाया—यह भी एक अलौकिक आश्चर्य्य-कारक विद्वत्ताका नमूना है, खैर—अब पर्युषणा विचारके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं—

पर्युषणा विचारका प्रथम पृष्ठके मध्यमें लिखा है कि—(पक्षपाती जन परस्पर निन्दादि अकृत्योंमें प्रवर्तमान होकर सत्यधर्मकी अवहेलना करते हैं) इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशयजीने अपने कृत्य मुजब तथा अपने अन्तरगुण युक्त ही ऊपरका लेख में सत्यही दर्शाया है क्योंकि खास आपही अपने पक्षकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातोंको निषेध करके सत्यबातोंकी तथा सत्यबातोंको मानने वालोंकी निन्दा करते हुवे कुयुक्तियोंसे बालजीवो को मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लियेही पर्युषणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके अविसवादी श्रीजैन शासनमें विसवादका झगडा बढानेसे श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेमें कुछ कम नही किया है सो

मासवृद्धिके अभावसे पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है नतु मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ।

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी ७वी पंक्तिसे १८॥ वी पंक्ति तक लिखा है कि (वासाण सवी-सइराइ मासे वइक्कते सत्तरिएहिं राइदिएहिं सेसेहिं इत्यादि समवायाङ्गसूत्रके पाठका पूर्वभाग 'सवीसइ राइमासे वइ-क्कते' पकडकर उत्तर पाठकी क्या गति होगी इसका विचार न रख मूलमन्त्रको अलग छोडकर दूसरे श्रावण के सुदीमें पर्युषणापर्वके पाँचकृत्य 'संवत्सरप्रतिक्रान्ति लुंचनचाष्टम तप । सर्वाहद्भक्तिपूजा च संघस्य क्षामण मिथ' ॥ १ ॥ अर्थात् १ सांवत्सरिकप्रतिक्रमण, २ केशलुञ्चन, ३ अष्टमतप, ४ सर्वमन्दिरमे चैत्यवन्दन पूजादि, ५ चतुर्विध सङ्घके साथ क्षामणा करते है और भक्तोको कराते है) ।

सातवें महाशयजीने ऊपरके लेखमे दूसरे श्रावण शुदी में पांचकृत्यो सहित पर्युषणा करनेवालोको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तर भागको छोड करके पूर्वभागको पकडने वाले ठहराये है सो अज्ञातपनेसे मिथ्या है क्योंकि श्रीसम-वायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावसे श्रीजैनपञ्चाङ्गा-नुसार चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें चन्द्रसंवत्सर-सम्बन्धी प्राचीनकालाश्रयी है और वर्त्तमानकालमें श्री-कल्पसूत्रके मूल पाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्या-योके अनुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती है इसलिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तरभागको छोडकर पूर्वभागको पकडने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है ।

अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले हैं सो आगे लिखनेमें आयेगा ,—

और पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी १९ वीं पङ्क्तिसे दूसरे पृष्ठकी पङ्क्ति दूसरी तक लिखाहै कि (सिद्धान्तका रहस्य ज्ञात होने पर भी एकाशको आगे करके असत्य पक्षका स्थापन और सत्य पक्षका निरादर करनेके लिये कटिबद्ध होकर प्रयत्न करते दिखाई पड़ते हैं) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशयजीनें अपने कृत्य मुजबही जैसा अपना वर्ताव था वैसा ही उपरके लेखमें लिख दिखया है इसका खुलासा मेरा आगेका लेख पढनेसे पाठकवर्ग स्वय विचार कर लेवेंगे ,—

और पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी पङ्क्ति ३से ६ तक लिखाहैं कि (तत्र वार्षिकपर्व भाद्रपदसितपञ्चम्या कालिकसूरेरनन्तर चतुर्थ्यामेवेति–अथात् भाद्रपद सुदी पञ्चमीका साम्वत्सरिक पर्व था पर युगप्रधान कालिकाचार्य्यके समयसे चतुर्थीमें वह पर्व होता है) इस लेख पर भी मेरेको इतना ही कहना है कि–सातवें महाशयजीनें उपरके लेखसे वर्त्तमान कालमें दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये परिश्रम किया सो भी उत्सूत्र भाषण है क्योंकि आषाढ चौमासीसे पचास दिने पर्युषणा करनेकी श्रीजैनशास्त्रोमे मर्य्यादा पूर्वक अनेक जगह व्याख्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है तथापि मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करते हैं सो मिथ्या हठवादसे उत्सूत्र भाषण करते हैं क्योंकि

मासवृद्धिके अभावसे पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है नतु मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ।

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी ७ वीं पक्तिसे १८॥ वीं पक्ति तक लिखा है कि (वासाण सवीसइराइ मासे वइक्कते सत्तरिएहि राइदिएहि सेसेहि इत्यादि समवायाङ्गसूत्रके पाठका पूर्वभाग 'सवीसइ राइमासे वइक्कते' पकडकर उत्तर पाठकी क्या गति होगी इसका विचार न रख मूलमन्त्रको अलग छोडकर दूसरे श्रावण के सुदीमें पर्युषणापर्वके पाँचकृत्य 'संवत्सरप्रतिक्रान्ति लुंचनचाष्टम तप । सर्वार्हद्भक्तिपूजा च सङ्घस्य क्षामण मिथ' ॥ १ ॥ अर्थात् १ सांवत्सरिकप्रतिक्रमण, २ केशलुञ्चन, ३ अष्टमतप, ४ सर्वमन्दिरमें चैत्यवन्दन पूजादि, ५ चतुर्विध सङ्घके साथ क्षामणा करते है और भक्तोको कराते है) ।

सातवें महाशयजीनें ऊपरके लेखमे दूसरे श्रावण शुदीमें पाचकृत्यो सहित पर्युषणा करनेवालोको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तर भागको छोड करके पूर्वभागको पकडने वाले ठहराये है सो अज्ञातपनेसे मिथ्या है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावसे श्रीजैनपञ्चाङ्गानुसार चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमे चन्द्रसंवत्सरसम्बन्धी प्राचीनकालाश्रयी है और वर्त्तमानकालमें श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्यायोंके अनुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती हैं इसलिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तरभागको छोडकर पूर्वभागको पकडने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है ।

अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले हैं सो आगे लिखनेमें आयेगा ,—

और पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी १९ वीं पंक्तिसे दूसरे पृष्ठकी पंक्ति दूसरी तक लिखाहै कि (सिद्धान्तका रहस्य ज्ञात होने पर भी एकान्तको आगे करके असत्य पक्षका स्थापन और सत्य पक्षका निरादर करनेके लिये कटिबद्ध होकर प्रयत्न करते दिखाई पड़ते हैं) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशय जीनें अपने कृत्य मुजबही जैसा अपना वर्ताव था वैसा ही उपरके लेखमें लिख दिखया है इसका खुलासा मेरा आगेका लेख पढनेसे पाठकवर्ग स्वय विचार कर लेवेंगे ,—

और पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी पंक्ति ३से ६ तक लिखाहैं कि (तत्र वार्षिकपर्व भाद्रपदसितपञ्चम्या कालिकसूरेरनन्तर चतुर्थ्यामेवेति—अर्थात् भाद्रपद सुदी पञ्चमीका साम्वत्सरिक पर्व था पर युगप्रधान कालिकाचार्यके समयसे चतुर्थीमें वह पर्व होता है) इस लेख पर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—सातवें महाशयजीनें उपरके लेखसे वर्त्तमान कालमें दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये परिश्रम किया सो भी उत्सूत्र भाषण है क्योंकि आषाढ चौमासीसे पचास दिने पर्युषणा करनेकी श्रीजैनशास्त्रोमे मर्य्यादा पूर्वक अनेक जगह व्याख्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है तथापि मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करते हैं सो मिथ्या हठवादसे उत्सूत्र भाषण करते हैं क्योंकि

श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको दूषणलगाके झूठा ठहराने सम्बन्धी सातवें महाशयजीने लिखा किया है और सातवें महाशयजी अनेक शास्त्रोंके दूषणलगाके उत्सूत्र शास्त्रोके मूलपाठोंको छोड़ते हुवे भी आभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी बन करके उलटा बोलते हैं सोही दिखाता हूं,—

१ प्रथम—हर वर्षे मास वृद्धिके अभाव हुआ पर्युषणादि श्रीकल्पसूत्रमें पर्युषणा सम्बन्धी पूर्वाचार्योंकी विस्तारसे पाठ है उसीके अनुसार श्रुत वर्त्तमान कालमें श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी प्राणियोंको पर्युषणा करनी चाहिये तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे (श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठकी पाठ इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४।५ में छप गया है) उसीको मानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और श्रीकल्पसूत्रके पाठानुसार दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगाते हुवे निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोंकी वृथा निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना। (तिरस्कार) करने वाले काशीनिवासी सातवे महाशयजी श्रीधर्मविजयजी है।

२ दूसरा—श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अनन्तो काल हुवे अधिकमासको गिनतीमें खुलासा पूर्वक प्रमाण किया है तथा आगे करेंगे और सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें लेने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक पाठ है सो कितनेही तो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २७ से ६५ तक छप गये हैं

और (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) सातवें महाशयजीका यह लिखना भी विद्वत्ताके अजीर्णताका है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसे चार मासके वर्षाकालमें उसी मुजब वर्ताव होता है परन्तु सातवें महाशयजी श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामी जी कृत श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका तथा श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तद्वृत्तिके पाठका अभिप्राय जाने विना सूत्र कार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें दो श्रावणादि होनेसे पाँच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें उसी पाठको आगे करके बालजीवोको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हुवे उत्सूत्र भाषणरूप कदाग्रह जमाते हैं सो क्या गति होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने ।

देखिये वडेही आश्चर्य्यकी बात है कि–अपना कदाग्रहकी उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित बातको जमानेके लिये (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) ऐसा तुच्छ शब्द लिखके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ पर आक्षेप करते कुछ लज्जा भी नही पाते हैं यह भी एक कलयुगी विद्वत्ताका नमूना है । और (मूलमन्त्रको अलग छोडकर) यह लिखना भी 'चोर दडे कोटवालको' इस न्यायानुसार खास सातवे महाशयजी आप अनेक बातोमें मूलमन्त्ररूप अनेक शास्त्रोके मूलपाठोको अलग छोडते है फिर दूसरोको मिथ्या दूषण लगाते हैं सो उचित नही है क्योंकि दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीकल्पसूत्रका मूलमन्त्ररूपी पाठके अनुसारही करते हैं और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसे उसी मुजबही वर्त्तते है इसलिये दूसरे

श्रावणमे पर्युषणा करने वालोको मूलमन्त्रको अलग छोडने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है और सातवें महाशयजी अनेक बातोमें मूलमन्त्ररूपी अनेक शास्त्रोके मूलपाठोको जानते हुवे भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी बन करके अलग छोडते है सोही दिखाता हू ,—

१ प्रथम—हर वर्ष गाम गाममें वचाता हुवा सुप्रसिद्ध श्रीकल्पसूत्रमें पर्युषणा सम्बन्धी मूलमन्त्ररूपी विस्तारसे पाठ है उसीके अनुसार इस वर्तमान कालमें श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी प्राणियोको पर्युषणा करनी चाहिये तथापि सातवे महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे (श्रीकल्पसूत्रका मूलमन्त्ररूपी पाठ इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४।५ में छप गया है) उसीको जानते हुवे भी अलग छोडते हैं और श्रीकल्पसूत्रके पाठानुसार दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगाते हुवे निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोकी वृथा निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना। (तिरस्कार) करने वाले काशीनिवासी सातवे महाशयजी श्रीधर्मविजयजी है।

२ दूसरा—श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने अनन्ते काल हुवे अधिकमासको गिनतीमें खुलासा पूर्वक प्रमाण किया है तथा आगे करेंगे और सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें लेने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक पाठ है सो कितनेही तो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २७ से ६५ तक छप गये हैं

और भी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने सम्बन्धी अनेक शास्त्रोंके प्रमाण आगे भी लिखनेमें आवेंगे उसीके अनुसार और कालानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनाज्ञाके आराधन करने वाले आत्मार्थियोंको अधिकमासकी गिनती निश्चय करके प्रमाण करनी चाहिये तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे श्री अनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उत्थापन करके पञ्चाङ्गीके मूलमन्त्ररूपी प्रत्यक्ष पाठोंको मानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणों सहित कालानुसार और सत्य युक्तिपूर्वक अधिकमासकी गिनती प्रमाण करते हैं जिन्होंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा करके निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार अधिक मासको प्रमाण करने वालोंकी वृथाही निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेवाले भी सातवें महाशयजी है।

३ तीसरा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने (श्री आचाराङ्गजी सूत्रकी चूलिकाके मूलपाठमें तथा श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रके पाचवे ठाणेके मूलपाठमें और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठ वगैरह) पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके मूलमन्त्ररूपी पाठोंमें चरम तीर्थङ्कर श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणको को खुलासापूर्वक कहे हैं (इसका विशेष निर्णय शास्त्रोंके पाठो सहित आगे लिखनेमें आवेगा) इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीके शास्त्रोकी श्रद्धावाले आत्मार्थी पुरुषोको प्रमाण करने योग्य है तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे ऊपरोक्त शास्त्रोके पाठोकी मूलमन्त्ररूपी

जानते हुवे भी अलग छोडते है और पञ्चाङ्गीके ऊपरो-क्तादि अनेक शास्त्रोके अनुसार श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणको को माननने वालोको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा करके निषेध करते है इसलिये भी शास्त्रानुसार श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोको माननेवालोकी वृथाही निन्दा करके श्री जिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवे महाशयजी है ।

४ चौथा—श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि और वृहद्वृत्ति वगैरह पञ्चागीके अनेक शास्त्रोमे सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये पीछे इरियावहीका प्रतिक्रमण खुलासापूर्वक कहा है सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोको प्रमाण करने योग्य है तथापि सातवे महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे ऊपरोक्त शास्त्रोके पाठोको मूलमन्त्ररूपी जानते हुवे भी अलग छोड करके उसीके विरुद्ध बालजीवोको कराते हैं—देखिये षडावश्यक करनेके लिये मूलमन्त्ररूपी श्रीआवश्यकजी है उसीकी चूर्णि और वृहद्वृत्तिके अनुसार उभयकाल (साम और सवेर दोनु वरत) षडावश्यकरूपी प्रतिक्रमण करनेका मजूर करते है तथापि उसी शास्त्रोमे सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभतेका उच्चारण किये पीछे इरियावही करना कहा है उसीको मजूर नही करते है जिन्होको मूलमन्त्र रूपी श्रीआवश्यकादि पञ्चाङ्गीके शास्त्रोकी श्रद्धावाले श्री जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी कैसे कहे जावे और उन्होंके षडाश्यवक भी कैसे सार्थक होवेगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने और विशेष आश्चर्यकी बात तो यह

है कि—साम सातवें महाशयजीकेही परमपूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविक श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने श्रीश्राद्दिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिमें, श्रीकुलमण्डनसूरिजीने श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थमें, श्रीरत्नशेखरसूरिजीने श्रीवन्दीता सूत्रकी वृत्तिमें, और श्रीहीरविजय सूरिजीके सन्तानीये श्रीमानविजयजीने तथा श्रीयशोविजयजीने श्रीधर्मसंग्रहकी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करना कहा है इन महाराजोंको सातवें महाशयजी शुद्ध-परूपक आत्मार्थी श्रीजिनाज्ञाके आराधक बुद्धि निधान कहते हैं जिसमें भी विशेष करके श्रीयशोविजयजीके नाम से श्रीकाशी (बनारसी) नगरीमें पाठशाला स्थापन करी है तथापि उन महाराजोंके कहने मुजब सामायिकाधि कारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण नही करते हैं फिर उन महाराजोंको पूज्य भी कहते हैं यह तो प्रत्यक्ष उन महा-राजोंके कहने पर तथा पञ्चाङ्गीके शास्त्रो पर श्रद्धा रहितका नमूना है। यदि सातवें महाशयजी अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके कहने मुजब तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठ शाला स्थापन करी है उन महाराजके कहने मुजब वर्त्तने वाले, तथा उन महाराजोंके पूर्णभक्त, और पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रखने वाले होवेंगे, तब तो सामायिकाधिकारे प्रथम करे-मिभंतेको प्रमाण करके अपने भक्तोसे जरूरही करावेंगे तो सातवें महाशयजीको आत्मार्थी समझनेमें आवेंगा। सामा यिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते २१ शास्त्रोमें लिखी है परन्तु प्रथम इरियावही किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है इसका खुलासा पूर्वक निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ३१० से ३२९ तक

उपरमेंही छपगया है उसीको पढ करके भी सातवे महाशय जी अपने कदाग्रहके वस होकरके शास्त्रानुसार सत्यबात को प्रमाण नही करेंगे तो अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके वाक्य पर तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके वाक्य पर और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठो पर श्रद्धा रखनेवाले आत्मार्थी है ऐसा कोई भी विवेकी तत्त्वज्ञ पाठकवर्ग नही मान सकेगा जिसके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उसी महाराजके वाक्य मुजब प्रमाण नही करना यह तो विशेष लज्जाका कारणहै

इत्यादि अनेक बातोमे सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे मूलमन्त्ररूपी पञ्चाङ्गीके शास्त्रोके पाठोको जानते हुवे भी अलग छोड़ करके शास्त्रोके प्रमाण विना अपनी मतिकल्पनासें कुयुक्तियोका सहारा ले करके उत्सूत्र भाषणमें वर्तते हैं और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक ऊपरोक्तादि अनेक बातोको प्रमाण करने वालोको झूठे ठहरा करके मिथ्या दूषण लगा कर ऊपरोक्त बातोको निषेध करते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्‌की आज्ञानुसार वर्त्तने वालोकी वृथा निन्दा करके शास्त्रानुसार ऊपरोक्तादि बातोके विरुद्ध अविसंवादी श्रीजैनशासनमें विसंवादरूपी मिथ्यात्वका झगड़ा बढानेसे अविसंवादी श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवें महाशयजीही है । और पञ्चाङ्गीकेशास्त्रोके पाठोको प्रत्यक्ष देखते हुवे भी प्रमाण नही करते है और अपना कदाग्रहकी कल्पित कुयुक्तियोको आगे करके दृष्टिरागी झूठे पक्षग्राही बालजीवोको मिथ्यात्वमें गेरते हैं

है कि—साम सातवें महाशयजीकेही परमपूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविक श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिमें, श्रीकुलमण्डनसूरिजीने श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थमें, श्रीरत्नशेखरसूरिजीने श्रीवन्दीता सूत्रकी वृत्तिमें, और श्रीहीरविजय सूरिजीके सन्तानीये श्रीमानविजयजीने तथा श्रीयशोविजयजीने श्रीधर्मसंग्रहकी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते पीछे इरियावही करना कहा है इन महाराजोंको सातवें महाशयजी शुद्ध-परुपक आत्मार्थी श्रीजिनाज्ञाके आराधक शुद्धि निधान कहते हैं जिसमें भी विशेष करके श्रीयशोविजयजीके नाम से श्रीकाशी (बनारसी) नगरीमें पाठशाला स्थापन करी है तथापि उन महाराजोंके कहने मुजब सामायिकाधि कारे प्रथम करेमिभतेको प्रमाण नही करते हैं फिर उन महाराजोंको पूज्य भी कहते हैं यह तो प्रत्यक्ष उन महा-राजोंके कहने पर तथा पञ्चाङ्गीके शास्त्रो पर श्रद्धा रहितका नमूना है। यदि सातवें महाशयजी अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोके कहने मुजब तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठ-शाला स्थापन करी है उन महाराजके कहने मुजब वर्त्तने वाले,तथा उन महाराजोंके पूर्णभक्त,और पञ्चाङ्गीके शास्त्रो पर श्रद्धा रखने वाले होवेंगे,तब तो सामायिकाधिकारे प्रथम करे-मिभतेको प्रमाण करके अपने भक्तोसे जरूरही करावेंगे तो सातवें महाशयजीको आत्मार्थी समझनेमें आवेगा। सामा यिकाधिकारे प्रथम करेमिभते २१ शास्त्रोमे लिखी है परन्तु प्रथम इरियावही किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है इसका खुलासा पूर्वक निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ३१० से ३२९ तक

मुजब तथा उन्होकी अनेक व्याख्यायोके पाठ मुजब वर्त्त मान कालमे दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे आषाढ चौमासीसे ५० दिने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन आत्मार्थी प्राणी करते है और दूसरे भव्यजीवोको कराते है जिन्होको तो मिथ्या दूषण लगा करके ससार वढाने वाले ठहराना और आप श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा विरुद्ध तथा पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोको छोड करके अपनी मतिकल्पनासे यावत् ८० दिने पर्युषणा करते है और बालजीवोको भी कुयुक्तियोसे भ्रमा करके कराते है इसलिये श्रीजिनाज्ञाकी सत्यवातका निषेध करके भी शुद्ध परूपक बनते हुवे ससार वृद्धिका भय नही करना सो मिथ्यात्वीके सिवाय और कौन होगा ।

और आगे फिर भी सातवे महाशयजीने पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठके अन्ते २१।२२ वी पङ्क्तिमे लिखा है कि (उन जीवो पर भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार लिखा जाता है) इस लेखसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालो पर और करानेवालो पर भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार लिखनेका सातवे महाशयजी ठहराते हैं सो नि - केवल बालजीवोको कदाग्रहमे फँसाकरके मिथ्यात्ववढानेके लिये ससार वृद्धिके निमित्तभूत उत्सूत्र भाषण करते है क्योकि प्रथमतो दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वाले पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रानुसार करते है जिसके सम्बन्धमें इसीही ग्रन्थकी आदिसे २१ पृष्ठ तक अनेक शास्त्रोके प्रमाण पाठार्थ सहित छप गये हैं इसलिये शास्त्रानुसार वर्तने वालोको

इसलिये सत्यपक्षका निरादर करके असत्य पक्षका स्थापन करनेवाले श्री सातवें महाशयजी हैं इस बातको निष्पक्ष पाती आत्मार्थी विवेकी पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे ,—

और श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्यानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालो पर द्वेष बुद्धि करके आक्षेपरूप सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी १८॥ वीं पक्ति से २० वीं पक्ति तक लिखा है कि (वस्तुत तो भगवानूकी आज्ञाके आराधक भव्यजीवो पर कल्पित दोषोका आरोप करके अपने भक्तोको भ्रमजालमें फँसाकर ससार बढाते हैं)

सातवें महाशयजीका इस लेखको देखकर मेरेको बडाही आश्चर्य्य सहित खेद उत्पन्न होता है कि जैसे ढूढिये तेरहा पन्थी लोग अपने कदाग्रहकी कल्पित बातोको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवानूकी आज्ञानुसार वर्तने वाले पुरुषोकी झूठी निन्दा करके ससार वृद्धिका कारण करते हैं तैसेही सातवें महाशयजी भी इतने विद्वान् कहलाते हुवे भी अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवानूकी आज्ञानुसार वर्तनेवाले पुरुषोकी जूठी निन्दा करके ससार वृद्धिका कारण करते हैं क्योंकि–श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य,चूर्णि, वृत्ति और प्रकरणादि अनेक शास्त्रमें प्रगटपने आषाढ चौमासीसे दिनोकी गिनतीके हिसाबसें ५० दिने निश्चय करके श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है उसीके अनुसार श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठ

मुजब तथा उन्हीकी अनेक व्याख्यायोके पाठ मुजब वर्त्त मान कालमे दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे आषाढ चौमासीसे ५० दिने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन आत्मार्थी प्राणी करते है और दूसरे भव्यजीवोको कराते है जिन्होको तो मिथ्या दूषण लगा करके संसार वढाने वाले ठहराना और आप श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा विरुद्ध तथा पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोको छोड करके अपनी मतिकल्पनासे यावत् ८० दिने पर्युषणा करते हैं और बालजीवोको भी कुयुक्तियोसे भ्रमा करके कराते हैं इसलिये श्रीजिनाज्ञाकी सत्यबातका निषेध करके भी शुद्ध परूपक बनते हुवे संसार वृद्धिका भय नही करना सो मिथ्यात्वीके सिवाय और कौन होगा ।

और आगे फिर भी सातवे महाशयजीने पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठके अन्ते २१।२२ वी पङ्क्तिमें लिखा है कि (उन जीवो पर भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार लिखा जाता है) इस लेखसे दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वालो पर और करानेवालो पर भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार लिखनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो नि - केवल बालजीवोको कदाग्रहमे फँसाकरके मिथ्यात्ववढानेके लिये संसार वृद्धिके निमित्तभूत उत्सूत्र भाषण करते है क्योकि प्रथमतो दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वाले पञ्चाङ्गी के अनेक शास्त्रानुसार करते हैं जिसके सम्बन्धमें इसीही ग्रन्थकी आदिसे २१ पृष्ठ तक अनेक शास्त्रोके प्रमाण पाठार्थ सहित छप गये हैं इसलिये शास्त्रानुसार वर्तने वालोको

झूठे ठहरा करके भावदया दिखाना सो तो प्रत्यक्ष महा मिथ्या है। और भावदयाका स्वरूप जाने बिना सातवें महाशयजी भावदया वाले बनते हैं सो भी तोतेकी तरह तात्पर्य्य समझे बिना रामराम पुकारने जैसा है क्योंकि सातवें महाशयजी भावदयाका स्वरूपही नही जानते हैं इसलिये अबमें पाठकवर्गको भावदयाका स्वरूप सक्षिप्तसे दिखाता हूं—

श्रीजैनशास्त्रोमें भावदया उसीको कहते हैं कि–प्रथमतो चतुर्गतिरूप संसारमें अनन्तकालसे नरकादिमें परिभ्रमणकी वेदना वगैरह स्वरूपको जान करके संसारकी निवृत्तिके लिये श्रीजिनेन्द्र भगवानोका कहा हुवा आत्महितकारी धर्मको श्रद्धापूर्वक अङ्गीकार करके श्रीजिनेन्द्र भगवानोके कहने मुजबही धर्म्मकी परूपना करे और मोक्षकी इच्छासे उसी मुजबही प्रवर्ते तथा दूसरोको प्रवर्त्तावे और सब संसारी प्राणियोको भी ऐसेही होनेकी इच्छा करे सोही उत्तम पुरुष भावदया कर सकता है, परन्तु सातवें महाशयजी तो उत्सूत्र भाषणोसे संसार वृद्धिका भय नहीं करने वाले दिखते हैं क्योंकि श्रीजिनेन्द्र भगवानोने तो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेकी श्रद्धा रहित होनेसे उत्सूत्रभाषणरूप अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करते है इसलिये सातवें महाशयजी काशीनिवासी श्रीधर्मविजयजी श्रीजिनेन्द्र भगवानोके कहने मुजब वर्त्तने वाले नही है किन्तु श्रीजिनेन्द्र भगवानोके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासे कुयुक्तियो करके बालजीवोको मिथ्यात्वके

भ्रममे फँसाने वाले होनेसे उन्होमे भावदयाका नो सम्भवही नही हो मकता है किन्तु समार वृद्धिकी हेतुभूत भावहिसाका कारण तो प्रत्यक्ष दिखता है।

और सातवे महाशयजीने सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार नही लिखा है किन्तु पञ्चाङ्गीके सिद्धान्तोके विरुद्ध बालजीवोको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धारूप सम्यक्त्वरत्नसे भ्रष्ट करनेको उत्सूत्र भाषणोका सग्रह करके अपने कदाग्रहकी कल्पित बात जमानेके आग्रह से पर्युषणा विचारके लेखमें पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैन-शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञताके कारणसे कुतर्कों-काही प्रकाश किया है सो तो मेरा सव लेख पढनेसे निष्प-क्षपाती सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ,——

और आगे फिर भी मातवे महाशयजीनें पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी आदिसे ७ वी पक्ति तक लिखा है कि (उत्तम रीतिसे उपदेश करते हुए यदि किसीको राग द्वेषकी प्रणति हो तो लेखक दोषका भागी नही है क्योंकि उत्तम रीतिसे दवा करने पर भी यदि रोगीके रोगकी शान्ति नहो ओर मृत्यु हो जाय तो वैद्यके सिर हत्याका पाप नही है परिणामसें बन्ध, क्रियासे कर्म, उपयोगसें धर्म, इस न्यायानुसार लेखकका आशय शुभ है तो फल शुभ है)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीकी बालजीवो को मिथ्यात्वमें फँसाने वाली मायावृत्तिकी चातुराईका नमूना तो देखो–आप अपने कदाग्रहके पक्षपातसे श्रीजैन-शासनकी उन्नतिके कार्य्योंमें विघ्नकारक सपको नष्ट करके

झूठे ठहरा करके भावदया निरानी भी तो प्रत्यक्ष महा मिथ्या है। और भावदयाका स्वरूप जाने बिना सातवें महाशयजी भावदया वाले बनते हैं सो भी तोतेकी तरह तात्पर्य्य समझे बिना रामराम पुकारने जैसा है क्योंकि सातवें महाशयजी भावदयाका स्वरूपही नही जानते हैं इसलिये अग्रमें पाठकवर्गको भावदयाका स्वरूप संक्षिप्तसे दिखाता हूं—

श्रीजैनशास्त्रोमें भावदया उसीको कहते हैं कि—प्रथमतो चतुर्गतिरूप संसारमें अनन्तेकालसे नरकादिमें परिभ्रमणकी वेदना वगैरह स्वरूपको ज्ञान करके संसारकी निवृत्तिके लिये श्रीजिनेन्द्र भगवानोका कहा हुवा आत्महितकारी धर्मको श्रद्धापूर्वक अङ्गीकार करके श्रीजिनेन्द्र भगवानोके कहने मुजबही धर्म्मकी परूपना करे और मोक्षकी इच्छासे उसी मुजबही प्रवर्ते तथा दूसरोको प्रवर्त्तावे और सब संसारी प्राणियोको भी ऐसेही होनेकी इच्छा करे सोही उत्तम पुरुष भावदया कर सकता है, परन्तु सातवें महाशयजी तो उत्सूत्र भाषणोसे संसार वृद्धिका भय नहीं करने वाले दिखते हैं क्योंकि श्रीजिनेन्द्र भगवानोने तो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेकी श्रद्धा रहित होनेसे उत्सूत्रभाषणरूप अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करते है इसलिये सातवें महाशयजी काशीनिवासी श्रीधर्मविजयजी श्रीजिनेन्द्र भगवानोके कहने मुजब वर्त्तने वाले नही है किन्तु श्रीजिनेन्द्र भगवानोके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासे कुयुक्तियो करके बालजीवोको मिथ्यात्वके

भ्रममे फँसाने वाले होनेसे उन्हीमे भावदयाका तो सम्भवही नही हो सकता है किन्तु संसार वृद्धिकी हेतुभूत भावहिंसाका कारण तो प्रत्यक्ष दिखता है ।

और सातवें महाशयजीने सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिमे पर्युषणा विचार नही लिखा है किन्तु पञ्चाङ्गीके सिद्धान्तोके विरुद्ध वालजीवोको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धारूप सम्यक्त्वरत्नसे भ्रष्ट करनेको उत्सूत्र भाषणोका संग्रह करके अपने कदाग्रहकी कल्पित बात जमानेके आग्रह से पर्युषणा विचारके लेखमे पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैन-शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञताके कारणसे कुतर्कों-काही प्रकाश किया है सो तो मेरा सब लेख पढनेसे निष्प-क्षपाती सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी आदिसे ७ वी पंक्ति तक लिखा है कि (उत्तम रीतिसे उपदेश करते हुए यदि किसीको राग द्वेषकी प्रणति हो तो लेखक दोषका भागी नही है क्योंकि उत्तम रीतिसे दवा करने पर भी यदि रोगीके रोगकी शान्ति नहो और मृत्यु हो जाय तो वैद्यके सिर हत्याका पाप नही है परिणाममे बन्ध, क्रियासे कर्म, उपयोगमे धर्म, इस न्यायानुसार लेखकका आशय शुभ है तो फल शुभ है)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीकी वालजीवो को मिथ्यात्वमें फँसाने वाली मायावृत्तिकी चातुराईका नमूना तो देखो—आप अपने कदाग्रहके पक्षपातसे श्रीजैन-शासनकी उन्नतिके कार्य्योंमें विघ्नकारक सर्पको नष्ट करके

झूठे ठहरा करके भावदया दिखाना सो तो प्रत्यक्ष महा मिथ्या है। और भावदयाका स्वरूप जाने बिना सातवें महाशयजी भावदया वाले बनते हैं सो भी तोतेकी तरह तात्पर्य समझे बिना रामराम पुकारने जैसा है क्योंकि सातवें महाशयजी भावदयाका स्वरूपही नही जानते हैं इसलिये अबमें पाठकवर्गको भावदयाका स्वरूप संक्षिप्तसे दिखाता हूं—

श्रीजैनशास्त्रोंमें भावदया उसीको कहते हैं कि–प्रथमतो चतुर्गतिरूप संसारमें अनन्तकालसे नरकादिमें परिभ्रमणकी वेदना वगैरह स्वरूपको जान करके संसारकी निवृत्तिके लिये श्रीजिनेन्द्र भगवानोंका कहा हुवा आत्महितकारी धर्मको श्रद्धापूर्वक अङ्गीकार करके श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके कहने मुजबही धर्म्मकी परूपना करे और मोक्षकी इच्छासे उसी मुजबही प्रवर्ते तथा दूसरोंको प्रवर्त्तावे और सब संसारी प्राणियोंको भी ऐसेही होनेकी इच्छा करे सोही उत्तम पुरुष भावदया कर सकता है, परन्तु सातवें महाशयजी तो उत्सूत्र भाषणोंसे संसार वृद्धिका भय नहीं करने वाले दिखते हैं क्योंकि श्रीजिनेन्द्र भगवानोंने तो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेकी श्रद्धा रहित होनेसे उत्सूत्रभाषणरूप अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करते हैं इसलिये सातवें महाशयजी काशीनिवासी श्रीधर्मविजयजी श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके कहने मुजब वर्त्तने वाले नही है किन्तु श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासे कुयुक्तियों करके बालजीवोंको मिथ्यात्वके

भ्रममे फँसाने वाले होनेसे उन्होंमे भावदयाका तो सम्भवही नही हो सकता है किन्तु ससार वृद्धिकी हेतुभूत भावहिंसाका कारण तो प्रत्यक्ष दिखता है ।

और सातवे महाशयजीने सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसे पर्युषणा विचार नही लिखा है किन्तु पञ्चाङ्गीके सिद्धान्तोके विरुद्ध बालजीवोको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धारूप सम्यक्त्वरत्नसे भ्रष्ट करनेको उत्सूत्र भाषणोका सग्रह करके अपने कदाग्रहकी कल्पित बात जमानेके आग्रह से पर्युषणा विचारके लेखमे पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैन-शास्त्रोके तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञताके कारणसे कुतर्कों-काही प्रकाश किया हे सो तो मेरा सब लेख पढनेसे निष्प-क्षपाती सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी आदिसे ७ वी पंक्ति तक लिखा है कि (उत्तम रीतिसे उपदेश करते हुए यदि किसीको राग द्वेषकी प्रणति हो तो लेखक दोषका भागी नही है क्योंकि उत्तम रीतिसे दवा करने पर भी यदि रोगीके रोगकी शान्ति नहो और मृत्यु हो जाय तो वैद्यके सिर हत्याका पाप नहीं है परिणाममे बन्ध, क्रियासे कर्म, उपयोगमे धर्म, इस न्यायानुसार लेखकका आशय शुभ है तो फल शुभ है)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीकी बालजीवो को मिथ्यात्वमें फँसाने वाली मायावृत्तिकी चातुराईका नमूना तो देखो—आप अपने कदाग्रहके पक्षपातसे श्रीजैन-शासनकी उन्नतिके कार्य्योंमें विघ्नकारक सपको नष्ट करके

वृथाही आपसमें झगड़ा बढ़ानेके लिये 'पर्युषणा विचारनामा' पुस्तक प्रगट कराई जिसमें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालो पर वृथाही आक्षेपरूप अनुचित शब्द लिख करके भी आप निर्दूषण बनना चाहते हैं सो कदापि नहीं हो सकते है क्योंकि पर्युषणा विचारके लेखमें सत्यबातको मानने वालोकी झूठी निन्दा करके वृथाही अपनी मतिकल्पनासे मिथ्या दूषण लगाये है और उत्सूत्र भाषणोसे बालजीवो को भी मिथ्यात्वमें फँसाये है इसलिये ऊपरकी इन बातो के दोषाधिकारी तो सातवें महाशयजी प्रत्यक्षही दिखते हैं यदि सातवें महाशयजीको ऊपरकी बातोके दूषणोसे संसार वृद्धिका भय होवे और आत्मकल्याणकी इच्छा होवे तो अबसे भी झगड़ेके कार्य्योंमें न फँसके इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ करके सत्यबातको ग्रहण करें और पर्युषणा विचारके लेखकी अपनी भूलोकी क्षमापूर्वक मिथ्या दुष्कृत सहित आलोचना लेवें तो सातवें महाशयजीको शुभ इरादेसे उत्तम रीतिका उपदेश करनेवाले तथा उत्सूत्र भाषणका भय रखनेवाले समझनेमें आवेगे इतने पर भी सातवें महाशयजी पर्युषणा विचारके लेखोको अपने दिलमें सत्य समझते होवें तो श्रीकाशीमे मध्यस्थ विद्वानोके समक्ष (पर्युषणा विचारके लेखोको) शास्त्रोके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक सत्य करके दिखावे अन्यथा कदाग्रहसे सत्य बातोको छोड़ करके कल्पित बातोको स्थापन करनेमें तो संसार वृद्धिके सिवाय और क्या लाभ होगा सो सज्जन पुरुष स्वयं विचार लेवें,—

और उत्तम रीतिसे दया करनेके भरोसे विश्वासघात

करके विष मिश्रित दवा देकर रोगीको मृत्युके सरण प्राप्त करने वाला वैद्य नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही कर्मरूपी रोगसे पीडित भव्यजीवोको उत्तम रीतिका उपदेश देनेके भरोसे विश्वासघातसे उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित कुयुक्तियोका विष मिश्रित उपदेश करके भव्य-जीवोको श्रीजिनाज्ञारूप सम्यक्त्वरत्न जीवतव्यसे भ्रष्ट करके मिथ्यात्वरूप मरणके सरण प्राप्त करनेवाला वेष-धारी साधु नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही सातवेंमहाशयजीने भी पर्युषणा विचारके लेखमें भव्यजीवोको उत्तम रीतिका उपदेश करनेके बहाने उत्सूत्र भाषणरूप कुतर्कोका विष मिश्रित उपदेश करके भव्यजीवोको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त किये हैं इसलिये भव्य जीवोको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त कर-नेके दोषाधिकारी सातवें महाशयजी है यदि सातवें महा-शयजीको ऊपरोक्त दूषणके फल विपाकका भय होवे तो अपने कृत्यकी आलोचना लेवेंगे ,—

और अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको जमानेके लिये उत्सूत्र भाषणकी और कुयुक्तियोकी बाते लिखनेवालेका परिणाम भी अच्छा नही होता है तथा क्रिया भी अच्छी नही होती है और उपयोग भी अच्छा नही होता है इसलिये पर्युषणा विचारके लेखक अपनेको अच्छा फलकी चाहना करते हैं सो कदापि नही हो सकेगा किन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणोकी तथा कुयुक्तियोकी और शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोकी झूठी निन्दा करके मिथ्या दूषण लगानेकी कल्पना भरी होनेसे

इपाही आपसमें झगड़ा बढ़ानेके लिये 'पर्युषणा विचारनामा' पुस्तक प्रगट कराए जिसमें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालो पर खूबही आक्षेपरूप अनुचित शब्द लिख करके भी आप निर्दूषण बनना चाहते हैं सो कदापि नहीं हो सकते है क्योंकि पर्युषणा विचारके लेखमें सत्यबातको मानने वालोकी झूठी निन्दा करके इपाही अपनी मतिकल्पनासे मिथ्या दूषण लगाये है और उत्सूत्र भाषणोंसे बालजीवों को भी मिथ्यात्वमें फँसाये है इसलिये ऊपरकी इन बातो के दोषाधिकारी तो सातवें महाशयजी प्रत्यक्षही दिखते हैं यदि सातवें महाशयजीको ऊपरकी बातोके दूषणोसे संसार वृद्धिका भय होवे और आत्मकल्याणकी इच्छा होवे तो अबसे भी झगड़ेके कार्य्योंमें न फँसके इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ़ करके सत्यबातको ग्रहण करें और पर्युषणा विचारके लेखकी अपनी भूलोकी क्षमापूर्वक मिथ्या दुष्कृत सहित आलोचना लेवें तो सातवें महाशयजीको शुभ इरादेसे उत्तम रीतिका उपदेश करनेवाले तथा उत्सूत्र भाषणका भय रखनेवाले समझनेमें आवेंगे इतने पर भी सातवें महाशयजी पर्युषणा विचारके लेखोको अपने दिलमें सत्य समझते होवें तो श्रीकाशीमें मध्यस्थ विद्वानोके समक्ष (पर्युषणा विचारके लेखोको) शास्त्रोके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक सत्य करके दिखावे अन्यथा कदाग्रहसे सत्य बातोको छोड़ करके कल्पित बातोको स्थापन करनेमें तो संसार वृद्धिके सिवाय और क्या लाभ होगा सो सज्जन पुरुष स्वयं विचार लेवें ,—

और उत्तम रीतिसे दया करनेके भरोसे विश्वासघात

करके विष मिश्रित दवा देकर रोगीको मृत्युके सरण प्राप्त करने वाला वैद्य नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही कर्मरूपी रोगसे पीडित भव्यजीवोको उत्तम रीतिका उपदेश देनेके भरोसे विश्वासघातसे उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित कुयुक्तियोका विष मिश्रित उपदेश करके भव्य-जीवोको श्रीजिनाज्ञारूप सम्यक्त्वरत्न जीवतव्यसे भ्रष्ट करके मिथ्यात्वरूप मरणके सरण प्राप्त करनेवाला वेष-धारी साधु नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही सातवेंमहाशयजीने भी पर्युषणा विचारके लेखमें भव्यजीवोको उत्तम रीतिका उपदेश करनेके बहाने उत्सूत्र भाषणरूप कुतर्कोंका विष मिश्रित उपदेश करके भव्यजीवोको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त किये हैं इसलिये भव्य जीवोको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त कर-नेके दोषाधिकारी सातवें महाशयजी है यदि सातवें महा-शयजीको ऊपरोक्त दूषणके फल विपाकका भय होवे तो अपने कृत्यकी आलोचना लेवेंगे ,—

और अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको जमानेके लिये उत्सूत्र भाषणकी और कुयुक्तियोकी वाते लिखनेवालेका परिणाम भी अच्छा नही होता है तथा क्रिया भी अच्छी नही होती है और उपयोग भी अच्छा नही होता है इसलिये पर्युषणा विचारके लेखक अपनेको अच्छा फलकी चाहना करते हैं सो कदापि नही हो सकेगा किन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणोकी तथा कुयुक्तियोकी और शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोकी झूठी निन्दा करके मिथ्या दूषण लगानेकी कल्पना भरी होनेसे

ससारवृद्धिके फल सो मिलनेका दिखता है इस बातको श्रीजैनशास्त्रोंके तत्त्वज्ञ पुरुष अच्छी तरहसे विचार लेवें,—

और भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी ८।९।१० पंक्तियोंमें लिखा है कि (अधिक मासको लेखामें गिनकर पर्युषणा पर्व करनेवाले महानुभावोंको नीचे लिखे हुए दोषों पर पक्षपात रहित विचार करनेकी सूचना दी जाती है)।

इस लेखको देखकर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने श्रीजैन-शास्त्रोंके तात्पर्य्यको विना समझे ऊपरके लेखमें इन्होंने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्योंकी आशातनाका कारण रूप ससार वृद्धिके हेतुभूत खूबही अज्ञतासें अनुचित लिखा है क्योंकि अनन्ते काल हुये श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने अधिकमासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करते आये हैं तथा वर्त्तमान इस पञ्चम कालमें भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबीही आत्मार्थी जैनाचा-र्य्योंने अधिक मासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करी है और आगे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराज जो जो होवेंगे सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें ले करही पर्युषणा करेंगे और अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें लेकरही पर्युषणा करनी लिखी है इसलिये अधिक मासको गिनतीमें लेकरके जो पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक है और अधिक मासको गिनतीमें छोड़ करके पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके विराधक

उत्सूत्र भाषण करने वाले है तैसेही सातवें महाशय जी आप अधिक मासको गिनतीमे नही लेते हुवे अधिक मासको गिनतीमें ले करके पर्युषणा करने वालोको मिथ्या दूषण लगाके उत्सूत्रभाषणसे ऊपरोक्त महाराजोकी आशातना करके ससार वृद्धिका कुछ भी भय नही करते है। हा अति खेद ?

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी ११ वी पक्तिसे १९ वी पक्ति तक लिखा है (प्रथम दोष—आषाढ चौमासी बाद पचास दिनके भीतर पर्युषणापर्व करे इस नियमकी रक्षा करते हुए तत्तुल्य दूसरे नियमका सर्वथा भङ्ग होता है क्योकि पचासवे दिवस सवत्सरी और उसके पीछे सत्तरवे दिन चौमासी प्रतिक्रमण करके पीछे मुनिराजोको विहार करना चाहिये यदि दूसरे श्रावणमे सावत्सरिक कृत्य करोगे तो सौ दिन बाकी रहेंगे तब सत्तर दिनका नियम कैसे पालन किया जायगा इसका विचार करो)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि ऊपरके लेखमें दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वालों को सातवें महाशयजीने प्रथम दोष लगाया सो नि केवल अज्ञताके कारणसे मिथ्या लिखके उत्सूत्र भाषण किया है क्योकि श्रीनिशीथभाष्यमें १, तथा चूर्णिमें २, श्रीवृहत्कल्पभाष्यमें ३, तथा चूर्णिमे ४, और वृत्तिमे ५, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ६, तथा वृत्तिमें ७, श्रीस्थानाङ्गजीकी वृत्तिमें ८, श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्तिकी वृत्तिमें ९, श्रीकल्पसूत्रकी पाँच व्याख्यायोमे १४ श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिमे १५

ममारवृद्धिके फल सो मिलनेका दिखता है इस बातको श्रीजैनशास्त्रोंके तत्त्वज्ञ पुरुष अच्छी तरहसे विचार लेवें ,—

और भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी ८।९।१० पक्तियोंमें लिखा है कि (अधिक मासको लेखामें गिनकर पर्युषणा पर्व करनेवाले महानुभावोंको नीचे लिखे हुए दोषो पर पक्षपात रहित विचार करनेकी सूचना दी जाती है)।

इस लेखको देखकर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने श्रीजैन-शास्त्रोंके तात्पर्य्यको विना समझे ऊपरके लेखमें इन्होने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्योंकी आशातनाका कारण रूप ससार वृद्धिके हेतुभूत खूबही अज्ञतासें अनुचित लिखा है क्योंकि अनन्ते काल हुवे श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने अधिकमासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करते आये हैं तथा वर्त्तमान इस पञ्चम कालमें भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबीही आत्मार्थी जैनाचा-र्य्योंने अधिक मासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करी है और आगे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराज जो जो होवेंगे सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें ले करही पर्युषणा करेंगे और अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें लेकरही पर्युषणा करनी लिखी है इसलिये अधिक मासको गिनतीमें लेकरके जो पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक है और अधिक मासको गिनतीमें छोड़ करके पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके विराधक

और आगे फिर भी सातवे महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी २०वी पंक्तिसे चौथे पृष्ठकी दूसरी पंक्ति तक लिखा है कि (दूसरा दोष—भाद्रसुदीमे पर्युषणा पर्व कहा हुवा है तत्सम्बन्धी पाठ आगे कहेंगे अधिक-मास माननेवाले श्रावण सुदीमें पर्युषणा करते हैं शास्त्रानुकूल न होनेसे आज्ञाभङ्ग दोष है) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जनपुरुषो मास वृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें भाद्रपदमें पर्युषणा होनेका दोनु चूर्णिकार महाराजोने कहा है तथापि सातवे महाशयजीने वर्त्तमानकालमे मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके सम्बन्धवाले पाठोको छोड करके दोनु चूर्णिकार महाराजोके विरुद्ध थोडासा अधूरा पाठ मायावृत्तिसे आगे लिखा है जिसकी समीक्षा मैभी आगेही करूंगा । परन्तु इस जगह तो दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करनेवालोको सातवें महाशयजीने शास्त्र विरुद्ध ठहरा करके आज्ञा भङ्गका दूसरा दूषण लगाया है सो शास्त्रोके प्रमाणपूर्वक वर्त्तनेवालोको झूठे ठहरा करके मिथ्यादूषण लगाया है तथा उत्सूत्र भाषणसे सत्य बातका निषेध करके मिथ्यात्व बढाया है और अपने विद्वत्ताकी हासी भी कराई है क्योंकि अधिकमासको गिनतीमे लेनेका श्रीजैनशास्त्रानुसार तथा कालानुसार लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब और युक्तिपूर्वक निश्चय करके स्वय सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध नही हो सकती है इसका विशेष विस्तार छहो महाशयोके लेखोकी समीक्षामे अच्छी तरहसे छप गया है

श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमे १६ इत्यादि शास्त्रोमे मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसम्वत्सरमे चारमासके १२० दिन का वर्षाकालमे ५० दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते है जिसके सम्बन्धमें इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ८४ तथा ८९ और १२० । १२१ वगैरहमें कितनेही जगह पाठ भी छप गये हैं और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमे जैनपञ्चाङ्गानुसार आषाढ चौमासीसे वीश दिने पर्युषणा करनेसे आती थी तब भी पर्युषणा के पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन रहते थे इसका भी विशेष खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १०७ से १२३ तक छप गया है और वर्तमान कालमें जैनपञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गमे हरेक मासोकी वृद्धि हो तो भी ५० दिनेही पर्युषणा करनेकी मर्य्यादा है सो भी इसीही ग्रन्थकी आदिसे पृष्ठ २७ तक और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके लेख की समीक्षामे पृष्ठ २८६ से २९९ तक छप गया है इसलिये वर्तमानकालमे दो श्रावणादि होनेसे पाँच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते है सो भी शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक होनेसे कोई भी दूषण नही है इसका भी विशेष निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १२० से १२९ तक और पृष्ठ १७७ के अन्तसे १८५ तक छप गया है इसलिये दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वालोको पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रखने सम्बन्धी और १०० दिन होनेसे दूषण लगाने सम्बन्धी सातवे महाशयजी लिखना अज्ञात सूचक और उत्सूत्र भाषण है। सो पाठकवर्ग विचारलेवेंगे,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी २०वी पङ्क्तिसे चौथे पृष्ठकी दूसरी पङ्क्ति तक लिखा है कि (दूसरा दोष—भाद्रसुदीमें पर्युषणा पर्व कहा हुवा है तत्सम्बन्धी पाठ आगे कहेंगे अधिक-मास मानने वाले श्रावण सुदीमें पर्युषणा करते हैं शास्त्रानुकूल न होनेसे आज्ञाभङ्ग दोष है) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जनपुरुषो मास वृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें भाद्रपदमें पर्युषणा होनेका दोनु चूर्णिकार महाराजोने कहा है तथापि सातवें महा-शयजीने वर्त्तमानकालमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके सम्बन्ध वाले पाठोको छोड करके दोनु चूर्णिकार महाराजोके विरुद्ध थोडासा अधूरा पाठ मायावृत्तिसे आगे लिखा है जिसकी समीक्षा मैंभी आगेही करूंगा । परन्तु इस जगह तो दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमे पर्युषणा करने वालो को सातवे महाशयजीने शास्त्र विरुद्ध ठहरा करके आज्ञा भङ्गका दूसरा दूषण लगाया है सो शास्त्रोके प्रमाणपूर्वक वर्त्तने वालोको झूठे ठहरा करके मिथ्यादूषण लगाया है तथा उत्सूत्र भाषणसे सत्य बातका निषेध करके मिथ्यात्व बढाया है और अपने विद्वत्ताकी हासी भी कराई है क्योंकि अधिकमासको गिनतीमें लेनेका श्रीजैनशास्त्रानुसार तथा कालानुसार लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब और युक्तिपूर्वक निश्चय करके स्वयं सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध नही हो सकती है इसका विशेष विस्तार छहो महाशयोके लेखोकी समीक्षामें अच्छी तरहसे छप गया है

और आषाढ़ चौमासीसे पचास दिने अवश्यही पर्युषणा पर्व करनेका मयत्र शास्त्रोंमें कहा है जिसका भी विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसे लेकर ऊपर तकमें अनेक जगा छप गया है इसलिये वर्तमान कालमें ५० दिनके हिसाबसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करना सो शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक सत्य होनेसे उसी मुजब वर्तनेवालोंको जो सातवें महाशयजीने दूषण लगाया है सो नि केवल संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषण किया है इस बातको निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे। और देखिये बडेही आश्चर्यकी बात है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं और हरवर्ष गाव गावमें श्रीकल्पसूत्रका मूल पाठको तथा उन्होंकी वृत्तिको व्याख्यानमें वाँचते हैं उसी में ५० दिने पर्युषणा करनेका लिखा है उसी मुजबही दूसरे श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिन्होंको अपनी मति कल्पनासे आज्ञाभङ्गका दूषण लगाना सो विवेकशून्य कदाग्रही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी और अपनी विद्वत्ताकी हासी करानेवालेके सिवाय दूसरा कौन होगा सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी तीसरी पङ्क्तिसे चौदह वी पङ्क्ति तक लिखा है कि (अधिक मासके मानने वालोंको चौमासी क्षमापनाके समय 'पंचण्ह मासाण दसण्ह पक्खाण पञ्चाशुत्तरसयराइंदिआणमित्यादि' और सांवत्सरिक क्षमापनाके समय 'तेरसण्ह मासाण छव्वीसण्ह पक्खाण' पाठकी कल्पना करनी पडेगी। यदि ऐसा करोगे तो कल्पित आचार

होनेसे फलसे वञ्चित रहोगे, क्योंकि शास्त्रमे तो 'चउण्हं मासाण अट्ठण्ह पक्खाण' इत्यादि तथा 'बारसण्ह मासाण चउवीसण्ह पक्खाण' इत्यादि पाठ है इसके अतिरिक्त पाठ नही है उसके रहने पर यदि नई कल्पना करोगे तो कल्पना-कुशल, आज्ञाका पालन करनेवाला है या नही, यह पाठक स्वय विचार कर सकते हैं)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बड़ाही आश्चर्य्य उत्पन्न होता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि (ऊपरका लेख लिखते समय) किस जगह चली गई होगी सो मासवृद्धिके अभावकी बातको मासवृद्धि होतेभी बाल जीवोको लिख दिखाकरके अपनी बात जमानेके लिये दूसरोको मिथ्या दूषण लगाते हुवे उत्सूत्र भाषणसे ससार वृद्धिका भय हृदयमें क्यो नही लाते हैं क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें सावत्सरिक क्षामणाधिकारे बारह मास, चौबीश पक्ष लिखे है सो तो निश्चय करके मासवृद्धिके अभावसे चन्द्र सवत्सर सबधी है नतु मास वृद्धि होतेभी अभिवर्द्धित सवत्सर में क्योंकि मास-वृद्धि होनेसे तेरह मास और छबीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास और चौबीश पक्षके क्षामणा करना ऐसा कोई भी शास्त्रमें नहीं लिखा है ।

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्रमें १, तथा तद्वृत्तिमें २, श्रीसूर्य्य-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ३, तथा तद्वृत्तिमें ४, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ५, तथा तद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथचूर्णिमें ७, श्रीजम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ८, तथा तीनकी पाच वृत्तियोमें १३, श्रीप्रवचन-

और आषाढ़ चौमासीसे पचास दिने अवश्यही पर्युषणा पर्व करनेका सवत्र शास्त्रोंमें कहा है जिसका भी विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसे लेकर ऊपर तकमें अनेक जगह छप गया है इसलिये वर्तमान कालमें ५० दिनके हिसाबसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करना सो शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक सत्य होनेसे उसी मुजब वर्तनेवालोको जो सातवें महाशयजीने दूषण लगाया हैं सो नि केवल संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषण किया हैं इस बातको निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे। और देखिये बड़ेही आश्चर्यकी बात है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं और हरवर्षे गाम गाममें श्रीकल्पसूत्रका मूल पाठको तथा उन्हींकी वृत्तिको व्याख्यानमें बाँचते हैं उसी में ५० दिने पर्युषणा करनेका लिखा है उसी मुजबही दूसरे श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिन्होको अपनी मति कल्पनासे आज्ञाभङ्गका दूषण लगाना सो विवेकशून्य कदाग्रही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी और अपनी विद्वत्ताकी हासी करानेवालेके सिवाय दूसरा कौन होगा सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी तीसरी पक्तिसे चौदह वी पक्ति तक लिखा है कि (अधिक मासके माननेवालोको चौमासो क्षमापनाके समय 'पचण्ह मासाण दसण्ह पक्खाण पञ्चाड-त्तरसयराइदिआणमित्यादि' और सांवत्सरिक क्षमापनाके समय 'तेरसण्ह मासाण छब्बीसण्ह पक्खाण' पाठकी कल्पना करनी पड़ेगी। यदि ऐसा करोगे तो कल्पित आचार

होनेसे फलसे वञ्चित रहोगे, क्योकि शास्त्रमे तो 'चहुण्ह मासाण अट्ठण्ह पक्खाण' इत्यादि तथा 'बारसण्ह मासाण चउवीसण्ह पक्खाण' इत्यादि पाठ है इसके अतिरिक्त पाठ नही है उसके रहने पर यदि नई कल्पना करोगे तो कल्पना-कुशल, आज्ञाका पालन करनेवाला है या नहीं, यह पाठक स्वय विचार कर सकते हैं)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बडाही आश्चर्य्य उत्पन्न होता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि (ऊपरका लेख लिखते समय) किस जगह चली गई होगी सो मासवृद्धिके अभावकी बातको मासवृद्धि होतेभी बाल जीवोको लिख दिखाकरके अपनी बात जमानेके लिये दूसरोको मिथ्या दूषण लगाते हुवे उत्सूत्र भाषणसे ससार वृद्धिका भय हृदयमें क्यो नही लाते हैं क्योकि जिस जिस शास्त्रमें सावत्सरिक क्षामणाधिकारे बारह मास, चौबीश पक्ष लिखे है सो तो निश्चय करके मासवृद्धिके अभावसे चन्द्र सवत्सर सबधी है नतु मास वृद्धि होतेभी अभिवर्द्धित सवत्सर में क्योकि मास-वृद्धि होनेसे तेरह मास और छबीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास और चौबीश पक्षके क्षामणा करना ऐसा कोई भी शास्त्रमें नहीं लिखा है ।

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्रमें १, तथा तद्वृत्तिमें २, श्रीसूर्य्य-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ३, तथा तद्वृत्तिमें ४, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ५, तथा तद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथचूर्णिमें ७, श्रीजम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ८, तथा तीनकी पाच वृत्तियोमें १३, श्रीप्रवचन-

मारोटारमें १४, तथा तन्वृत्तिमे १५, श्रीज्योतिषकरड पयन्नामें १६ तथा तन्वृत्तिमें १७, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मास वृद्धि होनेसे अभिवद्धित सवत्सरके १३ मास, २६ पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे हैं और लौकिकपञ्चाङ्गमें भी अधिक मास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षका वर्ष लिखा जाता है और सब दुनिया भी धर्मकर्मके व्यवहारमें अधिकमासके कारणसे तेरह मास छवीश पक्षको मान्य करती है उसी मुजबही सब जैनी लोग भी वर्त्तते हैं इसलिये अधिक मासके होनेसे तेरह मास, छवीश पक्षका धर्म्म, पापको गिनतीमें लेकर उतनेही महिनोके धम्मकार्य्योंकी अनुमोदना और पाप कार्यो की आलोचना लेनी शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक है क्योंकि अधिक मास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षमें धर्म्म, और अधर्म्म, करके धमकार्य्योंकी गिनती नहीं करना और पापकार्य्योंकी आलोचना नही करना ऐसातो कदापि नही हो सकता है।

और जब श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया है और अभिवर्द्धित सवत्सर तेरह मास छवीश पक्षका कहा है तो फिर श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासे बारह मास चौवीश पक्ष कहके एक मासके दो पक्षोको छोड देना और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोका कहा हुवा अभिवर्द्धित सवत्सरके नामका खण्डन करना बुद्धिमान कैसे करेंगे अपितु कदापि नही। और श्रीअनन्त तीथकर गणधरादि महाराजोने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है तथापि सातवे महाशयजी उत्सूत्र भाषक होकरके उसीका

निषेध करनेके लिये कटिबद्ध तैयार है तो फिर तेरह मास छवीस पक्ष कहेंगे ऐसा तो सभव ही नही हो सकता है। जब अधिक मासको गिनतीमे लेनेको ही जिन्हको लज्जा आती है तो फिर तेरह मास छवीश पक्ष कहना तो विशेष उन्हको लज्जाकी बात होवे तो कोई आश्चर्य्य नहीं है।

और सातवे महाशयजी शास्त्रोके पाठ मजूर करने वाले होवे तो फिर अधिक मासको श्रीअनत तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने प्रमाण किया है जिसका अधिकार इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३२ से ४८ तक वगैरह कितनी ही जगह छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभते का उच्चारण किये पीछे इरियावही करनी वगैरह अनेक बातें शास्त्रोमें विस्तारपूर्वक कही है जिसको तो प्रमाण न करते हुवे उलटा उत्थापन करते हैं फिर शास्त्रके पाठकी बात करना सो कैसी विद्वत्ता कही जावे इस बातको पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं।

शका—अजी आप ऊपरमें अनेक शास्त्रोके प्रमाणोसें और युक्तियो से तेरह मास छवीश पक्षकी गिनती करके उतनीही आलोचना लेकर उतनेही क्षामणे सावत्सरिक प्रतिक्रमणमे करनेका दिखाते हो परन्तु सावत्सरिक प्रतिक्रमणकी विधिमें १३ मास, २६ पक्षके, क्षामणे करके उतने ही मासोकी आलोचना लेनी किसी शास्त्रमें क्यो नही लिखी है।

समाधान–भो देवानुप्रिय। सावत्सरिक प्रतिक्रमणकी विधि में १३ मास, २६ पक्ष के क्षामणे करके उतने ही मास पक्षोकी आलोचना लेनी किसी भी शास्त्र में नही लिखी है यह तेरा कहना अज्ञात सूचक है क्योंकि श्रीआव

श्यक चूर्णि मे १ तथा वृहद्‌वृत्ति में २, और लघुवृत्ति में ३ श्रीप्रवचन सारोद्धार में ४, तथा वृहद्‌वृत्ति में ५, और लघु-वृत्तिमें ६, श्रीधर्मरत्न प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीअभयदेव सूरिजी-कृत समाचारी ग्रन्थ में ८, श्रीजिनप्रभसूरिजीकृत विधि प्रपा समाचारी में ९, श्रीजिनपति सूरिजीकृत समाचारी में १०, श्रीसमाचारी शतकनामा ग्रन्थ में ११, श्रीपडावश्यक ग्रंथ में १२, श्रीतपगच्छ के श्रीजयचन्द्र सूरिजीकृत प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथ में १३, श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्ध-विधि वृत्ति में १४, प्राचीन प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथमें १५, और श्रीपूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोके चार ग्रंथोमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोमें देवसी और राइ प्रतिक्रमणके अनतर पाक्षिक प्रतिक्रमणके मुजबही चौमासी और सावत्सरिक प्रति क्रमण की विधि कही है और चौमासी सावत्सरिक शब्दका नामातर कहके चौमासी में २०, लोगस्स का कायोत्सर्ग तथा पाच साधुओको क्षमानेकी और सावत्सरिक में ४० लोगस्सका कायोत्सर्ग तथा ७ वा ९ वगैरह साधुओको क्षमाणेकी भिन्नता दिखाई है और क्षमाणा के अवसर में सवच्छर शब्द का ग्रहण करने में आता है । सवत्सर कहो । सावत्सरी कहो । सवच्छरी कहो । वार्षिक कहो । सबका तात्पर्य एक है और सवत्सर शब्द यद्यपि नक्षत्र सवत्सर १ । ऋतु सवत्सर २ । सूर्य सवत्सर ३ चद्र सवत्सर ४ और अभिवर्द्धित सवत्सर ५ इन पाच प्रकार के अर्थों में ग्रहण होता है परन्तु क्षामणा के अवसर में तो दो अर्थ ग्रहण करने में आते हैं जिसमें प्रथम मास वृद्धि के अभावसे चन्द्र सवत्सर के बारह मास और चौवीश पक्ष अनेक शास्त्रो में कहे हैं और दूसरा मास

वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरके तेरह मास और छवीश पक्ष भी अनेक शास्त्रोमें कहे हैं इसलिये सांवत्सरिक क्षामणेमें मास वृद्धिके अभावसे चंद्रसंवत्सर संबन्धी बारह मास चौवीस पक्ष कहने चाहिये और मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सर सम्बन्धी तेरह मास छवीश पक्ष कहने चाहियें और जिस शास्त्रमें बारह मास चौवीश पक्ष लिखे होवें सो चन्द्रसंवत्सर सम्बन्धी समझने चाहिये। इतने पर भी मासवृद्धि होनेसे तेरह मास छवीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास चौवीश पक्ष जो बोलते हैं सो कोई भी शास्त्र के प्रमाण बिना अपनी मति कल्पनाका वर्ताव करके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरके नामको खंडन करके उत्सूत्र भाषणसे संसार वृद्धिका कारण करते हुवे गुरुगम रहित श्रीजैनशास्त्रो के तात्पर्यको नही जाननेवाले हैं क्योंकि देखो सर्वत्र शास्त्रो में साधुके विहारकी व्याख्यामें नव कल्पि विहार साधुको करनेका कहा है सो मासवृद्धि के अभावसे होता है परन्तु शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मासवृद्धि होनेसे अवश्य करके १० कल्पिविहार करनेका प्रत्यक्ष बनता हैं तथापि कोई हठवादी शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मास वृद्धि होतेभी नवकल्पि विहार कहनेवालेको माया मिथ्या का दूषण लगता है क्योंकि जैसे कार्त्तिक पीछे साधुने विहार किया और मास कल्पके नियम मुजब विचरता है उसी समय शीतकाल में अथवा उष्णकाल में अधिक मास होगया तो उस अधिक मास में अवश्य करके दूसरे गाव विहार करेगा परन्तु एकही गाव में दो मास तक कदापि

नहीं ठहरेगा जब अधिक मास में विहार करके दूसरे गाव जायेगा तब उसीको दश कल्पि विहार हो जायेगा क्योंकि चारमास शीतकालके चारमास उष्णकालके तथा एक अधिक मासका और एक वर्षाऋतुके चारमासका इस तरहसे अवश्य करके दसकल्पि विहार होता है तथापि नव कल्पि कहने वाला तो प्रत्यक्ष माया सहित मिथ्याभाषण करनेवाला ठहरेगा सो पाठकवर्ग भी विचार सक्ते हैं और जैसे मास वृद्धि होनेसे दसकल्पि विहार करने में आता है तैसेही मासवृद्धि होनेसे तेरह मास छवीश पक्षोकी गिनती करके उतनेही क्षामणे करने में आते हैं सो आत्मार्थी श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही भव्यजीव तो मजूर करते हैं परन्तु उत्सूत्र भाषक कदाग्रही विद्वत्ता के अभिमानको धारण करनेवालोकी तो वातही जुदी है। और अधिक मासकी गिनती श्रीतीथकर गणधरादि महाराजोकी कहीहुइ है जिसको ससारगामी मिथ्यात्वी श्रीजिनाज्ञाका विराधकके सिवाय कौन निषेध करेगा और अधिक मासको माननेवालो को दूषण लगाकरके फिर आप निर्दूषण भी बनेगा। सो विवेकी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे। और अधिक मासके कारणसे ही तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित सवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने कहा है इस लिये अवश्य करके पाच मासका एक अभिवर्द्धित चौमासा भी मानना चाहिये।

(शङ्का) अधिक मासके कारणसे पाच मासका अभिवर्द्धित चौमासा किस शास्त्रमें लिखा है।

(समाधान) भो देवानुप्रिय ! ऊपर ही ३६३, ३६५ पृष्ठ में

१७ शास्त्रोके प्रमाण अधिक मासके कारणसे तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सर संबंधी छपे हैं उसी शास्त्रोंसे तथा युक्तियोंसे और प्रत्यक्ष अनुभवसे भी अधिक मासके कारणसे पांच मासका अभिवर्द्धित चौमासा प्रत्यक्ष सिद्ध होता है क्योंकि शीतकालके, उष्णकालके, और वर्षा-कालके चार चार मासका प्रमाण है परन्तु जैन पंचांगा-नुसार और लौकिक पंचांगानुसार जिस ऋतुमें अधिक मास होवे उसी ऋतुका अभिवर्द्धित चौमासा पांच मासके प्रमाणका मानना स्वयं सिद्ध है इस लिये अधिकमासके कार-णसें चौमासामे पांचमास दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीशपक्षका अवश्य करके व्यवहार करना चाहिये।

शङ्का—अजी आप अधिक मासके कारणसे चौमासामें पांच मास, दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार करना कहते हो सो क्षामणाके अवसरमें तो हो सकता है, परन्तु मुहपत्ती (मुखवस्त्रिका)की प्रतिलेखना करते, वांदणा देते, अतिचारोकी आलोचना करते वगैरह कार्योंमें चौमासीमें पांच मास, दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार कैसे हो सकेगा।

समाधान—भो देवानुप्रिय—जैसे मास वृद्धिके अभावसे चौमासीमें चार मास, आठ पक्षका और सांवत्सरीमें बारह मास, चौवीश पक्षका, अर्थ ग्रहण करनेमें आता है और मुख वस्त्रिकाकी प्रतिलेखनामें, वांदणा देनेमें, अतिचारोकी आलोचना वगैरह कार्योंमे उतने ही मास पक्षोकी भावना होती है, तैसे ही मास वृद्धि होनेके कारणसे चौमासीमें पांच मास, दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीस पक्षका

नहीं ठहरेगा जब अधिक मास में विहार करके दूसरे गाव जायेगा तब उसीको दश कल्पि विहार हो जावेगा क्योंकि चारमास शीतकालके चारमास उष्णकालके तथा एक अधिक मासका और एक वर्षाऋतुके चारमासका इस तरहसे अवश्य करके दसकल्पि विहार होता है तथापि नव कल्पि कहने वाला तो प्रत्यक्ष माया सहित मिथ्याभाषण करनेवाला ठहरेगा सो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं और जैसे मास वृद्धि होनेसे दसकल्पि विहार करने में आता है तैसेही मासवृद्धि होनेसे तेरह मास छवीश पक्षोकी गिनती करके उतनेही क्षामणे करने में आते हैं सो आत्मार्थी श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही भव्यजीव तो मजूर करते हैं परन्तु उत्सूत्र भाषक कदाग्रही विद्वत्ता के अभिमानको धारण करनेवालोकी तो वातही जुदी है। और अधिक मासकी गिनती श्रीतीर्थकर गणधरादि महाराजोकी कहीहुई है जिसको ससारगामी मिथ्यात्वी श्रीजिनाज्ञाका विराधकके सिवाय कौन निषेध करेगा और अधिक मासको माननेवालो को दूषण लगाकरके फिर आप निर्दूषण भी बनेगा। सो विवेकी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे। और अधिक मासके कारणसे ही तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित सवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने कहा है इस लिये अवश्य करके पाच मासका एक अभिवर्द्धित चौमासा भी मानना चाहिये।

(शङ्का) अधिक मासके कारणसे पाच मासका अभिवर्द्धित चौमासा किस शास्त्रमें लिखा है।

(समाधान) भो देवानुप्रिय! ऊपर ही ३६३, ३६४ पृष्ठ में

पूर्व पक्ष-अजी आप ऊपरोक्त शास्त्रोके अनुसार चन्द्र सवत्सरका और अभिवर्द्धित सवत्सरका अर्थ ग्रहण करके चन्द्रमें बारह मासादिसे और अभिवर्द्धितमें तेरह मासादिसे सावत्सरीमें क्षामणा करनेका लिखतेहो परन्तु किसी भी पूर्वाचार्यजीने कोई भी शास्त्रमें ऐसा खुलासा क्यो नहीं लिखा हैं।

उत्तर पक्ष-भो देवानुप्रिय! तेरेमें श्रीजैनशास्त्रोके तात्पर्यार्थको समझनेकी गुरुगम विना विवेक बुद्धि नहीं है इसलिये बालजीवोको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये वृथा ही ऐसी कुतर्क करता है क्योंकि जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने सवत्सर शब्दके चन्द्र और अभिवर्द्धितादि जुदे जुदे अर्थ कहे हैं जिसमें चन्द्रके बारह मास,चौवीस पक्ष और अभिवर्द्धितके तेरह मास,छवीश पक्ष खुलासे कह दिये है,इसलिये पूर्वाचार्योंने सवत्सर शब्दको ही ग्रहण करके व्याख्या करी है और यह तो अल्पबुद्धिवाला भी समझ सकता है कि जब अधिक मासकी गिनती शास्त्रोमें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने प्रमाण करी है और प्रत्यक्षमे वर्तते है इसलिये पापकृत्योकी आलोचनामें तो जरूर ही अधिक मास गिनतीमें लेना सो तो न्यायकी बात है परन्तु विवेकशून्य हठवादी होगा सो ऐसी कुतर्क करेगा कि—अधिक मासकी आलोचना कहा लिखी है जिसको यही कहना चाहिये कि अधिक मासको गिनतीमें लेकर फिर आलोचना नहीं करनी कहा लिखी है इसलिये ऐसी वृथा कुतर्कोके करनेसे मिथ्यात्व बढानेके सिवाय और कुछ भी लाभ नहीं उठा सकेगा, क्योंकि जब अधिक मासकी गिनती मजूर है तो फिर

अर्थ ग्रहण होता है इसलिये चौमासीमें और सांवत्सरिक कार्योंमें भी उतने ही मास पक्षोंकी भावना करनेमें आती है,

और जैसे चन्द्रसंवत्सरमें-सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें क्षामणाधिकारे 'बारसण्हं मासाणं चउव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयसट्ठी राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके बारह मास, चौबीश पक्ष, तीन सौ साठ (३६०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और चौमासी प्रतिक्रमणमें 'चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके चार मास, आठ पक्ष, एक सौ वीश रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है, तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी सांवत्सरिक क्षामणाधिकारे 'तेरसण्हं मासाणं छव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयनउइ राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके तेरह मास,छवीश पक्ष, तीन सौ नब्बे (३९०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी 'पंचण्हं मासाणं दसण्हं पक्खाणं पचासुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके पांच मास, दश पक्ष एक सौ पचास (१५०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है।

ऊपरमें श्रीआवश्यकचूर्णि, श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीधर्म रत्न प्रकरणवृत्ति और श्रीअभयदेवसूरिजीकृत समाचारी वगैरह शास्त्रोंके प्रमाण प्रतिक्रमण संबंधी लिखनेमें आये है, उन्ही शास्त्रोंके अनुसार (संवच्छर) संवत्सर शब्दके ऊपरोक्त न्यायानुसार चन्द्र,अभिवर्द्धित इन दोनु संवत्सरोंका अर्थ ग्रहण होनेसे क्षामणा संबंधी ऊपरका पाठ ऊपरोक्त शास्त्रोंके अनुसार ही समझना।

पूर्व पक्ष–अजी आप ऊपरोक्त शास्त्रोके अनुसार चन्द्र संवत्सरका और अभिवर्द्धित संवत्सरका अर्थ ग्रहण करके चन्द्रमें बारह मासादिसे और अभिवर्द्धितमें तेरह मासादिसे सांवत्सरीमें क्षामणा करनेका लिखतेहो परन्तु किसी भी पूर्वाचार्यजीने कोई भी शास्त्रमें ऐसा खुलासा क्यो नही लिखा हैं।

उत्तर पक्ष–भो देवानुप्रिय। तेरेमें श्रीजैनशास्त्रोके तात्पर्यार्थको समझनेकी गुरुगम विना विवेक बुद्धि नहीं है इसलिये बालजीवोको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये वृथा ही ऐसी कुतर्क करता है क्योंकि जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने संवत्सर शब्दके चंद्र और अभिवर्द्धितादि जुदे जुदे अर्थ कहे हैं जिसमें चन्द्रके बारह मास, चौवीस पक्ष और अभिवर्द्धितके तेरह मास, छवीश पक्ष खुलासे कह दिये हे, इसलिये पूर्वाचार्योंने संवत्सर शब्दको ही ग्रहण करके व्याख्या करी है और यह तो अल्पबुद्धिवाला भी समझ सकता है कि जब अधिक मासकी गिनती शास्त्रोमें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने प्रमाण करी है और प्रत्यक्षमें वर्तते हैं इसलिये पापकृत्योकी आलोचनामें तो जरूर ही अधिक मास गिनतीमें लेना सो तो न्यायकी बात है परन्तु विवेकशून्य हठवादी होगा सो ऐसी कुतर्क करेगा कि—अधिक मासकी आलोचना कहा लिखी है जिसको यही कहना चाहिये कि अधिक मासको गिनतीमें लेकर फिर आलोचना नहीं करनी कहा लिखी है इसलिये ऐसी वृथा कुतर्कोके करनेसे मिथ्यात्व बढानेके सिवाय और कुछ भी लाभ नहीं उठा-सकेगा, क्योंकि जब अधिक मासकी गिनती मंजूर है तो फिर

आलोचना तो स्वय मजूर हो चुकी और श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोका कहा हुया तथा प्रमाण भी करा हुआ अधिक मासको उत्सूत्र भाषण करके निषेध करते हैं और प्रमाण करने वालोको दूषण लगाते हैं सो पुरुष अधिक मासकी आलोचना नहीं करे तो उन्होंके मति कल्पनाकी बातही जुदी है परन्तु श्रीतीर्थंङ्करगणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने वालोंको तो अवश्य ही अधिक मासकी आलोचना करना उचित है। इतने पर भी जो नहीं करने वाले हैं सो श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक हैं।

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी भाव परपरानुसार चद्रसवत्सरका और अभिवर्द्धित सवत्सरका यथोचित अवसर पर जुदा जुदा अर्थ ग्रहण करके सावत्सरीमें क्षामणा करनेकी अनुक्रमे अखण्डित मर्यादा चली आती है इसलिये पूर्वाचार्यों ने अधिक मासकी गिनती करनेकी तो सभी जगह व्याख्या करी है परन्तु क्षामणा सम्बन्धी सवत्सरशब्द लिखा है जिसका कारण यही है कि अधिक मास प्रमाण हुआ तो क्षामणे करनेका तो स्वय प्रमाण हो चुका, जब सम्वेगी साधु मान लिया, तब महाव्रतधारी तो स्वय सिद्ध हो चुका। जब श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की मूर्त्तिको श्रीजिन सदृश मान्य करी तब उसीको वदना पूजना तो स्वय सिद्ध होगया। जब व्याख्यान वाचना मजूर कर लिया, तब जानकार तो स्वय सिद्ध होगया। ऐसे ऐसे अनेक दृष्टान्त प्रत्यक्ष हैं सो विशेष पाठकवर्गभी विचार सकते हैं।

और श्रीजैनशास्त्रोके तात्पर्यको नहीं जानने वाले

हठवादी पुरुषोंको तो श्रीप्रवचनसारोद्धार, तथा वृत्ति, और श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, और श्रीअभयदेवसूरिजी वगैरह पूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोंके ग्रन्थ और प्रतिक्रमण गर्भ हेतु, श्रीश्राद्धविधिवृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके अनुसार सांवत्सरीमें बारह मास चौवीश पक्षके क्षामणा करनेका ही नही बनेगा क्योंकि इन शास्त्रोंमें तो बारह मास चौवीश पक्ष भी नही लिखे है तो फिर बारह मासादिका अर्थ ऊपरके शास्त्रोंके अनुसार कैसे मान्य करेंगे और पांचोंही प्रतिक्रमणोंकी विधि ऊपरके शास्त्रोंमें कही है इसलिये ऊपर कहे सो शास्त्रोंके अनुसार पांच प्रतिक्रमणोंकी विधिको तो मान्य करनीही पड़ेगी और संवत्सर शब्दसे बारह मासका अर्थ ग्रहण करोगे तो मासवृद्धि होनेसे तेरह मासका भी अर्थ ग्रहण करनाही पड़ेगा सो तो न्यायकी बात हैं और पहिलेके कालमें ऐसी कुतर्क करनेवाले विवेकशून्य कदाग्रही पुरुष भी नही थे नहीं तो पूर्वाचार्य्यजी जरूर करके विस्तारसे खुलासा लिख देते क्योंकि जिस जिस समयमें जैसी जैसी कुतर्क करनेवाले पूर्वाचार्य्योंके समयमें जो जो हठवादी पुरुष थे जिन्होंको, समझानेके लिये वैसे वैसेही खुलासा पूर्वाचार्य्योंने विस्तारसे किया है जैसे कि ईश्वरवादी, नास्तिक, वगैरहोंके लिये और श्रीजिनमूर्त्तिको तथा जिनमूर्त्तिकी पूजा सम्बन्धी शास्त्रोक्त विधिको वर्णन करी हैं, परन्तु मूर्तिके और पूजाके सम्बन्धमें वर्त्तमान समय जैसी युक्तिया लिखनेकी जरूरत नही थी जिसका कारण कि—उस समय श्रीजिनमूर्तिके तथा उसीकी पूजाके निषेधक ढूंढिये, तेरहपन्थी, वगैरह

कुयुक्तिया करने वाले पुरुष नहीं थे परन्तु वर्तमान समयमें श्रीजिनमूर्तिके निन्दक विशेष कुयुक्तिया करने लगे तो वर्तमान कालमें उसीके स्थापनेके लिये विशेष युक्तिया भी होती है।

तैसेही इस वर्तमान कालमें तेरह मास उबीश पक्षके निषेध करने वाले सातवें महाशयजी जैसे शास्त्रोंके तात्पर्य्यको नहीं जानने वाले पैदा हुवे तो उसीको स्थापन करनेके लिये इतनी व्याख्या भी मेरेको इस जगह करनी पड़ी नहीं तो क्या प्रयोजन था, अब न्यायदृष्टिवाले सत्य-ग्राही भव्यजीवोंको मेरा इतनाही कहना है कि जैसे श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोने श्रीसूयगडाङ्गजी, श्रीदश-वैकालिकजी, श्रीउत्तराध्ययनजी वगैरह शास्त्रोमें साधुके उद्देश करके व्याख्या करी है उसीका ही यथोचित साध्वीके लिये भी समझना चाहिये और श्रीवन्दीता-सूत्रकी–"चउत्थे अणुव्वयंमि, निच्चं परदारगमण विरइओ॥ आयरियमप्पसत्थे, इत्थपमायप्पसगेण ॥ १५ ॥ अपरि गहिआ इत्तर" इत्यादि गाथायोमें और अतिचारोकी आलोचना वगैरहमें श्रावकका नाम उद्देश करके व्याख्या करी है उसीकोही यथोचित श्राविकाके लियेही समझना चाहिये इतने पर भी कोई विवेक शून्य कुतर्क करे कि— अमुक अमुक बातें साधुके और श्रावकके लिये तो कही है परन्तु साध्वी और श्राविकाके लिये तो नहीं कही है ऐसी कुतर्क करनेवालेको अज्ञानीके सिवाय, तत्त्वज्ञ पुरुष और क्या कहेंगे । तैसेही जिस जिस शास्त्रमें चन्द्रसवत्सरकी अपेक्षासे जो जो बातें कही है उसीकेही अनुसार यथोचित अवसरमें अभिवर्द्धित सवत्सरसम्बन्धी भी समझनी चाहिये

तथापि विवेकशून्य हठवादी कोई ऐसी कुतर्क करे कि—अमुक शास्त्रमें मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसम्वत्सरके लिये बारह मासके क्षामणे कहे हैं परन्तु मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सम्वत्सरके लिये तो कुछ नही कहा है, ऐसी कुतर्क करने वालेको अज्ञानीके सिवाय, तत्त्वज्ञ पुरुष और क्या कहेंगे क्योंकि एकके उद्देश्यसे जो व्याख्या करी होवे उसीके ही अनुसार दूसरेके लियेही यथोचित समझनेकी श्रीजैनशास्त्रोंमें मर्य्यादा है इसलिये जूदे नाम उद्देश्य करके जूदी जूदी व्याख्या शास्त्रकार नही करते हैं परन्तु जो सत्यग्राही विवेकी आत्मार्थी होवेंगे सो तो सद्गुरुकी सेवासे श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझके सत्यबात ग्रहण करेंगे और विवेक रहित हठवादी होगे जिसके कर्मोंका दोष नतु शास्त्रकारोंका, जैसे—श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमे प्रसिद्ध बात है कि–कोई साधु स्थण्डिले जङ्गलमे गयाथा सो कुछ ज्यादा देरीसे गुरु पास आया तब उस साधुको गुरु महाराजने देरीसे आनेका कारण पूछा तब उस साधुने रस्तेमे नाटकीये लोगोका नाटक देखनेके कारण देरीसे आना हुवा सो कहा, तब गुरु महाराजने नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेकी साधुको मनाई करी तब विवेकी बुद्धिवाले चतुर थे वे तो नाटकणी लुगाइयोका नाटक वर्जनेका भी स्वय समझ गये, और विवेक बिनाके थे सो तो नाटकणी लुगाइयोका नाटक देखनेको खडे रहे, तब गुरु महाराजके कहने पर विवेक रहित होनेसे बोलेकी आपने नाटकीये लोगोका नाटक देखनेकी मनाई करीथी परन्तु नाटकणी लुगाईयों का नाटक देखनेकी तो मनाई नही करी थी तब गुरु महा-

राजने कहा कि जब नाटकणीयें लोगोंका नाटक वर्जन किया तब नाटकणी लुगाइयोंका नाटक तो विशेष रागका कारण होनेसे स्वय वर्जन समझना चाहिये तब उन्होंने गुरु महाराजके कहने मुजबही मजूर किया—और हठवादी मूर्ख थे सो तो गुरु महाराजकोही दूषित ठहराने लगे कि आपने नाटकीये लोगोंका नाटक वर्जन किया तो फिर नाटकणी लुगाइयोंका नाटक क्यों वर्जन नहीं किया—

ऊपरके लेखका क्षामणाके सम्बन्धमें तात्पर्य ऐसा है जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने सवत्सर शब्दके चन्द्र, अभिवर्द्धितादि जूदे जूदे भेद प्रमाण सहित कहे हैं और सावत्सरिक क्षामणाके अधिकारमें सवत्सर शब्दसे व्याख्या करी है जिसमें मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसवत्सरमें बारह मासादिसे क्षामणा करनेमे आते हैं उसीकेही अनुसार विवेक बुद्धिवाले चतुर होवेंगे सो तो मासवृद्धि होनेसे तेरह मासादिसे क्षामणा करनेका स्वय समझ लेवेंगे और विवेक रहित होवेंगे सो शास्त्रोंके अनुसार युक्तिपूर्वक गुरु महाराजके समझानेसे मान्य करेंगे और विवेक रहित हठवादी होवेंगे सो तो शास्त्रोंका प्रमाण और युक्ति होने पर भी शास्त्रकार महाराजोंकोही उलटे दूषित ठहरावेंगे कि अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करके तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित सवत्सरको शास्त्र कार लिख गये तो फिर अधिकमास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे करनेका क्यों नहीं लिख गये, इस तरहसे अपनी वक्र जडता प्रगट करके बालजीवोंको भी मिथ्यात्वमे फँसावेंगे, पर भवका भय नही रक्खेंगे,

और शास्त्रकारोंको मिथ्या दूषण लगाके, फिर आप निर्दूषण भी बनेंगे, सो तो कलियुगकाही प्रभावके सिवाय और क्या होगा सो तत्त्वज्ञ पुरुष स्वय विचार लेवेंगे।

प्रश्न —श्रीजैनशास्त्रोंमें चन्द्रसवत्सरके ३५४ दिनका और अभिवर्द्धित सवत्सरके ३८३ दिनका प्रमाणकहा है फिर सावत्सरी सम्बन्धी चन्द्रसवत्सरमें ३६० दिनके और अभिवर्द्धित सवत्सर में ३९० दिनके क्षामणे करनेका आप कैसे लिखते हो।

उत्तर —भो देवानुप्रिय, श्रीजिनेन्द्र भगवानोका कहा हुआ नयगर्भित श्रीजिन प्रवचनकी शैली गुरुगम और अनुभव विना प्राप्त नहीं हो सकती है क्योंकि यद्यपि श्रीजैनशास्त्रोंमें चन्द्रसवत्सरके ३५४ दिन, ११ घटीका, और ३६ पलका प्रमाण कहा है और अभिवर्द्धित सवत्सरके ३८३ दिन, ४२ घटीका, और ३४ पलका प्रमाण कहा है सो चन्द्रके विमानकी गतिके हिसावसे निश्चय नय सवन्धी समझना चाहिये और जो चन्द्रसवत्सरमें ३६० दिनके और अभिवर्द्धितमें ३९० दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं सो दुनियाकी रीतिसे, व्यवहार नय करके, लोगोको सुखसे उच्चारण हो सके इसलिये बहुत अपेक्षासे समझना चाहिये। और व्यवहार नयसे चन्द्रसवत्सरमे ३६० दिनका और अभिवर्द्धित सवत्सरमें ३९० दिनका उच्चारण करके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नय करके तो जितने समयसे सावत्सरीमें क्षामणे करनेमें आवेंगे उतनेही समय तकके पापकृत्योकी आलोचना हो सकेगी सो विशेष पाठकवर्ग भी स्वय विचार लेवेंगे और चौमासी पाक्षिक देवसीराइ प्रतिक्रमण सम्बन्धी भी निश्चय नयकी और व्यवहार

राजने कहा कि जब नाटकनीयें लोगोंका नाटक वर्णन किया तब नाटकणी लुगाइयोंका नाटक तो विशेष रागका कारण होनेसे स्वय वर्जन समझना चाहिये तब उन्होंने गुरु महाराजके कहने मुजबही मजूर किया—और हठवादी मूर्ख थे सो तो गुरु महाराजकोही दूषित ठहराने लगे कि आपने नाटकीये लोगोंका नाटक वर्जन किया तो फिर नाटकणी लुगाइयोंका नाटक क्यों वर्जन नहीं किया—

ऊपरके लेखका क्षामणाके सम्बन्धमें तात्पर्य्य ऐसा है जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने संवत्सर शब्दके चन्द्र, अभिवर्द्धितादि जूदे जूदे भेद प्रमाण सहित कहे हैं और सांवत्सरिक क्षामणाके अधिकारमें संवत्सर शब्दसे व्याख्या करी है जिसमें मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें बारह मासादिसे क्षामणा करनेमे आते हैं उसीकेही अनुसार विवेक बुद्धिवाले चतुर होवेंगे सो तो मासवृद्धि होनेसे तेरह मासादिसे क्षामणा करनेका स्वय समझ लेवेंगे और विवेक रहित होवेंगे सो शास्त्रोंके अनुसार युक्तिपूर्वक गुरु महाराजके समझानेसे मान्य करेंगे और विवेक रहित हठवादी होवेंगे सो तो शास्त्रोंका प्रमाण और युक्ति होने पर भी शास्त्रकार महाराजोंकोही उलटे दूषित ठहरावेंगे कि अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करके तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सरको शास्त्र कार लिख गये तो फिर अधिकमास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे करनेका क्यों नहीं लिख गये, इस तरहसे अपनी वक्र जडता प्रगट करके बालजीवोंको भी मिथ्यात्वमे फँसावेंगे, पर भवका भय नहीं रक्खेंगे,

महाशयजी इतने विद्वान् कहलाते है तथापि श्रीजैन शास्त्रों के तात्पर्य समझे बिना अपने कदाग्रहके कल्पित पक्षको स्था पन करनेके लिये वृथाही क्यों उत्सूत्र भाषण करके अपनी अज्ञता प्रगट करी है क्योंकि लौकिक ज्योतिषके गणित मुजब वर्तमानिक पञ्चाङ्गमें तिथियोंकी हानी और वृद्धि होनेका अनुक्रमे नियम है और अधिकमासकी तो सर्वथा करके वृद्धि ही होनेका नियम है परन्तु तिथिकी हानी होनेसें १४ दिन का पक्षकी तरह, मासकी हानी होकर ११ मासका वर्ष कदापि नही होता है इसलिये तिथिकी हानी अथवा वृद्धि होवे तो भी दुनियाके व्यवहारमें १५ दिनका पक्ष कहा जाता है जिससे क्षामणे भी १५ दिनके करनेमे आते है और मासकी तो हानी न होते, सर्वथा वृद्धिही होती है इसलिये दुनियाके व्यवहारसे भी तेरह मासका वर्ष कहा जाता है परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासका वर्ष कोई भी बुद्धिमान विवेकी पुरुष नही कहते है जिससे मासवृद्धि होनेसें क्षामणे भी १३ मासकेही करनेमें आते है, परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासके क्षामणे करनेका कोई भी बुद्धिवाले विवेकी पुरुष नही मान्य कर सकते है। इसलिये तिथियोंकी हानि वृद्धि होनेका नियम होनेसें और मासकेसदा वृद्धि होनेका नियम होनेसे दोनुका एक सदृश व्यवहार होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो कदापि नही हो सकता है।

और निश्चय व्यवहारादि नय करके श्रीजिन प्रवचन चलता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें १६ दिनका अथवा १४ दिनका पक्ष होते भी व्यवहार नयकी अपेक्षामें १५ दिनके क्षामणे करनेमे आते हैं परन्तु निश्चय नयकी अपेक्षासे तो

नयरी अपेक्षा पेंहिले आगे लिखुंगा—

अब सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंको न्यायदृष्टिसे विचार करना चाहिये कि अधिक मासके कारणसे चौमासीमें पांच मासादिसे और सांवत्सरीमें १३ मासादिसे क्षामणे करनेका अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार युक्तिपूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वयं सिद्ध है सो तो मैंने ऊपरमें ही लिख दिखाया है परन्तु सातवें महाशयजी कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना पांच मास होते भी चार मासके क्षामण करने का और तेरह मास होते भी १२ मासके क्षामणे करनेका लिख दिखाके फिर शास्त्रानुसार पांच मासके और तेरह मासके क्षामणे करने वालोंको दूषण लगाते हैं सो अपने विद्वत्ताकी हांसी करा करके, संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषणके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्गको विचार करना चाहिये।

और भी आगे पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी १५ वीं पङ्क्तिमें २१वी पङ्क्ति तक लिखा है कि-(दूसरी बात यह है किसी समय सोलह (१६) दिनका पक्ष होता है और कभी चौदह दिनका पक्ष होता है उस समय 'एक पक्खाण पन्नरसण्ह दिवसाण' इस पाठको छोडकर क्या दूसरी पाठकी कल्पना करते हो यदि नही करते तो एक दिनका प्रायश्चित्त बाकी रह जायगा जैसे तुम्हारे मतमें 'चउण्ह मासाण' इत्यादि पाठ कहनेसे अधिकमासका प्रायश्चित्त रह जाता है)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बडाही विचार उत्पन्न होता है कि—सातवें

महाशयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं तथापि श्रीजैन शास्त्रो के तात्पर्य समझे विना अपने कदाग्रहके कल्पित पक्षको स्थापन करनेके लिये वृथाही क्यों उत्सूत्र भाषण करके अपनी अज्ञता प्रगट करी है क्योंकि लौकिक ज्योतिषके गणित मुजब वर्तमानिक पञ्चाङ्गमें तिथियाकी हानी और वृद्धि होनेका अनुक्रमे नियम है और अधिकमासकी तो सर्वथा करके वृद्धि ही होनेका नियम है परन्तु तिथिकी हानी होनेसें १४ दिन का पक्षकी तरह, मासकी हानी होकर ११ मासका वर्ष कदापि नहीं होता है इसलिये तिथिकी हानी अथवा वृद्धि होवे तो भी दुनियाके व्यवहारमें १५ दिनका पक्ष कहा जाता है जिससे क्षामणे भी १५ दिनके करनेमे आते हैं और मासकी तो हानी न होते, सर्वथा वृद्धिही होती है इसलिये दुनियाके व्यवहारमें भी तेरह मासका वर्ष कहा जाता है परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासका वर्ष कोई भी बुद्धिमान विवेकी पुरुष नही कहते हैं जिससे मासवृद्धि होनेसें क्षामणे भी १३ मासकेही करनेमें आते हैं, परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासके क्षामणे करनेका कोई भी बुद्धिवाले विवेकी पुरुष नही मान्य कर सकते है। इसलिये तिथियाकी हानि वृद्धि होनेका नियम होनेसें और मासकेसदा वृद्धि होनेका नियम होनेसे दोनुका एक सदृश व्यवहार होनेका सातवें महाशयजी ठहराते है सो कदापि नही हो सकता है।

और निश्चय व्यवहारादि नय करके श्रीजिन प्रवचन चलता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें १६ दिनका अथवा १४ दिनका पक्ष होते भी व्यवहार नयकी अपेक्षामें १५ दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नयकी अपेक्षासे तो

१६ दिनके अथवा १५ दिनके जितने समय तक जितने पुण्य पापादि कार्य करनेमें आये होवे उतनेही पुण्य कार्योंकी अनुमोदना और पापकार्योकी आलोचना करनेमें आवेगी, देवसी राइ प्रतिक्रमणवत् अर्थात् देवसी और राइप्रतिक्रमणका साम और सवेरमें चार चार पहरका काल कहा है परन्तु कोई कारण योग सध्या समय देवसी प्रतिक्रमण न होसके तो रात्रिका बारह बजे (मध्यानरात्रि) के समय तक भी प्रतिक्रमण करनेका अवसर मिलनेसे करनेमें आसके तब निश्चय नय करके तो छ पहरके पाप कार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें चार पहरके अर्थ वाला देवसी शब्द ग्रहण करके देवसी क्षामणे करनेमें आवेंगे अब देखिये अर्द्धरात्रि तक छ पहरमें प्रतिक्रमण करके भी व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करनेमें आवे और पुन कारण योगे पहर रात्रि शेष रहते ३ बजेमेंही दूसरीवार राइ (रात्रि) प्रतिक्रमणकरनेका कारण पड गया तो एक पहर अथवा सवा पहरमें रात्रि प्रतिक्रमण करती समय निश्चय नय करके तो उतनेही समय तकके पापकार्योकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला राइ शब्दही ग्रहण करनेमेंआवेगा तैसेही लौकिक पचाङ्ग मुजब १४ दिने किंवा १५ दिने अथवा १६ दिने पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमे आवे तो निश्चय नय करके तो उतनेही दिनोके पापकार्योकी आलोचना करनेमें आवेगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनका पक्ष कहनेमें आता है इसलिये१५ दिनके अर्थवाला पाक्षिक शब्द ग्रहण करके क्षामणे भी करनेमें आते है, परन्तु व्यवहार नयका

भङ्गके दूषणसें डरनेवाले अन्य कल्पना कदापि नही करेंगे सो विवेकी सज्जन स्वयविचार लेवेंगे ।

और सातवें महाशयजी १६ दिनका पक्षमें १५ दिनके क्षामणे करनेसें एक दिनका प्रायश्चित बाकी रहने सबधी और १४ दिनका पक्षमें भी १५ दिनके क्षामणे करनेसें एकदिन का बिना पाप किये भी प्रायश्चित ज्यादा लेने सम्बन्धी ऊपरके लेखसे ठहराते है सो नि केवल अज्ञातपनसे व्यवहार नयका भङ्ग करते हैं जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा उल्लघन रूप उत्सूत्र भापक बनते हैं सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ।

और यद्यपि श्रीजैनपञ्चाङ्गकी गिनतीसें तिथि की वृद्धि होनेका अभाव था तथा पौष और आषाढ मासकी वृद्धि होनेका नियम था परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें तिथि की वृद्धि होनेका गिनती मुजब नियम है और हरेक मासोकी वृद्धि होनेका भी नियम है । जब जैन पञ्चाङ्गके विना लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब तिथिकी वृद्धिको सातवें महाशयजी मान्य करके सोलह (१६) दिनका पक्षको मजूर करते हैं तो फिर लौकिक पञ्चाङ्गानुसार श्रावण भाद्रपदादि मासोकी वृद्धि होती है जिसको मान्य नही करते हुवे उलटा निषेध करनेके लिये पर्युषणा विचारके लेखमें वृथा क्यों परिश्रम करके निष्पक्षपाती विवेकी पुरुषोसे अपनी हासी करानेमें क्या लाभ उठाया होगा सो मध्यस्थ दृष्टिवाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे—

और (जैसे तुम्हारे मतमें 'चउदह मासाण' इत्यादि पाठ कहनेसें अधिक मासका प्रायश्चित्त रह जाता है) सातवें महाशयजीके ऊपरके लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि—

१६ दिनके अथवा १४ दिनके जितने समय तक जितने पुण्य पापादि कार्य करनेमें आये होवे उतनेही पुण्य कार्योंकी अनुमोदना और पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी, देवसी राइ प्रतिक्रमणवत् अर्थात् देवसी और राइप्रतिक्रमणका साम और सवेरमें चार चार पहरका काल कहा है परन्तु कोई कारण योग सध्या समय देवसी प्रतिक्रमण न होसके तो रात्रिका बारह बजे (मध्यानरात्रि) के समय तक भी प्रतिक्रमण करनेका अवसर मिलनेसे करनेमें आसके तब निश्चय नय करके तो छ पहरके पाप कार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करके देवसी क्षामणे करनेमें आवेंगे अब देखिये अर्द्धरात्रि तक छ पहरमें प्रतिक्रमण करके भी व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करनेमें आवे और पुन कारण योगे पहर रात्रि शेष रहते ३ बजेमेंही दूसरीवार राइ (रात्रि) प्रतिक्रमणकरनेका कारण पड गया तो एक पहर अथवा सवा पहरमें रात्रि प्रतिक्रमण करती समय निश्चय नय करके तो उतनेही समय तकके पापकार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला राइ शब्दही ग्रहण करनेमेंआवेगा तैसेही लौकिक पचाङ्ग मुजब १४ दिने किंवा १५ दिने अथवा १६ दिने पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमे आवे तो निश्चय नय करके तो उतनेही दिनोके पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनका पक्ष कहनेमें आता है इसलिये१५ दिनके अर्थवाला पाक्षिक शब्द ग्रहण करके क्षामणे भी करनेमें आते है, परन्तु व्यवहार नयका

सानको गिनतीमें ले करकेही पर्युषणा करनेका कहा है तथापि सातवे महाशयजी पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैनशास्त्रो के तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञात पनेसे उत्सूत्र भाषक हो करके अधिक मासका निषेध करनेके लिये गच्छपक्षी बाल-जीवोको मिथ्यात्वमें फँसाने वाली अनेक कुतर्कोंका सग्रह करते भी अपने मतव्यको सिद्ध न कर सके तब लौकिक व्यव-हारका सरणा लिया तथापि लौकिक व्यवहारसे भी उलटे वर्त्तते हैं क्योंकि लौकिक जन (वैष्णवादि लोग) तो अधिक मासमें विवाहादि ससारिक कार्य्य छोड़कर सपूर्ण अधिक मासको बारहमासोसे विशेष उत्तम जान करके 'पुरुषोत्तम अधिक मास' नाम रख्खके दान पुण्यादि धर्मकार्य्य विशेष करते है और अधिक मासके महात्मकी कथा अपने अपने घर घरमे ब्राह्मणोसे बचाकर सुनते है। अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि—लौकिकजन भी जैसे बारह मासोमे ससारिक व्यवहारमें वर्त्तते है तैसेही अधिक मास होनेमें तेरह मासोमें भी वर्तते हैं और बारह मासोसे भी विशेष करके दानपुण्यादि धर्मकार्य्य अधिक मासमें ज्यादा करते हैं और विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य नही करते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्यौंको तो नही छोडते हैं और सातवें महाशयजी लौकिक जनकी बातें लिखते हैं परन्तु लौकिक जनसे विरुद्ध हो करके धर्मकार्यौंमें अधिक मासके गिनती का सर्वथा निषेध करते कुछ भी विवेक बुद्धिसे हृदयमें विचार नही करते है क्योंकि लौकिक जन की बात सातवें महाशयजी लिखते हैं तबतो लौकिकजन की तरहही सातवें महाशयजीको भी वर्त्ताव करना चाहिये सो तो नही करते

अधिक मासको मानने वालोंके मतमें तो अधिक मास होने से पाच मास होते भी चार मास कहनेसे पांचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त बाकी रह जाता है इसलिये अधिकमास होनेसे पांच मास जरूर बोलने चाहिये सो तो बोलतेही हैं इसका विशेष निर्णय ऊपरमें हो गया है, परन्तु पाँच मास होते भी चार मास बोलनेसे पाँचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त उसीके अन्तर्गत आजानेका ऊपरके अक्षरोंसे सातवें महाशयजीने अपने मतमें ठहरानेका परिश्रम किया है सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे मिथ्यात्व बढ़ानेके लिये अज्ञ जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेका काय्य किया है क्योंकि अधिक मास होनेसे पाचमासके दश पक्ष प्रत्यक्ष में होते हैं और खास सातवें महाशयजी वगैरह भी सब कोई अधिक मासके कारणसे पाँच मासके दश पाक्षिकप्रतिक्रमण भी करते हैं फिर पाचमास दश पक्ष नहीं बोलते हैं सो यह तो 'मम वदने जिह्वा नास्ति' की तरह बाललीलाके सिवाय और क्या होगा सो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके पाँचवें पृष्ठकी प्रथम पङ्क्तिसे छट्ठी पङ्क्तितक लिखा हैं कि (अब लौकिक व्यवहार पर चलिए लौकिक जन अधिक मासमें नित्यकृत्य छोडकर नैमित्तिककृत्य नही करते जैसे यज्ञोपवीतादि अक्षयतृतीया दीपालिका इत्यादि, दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपद शुक्लपञ्चमी से पूर्णिमा तक दश लाक्षणिक पर्व मानते हैं)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो—श्रीजिनेन्द्र भगवानोने तो अधिक

और अक्षयतृतीया दीपालिकादि सम्बन्धी आगे लिख-
नेमें आवेगा। और (दिगम्बर लोग भी अधिक मासको
तुच्छ मानकर भाद्रपदशुक्ल पञ्चमीसे पूर्णिमा तक दशलाक्ष-
णिकपर्व मानते है) सातवें महाशयजीका इस लेखपर
मेरेको इतनाही कहना है कि–दिगम्बर लोग तो–केवलीको
आहार, स्त्रीको मोक्ष, साधुको वस्त्र, श्रीजिनमूर्त्तिको आ-
भूषण, नवाङ्गी पूजा वगैरह बातोंको निषेध करते हैं और
श्वेताम्बर मान्य करते हैं इसलिये दिगम्बर लोगोंकी अधिक
मास सम्बन्धी कल्पनाको श्वेताम्बर लोगोंको मान्य करने
योग्य नही है क्योंकि श्वेताम्बरमें पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण
अधिक मासको गिनतीमे करने सम्बन्धी मौजूद हैं इसलिये
दिगम्बर लोगोंकी बातको लिखके सातवें महाशयजीने
अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेको उद्यम
करके बालजीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं सो उत्सूत्र भाषणरूप है
और सातवें महाशयजी दिगम्बर लोगोंका अनुकरण
करते होंगे तब तो ऊपरकी दिगम्बर लोगोंकी बातें सातवें
महाशयजीको भी मान्य करनी पड़ेंगी यदि नहीं मान्य
करते होवें तो फिर दिगम्बर लोगोंकी बात लिखके वृथा
क्यों कागद काले करके समयको खोया सो पाठकवर्ग
विचार लेवेंगे—

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके पाँचवे पृष्ठकी
९ वी पङ्क्तिसे छट्ठे पृष्ठकी पाँचवी पङ्क्ति तक लिखा है कि–
[अधिकमास सज्ञा पञ्चेन्द्रिय नहीं मानते, इसमें कोई
आश्चर्य नही है क्योंकि एकेन्द्रिय वनस्पति भी अधिक
मासमें नहीं फलती। जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होने

हुये उलटेही वर्त्तते हैं सो भी बडेही आश्चर्यकी बात है।

और यज्ञोपवीत, विवाह वगैरह मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य तो चौमासेमें, मलमासमें, सिंहस्थमें, अधिक मासमें, रिक्ता तिथिमें, और ग्रहण वगैरह कितनेही योगोंमें नहीं होते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तका पर्युषणादि धर्म कार्य तो चौमासेमें रिक्ता तिथि होने पर भी करनेमें आते हैं इसलिये मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य अधिक मासमें न होनेका दिखाकरके बिना मुहूर्त्त का पर्युषणा पर्वका निषेध करना सो सर्वथा उत्सूत्र भाषण करके भोले जीवोको मिथ्यात्वमें फसानेसे संसार वृद्धिका कारण है सो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं।

और यज्ञोपवीत विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य अधिकमासमें नहीं होनेका सातवें महाशयजी लिख दिखा करके पर्युषणा भी अधिक मासमें नहीं होनेका ठहराते हैं तब तो सिंहस्थ, सिंहराशीपर गुरुका आना होवे तब तेरह मासमें यज्ञोपवीत विवाहादि मुहूर्त्त निमित्त कार्य्य नहीं करनेमें आते हैं उसीकेही अनुसार सातवें महाशयजीको भी तेरह मास में पर्युषणादि धर्म कार्य्य नही करना चाहिये। यदि करते होवे तो फिर गच्छ कदाग्रही बाल जीवोको मिथ्यात्वमें फँसानेका वृथा क्यों परिश्रम किया सो तत्वज्ञ पुरुष स्वय विचार लेवेंगे—और मुहूर्त्त निमित्तिक ससारिक कार्योंके लिये तथा बिना मुहूर्त्तका धर्म कार्योंके लिये विशेष विस्तारसे चौथे महाशयजी न्यायाम्भोनिधिजीके लेखकी समीक्षामें इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १९४ से २०४ तक अच्छी तरहसे छप गया है सो पढनेसे सर्व नि सदेह हो जावेगा।

और अक्षयतृतीया दीपालिकादि सम्बन्धी आगे लिख-नेमें आवेगा । और (दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपदशुक्ल पञ्चमीसे पूर्णिमा तक दशलाक्ष-णिकपर्व मानते है) सातवें महाशयजीका इस लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि–दिगम्बर लोग तो–केवलीको आहार, स्त्रीको मोक्ष, साधुको वस्त्र, श्रीजिनमूर्त्तिको आ-भूषण, नवाङ्गी पूजा वगैरह बातोंको निषेध करते है और श्वेताम्बर मान्य करते है इसलिये दिगम्बर लोगोकी अधिक मास सम्बन्धी कल्पनाको श्वेताम्बर लोगोको मान्य करने योग्य नही है क्योंकि श्वेताम्बरमें पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण अधिक मासको गिनतीमे करने सम्बन्धी मौजूद हैं इसलिये दिगम्बर लोगोकी बातको लिखके सातवें महाशयजीने अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेको उद्यम करके बालजीवोको कदाग्रहमें गेरे है सो उत्सूत्र भाषणरूप है और सातवें महाशयजी दिगम्बर लोगोका अनुकरण करते होंगे तब तो ऊपरकी दिगम्बर लोगोकी बातें सातवें महाशयजीको भी मान्य करनी पडेंगी यदि नहीं मान्य करते होवे तो फिर दिगम्बर लोगोकी बात लिखके वृथा क्यों कागद काले करके समयको खोया सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे—

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके पाँचवे पृष्ठकी ७ वी पङ्क्तिसे छट्ठे पृष्ठकी पाँचवी पङ्क्ति तक लिखा है कि–[अधिकमास सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय नही मानते, इसमें कोई आश्चर्य नही है क्योंकि एकेन्द्रिय वनस्पति भी अधिक मासमें नही फलती । जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होने

वाला होगा यह दूसरेही श्रावणमें उत्पन्न होगा न कि पहिलेमें। जैसे दो चैत्र मास होंगे तो दूसरे चैत्रमें आम्रादि फलेंगे किन्तु प्रथम चैत्रमें नहीं। इस विषयकी एक गाथा आवश्यकनिर्युक्तिके प्रतिक्रमणाध्ययनमें यह है—

"जइ फुल्ला कणिआरया चूअग अहिमासयमि घुट्ठ मि।
तुह न खम फुल्लेउ जइ पच्चंता करिति डमराइं" ॥ १ ॥

अर्थात् अधिकमासकी उद्घोषणा होनेपर यदि कर्णिकारक फूलता है तो फूले, परन्तु हे आम्रवृक्ष! तुमको फूलना उचित नहीं है, यदि प्रत्यन्तक (नीच) अशोभन काम्य करते हैं तो क्या तुम्हें भी करना चाहिये?, सज्जनोंको ऐसा उचित नहीं है।

इस बातका अनुभव पाठकवर्ग करें यदि अभ्यासकी सफलता हो तो जैसे कुशाग्रबुद्धि आज्ञानिबद्ध हृदय आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमे नही लिया है उसी तरह तुम्हें भी लेखामें नही लेना चाहिये। जिससे पूर्वोक्त अनेक दोषोंसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे।]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि—हे सज्जन पुरुषो सातवे महाशयजीने गच्छ पक्षी बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये ऊपरके लेखमें वृथा क्यो परिश्रम किया है क्योंकि प्रथम तो (अधिक मास संज्ञी पञ्चेन्द्रिय नही मानते) यह लिखनाही प्रत्यक्ष महा मिथ्या है क्योंकि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय सब कोई अधिक मासको अवश्य करके मानते है सो तो प्रत्यक्ष अनुभवसेही सिद्ध है और 'एकेन्द्रिय वनस्पति अधिक मासमें नही फलनेका' सातवें महाशयजी लिखते हैं सो भी

मिथ्या है क्योंकि वनस्पतिका फलना और फूलोंका, फलोका उत्पन्न होना सो तो समय, हवा, पानी, ऋतुके, कारणसे होता है इसलिये वनस्पतिकी समय (स्थिति) परिपाक न हुई होवे तथा हवा भी अच्छी न होवे जलका सयोग न मिले तो अधिक मासके विना भी वनस्पति नही फूलती है और फल भी उत्पन्न नही होते है और अधिक मासमें भी स्थिति परिपक्व होनेसे हवा अच्छी लगनेसे जलका सयोग मिलनेसे फलती है और फूलोकी, फलोकी उत्पत्ति भी होती है।

और जैसे बारह मासोमें उत्पन्न होना, वृद्धि पामना, फूलना, फलना, नष्ट होना, वगैरह वनस्पतिका स्वभाव है तैसेही अधिक मास होनेसे तेरह मासोमे भी है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है।

और 'जो फल श्रावण मासमे उत्पन्न होनेवाला होगा सो पहिले श्रावणमें न होते दूसरे श्रावणमे होगा' ऐसा भी सातवे महाशयजीका लिखना अज्ञातसूचक और मिथ्या है क्योंकि जैन पञ्चाङ्गमें और लौकिक पञ्चाङ्गमें अधिक मासका व्यवहार है परन्तु मुसलमानोमें, बङ्गालामें, अंग्रेजीमें, तो अधिकमासका व्यवहार नही है किन्तु अनुक्रमसे मासोकी तारीख मुजब व्यवहार है जब लौकिकमें अधिक मास होनेसे अधिक मासमे वनस्पतिका फूलना, फलना नही होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं तो क्या लौकिक अधिकमासमें जो मुसलमानोकी, बङ्गालाकी और अंग्रेजीकी ३० तारीखोके ३० दिन व्यतीत होवेंगे उसीमे भी वनस्पतिका फूलना फलना न होनेका सातवें महा-

वाला होगा यह दूसरेही श्रावणमें उत्पन्न होगा न कि पहिलेमें। जैसे दो चैत्र मास होगे तो दूसरे चैत्रमे आम्रादि फलेंगे किन्तु प्रथम चैत्रमें नहीं। इस विषयकी एक गाथा आवश्यकनिर्युक्तिके प्रतिक्रमणाध्ययनमें यह है—

"जइ फुल्ला कणिआरया चूअग अहिमासयंमि घुट्ठंमि।
तुह न खम फुल्लेउ जइ पच्चंता करिंति डमराइ" ॥ १ ॥

अर्थात् अधिकमासकी उद्घोषणा होनेपर यदि कर्णिकारक फूलता है तो फूले, परन्तु हे आम्रवृक्ष! तुमको फूलना उचित नही है, यदि प्रत्यन्तक (नीच) अशोभन कार्य करते हैं तो क्या तुम्हें भी करना चाहिये ?, सज्जनोंको ऐसा उचित नहीं है।

इस बातका अनुभव पाठकवर्ग करें यदि अभ्यासकी सफलता हो तो जैसे कुशाग्रबुद्धि आज्ञानिबद्ध हृदय आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है उसी तरह तुम्हें भी लेखामें नही लेना चाहिये। जिससे पूर्वोक्त अनेक दोषोसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे।]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि—हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीने गच्छ पक्षी बालजीवोको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये ऊपरके लेखमें वृथा क्यो परिश्रम किया है क्योंकि प्रथम तो (अधिक मास सज्ञी पञ्चेन्द्रिय नही मानते) यह लिखनाही प्रत्यक्ष महा मिथ्या है क्योंकि सज्ञी पञ्चेन्द्रिय सब कोई अधिक मासको अवश्य करके मानते है सो तो प्रत्यक्ष अनुभवसेही सिद्ध है और 'एकेन्द्रिय वनस्पति अधिकमासमें नही फलनेका' सातवें महाशयजी लिखते हैं सो भी

मिथ्या है क्योंकि वनस्पतिका फलना और फूलोंका, फलोंका उत्पन्न होना सो तो समय, हवा, पानी, ऋतुके, कारणसे होता है इसलिये वनस्पतिकी समय (स्थिति) परिपाक न हुई होवे तथा हवा भी अच्छी न होवे जलका सयोग न मिले तो अधिक मासके बिना भी वनस्पति नही फूलती है और फल भी उत्पन्न नही होते है और अधिक मासमें भी स्थिति परिपक्व होनेसे हवा अच्छी लगनेसे जलका सयोग मिलनेसे फलती है और फूलोकी, फलोकी उत्पत्ति भी होती है ।

और जैसे बारह मासोमें उत्पन्न होना, वृद्धि पामना, फूलना, फलना, नष्ट होना, वगैरह वनस्पतिका स्वभाव है तैसेही अधिक मास होनेसे तेरह मासोमे भी है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है ।

और 'जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होनेवाला होगा सो पहिले श्रावणमें न होते दूसरे श्रावणमे होगा' ऐसा भी सातवे महाशयजीका लिखना अज्ञातसूचक और मिथ्या है क्योंकि जैन पञ्चाङ्गमें और लौकिक पञ्चाङ्गमें अधिक मासका व्यवहार है परन्तु मुसलमानोमे, बङ्गलामें, अग्रेजीमे, तो अधिकमासका व्यवहार नही है किन्तु अनुक्रमसे मासोकी तारीख मुजब व्यवहार है जब लौकिकमे अधिक मास होनेसे अधिक मासमे वनस्पतिका फूलना, फलना नही होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं तो क्या लौकिक अधिकमासमें जो मुसलमानोकी, बङ्गलाकी और अग्रेजीकी ३० तारीखोके ३० दिन व्यतीत होवेंगे उसीमे भी वनस्पतिका फूलना फलना न होनेका सातवें महा-

शयणी ठहरा मर्फेगे भो तो कदापि नहीं तो फिर वृथा क्यो कदाग्रही बालजीवोंको मिथ्यात्वकी भ्रद्धामें गेरनेके लिये अधिक माममे वनस्पतिको नही फलनेका उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या स्थापन करते हैं सो न्यायदृष्टि वाले विवेकी पाठकवग स्वय विचार लेवेंगे ॥

और अधिक मामको वनस्पति अङ्गाकार नही करती है इत्यादि लेख चौथे महाशयजी न्यायाम्भोनिधिजीने भी बालजीवोंको मिथ्यात्वमे गेरनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २०५ से २१० तक छप गई है सो पढनेसे विशेष निर्णय हो जावेगा।

और दो चैत्र मास होंगे तो प्रथम चैत्रमे आम्रादि नही फलते दूसरे चैत्रमे फलेगें इस विषय सम्बन्धी आवश्यक निर्युक्तिके प्रतिक्रमण अध्ययनकी एक गाथा' सातवें महाशयजीने लिख दिखाई—सो तो कि केवल अपने विद्वत्ता की अजीर्णता प्रगट करी है क्योंकि श्रीआवश्यक निर्युक्ति के रचने वाले चौदह पूर्वधरश्रुतकेवली श्रीमान् भद्रबाहु स्वामीजी जैनमे प्रसिद्ध हैं उन्ही महाराजको अनुमान २२७०वर्ष व्यतीत होगये हैं उन्होंके समयमे अठाशी ग्रहोंके गतिकी मर्य्यादा पूर्वक जैनपञ्चाङ्ग सुरूथा उसीमे पौष और आषाढ मासके सिवाय चैत्रादि मासोकी वृद्धिकाही अभाव था तो फिर श्रीआवश्यक निर्युक्तिके गाथाका तात्पर्य्यार्थको गुरु गमसे समझे विना दूसरे चैत्रमे आम्रादि फलनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो विवेकी बुद्धिमान् कैसे मान्य करेंगे अपितु कदापि नहीं ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखके अधिक

मासको गिनतीमे लेनेका सातवें महाशयजीने निषेध किया है सो भी नि केवल गच्छपक्षके आग्रहसे और अपनी विद्वत्ता के अभिमानसे दृष्टिरागी अज्ञजीवोंको मिथ्यात्वमे फँसाने के लिये निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको जाने विना वृथाही परिश्रम किया है क्योंकि निर्युक्तिकार महाराज चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली थे इसलिये श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा और गिनतीमे प्रमाण भी करा हुवा अधिक मासको निषेध करके उत्सूत्र भाषण करने वाले बनेंगे यह तो कोई अल्पबुद्धि वाला भी मान्य नही करेगा तथापि सातवें महाशयजीने निर्युक्तिकी गाथासे अधिक मासको गिनतीमे लेनेका निषेध करके चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली महाराजको भी दूषण लगाते कुछ भी पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसे हृदयमें नही किया यह तो बडेही अफसोसकी बात है।

और खास इसीही श्रीआवश्यक निर्युक्तिमें समयादि कालकी व्याख्यासे अधिक मासको प्रमाण किया है उसी निर्युक्तिकी गाथा पर श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्य्यजीने चूर्णिमें, श्रीहरिभद्र सूरिजीने वृहद्वृत्तिमें, श्रीतिलकाचार्य्यजीने लघुवृत्तिमें, और मलधारी श्रीहेमचन्द्रसूरिजीने श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें, खुलासा पूर्वक व्याख्या करी है उसीसे प्रगट पने अधिक मासकी गिनती सिद्ध हैं सो इस जगह विस्तारके कारणसे ऊपरके पाठोको नही लिखता हूं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो निर्युक्तिके चौवीसथा-अध्ययनके पृष्ठ ५१में, वृहद् वृत्तिके पृष्ठ २०६ में और विशेषावश्यकी वृत्तिके पृष्ठ ४९५ मे देख लेना।

शयजी ठहरा मफँगे सो तो कदापि नहीं तो फिर वृथा क्यों कदाग्रही बालजीवोंको मिथ्यात्वकी भ्रमर्मे गेरनेके लिये अधिक मासमे वनस्पतिको नही फलनेका उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या स्थापन करते हैं सो न्यायदृष्टि वाले विवेकी पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे ॥

और अधिक मासको वनस्पति अङ्गीकार नही करती है इत्यादि लेख चौथे महाशयजी न्यायाम्भोनिधिजीने भी बालजीवोंको मिथ्यात्वमे गेरनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २०५ से २१० तक छप गई है सो पढनेसे विशेष निर्णय हो जावेगा।

और दो चैत्र मास होंगे तो प्रथम चैत्रमे आम्रादि नही फलते दूसरे चैत्रमे फलेगें इस विषय सम्बन्धी आवश्यक निर्युक्तिके प्रतिक्रमण अध्ययनकी एक गाथा' सातवें महाशयजीने लिख दिखाई–सो तो नि केवल अपने विद्वत्ता की अजीर्णता प्रगट करी है क्योंकि श्रीआवश्यक निर्युक्ति के रचने वाले चौदह पूर्वधरश्रुतकेवली श्रीमान् भद्रबाहु स्वामीजी जैनमे प्रसिद्ध हैं उन्ही महाराजको अनुमान २२७०वर्ष व्यतीत होगये हैं उन्होंके समयमे अठाशी ग्रहोंके गतिकी मर्य्यादा पूर्वक जैनपञ्चाङ्ग सुरूथा उसीमे पौष और आषाढ मासके सिवाय चैत्रादि मासोकी वृद्धिकाही अभाव था तो फिर श्रीआवश्यक निर्युक्तिके गाथाका तात्पर्य्यार्थको गुरु गमसे समझे विना दूसरे चैत्रमे आम्रादि फलनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो विवेकी बुद्धिमान् कैसे मान्य करेगे अपितु कदापि नहीं ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखके अधिक

सुन्मार्गमें प्रवर्तने सम्बन्धी दो कन्याका एक दृष्टात दिखाया है जिसकी चूर्णिकारने, वृहद् वृत्तिकारने और लघुवृत्तिकारने खुलासा पूर्वक, व्याख्या करी है और द्रव्य निवृत्ति पर दृष्टात दिखाके, फिर भाव निवृत्ति पर उपनय करके दिखाया है, उसीके सब पाठोको विस्तार के कारणसे इस जगह नही लिखता हू परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो चूर्णिके २६४ पृष्ठमें, तथा वृहद् वृत्तिके २३३ पृष्ठमें देखलेना। और पाठकवर्गको लघु-वृत्तिका पाठ इस जगह दिखाता हू श्रीतिलकाचार्यजी कृत श्री आवश्यक लघुवृत्तिके १९६ पृष्ठे यथा—

एकत्र नगरे शाला, पति शालासु तस्य च ॥ धूर्त्तोवयति तेष्वेको, धूर्त्तो मधुरगी सदा ॥१॥ कुविदस्य सुता तस्य,तेन सार्द्धमयुज्यत॥ तेनोचे साथ नश्यामो, यावद्वेत्ति न कश्चन ॥२॥ तयोचेमे वयस्यास्ति, राजपुत्री तया समं ॥ सकेतो-ऽस्ति यथा द्वाभ्या, पतिरेक करिष्यते ॥३॥ तामप्यानयतेनोचे, साथ तामप्यचालयत् ॥ तदा प्रत्यूपे महति, गीत केनाप्यद स्फुट ॥ ४ ॥ "जइ फुल्ला कणियारया, चूअगअहि मासय-मिघुट्ट मि ॥ तुह न खम फुल्लेउ, जइ पच्चता करिति डमरा-इ" ॥ "नखम नयुक्त प्रत्यता नीचका डमराणि विप्लव-रूपाणि शेप स्पष्ट" ॥ श्रुत्वैव राजकन्या सा दध्यौ चूत महातरुम् ॥ उपालब्धो वसतेन, कर्णिकारोऽधमस्तरु ॥५॥ पुष्पितो यदि किं युक्त, तवोत्तमतरोस्त्वया ॥ अधिक मास घोपणा, किं न श्रुतेत्यसगी शुभा ॥६॥ चेत्कुविदी करोत्येव, कत्तव्य किं मयापि तत् ॥ निवृत्तासाभिपादन्न, करडोमेस्ति विस्मृत ॥ ७ ॥ राजमृ कोपि तत्राह्नि, गोत्रजैस्त्रासितो

अब इस जगह विवेकी पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–श्रीनियुक्तिकार महाराज अधिकमासको प्रमाण करने वाले थे तथा श्रीआवश्यक नियुक्तिमेंही अधिक मासको प्रमाण किया है सो तो प्रगट पाठ है तथापि न्यायांभोनिधिजीने गच्छपक्षके कदाग्रहसे दृष्टि रागियोंको मिथ्यात्वके भ्रमहेमें गेरनेके लिये नियुक्तिकार चौदह पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति कल्पनासे, नियुक्तिकी गाथा लिखके उसीके तात्पर्य्यको समझे विनाही अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेका वृथा परिश्रम किया सो कितने संसारकी वृद्धि करी होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने और तत्त्वज्ञ पुरुष भी अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेवेंगे।

अब इस जगह पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके लिये नियुक्तिकी गाथाका तात्पर्य्यार्थको दिखाता हूं।

श्रीनियुक्तिकार महाराजने श्रीआवश्यक नियुक्तिमें छ (६) आवश्यकका वर्णन करते प्रतिक्रमण नामा चौथा आवश्यकमें "पडिक्कमण १ पडिअरणा २, पडिहरणा ३ वारणा ४ णियतिय ५ ॥ णिंदा ६ गरहा ७ सोही ८, पडिक्कमण अट्ठहा होइ" ॥ ३ ॥ इस गाथासे आठ प्रकारके नाम प्रतिक्रमणके कहे फिर अनुक्रमे आठोही नामोके निक्षेपोका वर्णन किया है और भव्यजीवोके उपगारके लिये"अद्धाणे १ पासए २ दुद्धकाय ३ विसभोयणा तलाए ४ ॥ दोकन्ना ५ चित्तपुत्ति ६ पइमारियाय ७ वत्थेव ८ अट्ठणय" ॥ १२ ॥ इस गाथासे प्रतिक्रमण सम्बन्धी आठ दृष्टांत दिखाये जिसमें पाचवा णियत्ति अर्थात् निवृत्ति सो उन्मार्गसे —— ——

श्रावणादि मासोकी वृद्धि होनेसे उन अधिक मासोके समयमें देशदेशान्तरे आम्र वृक्षादिका फूलना, फलना और आमोका उत्पत्ति होना प्रत्यक्ष देखनेमें और सुननेमे आता है और किसी देशमें माघ, फाल्गुन मासमें तो क्या परतु हरेक मासोमें भी आम्र फूलते है और अधिक मासके विना भी हरेक मासोमे कणियर भी फूलता रहता है इसलिये शास्त्र-कार महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध और कारण कार्य्य तथा आगे पीछेके सम्बन्धकी प्रस्ताविक बातको छोड करके अधूरा सम्बन्ध लेकर शब्दार्थ ग्रहण करनेसे तो वडेही अनर्थका कारण होजाता है, जैसे कि–श्रीसूयगडाङ्ग जीमें वादियोके मत सम्बन्धकी बातको, श्रीरायप्रशेनीमें परदेशी राजाके सम्बन्धकी बातको श्रीआवश्यकजीकी और श्रीउत्तराध्ययनजीकी व्याख्यायोमे निह्नवोके सम्बन्धकी बातको, और श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोमें श्रीआदिजिने-श्वर भगवान्के वार्षिक पारणेके अवसरमे दोनु हाथोका विवादके सम्बन्धको बातको इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमे सैकडो जगह शब्दार्थ और होता है परन्तु शास्त्र कार महाराजका अभिप्राय औरही होता है इसलिये उस जगहकी व्याख्या लिखते पूर्वापरका सम्बन्ध रहित और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध नि केवल शब्दार्थको पकड करके अन्य प्रसङ्गकी अन्य प्रसङ्गमें अधूरी बातको लिखने वाला अनन्त ससारी मिथ्या दृष्टि निह्नव कहा जावे, तैसेही श्रीआवश्यक निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें शब्दार्थको पकड करके विना सम्बन्धकी और अधूरी बात लिखके जो सातवें महाशयजीने बालजीवो

निजे ॥ तज्ज्ञात शरणी चक्रे, प्रदत्ता तेनतस्य सा ॥८॥ तेन श्वशुर माहात्म्याञ्जित्यनिजगोत्रजान् ॥ पुनर्लेभे निज राज्य, पट्टराज्ञी बभूव सा ॥ ९ ॥ निवृत्तिर्द्रव्यतोभाजि, भाये चोपनय पुन ॥ कन्यास्थानीया मुनयो, विपया धूर्त्त सन्निभा ॥१०॥ योगीति गानाचार्योपदेशात्तेभ्यो निवर्त्तते ॥ सुगतेभाजन सस्या, दुर्गतेस्त्वपर पुन ॥ ११ ॥

अब विवेकी तत्त्वज्ञपुरुषोको इस जगह विचार करना चाहिये कि राज्यकन्या उन्मार्गमें प्रवर्तने लगी तब उसी को समझानेके लिये कविने चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले कर "जइ फुल्ला" इत्यादि गाथा कही है सो तो व्याख्याकारोने प्रगट करके कहा है तथापि सातवें महाशयजी निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको समझे विनाही राजकन्याके दृष्टान्तका प्रसङ्गको छोड़ करके विना सबधकी एक गाथा लिखके अधिक मासमें वनस्पतिको नही फूलनेका ठहराया परन्तु दीर्घ दृष्टिसे पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया क्योंकि वसन्त ऋतु मुखसे बोलके आम्र को ओलम्भा देता नही, तथा आम्र सुनता भी नही और जैन ज्योतिषके हिसाबसे वसत ऋतुमे अधिक मास होता भी नही, और अधिक मास होनेसे वनस्पतिको कोई उद्घोषणा करके सुनाता भी नही है। परन्तु यह तो ग्रन्थकार महाराजने अपनी उत्प्रेक्षारूप चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले करके प्रासङ्गिक उपदेशके लिये कहा है इसलिये वास्तवमे अधिक मासकी उद्घोषणा आम्रको सुना करके वसन्त ऋतुके ओलभा देने सम्बन्धी नही समझना चाहिये क्योंकि वर्त्तमानिक पञ्चाङ्गमे चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ,

श्रावणादि मासोकी वृद्धि होनेसे उन अधिक मासोके समयमें देशदेशान्तरे आम्र वृक्षादिका फूलना, फलना और आमोका उत्पत्ति होना प्रत्यक्ष देखनेमें और सुननेमे आता है और किसी देशमें माघ, फाल्गुन मासमे तो क्या परतु हरेक मासोमें भी आम्र फूलते है और अधिक मासके विना भी हरेक मासोमे कणियर भी फूलता रहता है इसलिये शास्त्र-कार महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध और कारण कार्य्ये तथा आगे पीछेके सम्बन्धकी प्रस्ताविक बातको छोड करके अधूरा सम्बन्ध लेकर शब्दार्थ ग्रहण करनेसे तो वडेही अनर्थका कारण होजाता है, जैसे कि-श्रीसूयगडाङ्ग जीमें वादियोके मत सम्बन्धकी बातको, श्रीरायप्रश्नेनीमें परदेशी राजाके सम्बन्धकी बातको श्रीआवश्यकजीकी और श्रीउत्तराध्ययनजीकी व्याख्यायोमे निह्नवोके सम्बन्धकी बातको, और श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोमें श्रीआदिजिने-श्वर भगवान्के वार्षिक पारणेके अवसरमे दोनु हाथोका विवादके सम्बन्धकी बातको इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोमे सैकडो जगह शब्दार्थ और होता है परन्तु शास्त्र कार महाराजका अभिप्राय औरही होता है इसलिये उस जगहकी व्याख्या लिखते पूर्वापरका सम्बन्ध रहित और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध नि केवल शब्दार्थको पकड करके अन्य प्रसङ्गकी अन्य प्रसङ्गमे अधूरी बातको लिखने वाला अनन्त ससारी मिथ्या दृष्टि निह्नव कहा जावे, तैसेही श्रीआवश्यक नियुक्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें शब्दार्थको पकड करके विना सम्बन्धकी और अधूरी बात लिखके जो सातवें महाशयजीने बालजीवो

मिले ॥ तज्ज्ञात शरणी चक्रे, प्रदत्ता तेनतस्य सा ॥८॥ तेन श्वशुर माहात्म्याज्जित्वनिजगोत्रजान् ॥ पुनर्लेभे निज राज्य, पट्टराज्ञी बभूव सा ॥ २९ ॥ निवृत्तिर्दुष्यतोभाजि, भाये योवनय पुन ॥ कन्याम्यानीया मुनयो, विषया धूर्त सन्निभा ॥१०॥ योगीति गानाचार्योपदेशात्तेभ्यो निवर्त्तते ॥ सुगतेभाजन मस्या, दुर्गतेस्त्यपर पुन ॥ ११ ॥

अब विवेकी तत्त्वज्ञपुरुषोको इस जगह विचार करना चाहिये कि राज्यकन्या उन्मार्गमें प्रवतने लगी तब उसी को समझानेके लिये कविने चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले कर "जइ फुल्ला" इत्यादि गाथा कही है सो तो व्याख्याकारोने प्रगट करके कहा है तथापि सातवें महाशयजी निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको समझे बिनाही राजकन्याके दृष्टान्तका प्रसङ्गको छोड करके बिना सबधकी एक गाथा लिखके अधिक मासमें वनस्पतिको नही फूलनेका ठहराया परन्तु दीर्घ दृष्टिसे पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया क्योंकि वसन्त ऋतु मुखसे बोलके आम्र को ओलम्भा देती नही, तथा आम्र सुनता भी नही और जैन ज्योतिषके हिसाबसे वसत ऋतुमे अधिक मास होता भी नही, और अधिक मास होनेसे वनस्पतिका कोई उद्घोषणा करके सुनाता भी नही है। परन्तु यह तो ग्रन्थकार महाराजने अपनी उत्प्रेक्षारूप चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले करके प्रासङ्गिक उपदेशके लिये कहा है इसलिये वास्तवमे अधिक मासकी उद्घोषणा आम्रको सुना करके वसन्त ऋतुके ओलभा देने सम्बन्धी नही समझना चाहिये क्योंकि वर्त्तमानिक पञ्चाङ्गमे चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ,

तद्वृत्तिमें २६, श्रीव्यवहारवृत्तिमें २७, श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमें २८, तथा चूर्णिमें २९, वृहद्वृत्तिमें ३०, लघुवृत्तिमें ३१, और श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें ३२, श्रीकल्पसूत्रमे ३३, तथा श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोमें ४०, श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें ४१, तथा श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिकी पाच व्याख्यायोमें ४६, श्रीगच्छाचार पयन्नाकी वृत्तिमें ४७, श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नामें ४८, तथा तद्वृत्तिमें ४९, श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिमें ५०, श्रीविधिप्रपामें ५१, श्रीनयड्डलप्रकाशमें ५२, सेन प्रश्नमें ५३, और नवतत्त्वकी चार व्याख्यायोमें ५७, और श्रीतत्त्वार्थकी वृत्तिमें ५८, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके प्रमाणोसे अधिक मासकी गिनती स्वय सिद्ध है ।

इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीकी श्रद्धावाले आत्मार्थी प्राणियोको तो अधिक मासकी गिनती अवश्यमेव प्रमाण करना चाहिये जिससे कुछ भी दूषण नहीं लग सकता है परन्तु निषेध करने वाले है सो और पञ्चाङ्गी मुजब अधिक मासका प्रमाण करनेवालोको अपनी कल्पनासे मिथ्या दूषण लगाते हैं सो ससारमे परिभ्रमण करने वाले उत्सूत्र भाषक और अनेक दूषणोके अधिकारी हो सकते है सो तो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं ।

और पञ्चाङ्गीके एक अक्षरमात्रको भी प्रमाण न करने वालेको तथा पञ्चाङ्गीके विरुद्ध थोडीसी बातकी भी परूपना करने वालेको मिथ्या दृष्टि निह्नव कहते है सो तो प्रसिद्ध बात है तो फिर पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रानुसार अधिक मासकी गिनती सिद्ध होते भी, नही मानने वालेको और इतने पञ्चाङ्गीके शास्त्रोके प्रमाण विरुद्ध परूपना

को मिथ्यात्वमें फँसानेका उद्यम किया है सो निकेवल उत्सूत्र भाषण रूप होनेसे ससार वृद्धिका हेतुभूत है सो विवेकी तत्त्वज्ञ पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वय विचार लेवेंगे,—

और फिर भी श्रीआवश्यकनिर्युक्तिकी गाथाकी बातपर सातवें महाशयजीने अपनी चातुराई भोले जीवोंको दिखाई है कि (कुशाग्र बुद्धि आज्ञा निबद्ध हृदय आचार्य्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है उसी तरह तुम्हे भी लेखामें नहीं लेना चाहिये जिससे पूर्वोक्त अनेक दोषोंसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे)

सातवें महाशयजीका यहभी लिखना अपनी विद्वत्ताके अजीर्णतासे ससार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्र भाषण है क्योंकि निर्युक्तिकी गाथामें तो अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाला एक भी शब्द नहीं है परन्तु श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोने अनन्ते कालसे अधिक मासको गिनतीमें लिया है इस लिये तत्त्वज्ञ बुद्धिवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक जितने आत्मार्थी उत्तमाचार्य्य हुवे है उन सबी महानुभावोने अधिक मासको गिनतीमें लिया है और आगे भी लेवेंगे इसलिये इसकलियुगमें जो जो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेवाले हो गये हैं तथा वर्त्तमानमें सातवें महाशयजी वगैरह है सो सबीही पञ्चाङ्गीकी श्रद्धा रहित श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक है क्योंकि अधिक मासको गिनतीमें करने सम्बन्धी २२ शास्त्रोके प्रमाणतो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २७।२८ में छप गये हैं और श्रीभगवतीजीमें २३, तथा तद्वृत्तिमें २४, श्रीअनुयोगद्वारमें २५, तथा

तद्वृत्तिमें २६, श्रीव्यवहारवृत्तिमें २७, श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमें २८, तथा चूर्णिमें २९, वृहद्वृत्तिमें ३०, लघुवृत्तिमें ३१, और श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें ३२, श्रीकल्पसूत्रमे ३३, तथा श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोमें ४०, श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें ४१, तथा श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिकी पाच व्याख्यायोमें ४६, श्रीगच्छाचार पयन्नाकी वृत्तिमें ४७, श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नामें ४८, तथा तद्वृत्तिमें ४९, श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिमें ५०, श्रीविधिप्रपामें ५१, श्रीमण्डलप्रकाशमें ५२, सेन प्रश्नमें ५३, और नवतत्त्वकी चार व्याख्यायोमें ५७, और श्रीतत्त्ववार्थकी वृत्तिमें ५८, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोके प्रमाणोसे अधिक मासकी गिनती स्वय सिद्ध है ।

इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीकी श्रद्धावाले आत्मार्थी प्राणियोको तो अधिक मासकी गिनती अवश्यमेव प्रमाण करना चाहिये जिससे कुछ भी दूषण नहीं लग सकता है परन्तु निषेध करने वाले है सो और पञ्चाङ्गी मुजब अधिक मासका प्रमाण करनेवालोको अपनी कल्पनासे मिथ्या दूषण लगाते हैं सो ससारमे परिभ्रमण करने वाले उत्सूत्र भाषक और अनेक दूषणोके अधिकारी हो सकते है सो तो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं ।

और पञ्चाङ्गीके एक अक्षरमात्रको भी प्रमाण न करने वालेको तथा पञ्चाङ्गीके विरुद्ध थोडीसी बातकी भी परूपना करने वालेको मिथ्या दृष्टि निह्नव कहते है सो तो प्रसिद्ध बात है तो फिर पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रानुसार अधिक मासकी गिनती सिद्ध होते भी, नही मानने वालेको और इतने पञ्चाङ्गीके शास्त्रोके प्रमाण विरुद्ध परूपना

करने वालेको मिथ्या दृष्टि महानिह्नव कहनेमें कुछ हरजा होवेतो तत्वज्ञ पुरुषोंको विचार करना चाहिये।

अब अनेक दूषणोंके अधिकारी कौन है और जिनाज्ञाके आराधक कौन हैं सो विवेकी पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—

और भी आगे पर्युषणा विचारके उट्टे पृष्ठकी ६ पंक्ति से १८ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वादीकी शङ्का यहाँ यह है कि अधिक मासमें क्या भूख नहीं लगती, और क्या पापका बन्धन नही होता तथा देवपूजादि तथा प्रतिक्रमणादि कृत्य नहीं करना? इसका उत्तर यह है कि क्षुधावेदना, और पापबन्धनमें मास कारण नही है, यदि मास निमित्त हो तो नारकी जीवोंको तथा अढाइद्वीपके बाहर रहने वाले तिर्य्यञ्चोंको क्षुधावेदना तथा पापबन्ध नही होना चाहिये। वहाँ पर मास पक्षादि कुछ भी कालका व्यवहार नही है। देवपूजा तथा प्रतिक्रमणादि दिनसे बद्ध है मासबद्ध नहीं है। नित्यकर्मके प्रति अधिक मास हानिकारक नहीं है, जैसे नपुसक मनुष्य स्त्रीके प्रति निष्फल है किन्तु लेना ले जाना आदि गृहकार्य्यके प्रति निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानो)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हू कि हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीने प्रथम वादीकी तरफसे शङ्का उठा करके उसीका उत्तर देनेमें खूबही अपनी अज्ञता प्रगटकरी है क्योंकि क्षुधा लगना सो तो वेदनी कर्मके उदयसे सर्व जीवोंको होता है और वेदनी कर्म अधिक मासमे भी समय समय में बन्धाता है तथा उदय भी

आता है और उसकी निवृत्ति भी होती है इसलिये अधिक मासमें क्षुधा लगती है और उसीकी निवृत्ति भी होती है। और पाप बन्धनमें भी मन, वचन, कायाके योग कारण है उसीसे पाप बन्धन रूप कार्य्य होता है और मन, वचन, कायाके, योग समय समयमे शुभ वा अशुभ होते रहते हैं जिससे समय समयमे पुण्यका अथवा पाप का बन्धन भी होता है और समय समय करकेही आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास, सवत्सर, युगादिसे यावत् अनन्ते काल व्यतीत होगये है तथा आगे भी होवेंगे इसलिये अधिक मासमे पुण्य पापादि कार्य्य भी होते हैं और उसीकी निवृत्ति भी होती है और समयादि कालका व्यतीत होना अढाई द्वीपमे तथा अढाई द्वीपके बाहरमे और ऊर्द्ध लोकमें, अधोलोकमे सर्व जगहमें है इसलिये यहाके अधिक मासका कालमे वहा भी समयादिसे काल व्यतीत होता है इसीही कारणसे यहाँके अधिक मासका कालमें यहाके रहने वाले जीवोकी तरहही वहाके रहनेवाले जीवोको वहा भी क्षुधा लगती हे और पुण्य पापादिका बन्धन होता है और यद्यपि वहा पक्षमासादिके वर्तावका व्यवहार नही है परन्तु यहाभी और वहा भी अधिक मासके प्रमाणका समय व्यतीत होना सर्वत्र जगह एक समान है इसीही लिये चारोही गतिके जीवोका आयुष्यादि काल प्रमाण यहाके सवत्सर युगादिके प्रमाणसे गिना जाता है जिससे अधिकमासके गिनतीका प्रमाण सवत्सर, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, वगैरह सबी कालमें साथ गिना जाता है तथापि सातवें महाशयजी अधिकमासके

कालमें नारकी जीवोंको तथा अढाई द्वीपके बाहिर रहने वाले जीवोंको शुभ येश्ना तथा पापबन्धन नहीं होनेका लिखते हैं सो अज्ञताके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे ,—

और (देवपूजा प्रतिक्रमणादि दिनसे बद्ध है मास बद्ध नहीं है नित्य कर्मके प्रति अधिकमास हानिकारक नहीं है) सातवें महाशयजीका यह भी लिखना मायावृत्तिसे बालजीवोंको भ्रमानेके लिये मिथ्या है क्योंकि देवपूजा प्रतिक्रमणादि जैसे दिनसे प्रतिबद्धवाले है तैसेही पक्ष, मासादिसे भी प्रतिबद्ध वाले हैं इसलिये पक्ष, मासादिमें जितनी देवपूजा और जितने प्रतिक्रमणादि धर्मकार्य किये जावे उतनाही लाभ मिलेगा और पुण्य अथवा पापकार्य्य से आत्माको जैसे दिवस लाभकारक अथवा हानिकारक होता है तैसेही पक्ष मासादिमें पुण्य अथवा पाप होनेसे पक्ष मासादि भी लाभकारक अथवा हानिकारक होता है इसलिये पक्ष मासादिकके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना करके उस पक्ष मासादिको अपने लाभकारी माने जाते हैं तैसेही पक्ष मासादिमें पापकार्य्य हुवे होवे उसीका पश्चात्ताप करके उसीकी आलोचना लेनेमें आती है और उसी पक्ष मासादिको अपने हानिकारक समझे जाते हैं और एक पक्षके १५ राइ तथा १५ देवसी और एक पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आता है तैसेही एक मासमें ३० राइ तथा ३० देवसी और दो पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आते हैं सो तो प्रत्यक्ष अनुभवसे प्रसिद्ध है इसलिये एक मासके ३० दिनोंमें सब संसार व्यवहार और पुण्य पापादि कार्य्य होते भी सातवें

महाशयजी उसीकी गिनतीका निषेध करते हैं सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है इस बातको पाठकवर्ग भी स्वय विचार सकते हैं और तीनो महाशयोंने भी ऊपरकी बात सबन्धी बाललीलाकी तरह लेख लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १४२।१४३ में छप गई है सो पढनेसे विशेष नि सन्देह हो जावेगा,—

और (जैसे नपुसक मनुष्य स्त्रीके प्रति निष्फल है किन्तु लेना लेजाना आदि गृहकार्य्यके प्रति निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानो) इन अक्षरो करके सातवें महाशयजीने देवपूजा मुनिदान आवश्यकादि ३० दिनोंमें धर्मकार्य्य होते भी पर्युषणादि धर्मकार्य्योंमें ३० दिनोका एक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये अधिक मासको नपुसक ठहरा करके बालजीवोको अपनी विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है सो तो नि केवल उत्सूत्रभाषण करके गाढ मिथ्यात्वसे ससार वृद्धिका हेतु किया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोने जैसे मन्दिरजीके ऊपर शिखर विशेष शोभाकारी होता है उसी तरह कालका प्रमाणके ऊपर शिखररूप विशेष शोभाकारी कालचूलाकी उत्तम ओपमा अधिक मासको दिई है और अधिकमास के गिनतीमें सामिल ले करकेही तेरह मासोका अभिवर्द्धित सवत्सर कहा है जिसका विस्तारसे खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४८ से ६५ तक छपगया है तथापि सातवें महाशयजीने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा उल्लङ्घनरूप तथा आशातना कारक और पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोको छोड करके अधिक मासको नपुसककी हलकी

ओपमा लिखके अधिक मासकी हिलना करी और संसार पद्धिका कुछ भी भय न किया सो बडेही अफसोसकी बात है,—

और वैष्णवादि लोग भी अधिकमासको दानपुण्यादि धर्म्मकार्य्योंमें तो बारह मासोमे भी विशेष उत्तम "पुरुषोत्तम अधिक मास" कहते हैं और उसीकी कथा सुनते हैं और दानपुण्यादि करते हैं और पञ्चाङ्गमें भी तेरह मास, छवीश पक्षका वर्ष लिखते हैं सो तो दुनियामें प्रसिद्ध है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको नपुंसक कहके उसको गिनतीमें निषेध करते हुवे, तेरहमा अधिक मासको सर्वथाही उडा देते हैं और दुनियाके भी विरुद्धका कुछ भी भय नही करते हैं सो भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका नमूना है क्योंकि सातवें महाशयजी काशीमें बहुत वर्षोंसे ठहरे है और अधिक मास होनेसे पुरुषोत्तम अधिक मासके महात्म की कथा काशीमें और सब शहरोंमें अनेक जगह वचाती है सो तो प्रसिद्ध है और जैनशास्त्रानुसार तथा लौकिक शास्त्रानुसार धर्मकार्य्योंमें अधिक मास श्रेष्ठ है, तथापि सातवें महाशयजी नपुंसक ठहराते हैं सो तो ऐसा होता है कि—

किसी नगरमें एक शेठ रहता था, सो रूपलावण्य करके युक्त और धर्म्मावलम्बी था इसलिये उसीने परस्त्री गमनका और वेश्याके गमनका वर्जन किया था, सो शेठ किसी अवसरमें बजारके रस्तेसे चला जाता था उसी रस्तेमें कोई व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका मकान आया, तब वह शेठ उसीका मकानके पाससे हो करके आगेको चला गया परन्तु उसीके मकानपर न गया तब उस शेठको देखकर वह

व्यभिचारिणी स्त्री और वेश्या कहने लगी कि, यह तो नपुसक है इसलिये हमारे पास नही आता है ।

अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–जैसे उस व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका मन्तव्य उस शेठसे परिपूर्ण न हुवा तब उसीको नपुसक कहके उसीकी निन्दा करी परन्तु जो विवेकबुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य होवेगे सो तो उस शेठको नपुसक न कहते हुवे उत्तमपुरुष ही कहेगे, तैसेही सातवें महाशयजी भी अधिक मासको गिनतीमे लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप अनेक कुयुक्तियोका सग्रह करते भी अपना मन्तव्यको सिद्ध नही कर सके तब नपुसक कहके अधिक मासकी निन्दा करी और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञा उल्लङ्घन होनेसे ससार वृद्धिका भय न किया परन्तु जो विवेक बुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य होवेगे सो तो अधिक मासको नपुसक न कहते हुवे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोकी आज्ञानुसार विशेष उत्तमही कहेगे सो तत्त्वज्ञ पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—

और अधिक मासको नपुसक कहके धर्म कार्योमें निषेध करनेके लिये चौथे महाशयजीने भी उत्सूत्र भाषण रूप कुयुक्तियोके सग्रहवाला लेख लिखके बाल जीवोको मिथ्यात्वमें गेरनेका कारण किया था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ट २०७से २०४ तक अच्छी तरहसे खुलासा पूवक छप गई है सो पढनेसे विशेष नि सन्देह हो जावेगा,—

और जैसे धर्मी पुरुषोको पर स्त्री देखनेमें अन्धेकी तरह होना चाहिये परन्तु देव गुरुके दर्शन करनेमें तो

चार मास वालेकी तरह हो जाना चाहिये तैसेही यह श्रेठ पुरुष है परन्तु पर स्त्रीके गमनका और वेश्याके गमनका वर्णन करनेवाला धर्मावलम्बी होनेसे उनके साथ मैथुन सेवन करनेमें तो नपुंसककी तरह हैं परन्तु अपने नियमका प्रतिपालन करके ब्रह्मचर्य्य धारण करनेमें तो समर्थ होनेसे उत्तम पुरुषकी तरह है अर्थात् आपही उस गुणसे उत्तम पुरुष हैं इसी न्यायानुसार यद्यपि अधिक मास भी गिनतीके प्रमाणका व्यवहारमें तो बारह मासोंके बरोबरही पुरुष रूप है उसीमें वैष्णव लोग दान पुण्यादि विशेष करते हैं और उसीके महात्म्यकी कथा सुनते हैं इसीलिये उसीको पुरुषोत्तम अधिक मास कहते हैं।

और श्रीजैन शास्त्रोंमें भी मन्दिरके शिखरवत् कालका प्रमाणके शिखर रूप उत्तम ओपमा अधिक मासको है। उसीमें मुहूर्त्त नैमित्तिक विवाहादि आरम्भ वाले संसारिक काय्य नहीं होते है परन्तु धर्म कार्य्य तो विशेष होते हैं इसलिये उपरोक्त न्यायानुसार मुहूर्त्त नैमित्तिक आरम्भ वाले संसारिक कार्य्योंमें तो अधिक मास नपुंसककी तरह है परन्तु धर्म कार्य्योंमें तो विशेष उत्तम होनेसे सबसे अधिक है इसलिये इसका अधिक मास ऐसा नाम भी सार्थक है तथापि धर्म कार्य्योंमें और गिनतीका प्रमाणसे उसीको नपुंसक ठहरा करके अधिक मासकी निन्दा करते हुए उसीकी गिनती निषेध करते हैं तो वह व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका अनुकरण करनेवालेहैं सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे और अब सातवें महाशयजीके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं— पर्युषणा विचारके छट्ठे पृष्ठकी १९ वीं पङ्क्तिसे सातवें पृष्ठकी

चौथी पङ्क्ति तक लिखा है कि–(जैन पञ्चाङ्गानुसार तो एक युगमें दो ही अधिक मास आते हैं अर्थात् युगके मध्यमें आषाढ दो होते है और युगान्तमें दो पौष होते हैं। दो श्रावण दो भाद्र और दो आश्विन वगैरह नहीं होते। इस भावकी सूचना देने वाली पाठ देखो—"जइ जुग मज्झे तो दोपोसा जइ जुग अन्ते दो आसाढा" यद्यपि जैन पञ्चाङ्गका विच्छेद हो गया है तथापि युक्ति और शास्त्र लेख विद्यमान है) सातवें महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि–शास्त्रके पाठसे एक युगमें दो अधिक मास होनेका आप लिखते हो सो यह दोनो अधिक मास जैन शास्त्रानुसार गिनतीमें लिये जाते थे तो फिर ऊपरमेंही "कुशाग्रह बुद्धि आज्ञा-निबद्ध हृदय आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमें नही लिया है" ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा विचारके सब लेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध क्यो करते हो क्या आपको शास्त्रकी वाक्य प्रमाण नही है, यदि है तो आपका निषेध करना संसार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्रभाषण होनेसे बाल जीवोको मिथ्यात्वमें फँसाने वाला है सो विवेकी पाठक वर्ग स्वय विचार सकते है,—

और शास्त्रके पाठमें तो युगके मध्यमें दो पौष और युगान्तमें दो आषाढ खुलासे कहे है तथापि सातवें महा-शयजी युगके मध्यमे दो आषाढ और युगान्तमें दो पौष लिखते हैं सो तो बहुत वर्षोंसे काशीमें अभ्यास करते हैं इसलिये विद्वत्ताके अजीर्णतासे उपयोग शून्यताका कारण है,—

चार मास वालेकी तरह हो जाना चाहिये तैसेही यह शेठ पुरुष है परन्तु पर स्त्रीके गमनका और वेश्याके गमनका वर्जन करनेवाला धर्मावलम्बी होनेसे उनके साथ मैथुन सेवन करनेमें तो नपुंसककी तरह हैं परन्तु अपने नियमका प्रतिपालन करके ब्रह्मचर्य्य धारण करनेमें तो समर्थ होनेसे उत्तम पुरुषकी तरह है अर्थात् आपही उस गुणसे उत्तम पुरुष हैं इसी न्यायानुसार यद्यपि अधिक मास भी गिनतीके प्रमाणका व्यवहारमें तो बारह मासोंके बरोबरही पुरुष रूप है उसीमें वैष्णव लोग दान पुण्यादि विशेष करते हैं और उसीके महात्म्यकी कथा सुनते हैं इसीलिये उसीको पुरुषोत्तम अधिक मास कहते हैं।

और श्रीजैन शास्त्रोंमें भी मन्दिरके शिखरवत् कालका प्रमाणके शिखर रूप उत्तम ओपमा अधिक मासको है। उसीमें मुहूर्त्त नैमित्तिक विवाहादि आरम्भ वाले संसारिक कार्य्य नहीं होते हैं परन्तु धर्म कार्य्य तो विशेष होते हैं इसलिये उपरोक्त न्यायानुसार मुहूर्त्त नैमित्तिक आरम्भ वाले संसारिक कार्यों में तो अधिक मास नपुंसककी तरह है परन्तु धर्म कार्यों में तो विशेष उत्तम होनेसे सबसे अधिक है इसलिये इसका अधिक मास ऐसा नाम भी सार्थक है तथापि धर्म कार्यों में और गिनतीका प्रमाणमें उसीको नपुंसक ठहरा करके अधिक मासकी निन्दा करते हुए उसीकी गिनती निषेध करते हैं तो वह व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका अनुकरण करनेवाले हैं सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे और अब सातवें महाशयजीके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं— पर्युषणा विचारके छट्ठे पृष्टकी १९ वी पंक्तिसे सातवें पृष्टकी

शासनमें लौकिक पञ्चाङ्ग मुजबही तिथि, वार, घडी, पळ, नक्षत्र, योग, सूर्योदय, दिनमान, तिथिकी हानी, वृद्धि, राशि चन्द्र, पक्ष, मास, मुहूर्त्त वगैरहसे ससार व्यवहारमें ओर धर्म व्यवहारमें वर्ताव करनेमें आता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें जिस मासकी वृद्धि होवे उसीको मान्य करके उसी मुजब ससार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव होनेका प्रत्यक्षमें बनता हैं इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण, दो भाद्रपद और दो आश्विन वगैरह होवे उसी के गिनतीको निषेध न करते हुवे प्रमाण करना सो तो पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसार तथा युक्ति पूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वय सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले प्रत्यक्षमें बनते है सो तो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

और दो आश्विन होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद ७० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करके दूसरे आश्विनमें विहार करनेकी कोई जरूरत नहीं है क्योंकि अधिक मास होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद १०० दिने कार्त्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करके विहार करनेमें आता है सो शास्त्रानुसार और युक्ति पूर्वक न्यायकी बात है इसलिये कोई भी दूषण नही लग सकता है इसका खुलासा इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३५९।३६० में छप गया है—

और "समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी" सातवें महाशयजीका यह लिखना अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको प्रगट करने वाला उत्सूत्रभाषण रूप ससार वृद्धिका

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति, श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति और श्रीज्योतिषकरण्डपयन्न वगैरह शास्त्रानुसार तथा उन्होंकी व्याख्यायोंके अनुसार अधिक मास होनेका कारण कार्य्य तथा गिनतीका प्रमाणसे जो सातवें महाशयजी किसी सद्गुरुसे पढके तात्पर्य्यार्थको समझते और श्री भगवती जी श्रीअनुयोगद्वार वगैरह शास्त्रानुसार समय, आवलिकादि कालकी व्याख्याको विचारते तो अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नहीं करते और दो श्रावण दो भाद्र, दो आश्विन वगैरह नहीं होनेका लिखनेके लिये लेखनी भी नहीं चलाते सो पाठक वर्ग विचार लेवेंगे —

और भी आगे पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठमें लिखा है कि (लौकिक पञ्चाङ्गानुसार अधिक मासको लेखामें गिनने वाले महाशयोसे पूछता हूं कि यदि आश्विन दो होंगे तो साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणान्तर सत्तरवें दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करोगे कि नही, यदि नही करोगे तो समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी ? अगर चौमासीका प्रतिक्रमण करोगे तो दूसरे आश्विन सुदी पूर्णमासीके पीछे विहार करना पड़ेगा। आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे तो श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामें न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज साम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यो नही करते)

इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार वर्ताव करनेकी पूर्वाचार्यों की आज्ञा है इसलिये कालानुसार श्रीजैन

शासनमें लौकिक पञ्चाङ्ग मुजबही तिथि, वार, घडी, पळ, नक्षत्र, योग, सूर्योदय, दिनमान, तिथिकी हानी, वृद्धि, राशि चन्द्र, पक्ष, मास, मुहूर्त्त वगैरहसे ससार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव करनेमें आता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें जिस मासकी वृद्धि होवे उसीको मान्य करके उसी मुजब ससार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव होनेका प्रत्यक्षमें बनता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण, दो भाद्रपद और दो आश्विन वगैरह होवे उसी के गिनतीको निषेध न करते हुवे प्रमाण करना सो तो पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसार तथा युक्ति पूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वय सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले प्रत्यक्षमें बनते है सो तो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

और दो आश्विन होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद ७० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करके दूसरे आश्विनमें विहार करनेकी कोई जरूरत नहीं है क्योंकि अधिक मास होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद १०० दिने कार्त्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करके विहार करनेमें आता है सो शास्त्रानुसार और युक्ति पूर्वक न्यायकी बात है इसलिये कोई भी दूषण नही लग सकता है इसका खुलासा इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३५९।३६० में छप गया है—

और "समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी" सातवें महाशयजीका यह लिखना अभिनिवेशिक मिथ्या त्वको प्रगट करने वाला उत्सूत्रभाषण रूप ससार वृद्धिका

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति, श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति, श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति और श्रीज्योतिषकरण्डपयन्न वगैरह शास्त्रानुसार तथा उन्होंकी व्याख्यायोंके अनुसार अधिक मास होनेका कारण कार्य्य तथा गिनतीका प्रमाणको जो सातवें महाशयजी किसी सद्गुरुसे पढके तात्पर्य्यार्थको समझते और श्री भगवती जी श्रीअनुयोगद्वार वगैरह शास्त्रानुसार समय, आवलिकादि कालकी व्याख्याको विचारते तो अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नहीं करते और दो श्रावण दो भाद्र, दो आश्विन वगैरह नहीं होनेका लिखनेके लिये लेखनी भी नहीं चलाते सो पाठक वर्ग विचार लेवेंगे —

और भी आगे पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठमें लिखा है कि (लौकिक पञ्चाङ्गानुसार अधिक मासको लेखामें गिनने वाले महाशयोंसे पूछता हू कि यदि आश्विन दो होगे तो साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणानन्तर सत्तरवें दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करोगे कि नही, यदि नही करोगे तो समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी? अगर चौमासीका प्रतिक्रमण करोगे तो दूसरे आश्विन सुदी पूर्णमासीके पीछे विहार करना पडेगा। आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे तो श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामे न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज साम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यो नही करते)

इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार वर्ताव करनेको पूर्वाचार्यों की आज्ञा है इसलिये कालानुसार श्रीजैन

शासनमें लौकिक पञ्चाङ्ग मुजबही तिथि, वार, घडी, पल, नक्षत्र, योग, सूर्योदय, दिनमान, तिथिकी हानी, वृद्धि, राशि चन्द्र, पक्ष, मास, मुहूर्त्त वगैरहसे ससार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव करनेमें आता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें जिस मासकी वृद्धि होवे उसीको मान्य करके उसी मुजब ससार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव होनेका प्रत्यक्षमें बनता हैं इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण, दो भाद्रपद और दो आश्विन वगैरह होवे उसी के गिनतीको निषेध न करते हुवे प्रमाण करना सो तो पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसार तथा युक्ति पूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वय सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले प्रत्यक्षमें बनते है सो तो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे,—

और दो आश्विन होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद ७० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करके दूसरे आश्विनमें विहार करनेकी कोई जरूरत नही है क्योंकि अधिक मास होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद १०० दिने कार्त्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करके विहार करनेमें आता है सो शास्त्रानुसार और युक्ति पूर्वक न्यायकी बात है इसलिये कोई भी दूषण नही लग सकता है इसका खुलासा इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३५९।३६० में छप गया है—

और "समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी" सातवें महाशयजीका यह लिखना अभिनिवेशिक मिथ्या त्वको प्रगट करने वाला उत्सूत्रभाषण रूप ससार वृद्धिका

हेतुभूत है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ तो श्रीगण-धर महाराजका कहा हुआ है और चार मासके सम्बन्ध वाला है इसलिये उसीकी तो सदाही अच्छी गति है और चार मासके वर्षाकालमें उसी सूत्रका वर्तनेमें आता है परन्तु सातवें महाशयजी सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थ में पांच मासके वर्षाकालमें भी उसी पाठको स्थापन करनेके लिये सूत्रके पाठ पर ही आक्षेप करते हैं और बाल जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हैं सो क्या गति प्राप्त करेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने—

और " आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे" यह भी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है क्योंकि हम तो आश्विन मासको लेखा में गिन करके १०० दिन कायम रखते हैं इस लिये मिथ्या भाषण करनेसे महाव्रतके भङ्गका सातवें महाशयजीको भय लगता हो तो मिथ्या दुष्कृत देना चाहिये—

और "श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामें न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज सम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यों नहीं करते" सातवें महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि मास वृद्धिके अभावसे आषाढ चौमासीसे पचास दिने भाद्र सुदी चौथको पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करनेकी तो श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा है परन्तु पचासवें दिनकी रात्रिकोभी उल्लघन करना नहीं कल्पता इसलिये दो श्रावण होनेसे श्री कल्पसूत्रके तथा उन्होंकी व्याख्यायोंके अनुसार ५० दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें

अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करना चाहिये परन्तु मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी ८० दिने भाद्र शुदीमें पर्युषणा करके भी निर्दुषण बननेके लिये अधिक मासके ३० दिनोको गिनतीमे छोडकरके ८० दिनके ५० दिन गच्छपक्षी बाल जीवोके आगे कहके आप आज्ञाके आराधक बनना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकते है क्योंकि श्रीभगवतीजी श्रीअनुयोगद्वार श्रीज्योतिषकरण्डपयन्न और नव तत्व प्रकरणादि शास्त्रानुसार तथा इन्हीकी व्याख्यायोके अनुसार समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मासादिसे जो काल व्यतीत होवे उसी कालका समय मात्रभी गिनतीमें निषेध नही हो सकता है तथापि निषेध करनेवाले पचागीकी श्रद्धारहित और श्री जिनाज्ञाके उत्थापक निन्हव, मिथ्या दृष्टि-संसार गामी कहे जावे, तो फिर एक मासके ३० दिनोको गिनतीमें निषेध करने वालेको पचागीकी श्रद्धा रहित और श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी कहनेमें कुछ भी तो दूषण मालूम नही होता है इसलिये अधिक मास के ३० दिनोकी गिनती निषेध करने वाले मिथ्या पक्षग्राहियोकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने। इसलिये दो आश्विन होनेसे भाद्र शुदी चौथसे कार्तिक तक १०० दिन होते है जिसके ७० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले और दो श्रावण होनेसे भाद्रतक ८० दिन होते हैं जिसके तथा दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्र तक ८० दिन होते हैं जिसके भी ५० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी होनेसे आत्मार्थियोको उन्होका पक्ष छोड करके इस ग्रन्थको सम्पूर्ण पढ

हेतु भूत है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ तो श्रीगणधर महाराजका कहा हुआ है और चार मासके सम्बन्ध वाला है इसलिये उसीकी तो सदाही अच्छी गति है और चार मासके वर्षाकालमें उसी मुजब वर्तनेमें आता है परन्तु सातवें महाशयजी सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थ में पांच मासके वर्षाकालमें भी उसी पाठको स्थापन करनेके लिये सूत्रके पाठ पर ही आक्षेप करते हैं और बाल जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हैं सो क्या गति प्राप्त करेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने—

और " आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे" यह भी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है क्योंकि हम तो आश्विन मासको लेखा में गिन करके १०० दिन कायम रखते हैं इस लिये मिथ्या भाषण करनेसे महाव्रतके भङ्गका सातवें महाशयजीको भय लगता हो तो मिथ्या दुष्कृत देना चाहिये—

और "श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामें न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज सम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यों नहीं करते" सातवे महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि मास वृद्धिके अभावसे आषाढ चौमासीसे पचास दिने भाद्र शुदी चौथको पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करनेकी तो श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञा है परन्तु पचासवे दिनकी रात्रिकोभी उल्लघन करना नही कल्पता इसलिये दो श्रावण होनेसे श्री कल्पसूत्रके तथा उन्हांकी व्याख्यायोंके अनुसार ५० दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें

किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे। परन्तुमत्तर दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाताहू कि—हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीका ऊपरके लेखको मैं देखताहू तो मेरेकोवडेही खेदकेसाथ आश्चर्य्य उत्पन्नहोता है कि, सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीने शास्त्रविशारदजैनाचार्य्यकी पदवीकोधारणकरीहै परतुअपनेकदाग्रहके कल्पित पक्षकीबातको मायावृत्तिसे स्थापित करके बालजीवोको श्रीजिनाज्ञासेभ्रष्टकरनेके लिये उन्होंमें अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका बहुतही सग्रहहोनेसे उसपदवीको सार्थक न करसके परन्तु शास्त्रविराधक उत्सूत्रभाषणाचार्य्यकी पदवीके गुण तो (सातवें महाशयजीमें) प्रगट दिखते है क्योकि देखो सातवें महाशयजीने मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये पर्युषणाकल्पचूर्णिका और महानिशीथके दशवे उद्देशकी चूर्णिका पाठ लिख दिखाया परतु शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमें अधूरी बात भोले जीवोको दिखानेसे ससारवृद्धिका कुछभी भय हृदयमेंनलाये मालूम होता है क्योकि प्रथमतो महानिशीथकी चूर्णिका नाम लिखा सोतो उपयोग शून्यताके कारणसे मिथ्या है क्योकि महानिशीथकी चूर्णि नही किंतु निशीथसूत्रकी चूर्णि है और पर्युषणाकल्प चूर्णिमें तथा निशीथसूत्रकीचूर्णिमें खास पर्युषणाकेही सबधकी व्याख्यामें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है और मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सरमें वीस दिने पर्युषणाकही है तैसेही मास वृद्धिके अभावसे चद्र सवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा कही है और पञ्चक परिहाणीका कालमें

कर सत्य बातको ग्रहण करना चाहिये जिसमें आत्म-कल्याण है नतु अधिक मासके गिनतीका निषेध रूप अंध परंपराका मिथ्यात्वमें,—

और इसके आगे फिरभी मासवृद्धि होतेभी भाद्र पदमें पर्युषणा ठहरानेके लिये पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठके अन्तसे आठवें पृष्ठ तक लिखा है कि-(पर्युषणाकल्पचूर्णि, तथा महानिशीथचूर्णिके दसवें उद्देशेमें इसी तरहका पाठ है,

"अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सा-लवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्हपञ्चमीए पज्जोसवणा" इ०

तथा "तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्ज इत सोऊण निग्गओ, अभिमुहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो, पविट्ठे हिअ भणिअ भद्दवयसुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जइ समणसंघेण पडिवयण ता रण्णाभणिअ तद्दिवस मम लोगानुवत्तीए इदो अणुजाणेयव्वो होहित्ति साहू चेइए अणुपज्जुवासिहव, तो छट्ठीए पज्जोसवणा कि-ज्जइ, आयरिएहि भणिअ, न वट्टिढति अतिक्कमितु, ताहे रण्णा भणिअ, ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविति, आयरिएहि भणिअ, एव भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोस-विय, एव जुगप्पहाणेहि कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमता सव्वसाहूणमित्यादि" ।

ऊपरकी पाठ साक्षात् सूचित करती है कि भाद्र सुदी चौथको साम्वत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करना चाहिये । किन्तु जब दो श्रावण आवें तो श्रावण सुदी चौथके रोज साम्वत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नही है तो आग्रह करना क्या ठीक है ? दो भाद्र आवेंतो

किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे। परञ्चमत्तर दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाताहूं कि—हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीका ऊपरके लेखको मैं देखताहूं तो मेरेकोवडेही खेदकेसाथ आश्चर्य्य उत्पन्नहोता है कि, सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीने शास्त्रविशारदजैनाचार्य्यकी पदवीकोधारणकरीहै परंतुअपनेकदाग्रहके कल्पित पक्षकीबातको मायावृत्तिसे स्थापित करके बालजीवोको श्रीजिनाज्ञासेभ्रष्टकरनेके लिये उन्होंमे अभिनेवेशिक मिथ्यात्वका बहुतही सग्रहहोनेसे उसपदवीको सार्थक न करसके परन्तु शास्त्रविराधकउत्सूत्रभाषणाचार्य्यकी पदवीके गुण तो (सातवें महाशयजीमें) प्रगट दिखते है क्योकि देखो सातवें महाशयजीने मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमे पर्युषणा स्थापन करनेके लिये पर्युषणाकल्पचूर्णिका और महानिशीथके दशवे उद्देशकी चूर्णिका पाठ लिख दिखाया परतु शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमें अधूरी बात भोले जीवोको दिखानेसे ससारवृद्धिका कुछभी भय हृदयमेंनलाये मालूम होता है क्योकि प्रथमतो महानिशीथकी चूर्णिका नाम लिखा सोतो उपयोग शून्यताके कारणसे मिथ्या है क्योकि महानिशीथकी चूर्णि नही किंतु निशीथसूत्रकी चूर्णि है और पर्युषणाकल्प चूर्णिमें तथा निशीथसूत्रकीचूर्णिमें खास पर्युषणाकेही सबधकी व्याख्यामें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है और मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सवत्सरमें बीस दिने पर्युषणाकही है तैसेही मास वृद्धिके अभावसे चद्र सवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा कही है और पञ्चक परिहाणीका कालमें

तरहसे १८० दिनके ६ मासका कल्प कहा है और मास वृद्धिके अभावसे आषाढ चौमासीसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते दसवें पञ्चकमें पचासवें दिन भाद्र पद शुक्ल पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी परन्तु कारणसे श्रीकालकाचार्य्य जीने एकौनपञ्चाशवें (४९) दिन भाद्र शुदी चौथको पर्युषणा करी है जिसका सबधकी विस्तार पूर्वक दोनु चूर्णिमें कहा है सो दोनु चूर्णिके पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारवाले दोनु पाठ भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ९२से लेकर१०४तक छप गये है सो पढनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा। परन्तु बडेही अफसोसकी बात है कि सातवें महाशयजी दोनु चूर्णिके आगे पीछेके सब पाठोको छोड करके फिर मास वृद्धिके अभावसे ४९ वे दिने पर्युषणा करनेवाले पाठको मास वृद्धि दो श्रावण होते भी लिखके दोनो चूर्णिकार महाराजोके विरुद्धार्थमें यावत्८० दिने पर्युषणा स्थापन करनेके लिये बाल जीवोको अधूरे पाठ लिख दिखाते कुछ भी लज्जा नहीं पाते हैं सो भी कलयुगि विद्वत्ताका नमूना है इसलिये मास वृद्धिके अभावके विस्तार वाले सब पाठोको छोड करके मास वृद्धि होते भी उसीमेंसे अधूरेपाठ सातवेंमहाशयजीने लिखे है सो अभि-निवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रविराधक उत्सूत्र भाषणाचार्यके गुण प्रगट दिखाये है सो ते विवेकी पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे,–और सुप्रसिद्ध विद्वान् तीसरे महाशयजी श्रीविनय विजयजीने भी, पण्डितहर्षभूषणजीकी और धर्मसागरजीकी धूर्त्ताईमें पडकर अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे ऊपरकी दोनों चूर्णिके अधूरे पाठ श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें लिखे है उसी तरहसे वर्त्तमानमें सातवें महाशयजीने भी किया परन्तु

पर भवका और विद्वानोके आगे अपने नामकी हासी करानेका कुछ भी पूर्वापरका विचार न किया, अन्यथा अन्ध परम्पराके मिथ्यात्वको पुष्टीकारक शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमे ऐसे अधूरे पाठ लिखके और कुयुक्तियोका सग्रह करके बाल जीवोको सत्य बात परसे श्रद्धा भ्रष्ट करनेके लिये कदापि परिश्रम नही करते, सो तो निष्पक्षपाती सज्जनोको विचार करना चाहिये,—

और "जब दो श्रावण आवे तो श्रावण सुदी चौथके रोज सावत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नही है तो क्या आग्रह करना ठीक है" यह भी सातवें महाशयजीका लिखना गच्छपक्षी बाल जीवोको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लिये अज्ञताका अथवा अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका सूचक है क्योकि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना ऐसा तो किसी भी शास्त्रमें नही लिखा है तो फिर दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथा क्यो पुकारते है और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना सो तो श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उन्होकी अनेक व्याख्यायोके अनुसार और युक्तिपूर्वक स्वय सिद्ध है सो तो इसी ग्रन्थकी आदिमेंही विस्तारसे लिखनेमें आया है और खास सातवे महाशयजी भी श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठको तथा उसीकी वृत्तिको हर वर्षे पर्युषणामें बाचते हैं उसीमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युग मध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ एव वर्द्धते नान्येमासास्तट्टिप्पनकतु अधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽत पञ्चाशद् भिर्दिनै पर्युषणा सङ्गते–युक्तेति वृद्धा –" ऐसे अक्षर किरणावली वृत्तिमें

उत्कृष्टमे १८० दिनके ६ मासका कल्प कहा है और मास वृद्धिके अभावसे आषाढ़ चौमासीसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते दसवे पञ्चकमें पचासवें दिन भाद्र पद शुक्र पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी परन्तु कारणसे श्रीकालकाचार्य्यजीने उनीस पञ्चासवें (४९) दिन भाद्र शुदी चौथको पर्युषणा करी है जिसका सबधभी विस्तार पूर्वक दोनु चूर्णिमें कहा है सो दोनु चूर्णिके पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारवाले दोनु पाठ भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ९२ से लेकर १०४ तक छप गये है सो पढ़नेसे सर्व निर्णय हो जावेगा। परन्तु बड़ेही अफसोसकी बात है कि सातवें महाशयजी दोनु चूर्णिके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके फिर मास वृद्धिके अभावसे ४९ वे दिने पर्युषणा करनेवाले पाठको मास वृद्धि दो श्रावण होते भी लिखके दोनो चूर्णिकार महाराजोके विरुद्धार्थमें यावत् ८० दिने पर्युषणा स्थापन करनेके लिये बाल जीवोंको अधूरे पाठ लिख दिखाते कुछ भी लज्जा नहीं पाते हैं सो भी कलयुगि विद्वत्ताका नमूना है इसलिये मास वृद्धिके अभाव के विस्तार वाले सब पाठोको छोड़ करके मास वृद्धि होते भी वसीमेंसे अधूरेपाठ सातवेंमहाशयजीने लिखे है सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रविराधक उत्सूत्र भाषणाचार्यके गुण प्रगट दिखाये है सो तो विवेकी पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—और सुप्रसिद्ध विद्वान् तीसरे महाशयजी श्रीविनय विजयजीने भी, पण्डितहर्षभूषणजीकी और धर्मसागरजीकी धूर्ताईमें पड़कर अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे ऊपरकी दोनो चूर्णिके अधूरे पाठ श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें लिखे है उसी तरहसे वर्तमानमें सातवें महाशयजीने भी किया परन्तु

पक्तिमें गिनने योग्य है सो तो इस ग्रन्थको सपूर्ण पढनेवाले विवेकी सज्जन स्वय विचार सकते है —

और दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन हो तोभी आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनी चाहिये जिससे पिछाडी १०० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करनेमे आवे तो कोई दूषण नही है किन्तु शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इसका विशेष विस्तार पहिलेही छप चुका है । और नवमे पृष्ठके मध्यमें तिथिसबधी लिखा है जिसकी तो समीक्षा आगे लिखुगा परन्तु आठवे पृष्ठके अन्तमे तथा नवमे पृष्ठके आदि अन्तमें और दशवे पृष्ठकी आदिमें छट्ठी पक्ति तक लिखा है कि— (जैसे फाल्गुन और आषाढकी वृद्धि होनेपर दूसरे फाल्गुनमे और दूसरे आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि करते हो, उसी तरह अन्य अधिक मासमें भी दूसरेहीमें करना वाजिब है । वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्यशाली नही बनोगे । एक अधिकमासमाननेमे अनेक उपद्रव खडे होते हैं और अधिकमासको गिनतीमे न लेनेवालेको कोई दोष नही है । उसी तरह तुम भी अधिक मासको नि सत्त्व मानकर अनेक उपद्रव रहित बनो ।

इस रीतिकी व्यवस्था रहते हुए कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरम्परा पालो परन्तु स्वमन्तव्यमे विरोध न आवे ऐसा वर्त्तावकरना बुद्धिमानपुरुषोका काम है । जैसे फाल्गुनके अधिक होनेपर दूसरे फाल्गुनमें नैमित्तिक कृत्य करते हो उसी तरह अन्य अधिकमास आनेपर दूसरे महीनेमे नैमित्तिक कृत्योंके करनेका उपयोग रक्खो कि जिसमें कोई वि-

तथा दीपिका वृत्तिमें और सुखबोधिका वृत्तिमें अपने ही गच्छके विद्वानोंने खुलासा पूर्वक लिखे हैं सो सातवें महाशयजी अच्छी तरहसे जानते है और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें ५० दिन पूरे होते हैं इसलिये "जब दो श्रावण आवे सो श्रावण सुदी चौथके रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो आग्रह करना क्या ठीक है" सातवें महाशयजीका यह लिखना मायावृत्तिसे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको प्रगट करनेवाला प्रत्यक्ष सिद्ध होगया सो पाठकवर्ग भी विचार लेवेंगे,—

और (दो भाद्र आवे तो किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे परन्तु ८० दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–दो भाद्रआवे तब पूर्वोक्त पाठके अभिप्रायसे ५० दिनकी गिनती करके प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो तो न्यायकी बात है परन्तु दो भाद्र होते भी पिछाडीके ७० दिन रखनेके लिये दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करने वालोकी बडी भूल है क्योंकि पूर्वोक्त पाठमें कारण योगे ४९ वें दिन पर्युषणा करी है परन्तु ५१ वें दिन भी नही करी है इस लिये दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करने वालोको ८० दिन होते है इसलिये श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध बनता है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे पिछाडी ७० दिन रहनेका दोनु चूर्णिके पाठमें खुलासा पूवक कहा है सो तो इसीही ग्रन्थके पृष्ट ९४ और ९९ वेंमे पाठ छप गये हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पिछाडीके ७० दिन रखनेका आग्रह करने वाले अज्ञानियोकी

पक्तिमे गिनने योग्य है सो तो इस ग्रन्थको सपूर्ण पढनेवाले विवेकी सज्जन स्वय विचार सकते है —

और दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन हो तोभी आषाढ चोमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमे अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनी चाहिये जिससे पिछाडी १०० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करनेमे आवे तो कोई दूषण नही है किन्तु शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इसका विशेष विस्तार पहिलेही छप चुका है। और नवमे पृष्ठके मध्यमें तिथिसबधी लिखा है जिसकी तो समीक्षा आगे लिखुगा परन्तु आठवे पृष्ठके अन्तमे तथा नवमे पृष्ठके आदि अन्तमें और दशवे पृष्ठकी आदिमें छट्ठी पक्ति तक लिखा है कि— (जैसे फाल्गुन और आषाढकी वृद्धि होनेपर दूसरे फाल्गुनमे और दूसरे आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि करते हो, उसी तरह अन्य अधिक मासमें भी दूसरेहीमें करना वाजिब है। वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्यशाली नही बनोगे। एक अधिकमासमाननेमे अनेक उपद्रव खडे होते हैं और अधिकमासको गिनतीमे न लेनेवालेको कोई दोष नही है। उसी तरह तुम भी अधिक मासको नि सत्त्व मानकर अनेक उपद्रव रहित बनो।

इस रीतिकी व्यवस्था रहते हुए कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरम्परा पालो परन्तु स्वमन्तव्यमे विरोध न आवे ऐसा वर्त्तावकरना बुद्धिमानपुरुषोका काम है। जैसे फाल्गुनके अधिक होनेपर दूसरे फाल्गुनमें नैमित्तिक कृत्य करते हो उसी तरह अन्य अधिकमास आनेपर दूसरे महीनेमे नैमित्तिक कृत्योंके करनेका उपयोग रक्खो कि जिसमें कोई वि-

रोध न रहे। दो श्रावण हो, अथवा भाद्र हो तथा दो आ श्विन होतेभी कोई विरोध नहीं रहेगा। तीर्थंकर महारा जकी आज्ञा सम्यक् प्रकारसे पलेगी)

ऊपरके लेखमें सातवें महाशयजीने अधिक मासको नि सत्व मान कर गिनतीमें निषेध किया तथा गिनतीमें लेनेवालोंको अनेक उपद्रव दिखाये और गिनतीमें नहीं लेनेवालोंको दूषण रहित ठहराये फिर मास वृद्धि होनेसे दूसरे मासमें नैमित्तिक कृत्य करनेका भी ठहराया इसपर मेरेको बडेही आश्चर्य सहित खेदके साथ लिखना पडता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि किस खाड़में चली गई होगी सो ऊपरके लेखमें विवेक शून्य होकर पूर्वापरका विचार किये बिनाही उटपटांग लिख दिया क्योंकि देखो सातवें महाशयजी यदि अधिक मासको नि सत्व मान करके गिनतीमें नहीं लेते होवे तबतो दो श्रावण, दो भाद्र, दो आश्विन, दो फाल्गुण और दो आषाढ मासोंका उन्होंका लिखनाही वन्ध्याके पुत्र समान हो जाता है और मास वृद्धि होनेसे दो श्रावणादि लिखते हैं तथा उसी मुजबही वर्त्ताव करते हैं तब तो अधिक मासको नि सत्व मान करके गिनतीमें निषेध करना (गिनतीमें नहीं लेना) सो ममजननीवध्या समान बाल लीलाकी तरह होजाता है क्योंकि दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करना फिर मास वृद्धिकी गिनती निषेध करना यहतो विवेक शून्यके सिवाय और कौन होगा क्योंकि दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करते हैं इसलिये उसीकी गिनतीका निषेध करना तथा गिनतीमें लेने

वालोको अनेक उपद्रव दिखानें और आप दोनु मासो को लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करते भी, उसीको गिनतीमें न लेते हुये प्रत्यक्ष माया वृत्तिसे दूषण रहित बनना सो सब बाल जीवोको कदाग्रहमें फसाकर उत्सूत्र भाषणसे ससार परिभ्रमणका हेतु है सो तो निष्पक्षपाती तत्वज्ञ पुरुष स्वय विचार लेवेंगे,—

और मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत सब नैमित्तिक कृत्योको दूसरे मासमे करनेका सातवे महाशयजी ठहराते हैं सो भी अज्ञताका सूचक है क्योकि वर्त्तमानमें मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत कृत्य, आगे पीछे दोनो मासमें करनेमे आते है याने कृष्ण पक्षके तिथि नियत कृत्य प्रथम मासके प्रथम कृष्ण पक्षमे करनेमें आते है और शुक्ल पक्षके तिथि नियत कृत्य दूसरे मासके दूसरे शुक्ल पक्षके करनेमें आते है —

मित्रवत् न्यायसे अर्थात्—एक नगरमे सज्जनादि गुणयुक्त व्यवहारिया रहता था उसीने अपने भोजनकी तैयारी करी उसी समय उसीके मित्रका आगमन हुआ तब दूसरा भोजन बनानेका अवसर न होनेसे अपने भोजनमेंसे आधा मित्रको दिया और आधा आपने ग्रहण किया,उसी दृष्टान्तके न्यायसे एक नगर रूपी सवत्सर उसीमें सज्जनादि गुनयुक्त व्यवहारियावत् मास उसीके भोजन रूपी नैमित्तिक कृत्य और अधिक मास रूपी मित्रका आगमन होनेसे आधे आधे नैमित्तिक कार्य बाट लिये समझो जैसे दे। कार्त्तिक होवेंगे तब श्रीसभवनाथस्वामीके केवल ज्ञान कल्याणकके श्रीपद्मप्रभुजीके जन्मकल्याणकके तथा दीक्षाकल्याणकके, श्रीने-

मिनाथजीके च्यवन कल्याणकके और श्रीमहावीरस्वामीके मोक्षकल्याणकके उच्छव तपश्चर्यादिकार्य, तथा दीपमालिका (दीवाली) और नमीके मम्बन्धीकार्य प्रथम कार्तिक मासके प्रथम कृष्णपक्षमें करनेमें आवेंगे, दो चैत्र होनेसे श्रीपार्श्व-नाथजीके केवल ज्ञानादि कार्य प्रथम चैत्रमें तथा श्रीवर्द्धमा-नस्वामीके जन्मादिके तथा ओलियो वगैरह दूमरे चैत्रमें और दो आषाढ होनेसे श्रीआदिनाथजीके च्यवनादिके कार्य प्रथम आषाढमें और श्रीवर्द्धमानस्वामीके च्यवनादिके कार्य तथा चौमासी वगैरह दूसरे आषाढमें इमी तरहसे सब अ-धिक मासोंमें समझना चाहिये।

और इस बातका विशेष खुलासा पांचवें महाशयजी न्यायरत्नजीके लेखकी समीक्षामें भी लिखनेमें आया है सो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २३४।२३५।२३६ में छप गया है सो पढनेसे विशेष निर्णय हो जावेगा,—और मासवृद्धि होनेसे ऊपर मुजबही कल्याणकादि तपश्चर्या करनेके लिये खास सातवें महाशयजीकेही पूर्वज श्रीतपगच्छमें सुप्रसिद्ध श्रीविजयसेन-सूरिजीने भी कहा है तथाहि श्रीसेनप्रश्ने सप्तसप्तति (७७) पृष्ठे यथा —

प्रश्न —चैत्रमास वृद्धौ कल्याणकादि तप प्रथमेद्वितीये वा मासिकार्या।

उत्तरम्—प्रथमचैत्रासित द्वितीयचैत्रसित पक्षाभ्या चैत्रमास सम्बन्धी कल्याणकादि तप श्रीतातपादैरपि कार्य-माण दृष्टमस्ति तेन तथैवकार्यमित्यादि।

और लौकिकजन भी दो भाद्रपद होनेसे श्रीकृष्णजीकी जन्माष्टमी प्रथम भाद्रपदके प्रथमपक्षमें मानते हैं तथा दो

आश्विन होनेसे श्राद्धपक्ष प्रथम आश्विनमें और दशहरा दूसरे आश्विनमें, इसी तरहसे सब अधिक मासोंके कारणसे मास नैमित्तिक कार्य आगे पीछे दोनोमे मानते है। परन्तु सातवें महाशयजी नैमित्तिक कार्य केवल दूसरे मासमें ही करनेका लिख करके दो कार्त्तिक होवे तब दिवाली वगैरह कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य दूसरे कार्त्तिकमें तथा दो पौष होवें तब श्रीचन्द्रप्रभुजीके,श्रीपार्श्वनाथजीके जन्म, दीक्षादि कल्याणक दूसरेपौषमें और दो चैत्रहोनेसे श्रीपार्श्वनाथजीके केवल ज्ञान कल्याणकको दूसरे चैत्रमें इसी तरहसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य भी दूसरे मासमें ठहराते हैं सो शास्त्रविरुद्ध होनेसे अज्ञताका कारण है क्योकि ऊपरोक्त लेखानुसार ऊपर के कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें होने चाहिये सो तो न्याय दृष्टि वाले विवेकी पाठकवर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—

और उपरोक्त नैमित्तिक कार्योंके लेखसे दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रपदके दूसरे शुक्लपक्षमें सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो भी निष्केवल अपनी अज्ञानता को प्रगट करते है क्योकि मास नैमित्तिक कार्य अधिक मास होनेसे आगे पीछे दोनो मासमें करनेमें आते हैं परन्तु पर्युषणा वैसे नही हो सकती है क्योंकि पर्युषणा तो दिनोके प्रतिबद्ध होनेसे अषाढ चौमासीसे ५० दिनकी गिनतीसे अवश्य करके करनेका अनेक शास्त्रोमें प्रगट पाठ है इसलिये दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणा दूसरे भाद्रपदमें नहीं किन्तु प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनकी गिनतीसे शास्त्रोंको प्रमाण करने वाले आत्मार्थियोको करनी चाहिये और प्राचीन कालमें जैन पञ्चागानुसार मास वृद्धि होनेसे श्रावणमें पर्यु-

षणा करनेमे आतीथी तथा वर्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती है इसलिये मासवृद्धि होतेभी भाद्रपद प्रतिबद्ध पर्युषणा नही ठहर सकता है किन्तु दिनोके प्रतिबद्धही गिननेसे जहां व्यवहार से ५० दिन पूरे होवे वहांही करनी उचित है इतने परभी सातवें महाशयजी अपने कदाग्रहके हठवादसे शास्त्रोके प्रमाणोंको छोड़ करके नैमित्तिक कार्यो की तरह दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका ठहराते हैं तोभी उन्होंको प्रत्यक्ष विरोध आता है सोही दिखाते हैं कि–खास सातवें महाशयजीके पूर्वजने अधिक मास होनेसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें करनेका कहा है उसी मुजब सातवें महाशयजी पर्युषणाकरें तब तो पर्युषणाके आठदिनोके उच्छव का भङ्ग हो जायेगा और पर्युषणामे पहिले कृष्णपक्षके चार दिनोंके कार्य प्रथम भाद्रपदमें करने पड़ेगे फिर एक मास पर्यन्त मौन धारण करके पर्युषणामें पिछाड़ीके चार दिनोंके कार्य दूसरे भाद्रपदमे करें तब तो सातवें महाशयजीको खूब विटंबना होजावे सो तत्वज्ञ विवेकी जन स्वय विचार लेवेंगे,–

और ओलियो छठे महीने करनेमें आती है परन्तु अधिक मास होनेसे सातवें महीने करनेमें आती है तथा चौमासी चौथे महीने करनेमें आता है परन्तु अधिक मास होनेसे पाचवें महीने करनेमें आता है सो तो न्यायपूर्वक युक्ति की बात है परन्तु पर्युषणा तो आषाढ चौमासीसे ५० दिने अवश्य करके करनेका कहा है इसलिये अधिक मास हो तो भी ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघनकरनेसे मिथ्या

त्वकी प्राप्ति होती है तो फिर दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्यु-षणा करना सो तो कदापि श्रीजिनाज्ञामें नही आ सकता है सो भी विवेकी पाठकगण स्वय विचार लेवेगे,—

और शास्त्रानुसार भावपरपरा करके तथा युक्ति पूर्वक और लौकिक व्यवहार मुजब अधिक मास होनेसे नैमित्तिक कार्य आगे पीछे दोनो मासमे करनेमें आते हैं सोतो सातवे महाशयजीके पूर्वजने भी लिखा है जिसका पाठ ऊपरही लिखनेमे आया है तथापि सातवें महाशयजी प्रथम मासको छोड़करके दूसरे मासमें नैमित्तिक कार्य करनेके लिये “वैसा नही करोगे तो विरोधके परिहार करनेमे भाग्य शाली नही बनोगे” ऐसे अक्षर लिखके प्रथम मासमें नैमित्तिक कार्य करने वालोको विरोध दिखाते हैं सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना अपनी मति कल्पनासे भोले जीवोको भ्रममे गेरनेके लिये अपने पूर्वजके वचनको भी विरोध दिखाने वाले सातवे महाशयजी जैसे कलियुगि विनीत प्रगट हुवे है सो तो अपने पूर्वजोको खोटे कहके आप भले बनते है इसलिये आत्मार्थियोंको इन्हकी कल्पित बात प्रमाण करने योग्य नही है,—

और (कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरपरा पालो) सातवें महाशयजीका यह भी लिखना भोले जीवोको कदाग्रहमे फसाकर मिथ्यात्वको वढानेवाला है सो तो इसीही ग्रथके पृष्ठ ३१९ से ३४२ तकका लेख पढनेसे मालूम हो सकेगा परतु सातवें महाशयजीने ऊपरके लेखमे अपने अन्तरके भावका सूचन किया मालूम होता है क्योंकि सातवे महाशयजी बहुत वर्षोंसे काशीमें ठहर कर अपनी विद्वत्ता प्रगट कर रहे हैं

यणा करनेमे आतीथी तथा वर्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती है इसलिये मासवृद्धि होतेभी भाद्रपद प्रतिबद्ध पर्युषणा नही ठहर सकता है किन्तु दिनोके प्रतिबद्धही गिननेसे जहा व्यवहार से ५० दिन पूरे होवे वहाही करनी उचित है इतने परभी सातवें महाशयजी अपने कदाग्रहके हठवादसे शास्त्रोंके प्रमाणोंको छोड करके नैमित्तिक कार्यो की तरह दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका ठहराते हैं तोभी उन्होको प्रत्यक्ष विरोध आता है सोही दिखावते हैं कि--खास सातवें महाशयजीके पूर्वजने अधिक मास होनेसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें करनेका कहा है उसी मुजब सातवें महाशयजी पर्युषणाकरें तब तो पर्युषणाके आठदिनोके उच्छव का भङ्ग हो जावेगा और पर्युषणामे पहिले कृष्णपक्षके चार दिनोके कार्य प्रथम भाद्रपदमें करने पडेगे फिर एक मास पर्यन्त मौन धारण करके पर्युषणामें पिछाडीके चार दिनोंके कार्य दूसरे भाद्रपदमे करें तब तो सातवें महाशयजीकी खूब विटंबना होजावे सो तत्वज्ञ विवेकी जन स्वय विचार लेवेंगे,–

और ओलियो छठे महीने करनेमें आती है परन्तु अधिक मास होनेसे सातवें महीने करनेमे आती है तथा चौमासी चौथे महीने करनेमें आता है परन्तु अधिक मास होनेसे पाचवें महीने करनेमें आता है सो तो न्यायपूर्वक युक्ति की बात है परन्तु पर्युषणा तो आषाढ चौमासीसे ५० दिने अवश्य करके करनेका कहा है इसलिये अधिक मास हो तो भी ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघनकरनेसे मिथ्या-

के लिये और सत्य बातोका निषेध करनेके लिये नवीनबी कुयुक्तियो के विकल्प खडे करके विशेष मिथ्यात्त्व फैलावेगा और दूसरे भोले जीवोकोभी उसीमें फसावेगा सोतो उसीकेही निवीड कर्मोंका उदय समझना परन्तु उसीमें शास्त्र कारका कोई दोष नही है इसलिये यहा मेरा खुलासा पूर्वक यही कहना है कि अधिकमासकी गिनती निषेध करनेवाले और गिननीप्रमाण करनेवालोको अनेक कुयुक्तियोसे कल्पित दूषण लगानेवाले सातवें महाशयजी जैसे विद्वान् कहलाते भी नि केवल अन्ध परम्पराके कदाग्रहमे पडके बालजीवो को भो उसीमें फसानेके लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करके श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोकी और अपने पूर्वजोकी आशातना करते हुवे पञ्चागीके प्रत्यक्ष प्रमाणोको छोडकर फिर शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणो करके खूब पाखन्ड फैलायाहै और फैलारहेहै जिससे श्रीतीर्थंकर महाराजकी आज्ञाको उत्थापन करते है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करनेवाले कदाग्राहियोको मिथ्यादृष्टि निन्हवोंकी गिनतीमें गिनने चाहिये। यदि श्रीतीर्थंकर महाराजकी आज्ञाको अराधन करके आत्म कल्याणकी इच्छा होवे तो अधिक मासके निषेध करनेसम्बन्धी कार्योंका मिथ्या दुष्कृत देकर उसीकी गिनतीके प्रमाण मुजब वर्तों नहीं तो उत्सूत्र भाषणोंके विपाकतो भोगे बिना छूटने मुशकिल है,—

और फिरभी स्वपरम्परा पालने सम्बन्धी सातवें महाशयजीने लिखा है कि (स्वमतमे विरोध न आवे ऐसा वर्ताव करना बुद्धिमान पुरुषोंका काम है) इस लेखपर

इसलिये भोले जीव जानते है कि सातवें महाशयजीकी तरफसे पर्युषणा विचारका लेख प्रगट हुवा है सो शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वकही होगा परन्तु उसी लेखको तत्वज्ञ पुरुषो ने देखा तो निष्केवल शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमें तथा उत्सूत्रभाषणोके संग्रह वाला और कुयुक्तियोके संग्रह वाला होनेसे अज्ञानी जीवोको मिथ्यात्वमें फसाने वाला मालूम हुवा तब उसीकी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक समीक्षा मेरेको भव्यजीवोके उपकारके लिये इतनी लिखनी पडी है इसको बाचकर सातवें महाशयजीको अपनी विद्वत्ताके अभिमानसे और अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके कारणसे अपना मिथ्यापक्षके कल्पित कदाग्रहको छोडकर सत्य बात ग्रहण करनी बहुतही मुश्किल होनेसे (कदाग्रह न छूटेतो भले स्व परपरा पालो) ऐसे अक्षर लिखके कदाग्रहको तथा शास्त्रों के प्रमाण बिना कल्पित बातोकी अध परम्पराको पुष्ट करके भोले जीवोंको उसीमें फसाये और आपनेभी उसीका शरणालेकरके अपना अन्तर मिथ्यात्वको प्रगट किया इस-लिये इस ग्रथकारका सब सज्जन पुरुषोंको यही कहना है कि जो अल्पकर्मी मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी होगा सोतो शास्त्रो के प्रमाण विरुद्ध अपने अपने कदाग्रहकी अन्ध परपराके पक्षका आग्रहसें तत्पर न बनके इस ग्रथको सम्पूर्ण पढ करके पचागी प्रमाण पूर्वक युक्ति सहित सत्य बातोको ग्रहण करेगा दुसरोसे करावेगा और बहुल कर्मी मिथ्यात्वी होगा सोतो शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बातोको जानकरकेभी उसीको ग्रहण न करता हुआ अपने कदाग्रहकी अन्ध परम्परामे रहकर उसीको पुष्ट करने

बढानेके लिये शास्त्रोके आगे पीछेके सब पाठोको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे बिना सम्बन्धके अधूरे पाठके फिर उलट अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोसे तथा कुयुक्तियोसे भोले जीवोकी सत्य बातो परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके अपने मिथ्यात्वके पाखण्डमें गेरके समार वृद्धिका कारण करते हैं तो भी हितोपदेशसे अच्छा किया ऐसाअज्ञताके कारणसे वृथा पुकार करते हैं ।

तैसेही पर्युषणा विचारके लेखकने भी किया, अर्थात्-अपने कदाग्रहमें मुग्ध जीवोको फसानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णि वगैरह शास्त्रोके आगे पीछेके सब पाठोको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे शास्त्रकारोके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके अधूरे पाठ लिखके उलटे अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोकी तथा कुयुक्तियोकी कल्पनायोका पर्युषणा विचारके लेखमें संग्रह करके भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे हित बुद्धिसे विषय लिखनेका ठहराते हैं सो कदापि नही ठहर सकता है क्योंकि हितबुद्धिकेबहानेमिथ्यात्वकेपाखण्डकी वृद्धिका कारण किया है इसलिये भव्यजीवोंके उपकारके लिये पर्युषणा विचारके लेखकीशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक समालोचना करनी मेरेको उचित थी सो करी है जिसपर भी शास्त्रमार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखनेका सातवें महाशयजी लिखते है इसपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-खास आपही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे(शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक अधिक मासकी गिनती प्रमाण तथा श्रावण वृद्धिसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा और मासवृद्धिसे १३ मासके क्षामणे वगैरह) सत्य बातोको ग्रहण नही करते हुए अपने

भी मेरेको इतनाही कहना है कि–यह भी सातवें महाशयजीका लिखना अज्ञताका सूचक है क्योंकि श्रीजिनेश्वर भगवान्का कथन करा हुआ श्रीजिन प्रवचन अविसंवादी होनेसे सब गणधरोंके सबगच्छोंकी एकही समाचारी होती है परन्तु इस वर्तमान कालमें तो सब गच्छ वालोंकी भिन्न भिन्न समाचारी है और शास्त्रों के प्रमाण बिनाही अन्ध परम्परासे कितनीही बाते चल रही है इसलिये शास्त्र प्रमाण बिनाकी द्रव्य परम्परा पालने वालोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध महान् विरोध प्रत्यक्ष दिखता है तथापि अपने अन्ध परम्परा के कदाग्रहको नही छोड़ते हैं फिर कुयुक्तियोंसे अपना कदाग्रहके मतव्यको पुष्ट करके विरोध रहित (सातवें महाशयजीकी तरह) बनना चाहते है सो तो बुद्धिमान पुरुष नहीं किन्तु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी पक्के कदाग्रही कहे जाते हैं इसलिये अपने आत्म साधनमें विरोध नही चाहनेवाले तत्त्वज्ञ पुरुषों को तो शास्त्र विरुद्ध अपनी परम्पराको छोड़ करके शास्त्रानुसार सत्य बातको ग्रहण करनाही परम उचित है,–

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्ठकी सातवीं पङ्क्तिसें दशवी पङ्क्ति तक लिखा है कि (हित बुद्धिसे लिखे हुए विषय पर समालोचना करना हो तो भले करो किन्तु शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखना समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—जैसे कितनेही ढूंढिये तेरहा पंथी वगैरह कदाग्रही मायावृत्तिवाले धूर्त लोग अपने कदाग्रहके पक्षको

बढानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे बिना सम्बन्धके अधूरे पाठके फिर उलट अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंसे तथा कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंकी सत्य बातों परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके अपने मिथ्यात्वके पाखण्डमें गेरके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तो भी हितोपदेशसे अच्छा किया ऐसा अज्ञताके कारणसे वृथा पुकार करते हैं।

तैसेही पर्युषणा विचारके लेखकने भी किया, अर्थात्—अपने कदाग्रहमें मुग्ध जीवोंको फसानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके अधूरे पाठ लिखके उलटे अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंकी तथा कुयुक्तियोंकी कल्पनायोंका पर्युषणा विचारके लेखमें संग्रह करके भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे हित बुद्धिसे विषय लिखनेका ठहराते हैं सो कदापि नही ठहर सकता है क्योंकि हितबुद्धिकेबहाने मिथ्यात्वकेपाखण्डकी वृद्धिका कारण किया है इसलिये भव्यजीवोंके उपकारके लिये पर्युषणा विचारके लेखकीशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक समालोचना करनी मेरेको उचित थी सो करी है जिसपर भी शास्त्रमार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखनेका सातवें महाशयजी लिखते है इसपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि—खास आपही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे(शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक अधिक मासकी गिनती प्रमाण तथा श्रावण वृद्धिसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा और मासवृद्धिसे १३ मासके क्षामणे वगैरह) सत्य बातोंको ग्रहण नही करते हुए अपने

कदाग्रहकी कल्पनाको स्थापन करनेके लियेओर सत्यबातो का निषेध करनेके लिये पर्युषणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाषणोंको और कुयुक्तियोंके विकल्पोंके प्रत्यक्ष मिथ्या गप्पोंको लिखके भी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक लिखनेवालेको शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी दिखाते हैं सो तो प्रत्यक्ष धूर्ताचारीका लक्षण है इसको पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे,—

और (समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि—पक्षपातीकी श्रद्धा रहित कदाग्रहमें आगेवान, अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले तथा अन्यायमें प्रवर्तने वाले होकरकेभी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक मेरे सत्य लेखो की समालोचना आप कैसे कर सकोगे क्योंकि जो आप पक्षपातीकी श्रद्धा वाले आत्मार्थी तथा न्यायमें प्रवर्तने वाले होवो तबतो जो जो मैंने पर्युषणा विचारके लेखकी पक्ति पक्तिकी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक समालोचना करके आपके लेखोको उत्सूत्र भाषण रूप प्रत्यक्ष मिथ्या ठहराये है और सत्य बातोंको प्रगट करी है उसीको आद्यन्त पर्यंत पढके अपनी उत्सूत्र भाषणोकी और प्रत्यक्ष मिथ्या लेखोके भूलोकी श्रीचतुर्विध सघ समक्ष आलोचना लेकर शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सत्य बातोको ग्रहण करो पीछे मेरे लेखकी समालोचना करनेकी आपमें योग्यता प्राप्त होवे तब मेरे लेखकी समालोचना करनेको तैयार होना चाहिये। इतने परभी पर्युषणा विचार के सब लेखोको आप सत्य समझते होवें तो पक्ति पक्तिके

सब लेखोंको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्धकर दिखावो नहीं दिखाओ तो उनीकी आलोचना लेकर सत्य बातोको ग्रहण करो और अपने सब लेखोको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्ध नही करोगे तथा अपनी भूलोकी आलोचना भी नही लेवोगे औरसत्य बातोको ग्रहण भी नही करोगे तबतक मैंरे लेखकी समालोचना करनेकी आपमें योग्यता प्राप्त नहीं हो सकेगी तथापि आप केवल अपनी विद्वत्ताकी शर्म केमारे, लौकिक लज्जासे अपनी उत्सूत्र भाषणोकी तथा प्रत्यक्ष मिथ्या (पर्युषणा विचारके) लेखोकी भूलोको छुपा करके शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सत्य बातोके सम्बन्धका सब लेखको छोड़ करके बिना सम्बन्धका अधूरा लेखकी कुयुक्तियोके विकल्पो से समालोचना करके शास्त्र मर्य्यादा पूर्वकके बहाने मुग्ध जीवोको मिथ्यात्वमें फसानेके लिये पर्युषणा विचार के लेखकी तरह फिर भी उद्यम करोगे तो उसीके भी सबकी समालोचना करके आपके अन्यायके पापरूको शात करनेके लिये मैंरेको जलदीसे लेखनी चलानी ही पड़ेगी इसमें फरक नही समझना,—

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्टकी ११ वीं पङ्क्तिसे दशवें पृष्टके अन्त तक लिखा है कि (पाठक महाशयोको पक्षपात शून्य होकर निबन्ध देखने की सूचना दी जाती है स्नेहरागके वस होकर असत्यको सत्य नहीं मानना और गतानुगतिक नहीं बनना तत्त्वान्वेषी बनकर जल्दी शुद्ध व्यवहारको स्वीकार करके भगवान्‌की आज्ञानुसार भाद्र सुदी चौथके दिन सावत्सरिक वगैरह पाच कृत्योका आराधनकरके थोड़ेभवमें पञ्चमज्ञानके भागीबनो इसतरह

श्र धमलाभ पाठकवर्गके प्रति लेखकदेताहै) इस रीतिसे मातर्यें महाशयजीने पर्युषणाविचारके लेखको पूर्ण किया है। अब ऊपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि—गच्छके पक्षपातका कदाग्रहसे असत्यको सत्यमान करके गतानुगतिक गड्डरीह प्रवाहवत् अन्ध परम्पराकोही मानने वाले मिथ्या दृष्टि कहे जाते हैं इसलिये तत्वान्वेषी बन करके शास्त्रा-नुसार युक्ति सम्मत सत्य बातोंका निर्णयपूर्वक ग्रहण करना सोआत्मार्थियोका काम है इसलिये पक्षपात रहित पर्युषणा विचारके नियन्धको पढ़ा तो साफ मालूम हुआ कि पर्युषणा विचारके लेखकने अपनी अज्ञानताके कारणसे अपने गच्छका पक्षपात करके अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको बढानेके लिये प० हर्षभूषणजीकी धर्मसागरजीकी और विनयविजयजी वगैरहोंकी, उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायोंको सत्य मानकर श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञाको उत्थापन करके पर्युषणा विचारके लेखमें केवल शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायें भरी हुई होनेसे गच्छ पक्षके मिथ्या आग्रह करनेवाले बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्टकरके मिथ्या त्वमें फसाने वाला और खास पर्युषणा विचारके लेखककों ससार वृद्धिका हेतु भूत प्रत्यक्ष देखनेमें आया इसलिये पर्युषणा विचारके लेखकके तथा अन्य आत्मार्थियोंके उप-कारके लिये उसीकी समालोचना करके निष्पक्षपाती पाठक गणको सत्यबात दिखाई है सो इसको पढकर पर्युषणा वि चारके लेखक वगैरह यदि आत्मार्थि होवेंगे तब तो गच्छके पक्षपातका आग्रहको न रक्खके असत्यको छोडकर सत्यको ग्रहण करके अपनी भूलोंको सुधारेंगे और अपनी विद्वत्ताके

अभिमानी मिथ्यात्वी होवेंगे तो विशेष कदाग्रह बढानेके लिये उद्यम करेगे (उसीका उत्तर तो देनाही होगा) परन्तु इस ग्रन्थके प्रगट होनेसे सम्यक्त्वी अथवा मिथ्यात्वी की तो परिक्षा अच्छी तरहसे हो जावेगी —

और सातवे महाशयजी अधिक मासके ३० दिनोको गिनतीमें छोड करके दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो शुद्ध व्यवहारसे भगवानकी आज्ञामे ठहराते हैं सो तो सोनेकी भ्रातिसे केवल पीतल ग्रहण करने जैसा करके अपनी पूर्ण अज्ञता प्रगट करते है क्योकि अधिक मासकी गिनती छोडनेसे तो अनन्त ससारकी वृद्धिका हेतुभूत मिथ्यात्वकी प्राप्ति होती है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले कदापि आज्ञाके आराधक नही बन सकते हैं किन्तु शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक और प्रत्यक्ष वर्तावसे अधिकमासके ३० दिनोको गिनतीमे लेनेसे ही भगवानकी आज्ञाका आराधन हो सकता है इसलिये अधिकमासकी गिनती प्रमाण करना सोही तत्वान्वेषी शुद्ध व्यवहारको ग्रहण करनेवाले भगवानकी आज्ञाके आराधक हो सकेंगे इसलिये मासवृद्धि दो श्रावण होनेसे ५० दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें पर्युषण पर्वमें सावत्सरिक वगैरह कृत्योका आराधन करनेवाले आत्मार्थी होनेसे पञ्चम केवलज्ञानके भागी हो सकेंगे ।

और अन्तमें पाठकवर्गको धर्म्मलाभ लेखकने लिखा है सो भी बुद्धिकी अजीर्णता प्रगट करी मालूम होती है क्योकि पाठकवर्गमें तो पर्युषणा विचारके लेखको वाचनेवाले आचार्य, उपाध्याय, गणी, पन्यास तथा साधु साध्वी और लेखकसे दीक्षा

रो धर्मलाभ पाठकवर्गके प्रति लेखकदेताहै) इस रीतिसे मातर्यं महाशयजीने पर्युषणाविचारके लेखको पूर्ण किया है। अब ऊपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि–गच्छके पक्षपातका दृष्टिरागसे असत्यको सत्यमान करके गतानुगतिक गडुरीह प्रवाहवत् अन्ध परम्पराकोही मानने वाले मिथ्या दृष्टि कहे जाते हैं इसलिये तत्वान्वेषी बन करके शास्त्रानुसार युक्ति सम्मत सत्य बातोका निर्णयपूर्वक ग्रहण करना सोआत्मार्थियोका काम है इसलिये पक्षपात रहित पर्युषणा विचारके नियन्धको पढा तो साफ मालूम हुआ कि पर्युषणा विचारके लेखकने अपनी अज्ञानताके कारणसे अपने गच्छका पक्षपात करके अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको बढानेके लिये प० हर्षभूषणजीकी धर्मसागरजीकी और विनयविजयजी वगैरहोकी, उत्सूत्र भाषणोकी कल्पनायोको सत्य मानकर श्रीतीर्थकर गणधरादि महाराजोकी आज्ञाको उत्थापन करके पर्युषणा विचारके लेखमें केवल शास्त्रोके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणोकी कल्पनायें भरी हुई होनेसे गच्छ पक्षके मिथ्या आग्रह करनेवाले बालजीवोको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्टकरके मिथ्या त्वमें फसाने वाला और खास पर्युषणा विचारके लेखकको संसार वृद्धिका हेतु भूत प्रत्यक्ष देखनेमें आया इसलिये पर्युषणा विचारके लेखकके तथा अन्य आत्मार्थियोके उपकारके लिये उसीकी समालोचना करके निष्पक्षपाती पाठक गणको सत्यबात दिखाई है सो इसको पढकर पर्युषणा विचारके लेखक वगैरह यदि आत्मार्थि होवेंगे तब तो गच्छके पक्षपातका आग्रहको न रखके असत्यको छोडकर सत्यको ग्रहण करके अपनी भूलोको सुधारेगे और अपनी विद्वत्ताके

पदमें खास आप पर्युषणा करते है और ८।१०।१५।२०।३०।४०।४५ दिनके उपवासोकी तपस्याकी गिनतीमें अधिक मासके ३० दिनको बराबर गिनते हैं। तो अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि खास आप अधिक मासके दिनोको तपश्चर्याकी गिनतीमे लेते हैं तथा अधिक मासमेंही पर्युषणा करते हैं तथापि उसीको नपुसक नि सत्व ठहराकर दृष्टि-रागी भोले भाले जीवोको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्ट करते हैं सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्व से कितने ससार वृद्धिका हेतु है सो तत्वज्ञ स्वय विचार लेवेंगे,—

और पर्युषणा विचारका छपाई खर्चा और टपाल खर्चा श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके सम्बन्धसे लगा है सो तो यहाके दलीपसिहजी जौहरीके पास काशी की पाठशालासे उदयराज कोचरका पोष्टकार्ड आया है उसी से तथा और भी कितनेही कारणोसे सिद्ध होता है उसका विशेष विस्तार अवसर होनेसे पुनरावृत्तिमें लिखने में आवेगा और पर्युषणा विचारका लेख काशीमें उसी पाठ-शालेसे प्रगट भी हुवा है तथापि सातवे महाशयजी अपनी निन्दाकेभयसे श्री यशोविजयजी की पाठशालाके नामसे पर्युषणा विचारके लेखको प्रगट न कराते उदयराज कोचरके नामसे प्रगट कराया और श्रीकाशी (वाणारसी) का नाम भी न लिखाते प्रत्यक्ष मिथ्या फलोधीका नाम लिखाके मायावृत्ति से फलोधीके नामसे प्रगट कराया तो फिर अनुमान २० जगह उत्सूत्र भाषणोवाला तथा ६० जगह प्रत्यक्ष मिथ्यालेखवाला और सत्य बात का निषेध करके अपनी कल्पनाकी मिथ्या बातको स्थापने

पर्यायमें अधिक मुनिमपहली वगैरह सब कोइ आजाते हैं इसलिये सबको धर्म्मलाभ देनेकी पर्युषणा विचारके लेख ककी ताकत नहीं होते भी देता है सो युक्तिकी अधीनतामें क्या न्यूनता रही है सो विवेकीजन स्वयविचारसकतेहैं, और सातवे महाशयजीने पर्युषणाविचारकेलेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये इतना परिश्रम किया है परन्तु अधिक मास किसको कहते हैं जिसकी भी तो उनकों मालूम नहीं है क्योंकि, देखो दुनियाके व्यवहारमें तिथि वृद्धिकी तरह दूसरेको अधिक मास कहते हैं। तथा जैनशास्त्रोंमें भी दूसरेकोंही अधिकमास कहा है॥ और लौकिक पञ्चाङ्गमें दोनो मासके मध्यमें सक्रान्ति रहितको अधिकमास कहते है परन्तु दिनोकी गिनतीमें दोनो मासके ६० दिनोकों बराबर सब कोई लेते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोकी गिनती निषेध नही हो सकती है।

और सातवे महाशयजी अधिक मासके ३० दिनोकों गिनतीमें नहीं लेनेका लिख करके भोले जीवोको बहकाते हैं परन्तु खास आपही अधिक मासके ३०दिनोको गिनतीमें ले करके सर्व व्यवहार करते हैं सो तो प्रत्यक्ष दीखता है तथापि अधिक मासके ३० दिनोको गिनतीमें नही लेनेका लिख करके भोले जीवोको बहकाते हैं सो तो 'ममजननी बन्ध्या'की तरह प्रत्यक्ष धूर्त्तताका नमूना है सो तो विवेकी जन स्वय विचार लेवेंगे।

और सातवें महाशयजीने अधिकमासको नपुंसक नि सत्व ठहराकर उसीको गिनतीमें छोडदेनेका लिखा है परन्तु जब दो भाद्रपद होते हैं तब अधिक मास रूप दूसरे भाद्र

और जैनपत्रका अधिपति आठवा महाशय श्रावकनाम धारक भगुभाई फतेचन्दने सेप्टेम्बर मासकी २२वीं तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण वदी १३, परन्तु हिन्दी भाद्रपद कृष्ण १३ वीर सवत् २४३५ के जैनपत्रका २३ वा अङ्ककी आदिमेंही 'पर्युषणा विषे विचार' नामसे जो लेख प्रगट करा है सो ते। सातवे महाशयजीके पर्युषणा विचारके लेखको ही गुजराती भाषामें लिखकी प्रगट किया है इसलिये जैनपत्रवालेके लेखकी तो सातवें महाशयजीके लेखकी तरह ऊपर मुजबही समीक्षा समझ लेना और जैनपत्रवाला सप सप पुकारता है परन्तु एकएककी निन्दा करके कुसपकी वृद्धि करता है तथा गच्छके पक्षपातसे सत्य वातोका निषेध करके अपना मिथ्यापक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्रभाषणोसे दुर्गतिका रस्ता लेता है और अज्ञानी जीवोकोभी वहाही पहुचानेके लिये उत्सूत्र भाषणोका सग्रह जैनपत्रमें प्रगट करता है और कान्फरन्स सुकृत भण्डारादिसे शासनोन्नतिके कार्योंमें विघ्नकारक गच्छोके खण्डनमण्डनका झगडा एक वार नहीं किन्तु अनेकवार जैनपत्रमें उठाया है क्योंकि देखो पर्युषणा सम्बन्धी भी प्रथमही छठे महाशयजीकी मिथ्या कल्पनाका उत्सूत्र भाषणका लेखको जैनपत्रमें प्रगट करके झगडेकी नीव रोपन करी तथा सातवें महाशयजीके भी उत्सूत्र भाषणोके सग्रहवाला लेखका भाषान्तर प्रगट करके उत्सूत्रभाषणोके भयङ्कर विपाक लेनेके लिये दुर्गतिका रस्ता लिया और फिर भी छठे महाशयजी की तरफके श्रीखरतरगच्छ वालोकी निन्दावाले तथा कोर्ट कचेरीमें झगडा लडाके दीर्घकाल पर्य्यन्त कुसपकी वृद्धि करनेवाले दे।

की कुयुक्तियो वाला और श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्त्तने वालोंको जूठी कल्पनामे दूषण लगाके अनन्त संसारका हेतु भूत मिथ्यात्वको बढानेवाला पर्युषणा विचारके लेखमें अपना नाम प्रगट करते लज्जा आवे तो निज शिष्यविद्या विजयजीका नाम लिख देवे तोभी कुछ विशेष आश्चर्य नहीं है सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे,—

और काशीनिवासी सातवें महाशयजी जैनतत्वदिग्दर्शन, आत्मोन्नति दिग्दर्शन, जैनशिक्षादिग्दर्शन वगैरह छोटे छोटे लेखोंको तो अपने नामसे प्रगट करते हैं तथा विद्या विजयजीभी अपने गुरुजीका लम्बा चौडा नाम समेत जैन पत्रमें अपना लेख प्रगट करते हैं और छोटी छोटी पुस्तकें भी श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके नामसे प्रगट करनेमें आती है परन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें न तो सातवें महाशयजीका नाम लिखा तथा विद्याविजयजीनेभी अपने गुरुजीका नाम भी नही लिखा और अपना निवास ठिकाना भी नही लिखा और श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाका नाम भी नही लिखा इसपर भी बुद्धिजन विचार करें तो स्वयं मालूम हो सकेगा कि सातवें महाशयजीने दुनियामें अपनी निन्दाकी शर्मके मारे गुपचुप प्रगट कराया है क्योंकि इतने विद्वान् ऐसे प्रसिद्ध आदमी होकरके भी गच्छके पक्षपातसे ऐसा अनर्थ क्यो किया इसका भेद न खुलनेके वास्ते पाठ शालाका तथा पाठशालाके उत्पादकका नाम नहीं लिखा है परन्तु विवेकी बुद्धिजनोके आगे तो ऐसी धूर्तता नहीं छुप सकती है,—

और जैनपत्रका अधिपति आठवा महाशय श्रावकनाम धारक भगुभाई फतेचन्दने सेप्टेम्बर मासकी २२वीं तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण वदी १३, परन्तु हिन्दी भाद्रपद कृष्ण १३ वीर सवत् २४३५ के जैनपत्रका २३ वा अङ्ककी आदिमेंही 'पर्युषणा विषे विचार' नामसे जो लेख प्रगट करा है सो तो सातवे महाशयजीके पर्युषणा विचारके लेखकी ही गुजराती भाषामें लिखकी प्रगट किया है इसलिये जैनपत्रवालेके लेखकी तो सातवें महाशयजीके लेखकी तरह ऊपर मुजबही समीक्षा समझ लेना और जैनपत्रवाला सप सप पुकारता है परन्तु एकएककी निन्दा करके कुसपकी वृद्धि करता है तथा गच्छके पक्षपातसे सत्य बातोका निषेध करके अपना मिथ्यापक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्रभाषणोसे दुर्गतिका रस्ता लेता है और अज्ञानी जीवोकोभी वहाही पहुचानेके लिये उत्सूत्र भाषणोका सग्रह जैनपत्रमें प्रगट करता है और कान्फरन्स सुकृत भण्डारादिसे शासनोन्नतिके कार्यामें विघ्नकारक गच्छोके खण्डनमण्डनका झगडा एक वार नही किन्तु अनेकवार जैनपत्रमें उठाया है क्योकि देखो पर्युषणा सम्बन्धी भी प्रथमही छठे महाशयजीकी मिथ्या कल्पनाका उत्सूत्र भाषणका लेखको जैनपत्रमें प्रगट करके झगडेकी नीव रोपन करी तथा सातवें महाशयजीके भी उत्सूत्र भाषणोके सग्रहवाला लेखका भाषान्तर प्रगट करके उत्सूत्रभाषणोके भयङ्कर विपाक लेनेके लिये दुर्गतिका रस्ता लिया और फिर भी छठे महाशयजी की तरफके श्रीखरतरगच्छ वालोकी निन्दावाले तथा कोर्ट कचेरीमें झगडा लडाके दीर्घकाल पर्य्यन्त कुसपकी वृद्धि करनेवाले दे

लेनेीको प्रगट करके अपनी पूर्ण मूर्खता प्रगट करी और पर्युषणा, सामायिक, पच्चखाण, वगैरह यातोंका झगड़ा बढ़ाया है (जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थके पढ़नेसे मालूम हो सकेगा) इसलिये जैनपत्रवाले आठवें महाशयको जो ममारवृद्धिसे दुर्गतिमें परिभ्रमणका भय होवे तो उत्सूत्र भाषणोका मिथ्या दुष्कृत देकर श्रीचतुर्विध सघ समक्ष उसीकी आलोचन लेवे तथा फिर कभी गगहन मगहन करके दूसरोकी निन्दासे गच्छका झगड़ा न उठावे और असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करें नहीं तो पक्षपातसे उत्सूत्रभाषणके विपाक तो भोगे विना कदापि नहीं छुटेंगे ।

और मेरेको बड़ेही खेदके साथ बहुतही लाचार हो करके लिखना पड़ता है कि–अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनती निषेध करनेवाले उत्सूत्र भाषक मिथ्या हठग्राही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वियोंकी विवेक बुद्धि कैसी नष्ट हो गई है सो पूर्वापरका विचार किये विनाही अधिक मासके ३० दिनोंमें सर्वकार्य्य करते भी पक्षपातके आग्रहसे गड्डरीह प्रवाहकी तरह मिथ्यात्वकी अन्ध परम्परासे एक एककी देखादेखी तात्पर्य्यार्थके उपयोग शून्य होकरके उसीकोही पकड़कर उसीकी पुष्टि करते हैं परन्तु श्रीजिनाज्ञाका उत्थापन करके बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फसानेसे अपनी आत्मघातका कुछ भी भय नही करते हैं क्योंकि पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक और युक्ति सहित श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी जैनाचार्य्य वगैरह अधिक मासके दिनोंकी गिनती प्रमाण करकेही प्राचीन कालमें पूर्वधरादि महाराज भी पर्युषणा करते थे तथा वर्तमानमेंभी

मय कोई आत्मार्थि जन अधिक मासकी गिनती प्रमाण करकेही पर्युषणा करते हैं और आगे भी ऐसेही करेंगे परन्तु शासननायक श्रीवर्द्धमानस्वामीके मोक्ष पधारे वाद अनुमान एक हजार वर्ष व्यतीत हुए पीछे उत्सूत्र भाषणोमे आगेवान गच्छ कदाग्रही शिथिलाचारी धर्मधूर्त्त जैनाभास पाखण्डी चैत्य वासियोने पञ्चाङ्गी प्रमाणपूर्वक प्रत्यक्षसिद्ध होते भी कितनीही सत्य बातोको निषेध करके अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप कुयुक्तियो करके श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध कल्पित बातोकी प्ररूपणा करी और अविसंवादी श्रीजैन शासनमें विसंवादके मिथ्यात्वको वढाया था जिसमें शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक अधिक मासकी गिनती तथा आषाढ चौमासीसे ५०दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका प्रत्यक्ष दिखते हुए भी लौकिक पञ्चाङ्गमें मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसे प्रत्यक्ष शास्त्रोंके तथा युक्तिके भी विरुद्ध होकर यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका सरू करके श्रीजिनाज्ञाका उत्थापनसे मिथ्यात्व फेला था और निर्दूषण बननेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध करके उत्सूत्र भाषणोकी कुयुक्तियोसे अज्ञानीजीवोको अपने मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसानेके लिये धर्मधूर्ताई करनेमें कुछ कम नही किया था सो तो श्रीसंघपट्टककीव्याख्याओंके अवलोकनकरनेसे अच्छी तरहसे मालूम हो सकताहै ।

और कितनेही भारी कर्मे प्राणी तो उपरोक्त मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसकर अन्धपरम्परासे उसीकोही पुष्ट करते हुए बाल जीवोको अपने फदमें फसाते रहते थे उसी मिथ्यात्वकी अन्धपरम्पराकेही अनुसार पं० श्रीहर्षभूषणजी

और धर्मसागरजी वगैरह जो जो लेख लिख गये हैं और वर्त्तमानमें 'शास्त्र विशारद जैनाचार्य्य',की उपाधिधारक मालवे महाशयजी श्रीधर्म विजयजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् कहलाते भी उसी अन्धपरम्परासे मिथ्यात्वके कदाग्रहको पकड़कर अज्ञ जीवोंको उसीमें फसानेके लिये उसीको विशेष पुष्ट करनेका उद्यम करते हैं परन्तु श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाका उत्थापन करके प्रत्यक्ष पञ्चाङ्गी प्रमाण विरुद्ध प्ररूपणा करते हुए अभिनिवेशिकमिथ्यात्वसे सज्जन पुरुषोंके आगे हास्य काहेतु करनेका कारण करते भी कुछ लज्जा नही पाते हैं सो तो इस कलियुगमें पाखण्ड पूजा नामक अच्छेरेका प्रभावही मालूम पड़ता है। इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको ऐसे उत्सूत्र भाषकोंकी कुयुक्तियोंके भ्रममें न पड़ना चाहिये और निष्पक्षपातसे इस ग्रन्थको आदिसे अन्त तक बाचकर असत्यको छोड़के सत्यको ग्रहण भी करना चाहिये परन्तु गच्छके आग्रहसे उत्सूत्र भाषणकी बातोंको पकड़कर उसीमें नहीं रहना चाहिये।

और भी श्रीधर्मसागरजीकी तथा श्रीविनयविजयजीकी धमधूताई का नमूना पाठक वर्गको दिखाहूं, कि देखो श्रीविनयविजयजीने श्रीलोकप्रकाश नामा ग्रन्थ बनाया है सो प्रसिद्ध है उसीमें अधिक मासकी गिनती प्रमाण करी है अर्थात् समयादि सुक्ष्मकालसे आवलिका मुहूर्तादिककी व्याख्या करके ३० मुहूर्तोंका एक अहोरात्रि रूप दिवस, सो १५ दिवसोंसे एकपक्ष, दो पक्षोंसे एकमास बारह मासोंसे चन्द्रसंवत्सर और अधिक मास होनेसे तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांचो संवत्सरोंसे

एक युगके १८३० दिनोके ५४९०० (चौपन हजार नौ सौ) मुहूर्तोंकी व्याख्या श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रके अनुसार श्रीविनय विजयजी लोकप्रकाशमें स्वय लिखते हैं तैसेही श्रीधर्मसागरजीने भी श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिकी वृत्तिमें ऊपर मुजबही पाचवर्षोके दो अधिकमासो के दिनोकी तथा पक्षोकी और मुहूर्त्तोंकी गिनती पूर्वक एक युगके १८३० दिनोके ५४९०० मुहूर्त्त खुलासा पूर्वक लिखे हैं । तथापि वडेही खेदकी बात है कि इन दोनो महाशयोने गच्छकदाग्रह का पक्ष करके उत्सूत्रभाषणसे ससार वृद्धिका भय न रक्खा और बालजीवोको श्रीजिनाज्ञाकी सत्य बात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये श्रीकल्पसूत्रकी कल्पकिरणावलीवृत्तिमें तथा सुखबोधिका वृत्तिमें काल चूलाके बहानेसे दोनो अधिक मासके ६० दिनोकी गिनती निषेध करके अपने स्वहस्ते एक युगके दो अधिक मासोके दिनोकी मुहूर्त्तोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोके ५४९०० मुहूर्त्तोंको श्रीतीर्थंकर गणधर महाराजकी आज्ञानुसार लिखे हैं उसीका भङ्गकारक दो अधिक मासके ६० दिनोके अनुमान १८०० मुहूर्त्तोंके कालका व्यतीत होना प्रत्यक्ष होते भी उसीको गिनती में से सर्वथा उडादेकर श्रीतीर्थंकर गणधर महाराजके कथनका प्रमाणमें भङ्ग डालने वाले लेख लिखते पूर्वापरका विवेकबुद्धिसे कुछ भी विचार न किया और उत्सूत्र भाषणोका सग्रह करके कुयुक्तियोसे अज्ञ जीवोको भ्रमाने का कारण किया इसलिये इन दोनो महाशयोकी धर्मधूर्त्ताईमें कुछ कम होवे तो न्यायदृष्टिवाले विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ।

और इन दोनो महाशयोके अधिक मासके निषेध

सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि (विषमवादी) तथा उत्सूत्र भाषणोंकी कुयुक्तियोंवाले और सम्यक्त्वसे भ्रष्ट करके मिथ्यात्वमें गेरनेवाले लेखोंको दीर्घ संसारीके सिवाय और कौन मान्य करके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाकारक उलटा बताव करेगा सो भी तत्वज्ञ पुरुष न्याय दृष्टि वाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे—

और अधिक मासके निषेधक श्रीधर्मसागरजी श्रीजय विजयजी श्रीविनयविजयजी और प० श्रीहर्षभूषणजी वगेरहोने जो जो गच्छकदाग्रही दृष्टिरागी मुग्ध जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लिये उत्सूत्र भाषणोंका और कुयुक्तियोंका संग्रह करके अपना संसार वृद्धिका कारण करते हुए अपने ऐसे कल्पित लेखोंको सत्य माननेवाले अपने पक्षग्राहियोंका भी संसार वृद्धिका कारण कर गये हैं सो इन सब उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित कुयुक्तियोंके लेखोंका निर्णय तो इस ग्रन्थमें अनुक्रमसे सातो महाशयोंके लेखोंकी समीक्षामें होगया है सो इस ग्रन्थको आदिसे अन्त तक पक्षपात रहित होकर न्याय दृष्टिसे पढ़नेसे सब बातोंका अच्छी तरहसे निर्णय मालूम होजावेगा। तथापि जो प० श्रीहर्ष भूषणजीने पर्युषणस्थिति नामक लेख में जो जो उत्सूत्र भाषणोंका और कुयुक्तियोंका संग्रह करके मिथ्यात्वका कारण किया है उसीका दिग्दर्शनमात्र थोड़ासा नमूना इस जगह पाठकगणको दिखाता हूं यथा—

श्रीसीमंधरमर्हतं नत्वापर्युषणास्थिति ब्रुवेवतितमाद्रस्य व्यक्तं युक्त्यागमक्रमैः ॥ नन्वशीत्यादिने पर्युषणापर्व-सिद्धान्ते क्व प्रोक्तमस्तीत्येवचेत्तर्हि पञ्च मासात्मक वर्षा

चतुर्मासिकमपि सिद्धांते क्रुवर्व्वर्त्ति मत्य परमधिकमासोऽस्मा भिर्नगण्यमानोस्ति एव चेत्तहि अस्माभिरपि यदाधिक श्रावणो भाद्रपदोवावद्धते तदा नगण्यते तेनाशीतिदिनानि पञ्चाशद्दिनान्येवेतीत्यादि ।

अब प० हर्षभूषणजीके ऊपरका लेखको तत्वज्ञ पुरुष निष्पक्षपातसे विचारेंगेतो प्रत्यक्षपने उनके भ्रमजालका परदा खुल जावेगा क्योंकि युक्ति और आगम क्रमके बहाने उत्सूत्र भाषणका संग्रह करके कुयुक्तियोंकी भ्रमजालमें बालजीवोंको गेरनेका कारण किया है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेका किसी भी शास्त्रमें नहीं कहा है परन्तु श्रावण भाद्रपदादि अधिक होनेसे पचमासके १० पक्षोंके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा तो प्रत्यक्षपने अनुभवसे देखनेमें आता है इसलिये निषेध नहीं हो सकता है और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके दूसरे श्रावण के ३० दिनोंको गिनतीमें छोड़कर ८० दिनके ५० दिन अपनी मतिकल्पनासे बनाते हैं सो निष्केवल उत्सूत्र भाषण है क्यों कि शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वकसे तो ८० दिनके ५० दिन कदापि नहीं हो सकते हैं सो तो इस ग्रन्थको पढनेवाले स्वयं विचार लेवेंगे ।

और फिर आगे । ननु 'अभिवढ्ढियम्मि वीसा इयरेसु सवीसइमासो' निशीथभाष्ये इत्यत्राधिकमासोगणितोऽस्ति । इस तरहसे अधिक मासकी गिनती सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें–'आसाढ पुण्णिमाएपविठा' इत्यादि निशीथ चूर्णिका अधूरा पाठसे अज्ञात पर्युषणाकी और 'वीसदिणेहिंकप्पो' इत्यादि विनाही प्रसङ्गकी विच्छेद

सम्बन्धीबातलिखके बालजीवोंको भ्रममेंगेरे और अधिक मासकी गिनती निषेध दिखा कर अपनी विद्वत्ताकी चातुराई विवेकी तत्वज्ञपुरुषोंके आगे हास्यकी हेतु रूप प्रगट करी है क्योंकि निशीथचूर्णिमेंही खास अधिक मासको गिनती प्रमाण करीहै और अज्ञात तथा ज्ञात पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारसे व्याख्या की है सो पाठ भावार्थ सहित तीनो महाशयों के लेखों की समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ट ८५ से १०४ तक छपगयाहै इसीलिये आगे पीछेके प्रसंग स छे मध्य पाठको छोड़कर बिना सम्बन्धके अधूरे पाठसे बाल जीवोंको भ्रममें गेरने सोभी उत्सूत्र भाषण है ।

और आगे फिर भी अधिक मासमें क्या क्षुधा नहीं लगतीहै तथा सूर्योदय नही होताहै और देवसिक पाक्षिक प्रतिक्रमण, देवपूजा मुनिदानादि क्रिया शुद्ध नहीं होतीहै सो गिनतीमें नहीं लेतेहो इस तरहका पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें पाषमासके चौमासेमें तुमभी चारमास कहतेहो इत्यादि अज्ञानतासे प्रत्यक्ष मिथ्या और उटपटाग लिखाहै सोतो वृथाही हास्य का हेतु कियाहै । और श्रीउत्तराध्ययनजीके २६ अध्ययनका पौरूष्याधिकारे मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धी सविस्तर पाठको छोड़कर "असाढमासे दुप्पया" सिर्फ इतनाही अधूरा पाठ लिखके उत्सूत्र भाषणसे भोले जीवोंको भ्रमानेका कारण कियाहै इसका निर्णयतो तीनो महाशयो के लेखोंकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १३६ । १३७ मे छप गयाहै ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्यार्थको समझे बिना तथा प्रसंगकी बातको छोड़कर 'जइफुल्ला'

इत्यादि गाथा लिखके उत्सूत्र भाषणसे मिथ्यात्वका कारण कियाहै जिस का निणयतो चौथे और सातवें महाराजजी के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ २०५ से २१० तक और ३८५ से ३९५ तक सविस्तार छपगयाहै सो पढनेसे हर्षभूषणजी की शास्त्रार्थ शून्य विद्वत्ताका दर्शन अच्छीतरहसे होजावेगा ।

और श्रीनिशीथ तथा श्रीदशवैकालिकवृत्तिके नामसे चलासबधीकलिपत अधूरा पाठ लिखके उसीपर अपनी मतिसे कुविकल्प उठाकर कालचूलाके बहाने अधिक मासकी गिनती उत्सूत्र भाषणरूप निषेध करके वाल जीवोके आगे धर्म ठगाई फैलाईहै जिसका निर्णयतो 'जैनसिद्वात समाचारी'के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ५८ से ६५ तक और पाचवें महाशयजी के लेखकी समीक्षामें पृष्ठ २० से २२३ तक छपगयाहै सो पढनेसे मालूम होजावेगा । और रत्नकोष ज्योतिष ग्रन्थका १ श्लोक लिखके अधिक मासमें मुहूर्त नैमित्तिक विवाहादि ससारिक कार्य नही होनेका दिखाकर विनामुहूतका पर्युषणादि धर्म कार्यभी अधिकमासमें नहोने का दिखाया सोभी उत्सूत्र भाषणहै इस वातका निणय चौथे महाशयके लेखकी समीक्षामें पृष्ठ १९४ से २०४ तक छप गयाहै ।

और भी इसीही तरहसे अधिक मासके ३० दिनो को गिनतीमें निषेध करके ८० दिनके ५० दिन वालजीवोके आगे सिद्व करनेके लिये कुयुक्तियोके विकल्पोंका और उत्सूत्र भाषणोंका सग्रह करके भी फिर जोजो मासवृद्विके अभाव सम्बन्धीश्रीपर्युषणा कल्पचूर्णि, निशीथचूर्णि,पर्युषणा कल्पटिप्पण और सदेहविषौपधिवृत्तिके सविस्तार वाले सब पाठो को छोडकरके उसीके पूर्वापरका सबध विनाके और

कल्पसम्बन्धीबातलिखके बालजीवोंको भ्रममेंगेरे और अधिक मासकी गिनती निषेध दिखा कर अपनी विद्वत्ताकी चातु-राई विवेकी तत्वज्ञ पुरुषोंके आगे हास्यकी हेतु रूप प्रगट करी है क्योंकि निशीथचूर्णिमेंही खास अधिक मासकी गिनती प्रमाण करीहै और अज्ञात तथा ज्ञात पर्युषणा सम्ब न्धी विस्तारसे व्याख्या की है सो पाठ भावार्थ सहित तीनो महाशयों के लेखों की समीक्षामें इसही ग्रंथके पृष्ट ८५ से १०४ तक छपगयाहै इसीलिये आगे पीछेके प्रसग सं ले सब पाठको छोड़कर विना सम्बन्धके अधूरे पाठसे बाल जीवोंको भ्रममें गेरने सोभी उत्सूत्र भाषण है ।

और आगे फिर भी अधिक मासमें क्या क्षुधा नहीं लगतीहै तथा सूर्योदय नही होताहै और देवसिक पाक्षिक प्रतिक्रमण, देवपूजा मुनिदानादि क्रिया शुद्ध नहीं होतीहै सो गिनतीमें नहीं लेतेहो इस तरहका पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें पाचमासके चौमासेमें तुमभी चारमास कहतेहो इत्यादि अज्ञानतासे प्रत्यक्ष मिथ्या और उटपटाग लिखाहै सोतो वृथाही हास्य का हेतु कियाहै । और श्रीउत्तराध्ययनजीके २६ अध्ययनका पौरूप्याधिकारे मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धी सविस्तर पाठको छोड़कर "असाढमासे दुप्पया" सिर्फ इत-नाही अधूरा पाठ लिखके उत्सूत्र भाषणसे भोले जीवोंको भ्रमानेका कारण कियाहै इसका निर्णयतो तीनो महाशयो के लेखोंकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १३६ । १३७ में छप गयाहै ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्यार्थको समझे बिना तथा प्रसगकी बातको छोड़कर 'जइफुल्ला'

इत्यादि गाथा लिखके उत्सूत्र भाषणसे मिथ्यात्वका कारण कियाहै जिस का निणयतो चौथे और सातवें महाराजजी के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्यके पृष्ठ २०५ से २१० तक और ३८५ से ३९५ तक सविस्तार छपगयाहै सो पढनेसे हर्षभूषणजी की शास्त्रार्थ शून्य विद्वत्ताका दर्शन अच्छीतरहसे होजावेगा।

और श्रीनिशीथ तथा श्रीदशवैकालिकवृत्तिके नामसे चलासबधीकल्पित अधूरा पाठ लिखके उसीपर अपनी मतिसे कुविकल्प उठाकर कालचूलाके बहाने अधिक मासकी गिनती उत्सूत्र भाषणरूप निषेध करके बाल जीवोंके आगे धर्म ठगाई फैलाईहै जिसका निर्णयतो 'जैनसिद्धात समाचारी'के लेखकी समीक्षामे इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ५८ से ६५ तक और पाचवें महाशयजी के लेखकी समीक्षामें पृष्ठ २० से २२३ तक छपगयाहै सो पढनेसे मालूम होजावेगा। और रत्नकोष ज्योतिष ग्रन्थका १ श्लोक लिखके अधिक मासमें मुहूर्त नैमित्तिक विवाहादि ससारिक कार्य नहीं होनेका दिखाकर विनामुहूर्तका पर्युषणादि धर्म कार्यभी अधिकमासमें नहोने का दिखाया सोभी उत्सूत्र भाषणहै इस बातका निर्णय चौथे महाशयके लेखकी समीक्षामें पृष्ठ १९४ से २०४ तक छप गयाहै।

और भी इसीही तरहसे अधिक मासके ३० दिनो को गिनतीमें निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बालजीवोंके आगे सिद्ध करनेके लिये कुयुक्तियोके विकल्पोंका और उत्सूत्र भाषणोंका सग्रह करके भी फिर जोजो मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धीश्रीपर्युषणा कल्पचूर्णि, निशीथचूर्णि,पर्युषणा कल्पटिप्पण और सदेहविषौषधिवृत्तिके सविस्तार वाले सब पाठो को छोडकरके उसीके पूर्वापरका सबध विनाके और

शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध अधूरे अधूरे पाठोंको लिखके दृष्टिरागी गच्छकदाग्रही विवेकशून्य मुग्ध जीवोंके आगे मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराकर दिखानेका प्रयास किया जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थमें अच्छीतरहसे सविस्तार शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय सहित शास्त्रोंकेसपूर्ण पाठोंसे पृथक् लिखनेमें आयाहै सो पढनेसे निष्पक्षपाती सज्जन स्वयं विचार करलेवेंगे।

औरभी सुप्रसिद्ध श्रीकुलमडनसूरिजीने विचारामृत संग्रह नामा प्रकरणमें पर्युषणाधिकारे पृष्ठ १३ में अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये जो लेख लिखाहै उसीकाभी नमूना यहाँ दिखाताहूं। यथा--

युगतृतीय पंचम वर्षं संभावीयोऽधिकमास स्यात् नासौलोके लोकोत्तरेच चतुर्मास सांवत्सरिकादि प्रमाण चितायामत्राप्युपयुज्यते, लोके दीपोत्सवाक्षयतृतीया भूमिदोहादिषु शुद्ध द्वादश मासांतर्भाविषु लोकोत्तरेच-चतुर्म्मासिकेषु 'आसाढमासे दुप्पया' इत्यादि पौरुषी प्रमाण चितायां पर्य्यासायण प्रमाणया वर्षांतर्भावि जिनजन्मादि कल्याणकेषु वृद्धावासस्थित स्थविर नवविभागक्षेत्र कल्पनायांच नायगण्यते कालचूलत्वादस्य। तथाहि। निशीथे दशवैकालिकवृत्तौच, चूला चातुर्विध्य द्रव्यादिभेदात् तत्र द्रव्य चूला ताम्रचूलादि क्षेत्रचूला मेरोश्चत्वारिंशद्योजन प्रमाण चूलिका कालचूला युगेतृतीय पंचमवर्षयोरधिक मासक भावचूलातु दशवैकालिकस्यचूलिकाद्वय। नच चूलाचूलावत प्रमाण चिंतायां पृथक् व्याप्रियते। यथा। लक्ष योजन प्रमाणस्यमेरो प्रमाणचिंतायां चूलिका प्रमाणमिति

यश्चाधिक मासको जनशास्त्रे पौषापाढरूप लोकिक शास्त्रे
पु चैत्राद्यश्विनमासात सप्तमासव्यवस्थित मासरूपोऽभिवद्धित
नासौदव चित्कृत्येप्रयुज्यते । यदुक्त रत्नकोशाख्य ज्योतिष-
शास्त्रे । यात्राविवाहमडनमन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि
परिहर्त्तव्यानिबुधै सर्वाणिनपुनकेमासि ॥ जति अहिमासओ
पडितो तो वीसतीराय गिहिणाय न कज्जति कि कारण अथ
अहिमासओ चेव मासो गणिज्जति तोवीसाएसम सवीसति
रातो मासोभसतिचेव इति वृहत्कल्प चू० पत्र २९५ उ०३ ।
पुन । जम्हा अभिवट्टिय वरिसे गिम्हेचेवसोमासो अइक्कन्तो
तम्हावीस दिणा अणभिग्गहियकीरइ निशी० चू०उ० १० पत्र
३१७ इहकल्प निशीथ चूणिकद्भ्यामपिस्वाभिगृहीतगृहस्थ
ज्ञातावस्थान व्यतिरिक्तेषु कार्येषु क्वाप्यधिकमासको
नामग्रहण प्रमाणीकृतो न दृश्यते इति ।

अब श्रीकुलमडनसूरिजी कृत उपरके लेखको देखकर
मेरेको वडेही अफसोसके साथ लिखना पडता है कि—ऐसे
सुप्रसिद्ध विद्वान् पुरुष आचार्यपदकेधारक होकरके भी स्वगच्छा
ग्रहका पक्षपात करके उत्सूत्र भाषणोसे ससारवृद्धिकाभय न
करते हुवे कुयुक्तियोकासग्रहसे बालजीवोको मिथ्यात्वके भ्रममें
गेरनेका उद्यम किया है सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि
महाराजोके वचनका उत्थापनरूप है क्योंकि पाच वर्षोंके
एकयुगमें तीसरे तथा पाचवे वर्ष जो पौष तथा आषाढको
अधिकमास जैनशास्त्रोमेंकहाहै उसीकोही मदिरोके शिखर
वत् तथा मेरुचूलिकावत् और दशवैकालिकजी आचा
रागजी की चूलिकावत् कालचूलाकी उत्तम श्रेष्ठ ओपमा
देकर दिनोमें पक्षोमें मासोमें गिनती करके वर्ष तथा युगादि

शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध अधूरे अधूरे पाठोंको लिखके दृष्टिरागी गच्छकदाग्रही विवेकशून्य मुग्ध जीवों के आगे मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराकर दिखानेका प्रयास किया जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थमें अच्छीतरहसे सविस्तार शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय सहित शास्त्रोंकेसंपूर्ण पाठार्थों पूर्वक लिखनेमें आयाहै सो पढनेसे निष्पक्षपाती सज्जन स्वयं विचार करलेवेंगे ।

औरभी सुप्रसिद्ध श्रीकुलमण्डनसूरिजीने विचारामृत संग्रह नामा प्रकरणमें पर्युषणाधिकारे पृष्ठ १३ में अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये जो लेख लिखाहै उसीका भी नमूना यहाँ दिखाताहूं । यथा—

युगतृतीय पंचम वर्षे सम्भावीयोऽधिकमासः स्यात् नासौलोके लोकोत्तरेच चतुर्मास सांवत्सरिकादि प्रमाण चिंतायामवगाह्युपयुज्यते, लोके दीपोत्सवाक्षयतृतीया भूमिदोहादिषु शुद्धद्वादश मासांतर्भाविषु लोकोत्तरेच-चतुर्म्मासिकेषु 'आसाढमासे दुप्पया' इत्यादि पौरुषी प्रमाण चिंतायां पर्युषणायां प्रमाणया वर्षांतर्भावि जिनजन्मादि कल्याणकेषु वृद्धावासस्थित स्थविर नवविभागक्षेत्र कल्पनायांच नायगण्यते कालचूलत्वादस्य । तथाहि । निशीथे दशवैकालिकवृत्तौच, चूला चातुर्विध्य द्रव्यादिभेदात् तत्र द्रव्य चूला ताम्रचूलादि क्षेत्रचूला मेरोश्चत्वारिंशद्योजन प्रमाण चूलिका कालचूला युगेतृतीय पंचमवर्षयोरधिक मासक भावचूलातु दशवैकालिकस्यचूलिकाद्वयं । नच चूलाचूलावत प्रमाण चिंतायां पृथक् व्यावियते । यथा । लक्ष योजन प्रमाणस्यमेरो प्रमाणचिंतायां चूलिका प्रमाणमिति

संबंधी श्रीकुलमंडनसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और जैन पञ्चांगानुसार पौष तथा आषाढ की वृद्धि होती थी तबभी उसीके दिनोको पर्युषणादि सब धर्म कार्यों में गिनती करतेथे सोतो उपरमेंही श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिके पाठसे प्रत्यक्षदिखता है परन्तु वर्तमानकाले जैन पञ्चांगके अभावसे लौकिक पञ्चांगानुसार वर्ताव करने में आताहै उसीमें चैत्रादि मासोकी वृद्धि होतीहै उसी के ३० दिनोमें दुनियाका सब व्यवहार तथा धर्म व्यवहार प्रत्यक्षपनेहोताहै इसलिये उसीके दिनोकी गिनती निषेध नहीं होसकती है तथापि जो सक्रांति रहित मलमास केभरोसे अधिक मासके दिनोकी गिनती निषेध करतेहै सो अपनी पूर्ण अज्ञानतासे भोले जीवोको गच्छकदाग्रहमें गेरनेका कार्य करतेहैं क्योंकि सक्रांति रहित अधिक मास को मलमास कहा है तैसेही दो सक्रांति वाले क्षय मासको भी मलमास कहा है परन्तु अधिक मासके तथा क्षय मास के दिनोकी गिनती बरोबर करतेहैं। तथाहि कमलाकर भट विरचित (लौकिक धर्मशास्त्र) निर्णय सिंधौनामा ग्रंथे ।

तत्र सषं पत काल षोढा—अब्दोयनमृतुर्मास पक्षदिवस इति ॥ पुनस्तत्र वक्षमाणे श्रावणादि द्वादश मासे त्रयोदश् । मलमासेतुसति षष्टिदिनात्मक एको मासो द्वादश मासत्वमविरुद्धमिति ॥ तथाच व्यास षष्ट्यातु दिवसैमास कथितो बादेरायणे—इति ॥ अथ मलमास क्षयमास निर्णय। अथ मल मास तत्रैकमात्र सक्रांति रहित सितादियादो मासो मल मास एकमात्र सक्रांति राहित्यमसक्रांतित्वेन सक्रांति द्वयत्वेनच भवतिइति। मल मासो द्वेधा

हका प्रमाणभी अनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने कहाहै तथा श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिमें मिशन अधिक मासको गिन करके बीसदिने ज्ञात पर्युषणा कहीहै तथापि श्रीकुलमंडनसूरिजीने पर्युषणाधिकारे कालचूलाके बहाने अधिक मासको गिनतीमें निषेध किया सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञा उत्थापन रूप उत्सूत्र भाषण है ।

और आषाढमासे दुप्पया,सबधी तो उपरमेंही इसंभूषणजीके लेखका उत्तर में सूचना करनेमें आगईहै । और स्थिवीर कल्पियोंके अधिकमासहोतेभी मथविभागक्षेत्र याने नवकल्पि विहारकालिकासोभी प्रत्यक्षनिष्फल है क्योंकि १० कल्पिविहारप्रत्यक्षपने होताहै इसकानिर्णय तथा दीवाली अक्षय तृतीयादि लौकिक सबधी लिखाहै जिसका निर्णय और श्रीजिनेश्वर भगवान्के कल्याणक सबधी लिखा है जिसका भी निर्णय तो सातवें महाशयजीके लेखकी समीक्षामें होगया है ।

और एक युगके दोनो अधिक मासोके दिनोकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोमें सूर्यचारके दश [१०] अयण श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोने कहेहैं सो श्रीचद्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्रीजबूद्वीपपन्नति श्रीज्योतिषकरडपयन्न तथा इनही शास्त्रोंकी व्याख्याओ में और श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, लघुप्रकरणादि अनेकशास्त्रमें प्रगटपाठहै और लौकिकमेंभी अधिकमासहोनेसे उसीकेदिनोकीगिनतीपूर्वक १८३ दिने दक्षिणायणसे उत्तरायणमें सूर्यमडलहोनेका प्रत्यक्षदेखनेमें आता है इसलिये ६ मासके अयणकाप्रमाणमें अधिकमास नही गिनने

सबधी श्रीकुलमडनसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और जैन पञ्चागानुसार पौष तथा आषाढ की वृद्धि होती थी तबभी उसीके दिनोको पर्युषणादि सब धर्म कार्यो में गिनती करतेथे सोतो उपरमेंही श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिके पाठसे प्रत्यक्षदिखता है परन्तु वर्तमानकाले जैन पञ्चागके अभावसे लौकिक पञ्चागानुसार वर्ताव करने में आताहै उसीमें चैत्रादि मासोकी वृद्धि होतीहै उसी के ३० दिनोमें दुनियाका सब व्यवहार तथा धर्म व्यवहार प्रत्यक्षपनेहोताहै इसलिये उसीके दिनोकी गिनती निषेध नहीं होसकती है तथापि जो सक्रांति रहित मलमास केभरोसे अधिक मासके दिनोकी गिनती निषेध करतेहै सो अपनी पूर्ण अज्ञानतासे भोले जीवोको गच्छकदाग्रहमें गेरनेका कार्य करतेहैं क्योकि सक्रांति रहित अधिक मास को मलमास कहा है तैसेही दे। सक्रांति वाले क्षय मासको भी मलमास कहा है परन्तु अधिक मासके तथा क्षय मास के दिनोकी गिनती बरोबर करतेहैं। तथाहि कमलाकर भट विरचित (लौकिक धर्मशास्त्र) निर्णय सिधौनामा ग्रथे ।

तत्र सक्षेपत काल योढा—अब्दोयनमृतुर्मास पक्षदिवस इति ॥ पुनस्तत्र वक्षमाणे श्रावणादि द्वादश मासै स्तदृब्द । मलमासेतुतति यद्विदिनात्मक एको मासो द्वादश मासत्वमविरुद्धमिति ॥ तथाच व्यास यष्ट्यातु दिवसैमास कथितो बादेरायणै—इति ॥ अथ मलमास क्षयमास निर्णय। अथ मल मास सत्रिकमात्र सक्रांति रहित सितादियादो मासो मल मास एकमात्र सक्राति राहित्यमसक्रांतित्वेन सक्राति द्वयत्वेनच भवतिइति । मल मासो द्वेधा

अधिक मास क्षयमासयंति । तट्टुल पाठक ग्रन्थे । यस्मिन् मासे न संक्राति । संक्राति द्वयमेवयानलमास । मविशेषो मास स्यात् त्रयोदश ॥ तथा चोक्त हेमाद्रि सागर ग्रंथे । नमो वा समस्योवा मलमासो यदा भवेत् सप्तम पितृ पक्षस्यादन्यत्रैवतु पंचम ॥

अथ देखिये उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लौकिक शास्त्रो में अधिक मासके दिनोंकी गिनती करीहै इसलिये निषेध करने वाले गच्छकदाग्रहसे अज्ञानता करके प्रत्यक्ष मिथ्या भाषण करने वाले बनतेहैं सोतो पाठक वर्ग स्वय विचार सकतेहैं ।

और अधिक मासको बारह मासोंसे जूदा गिनके तेरह मासोंका वर्ष कहे तथा अधिक मासको जूदा न गिनके संयोगिक मासके साथ गिने तो ६० दिवसका महिना मान के बारह मासका वर्ष कहे तोभी तात्पर्यार्थसेतो दोनो तरह करके अधिक मासके दिनोंकी गिनती लौकिक शास्त्रोंमें प्रगटपने कही है इस लिये निषेध नही होसकतीहै ।

और संक्राति रहित अधिक मासको मलमास कहा तैसेही दो संक्राति वाले क्षयमासको भी मलमास कहाहै सो चैत्रसे आश्विन तक सात मासोंमें से हरेक अधिक मास होतेहैं तैसेही कार्तिकसे पौष तक तीनमासोंमें से हरेक मास क्षयभी होतेहै और जैसे तीसरे वर्ष अधिक मास होताहै सो प्रसिद्धहै तैसेही कालांतरमें क्षय मासभी होताहै सो लौकिक शास्त्रोमें प्रसिद्धहै ।

औरमासवृद्धिकेअभावमें आषाढचौमासीसेपचम पितृपक्ष होताहै परंतु श्रावण भाद्रपद मासकी वृद्धि होनेसे अधिक मासके दोनोपक्षोंकी गिनती पूर्वक सप्तम पितृपक्ष लिखा है ।

और अधिक तथा क्षय सज्ञा वाले मास समुच्चयके व्यव हारमें तो सयोगिक मासके सामिल गिनेजातेहै परतु भिन्न भिन्न व्यवहारमे तो दोनो मासोके दिनोकी गिनती जूदी जूदी करनेमें आतीहै सो अधिक मास सबधी तो उपरमें तथा इसग्रन्थमें लिखनेमें आगयाहै परतु क्षयमास सबधी थोडा सा लिखदिखाताहू कि जब कातिक मासका क्षय होवे तब उसीके दिनोकी गिनतीपूर्वक ओलियोकी आश्विन पूर्णिमा से १५ दिने दीवाली तथा श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणक तथा २० वे दिन ज्ञानपचमी और ३० वें दिन कातिक पूर्णिमा सो चौमासा पूरा होनेसे मुनि विहार होताहै इस तरहसे मार्गशीष पौषका भी क्षय होवे तब मौन एकादशी, पौष दशमी वगैरह पर्व तथा और श्रीजिनेश्वर भगवान् के जन्मादि कल्याणकोकी तपश्चर्यादि कार्य करनेमें आतेहै ।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषो को न्याय दृष्टिसे विचार करना चाहिये कि—क्षयमास के दिनोंमें दीवाली वगैरह वार्षिक पर्व किये जातेहै उसी मुजबही श्रीतपगच्छके सबी महाशय करतेहैं इसलिये क्षय मासके दिनो की गिनती निषेधकरनेकातो किसीभी महाशय जीने कुछभी परिश्रम न किया । और पर्युषणामें तथा पर्यु-षणासबधी मासिक डेढमासिक तपश्चर्यादि कार्यों में अधिक मासके दिनो की गिनती प्रत्यक्षपने करते हुवेभी दूसरे गच्छ वालो से द्वेषबुद्धि रखके अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणोंसे कुयुक्तियोका सग्रह करनेका श्रीतपगच्छके अनेक महाशयोने खूबही परिश्रम कियाहै सो तो प्रत्यक्षपने स्वगच्छाग्रहके हटवाद का नमूनाहै सो इस

अधिक मास क्षयनामर्दति । तदुक्तं काठक गृह्ये । यस्मिन् मासे न संक्राति । संक्राति द्वयमेववानतमास । मविशेयो मास स्यात् त्रयोदश ॥ तथा चोक्तं हेमाद्रि सागर गते । त्रयो वा समम्योवा मलमासो यदा भवेत् सप्तम.पितृ पक्षस्यादन्यत्रैवतु पंचम ॥

अब देखिये उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लौकिक शास्त्रों में अधिक मासके दिनोंकी गिनती करीहै इसलिये निषेध करने वाले गच्छकदाग्रहसे अज्ञानता करके प्रत्यक्ष मिथ्या भाषण करने वाले बनतेहैं सोतो पाठक वर्ग स्वयं विचार सकतेहैं ।

और अधिक मासको बारह मासोंसे जूदा गिनके तेरह मासोंका वर्ष कहे तथा अधिक मासको जूदा न गिनके संयोगिक मासके साथ गिने तो ६० दिवसका महिना मान के बारह मासका वर्ष कहे तोभी तात्पर्यार्थसेतो दोनो तरह करके अधिक मासके दिनोंकी गिनती लौकिक शास्त्रोंमें प्रगटपने कही है इस लिये निषेध नहीं होसकतीहै ।

और संक्राति रहित अधिक मासको मलमास कहा तैसेही दो संक्राति वाले क्षयमासको भी मलमास कहाहै सो चैत्रसे आश्विन तक सात मासोंमेंसे हरेक अधिक मास होतेहैं तैसेही कार्तिकसे पौष तक तीनमासोंमें से हरेक मास क्षयभी होतेहै और जैसे तीसरे वर्ष अधिक मास होताहै सो प्रसिद्धहै तैसेही कालांतरमें क्षय मासभी होताहै सो लौकिक शास्त्रोंमें प्रसिद्धहै ।

औरमासवृद्धिकेअभावमें आषाढचौमासीसेपचम पितृपक्ष होताहै परंतु श्रावण भाद्रपद मासकी वृद्धि होनेसे अधिक मासके दोनोंपक्षोंकी गिनती पूर्वक सप्तम पितृपक्ष लिखा है ।

पचमीको ज्ञात पर्युषणा वार्षिककृत्यादिपूर्वक करनेमें आती थी, उसीको वर्षाकालकी स्थितिरूप गृहस्थी लोगोके आगे कहने मात्रही वार्षिककृत्योंरहित ठहरानेके लिये और अभि वर्द्धितमेंभी ५० दिने भाद्रपदमें वार्षिक कृत्यो सहित पर्युष णाको ठहरानेकेलिये चूर्णिकारादि महाराजोंके अभिप्रायको समझे बिनाही उलटा विरुद्धार्थमें और अधिक मास सबधी पूर्वापरकी सब व्याख्याके पाठोको छोडकरके अधिकरण दोषोके तथा उपद्रवादिके सबध वालेअधूरेपाठ लिखके फिर चद्रसम्वत्सर में ५० दिन की तरह अभिवर्द्धितसवत्सर में २० दिने ज्ञात पर्युषणा दिखाकरके ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें तो वार्षिक कृत्य करनेको सिद्ध करतेहैं परतु २० दिनकी ज्ञात पर्युषणाको अपनीमतिकल्पनासे गृहस्थी लोगोके आगे वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिक कृत्योको निषेध करतेहैं सो कदापि नहीं होसकताहै क्योंकि ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्योकी तरह २० दिनकी ज्ञात पर्युषणामें भी वार्षिक कृत्य शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वय सिद्ध है इसका सविस्तार निर्णय तीनो महाशयोंके लेखोकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १०७ से ११७ तक अच्छी तरहसे छपगया है इस लिये जो श्रीकुलमडन सूरिजीने २० दिनकी पर्युषणाको वार्षिक कृत्यों रहित ठहरानेके लिये मास वृद्धि के अभाव सबधी पाठोको मास वृद्धिहोती भी अधूरे अधूरे लिखके बाल जीवोको दिखाये है सो आत्मार्थिपनेका लक्षण नहींहै । सोता न्यायदृष्टिवाले सज्जन स्वयविचार लेवेंगे ।

और अभिवर्द्धितमें वीश दिने ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कृत्यों पूर्वक करनेसे । प्रथम चौथे वर्षे ११ । ११ मासे तथा

मासको इस ग्रन्थके पढनेवाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ।

और अधिक मासको कालचूला कहते हुए भी नपुंसक लिखते हैं सोभी श्रीअनन्ततीर्थंकरगणधरादि महाराजोंकी आशातना करनेके बरोबरहै तथा विवाहादि मुहूर्तनैमित्तिक संसारिककार्योंके लियेभी उपरमेंही इन्होंजीके लेखमें सूचना करनेमें आगई हैं ।

और चौथदिनकी बात पर्युषणाके विचार और कार्योंमें अधिकमासको प्रमाण करनेका नही दिखता है यह लिखना भी श्रीकुलमण्डनसूरिजी का प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि दिनों की पक्षोंकी मासोंकी गिनतीका कार्यमें,चौमासेके वर्षके युगके प्रमाणकी गिनतीका कार्यमें, क्षामणोंके कार्यमें, सामायिक प्रतिक्रमण पौषध देवपूजा उपवास शीलव्रतादि नियमोंका प्रत्याख्यानोंके गिनतीका कार्यों में चौमासी छमासी वर्षी तथा वीसस्थानकजीके और पर्युषणादि तप केदिनों की गिनतीके कार्योंमें और आगमोंके योग वहनादि कार्योंमें,अधिक मासके दिनोंकी गिनती को प्रमाण गिननेमें आतीहै सो तो प्रत्यक्ष अनुभव की प्रसिद्ध बात है । और एकजगह अधिकमासको कालचूलालिखते हैं दूसरी जगह नपुंसक लिखते हैं तथा एक-जगह श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिकेपाठोंसे 'चेव' निश्चय अधिकमासको गिनतीकरनेका लिखते हैं दूसरी जगह नही गिननेका लिखते हैं इसतरहसे बालजीवोंको भ्रममें गेरनेवाले पूर्वापरविरोधि (विसंवादी) लेखलिखते कुछभीविचार न किया सोभी कलयुगीविद्वत्ताका नमूना है ।

और आगे फिरभी जो जैन पञ्चाङ्गानुसार प्राचीन कालमें अभिवर्द्धितसम्वत्सरमें वीशदिने अर्थात् श्रावणशुदी

पिछाड़ी कार्तिक तक ७० दिन स्वभावसेंही रहतेहै तैसेही २० दिने पर्युषणा करनेसे भी पिछाडी कार्तिक तक १०० दिनभी स्वय समझना चाहिये तथापि चंद्र संवत्सरमें भाद्रपदकी तरह अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावणमें पर्युषणा करनेका तथा पर्युषणाके पिछाडी ७० दिनकी तरह १०० दिन रहनेका कहा कहा है, ऐसी प्रत्यक्ष अज्ञानताकी सूचक कुयुक्ति करके बाल जीवोंको भ्रमानेसे कर्म बंधके सिवाय और कुछभी लाभ नहीं होने वालाहै । क्योंकि जिन जिन शास्त्रों में चंद्रसंवत्सरमें५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणाकरके पिछाडी ७० दिन कार्तिक तकका लिखाहै और अभिवर्द्धितमें २० दिने पर्युषणा करनेका भी लिखदियाहै उसी शास्त्र पाठोंके भावार्थ से अभिवर्द्धितमें २० दिने श्रावणमें पर्युषणा करनेका और पर्युषणा के पिछाडी १०० दिन रहनेका स्वय सिद्धहै सोतो अल्प मतिवालेभी समझसकते है ।

और फिरभी २० दिनकी ज्ञात तथ निश्चय और प्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिक कृत्यो का निषेध करनेके लिये आषाढ पूर्णिमाकी अज्ञात तथा अनिश्चय और अप्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिककृत्यकरनेका दिखातेहै सोभी अज्ञानताकासूचकहै क्यो कि वर्षकी पूर्तीहुये बिना तथा अज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य कदापि नहीं होसकते हैं किन्तु वर्षकी पूर्तिहोनेसे ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य होते हैं और अधिक मास होनेसे श्रावणमें १२ मासिक वर्ष पूरा होजाता है इसीलिये श्रावणमें ज्ञातपर्युषणा करके वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादिक कार्य करनेमें आते हैं ।

और मासवृद्धि होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करने के लिये श्रीजीवाभिगमजी सूत्रका एकपदमात्र दिखदिखाया

दूसरे पचम वर्ष १३।१३ मासे और तीसरे वर्ष १२ मासे वार्षिक कृत्य होनेका दिखाकर पाच वर्षोंके ६० मास श्रीकुलमंडन सूरिजी लिखतेहै सोहो श्रीअनत तीर्थकर गणधरादि महाराजोकी आज्ञाकोप्रत्यक्षपने उत्थापनकरके उत्सूत्रभाषण करनेवाले बनते है क्योकि अभिवर्द्धि तमें बीशदिने श्रावणमें पर्युषणा करनेसे जैनशास्त्रानुसारतो प्रथम चौथे वर्ष १३। १३ मासे और दूसरे तीसरे पचमें वर्ष १२।१२ मासे वार्षिक कृत्य होनेका बनताहै और पाच वर्षोंके ६२ मास श्रीअनत तीर्थकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार जैनशास्त्रोंमें प्रसिद्धहै।

और मासवृद्धिसे तेरहमासहोतेभी १२ मासके क्षामणे लिखतेहै सोभी अज्ञानताका सूचकहै क्योंकि मासवृद्धि होनेसे तेरहमास छवीशपक्षयेक्षामणे कियेजातेहै इसका निर्णय सातवे म० छे० समीक्षामें इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ३६३ से ३७८ तक छपगयाहै सो पढनेसे सब निर्णय होजावेगा।

और जैनशास्त्रोंमें मुख्य करके एकबातकी व्याख्या करतेहै उसीकेही अनुसार यथोचित दूसरी बातोके लियेभी समझा जाताहै इसलिये जिन जिन शास्त्रोंमें चद्रसवत्सरमें ५० दिने तथा अभिवर्द्धित सवत्सरमें २० दिने ज्ञात पर्युषणा कही सो यावत् कार्तिक तक खुलासा लिखाहै जिसपर विवेक बुद्धिसे विचार किया जावेतो जैसे चद्रसवत्सरमें ५० दिन जहा पूरे होवे वहा स्वभावसेही भाद्रपद समजतेहै तैसेही अभिवर्द्धित सवत्सरमें २० दिन जहा पूरे होवे वहा भी स्वभाविक रीतिसे श्रावण समजना चाहिये। और चार मासके १२० दिनका वर्षा कालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे

पिछाड़ी कातिक तक ७० दिन स्वभावसेही रहतेहै तैसेही २० दिने पर्युषणा करनेसे भी पिछाडी कार्तिक तक १०० दिनभी स्वय समझना चाहिये तथापि चद्र सवत्सरमें भाद्रपदकी तरह अभिवर्द्धित सवत्सरमें श्रावणमें पर्युषणा करनेका तथा पर्युषणाके पिछाडी ७० दिनकी तरह १०० दिन रहनेका कहा कहा है, ऐसी प्रत्यक्ष अज्ञानता की सूचक कुयुक्ति करके वाल जीवोको भ्रमानेसे कर्म बधके सिवाय और कुछभी लाभ नही होने वालाहै । क्योंकि जिन जिन शास्त्रों में चद्रसवत्सरमें५० दिने भाद्रपदमे पर्युषणाकरके पिछाडी ७० दिन कातिक तकका लिखाहै और अभिवर्द्धितमें २० दिने पर्युषणा करनेका भी लिखदियाहै उसी शास्त्र पाठोंके भावार्थ से अभिवर्द्धितमें २० दिने श्रावणमें पर्युषणा करनेका और पर्युषणा के पिछाडी १०० दिन रहनेका स्वय सिद्धहै सोतो अल्प मतिवालेभी समझसकते है ।

और फिरभी २० दिनकी ज्ञात तथ निश्चय और प्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिक कृत्यो का निषेध करनेके लिये आषाढ पूर्णिमाकी अज्ञात तथा अनिश्चय और अप्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिककृत्यकरनेका दिखातेहै सोभी अज्ञानताकासूचकहै क्यों कि वर्षकी पूरतीहुये बिना तथा अज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य कदापि नहीं होसक्ते हैं किन्तु वर्षकी पूर्तिहोनेसे ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य होते हैं और अधिक मास होनेसे श्रावणमें १२ मासिक वर्ष पूरा होजाता है इसीलिये श्रावणमें ज्ञातपर्युषणा करके वार्षिक कृत्य सावत्सरिक प्रतिक्रमणादिक कार्य करनेमें आते हैं ।

और मासवृद्धि होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करने के लिये श्रीजीवाभिगमजी सूत्रका एकपदमात्र लिखदिखाया

भोतो अपनी विद्वात्ताकी हासी करानेके जैसा कियाहै क्योंकि यहांतो श्रीनन्दीश्वरद्वीपाधिकारे जिन चैत्योंकी व्याख्या करके वहां चौमासीमें तथा सवत्सरीमें और श्रीजिनेश्वर भगवान्के जन्मादि कल्याणकोंमें भुवनपति वगैरह बहुत देवोंका अठाईउच्छव करनेका लिखाहै परन्तु वहां भाद्रपदकातो नाममात्र भी नहींहै सो सूत्र वृत्ति सहित छपाहुवा श्रीजीवाभिगमजीके पृष्ठ ८४३ में खुलासा पूर्वक अधिकारहै इस लिये ऐसे ऐसे पाठोंको लिखके बाल जीवोंको भ्रममें गेरनेसे तो अपने कल्पित बातकी पुष्टि कदापि नहीं हो सकतीहै सो विवेकी पाठक गणभी स्वयं विचार सकतेहैं।

और श्रीकुलमडन सूरिजीके उपरोक्त लेखके अनुसार ही धर्मसागरजीनेभी तस्करवृत्ति करके धर्म धूर्ताईसे जिनकोंं तथा गच्छ कदाग्रही बालजीवोंको दुर्लभबोधिका कारक करनेके लिये 'तत्वतरंगिणी' ग्रन्थका नाम रखके वास्तविक में 'कुयुक्तियोकी भ्रमजाल' बनाकर उसीमें पर्युषणा सबंधी मिथ्यात्वका कारणरूप जो लेख लिखा है जिसका निर्णय तथा 'प्रवचनपरिक्षा' नामक ग्रन्थमेंभी उत्सूत्र भाषणोंके सग्रहसे कुयुक्तियों करके पर्युषणा सबंधीजो लेख लिखा है जिसका निर्णय तो ऊपरके लेखको तथा इस ग्रन्थको विवेक बुद्धिसे पढ़नेवाले तत्वज्ञ पुरुष स्वयंही समझ लेवेंगे —

अब पाठकगणको मेरा इतनाही कहना है कि-श्रीजैन शास्त्रोमें अधिक मासको कालचूलाकी जो उत्तम ओपमा देते हैं उसीके दिनोंकी गिनती करनेमें आती है तथा लौकिक शास्त्रानुसार और प्रत्यक्ष पने बर्तावकी सत्ययुक्तियोंके अनुसार करकेभी अधिकमासके दिनोंकी गिनती क-

इनेमें आतीहै जिसका विस्तार पूर्वकइस ग्रन्थमें छपगया है इसलिये कालचूला वगैरहके बहाने करके कुयुक्तियो से उसीके दिनो की गिनती निषेध करने वाले श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके लोपी उत्सूत्रभाषक बनते हैं, सो तो इस ग्रन्थको पढने वाले तत्वज्ञ स्वय विचार सकते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्की आज्ञाके आराधन करनेकी इच्छावाले जो आत्मार्थी सज्जन होवे गे सो तो अधिकमासके दिनोंकी गिनती निषेध करनेका ससारवृद्धिका हेतुभूत उत्सूत्र भाषणका साहस कदापि नहीं करेंगे, और भव्यजीवोको इस ग्रन्थको पढ करके भी अधिकमासके निषेध करने वालोका पक्ष ग्रहण करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे बालजीवोंको कुयुक्तियोंके भ्रममें गेरनेका कार्य करनाभी उचित नही है और गच्छका पक्षपात छोडकर न्याय दृष्टिसे इस ग्रन्थका अवलोकन करके अधिकमासके दिनोकी गिनती पूर्वकही पर्युषणादि धर्म व्यवहारमें वर्ताव करना सोही सम्यक्त्वधारी आत्मार्थियोको परम उचित है इतनेपरभी जो कोई अपने अन्तर मिथ्यात्व के जोरसे अज्ञ जीवोंको भ्रमानेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध सबधी कुयुक्तियोका सग्रह करके पूर्वापरका विचार किये विनाही मिथ्यात्वका काय करेगा तो उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंके उपकारके लिये इस ग्रन्थ कारकी लेखनी तैयारही समझना ।

अब पर्युषणास बधी लेखकी समाप्तिके अवसरमें पाठक गणको मेरा इतनाही कहना है कि श्रीतपगच्छके विद्वान् कहलाते जोजोमहाशय भी श्रीअनततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें पचागीके अनेक प्रमाणोको प्रत्यक्षपने

उत्पापारदरे शुष्त् गधामगोरे कुयुक्तियोंके मग्रठ पूर्व
अभिमानको फाल्गुला वगैरहके यहानेसे निषेधकरने म त्र
धी-कल्पकिरणावली तथा सुखबोधिकावृत्तिवगैरहके लेख
को दृष्यर्थी पर्युषणादर्श के दिर्गोमें प.चनेहैं जिसको गच्छक
यारी मतवाली अज्ञजीव श्रद्धापूर्वक सत्यमानतेहैं ऐसे उपदेश
तथा श्रोता श्रीजिनाज्ञाके आराधक कभी नहीं कहावें
गन्दकर्मी आत्मार्थी हैं ऐसा कोइभी विवेकीतत्वज्ञ तो
नही कहसकेंगे। क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थकर गणधरादि मह
राजोंका प्रमाण किया हुआ कालचूलाकी श्रेष्ठ ओपमा वाले
अधिकमासको निषेधकरने वालोंने प्रत्यक्षपने श्रीजिनाज्ञा
का विराधकपना होनेसे मिथ्यात्वसिद्ध होताहै सो सत्य
स्वय विचार सकतेहैं। इसलिये मिथ्यात्वसे संसारमें परि
भ्रमण करनेका भय करने वाले तथा श्रीजिनाज्ञानुसार वर्त
की इच्छा करने वाले विवेकियोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरु
उपरोक्त कार्य करना तथा उसी मुजब श्रद्धा रखना उचित नहीं
है किंतु श्रीजिनाज्ञानुसार पर्युषणाके व्याख्यान सुनने वा
भव्यजीवोंके आगे अधिक मासको गिनती करनेका शा
प्रमाणपूर्वक सिद्धकरके दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपद
श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करना तथा दूसरोंसे कर
सोही आत्महितकारीहै सो तत्वदृष्टिसे विचारना चाहिये

इति अधिक मासके निषेधक उत्सूत्र भाषी कुयुक्तियो
करनेवाले सातवें महाशयजी वगैरहोंके पर्युषणा
सम्बन्धि अज्ञ जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके
हेतोंकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ॥